॥ श्रीचंद्रप्रभस्वामिने नमः ॥

याद रखने योग्य उपयोगी सूचना.

१- आत्मार्थी हे ! भव्यजीवों खरतरगच्छ, तपगच्छ, कमलागच्छ, अंचलगच्छ, पायचंदगच्छादिकके आग्रहकीबातें करनेमें आत्मकल्याण मुक्तिनहींहै, किंतु जिनाज्ञानुसारभावसे शुद्धधर्मक्रियाकरनेमें मुक्तिहै.इसलिये अपने २ गच्छकी परंपरा रूढीको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी परीक्षाकरके उसमुजबधर्मकार्यकरो उससे श्रेयहो.

२- श्रीसर्वज्ञ भगवान्के कहे हुए अतीवगहनाशयवाले, अपेक्षा सहित, अनंतार्थयुक्त जैनशास्त्र अविसंवादीहैं, मगर "कत्थइ देसग्गहणं, कत्थइ धिप्पंति निरवसेसाइं । उक्कमकम जुत्ताइं,कारण वसओ निरुत्ताइं ॥ १ ॥" श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रकी वृत्तिके इस महावाक्य मुजब-सामान्य, विशेष, ओपमा, वर्णनक, उत्सर्ग, अपवाद, विधि, भय, निश्चय, व्यवहारादिक संबंधी शब्दार्थ, भावार्थ, लक्ष्यार्थ, वाच्यार्थ, संबंधार्थादि भेदोंवाले गंभीरार्थके भावार्थ संबंधी शास्त्रवाक्योंको समझे बिनाही अभी अविसंवादी सर्वज्ञशासनमें कितने गच्छोंके भेदोंका आग्रह बढगयाहै. देखो- "गच्छना भेद बहु नयण निहालतां, तत्त्वनीबातकरतां न लाजे । उदरभरणादि निजकाज करतांथकां, मोहनडिया कलिकालराजे ॥ १ ॥ देवगुरुधर्मनी शुद्धि कहो किमरहे, किमरहे शुद्ध श्रद्धान आणो । शुद्धश्रद्धाविना सर्वकरियाकरी, छारपर लिंपणो तेह जाणो ॥ २ ॥ पापनहीं कोई उत्सूत्रभाषण जिस्युं, धर्मनहीं कोई जगसूत्र सरिखो । सूत्र अनुसारें जे भविक क्रिया करे, तेहनो शुद्ध चारित्र परिखो ॥ ३ ॥ इत्यादि बातें ... कर आत्मार्थियोंको अपना असत्य आग्रहको छोडकर अपने ... को हितकारी, सुखकारी होवे, वैसा सत्य ग्रहण करना चाहिये.

३- कितनेक मुनिमहाशय वर्षोवर्ष पर्युषणापर्वके व्याख्यानमें अधिकमहीनेके व श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोंके निषेध संबंधी चर्चा उठाते हैं, उससे भोले लोगोंको अनेक तरहकी शंकायें उत्पन्न होती हैं, और कितनेही महाशयतो इन बातोंमें तत्त्वदृष्टिसे सत्यअसत्यका निर्णय किये बिनाही अपने पक्षको सत्य मान्य करके दूसरोंको झूठे ठहरानेका एकांत आग्रह करते हैं । शास्त्रोंमें एकांत आग्रहको और

शंकारूपी-शल्यको-एकप्रकारसे मिथ्यात्वही कहाहै, उसका निवारण करनेकेलिये और शास्त्रानुसार सत्य बातोंका निर्णय बतलानेकेलिये वर्तमानिक सर्व शंकाओंका समाधान सहित मैंने यह ग्रंथ बनायाहै, मगर मेरी तरफसे किसी तरहका नवीन विवाद शुरूकरनेकेलिये नहीं बनाया. इसलिये इस ग्रंथके बनानेमें सुबोधिका, किरणावली वांचनेवाले कितनेक विद्वान् मुनि महाशयही कारणभूत हैं, पाठक गण इसमें मेरेको किसी तरहका दोषी न समझें, मैंने तो उन्होंकी शंकाओंका समाधान लिखा है.

४- शुद्धश्रद्धाविना द्रव्यसे व्यवहारमें चाहे जितनेधर्मकार्य करें, तो भी आतम कल्याण करने वाले नहीं होते, और आग्रही लोगोंकी अभी अलग २ प्ररूपणा होनेसे भोले जीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्य बातकी प्राप्ति होना बहुत मुश्किल होरहा है. और अविसंवादी रूप आगम-पंचांगी-प्रकरण-चरित्रादि सर्वशास्त्रोंको मानने वालोंमें पर्युषणा-छ कल्याणक-सामायिकादि विषयों संबंधी शास्त्रकारमहाराजोंके अभिप्रायको न समझनेसे व्यर्थही विसंवाद होरहाहै, उसकानिर्णय करनेके लिये और भव्यजीवोंको शुद्धश्रद्धारूप सम्यक्त्व रत्नकी प्राप्तिके उपकारकेलिये मैंने यह ग्रंथ बनायाहै। मगर किसी गच्छके साधु-श्रावकोंको किसी अन्य गच्छमें ले जानेके लिये नहीं बनाया. किसी गच्छमें रहो, परंतु आपसमें राग द्वेष निंदा ईर्षा अंगतविरोधादिक बखेडे छोडकर शुद्ध श्रद्धापूर्वक आत्मिक कल्याण करनेके लियेही इस ग्रंथकी रचना करनेमें आयी है, इसलिये पक्षपात छोडकर इस ग्रंथको वारंवार पूरेपूरा वांच, विचार, मननकर सत्य समझकरके शांति पूर्वक शुद्ध श्रद्धासहित अपना आतमसाधन करके आशा है कि पाठकगण मेरे परिश्रमको सफल करेंगे.

५- श्री-जिनाज्ञानुसार शुद्धश्रद्धापूर्वकभावसे धर्मकार्य करनेका योग महान्पुण्योदयहोवे तब प्राप्तहोताहै, इसलिये उसमें लोकपूजा बहुत समुदायवैगरकी प्रवृत्तिमुजब करना योग्यनहींहैं. इसकालमें आत्मार्थीअल्पही होते हैं. कदाचित् गच्छ-गुरुपरंपरा-बहुत समुदाय वगैरह बाह्यकारणोंसे आज्ञामुजब क्रियाकरनेका योग न बनसके तोभी शुद्धश्रद्धा-प्ररूपणा तो आज्ञामुजब सत्यबातोंकीही करना योग्यहै, उससे भवांतरमें सुलभबोधिकी प्राप्ति हो सकेगी. मगर गुरु-गच्छ-लोकसमुदायके आग्रहसे जिनाज्ञा बाहिर क्रिया करतेहुए आज्ञामुजब सत्यबातोंका निषेध करनेसे भवांतरमें दुर्लभबोधिकी प्राप्ति होतीहै,

इसलिये भवाभिरुयोंको शुद्ध गच्छ व लोक समुदायादिकका पक्षरखने-के बदले जमालिके शिष्योंकी तरह जिनाज्ञाका पक्ष रखनाही योग्यहै, अर्थात्-जैसे-अपने गुरु जमालिके उत्सूत्रप्ररूपणाके पक्षकोछोडकर बहुत भव्यजीव भगवान्‌की आज्ञामुजब माननेलगेथे,तैसेही-धर्मार्थी आत्मार्थियोंको करना योग्य है. यही सम्यक्त्वका मुख्य लक्षण है.

६-मेरे बनाये इस एक ग्रंथके सामने अनेकग्रंथ लिखेजानेकी मेरेको कोई परवाह नहींहै, देखो-जैसे एकवीतराग सर्वज्ञभगवान्‌के परोपकारी जैन आगमोंके विरुद्ध हजारों मतवादी अनेक तरहसे अपना २ कथन करते हैं. मगर तत्त्व दृष्टिसे आत्महितकारी सत्य बात क्या है, यही देखा जाता है. तैसेही- मेरे बनाये इस ग्रंथपरभी १-२ नहीं, परंतु १०-२० लेखकभी अपना २ विचार खुशीसे लिखें. मगर जिनाज्ञानुसार सत्य बात क्या है. यही देखना है. झूठे मतवादियोंका यही स्वभाव है, कि- हजारों सत्य बातें छोड देते हैं, और अतिशयोक्तिमें या क्रोधमें आकर क्लेश बढानेलगजातेहैं, मगर अपनी बात को छोडते नहीं. वैसे इस ग्रंथपर न होना चाहिये यही प्रार्थनाहै.

७- इस ग्रंथमें पर्युषणा संबंधी अधिक महीनेके ३० दिनोंकी गिनतीसहित आषाढचौमासीसे ५० वें दिन दूसरे श्रावणमें याप्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करनेका तथा श्रावण भाद्रपद आसोज अधिक महीनें होंवे तब पर्युषणाके पीछे कार्तिकतक१०० दिन ठहरनेका खरतर गच्छ, तपगच्छ, अंचलगच्छ,पायचंदगच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनानुसार और निशीथचूर्णि, बृहत्कल्पचूर्णि,पर्युषणाकल्पचूर्णि, स्थानांग सूत्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रपाठानुसार अच्छी तरहसे साबित करके बतलाया है। जैसे अधिक महीना होंवे तोभी ५० दिने पर्युषणापर्व करनेकी सर्व शास्त्रोंकी आज्ञा है, वैसेही-अधिकमहीना होवे तोभी पीछे हमेश ७०दिन रहनेकी आज्ञा किसीभी शास्त्रमें नहीं है, समवायांगसूत्रका पाठ तो सामान्य रीतिसे अधिक महीना न होंवे तब ४ महीनोंके वर्षाकाल संबंधी है, उसका भावार्थ समझे बिना अधिकमहीना होवे तब अभी पांच महीनोंके वर्षाकालमेंभी उसी सामान्य पाठको आगे करना और १०० दिन पीछे रहनेसंबंधी अनेक शास्त्रोंके विशेष पाठोंकी बातको छोड देना यह सर्वथा अनुचित है।

८-लौकिकटिप्पणामें दो श्रावणादिमहीने होंवे,तब पांचमहीनोंका वर्षाकाल मान्य करना यह बात अनुभवसिद्ध प्रत्यक्ष प्रमाणानुसार

है,तोभी उनको ४ महीनोंका वर्षाकाल कहनेसे मिथ्या भाषण करने-कादोषआताहै। यदि अभी वर्तमानमें अधिकमहीनेश्रावणादि होनेपर भी जैनशास्त्रानुसार ४ महीनोंका वर्षाकालमानोगे, तो,पौष-आषाढ अधिक होनेवाला ८८ ग्रहसहित जैनपंचांगभी अभी मानना पडेगा. मगर वो जैनपंचांग तो अभी विच्छेदहै, इसलिये लौकिकपंचांग मुज-ब व्यवहार करनेमेंआताहै। अब यहांपर विवेकबुद्धिसे न्यायपूर्वक विचारकरना चाहिये, कि-अभी पौष-आषाढमहीनेकी वृद्धिवाला८८ ग्रह सहित जैनपंचांग विच्छेदभी मानना. व लौकिक पंचांग मुजब व्यवहारभी करना. और लौकिक पंचांग मुजब अधिकमहीने दो श्रा-वण,या दो भाद्रपद,वा दो आसोजभी मानने. फिर ४महीनोंकावर्षा-कालभी कहना, यह तो 'बालचेष्टा' की तरह पूर्वापर विरोधी वि-संवादी कथनकरना विवेकी विद्वानोंको सर्वथाही योग्य नहींहै। अ-धिकश्रावणादिमहीने नहींमानने होवे तो अभी अधिकपौषादि वाला जैनपंचांग बतावो अथवा लौकिक पंचांग मुजब अधिक श्रावणादि मानो तो अधिकपौषादिका बहाना बतलाकर ४ महीनोंकावर्षाकाल कहनेका आग्रहछोडो। अधिकश्रावणादिभी मानोगे और ४ महीनों-का वर्षाकालभी कहोगे, यह कभी नहीं बन सकेगा. विच्छेद जैनपं-चांगकी बातका आश्रय लेना और प्रत्यक्ष विद्यमान बातका निषेध करना, यह न्याय विरुद्धहै। पहिले पौष आषाढ बढतेथे तबभी फा-ल्गुन और आषाढचौमासा पांच२ महीनोंसे होताथा और अभी श्रा-वणादिबढतेहैं तब कार्त्तिक चौमासाभी पांचमहीनोंका होताहै.अभी जैनपंचांग विच्छेद होनेसे लौकिक पंचांग मुजब अधिक श्रावणादि मान्यकरके उसमुजब व्यवहार करना युक्तियुक्त व पूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसारहै, जिसपरभी अधिक श्रावणादि होवे,तब पांच महीनों के वर्षाकालमें ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युष-णापर्व आराधन करनेका उल्लंघन करना और पीछे १०० दिन रहने की जगह ७० दिन रहनेका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है. देखो-

यद्यपि जैन पंचांगमें ४ महीनोंका वर्षाकाल कहाहै, परंतु जैन पंचांगके अभावसे अभी लौकिक पंचांग मुजब श्रावणादि बढतेहैं, तब पांच महीनोंका वर्षाकालभी मानना पडता है, इसलिये इसका निषेधकरना सर्वथा अनुचितहै.बस ! पौष-आषाढमहिनेकी वृद्धिस-हित ४ महीनोंके वर्षाकाल वाला जैन पंचांग शुरू बतावो या लौ-किक पंचांग मुजब श्रावणादि बढें तब पांच महीनोंका वर्षाकाल

मान्य करो और जब पाच महीनोंका पर्युषणाकाल मान्य हुआ तो फिर अधिकमहीना निषेध करनेकी व पर्युषणाके पीछे ७० दिन हमेश रखने वगैरहकी सर्व बातें आपही आप निष्फल हो जाती हैं

इसतरहसे अधिकमहीनेके निषेधसबधी धर्मसागरजीने 'कल्प किरणावली'में, जयविजयजीनें कल्पदीपिका में, विनयविजयजीनें 'सुबोधिका'में शांतिविजयजी अमरविजयजीने जैन सिद्धात समाचारी' में शांतिविजयजीनें'मानवधर्मसंहिता में वल्लभविजयजीनें जैनपत्रमें, विद्याविजयजीनें 'पर्युषणा विचार में कुलमंडनसूरिजीने 'विचारामृत संग्रह'में, हर्षभूषणजीने 'पर्युषणास्थिति में, और वर्तमानिक चर्चाके हेंडबिलें, किताबें वगैरहमें जो जो शकायें की हैं,उन सर्व शंकाओंका खुलासा पूर्वक समाधान इस ग्रथकी भूमिकामें व पीठिकामें और इस ग्रथमें अच्छी तरहसे लिखनेमें आयाहै, इसलिये जिनाज्ञानुसार धर्मकार्य करनेकी इच्छावाले,सत्यतत्त्वाभिलाषी,आत्महितैषी पाठकगण इसग्रथको पूर्णतया वाचकर सत्यसार ग्रहण करें।

९-तीर्थंकर भगवान्के च्यवन जन्म दीक्षादिकोंको कल्याणक माननेका आगमानुसार अनादि सिद्ध है,इसलिये श्री महावीरस्वामि भी देवलोकसे देवानंदामाताके गर्भमें आषाढ शुदी ६ को आये,उनको प्रथम च्यवन कल्याणक, और आसोजवदी १३ का देवानंदामाताके गर्भसे त्रिशलामाताके गर्भमें आये सो गर्भापहाररूप (गर्भसंक्रमणरूप)दूसराच्यवन कल्याणक माननेका स्थानाग आचाराग दशाश्रुतस्कंधादिक आगम पचागी प्रकरण चरित्रादि अनेक शास्त्रानुसार और बडगच्छ, चद्रगच्छ, उपकेशगच्छ (कमलागच्छ) खरतरगच्छ तपगच्छ अचलगच्छ, पायचदगच्छादि अनेक गच्छोंके पूर्वाचार्योंके ग्रथानुसार अच्छी तरहसे सिद्ध करके बतलायाहै च्यवन जन्म दीक्षादिकोंको चाहे वस्तु कहो, चाहे स्थानकहो, चाहे कल्याणक कहो इन तीनोंबातोंमें प्रसंगोपात संबधानुसार पर्याय वाचक एकार्थवाले शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकही है, उस बातकाभेद समझे बिनाही च्यवन-जन्म-दीक्षादिकोको वस्तु-स्थान कहकर कल्याणक पनेका निषेध करके आगमार्थरूप पचागीको उत्थापनकरनेके दोषी बनना किसीकोभी योग्य नहीं है।

१०- श्रीवीरप्रभुके आषाढ शुदी ६ को प्रथम च्यवनकल्याणक मान्यकरके,आसोजवदी १३ को दूसरेच्यवनको कल्याणकपनेका निषेध करनेवालोंको न्यायबुद्धिसे विचार करना चाहिये, कि तीर्थंकर

भगवान्‌केच्यवनकल्याणकसमय उनकी माता१४महास्वप्न आकाशसे उत्तरतेहुएदेखतीहैं, उसीसमय तीनजगतमें उद्योत होता है व सर्व संसारीप्राणीमात्रको सुखकीप्राप्तीहोती है, और इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्‌को देखकर विधिपूर्वक पूर्णभक्तिसहित नमुत्थुणंरूप नमस्कारकरके तत्काल माताके पासआकर१४ महास्वप्न देखनेसे स्वप्नोंके अनुसार तीनजगतकेपूज्यनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहकर इन्द्रमहाराज अपने स्थानपरजाते हैं. और प्रभातसमय फजरमें राजा स्वप्न पाठकोंसे १४ महास्वप्नोंकाफल पूछताहै,तब तीर्थंकर पुत्र होनेका सुनकर हर्ष सहित महोत्सव करता है, और इन्द्र महाराज देवताओं द्वारा उस रोजसे भगवान्‌के माता-पिताके घरमें धन धान्यादिकसे राज्य ऋद्धिकीवृद्धि करवातेहैं इत्यादि तीर्थंकरभगवान्‌के च्यवनकल्याणकके कार्यहोतेहैं, यही सर्व कार्य आषाढशुदी ६के रोज भगवान् देवानंदामाताके गर्भमें आये;तब नहीं हुए,किंतु आसोज वदी १३के रोज त्रिशलामाताके गर्भमें आये; तब उससमय हुएहैं, क्योंकि देखो-आषाढ सुदी ६ को तो प्राचीन कर्मके उदयसे भगवान् ब्राह्मणीदेवानंदामाताके गर्भमें आये. और ८२दिनतकवहां ठहरनापडा,उनको कल्पसूत्रादिक शास्त्रोंमें अच्छेरा कहाहै, इसलिये ८२ दिन तकतो इन्द्रादिक किसीकोभी तीर्थंकरभगवान्‌के उत्पन्न होनेकी मालूम न पडी,मगर संपूर्ण८२ दिन गयेबाद इन्द्रमहाराजको अवधिज्ञानसे मालूमपडी उसीसमय पूर्णहर्षसहित नमुत्थुणंकिया और हरिणेगमेषिदेवको आज्ञाकरके क्षत्रियाणीत्रिशला माताके गर्भमें पधराये, तब त्रिशलामाताने(देवानंदाके १४महास्वप्न हरणकरनेका१स्वप्न नहीं देखा-किंतु)तीर्थंकर भगवान्‌के च्यवन कल्याणककी सूचनाकरने वाले १४ महास्वप्न आकाशसे उत्तरते हुए और अपने मुखमें प्रवेश करते हुए देखे हैं. इसलिये खास कल्पसूत्रके मूल पाठमेंभी "एए चउद्दस सुमिणा, सव्वा पासेइ तित्थयरमाया। जं रयणिं वक्कमइ, कुच्छिंसि महायसो अरिहा" अर्थात्-जिस समय तीर्थंकर भगवान् माताके गर्भमें आकर उत्पन्न होतेहैं,उस समय यह १४ महास्वप्न सर्व तीर्थंकरमहाराजोंकी मातायें देखतीहैं, वैसेही-त्रिशलामातानेभी १४ महास्वप्न देखेहैं, इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेकोही शास्त्रकार महाराजोंने च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै, इसीकारणसे समवायांगसूत्रवृत्तिमें देवानंदामाताके गर्भसे त्रिशला माताके गर्भमें आनेको अलग भव गिनकर तीर्थंकर

पनेमें प्रकट होनेका लिखाहै. और 'महापुरुष चरित्र' में तथा 'त्रिषष्ठि-शलाका पुरुष चरित्र' आदिक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी ८२ दिन गये बाद इन्द्रका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवान्‌को देखकर नमुत्थुणं किया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये, जब त्रिशलामाताने १४महास्वप्न देखे,तब खास इन्द्रने त्रिशलामाताके पासमें आकर तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा है, और फजरमें स्वप्न पाठकोंसेभी तीर्थंकर पुत्र होनेका सुनकर सबको तीर्थंकर भगवान्‌के उत्पन्न होनेकी मालूम होगई. इसलिये कल्पसूत्रमें जो नमुत्थुणंका पाठ है, सोभी आसोज वदी १३ के दिन संबंधी है, किंतु आषाढ शुदि६ के दिन संबंधी नहींहै, क्योंकि देखो- 'नमुत्थुणं करके त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये' ऐसा कल्पसूत्रादिमें खुलासालिखाहै, मगर आषाढ शुदी६को आसनप्रकंपनसे नमुत्थुणं किया और फिर उसके बादमें ८२ दिन गये पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये. या ८२दिन तो इन्द्रको विचारकरते चलेगये. या पूरे ८२ दिन गयेबाद आसोज वदी १३ को फिर आसन प्रकंपनसे त्रिशलामाताके गर्भमेंपधराये. अथवा ८२दिन ठहरकर पीछे त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये. ऐसे पाठ किसीभी शास्त्रमें नहींहै. मगर ८२दिन तक तो मालूमभी नहींपडी, परंतु ८२दिन जाने बाद आसन प्रकंपनहोनेसे मालूम पडी, तब नमुत्थुणं किया और उसी रोज पधराये, ऐसे पाठ तो "महापुरुष चरित्र" में तथा "त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र" आदि अनेक प्राचीन शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रत्यक्ष मिलतेहैं, इसलिये आसोज वदी १३ कोही 'नमुत्थुणं' वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेसे आगम पंचांगीकी श्रद्धावालोंको व श्रीवीरप्रभुकी भक्तिवालोंको यह दूसरा च्यवनरूप कल्याणक मान्य करनाही उचित है, बस ! आसोज वदी १३ कोही नमुत्थुणं करने वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेका मान्यकरो या आषाढ शुदी ६ को नमुत्थुणं करने वगैरह च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेका खुलासा पूर्वक शास्त्रपाठ बतलावो,व्यर्थ विवाद करनेमें कोई सार नहीं है.

११- श्रीआदीश्वर भगवान्‌के राज्याभिषेकमें तो कोईभी कल्याणकके लक्षण नहीं हैं, मगर गर्भापहारसे गर्भ संक्रमणरूप दूसरे च्यवनमें तो च्यवन कल्याणकके सर्व लक्षण प्रत्यक्ष मौजूदहैं, इसलिये उसका भावार्थ समझे बिनाही राज्याभिषेककी तरह गर्भापहारकोभी कल्याणकपनेका निषेध करना यहभी बे समझ है।

१२- श्री आदीश्वरभगवान् १०८ मुनियोंके साथ 'अष्टापद'पर मोक्ष पधारे सो अच्छेरा कहतेहैं, तोभी उनको मोक्ष कल्याणक माननेमें कोईभी बाधा नहीं आसकती. तैसेही-श्रीवीरप्रभुकेभी देवानंदा माताके गर्भमें आनेसे त्रिशलामाताके गर्भमें जाना पडा. सो अच्छेरारूप कहते हैं, तोभी उनको च्यवनकल्याणक माननेमें कोईभी बाधा नहीं आसकती. इसलिये अच्छेरा कहकर कल्याणकपनेका निषेध करना यहभी वे समझही है.

१३- और श्री मल्लिनाथस्वामि स्त्रीपनेमें तीर्थंकर उत्पन्न हुएहैं, तोभी चौवीश तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे पुरुषपनेमें कहनेमेंआतेहैं. तैसेही श्रीवीरप्रभुकेभी छ कल्याणक आचारांग-स्थानांगादि आगमोंमें विशेपतासे खुलासापूर्वक कहेहैं, तोभी 'पंचाशक' में सर्व तीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे पांच कल्याणक कहेहैं, उसकाभावार्थ समझे विनाही सर्वजिनसंबंधी पांचकल्याणकोंका सामान्य पाठको आगे करके आचारांग-स्थानांगादि आगमोंमें कहे हुए विशेपतावाले छ कल्याणकोंका निषेधकरना यह भी वे समझका व्यर्थही आग्रह है।

१४-इसतरहसे आगमपंचांगीके अनेक शास्त्रानुसार तीर्थंकर, गणधर,पूर्वधरादि प्राचीन पूर्वाचार्योंके कथनमुजब गर्भापहारको दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपनाप्रत्यक्षसिद्ध होनेसे.श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजने चितोडमें छठे कल्याणककी नवीनप्ररूपणाकी, पहिले नहीं थी, ऐसा कहेनाभी वे समझसे व्यर्थही है।

१५-और गर्भापहाररूप दूसरे च्यवनकल्याणकके अतीव उत्तम कार्यको 'सुबोधिका ' टीकामें अतीव निंदनीक कहकरके निंदाकीहै, सोभी भगवान्की आशातनाकारक होनेसे सम्यक्त्वको व संयमको हानीपहुंचानेवालीहै, उसका तत्त्वदृष्टिसे विचारकियेविनाही विद्वान् कहलानेवाले सर्व मुनिमहाराज वर्षोवर्ष पर्युषणापर्वके मांगलिक रूप व्याख्यान समय ऐसी अनुचित बातको वांचते हैं, यह बडीही शर्मकी बात है, भवभीरू आत्मार्थियोंको ऐसा करना कदापि योग्य नहीं हैं। इन सर्व बातोंका विशेष निर्णय प्रथम भागकी भूमिकामें और इस ग्रंथके उत्तरार्द्धमें अच्छी तरहसे लिखनेमें आयाहै, उनके वांचनेसे सर्व बातोंका निर्णय हो जावेगा.

१६- सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेसंबंधीभी आवश्यकचूर्णि-बृहद्वृत्ति-लघुवृत्ति-नवपदप्रकरण विवरणरूपवृत्ति-दूसरीवृत्ति-श्रावकधर्मप्रकरणवृत्ति-

वंदित्तासूत्रचूर्णि-श्राद्धदिनकृत्यसूत्रवृत्ति-पंचाशकचूर्णि-वृत्ति-विचारामृतसंग्रह-धर्मसंग्रहवृत्ति-सबोधसत्तरी प्रकरणवृत्ति-जयसोमोपाध्यायजी कृत 'ईर्यापथिकी षट्त्रिंशिका विवरण', श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्ति इत्यादि अनेक शास्त्रानुसार श्रीजिनदासगणिमहात्तराचार्यजी पूर्वधर, श्रीहरिभद्रसूरिजी, अभयदेवसूरिजी, हेमचंद्राचार्यजी, देवेंद्रसूरिजी, देवगुप्तसूरिजी, वगैरह सर्व गच्छोंके प्राचीन पूर्वाचार्योंने सामायिक विधिमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करके स्वाध्याय, ध्यानादि धर्मकार्य करनेका बतलाया है, यहीबात जिनाज्ञानुसारहै. पहिले सर्व गच्छोंमें इसीप्रकारसेही सामायिकविधि करतेथे, मगर पीछेसे कितनेही चैत्यवासियोंने अपनी मतिकल्पना मुजब प्रथम इरियावही पीछेकरेमिभंते स्थापन करनेका आग्रहचलायाथा, उनकीपरंपरामुजब अबीभी कितनेकमहाशय प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका स्थापन करनेकेलिये अन्य कोईभी प्रकट अक्षरवाले शास्त्रप्रमाण न मिलनेसे महानिशीथ-दशवैकालिकादिकके अधूरे २ पाठोंसे संबंधके विरुद्ध अर्थ करके सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते ठहरातेहैं, परंतु उससे अनेक दोष आते हैं, उसका विचारभी कभी नहीं करते हैं देखो - विसंवादी शास्त्रोंको व विसंवादी कथन करनेवालोंको शास्त्रोंमें मिथ्यात्वी कहेहैं, इसलिये जैन शास्त्रोंको व पूर्वाचार्योंको अविसंवादी कहनेमें आतेहैं, और आवश्यकचूर्णिआदि अनेकशास्त्रोंमेंसामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावहीके पाठमौजूद होनेपरभी महानिशीथ-दशवैकालिकादिसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरानेसे सर्वज्ञ शास्त्रोंमें विसंवादरूप यह प्रथमदोषआताहै. और आवश्यक बडी टीका, महानिशीथका उद्धार, दशवैकालिक बडीटीका यह सर्वशास्त्र श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजने कियेहैं, इसलिये आवश्यक बडी टीकाके विरुद्ध महानिशीथसे प्रथम इरियावही ठहरानेसे इन महाराजके कथनमें विसंवाद आनेरूप यह दूसरा दोषआताहै. आवश्यकादिमें सामायिकके नामसे प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही खुलासा लिखीहै, महानिशीथके तीसरेअध्ययनमें उपधानसंबंधी चैत्यवंदन स्वाध्यायादिकरनेकापाठहै, दशवैकालिककी टीकामें साधुके गमनागमन (जाने आने) संबंधी इरियावही करके स्वाध्यायादि करनेका पाठहै, इसप्रकार भिन्न २ अपेक्षा वाले शास्त्रोंके पाठोंके संबंध विरुद्ध होकर अधूरे २ पाठोंसे सामायिकमेंभी प्रथम इरियावही ठहरानेसे शास्त्रोंकी

मर्यादाका भंगहोनेरूप यह तीसरा दोषआताहै. और सर्व गीतार्थपूर्वाचार्योंने महानिशीथादि देखेथे, उन्होंके अर्थकोभी अच्छी तरहसे जानतेथे, तोभी सामायिकमें प्रथम इरियावही नहीं लिखी, जिसपरभी अभी महानिशीथसे सामायिकमें प्रथम इरियावही ठहरानेसे उन सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंको महानिशीथके अर्थको नहीं जाननेवाले अज्ञानी ठहरानेका यहचौथादोषआताहै. और सर्वपूर्वाचार्योंने सामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही लिखीहै,उसको उत्थापनकरनेसे सर्व पूर्वाचार्योंकी आज्ञा लोपनेका यह पांचवा दोषभी आताहै. और आवश्यकचूर्णि आदिक सर्व शास्त्रोंके विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करनेसे आगम पंचांगीके उत्थापनरूप यह छठा दोषआताहै. और खास तपगच्छके श्रीदेवेंद्रसूरिजी,कुलमंडनसूरिजी वगैरहोंनेभी सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासा लिखी है, उसकेभी विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरानेसे अपने पूर्वज वडील आचार्योंकीभी अवज्ञा करनेरूप यह सातवा दोषभी आताहै. इसप्रकार सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही कहनेका निषेध करके प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरानेसे अनेक दोष आते हैं, इसका विशेष खुलासा पूर्वक निर्णय शास्त्रोंके संपूर्ण संबंधवाले पाठोंकेसहित इसीग्रंथके दूसरेभागकी पीठिकाके पृष्ठ८७से११२ पृष्ठतक और इस ग्रंथमेंभी पृष्ठ ३१० से ३२९ पृष्ठ तक छपगयाहै. वहां सर्व शंकाओंका खुलासा समाधान करनेमें आया है, इसलिये आत्मार्थी भव्य जीवोंको जिनाज्ञानुसार, सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनानुसार, प्राचीन अनेक शास्त्रानुसार, तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी भाव परंपरानुसार सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनाहीयोग्यहै, और प्रथमइरियावही करनेकी अभी थोडेकालकी गच्छकीरूढीके आग्रहको छोडनाही श्रेयरूप है। इस वातको विशेष तत्त्वज्ञ जन आपही विचार लेंगे.

जिन २ महाशयोंको इतना वडा संपूर्णग्रंथ वांचनेका अवकाश न होवे; उनमहाशयोंको इसग्रंथके प्रथमभागकी भूमिका और दूसरे भागकी पीठिकाको अवश्यही वांचनाचाहिये. मैंने भूमिका-पीठिकामें अन्य २ बातें नहीं लिखी,किंतु इसग्रंथकासार और सर्वशंकाओंका थोडेसेमें समाधानमात्रही लिखाहै .इसलिये भूमिका-पीठिका वांचनेवालोंको ग्रंथकासार अच्छीतरहसे मालूम होसकेगा. इतिशुभम् .

इसग्रन्थके उत्तरार्द्धके तीसरे खंडकी-जाहिर खबर.

१ इसग्रंथके उत्तरार्द्धके तीसरेखंडमें आगमादि अनेकप्राचीन शास्त्रानुसार,व चन्द्रगच्छ,वडगच्छ,खरतरगच्छ,तपगच्छ,अंचलगच्छ पायचंदगच्छादि सबगच्छोंके पूर्वाचार्योंके बनायेग्रंथानुसार श्रीवीर प्रभुके छ कल्याणक मान्यकरनेका अच्छी तरहसे सिद्ध करके बतलाया है और शांतिविजयजीने ' जैनपत्र'में, विनयविजयजीने 'सुबोधिका'में, कांतिविजयजी-अमरविजयजीने ' जैनसिद्धांतसामाचारी' में, श्रीआत्मारामजीने ' जैन तत्त्वादर्श'में, धर्मसागरजीने 'कल्प-किरणावली ' ' प्रवचन परीक्षा ' वगैरहमें जो जो छ कल्याणक निषेध संबंधी शंकायें की है. और शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझे बिनाही अधूरे२ पाठ लिखकर उनके खोटे२ अर्थ करके भोले जीवोंको उलटा मार्ग बतलानेकी कोशिश की है, उन सर्वबातोंका समाधान सहित निर्णय इसमें लिखनेमें आया है।

२-और श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजसे वस्तिवासी-सुविहित-खरतर विरुदकी शुरुयात हुयीहै,इसलिये श्रीनवांगीवृत्तिकारक श्री अभयदेवसूरिजी महाराज खरतर गच्छमें हुए हैं, यह बात प्राचीन-शास्त्रानुसार तथा तपगच्छके पूर्वाचार्योंके बनाये ग्रंथानुसार सिद्ध-करके बतलायाहै । और कोई महाशय श्रीजिनदत्त सूरिजी महाराजसे संवत् १२०४में खरतरगच्छकी शुरुयातहोनेका कहतेहैं, सोभी सर्वथा असत्य है. क्योंकि-इन महाराजसे सं १२०४में खरतरगच्छ-की शुरुयात होनेका कोईभी कारण नहीं हुआ है. व्यर्थ झूठे आक्षेप करने बडी भूलहै, देखो १२०४में तो खरतर गच्छकी तीसरी शाखा हुईहै इस बातका अच्छीतरहसे खुलासा इसग्रंथमें करनेमें आयाहै.

३-और जैनशास्त्रोंकी यह आज्ञा है, कि-यदि अपनी गच्छ परंपरामें ३-४ पेढीके आगेसेही शिथिलाचार चला आता होवे, तो क्रिया उद्धार करनेवाले दूसरेगच्छके अन्यशुद्ध संयमीके पासमें क्रिया उद्धार करें अर्थात् - उनके शिष्य होकरके शुद्ध संयम पालें, उससे पहिलेकी शिथिलाचारकी अशुद्ध परंपरा छुटकर, क्रिया उद्धार करवानेवाले गुरुकीशुद्धपरंपरा मानीजावे देखो जैसे-श्रीआत्माराम जीने ढूंढियोंके झूठेमतका छोडकर तपगच्छमें दीक्षाली है इसलिये यद्यपि पहिलेढूंढियेथे तोभी उनकीपरंपरा ढूंढियोंमेंनहींलिखी जावे, किंतु तपगच्छमेंही लिखीजावे तथा कोई शिथिलाचारी यति अपने गुरु व गच्छको छोडकर अन्यगच्छवाले शुद्धसंयमीके पासमें क्रिया

उद्धारकरें(फिरसे दीक्षालेंवे)तो उनकी यतिपनेकी अशुद्धपरंपरा छु- टकर जिसगुरुके पासमें क्रिया उद्धार किया होगा, उन्हीं गुरुकीशु- द्ध परंपरा चलेगी ॥ इसी तरहसे श्रीवडगच्छके जगचंद्रसूरिजी म- हाराजने अपनेको व अपनी गच्छ परंपराको शिथिलाचारी अशुद्ध जानकर छोडदियाथा और श्रीचैत्रवालगच्छके शुद्ध परंपरावाले शुद्ध संयमी श्रीदेवभद्रोपाध्यायजीके पासमें क्रिया उद्धार कियाथा,अर्था- त्-उनके शिष्य होकर शुद्ध संयमी बने थे. और उसके बादमें बहुत तपस्या करनेसे 'तपा' बिरुद मिलाथा, उस रोजसे इन महाराजकी समुदायवाले तपगच्छके कहलाये गये. इसलिये श्रीदेवेंद्रसूरिजीम- हाराजने और श्री क्षेमकीर्त्तिसूरिजी महाराजने श्रीजगचंद्रसूरिजीम- हाराजकी पहिलेकी शिथिलाचारकी वडगच्छकी अशुद्ध परंपरा लि- खना छोडकर; इनमहाराजकी चैत्रवालगच्छकी शुद्ध परंपरा अपनी बनाई 'धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति' में और 'श्रीबृहत्कल्प भाष्य वृत्ति' में लिखीहै. यही शुद्ध परंपरा लिखना जिनाज्ञानुसार है, मगर पहिलेकी वडगच्छकी अशुद्ध परंपरा लिखना जिनाज्ञानुसार नहींहै.यह बात अल्पज्ञभी अच्छी तरहसे समझसकताहै. जिसपरभी अभी वर्तमानि क तपगच्छके विद्वान् मुनिमंडल देवेंद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी लिखी हुई जिनाज्ञानुसार चैत्रवालगच्छकी शुद्ध परंपराको छोड देते हैं.और जिनाज्ञाविरुद्ध शिथिलाचारी वडगच्छकी अशुद्ध परंपराको लिखते हैं. यह सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है. इन सर्व बातोंका विस्तार पूर्वक खुलासा इस ग्रन्थके उत्तरार्द्धमें लिखा गयाहै. सोभी छपकर तैयार होगयाहै, इस पूर्वार्द्धके प्रकट हुएबाद, थोडे समयसे उत्तरा- र्द्धभी प्रकट होगा, सो संपूर्ण तया वांचनेसे सर्व निर्णय हो जावेगा.

विद्वान् सर्व मुनिमंडलसे विनति.

श्रीमान्- विजयकमलसूरिजी, विजयधर्मसूरिजी, विजयनेमि- सूरिजी, बुद्धिसागरसूरिजी, विजयवीरसूरिजी, विजयनीतिसूरिजी विजयसिद्धिसूरिजी, आनंदसागरसूरिजी, उ०इन्द्रविजयजी, प्र० श्री कांतिविजयजी-मंगलविजयजी, पं० गुलाबविजयजी- धर्मविजयजी- केशरविजयजी-दानविजयजी-मणिविजयजी- अजितसागरजी, श्री हंसविजयजी-कपूरविजयजी- वल्लभविजयजी-कल्याणविजयजी-ल- ब्धिविजयजी-आनंदविजयजीआदि विद्वान्सर्व मुनिमंडलसेविनति.

आप यह तो जानतेहीहैं, कि-श्रीनिशीथचूर्णिमें वर्षाऋतुमेंही मु-

नियोंको आलोयणालेनेकाकहाहै, और अभी श्रावणादिमहीने बढे. तब पांच महीनोंके दश पक्ष; १५० दिन वर्षाकालके होते हैं, उसमें आयंबिल, उपवास, नवकरवाली गुणने वगैरहसे जितने दिन धर्मकार्य होंगे, उतनेही दिन आलोयणाकी गिनतीमें आवेंगे, इसी तरहसे वर्षी और छ मासी तपके दिनोंमें व ब्रह्मचर्य पालने वगैरह कार्योंमेंभी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें आते हैं ॥ इस हिसावसे धर्मकार्यमें व कर्म बंधनके व्यवहारमें सूर्यके उदय अस्त (रात्रि दिनके) परिवर्तनके हिसावसे और अंग्रेज़ी, मुसलमानी, पारसी, बंगलाकी तारिखोंके हिसावसेभी आषाढ चौमासीसे जब दो श्रावण होवें; तब भाद्रपद तक, या जब दो भाद्रपद होवे तब दूसरेभाद्रपद तक ८० दिन होतेहैं, उसके ५०दिन कहतेहैं, और जब दो आसोज होवे तब कार्तिक तक १००दिनहोतेहैं, उसकेभी ७०दिन कहतेहैं. यहबात संसार व्यवहारके हिसावसे, रात्रिदिनके जानेके (समयके प्रवाहके) हिसावसे, धर्मशास्त्रोंके हिसावसे, ज्योतिषपंचांगकेहिसावसे, राज्यनीतिके हिसावसे, और धर्म-कर्मके अनादि नियमके हिसावसेभी सर्वथा विरुद्धहै. और अन्य दर्शनियोंके विद्वानोंके सामने जैनशासनको कलंक रूपहै. इसलिये मेहेरवानी करके बहुत समयकी गच्छ परंपराकी रूढीरूप प्रवाहके आग्रहको छोडकर जिनाज्ञाका विचार करके यह अनुचित रीवाज़को वगर विलंवसे सुधारनेकी कौशिशकरें. इसके संबंधमें सर्व बातोंका खुलासापूर्वक समाधान इस ग्रंथकी भूमिकाके ४७ प्रकरणोंमें व सुबोधिकादिककी २८ भूलोंवाले लेखमें और इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आयाहै, उसको पूरेपूरा अवश्यवांचे और योग्य लगे उतना सुधाराकरें, पक्षपात झूठाआग्रह शास्त्रविरुद्ध बहुतलोगोंकी समुदाय व गुरुगच्छकी परंपरा हितकारीनहींहै, किंतु जिनाज्ञाही हितकारीहै. परोपदेशकेलिये बहुत लोगवडे कुशल होतेहैं, मगर वैसाही कार्य करनेवाले आत्मार्थीबहुतहीअल्पहोतेहैं, यहभी आपजानतेहीहै.

और सर्वज्ञ शासनमें कर्मबंधन व धर्मकार्यसंबंधी समय २ का व श्वासोश्वासका हिसाब किया जाताहै, उसमें ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके ७० दिन कहनेवाले, यदि कसाई व व्यभिचारी वगैरह पापीप्राणियोंके कर्मबंधन और साधु मुनिमहाराजोंके व ब्रह्मचारी वगैरह धर्मी प्राणियोंके कर्मक्षयकरने संबंधीभी ८० दिनके ५० दिन, व १००दिनके ७०दिन कहेंगे, तबतो-सर्वज्ञ भगवान्‌के प्रवचनकी व धर्म-कर्मकी अनादिमर्यादा भंग करनेके दोषी ठहरेंगे, अथवा

८०दिनके व १००दिनके धर्म-कर्म समय २ के श्वासोश्वासके हिसाब से सर्वज्ञ भगवान्के प्रवचनानुसार अनादिमर्यादा मुजब मान्यकरेंगे, तो-८०दिनके ५०दिन,व १०० दिनके ७० दिन कहनेका आग्रह झूठाही ठहरजावेगा. यहभी न्यायबुद्धिसे विचारने योग्यहै, विशेष क्या लिखें.

देव द्रव्य निर्णयः ।

१-वर्तमानिक देवद्रव्यकी चर्चा संबंधी अर्पण बुद्धिसे भगवान्को चढाई हुई वस्तु देव द्रव्यमें गिनी जातीहै, यह बात सर्वमान्य है, इसी तरहसे पूजा और आरतीकी बोलीभी अर्पण बुद्धिसे पहिलेसेही संघ तरफसे भगवान्को चढाई हुई वस्तु हैं, अर्थात्-देवद्रव्यमें जानेका नियम होचुका है, उनको अन्य मार्गमें ले जानेसे विनाकारण संघकी आज्ञा भंगका व भगवान्को अर्पण कीहुई वस्तु रूपांतरसे पीछी लेनेका दोष आताहै, इसलिये ऐसा करना योग्य नहीं है।

२-भगवान्की पूजा आरतिकी बोली कलेश निवारण करनेके लिये नहींहै, किंतु शुद्ध भक्तिके लिये है, देखो-अपने अनुभवसे यही मालूम होता है, कि-बहुत भाविक जन आज अमुक पर्व दिवस है, मेरी शक्तिके अनुसार आज १०।२० या १००।२०० रुपये भगवान्की भक्तिके लिये देवद्रव्यमें जावें तोभी कोई हरज नहीं है, मगर आज तो भगवान्की पहिली पूजा-आरति मैं करूं, तो मेरे कल्याण-मंगल होवें,वर्षभर भगवान्की भक्तिमें जावें,इसी निमित्तसे मेरा द्रव्य भगवानकी भक्तिमें लगेगा.तो मेरी कमाईभी सफल होवेगी, और सुकृत कीकमाईवालेभाग्यशालीको आज भगवान्की भक्तिका पहिलालाभ मिलेगाऐसाकहनेमेंभीआताहै. इत्यादि शुभभावसेबोलीबोलतेहैं, इसलिये कलेश निवारणकेलिये बोली बोलनेका ठहराना योग्य नहीं है.

औरभी देखो-भगवान्केमंदिर बनवाने व प्रतिमा भरवानेमें महान् लाभ कहा है, यह कार्य भक्तिकेलिये धर्म बुद्धिसे करनेकी शास्त्राज्ञा है. तोभी कितनेक बेसमझलोग नामकेलिये या अभिमानसे वा देखादेखीके विरोधभावसे करतेहैं,सो यह अनुचितहै. इसी तरहसे बोली बोलनेका रीवाजभी भगवान्की भक्तिके लिये महान् लाभका हेतु है, तोभी कितनेक बेसमझलोग नामकेलिये या अभिमानसे वा देखादेखीके विरोध भावसेबोलतेहैं. उनको देखकर बोलीबोलनेके रीवाजको भक्ति राग छोडकर कलेश निवारणका हेतु ठहराना योग्यनहींहै.

तथा देवद्रव्यकी तरह साधारण द्रव्यकीभी बहुतही आवश्यकताहै, उसमें बे दरकारीका दोष मुनिमंडल व आगेवानोंपरहै. औ-

रमी देव द्रव्य संबंधी सर्व शंकाओंका समाधान व साधारण द्रव्य की वृद्धिके लिये उपायवगैरह बहुतबातोंके खुलासे समाधान 'देव द्रव्य निर्णय' नामा पुस्तकमें लिखनेमें आवेंगे.

निवेदन और उपकार.

इसग्रंथकी कोईबात समझमें न आवे, या वांचते २ कोई शंका होवे, तो इस ग्रंथके कर्त्ताको लिखकर खुलासा मंगवानेका सबको हक है, ग्रंथ संबंधी सब तरहका जवाबदार लेखक है.

इस ग्रंथमें अनुमान ३०० शास्त्रोंके प्रमाण बतलाये गयेहैं, इस ग्रंथके बनवाने संबंधी शास्त्रोंके संग्रह करने वगैरहमें, श्रीमान् जिनयशसूरिजीमहाराज, श्रीमान् शिवजीरामजीमहाराज, श्रीमान्जिन चारित्रसूरिजीमहाराज, श्रीमान् कृपाचंद्रसूरिजीमहाराज, पन्यासजी श्रीमान् केशरमुनिजीमहाराज, पं०श्रीमान्सुमानमुनिजीमहाराज और कलकत्तानिवासी उ.श्रीमान्जयचंद्रजीगणि व रायबहादुर बद्रीदास जीजौहरीवगैरहोंने जो जो मदददीहै, उनका मैं उपकार मानता हूं.

संवत् १९७८ वैशाख शुदी ३. हस्ताक्षर मुनि-मणिसागर.

बिनाकिंमतभेटसे पुस्तक मिलनेके नाम व स्थान.

यहग्रन्थ एकहजार पृष्ठकायडाहोनेसे दो विभागमें प्रकटकियाहै

१ बृहत्पर्युषणा निर्णय पूर्वार्द्ध, प्रथम-दूसरा खंड.
२ बृहत्पर्युषणा निर्णय उत्तरार्द्ध, तीसरा खंड.
३ लघुपर्युषणा निर्णयका प्रथम अंक.
४ प्रश्नोत्तर विचार. ५-६-७ प्रश्नोत्तर मंजरीके १-२-३ भाग.
८-९ हर्षहृदय दर्पण १-२ भाग १० आत्मभ्रमोच्छेदन भानुः.

यह ग्रन्थभी छपनेवाले हैं.

१ देवद्रव्यनिर्णय. २ न्यायरत्न समीक्षा. ३ प्रवचनपरीक्षा निर्णय.

१ श्रीमद् अभयदेवसूरि ग्रन्थमाला कार्यालय, ठे० श्रीजैनश्वेतांबर मित्रमंडल कॅनिंगस्ट्रीट नं. २१, मु०--कलकत्ता.
२ श्रीमद् अभयदेवसूरि ग्रन्थमाला कार्यालय, ठे० बडा उपाश्रय देश-मारवाड, मु०--बीकानेर.
३ श्रीजिनदत्तसूरिजी ज्ञानभंडार, ठे० गोपीपुरा-शीतलवाडी देश-गुजरात, मु०--सुरत.
४ जौहरी माहूमलजी धनपतसिंहजी भणशाली, सुदरबील्डिंग ठे० फत्तहपुरी, मु०-- दिल्ली.

इस ग्रन्थकारके गुरुजी
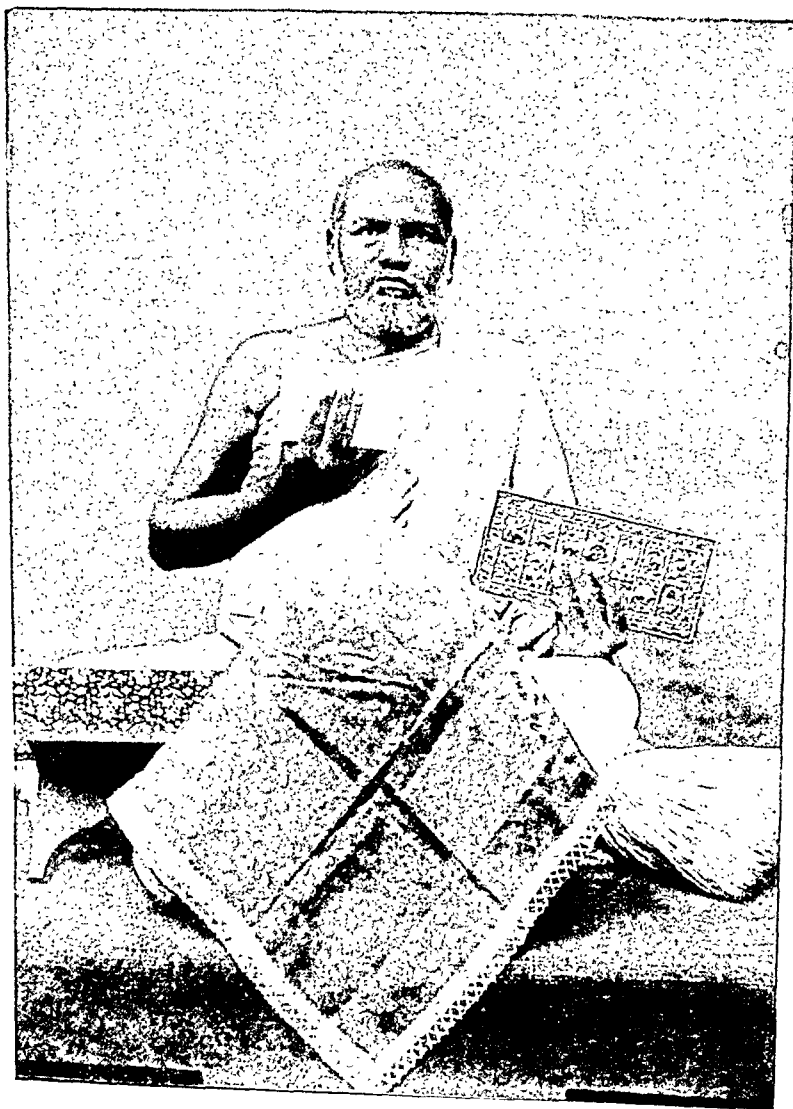
श्रीमन्मुनिवर्य श्रीसुमति सागरजी महाराज।
ज्ञाति वीशाओसवाल, नागोर मारवाड़।
जन्म संवत् १९१७। दीक्षा संवत् १९४४।

I. A. School, Calcutta.

॥ ॐ ॥

श्रीपंचपरमेष्ठिभ्यो नमः

प्रथम भागकी भूमिका

पहिले इसको अवश्य पढिये.

मांगलिक्यके करनेवाले श्रीस्थंभनपार्श्वनाथ जिनेश्वर भगवान्-को नमस्कार करके, श्रीजिनाज्ञाभिलाषी सर्व सज्जन महाशयोंको निवेदन किया जाता है, कि-जन्म-मरण-रोग-शोक-आधि-व्याधि संयोग-वियोगादि-उपाधियुक्त दुष्तर संसार समुद्रके परिभ्रमणका दुःख निवारण करनेके लिये, आत्महितैषी पुरुषोंको जिनाज्ञानुसार शांतिपूर्वक धर्मकार्य करना चाहिये। जिसमें वर्तमानिक द्रव्यगच्छ परंपरा बहुत समुदायकी देखादेखीकी रूढिको अहितकारी जानकर त्यागना चाहिये। और सुधारेके जमानेमें गच्छांतर भेदोंकी भिन्न भिन्न प्रवृत्ति देखकर शंकाशील होकर धर्मकार्योंमें शिथिलता करनाभी योग्य नहीं, किंतु 'मेरा सो सच्चा' का आग्रह छोडकर मध्यस्थ बुद्धिसे गुणग्राही होकरके सत्यकी परीक्षाकरके उसको अंगीकार करना, यही मनुष्य जन्मकी सफलताका कारण है।

यद्यपि खंडनमंडनके विवादमें सत्यासत्यका विचार छोडकर अपनापक्ष स्थापन करनेके लिये शुष्कवाद या वितंडावाद करनेवाले आजकल बहुत लोग देखे जाते हैं. मगर दूसरेकी सत्यबात अंगी-कार करके अपना असत्य आग्रहको छोडनेवाले बहुतही थोडे देखनेमें आते हैं। जब दूसरेके पक्षका खंडन करनेके ईरादेसे उद्यम करनेमें आता है, तब उसपक्षवालेकी अनेक शास्त्र प्रमाणसहित युक्तिपूर्वक सत्यबातकोभी छोडकर भोले जीवोंको अपना पक्ष सत्य दिखलानेके लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके संबंध वाले सब पाठोंको छुपाकर थोडेसे अधूरे २ पाठ लिखते हैं. तथा शास्त्रकारोंके अभिप्राय विरुद्ध उनके अर्थ करते हैं. या शास्त्रीय बातको झूठी ठहरानेकेलिये कुयुक्तियें लगानेमें उद्यम किया जाता है. अथवा विषय संबंध छोडकर विषयांतर लेकर निष्प्रयोजन व्यक्तिगत आक्षेप करने लग

जाते हैं. और अपनी या अपने पक्षकारोंकी बडाई करने लग ते हैं। मगर शास्त्रोंमें तो कहा है. कि-आत्मप्रदेशगत मिथ्यात्वसेभी प्ररूपणागत मिथ्यात्व अधिक दोषवाला होनेसे अनेक भवभ्रमण करानेवाला होता है।

और अनादिकालसे ११ अंगादिकको देखकर अनंतजीव संसार परिभ्रमणके दुःखसे मुक्त होगये. और अनंतजीव संसार परिभ्रमणके दुःखको बढानेवालेभी होगये। इसका आशय यही है, कि. अतीव गहनाशयवाले, अपेक्षा गर्भित शास्त्रकारोंके अभिप्रायको समझकर वर्ताव करनेवाले मुक्तिगामी होते हैं। और शास्त्रकारोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर शब्दमात्रके आग्रहमें पडनेवाले संसारगामी होते हैं.। मगर जो आत्मार्थी होते हैं वो तो शब्द मात्रके विवादको छोडकर तात्पर्यार्थ तरफ दृष्टि करते हैं, और जो आग्रही होते हैं, वो तात्पर्यार्थको छोडकर शब्दमात्रके विवादको विशेष व ढाते हैं। इसी ही कारणसे रागद्वेषादि भाव शत्रुओंको हटानेवाला वीतराग सर्वज्ञ भगवान्का कथन किया हुआ अविसंवादी शांतिप्रिय जैनशासनमें अभी विसंवादरूपी विरोध भावको स्थान मिलगया है।

और पहिले तो तीर्थंकर महाराजोंके जितने गणधर होतेथे उतने ही गच्छ [साधु समुदायकी ओलखान] होतेथे और पीछेभी प्रभावकाचार्योंकी बहुत समुदाय होनेसे कुल-गण-शाखा वगैरह होतेथे, मगर सबकी प्ररूपणा और क्रिया एक समान होनेसे संपशांतिसे मिलते हुए आत्मकल्याण करतेथे, उस समय विरोधी प्ररूपणा के अभावसे किसीकोभी कोई तरहकी शंकाका कारण या अपने गच्छके आग्रहका कारण नहींथा. मगर श्रीवीरप्रभुके निर्वाण-बाद पडताकाल होनेसे कितनेक शिथिलाचारी चैत्यवासी होगये, उन्हींसे गच्छोंका आग्रह और भिन्नभिन्न प्ररूपणा विशेष होने लगी. तबसे ही शास्त्रोक्त जिनपूजा विधिमें कुछ अविधिभी होगई, और जैन पंचांगके विच्छेद होनेपर जैनसमाज लौकिक टिप्पणा मानने लगा, उसमें श्रावणादिभी महीने बढते हैं उस मुजब वर्ताव शुरू. किया, तबसे महामांगलयकारी शांतिमय अति उत्तम पर्युषणा जैसे पर्व आराधनमेंभी भेद पडगया. और शासन नायक श्रीवर्द्धमान स्वामिके छ कल्याणक नहीं मानने वगैरह कितनीही बातोंका विवाद

उपस्थित होगया. उसके विषयमें आगे लिखनेमें आवेगा, मगर इस जगह तो हम केवल पर्युषणा संबंधी थोडासा लिखतेहैं.

जैन पंचांगके अनुसार जब वर्ताव करनेमें आताथा तब पर्युषणासंबंधी " अभिवड्ढियंमि वीसा, इयरेसु सवीसई मासो " इत्यादि निशिथ भाष्य-चूर्णि, बृहत्कल्प भाष्य-चूर्णि-वृत्ति, पर्युषणाकल्पनिर्युक्ति-चूर्णि-वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमें खुलासा लिखा है, कि, आषाढ चौमासीसे वर्षाऋतुमें जीवाकुलभूमि होनेसें जीवदयाके लिये, मुनियोंको विहार करनेका निषेध और वर्षाकालमें १ स्थानमें ठहरना उसका नाम पर्युषणा है. इसलिये जब अधिक महिना होवे तब उसको तेरह (१३) महीनोंका अभिवर्द्धित वर्ष कहतेहैं, उस वर्षमें आषाढ चौमासीसे २० वें दिन प्रसिद्ध पर्युषणा करना । और जिस वर्षमें अधिक महिना न आवे तब उसको १२ महिनोंका चंद्रवर्ष कहतेहैं, उस वर्षमें आषाढ चौमासीसे ५० वें दिन प्रसिद्ध-पर्युषणा करना [वर्षाकालमें रहनेका निश्चय कहना] उसीमेंही उसीदिन वार्षिक कार्य और उसका उच्छव किया जाता है, यह अनादि नियम है. इसलिये निशिथ चूर्णि, पर्युषणा कल्पनिर्युक्ति, चूर्णि, जिवाभिगमसूत्रवृत्ति, धर्मरत्नप्रकरणवृत्ति, कल्पसूत्रमूल और उसकी सबी टीकाओंमें संवच्छरी शब्दकोभी पर्युषणा शब्दसे व्याख्यान कियाहै, और प्रसिद्ध पर्युषणा के दिनसे भिन्न (अलग) वार्षिक कार्योंका दिन कोईभी नहीं है, किंतु एकही है. इसीको पर्युषणा पर्व कहो, संवच्छरीपर्व कहो, सांवत्सरिकपर्व कहो या वार्षिक पर्व कहो, सबका तात्पर्य एकही है । और कारणवश " अंतरा वि य से कप्पइ, नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणा वित्तए " इत्यादि कल्पसूत्र वगैरह शास्त्र पाठोंके प्रमाणसे आषाढ चौमासीसे ५० वें दिन पहिले तो पर्युषणा करना कल्पताहै, मगर ५० वें दिनकी रात्रिको उल्लंघन करके आगे करना नहीं कल्पताहै । ५० वें दिनतक पर्युषणाकरनेको ग्राम नगरादि योग्यक्षेत्र न मिलसकेतो, जंगलमेंभी वृक्ष नीचे अवश्य पर्युषण करनाकहाहै । और अभिवर्द्धितवर्षमें २० दिने, तथा चंद्रवर्षमें ५० दिने पर्युषणा न करे और विहार करेतो " छकाय जीव विराहणा " इत्यादी स्थानांगसूत्रवृत्ति वगैरह पाठोंसे छकाय जीवोंकी विराधना करनेवाला, आत्मघाती, संयम और जिनाज्ञाको विराधन करनेवाला कहा है । यह नियम जैन पंचांगानुसार पौष और आषाढ वढताथा तब चलताथा, मगर जबसे जैन पंचांग

विच्छेद हुआ, तबसे लौकिक टीप्पणा मुजब मास पक्ष-तिथी-वार-नक्षत्र-मुहूर्तादि व्यवहार जैन समाजमें शुरू हुआ. उसमें श्रावण भाद्रपदादि मासभी बढने लगे. तब जैनसंघने श्रीवीर निर्वाणसे ९९३ वर्षे अधिक महिने वाला वर्षमें २० दिने पर्युषणापर्व करनेकी मर्यादा बंध करी और अधिक महिना हो, चाहे न हो, तो भी ५० वें दिन पर्युषणापर्वमें धार्मिक कार्य करनेका नियम रक्खा. सो " जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाऽऽषाढ एव वर्धते नान्ये मासास्तट्टिप्पणक तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते तत. पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा युक्तेति वृद्धाः " यह पाठ कल्पसूत्रकी सर्वां टीकाओं में प्रसिद्धही है । उसके अनुसार श्रावण बढे तो दूसरे श्रावणमें और भाद्रपद बढे तो प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पर्युषण पर्व करना जिनाज्ञा है । और पहिले मास वृद्धिके अभावसे ५० वें दिन पर्युषण करतेथे, तब पिछाडी कार्तिक तक ७० दिन ठहरतेथे, मगर जब मास वृद्धी होनेपर २० दिने पर्युषणा करतेथे, तब तो पर्युषणाके पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन ठहरतेथे, यह बात निशिथभाष्य-चूर्णि-पर्युषणाकल्पचूर्णि बृहत्कल्प चूर्णि-वृत्ति-जीवानुशासनवृति, गच्छाचारपयन्नवृति, स्थानांगसूत्रवृति वगैरह शास्त्र पाठोंसे सिद्ध होती है । और वर्तमानमें श्रावण, भाद्रपद तथा आश्विन बढनेपरभी ५० दिने पर्युषणापर्व करनेसे पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन ठहरते हैं । यह भी कल्पसूत्रकी टीकाओंके अनुसार होनेसे जिनाज्ञानुसारही है, इसलिये इसमें किसी प्रकारका दोष नहीं है. ।

इस ऊपरके शास्त्रीय लेखपर दीर्घ दृष्टिसे निष्पक्ष होकर मध्यस्थ बुद्धिसे विचार किया जावे तो स्पष्ट मालूम हो जावेगा, कि-पर्युषणा पर्व करनेमें जैन टिप्पणानुसार या लौकिक टिप्पणानुसार अधिक मास या कोईभी मास वा कोईभी दिन बाधक नहीं हैं. क्योंकि पर्युषणा पर्व करनेमें ५० दिनोंका व्यवहारिक गिनतीका नियम होनेसे पर्युषणा पर्व दिन प्रतिबद्ध ठहरता है. किंतु मास प्रतिबद्ध नहीं ठहर सकता । और ५० दिनोंकी गिनतीमें अधिक महिनेके ३० दिवस तो क्या मगर एक दिवस मात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता । जिसपरभी पर्युषणा पर्व- दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपद मास प्रतिबद्ध ठहराना १. अधिक महिनेके ३० दिनोंको बिचमेसे छोड देना २. बीश दिनोंसे पर्युषणा पर्व करने की बातको सर्वथा उडा देना ३. श्रावण भाद्रपद या आश्विम बढनेसे १००

दिन होनेपरभी उसको ७० दिन कहनेका आग्रह करना ४. सो सर्वथा शास्त्रकारोंके विरुद्ध है।

अब पर्युषणा पर्व करने संबंधी ५० दिनोंकी गिनती करनेमें अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोड देनेका आग्रह करनेके लिये कितनेक लोग शास्त्रविरुद्ध होकर कुयुक्तियें करतेहैं उसके विषयमें थोडासा लिखते हैं :—

१—कल्पसूत्रादिमें आषाढ चौमासीसे दिनोंकी गिनतीसे ५० वें दिन अवश्यही वार्षिककार्य पर्युषणापर्व करना कहाहै, उसमें अधिकमहीनेका १ दिनमात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता और ५०वें दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करना नहीं कल्पे, जिसपरभी वर्तमानिक श्रावण भाद्रपद बढनेपर ८० दिने पर्युषणापर्व करते हैं, सो शास्त्र विरुद्ध है इसका विशेष खुलासा इसीही ग्रंथकी आदिसे पृष्ठ २७ तक देखो.

२—अधिक महीनेके ३० दिन जैनशास्त्रोंमें गिनतीमें नहीं लिये, ऐसा कहते हैं सो भी शास्त्र विरुद्ध है, अधिक महिनेके ३० दिनोंको-दिनोंमें, पक्षोंमें, मासोंमें, वर्षोंमें और युगकी गिनतीमें खुलासा पूर्वक गिने हैं, विशेष खुलासा देखो पृष्ठ २८ से ४८ तक.

३—अधिक महीना काल चूलारूप है सो गिनतीमें नहीं लेना ऐसा कहतेहैं, सो भी शास्त्र विरुद्ध है. निशीथचूर्णि, दशवैकालिक बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें अधिक महीनेको काल चूलाकी शिखर रूप श्रेष्ठ, [उत्तम] ओपमादीहै और उसके ३० दिनोंको गिनतीमेंभी लिये हैं. इसका विशेष खुलासा देखो पृष्ठ ४९ से ६५ तक। तथा पृष्ठ ७५ से ९१ तक.

४-पर्युषणाकल्प चूर्णि तथा निशीथ चूर्णिके पाठसे दो श्रावण होवें तो भी भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करना ठहराते हैं सो भी शास्त्र विरुद्ध है, दोनों चूर्णिके पाठोंमें अधिक महीना पौष या आषाढ आवे तब उसके ३० दिन गिनतीमें लेकर आषाढ चौमासीसे २० वें दिन श्रावणमें पर्युषणा पर्व करना लिखाहै और अधिक महीना न होवे तब ५० वें दिन भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखाहै। और ५० वें दिनको उल्लंघन करनेवालोंको प्रायश्चित कहा है, इसलिये दो श्रावण होनेपरभी ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करना योग्य नहीं है। और अधिकमासके ३० दिन गिनतीमें छोडदेनाभी शास्त्र वि-

रुद्ध है. इसका विशेष खुलासा देखो दोनों चूर्णिके विस्तार पूर्वक पाठों सहित पृष्ठ ९१ से १०६ तक

५- जैन टिप्पणामें अधिक महीना होताथा तबभी २० वें दिन श्रावण शुदी पंचमीको पर्युषणा धार्मिक कार्य होतेथे, इसलिये २० वें दिनकी पर्युषणामें धार्मिक कार्य नहीं हो सकते, ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्धहै इसका विशेष खुलासा देखो पृष्ट १०७ से ११७ तक.

६- श्रावण भाद्रपद या आश्विन बढे तो भी ५० वे दिन पर्युषणापर्व करनेसे शेष कार्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसपरभी ७० दिन रहनेका आग्रह करते हैं सोभी शास्त्र विरुद्ध है ७० दिन मास वृद्धिके अभाव संबंधी हैं और मास वृद्धि होवे तब १०० दिन रहना शास्त्रानुसार है। इसका विशेष खुलासा पृष्ठ ११७ से १२८ तक, तथा १७४ से १८५ तक देखो.

७ अधिक महीना होनेसे उस वर्षमें १३ महीने तथा चौमासेमें ५ महीने होते हैं. तब उतनेही महीनोंके कर्मबंधनभी होते हैं, जिसपरभी १२ महीनोंके क्षामणे करने कहते हैं. सो भी शास्त्र विरुद्ध है. अधिक महीना होवे तब १३ महीनोंके क्षामणे करना शास्त्रानुसार हैं; इसका विशेष खुलासा पृष्ठ १३३ से १३६ तक तथा १७० से १७१ तक और पृष्ट ३६२ से ३७८ तक देखो.

८ अधिक महीनेमें सूर्यचार नहीं होता ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्धहै, छ छ महीने १८३ वें दिन, सूर्य दक्षिणायनसे उत्तरायनमें और उत्तरायनसे दक्षिणायनमें हमेशा होता रहता है, उसमें अधिक महीनेके ३० दिनोंमेंभी जैनशास्त्र मुजब या लौकिक टिप्पणा मुजबभी सूर्यचार होता है. इसका विशेष खुलासा देखो पृष्ठ १३७ से १३९ तक

९ अधिक महीने के ३० दिनोंमें देवपूजा मुनिदान वगैरह धर्मकार्य करने, मगर उसके ३० दिनोंको गिनतीमें नहीं लेनेका कहना, सो भी शास्त्र विरुद्ध है। जितने रोज देवपूजादि धर्मकार्य किये जावेंगे, उतने दिन अवश्यही गिनतीमें लिये जावेंगे, और जैसे मुनिदानादि दिन प्रतिबद्धहैं, वैसेही पर्युषणाभी ५० दिन प्रतिबद्धहै. इसका विशेष खुलासा पृष्ठ १४२ से १४३ तक देखो

१० अधिक महिनेमें विवाहादि शुभकार्य नहीं होते, उसमु-

जब पर्युषणा पर्वभी नहीं हो सकते. ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्ध है, मुहूर्त्तवाले विवाहादि तो मलमास, अधिकमास, क्षयमास, १३ महिनोंके सिंहस्थ, अधिकातिथि, क्षयतिथि, गुरुशुक्रका अस्त और हरि शयनका चौमासा वगैरह कितनेही तिथि-वार-नक्षत्र-मास वगैरह योगोंमें नहीं किये जाते, मगर विना मुहूर्त्तके धर्मकार्य करनेमें तो किसी समयका निषेध नहीं हो सकता इसी तरह पर्युषणा पर्वभी अधिकमासमे,१३ महीनोंके सिंहस्थमें, और चौमासेमें करनेमे आते हैं। इसमें अधिकमहीना या कोईभी योग बाधक नहीं हो सकता. इसका विशेष खुलासा पृष्ट १९३ से २०४ तक देखोः—

११– अधिकमहीनेको वनस्पतिभी अंगीकार नहीं करती ऐसा कहनाभी शास्त्र विरुद्ध है. अधिक महीनेके ३० दिन तो क्या १ दिन मात्रभी वनस्पति नहीं छोड सकती, किंतु हरेक समय प्रत्येक दिवसको अंगीकार करती है. इसका विशेष खुलासा पृष्ठ २०५ से २१० तक देखो.—

इत्यादि मुख्य २ बातों संबंधी शास्त्रीय प्रमाण और युक्तिपूर्वक इस प्रथमभागमें अच्छीतरहसे खुलासापूर्वक लिखनेमें आया है.

और इस ग्रंथको पक्षपात रहित होकर संपूर्ण पढनेवाले सज्जनोंको सत्यासत्यकी परीक्षा स्वंय होसकेगी, इससे यहांपर विशेष लिखनेकी कोई अवश्यकता नहीं है।

ग्रंथकारका उद्देश क्या है ?

इस ग्रंथकारका मुख्य उद्देश यहीहै, कि-सबगच्छवाले संपपूर्वक सुखशांतिसे धर्म कार्य करें, मगर पर्युषणा जैसे धार्मिक शांतिके दिनोंमें अधिक महिनेके ३० दिनोंको धर्मकार्योंमें गिनतीमेंसे छोड देनेके लिये तपगच्छके मुनिमहाराज जो खंडन मंडनका विषय व्याख्यानमें चलाते हैं, सो सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है.और समयके प्रतिकूल होनेसे--कर्मबंधन, कुसंप व शासनहिलना कराने वालाहै (इसीका निर्णय इस ग्रंथमें अच्छी तरहसे लिखा गया है) ,उसको (इस ग्रंथके वांचे बाद) अवश्य बंध करना योग्य है.

पक्षपात रहित ग्रंथकी रचना

"पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु । युक्ति मद्वचनं यस्य, तस्य कार्यः परिग्रहः ॥ १ ॥" इत्यादि महापुरुषोंके न्यायानुसार पक्षपात रहित होकर आगम पंचांगी सम्मत युक्तिपू

र्यक खरतरगच्छ, तपगच्छ, अंचलगच्छादि सब गच्छवालोंके वाक्योंका संग्रह इसग्रंथमें करनेमें आया है। मगर अमुक गच्छवालेके अमुक आचार्यके वाक्य हमको मंजूर नहीं, ऐसा एकांत आग्रह किसी जगहभी करनेमें नहीं आया. और शास्त्रविरुद्ध युक्ति बाधित वाक्य तो कोईगच्छवालेकाभी मान्य करना योग्य नहीं. यह बात सर्व जन सम्मतहीहै, वोही न्याय इस ग्रंथमें रक्खा गया है. इसलिये पाठकगणको किसी गच्छ समुदायका पक्षपात न रखकर अवश्य संपूर्ण अवलोकन करके सार निकालना चाहिये.

इस ग्रंथका लेखक मैं खास संसारीपनेमें तपगच्छका वीसापोरवाल श्रावकथा मगर उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके पास श्रीसिद्धक्षेत्र (पालीताणा) में विक्रम संवत् १९६० वैशाख शुदी २ को खरतरगच्छमें दीक्षा अंगीकार की,तो भी दोनों गच्छोंके पूर्वाचार्योंपर तथा वर्तमानिक मुनिमहाराजोंपर पूज्यभाव था, और हैभी। मगर जिस २ अंशमें शास्त्र विरुद्ध जिस २ बातोंका झूठाही आग्रह किया गया है,उन २ बातोंकी आलोचना करके शास्त्रानुसार सत्य बातें जनसमाजमें प्रकट करना, यह मेरा खास कर्तव्य समझ कर मैंने इस ग्रंथमें इतना लिखाहै। इसमे किसीका पक्षपात न समजना चाहिये. और किसीको नाराज होनेकाभी कोई कारण नही है। वर्तमानिक समयके अनुसार परंपराकी अंधरूढीको त्यागना और सत्यको ग्रहण करना, सब सज्जनोंको प्रिय है। और समय बदलता जाता है. संपसे शासन्नोन्नतिके कार्य करनेकी बहुत जरुरत है, इसलिये कुसंप बढानेवाला पर्युषणाके व्याख्यानमें आपसका खंडन मंडन चलाना योग्य नहीं है. विशेष दूसरे, तीसरे और चौथे भागमे अनुक्रमसे लिखनेमें आवेगा।

क्षमा याचना तथा अपनी भूल स्वीकार।

इसग्रंथकी रचना करते समय मेरी अल्पवय व अल्प अभ्यास होनेसे, इसग्रंथमें-लेखक दोष, भाषादोष, दृष्टिदोष, पुनरुक्ति दोष, प्रेसदोष व शास्त्रीय पाठोंकी विशेष अशुद्धताके दोषोंकी पाठक गण अवश्य क्षमा करें तथा हंसकी तरह दोष त्यागकर सार ग्रहण करें, और सुधारकर बांचे। दूसरी आवृत्तिमें इन दोषोंका संशोधन अच्छी तरहसे करनेमें आवेगा

और सुबोधिका व दीपिका, किरणावली आदिकमें शास्त्र विरुद्ध जो जो बातें लिखी हैं, उन सब बातोंका निर्णय इस ग्रंथमें लिखा

गया है. उसको समझकर उनके अनुयायी विद्वान् पुरुषोंको उनकी सब भूलोंको क्रमशः अवश्य सुधारना योग्य है, तथा इस ग्रंथमेंभी जो कोई बात शास्त्र विरुद्ध देखनेमें आवे तो जरूर मेरेको लिख भेजना. लिखने वालेका उपकार मानकर अपनी भूलको अवश्य स्वीकार करूंगा, और दूसरी आवृत्तिमें सुधार लूंगा.

यह ग्रंथ विलंबसे प्रकट होनेका कारण।

इस ग्रंथकी रचनाका कारण ग्रंथकी आदिमेंही लिखाहै तथा सुबोधिकादिककी खंडनमंडन संबंधी भूलोंका कारण प्रगटही है। और यह ग्रंथ छपनेपर शीघ्रही प्रगट होने वालाथा. मगर कितनेही महाशयोंका कहनाथा कि-यदि मुनिमंडलकी सभामें, विद्वानोंकी समक्ष, इसविषयका, शास्त्रार्थसे निर्णय हो जावे तो वहुत अच्छा होवे, और २ वर्ष पहिले दो भाद्रपद होनेसे इसके निर्णयकी चर्चा खूब जोरशोरसे चलीथी, तब मैंनेभी मुंबईसे 'पर्युषणा निर्णयका शास्त्रार्थ' करने संबंधी विज्ञापन छपवाकर जाहिर कियाथा. उसपर आनंदसागरजी और शांतिविजयजी हां हां करने लगेथे तो भी आडी २ बातें निकालकर चुप बैठ गये, इसका खुलासा आगे लिखूँगा. और अन्य कोईभी मुनि सभामें निर्णय करनेको तैयार नहीं हुए. इसलिये अब यह ग्रंथ इतने विलंबसे प्रकाशित किया जाता है. ग्रंथ एक-हजार पृष्ठके लगभग होनेसे, ४ भागोंमें अनुक्रमसे यथा अवसर प्रकट होता रहेगा. और मंगवाने वाले साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका-यति-श्रीपूज्य-ज्ञान भंडार-लायब्रेरी और साक्षर वर्ग सबको विना किंमतसे भेट भेजा जावेगा।

१-एक वहेम॥

तपगच्छके मुनिमहाराजोंने अपनी समाजमें यहभी एक तरहका वहेम ठसा दिया है, कि-अधिकमहीनेमें विवाह सादी वगैरह शुभ कार्य लोग नहीं करते हैं, उसी तरह अधिकमहीनेमें पर्युषण पर्वादि धार्मिक कार्यभी नहीं हो सकते. मगर तत्त्व दृष्टिसे विचार किया जावे तो यहभी एक तरहका एकांत आग्रहसे झूठाही वहेम है, क्योंकि विवाहादि मुहूर्त्तवाले कार्य तो मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्रादि देखकर, वर्ष छ महीने आगे पीछेभी करते हैं. परंतु विना

मुहूर्त्तके लोकोत्तर धर्मकार्य तो नियमित दिवससे आगे पीछे कभी नहीं हो सकते. इसलिये लौकिक वालेभी मुहूर्त्त वाले कार्य नहीं करते, मगर विना मुहूर्त्तके दान पुण्य परोपकारादि तो विशेष रूपसे करनेके लिये अधिकमहीनेको 'पुरुषोत्तम अधिक मास' कहते हैं,उसकी कथाभी सुनते हैं और सिंहस्थमें नाशिकादि तीर्थोंमें यात्राका मेलाभी भरते हैं। इसी प्रकार वर्तमानिक जैन समाजमेंभी मुहूर्त्तवालेकार्य अधिकमहीनेमें नहीं करते. मगर विना मुहूर्त्तके पर्युषणादि धार्मिक कार्य करनेमें कोई हरजा नहीं है। अधिक महीनेके ३० दिनोंको मुहूर्त्तादि कार्योंमें नहीं लेते, परंतु विना मुहूर्त्तके (दिवसोंकी संख्यासे प्रतिबद्ध) धार्मिक कार्योंमें लेतेहैं। बस ! इसका मर्म सरल दिलसे न्यायपूर्वक समझ लिया जावे तो अधिकमहीनेमें पर्युषणादि धर्म कार्य नहीं हो सकते. ऐसा एकांत आग्रहका झूठा वहेम आपसेही निकल सकता है. इसका विशेष निर्णय इसग्रंथको बांचने वाले सज्जन स्वयंकर सकेंगे।

२- वे समझ या हठाग्रह॥

अधिक महिनेके अभावमें ५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करना लिखा है। ५० दिनके अंदर करनेवाले आराधक होतेहैं उपरांत करनेवाले विराधक होतेहैं. इसलिये ५० वें दिनकी रात्रिको किसीप्रकारभी उल्लंघन करना नहीं कल्पताहै. यह बात जैन समाजमें प्रसिद्ध ही है। जिसपरभी सिर्फ भाद्रपद शब्दमात्रको पकडकर वर्तमानिक दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका आग्रह करतेहैं, मगर ८० दिन होनेसे शास्त्रविरुद्ध होता है, इसका विचार करते नहीं हैं।

और पर्युषणाके पिछाडी हमेशा ७० दिन रखनेका एकांत आग्रह करते हैं, मगर ७० दिनका नियम अधिक महिनेके अभावसंबंधीहै और अधिक महिना होवे तब निशीथचूर्णि,बृहत्कल्पचूर्णि, स्थानांगसूत्रवृत्ति और कल्पसूत्रकी टीकाओंमें १०० दिन रहनेका कहा है। इसलिये ७० दिन या १०० दिन यथा अवसर दोनों बातें मान्य करने योग्य हैं। जिसपरभी १०० दिन संबंधी शास्त्रप्रमाणोंको छोडकर सिर्फ ७० दिनके शब्द मात्रको आगेकरके १०० की जगहभी ७० दिन रहनेका आग्रहकरतेहैं. इसलिये उपरकी दोनों बात संबंधी शास्त्रीय अपेक्षाको वे समझ हैं, या समझने परभी

हठाग्रह है। इसका विचार तत्त्वज्ञ पाठकगणको करना चाहिये।

३- कहतेहैं मगर करतेनहीं, यहभी देखिये-आग्रह!

अधिकमहीनेके ३० दिनोंको गिनतीमेंसे छोडदेनेके आग्रह करनेवाले दो श्रावण होवे तो भी भाद्रपद तक ५० दिन हुए ऐसा कहतेहैं, मगर प्रत्यक्ष प्रमाण व न्यायकी युक्तिसे विचारकर देखा जावे तो यह कहना सर्वथा अनुचित मालूम होता है। देखिये- किसी श्रावक या श्राविकाने आषाढचौमासीसे उपवास करने शुरू किये होवें, उसको बतलाईये दो श्रावण होनेपर ५० उपवास कब पूरे होवेंगे और ८० उपवास कब पूरे होवेंगे? इसके जवाबमें छोटासा बालक होगा वहभी यही कहेगा, कि-५० दिनोंके ५० उपवास दूसरे श्रावणमें और ८० दिनोंके ८० उपवास दोश्रावण होनेसे भाद्रपदमें पूरे होवेंगे। इसीतरह साधुसाध्वीयोंके संयमपालनेमें, तथा सर्व जीवोंके प्रत्येक समयके हिसाबसे ७।८ कर्मोंके शुभाशुभ बंधन होनेमें और धार्मिक पुरुषोंके धर्मकार्योंसे कर्मोंकी निर्जरा होनेमें व सूर्यके उदय अस्तके परिवर्तन मुजब दिवसोंके व्यतीत होनेके हिसाबमें, इत्यादि सब कार्योंमें दो श्रावण होनेसे भाद्रपद तक ८० दिन कहते हैं। ५० उपवास दूसरे श्रावणमें, व ८० उपवास भाद्रपदमें पूरे होनेकाभी कहते हैं. और उपवासादि उपरके सब कार्योंमें. अधिक महिनेके ३० दिनोंको बीचमें सामील गिनकर ८० दिन कहते हैं, ८० दिनोंके लाभालाभ-पुण्यपापके कार्य भी मंजूर करतेहैं. ऐसेही दो आश्विन होनेसे पर्युषणाके पिछाडी कार्तिक तक १०० दिन होते हैं, उसके १०० उपवास, व १०० दिनोंके कर्मबंधन तथा धर्मकार्य वगैरह सब कार्योंमें १०० दिन कहते हैं. और १०० दिनोंको आपभी व्यवहारमें मंजूर करते हैं। उसमें अधिक श्रावणके ३० दिनोंकी तरह अधिक आसोजकेभी ३० दिनोंको गिनतीमें मान्य करना कहतेहैं, मगर दो श्रावण होवे तब भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं, व दो आश्विन होवे तब कार्तिक १०० दिन होते हैं उनोंको अंगीकार करते नहीं. और ८० दिनके ५० दिन व १०० दिनके ७० दिन कहते हैं यह जगत विरुद्ध कैसा जबरदस्त आग्रह कहा जावे इसको विवेकी जन स्वयं विचार सकते हैं।

४- कालचूलारूप अधिकमहीना पहिला या दूसरा?

यद्यपि जैनटिप्पणा विच्छेद है, इसलिये लौकिक टिप्पणा मु-

जब मास पक्षादि मानते हैं, मगर जैनशास्त्रतो मौजूदही हैं. इस-
लिये पर्युषणादि धार्मिक कार्य जैनसिद्धांत मुजब करनेमें आते
हैं। और जैनशास्त्र मुजबही सब गच्छवाले अधिक महीनेको
कालचूला कहते हैं। किंतु कितनेक प्रथम महीनेको कालचूला
कहतेहैं, मगर प्रवचनसारोद्धार, सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्ति, चंद्रप्रज्ञप्तिवृत्ति,
लोकप्रकाश, ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्ति वगैरह शास्त्रप्रमाणोंसे दू-
सरा अधिक महीना कालचूला ठहरता है- देखिये - "सट्ठीए अ-
ईयाए, हवई हु अहिमासो जुगद्धंमि । बावीसे पव्वसए, हवइ हु बी-
ओ जुगंतंमि ॥ १ ॥ इत्यादि सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिके अनुसार ६० पर्व
(पक्ष) के ३० महीने व्यतीत होनेपर ३१ वा महीना दूसरा पौष
अधिक होता है, और १२२ पक्षके ६१ महीने जानेपर कालचूला-
रूप दूसरा आषाढ अधिक होताहै. उसी कालचूलारूप दूसरे अ-
धिक आषाढमेंही चौमासी प्रतिक्रमणादि धार्मिककार्य सब गच्छ-
वालोंके करनेमें आते हैं। और अधिक पौष व अधिक आषाढके
दिनोंकी गिनती सहित, ६२ महीने, १२४ पक्ष, १८३० दिन और
५४९०० मुहूर्तोंके पांच वर्षोंका एक युग कहा है । इसलिये काल-
चूलारूप अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें नहीं आते १, तथा काल-
चूलारूप अधिक महीनेमें चौमासी प्रतिक्रमणादि धार्मिक कार्य नहीं
हो सकते २, और प्रथम महीनेको कालचूलाकहना ३, यह सब बातें
शास्त्रविरुद्धहैं। इसको विशेष पाठकगण स्वयंविचार लेवेंगे।

५- पूर्वापर विसंवादी (विरोधी) कथन ॥

जिस अधिक महीनेको कालचूला कहकर गिनतीमें लेनेका व
पर्युषणादि धर्मकार्य करनेका निषेध करतेहैं, उसी कालचूलारूप
दूसरे अधिक आषाढको गिनतीमें लेकर चौमासीप्रतिक्रमणादि कार्य
आप करते हैं. जिसपरभी मुहसे कालचूलारूप अधिक महीनेको
गिनतीमें नहीं लेना व उसमें धर्म कार्य नहीं करने कहतेहैं और काल-
चूलारूप अधिक महीनेको गिनकर धर्मकार्य करने वालोंको दोष ब-
तलाते हैं। एक जगह कालचूलारूप अधिक महीना गिनतीमें छोडते
हैं। दूसरी जगह उसीकोही आप गिनतीमें लेकर अंगीकार करते हैं
और दूसरे गिनने वालोंको दोष बतलाते हैं यह तो "मम वदने
जिव्हा नास्ति" की तरह कैसा पूर्वापर विसंवादी (विरोधी)
कथन है, सो भी विचारने योग्य है।

६- कालचूला शिखररूप है या चोटीरूप है ?

अधिक महीनेको शास्त्रोंमें कालचूला कहा है और दिनोंकी गिनतीमेंभी लिया है जिसपरभी कितनेक महाशय दिनोंकी गिनतीमें निषेध करनेके लिये चोटीरूप कहते हैं. और जैसे पुरुषके शरीरके मापमें उसकी चोटीकी लंबाईका माप नहीं गिना जाता, तैसेही अधिकमहीना कालपुरुषकी चोटीसमान होनेसे उसीके ३० दिनोंको प्रमाण गिनतीमें नहीं लिये जाते. ऐसा दृष्टांत देते हैं. सो भी शास्त्र विरुद्ध है, क्योंकि पुरुषकी उँचाईकी गिनतीमें उसकी चोटी १--२ हाथ लंबी हो तो भी कुछभी गिनतीमें नहीं आती, उससे उसका प्रमाणभी नहीं बढ सकता, मगर जैसे देवमंदिरोंके शिखर व पर्वतोंके शिखर प्रत्यक्षपणे उनकी उंचाईकी गिनतीमें आते हैं, उसीसे उन्होंकी उंचाईका प्रमाणभी बढजाता है. तैसेही अधिकमहीनेको कालचूला कहा है सो शिखररूप होनेसे गिनतीमें आता है, उससे वर्षका प्रमाणभी १२ महीनोंके ३५४ दिनोंकी जगह १३ महीनोंके ३८३ दिनोंका होता है, और वृद्धिके कारण चंद्र वर्षकी जगह अभिवर्द्धित वर्ष कहा जाता है. इसलिये शिखरकी जगह घासरूप चोटी कह करके गिनतीमें लेनेका निषेध करना सो "करे माणे अकरे" जमालिकी तरह सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है।

७- अधिकमहीना गिनतीमें न्यूनाधिकहै या बरोबरहै ?

जैन सिद्धांतोंके हिसाबसे तो जैसे १२ महीनोंके सवी दिन धर्मकार्योंमें बरोबरहैं तैसेही अधिक महीना होनेसे १३ महिनोंकेभी सवी दिन बरोबर हैं। इसमें न्यूनाधिक कोईभी नहीं है. और पापी प्राणियोंके कर्मोंकाबंधन होनेमें व धर्मीजनोंके कर्मोंकी निर्जरा होनेमें, समयमात्रभी खाली नहीं जाता और समय, आवलिका मुहूर्त,दिन, पक्ष, मास,वर्ष, युग, पल्योपम, सागरोपमादि कालमानमेंसे, समयमात्रभी गिनतीमें नहीं छूट सकता. जिसपरभी धर्म कार्योंमें ३० दिनोंको गिनतीमें छोड देनेका कहते हैं या अधिक महीनेके दिनोंको तुच्छ समझते हैं सो जिनाज्ञा विरुद्ध है इसको विशेष पाठक वर्ग स्वयं विचार लेवेंगे।

८- अधिकमहीना नपुंशकहै या पुरुषोत्तमहै ?

जैसे ब्रह्मचारी उत्तम पुरुष समर्थ होनेपरभी परस्त्री प्रति नपुं-

क समान होताहै, तैसेही लौकिक रूढीसे अधिक महिनेमें विवाह
ादी वगैरह आरंभ वाले या मुहूर्तवाले कार्य करनेमें तो नपुंशक
मान कहतेहैं. तोभी दिनोंकी गिनतीमें लेते हैं। और निरारंभी व
ना मुहूर्तवाले दान, पुण्य, परोपकार, जप तपादि कार्य करनेमें
ा अधिक महीनेको 'पुरुषोत्तम मास' कहा है सो प्रकटही है इस
ये जैन सिद्धांतोंके हिसाबसे या लौकिक शास्त्रोंके हिसाबसे
नोंकी गिनतीमें निषेध करतेहैं सो शास्त्रीय दृष्टिसे व युक्ति प्र-
णसे या दुनियाके व्यवहारसेभी विरुद्ध हैं । इसलिये गिनतीमें
पेध कभी नहीं हो सकता, इसको विशेष पाठकगण स्वयं विचार
कते हैं।

९- दूसरे आषाढमें चौमासी करनेका क्या प्रयोजनहै ?

भो देवानुप्रिय ! चौमासीप्रतिक्रमणादि कार्य ग्रीष्मऋतुपूरी
नेपर वर्षाऋतुकीआदिमें किये जाते हैं, और ज्येष्ट व आषाढ ग्री-
ऋतु कही जाती है. इसलिये जब दो आषाढ होवे तब उन दोनों-
षाढोंको ग्रीष्मऋतुमें गिने जाते हैं, यह बात प्रत्यक्ष प्रमाणसे
गजाहिरहीहै. और जैनसिद्धांतानुसार दूसरे आषाढ शुदी
र्णिमाका हमेशा क्षय होता है, इसलिये दूसरे आषाढ शुदी १४ को
वि वर्षोंका एक युग पुरा होता है, उसी रोज ग्रीष्मऋतुभी पूरी
ती है, तथा पांचवा अभिवर्द्धितवर्षभी उसी रोज पूरा होता है.
र १ युगमें सुर्यके दश अयनभी १८३० दिनोंसे उसी दिन पूरे
ते हैं. इसलिये उसीदिन दूसरे आषाढ शुदी १४ को चौमासी
तिक्रमणादि करनेकी अनादि मर्यादा है। और प्रथम आषाढ ग्री-
ऋतुमें होनेसे वहां ग्रीष्मऋतु, युग, वर्ष अयन वगैरह पूरे नहीं
ते, व प्रथम आषाढमें वर्षाऋतुभी शुरू नहीं होती, इसलिये प्रथ-
आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमणादि नहीं हो सकते. और शास्त्रीय
साबसे श्रावण वदी १ को (गुजरातकी अपेक्षा आषाढ वदी १
ो) युगकी, वर्षकी और वर्षाऋतुकी शुरूआत होती है. इस-
ये उसकी आदिमें और ग्रीष्मऋतुकी, वर्षकी, युगकी समाप्ति
मय दूसरे आषाढमें चौमासीप्रतिक्रमणादि कार्य करने शास्त्र-
माण युक्तियुक्त हैं॥

१०- चौमासा ४ महीनोंका या ५ महीनोंका ?

देखिये-१२ महीनोंका वर्ष कहा जाता है, मगर अधिक महीं

ना होवे तब १२ महीनोंका वर्ष कहा जाताहै, इसीतरह यद्यपि चौमासा शब्द व्यवहारसे ४ महीनोंका कहा जाता है, मगर अधिक महीना होनेसे १३ महीनोंके वर्षकी तरह चौमासाभी पांच महीनोंका होता है. इसलिये अधिक महीना न होवे तब तो ४ महीनोंके ८ पक्ष, १२० दिनोंका चौमासी, मगर अधिक महीना होवे तब पांच महीनोंके दश (१०) पक्ष, १५० दिनोंका चौमासी प्रतिक्रमणादि होते हैं । यहबात प्रत्यक्ष प्रमाणसे व लौकिक टिप्पणाके प्रमाणसे जग जाहिर है और आगमपंचांगी सिद्धांत प्रमाणसेतो अनादि सिद्ध है. इसलिये इसको कोईभी निषेध नहीं कर सकता. इसका विशेष विचार तत्त्वज्ञ पाठक गण स्वंय कर सकते हैं ।

११-- एक कुतर्क ॥

कितनेक कहतेहैं, कि- ' चौमासी आषाढमें करना कहाहै, इसलिये प्रथम आषाढमें करोगे तो दूसरा छूट जावेगा. और दूसरेमें करोगे तो, प्रथम छूट जावेगा. या दोनोंमें करोगे तो पुनरुक्ति दोष आवेगा ' ऐसी २ कुतर्क करते हैं सोभी सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है। क्योंकि प्रथम आषाढमें ग्रीष्मऋतु वगैरह उपर मुजब कारण होनेसे चौमासी नहीं होसकता, इसलिये 'प्रथममें करोगे तो दूसरा छूट जावेगा' ऐसा कहना व्यर्थहीहै। और दो आषाढ होनेसे दोनोंकी गिनतीपूर्वक ५ महीने दूसरे आषाढमें चौमासी करते हैं, इसलिये ' दूसरेमें करोगे तो प्रथम छूट जावेगा ' ऐसा कहनाभी व्यर्थ है। और दोनों आषाढमें दो वार चौमासी नहीं किंतु ग्रीष्मऋतुकी समाप्ति वगैरह उपर मुजब कारणोंसे दूसरेमें एकही वार चौमासी करते हैं इसलिये 'दोनोंमें करोगे तो पुनरुक्ति दोष आवेगा ' ऐसा कहनाभी व्यर्थहीहै। और चौमासी प्रतिक्रमण तो ४ महीने या मासवृद्धि होवे तब पांच महीने सब गच्छवाले एकवार प्रत्यक्षपने करते हैं इसलिये चौमासी ४ महीने होवे मगर पांच महीने नहीं होवे, ऐसा प्रत्यक्ष असत्य भाषण करना योग्य नहीं है. इसकोभी पाठकगण स्वयं विचार लेंगे ।

१२-- दूसरे आषाढमें चौमासीपर्वकी तरह पर्युषणाभी दूसरे भाद्रपदमें हो सके या नहीं ?

आषाढ-कार्तिकादि चौमासा ४-४ महीनोंसे होता है, मगर अधिक महीना होनेसे पांच महीनोंकाभी होता है, यह बात उपर

लिख चुके है. इसलिये मासवृद्धि होनेसे १२० दिनकी जगह १५० दिनभी चौमासेमें होते है, उसमें किसी प्रकारका दोष नहीं बतलाया. मगर पर्युषणातो वर्षाऋतुमें दिन प्रतिबद्ध होनेसे ५० दिने अवश्य करना कहाहै, उसपर १ दिनभी बढ जावे तो दोष कहा है. और दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणा करें तो, ८० दिन होनेसे शास्त्रविरुद्ध होताहै, इसलिये दूसरे आषाढमें चौमासी पर्वकी तरह ,पर्युषणापर्व ८० दिन होनेसे दूसरे भाद्रपदमें नहीं हो सकता. किंतु सर्व शास्त्रोंकी आज्ञा मुजब ५० दिने प्रथम भाद्रपदमें करना युक्तियुक्त न्यायसंपन्न है. इसको तो पाठक गण स्वयं विचार सकते है.

१३–जिसको मानना उसीकोही उत्थापना।

हमेशां भाद्रपदमें पर्युषणा ठहरानेके लिये निशीथचूर्णिके पाठको आगे करते हैं, मगर चूर्णिमेंतो ५० दिने या ४९ दिने पर्युषणा करना लिखा है, परंतु ऊपरांत करना नहीं लिखा और अधिक महीनेके ३० दिनोंकोभी गिनतीमें लिये हैं। जिसपरभी दो भाद्रपद होवे तब ५० दिने प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना छोडकर, ८० दिने दूसरे भाद्रपदमें करते हैं। उसीसे जिस चूर्णिका पाठ मान्य करते हैं उसी चूर्णिका पाठ (दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करनेसे) उत्थापन करते हैं। इसको ,विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार सकते हैं.

१४ - वितंडा वाद ॥

८० दिने पर्युषणा करना शास्त्रविरुद्ध ठहराते हो मगर दो आषाढ होवे तब प्रथम आषाढमें चौमासी करो तो तुमारेभी ८० दिने पर्युषणा होवेगें तब कैसे करोगे? समाधान भो–देवानुप्रिय! पर्युषणाके ५० दिनोंकी गिनती ग्रीष्मऋतुकी समाप्ति होनेपर वर्षाऋतुकी शुरूआतसे गिनी जाती है. और प्रथम आषाढ ग्रीष्मऋतुमें होनेसे उसमे चोमासी नहीं हो सकता और ग्रीष्मऋतुकी समाप्ति हुए बिना व वर्षाऋतुकी शुरूआत हुए बिना प्रथम आषाढसे पर्युषणासबंधी दिनोंकी गिनती नहीं हो सकती इसलिये प्रथम आषाढमें चौमासी करने का व उससे पर्युषणाके दिन गिननेका कहना अज्ञानताका कारण है,क्योंकि वर्षाऋतुकी आदिमें दूसरे आषाढके अंतमें चौमासी होनेसे पर्युषणाके दिन गिननेका निशीथचूर्णि

वगैरहमें कहा है. इसलिये प्रथम आषाढसे ८० दिन बतलाकर दो श्रावण होनेपरभी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करना या दो भाद्रपद होवें तब दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा ठहराना सर्वथा शास्त्र विरुद्ध है, इसकोभी विवेकी पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे।

१५- देखिये यह—कैसी कुयुक्ति है।

कितनेक महाशय अपना असत्य आग्रहको छोड सकते नहीं व सत्यबातको ग्रहणभी कर सकते नहीं और अपनी सचाई जमानेकेलिये कहते हैं, कि- "दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना किसी आगममें नहीं लिखा" ऐसी २ कुयुक्तियें करते हैं और भद्रजीवोंको संशयमें गेरते हैं, मगर. इतना विचार करते नहीं है, कि- ५० दिने पर्युषणापर्व करना सबी आगमोंमें लिखा है., यही जिनाज्ञा है. देखिये— "सवीसई राए मासे" वा "सविंशतिरात्रे मासे" वा "दश पंचके" वा "पचाशतैव दिनैः पर्युषणा युक्तेति वृद्धाः" इन सबी वाक्योंके अर्थसे वर्तमानमें ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करना कल्पसूत्रादि आगमानुसार ठहरता है, इससे ५० दिने कहो, या दूसरा श्रावण प्रथम भाद्रपद कहो, दोनों एकार्थही हैं इसलिये दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना किसी आगममें नहीं लिखा. ऐसी २ जानबुझकर कुयुक्तियें लगाकर अपना झूठा पक्ष जमानेकेलिये मायामृषा भाषण करना आत्मार्थियोंको योग्य नहींहै।

१६- उत्सूत्र प्ररूपणा॥

चंद्रप्रज्ञप्ति-सूर्यप्रज्ञप्ति--जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति--भगवती--समवायांगादि-आगम-निर्युक्ति--भाष्य-चूर्णि-वृत्ति-प्रकरणादि शास्त्रोंमें, अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये हैं. वे सब पाठ छुपानेसे छुप सकते नहीं, और अर्थ बदलनेसे अर्थभी बदल सकते नहीं. इसलिये कितनेक आग्रही जन कहतेहैं, कि - 'उन शास्त्रोंमें तो अधिक महीना होनेसे १३ महीनोंके ३८३ दिनोंका अभिवर्द्धितवर्षका स्वरूप बतलाया है, मगर १३ महीनें गिनतीमें लेनेका कहां लिखा है' ऐसा कहनेवाले उत्सूत्र प्ररूपणा करते हैं, क्योंकि उन शास्त्रोंमें जैसे १ वर्षके १२ महीनोंके ३५४ दिनोंका स्वरूप [गणित] प्रमाण बतलाया है, तैसेही अधिक महीना होनेसे उस वर्षके १३ महीनोंके ३८३ दिनोंका स्वरूप (गणित) प्रमाण बतलाया है, इसलिये

घढ़ और अभिवर्द्धित दोनों वर्षोंका स्वरूप गणित प्रमाण सभी शा स्त्रोंमें खुलासापूर्वक होनेपरभी १२ महीनोंके वर्षको प्रमाणभूत मानना और १३ महीनोंके वर्षको स्वरूपका बहाना बतलाकर प्र माणभूत नहीं मानना यह तो प्रत्यक्षही अन्याय है । यदि १३ महीनोंका स्वरूप बतलानेका कहकर गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मानोंगे, तो, १२ महीनोंकाभी स्वरूप बतलाया है उसकोभी गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मान सकोगे और शास्त्रोंमें तो १२ या १३ महीनोंके दोनों वर्षोंके स्वरूप बतलाकर गिनतीमें प्रमाणभूत माने हैं इस लिये दोनों प्रकारके वर्ष मानने योग्य है, इसमें शास्त्रप्रमाणसे तो एकभी निषेध नहीं हो सकता देखिये- ११ अंग,व १४ पूर्वादिमें जैसे दर्शन ज्ञान-चारित्र चौदहराजलोक-षट्द्रव्य-नवतत्त्व चौदहगुण स्थान जीवाजीवादि पदार्थोंका स्वरूप व चरणकरणानुयोगमें संयमके आराधनकी क्रियाका स्वरूप बतलाया है वोही सब मान्य करने योग्य है इसलिये स्वरूप बतलाना सोही श्रद्धापूर्वक मान्य करने योग्य सत्यप्ररूपणा कही जाती है । जिसपरभी चरणकरणा नुयोगमें संयमकी क्रियाका व षट्द्रव्य-नवतत्त्वादिकका स्वरूप ब तलाया है, मगर उस मुजब मान्य करना कहा लिखा है. ऐसा कोई कहे और उसको प्रमाणभूत नहीं माने, तो, ११ अंग, व १४ पूर्वोके उत्थापनका प्रसंग आनेसे अनेक भवोंकी वृद्धि करनेवाली उत्सूत्र प्ररूपणा होवे इसी तरहसे १३ महीनोंका स्वरूप कहकर प्रमाणभूत नहीं माने, तो सूर्यप्रज्ञप्ति वगैरह पूर्वोक्त शास्त्रोंके उत्थापनका प्रसंग आनेसे उत्सूत्र प्ररूपणा होगी । और जैसे षट्द्रव्य-नवतत्त्वादिकके स्वरूप शास्त्रोंमें कहे हैं उस मुजबही मानना पडताहै। तैसेही १२ म हीनोंके स्वरूपकी तरह १३ महीनोंका स्वरूप शास्त्रोंमें बतलायाहै उस मुजबही १३ महीने प्रमाणभूत गिनतीमें मानने पडतेहैं इसलिये '१३ महीनोंके अभिवर्द्धितवर्षका स्वरूप बतलायाहै, मगर मान ना कहा लिखा है' ऐसी उत्सूत्र प्ररूपणा करना और भोले जीवों को संशयमें गेरना आत्मार्थी भवभिरूओंको योग्य नहीं है।

१७ - लौकिक अधिक महीना मानना या नहीं ?

कितनेक महाशय कहते हैं, कि जैन टिप्पणामें तो पौष और आषाढ बढताथा अब लौकिक टिप्पणामें श्रावण भाद्रपदादिभी बढने लगे हैं सो कैसे माने जावें ? इसपर इतनाही विचार कर

नेका है, कि- जैनटिप्पणामें तीसरे वर्षमें महीना वढताथा उसको गिनतीमें लेतेथे और जैन टिप्पणामें ज्यादेमें ज्यादे३६घटिका प्रमाणे दिनमान होताथा, तथा कमतीमें कमती २४ घटिकाप्रमाणे दिनमान होताथा. और माघमहीने दक्षिणायनसे सूर्य उत्तरायनमें होताथा और श्रावणमहीने उत्तरायनसे दक्षिणायनमें होताथा और श्रावण वदि एकमसे ६२ वीं तिथि क्षय होतीथी.इसीप्रकार १ वर्षमें ६ तिथि क्षय होतीथी वीचमेंकोईभीतिथि क्षयनहींहोतीथी. और तिथि वढनेकातो सर्वथाअभावहोनेसे कोईभीतिथि वढतीनहींथी और ६० घडीसेकम तिथिकाप्रमाणहोनेसे, ६० घडीके ऊपर कोईभी तिथि नहीं होतीथी. और नक्षत्रसंवत्सर, ऋतुसंवत्सर, सूर्यसंवत्सर, चंद्रसंवत्सर और अभिवर्द्धितसंवत्सर सहित पांचवर्षोका १ युग, व ८८ ग्रह मानतेथे इत्यादि अनेक वातें जैन टिप्पणामें होतीथी वो जैन टिप्पणा परंपरागत जैनी राजा देशभरमें चलातेथे और पूर्वगत आम्नायसे गुरुगम्यतासे जैन कुलगुरु वनातेथे. इसलिये उसमे ग्रहणादि किसी तरहका फरक नहीं पडताथा. मगर परंपरागत जैनी राजाओंका व पूर्वगत आम्नायका अभाव हुआ जवसे ८८ ग्रहवाला जैन पंचांग वंध हुआ. तवसे जैन समाजमें ९ ग्रहवाला लौकिक टिप्पणा माननेकी प्रवृति शुरूहुई. उसमें श्रावण व माघमे दक्षिणायनमें व उत्तरायनमें सूर्य होनेका नियम न रहा और हरेक महीने वढनेसे ज्येष्ट- आषाढ व मार्गशीर्ष-पौषादिमे दक्षिणायन व उत्तरायन होनेलगा. तथा क्षेत्रफल व गणित विभागमें फेर पडनेसे ज्यादेमे ज्यादे ३४ घटिका, व कमतीमें कमती २६ घटीकाप्रमाणे दिनमानभी मानने लगे और एक तिथिका ६० घटिकासे ज्यादे प्रमाण माननेसे हरेकपक्षमें तिथियोंका क्षयभी होनेलगा. और हरेक तिथियोंकी वृद्धि होनेसे दो दो तिथियेंभी होने लगी. और१२वर्षका युग इत्यादि अनेक वातें जैन पंचांगके अभावसे लौकिक टिप्पणाकी माननी पडती हैं, इसीतरह अधिक महीनाभी लौकिक रीतिसे वर्तमानमें मानना पडता है, इसलिये ८४ गच्छोंके सवी पूर्वाचार्योंने श्रावण भाद्रपदादिमहीनें लौकिक टिप्पणामुजव माने हैं. वोही प्रवृत्ति सवजैन समाजमें शुरू है। और दक्षिणायन,उत्तरायन, तिथिकी हानी वृद्धि वगैरह तिथि, वार, नक्षत्र, पक्ष, मास, वर्ष सव लौकिक टिप्पणामुजव मानना मगर अधिक महीना वावत जैनपंचांगकी आड लेकर नहीं मानना यह न्याय युक्ति वाधक होनेसे

यह और अभिवार्द्धित दोनों वर्षोंका स्वरूप गणित प्रमाण सर्वा शा स्त्रोंमें खुलासापूर्वक होनेपरभी १२ महीनोंके वर्षको प्रमाणभूत मानना और १३ महीनोंके वर्षको स्वरूपका बहाना बतलाकर प्र माणभूत नहीं मानना यह तो प्रत्यक्षही अन्याय है। यदि १३ महीनोंका स्वरूप बतलानेका कहकर गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मानोंगे, तो, १२ महीनोंकाभी स्वरूप बतलाया है उसकोभी गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मान सकोगे और शास्त्रोंमें तो १२ या १३ महीनोंके दोनों वर्षोंके स्वरूप बतलाकर गिनतीमें प्रमाणभूत मान है. इस लिये दोनों प्रकारके वर्ष मानने योग्य है, इसमें शास्त्रप्रमाणसे तो एकभी निषेध नहीं हो सकता देखिये- ११ अंग,व १४ पूर्वादिमें जैसे दर्शन ज्ञान-चारित्र चौदहराजलोक-षट्द्रव्य-नवतत्व चौदहगुण स्थान जीवाजीवादि पदार्थोंका स्वरूप व चरणकरणानुयोगमें सयमके आराधनकी क्रियाका स्वरूप बतलाया है वोही सब मान्य करने योग्य है इसलिये स्वरूप बतलाना सोही श्रद्धापूर्वक मान्य करने योग्य सत्यप्ररूपणा कही जाती है। जिसपरभी चरणकरणा नुयोगमें सयमकी क्रियाका व षट्द्रव्य-नवतत्त्वादिकका स्वरूप ब तलाया है, मगर उस मुजब मान्य करना कहा लिखा है. ऐसा कोई कहे और उसको प्रमाणभूत नहीं माने, तो, ११ अंग, व १४ पूर्वोंके उत्थापनका प्रसग आनेसे अनेक भवोंकी वृद्धि करनेवाली उत्सूत्र प्ररूपणा होवे इसी तरहसे १३ महीनोंका स्वरूप कहकर प्रमाणभूत नहीं माने, तो, सूर्यप्रज्ञप्ति वगैरह पूर्वोक्त शास्त्रोंके उत्थापनका प्रसग आनेसे उत्सूत्र प्ररूपणा होगी। और जैसे षट्द्रव्य-नवतत्त्वादिकके स्वरूप शास्त्रोंमें कहे हैं उस मुजबही मानना पडताहै। तैसेही१२ म हीनोंके स्वरूपकी तरह १३ महीनोंका स्वरूप शास्त्रोंमें बतलायाहै उस मुजबही १३ महीने प्रमाणभूत गिनतीमें मानने पडतेहै इसलिये '१३ महीनोंके अभिवर्द्धितवर्षका स्वरूप बतलायाहै, मगर मान ना कहा लिखा है' ऐसी उत्सूत्र प्ररूपणा करना और भोले जीवों को सशयमें गेरना आत्मार्थी भवभिरूओंको योग्य नहीं है।

१७ - लौकिक अधिक महीना मानना या नहीं ?

कितनेक महाशय कहते हैं, कि जैन टिप्पणामें तो पौष और आषाढ बढताथा अब लौकिक टिप्पणामें श्रावण भाद्रपदादिभी बढने लगे है सो कैसे माने जावें ? इसपर इतनाही विचार कर

नेका है, कि- जैनटिप्पणामें तीसरे वर्षमें महीना बढताथा उसको गिनतीमें लेतेथे और जैन टिप्पणामें ज्यादेमें ज्यादे ३६ घटिका प्रमाणे दिनमान होताथा, तथा कमतीमें कमती २४ घटिकाप्रमाणे दिनमान होताथा. और माघमहीने दक्षिणायनसे सूर्य उत्तरायनमें होताथा और श्रावणमहीने उत्तरायनसे दक्षिणायनमें होताथा और श्रावण वदि एकमसे ६२ वीं तिथि क्षय होतीथी. इसीप्रकार १ वर्षमें ६ तिथि क्षय होतीथी बीचमें कोईभी तिथि क्षय नहीं होतीथी. और तिथि बढने कातो सर्वथा अभाव होनेसे कोईभी तिथि बढती नहींथी और ६० घडीसे कम तिथिका प्रमाण होनेसे, ६० घडीके ऊपर कोईभी तिथि नहीं होतीथी. और नक्षत्रसंवत्सर, ऋतुसंवत्सर, सूर्यसंवत्सर, चंद्रसंवत्सर और अभिवर्द्धितसंवत्सर सहित पांचवर्षोका १ युग, व ८८ ग्रह मानतेथे इत्यादि अनेक बातें जैन टिप्पणामें होतीथी वो जैन टिप्पणा परंपरागत जैनी राजा देशभरमें चलातेथे और पूर्वगत आम्नायसे गुरुगम्यतासे जैन कुलगुरु बनातेथे. इसलिये उसमें ग्रहणादि किसी तरहका फरक नहीं पडताथा. मगर परंपरागत जैनी राजाओंका व पूर्वगत आम्नायका अभाव हुआ जबसे ८८ ग्रहवाला जैन पंचांग बंध हुआ. तबसे जैन समाजमें ९ ग्रहवाला लौकिक टिप्पणा माननेकी प्रवृत्ति शुरूहुई. उसमें श्रावण व माघमें दक्षिणायनमें व उत्तरायनमें सूर्य होनेका नियम न रहा और हरेक महीने बढनेसे ज्येष्ठ- आषाढ व मार्गशीर्ष-पौषादिमें दक्षिणायन व उत्तरायन होनेलगा. तथा क्षेत्रफल व गणित विभागमें फेर पडनेसे ज्यादेमें ज्यादे ३४ घटिका, व कमतीमें कमती २६ घटिकाप्रमाणे दिनमानभी मानने लगे और एक तिथिका ६० घटिकासे ज्यादे प्रमाण माननेसे हरेकपक्षमें तिथियोंका क्षयभी होनेलगा. और हरेक तिथियोंकी वृद्धि होनेसे दो दो तिथियेंभी होने लगी. और १२ वर्षका युग इत्यादि अनेक बातें जैन पंचांगके अभावसे लौकिक टिप्पणाकी माननी पडती हैं, इसीतरह अधिक महीनाभी लौकिक रीतिसे वर्तमानमें मानना पडता है, इसलिये ८४ गच्छोंके सबी पूर्वाचार्योंने श्रावण भाद्रपदादिमहीनें लौकिक टिप्पणामुजब माने हैं. वोही प्रवृत्ति सबजैन समाजमें शुरू है। और दक्षिणायन, उत्तरायन, तिथिकी हानी वृद्धि वगैरह तिथि, वार, नक्षत्र, पक्ष, मास, वर्ष सब लौकिक टिप्पणामुजब मानना मगर अधिक महीना बाबत जैन-पंचांगकी आड लेकर नहीं मानना यह न्याय युक्ति बाधक होनेसे

चंद्र और अभिवर्द्धित दोनों वर्षोंका स्वरूप गणित प्रमाण सबी शास्त्रोंमें खुलासापूर्वक होनेपरभी १२ महीनोंके वर्षको प्रमाणभूत मानना और १३ महीनोंके वर्षको स्वरूपका बहाना बतलाकर प्रमाणभूत नहीं मानना यह तो प्रत्यक्षही अन्याय है । यदि १३ महीनोंका स्वरूप बतलानेका कहकर गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मानोंगे, तो, १२ महीनोंकाभी स्वरूप बतलाया है उसकोंभी गिनतीमें प्रमाणभूत नहीं मान सकोगें और शास्त्रोंमें तो १२ या १३ महीनोंके दोनों वर्षोंके स्वरूप बतलाकर गिनतीमें प्रमाणभूत माने हैं. इस लिये दोनों प्रकारके वर्ष मानने योग्य हैं, इसमें शास्त्रप्रमाणसे तो एकभी निषेध नहीं हो सकता. देखिये- ११ अंग,व १४ पूर्वादिमें जैसे दर्शन-ज्ञान-चारित्र-चौदहराजलोक षट्द्रव्य नवतत्त्व चौदहगुणस्थान जीवाजीवादि पदार्थोंका स्वरूप व चरणकरणानुयोगमें संयमके आराधनकी क्रियाका स्वरूप बतलाया है वोही सब मान्य करने योग्य है. इसलिये स्वरूप बतलाना सोही श्रद्धापूर्वक मान्य करने योग्य सत्यप्ररूपणा कही जाती है । जिसपरभी चरणकरणानुयोगमें संयमकी क्रियाका व षट्द्रव्य-नवतत्त्वादिकका स्वरूप बतलाया है, मगर उस मूजब मान्य करना कहा लिखा है. ऐसा कोई कहे और उसको प्रमाणभूत नहीं माने, तो, ११ अंग, व १४ पूर्वोंके उत्थापनका प्रसंग आनेसे अनेक भवोंकी वृद्धि करनेवाली उत्सूत्र प्ररूपणा होवे इसी तरहसे १३ महीनोंका स्वरूप कहकर प्रमाणभूत नहीं मानें, तो, सूर्यप्रज्ञप्ति वगैरह पूर्वोक्त शास्त्रोंके उत्थापनका प्रसंग आनेसे उत्सूत्र प्ररूपणा होगी । और जैसे षट्द्रव्य-नवतत्त्वादिकके स्वरूप शास्त्रोंमें कहे हैं उस मुजबही मानना पडताहै। तैसेही१२ महीनोंके स्वरूपकी तरह १३ महीनोंका स्वरूप शास्त्रोंमें बतलायाहै उस मुजबही १३ महीने प्रमाणभूत गिनतीमें मानने पडतेहैं इसलिये '१३ महीनोंके अभिवर्द्धितवर्षका स्वरूप बतलायाहै, मगर मानना कहां लिखा है ' ऐसी उत्सूत्र प्ररूपणा करना और भोले जीवोंको संशयमें गेरना आत्मार्थी भवभिरुओंको योग्य नहीं है।

१७ - लौकिक अधिक महीना मानना या नहीं ?

कितनेक महाशय कहते हैं, कि जैन टिप्पणामें तो पौष और आषाढ बढताथा अब लौकिक टिप्पणामें श्रावण भाद्रपदादिभी बढने लगे हैं सो कैसे माने जावें ? इसपर इतनाही विचार कर

नेका है, कि- जैनटिप्पणामें तीसरे वर्षमें महीना वढताथा उसको गिनतीमें लेतेथे और जैन टिप्पणामें ज्यादेमें ज्यादे३६घटिका प्रमाणे दिनमान होताथा, तथा कमतीमें कमती २४ घटिकाप्रमाणे दिनमान होताथा. और माघमहीने दक्षिणायनसे सूर्य उत्तरायनमें होताथा और श्रावणमहीने उत्तरायनसे दक्षिणायनमें होताथा और श्रावण वदि एकमसे ६२ वीं तिथि क्षय होतीथी.इसीप्रकार १ वर्षमें ६ तिथि क्षय होतीथी वीचमेंकोईभीतिथि क्षयनहींहोतीथी. और तिथि वढने कातो सर्वथाअभावहोनेसे कोईभीतिथि वढतीनहींथी और ६० घडीसेकम तिथिकाप्रमाणहोनेसे, ६० घडीके ऊपर कोईभी तिथि नहीं होतीथी. और नक्षत्रसंवत्सर, ऋतुसंवत्सर, सूर्यसंवत्सर, चंद्रसंवत्सर और अभिवर्द्धितसंवत्सर सहित पांचवर्षोंका १ युग, व ८८ ग्रह मानतेथे इत्यादि अनेक वातें जैन टिप्पणामें होतीथी वो जैन टिप्पणा परंपरागत जैनी राजा देशभरमें चलातेथे और पूर्वगत आम्नायसे गुरुगम्यतासे जैन कुलगुरु वनातेथे. इसलिये उसमें ग्रहणादि किसी तरहका फरक नहीं पडताथा. मगर परंपरागत जैनी राजाओंका व पूर्वगत आम्नायका अभाव हुआ जबसे ८८ ग्रहवाला जैन पंचांग वंध हुआ. तवसे जैन समाजमें ९ ग्रहवाला लौकिक टिप्पणा माननेकी प्रवृति शुरूहुई. उसमें श्रावण व माघमे दक्षिणायनमें व उत्तरायनमें सूर्य होनेका नियम न रहा और हरेक महीने वढनेसे ज्येष्ट- आषाढ व मार्गशीर्ष-पौषादिमे दक्षिणायन व उत्तरायन होनेलगा. तथा क्षेत्रफल व गणित विभागमें फेर पडनेसे ज्यादेमे ज्यादे ३४ घटिका, व कमतीमें कमती २६ घटीकाप्रमाणे दिनमानभी मानने लगे और एक तिथिका ६० घटिकासे ज्यादे प्रमाण माननेसे हरेकपक्षमें तिथियोंका क्षयभी होनेलगा. और हरेक तिथियोंकी वृद्धि होनेसे दो दो तिथियेंभी होने लगी. और१२वर्षका युग इत्यादि अनेक वातें जैन पंचांगके अभावसे लौकिक टिप्पणाकी माननी पडती हैं, इसीतरह अधिक महीनाभी लौकिक रीतिसे वर्तमानमें मानना पडता है, इसलिये ८४ गच्छोंके सबी पूर्वाचार्योंने श्रावण भाद्रपदादिमहीनें लौकिक टिप्पणामुजव माने हैं. वोही प्रवृत्ति सबजैन समाजमें शुरू है। और दक्षिणायन,उत्तरायन, तिथिकी हानी वृद्धि वगैरह तिथि, वार, नक्षत्र, पक्ष, मास, वर्ष सब लौकिक टिप्पणामुजब मानना मगर अधिक महीना वावत जैनपंचांगकी आड लेकर नहीं मानना यह न्याय युक्ति बाधक होनेसे

सत्य नहीं ठहर सकता. इसलिये ऊपर मुजब वातोंकी तरह अधिक महीनाभी लौकिक मुजब वर्तमानमें मान्य करना युक्तियुक्त न्याय संपन्न होनेसे निषेद्ध नहीं हो सकता। और यद्यपि जैन टिप्पणामें पौष आषाढ बढताथा उस बातको जिनकल्पी व्यवहारकी तरह सत्य मानना, श्रद्धा रखना, प्ररूपणा करना मगर जिनकल्पी व्यवहार अभी विच्छेद होनेसे उसको अंगीकार नहीं कर सकते, उसी तरह अभी जैन टिप्पणाभी विच्छेद होनेसे वर्तमानमें जैन टिप्पणा मुजब तिथि, वार, या पौष आषाढ महीने माननेका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है।

१८– जैन ज्योतिषपरसे अभी जैन टिप्पणा शुरू हो सके या नहीं?

यद्यपि जैन ज्योतिषके चंद्रप्रज्ञप्ति-ज्योतिषकरंडपयन्नादि अनेक शास्त्र मौजूद हैं, उसपरसे तिथि-वार-मास-पक्ष-वर्षादिकका गणित हो सकता है। मगर ग्रहचार ग्रहणादि सब बातें बरोबर मिलान करना मुश्किल पडता है, इसलिये कितनीक बातोंमें अन्य आधार लेना पडता है. और लौकिक व जैन दोनोंके गणितमें फेर होनेसे, तिथि-वार-मास व ग्रहणादि दोनोंके समान नहीं आसकते. और पूर्वगत गुरुगम्य आम्नायके अभावसे व अल्पज्ञताके कारणसे यदि ग्रहणादि बतलानेमें न्यूनाधिक कुछ फरक पड जावे तो सर्वज्ञशासनकी लघुता होनेका कारण बनजावे। और परंपरागत जैनीराजाओंके अभाव होनेसे व ब्रह्मचारी, व्रतधारी, गुरुगम्यतावाले कुलगुरुओंका अभाव होनेसे तथा खरतरगच्छ नायक श्रीनवांगी वृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीशांतिसूरिजी, श्रीहेमचंद्राचार्यजी वगैरह समर्थ व प्रभावकाचार्योंके समयसेभी बहोत कालसे जैन टिप्पण विच्छेद होनेसे, अभी अपने अल्प बुद्धिवालोंसे फिरसे शुरू नहीं हो सकता। और कोई शुरू करें तोभी सर्वमान्य युगप्रधान समर्थ आचार्यके अभावसे सबदेशोंके सबगच्छोंके सब जैन समाजमें परंपरागत चल सकताभी नहीं। देखिये-जैन शासनमें विशेष ज्ञानी समर्थ प्रभावक पूर्वाचार्योंके समय जो बात पहिलेसे विच्छेद हो जावे उसको विशिष्टतर अवधिज्ञानादि रहित अल्पज्ञोंसे इसकालमें फिरसे शुरू नहीं होसके। इतनेपरभी शुरू करें तो पूर्वाचार्योंकी आशातनासे दोषके

भागी होवें। इसी तरह जैन पंचांगभी पूर्वाचार्योंके समयसे विच्छेद होनेसे अभी शुरू नहीं होसकता. जिसपरभी शुरू करें, तो, २० वें दिन पर्युषणपर्व करनेकी व पांच पांच दिने अज्ञात पर्युषणा स्थापन करनेकी वातें जो विच्छेद हुई हैं, वे वातेंभी जैन टिप्पणा शुरू होनेसे पीछी शुरू करनी पडेंगी और वें वातें अभी पडताकाल होनेसे शूरू होसकती नहीं हैं, इसलिये अभी जैन पंचांग शुरू हो सकता नहीं है।

१९- अभी दो श्रावणादिकके दो आषाढ वना-सके या नहीं ?

कितनेक कहते हैं, कि-लौकिक टिप्पणमें श्रावण, भाद्रपद वढें तव जैन हिसावसे दो आषाढ वना लेवे तो पर्युषणका भेद मिट जावे. मगर ऐसा भी नहीं हो सकता, क्योंकि जव जैन पंचांगही अभी विच्छेद है, और तिथि, वार, पक्षादि पंचांग संवंधी व्यवहार लौकिक मुजव करते हैं, जिसपरभी १ महीनेका फेरफार करदेना योग्य नहीं है। देखो-- दो श्रावण होनेसे भरपूर वर्षाऋतुवाला प्रथम श्रावण शुदी १५ को प्रत्यक्ष प्रमाणसेभी विरुद्ध होकर उसको आषाढ पूर्णिमा वनाना जगत विरुद्ध होनेसे व्यवहारमें मिथ्याभाषणका दोष लगे। और पूर्वाचार्योंनेभी ऐसा नहीं किया, इसलिये अभी दो श्रावण या दो भाद्रपदके दो आषाढ वनाना नहीं वन सकता. किंतु लौकिक मुजव दो श्रावण भाद्रपदादि सवगच्छोंके पूर्वाचार्य पहिलेसे मानते आये हैं, वैसेही वर्तमानमें अपने सवकोही मान्य करना योग्य है. वस! धार्मिक व्यवहार पर्युषणपर्वादि जैन सिद्धांतानुसार ५० वें दिन करना. और तिथि, वार, मास, पक्षादि व्यवहार लौकिक टिप्पणानुसार करना. यही न्याय युक्तियुक्त सर्व सम्मत होनेसे सर्व जैनीमात्रको मान्य करना योग्य है, इसलिये इसमें अन्य २ कल्पना करना व्यर्थ है।

२०- पर्युषणा कितने प्रकारकी होती है ?

निशीथचूर्णि और कल्पसूत्रकी निर्युक्तिवृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें पर्युषणाके ८ प्रकारसे अनेक भेद वतलाये हैं, मगर यहां तो मुख्यतासे वर्षास्थितिरूप और वार्षिक कार्यरूप ऐसे दो अर्थ वर्तमानमें

सब गच्छवाले ग्रहण करते हैं। इसलिये आषाढ चौमासीसे ठहरना सो वर्षास्थितिरूप अज्ञात पर्युषणा और मासवृद्धिके सद्भावमें २० दिने या उसके अभावमें ५० दिने ज्ञात (प्रकट) पर्युषणा करना सो वार्षिक कार्यरूप पर्युषणा समझना चाहिये। जब जैन पंचांगके अभावसे २० दिनकी पर्युषणा बंधहुई, तबसे लौकिक हरेक मास बढे तो भी ५० दिने वार्षिक कार्यरूप पर्युषणा करनेकी मर्यादा है.

२१– वीश दिनकी पर्युषणा वर्षास्थितिरूप हैं या वार्षिकपर्वरूप हैं ?

भो देवानुप्रिय ! जैसे चंद्रवर्षमें ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणा वार्षिक कार्यरूप हैं, तैसेही अभिवर्द्धित वर्षमें २० दिनकी ज्ञात पर्युषणाभी वार्षिक कार्यरूप हैं। जिसपरभी श्रावणमें वीश दिनकी ज्ञात पर्युषणा वर्षास्थितिरूप मानोगे तो भाद्रपदमेंभी ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणाभी वर्षास्थितिरूप ठहर जावेगें और वार्षिककार्य करने सर्वथा उडजावेगे. और २०दिने वार्षिककार्य नहीं करने मगर ५०दिने करने ऐसाभी कोई प्रमाण नहीं है, और २० दिने ज्ञात पर्युषणा किये बाद पीछे एक महीनेसे वार्षिककार्य करने ऐसाभी कोई प्रमाण नहीं है। इसलिये-- जैसे ५० दिने भाद्रपदमें वार्षिक कार्य होते हैं, वैसेही २० दिने श्रावणमेंभी वार्षिक कार्य होते हैं। और वर्तमानमें श्रावण भाद्रपद बढे तो भी दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने वार्षिक कार्यरूप पर्युषणा करना जिनाज्ञानुसार है।

२२– वार्षिक कार्य १२ महीने होवें या १३ महीने होवें ?

पहिलेभी जैसे २० दिने श्रावणमें वार्षिक कार्य करतेथे तब आवते वर्ष भाद्रपद तक १३ महीने होतेथे, तैसेही वर्तमानमेंभी ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें वार्षिक कार्य होनेसे आवते वर्षे १३ महीने होते हैं. इसमें कोई दोष नहीं है, देखिये-दो पौष, दो आषाढ, या दो आसोज होनेसेभी १३ महीने प्रत्यक्षमें होते हैं; इस लिये महीना बढे तबतो पहिले या पीछे १३ महीनोंके २६ पाक्षिक प्रतिक्रमण सबकोही होते हैं। और जैनमें या लौकिकमें १२ महीनोंके या १३ महीनोंके दोनों वर्ष माने हैं, इसलिये १२ महीनेभी वार्षिक कार्य होवें. और १३ महीनेभी वार्षिक कार्य होवें, यह कोई नवीन बात नहीं है। किंतु अनादि प्रवाह ऐसाही है। जिसपरभी १३

महीने होनेका दोष बतलाकर, १२ महीने ठहरानेकेलिये महीनेको छोड देना सो सर्वथा अनुचित है, इसको विशेष तत्वज्ञ जन स्वयं विचार सकते हैं।

२३- पर्युषणासंबंधी कल्पसूत्रका पाठ वार्षिक कार्योंके- लिये है, या वर्षास्थितिके लिये है ?

कल्पसूत्रका पर्युषणासंबंधी पाठ वर्षास्थितिके साथही वार्षिक कार्योंकेलिये है, जिसपरभी उसको सिर्फ वर्षास्थितिरूप ठहराकर वार्षिक कार्य निषेध करते हैं सो अनेकार्थ युक्त आगमपाठके अर्थ को उत्थापनेवाले बनते हैं. जैसे " णमो अरिहंता णं " पदके अर्थमें कर्मशत्रुको जितनेवाले अरिहंत भगवान्‌को नमस्कार करनेका अर्थ अनादिसिद्ध है, जिसपरभी कर्मशत्रुके अर्थ नहीं माननेवालेको अज्ञानी समझाजाता है। तैसेही कल्पसूत्रके ५० दिने पर्युषणाकरने- संबंधी पाठमें वार्षिक कार्य तो अनादि सिद्ध है जिसपरभी वार्षिक कार्योंको नहीं मानने वालोंको अज्ञानी या हठवादी समझने चाहिये।

२४- भगवान् किसीप्रकारकेभी पर्युषणा करतेथे या नहीं ?

जिनकल्पी मुनियोंके व स्थिविरकल्पी मुनियोंके आचारमें बहुत भेद है, और भगवान्‌तो अनंत शक्तियुक्त कल्पातित हैं, इसलिये भगवान्‌के आचारमेंतो विशेष भेद है. तो भी वर्षाऋतुमें वर्षास्थितिरूप पर्युषणा तो सबकोई करते हैं। और स्थिविर कल्पी मुनियोंके तो वर्षास्थितिके साथ चौमासी व वार्षिक पर्व करनें वगैरहका अधिकार प्रसिद्धही है। जिसपरभी कल्पसूत्रमें पर्युषणा शब्दमात्रको देखकर अतीव गहनाशयवाले सूत्रार्थके भावार्थको गुरुगम्यतासे समझे विना भगवान्‌कोभी वार्षिक प्रतिक्रमणादिकरने वाले ठहराना, या ५० दिनकी पर्युषणाको वार्षिक कार्यरहित ठहराना सो अज्ञानता है. इसकोभी विवेकीजन स्वयं विचार सकते हैं।

२५- पर्युषणासंबंधी सामान्य व विशेषशास्त्र कौनहै ?

जिस शास्त्रमें मुख्यतासे एक विषयको विशेष रूपसे खुलासाके साथ कथन किया होवे, उसको विशेष शास्त्र कहते हैं। और जिस शास्त्रमें बहुत बातोंका कथन होवे, उसको सामान्य शास्त्र कहते हैं। यद्यपि यथा अवसर दोनों मान्य हैं, मगर सामान्यशास्त्रसें विशेषशास्त्र ज्यादे बलवान होता है. इसलिये मुख्यतासे वि-

शेष शास्त्रकी बात अंगीकार करनेके समय सामान्य शास्त्रकी वा गौण्यताभावमें रहती है. यह न्याय विद्वानोंमें प्रसिद्धही है। और भी देखिये- जैसे भगवतीसूत्र बडा कहा जाता है, तो भी उस बहुत बातोंका कथन होनेसे संयमकी क्रियासंबंधी सामान्यशास्त्र कहा जावे, और आचारांग, दशवैकालिक छोटे सूत्र हैं, तो भी उन में मुख्यतासे संयमविधान होनेसे संयमक्रियासंबंधी विशेष शास्त्र कहे जाते हैं। इसीतरह समवायांगसूत्रमें अनेक बातोंका कथन होनेसे पर्युषणासंबंधी समवायांगसूत्र सामान्य शास्त्रहै, और कल्पसूत्रमें तो खास पर्युषणासंबंधी सामान्य व विशेष दोनों प्रकार से विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ वर्षास्थितिरूप व वार्षिकपर्वरूप दोनों पर्युषणाका अधिकार है. इसलिये पर्युषणासंबंधी कल्पसूत्र विशेष शास्त्र है। यही कल्पसूत्ररूप विशेष शास्त्रको पर्युषणामें चतुर्विधसंघके मांगलिकके लिये वर्षोंवर्ष प्रत्येक गांव-नगरादिमें वांचनेमें आता है। उस विशेषशास्त्रके पर्युषणासंबंधी मूलमंत्ररूप पाठको छोडना और समवायांगके सामान्यपाठपर दृढ आग्रह करना विवेकीविद्वानोंको योग्यनहीं है। मगर अल्पज्ञ विना समझवाले अपना आग्रह न छोडे तो उनकी खुशीकी बात है, इसको विशेष तत्वज्ञ जन स्वयं विचार लेंगे.

२६-पर्युषणासंबंधी हमेशां नियत नियम ५० दिनका है या ७० दिनका है!

सर्व शास्त्रोंमें ५० दिनको उल्लंघन करना निवारण किया है, इसलिये ५० दिनका नियत नियम है। और ७० दिनसे ज्यादे होवें उसका कोईभी दोष किसी शास्त्रमें नहीं कहा, इसलिये ७० दिनका हमेशां नियत नियम नहीं है।

१. देखो-पहिले २० दिने पर्युषणा करतेथे, तबभी पिछाडी १०० दिन रहतेथे, इसलिये ७० दिनका नियत नियम नहीं है।

२. अभीभी श्रावण भाद्रपद या आसोज बढे तब तपगच्छके पूर्वाचार्योंके वाक्यसेभी ५० दिने पर्युषणा होवें तब पिछाडी १०० दिन रहते हैं। इसलियेभी ७० दिन रहनेका नियत नियम नहीं है।

३. पचास दिन उल्लंघेतो प्रायश्चित्त कहा है, मगर ७० दिन उल्लंघे तो प्रायश्चित्त नहीं कहा, इसलियेभी ७० दिनकी नियत नि-

यम की हमेशा मर्यादा नहीं ठहर सकती।

४-पचास दिने तो ग्रामादि न होवे तो जंगलमें वृक्षनीचेभी अवश्यही पर्युषणा करनेकी आवश्कता बतलाई है और ७० दिनकी स्वाभाविक गिनती बतलायी परंतु वैसीही७० दिनकी आवश्यकता नहीं बतलायी, इसलियेभी ७० दिनका नियत नियम नहीं है।

५- ७० दिवसका पाठ मास वृद्धिके अभाव संबंधी है,इसलिये उसको मासवृद्धि होनेपरभी आगे करना शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध होनेसे योग्य नहीं है।

६- इन्ही समवायांग सूत्रके टीकाकार महाराजने स्थानांग सूत्र. वृत्तिमें,मासवृद्धि होवें तव पर्युषणाके पिछाडी कार्तिकतक१००दिन ठहरनेका कहा है। उसको उत्थापना और शास्त्रकर महाराजके अभिप्राय विरुद्ध होकर १०० दिनकी जगहभी ७० दिन ठहरनेका बतलाना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

७- निशीथचूर्णि - बृहत्कल्पचूर्णि - कल्पानिर्युक्तिचूर्णि-वृत्ति— गच्छाचारपयन्नवृत्ति-जीवानुशासन वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रोंमें, वर्षास्थितिकेलिये कालावग्रहमें, जघन्यसे ७० दिन, मध्यमसे ७५-८०-८५-९०-९५ यावत् १२० दिन, और उत्कृष्टसे १८० दिनका प्रमाण बतलाया है। उसके अंदरमेंसे १ दिनमात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता. जिसपरभी शास्त्रविरुद्ध होकर वर्षास्थितिके अनियत व जघन्य ७० दिनोंको हमेशां नियत ठहरानेका आग्रह करना विवेकीयोंको योग्य नहीं है।

८- निशीथचूर्ण्यादिमें द्रव्य-क्षेत्र-काल और भावसे पर्युषणाकी स्थापना करनी बतलायी है, उसमें कालस्थापना संबंधी समय-आवलिका-मुहूर्त-दिन-पक्ष-माससे अधिकमहिनेके ३० दिनोंकी गिनति सहित प्रत्येक दिवसको पर्युषणासंबंधी कालस्थापनाके अधिकारमें गिनतीमें लिये हैं। इसलिये पर्युषणाके व्यवहारमें १ दिन भी गिनतीमें निषेध नहीं होसकता. जिसपरभी जघन्य ७० दिनके अनियत नियमको मास बढनेपरभी आगे करते हैं और फिर १०० दिनके ७० दिन अपनी कल्पनासे बनातेहैं सो सर्वथा चूर्णिके विरुद्ध है, इसका विशेष विचार तत्वज्ञ जन स्वयं कर लेवेंगे।

९- सीत्तर दिनका नियत नियम न होनेसे ७० दिनके ऊपर ज्यादेदिनभी होतेहैं, और "वासावासाए अणावुट्ठीए, आसोए क-

चिए वा निग्गताणं, अट्ठ अतिरित्ता भवंति" इत्यादि निशीथचूर्ण्य दिकमें लिखे मुजब वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार करते ७ दिनसे कमतीभी ४० दिन, या ४५-५० दिनभी होतेहैं। देखो-पहिले ५० दिने वार्षिक कार्य जबलग नहीं करे तबतक विहार करनेमें आताथा. मगर अभी वर्तमानमें तो आषाढचौमासीबाद विहार करनेकी रूढी नहीं हैं। तैसेही पहिले वर्षाके अभावसे आसोजमेंभी विहार करतेथे मगर अभीतो वर्षा नहीं होवे रस्तोंके कीचड सुकक साफ होगये होवे तो भी कार्तिक पूर्णिमा पहिले आसोजमें विहा करनेकी रूढी नहीं हैं। इसलिये अभी वर्षाके अभावसे आसोजमें विहार नहीं कर सकते और दो आसोज हो तो भी कार्तिक तक १०० दिन ठहरते हैं. इसलियेभी ७० दिनका हमेशां नियत नियम नहीं हैं। इसको विशेष तत्वज्ञ जन स्वयं विचार लेवेंगे।

२७- महीना बढे तब होली, दिवाली वगैरह लौकिक पर्व पहिले महीनेमें होवें या दूसरे महीनेमे होवें ?

कितनेक पर्व पहिले महीनेमें होते हैं, और कितनेक पर्व दूसरे महीनेमेंभी होते हैं. देखो-दो भाद्रपद होवें तब जन्माष्टमीका पर्व पहिले भाद्रपदमें करते हैं. और गणेश चौथका पर्व दूसरे भाद्रपदमें करते हैं. व दो आसोज होवें तब श्राद्धपक्ष पहिले आसोजमें करतेहैं, और दशहरा दूसरे आसोजमें करतेहैं. तथा दो कार्तिकहोवे तब दीवालीपर्व पहिले कार्तिकमें करतेहैं. इसतरहसे बारहीमासोंके सबी पर्व कृष्णपक्षसंबंधीपर्व पहिले महीनेमें और शुक्लपक्षसंबंधीपर्व दूसरे महीनेमें समझलेना और " मलमासो द्वेधा अधिकमासः—क्षयमासश्चेति । तदुक्तं काठकगृह्ये, यस्मिन् मासे न संक्रांतिः, संक्रांति द्वयमेव वा मलमासो स विज्ञेयो मासः स्यात् तु त्रयोदशः । तथा च उक्तं हेमाद्रि नागर खंडे-नभो वा नभस्यो वा मलमासो यदा भवेत् सप्तमःपितृपक्षःस्यादन्यत्रैव तु पंचमः । इत्यादि " निर्णयसिंधु, धर्मसिंधु, निर्णयदीपकादि लौकिक धर्मशास्त्रोंके प्रमाणानुसार आषाढ चौमासीसे पांचवा पितृपक्ष (श्राद्धपक्ष) होता है, मगर श्रावण, भाद्रपद बढे तब उसकी गिनतीसे सातवा [७] श्राद्धपक्ष होता है इसलिये लौकिकवालेभी अधिकमहिनेके ३० दिन गिनतीमें लेते हैं । जिसपरभी लौकिकवाले अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें नहीं लेते, या प्रथम महीनेमें दीवाली,

व जन्माष्टमी वगैरह पर्व नहीं करते. ऐसा जान बुझकर माया मृषा कथन करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

२८-गणेशचौथकी तरह पर्युषणाभी दूसरे भाद्रपदमें हो सके या नहीं?

भो देवानुप्रिय! गणेशचौथ मासप्रतिबद्ध होनेसे मासवृद्धिके अभावमें आषाढचौमासीसे, दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने भाद्रपदमें होती है, मगर श्रावण या भाद्रपद बढे तब तो तीसरे महीनेके छठे पक्षमें ८० दिने दूसरे भाद्रपद होतीहै। इसीतरह मास बढनेके अभावमें २॥ महीनोंसे पांचवा श्राद्धपक्ष होता है। मगर मास बढे तब तो ३॥ महीनोंसे सातवा श्राद्धपक्ष होता है तथा दीवालीपर्वभी मासवृद्धिके अभावमें ३॥ महीनोसे ७ वें पक्षमें कार्तिकमें होता है, मगर श्रावणादि बढे तबतो ४॥ महीनोंसे ९ में पक्षमें होता है. यह बात प्रत्यक्ष प्रमाणसे जगत् प्रसिद्ध सर्व सम्मत ही है। और पर्युषणापर्व तो दिन प्रतिबद्ध होनेसे दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने अवश्यही करने कहे हैं। इसलिये गणेश चौथकी तरह दूसरे भाद्रपदमें करें तो तीसरे महीनेके छठेपक्षमें ८० दिन होनेसे शास्त्रविरुद्ध होता है, इसलिये दूसरे भाद्रपदमें नहीं होसकते। किंतु दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें ५० दिने प्रथम भाद्रपदमें करना शास्त्रानुसार होनेसे आत्मार्थीयोंको योग्य है। इसलिये मासप्रतिबद्ध लौकिक गणेशचौथकी तरह दिन प्रतिबद्ध लौकोत्तर पर्युषणापर्वतो दूसरे भाद्रपदमें नहीं हो सकते। इसको विशेष तत्त्वज्ञ पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे।

२९-पौषादि मास बढतेथे तब कल्याणकादि तप कैसे करते थे?

पौषादि मास बढनेसे दोनों महीनोंके च्यारों पक्षोंमें,-पहिले पक्षमें, या दूसरेपक्षमें, वा तीसरेपक्षमें अथवा चौथेपक्षमें, जिसपक्षमें, जिसरोज, जिन जिन तीर्थंकर भगवान्‌के जो जो च्यवन-जन्मादि कल्याणक हुए होवें, उस उस पक्षमें दोनों महीनोंमें ज्ञानीमहाराजको पूछकर आराधन करतेथे. यह अनादि कालसे ऐसीही मर्यादा चली आती है। इसलिये अधिक महीनेमें कल्याणकादि

तप नहीं हो सकते, ऐसा कहना प्रत्यक्ष मृषा है। देखो — अनंत कालसे अनंततीर्थंकर महाराज हो गयेहैं, उन महाराजोंके च्यवन जन्म— केवलज्ञानादि कल्याणक होनेमें, कोईभी पक्ष, कोईभी मास, कोईभी दिवस या कोईभी वर्ष बाधक नहीं होसकते। किंतु हरेक मास, हरेक पक्ष, हरेकऋतु, व हरेक दिवसमें होसकते हैं इसलिये पहिले महीनेके या दूसरे महीनेके प्रथम पक्षमें, या दूसरे पक्षमें जिसरोज च्यवनादि जो जो कल्याणकहुए होवें उसी महीनेके उसी पक्षमे उन्हीं कल्याणकोंका आराधन करना शास्त्रानुसार ही है। इसलिये इसको कोईभी निषेध नहीं कर सकता। मगर अभी जैन पंचांगके अभावसे व ज्ञानी महाराजके अभावसे अधिक पौषमें या अधिक आषाढमें कौन २ भगवान्के कौन २ कल्याणक हुए हैं, उस की मालूम नहीं होनेसे तथा लौकिक टिप्पणामें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसे, चैत्र – वैशाखादि महीने बढे, तब भी परंपरागत ८४ गच्छोंके सभी पूर्वाचार्योंने लौकिक रूढीके अनुसार कितनेक पर्व प्रथम महीनेमें और कितनेक पर्व दूसरे महीनेमें करनेकी प्रवृत्ति रखी है। उसी मुजब वर्तमानमेंभी करनेमेंआतेहैं। देखो— जैसे— कार्तिक महीने संबंधी श्री संभवनाथजीके केवलज्ञानकल्याणक, श्रीपद्मप्रभुजीके जन्म व दीक्षा कल्याणक, श्रीनेमिनाथजीके च्यवन कल्याणक और श्रीमहावीरस्वामीके निर्वाणकल्याणक व दीवाली पर्वादि कार्य दो कार्तिकहोवे तब प्रथमकार्तिकमेंकरनेमें आतेहैं. तथा दो पौषहोंवे तब श्रीपार्श्वनाथजीका जन्मकल्याणक पौषदशमीकापर्व प्रथम पौषमें करनेमें आता है। और दो चैत्र होंवे तब पार्श्वनाथजीके केवलज्ञान कल्याणकादि तपकार्य उष्णकालके प्रथम महीनेके प्रथम पक्षमें अर्थात् पहिले चैत्रमें करनेमे आते हैं मगर श्रीमहावीर स्वामीके जन्मकल्याणक व ओलीपर्वतो उष्णकालके दूसरे महीनेके चौथेपक्षमें अर्थात् दूसरेचैत्रमें करनेमेंआतेहैं, ऐसेही दो आषाढ होवें तब आदीश्वरभगवान्के च्यवनादि उष्णकालके चौथेमहीने सातवे पक्षमे प्रथमआषाढमें करनेमेंआतेहैं और श्रीमहावीरस्वामीके च्यवनादि पांचवेमहीनेके दशवेंपक्षमें दूसरेआषाढमें करनेमेंआतेहैं, इसीतरह अधिकमहिनेके दोनोंपक्षोंकी गिनतीसहित सभी महीनोंके कार्य यथायोग्य कल्याणकादि तप वगैरह करनेमेंआतेहैं। इसलिये कल्याणकादि, तपकार्यमें अधिकमहिना गिनतीमें नहीं लेते ऐसा कहना सर्वथा अनुचित है, इसको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वय विचार लेवेंगे।

३०- अधिक महीना होवे तब तेरह महीनोंके संवच्छरी क्षामणा संबंधी खुलासा.

जैसे इन्हीं भूमिकाके पृष्ठ २२ वेंके मध्यमें २२ वें नंबरके लेख मुजब वार्षिक कार्य १२ महीनेभी होवें, और महीना बढे तब तेरह महीनेभी होवें। तैसेही संवच्छरी क्षामणेभी१२ महीनेभी होवें और महीना बढे तब १३ महीनेभी होवें। देखो — चंद्रप्रज्ञप्ति सूत्रवृत्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रवृत्ति, जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति, प्रवचनसारोद्धार, ज्योतिष्करंडपयन्न-निशीथचूर्णिवगैरह अनेक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी, महीना बढे तब उस वर्षके१३ महीनोंके२६पक्ष खुलासा पूर्वक लिखे हैं.इस लिये१३ महीने२६पक्षके संवच्छरी क्षामणे करने, ऊपर मुजब अनेक प्राचीन शास्त्रानुसार हैं। जिसपरभी कोई कहेगा, कि-उन शास्त्रोंमें तो १३ महीने २६ पक्षके संवच्छरीमें क्षामणे करनेका नहीं लिखा मगर ऐसा कहनेवालोंको अतीव गहनाशयवाले शास्त्रोंके भावार्थको समझमें नहीं आया मालूम होता है, क्योंकि— उन शास्त्रोंमें पक्षका,चौमासेका व वर्षका गणितसे जो जो प्रमाण बतलाया है उन्हीं शास्त्रोंके उसी प्रमाण मुजब, पाक्षिक, चौमासी व वार्षिक पर्वादि-कार्य करनेमें आतेहैं, इसलिये जिस वर्षमें १२ महीनोंके २४ पक्ष होवें,उसी वर्षमें १२महीनोंके २४पक्षोंके संवच्छरी प्रतिक्रमणमें क्षामणे करनेमें आते हैं। उसी मुजब जिस वर्षमें अधिक महीना होनेसे १३ महीनोंके २६ पक्ष होवें तब उस वर्षमें १३ महीनोंके २६ पक्षोंके संवच्छरी प्रतिक्रमणमें क्षामणे करनेमें आते हैं। इसलिये उन शास्त्रमें १३ महीनोंके क्षामणे नहीं लिखे ऐसा कहना प्रत्यक्ष मिथ्या होनेसे अज्ञानताका कारण है।

और आवश्यक बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीन शास्त्रमें जहां जहां वार्षिक प्रतिक्रमणका अधिकार आया है, वहां वहांभी ' संवच्छर ' शब्द लिखा है. सो संवच्छर शब्दके १२ महीनोंके २४ पक्ष, व १३ महीनोंके २६ पक्ष, ऐसे दोनों अर्थ आगमोंमें प्रसिद्धही हैं, इसलिये १२ महीनोंके २४ पक्षका अर्थ मान्य करके क्षामणोमें बोलना और १३ महीनोंके २६ पक्षका अर्थ मान्य नहीं करना व क्षामणेमेंभी नहीं बोलना, यह तो प्रत्यक्षमेंही आगमार्थ के उत्थापनका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है, इसलिये दोनों प्रकारके अर्थ मान्य करके उस मुजब प्रमाण करना आत्मार्थी सम्यक्त्व धारियोंको योग्यहै. इसको

विशेष तत्वज्ञ जन स्वयं विचार सकते हैं। और इसका विशेष खुलासा इसी ग्रंथके पृष्ठ ३६२ से ३८२ तक छप गया है, उसके देखनेसे सब निर्णय हो जायेगा।

३१- पांच महीनोंके चौमासी क्षामणो संबंधी खुलासा.

पहिले पौष महीना बढताथा तबभी फाल्गुन चौमासा पांच महीनोंका होताथा, व आषाढ महीना बढताथा तबभी आषाढ चौमासा पांच महीनोंका होताथा, तैसेही अभी वर्तमानमें लौकिक श्रावणादि बढतेहैं तबभी कार्तिक चौमासा पांच महीनोंका होता है। यद्यपि सामान्य व्यवहारसे चौमासा ४ महीनोंका कहा जाता है मगर अधिक महीना होवे तब विशेष व्यवहारसे निश्चयमें पांच महीनोंके १० पाक्षिक प्रतिक्रमण सभी गच्छवालोंको प्रत्यक्षमें करनेमें आते हैं। और जितने मासपक्षोंका प्रायश्चित्त (दोष)लगा होवे, उतनेही मासपक्षोंकी आलोचना[क्षामणा]करना स्वयंसिद्धही है। और मास बढनेसे पांच महीनोंके दशपक्ष होनेपरभी उसमें ४ महीनोंके ८ पक्षोंके क्षामणा करना और दो पक्ष छोड देना सर्वथा अनुचित है। इसलिये ऊपर मुजब ३० वें नंबरके १३ मासी संवच्छरी क्षामणा संबंधी लेख मुजबही यथा अवसर पांच महीनोंके दशपक्षोंके क्षामणे करने शास्त्रानुसार युक्तियुक्त होनेसे कोईभी निषेध नहीं करसकता, इसका भी विशेष खुलासा इस ग्रंथके पृष्ठ ३६२ से ३८२ तकके क्षामणों संबंधी लेखमें छप गया है वहांसे जान लेना।

३२- १५ दिनोंके पाक्षिक क्षामणो संबंधी खुलासा।

जैन ज्योतिष्के शास्त्रानुसार तो जिस पक्षमें तिथिका क्षय होवे, वो पक्ष १४ दिनोंका होता है। और जिस पक्षमें तिथिका क्षय न होवे,वो पक्ष १५ दिनोंका होता है। मगर लौकिक टिप्पणामें तो अभी हरेक तिथियोंकी हानी और वृद्धि होती है, इसलिये कभी १३ दिनोंकाभी पक्षहोताहै, कभी १४ दिनोंकाभी पक्ष होताहै, कभी १५ दिनोंकाभी पक्ष होताहै और कभी १६ दिनोंकाभी पक्ष होता है। मगर व्यवहारसे १५ दिनोका पक्ष कहा जाता है इसलिये व्यवहारसे पाक्षिक प्रतिक्रमणमें १५ दिनोंके क्षामणे करनेमें आतेहैं. मगर निश्चयमें तो जितने रोजके कर्मबंधन हुए

होगे, उतनेही रोजके कर्मोंकी निर्जरा होगी किंतु ज्यादे कम नहीं होगी, इसलिये निश्चय और व्यवहारके भावार्थको समझे विना शब्दमात्रको आगे करके विवाद करना विवेकी आत्मार्थियोंको तो योग्य नहींहै। इसकाभी विशेष खुलासा इसी ग्रंथके क्षामणासंबंधी लेखसे जान लेना।

३३- अपेक्षा विरुद्ध होकर आग्रह करना योग्य नहीं है।

मासवृद्धिकेअभावमें ४महीनोंकेचौमासीक्षामणे, व१२महीनोंके संवच्छरी क्षामणे करनेका कहा है, उसकी अपेक्षा समझेविनाही मासवढनेपरभी उसीपाठको आगे करना और ५ मास १० पक्ष, व १३मास २६पक्ष शास्त्रोंमें लिखेहैं, उन पाठोंको छुपादेना. तत्त्वज्ञ आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है। इसीतरह पौष व चैत्रादि महीने बढे तब प्रत्येक महीनेके हिसाबसे विहार करनेवाले मुनिमहाराजोंको एक कल्प चौमासेका और नवमहीनोंके नवकल्प मिलकर दशकल्पीविहार प्रत्यक्षमें होता है। जिसपरभी महीना वढनेके अभावसंबंधी एककल्प चौमासेका और ८महीनोंके ८कल्पमिलकर ९ कल्पीविहार करनेका पाठ वतलाना और मास वढे तबभी दशकल्पी विहारको निषेध करनेके लिये भोलेजीवोंको संशयमें गेरना विवेकी सज्जनोंको योग्य नहीं है। इसीतरह मासवढनेके अभावकी अपेक्षासंबंधी हरेक बातोंको मास वढनेपर भी आगेलाकर उसका आग्रह करना सर्वथा अनुचित है इसको विशेष विवेकी तत्त्वज्ञ पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे।

३४- विषयांतर करना योग्य नहीं है।

५० दिनोंकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषण पर्व करनेकी सत्यबात ग्रहण करसकतेनहीं और पचास दिनोंकी गिनती उडानेकेलिये ऐसा कोई दृढ बाधक प्रमाणभी दिखा सकते नहीं, इसलिये दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाका विषय छोडकर होली, दिवाली, ओली आदिक मास प्रतिबद्ध कार्योंका विषय बीचमें लाते हैं, सो असत्य आग्रहका सूचनरूप विषयांतर करना योग्य नहीं है। क्योंकि ऐसे तो मासप्रतिबद्ध कार्योंमें या मुहूर्त प्रतिबद्ध कार्योंमें कितनेही महीने, कितनेही वर्षभी छूट जातेहैं. देखो—मास प्रतिबद्ध कार्य तो एक महीनेसे करनेके होवें सो अधिक महीना होवें तब एक महीनेकी जगह कितनेक पर्व दूसरे

महीनेमेभी किये जातेहैं। और दूज-पंचमी-अष्टमी-चतुर्दशी वगैरहमें उपवास करनेका, ब्रह्मचर्य पालनेका, रात्रिभोजन त्याग करनेका इत्यादि, व्रत, नियम, पच्चखाण तो दोनों महीनोंमें दो दो वार करनेमें आते हैं। और पर्युषणपर्व तो मास बढे तो भी ५० दिनकी जगह ५१ वें दिनभी कभी नहीं होसकते. इसलिये दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्वके साथ, मास प्रतिबद्ध होली, दीवाली वगैरहका विषय लाना सो सर्वथा अनुचित है।

और महीना बढनेके अभावमें ओलियोंका पर्व छट्ठे महीने करनेका शास्त्रोंमें कहाहै, मगर महीना बढे तवतो प्रत्यक्ष प्रमाणसे और शास्त्रीय हिसाबसे भी सातवें (७) महीने ओलियोंकापर्व होताहै, तो भी व्यवहारसे छट्ठे महीने आंबीलकी ओलियें करनेका कहाजाताहैं। जैसे—श्रीआदीश्वरभगवानने, चैत्र वदी ८ [गुजरातकी अपेक्षा फागण वदी ८] को दीक्षा अंगीकार की थी, और दीक्षाके दिनसे तपस्याका पारणा दूसरे वर्ष वैशाख शुदी ३ को हुआथा, तो भी व्यवहारसे सभी शास्त्रोंमें वर्षी तपका पारणा लिखा है. और ऐसेही वर्षीतपका पारणा सब कोई जैनीमात्र कहते हैं, मगर दिनोंकी गिनतीसे तो १३ महीनोंके ऊपर १० दिन होनेसे ४०० दिन पारणाके होते है, जिसमेभी कदाचित उस वर्षमें बीचमें अधिक महीना आजावे तो १४ महीनोंके ऊपर १० दिन होनेसे ४३० दिने पारणा होता है, तो भी व्यवहारसे वर्षी तपही कहा जाता है, और यह बात अभी वर्तमानमेंभी वर्षी तप करने वालोंके अनुभवमें प्रत्यक्षही आतीहै, इसलिये ४३० दिने पारणा करते हैं, तोभी व्यवहारसे वर्षीतप कहते हैं। और व्यवहारसे वर्षके ३६० दिन होते हैं मगर निश्चयमें तो ४३० दिने पारणा करने का बनताहै तो भी किसी तरहका विसंवाद या दोष नहीं आसकता. इसी तरहसे व्यवहारसें ओली ६ महीने, चौमासा ४ महीने व वार्षिक पर्व १२ महीने करनेका कहतेहैं, मगर अधिक महीना आवे, तब निश्चयमें तो, ओली ७ महीने, चौमासा ५ महीने, व वार्षिक पर्व १३ महीने होता है तोभी तत्त्व दृष्टिसे कोई तरहका विसंवाद या दोष नहीं है, मगर पर्युषण पर्वतो अधिक महीना होवे तब भी आषाढ चौमासीसे वर्षाऋतुके ५० वें दिनकी जगह ५१ वें दिनभी कभी नहीं होसकते. इसलिये मास प्रतिबद्ध होली, दीवाली, ओली वगैरहका दृष्टांत दिन प्रतिबद्ध पर्युषणामें बतलाना वि-

पर्यांतर होनेसे सर्वथा अनुचित है, इसको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वयं विचार लेवेंगे।

३५- अधिक महीनाकी तरह क्षय महीनाभी मानना योग्य है या नहीं ?

पर्युषणादि धार्मिककार्योंका भेद समझे विना अधिक महीनेके ३० दिनोंमें चौमासी व पर्युषणादि धर्मकार्य नहीं करनेका कितनेक लोग आग्रह करते हैं, मगर कभी कभी श्रावणादि अधिक महीनेवाला वर्षमें कार्त्तिकादि क्षयमासभी आते हैं, तबतो कार्त्तिक महीने संबंधी श्रीवीरप्रभुके निर्वाण कल्याणका तप, दीवाली पर्व, गौतम स्वामीके केवलज्ञान उत्पन्न होनेका महोत्सव, ज्ञानपंचमीका आराधन, चौमासी प्रतिक्रमण व कार्तिक पूर्णिमाका उच्छव वगैरह सभी कार्य तो उसी क्षयमासमें करते हैं। और लौकिकमें अधिकमहीना, या क्षयमहीना दोनों बरोबर माने हैं। जिसपरभी क्षय मासमें दीवालीपर्वादि धर्मकार्य करते हैं। और अधिक महीनेमें पर्युषणापर्वादि धर्मकार्य नहींकरनेका कहतेहैं। यहतो प्रत्यक्षमेंही पक्षपातका झूठा आग्रहहै. सो आत्मार्थियोंको तो करना योग्य नहींहै। इसलिये अधिक महीनेमें और क्षय महीनेमेंभी धर्मकार्य करने उचित हैं। इस बातकोभी तत्त्वज्ञ विवेकी पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे।

३६- वार्षिक क्षामणे या प्राणिओंके कर्मबंधन व आयु प्रमाणकी स्थिति किस २ संवत्सरकी अपेक्षासे मानते हैं ?

जैनशास्त्रोंमें पांच प्रकारके संवत्सर माने हैं, जिसमें नक्षत्रोंकी चालके प्रमाणसे ३२७ दिनोंका नक्षत्र संवत्सर मानते हैं। चंद्रकी चालके प्रमाणसे ३५४ दिनोंका चंद्रसंवत्सर मानते हैं। फलफूलादिक होनेमें कारणभूत ऋतु प्रतिबद्ध ३६० दिनोंका ऋतुसंवत्सर मानतेहैं। तथा अधिकमहीनाहोवे तब १३महनोंके ३८३दिनोंका अभिवर्द्धित संवत्सर मानतेहैं, और सूर्यके दक्षिणायन उत्तरायनके प्रमाणसे ३६६ दिनोंका सूर्य संवत्सर मानते हैं। और पांच सूर्य संवत्सरोंके प्रमाणसेही १८३० दिनोंका एक युग मानते हैं। इसी युगके १८३० दिनोंका प्रमाण पांचोंही प्रकारके संवत्सरोंके हिसाबसे मिलनेकेलिये, एक युगमें दो चंद्रमास बढते हैं, सात नक्षत्रमास बढते

हैं और एकऋतुमास बढताहै, तब सब मिलकर १८३०दिनोंका एक युग पूराहोताहै, और एक युगके सभी दिनोंको अभिवर्द्धित महीनेके हिसाबसे गिने तब तो कुल ५७ अभिवर्द्धित महिनोंसेही १ युग पूरा होता है। इसलिये शास्त्रोंके नियमसे तो अधिकचंद्रमासके या अधिक नक्षत्रमासके किसीभी महीनेके १ दिनकोभी गिनतीमें निषेध करनेवाले, तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके कथनके प्रमाणका भंग करनेवाले होनेसे आशातनाके भागी बनते हैं। क्योंकी चंद्रादि अधिक महीनोंके दिनोंकी गिनती सहितही पांच वर्षोंके १ युगके १८३० दिनोंकाप्रमाण पूरा होसकताहै, अन्यथा पूरा नहीं होसकता.

और तिथि, वार, मास, पक्षादि व्यवहार चंद्रमासके हिसाबसे चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासे मानतेहैं। और प्राणियोंके कर्म बंधनकी स्थिति, व आयुप्रमाणकी स्थिति सूर्यमासके हिसाबसे सूर्य संवत्सरकी अपेक्षासे मानते हैं, इसलिये सूर्यसंवत्सरके हिसाबसेही मास, अयन, वर्ष, युग, पूर्व, पूर्वांग, पल्योपम, सागरोपमादिकके काल प्रमाणसे ४ गतियोंके सबीजीवोंके आयुकाप्रमाण, व आठोंही प्रकारके कर्मोंकी जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टस्थितिके बंधका प्रमाण, और उत्सर्पिणी-अवसर्पिणीसे कालचक्रका प्रमाण, यहसबबातें सूर्यसंवत्सरकी अपेक्षासे मानते हैं. इसका अधिकार लोकप्रकाशादि शास्त्रोंमें प्रकटहीहै। और वार्षिकक्षामणे करनेका तो चंद्रमासके हिसाबसे चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासेमानतेहैं, मगर चंद्रसंवत्सरके ३५४ दिन होतेहैं, तो भी व्यवहारिक रूढीसे ३६० दिन कहनेमें आते हैं। तैसेही महीना बढे तब १३ महीनोंके ३९० दिन कहनेमें आते हैं, मगर कितनेक ऋतु संवत्सरकी अपेक्षासे ३६० दिनोंके वार्षिक क्षामणे करनेका कहते हैं, परंतु ऋतुसंवत्सर पूरे ३६० दिनोंका होता है, उसमें कोईभी तिथि क्षय होनेका अभाव है, व तीसरे वर्ष महीना बढनेकाभी अभाव है, और चंद्र संवत्सर ३५४ दिनोंका होनेसे सवत्सरीके रोज चंद्र संवत्सर पूरा होसकता है, मगर ऋतुसंवत्सर पूरा नहीं होसकता। और तिथि, वार, मास, पक्ष, वर्षका व्यवहारभी ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं चलता, किंतु चंद्र संवत्सर की अपेक्षासे चलता है, और ऋतु संवत्सरके ३६० दिनतो संवत्सरी पर्व हुए बाद ६ रोजसे दशमीको पूरे होते हैं, और संवत्सरीपर्वतो ४ या ५ को करनेमें आता है, इसलिये वार्षिक क्षामणे ऋतुसंवत्सरकी अपेक्षासे नहीं, किंतु चंद्रसंवत्सरकी अपेक्षासे कर

नेका समझना चाहिये. और ३५४ दिने, या ३८३ दिने संवत्सरी-
पर्वहोताहै, तोभी ३६०दिन या ३९०दिन कहनेमें आतेहै. सो ऋतुसंव-
त्सरसंबंधी नहीं. किंतु चद्रं या अभिवर्द्धित संवत्सरसंबंधी व्यवहा-
से कहनेमें आते हैं. देखो - चंद्रमासकी अपेक्षासे एक पक्ष १४ दिन
ऊपर कुछ भाग प्रमाणे होताहै, मगर पूरे १५ दिनोंका नहीं होता,
तो भी व्यवहारमें लोकसुखसे उच्चारण कर सकें इसलिये १५दिनों-
का एकपक्ष कहनेमें आताहै। यह अधिकार ज्योतिष्करंडपयन्नवृत्ति
वगैरह शास्त्रोंमें खुलासालिखाहै। इसीतरहसे महीनेके३०दिन व व-
र्षके३६०दिनभी व्यवहारकी अपेक्षासे समझने चाहिये, मगर निश्चय-
में तो जितने दिनोंसे संवत्सरीपर्वमें वार्षिक क्षामणे होवेंगे उतनेही
दिनोंके कर्मोंकी निर्जरा होगी, किंतु ज्यादे कम नहीं हो सकेंगी।

और संजलनीय, प्रत्याख्यानीय, अप्रत्याख्यानीय कषायकी अ-
नुक्रमसे, एक पक्षके १५दिन, ४ महीनोंके १२०दिन, व १२महीनोंके-
३६० दिनोंके १ वर्षकी स्थितिकाप्रमाण बतलाया है, सो, व्यवहार-
से बतलायाहै। मगर निश्चयमें तो रागद्वेषादि तीव्र परिणामोंके अनु-
सार न्यूनादिकभी बंध पडताहै। इसलिये उसकी स्थितीके प्रमाणकी
गिनती सूर्य संवत्सरकी अपेक्षासे होती है। और क्षामणे तो चंद्र-
संवत्सरकी अपेक्षासे व्यवहारसे करनेमें आते हैं, सो उपरमें इस-
का खुलासा लिख चुके हैं। इसलिये ३५४ दिन वर्षके होने परभी
व्यवहारिक दृष्टिसे ३६० दिनोंके क्षामणे करनेका, और कषायादि
कर्मोंकीस्थिति परिपूर्ण ३६०दिनतक निश्चय भोगनेका, दोनों विषय
भिन्न २ अपेक्षासे, अलग २ संवत्सरोंसंबंधी हैं, इसलिये इन्होंके आ-
पसमें कोई तरहका विरोध भाव नहीं आसकता। जिसपरभी चंद्र
संवत्सरसंबंधी व्यवहारिक क्षामणे करनेका,और सूर्यसंवत्सरसंबंधी
निश्चयमें कर्मोंकीस्थिति पूरेपूरीभोगनेका, रहस्यको समझेविनाही अ-
धिकमहीनेके ३०दिनोंकोगिनतीमेंलेनेका छोडदेनेके लिये, अधिक म-
हीनेकोगिनतीमें लेवें-तो कषायस्थितिका प्रमाण बढजानेसे मर्यादाउ-
ल्लंघन होनेकाकहतेहैं,सो शास्त्रोंके मर्मको नहीं जाननेके कारणसे अ-
ज्ञानताजनकहोनेसे सर्वथामिथ्याहै. देखो-- एक युगके दोनों अधिक
महीनोंके दिनोंको गिनतीमें नहींलेवेंतो सूर्यसंवत्सरका प्रमाणभी पूरा
नहीं हो सकता, इसलिये दोनों अधिक महीनोंके दिनोंको अवश्यमे-
व गिनतीमें लेनेसेही पांच सूर्यसंवत्सरोंके एक युगमें १८३० दिन
पुरे होते हैं। इसलिये अधिक महीना गिनतीमें नहीं छुट सकता।

और भी देखो— ३५४ दिने संवत्सरी प्रतिक्रमण करें तो भी व्यवहारमें ३६० दिनोंके क्षामणे करनेमें आते हैं, मगर अप्रत्याख्यानीय कषायके ३६० दिनोंके वर्षकी स्थितिका निश्चयमें बंध पडा होगा वह बंध, ३५४दिनोंमें (३६०दिनोंका) कभी क्षय न हो सकेगा, किंतु वो तो समय २ के हिसाबसे पूरे पूरे ३६० दिनही भोगने पडेंगे। इसीतरहसे चौमासी, व पाक्षिककाभी समझलेना. इसलिये व्यवहारिक क्षामणोंके साथ निश्चय कर्मस्थितिका दृष्टांतसे भोले जीवोंको मर्यादाउल्लंघनहोनेका भयवतलातेहुए अपनीविद्वत्ताके अभिमानसे अधिक महीना निषेध करना चाहते हैं सो शास्त्रविरुद्ध होनेसे सर्वथा अनुचितहै। इसकाभी विशेष तत्वज्ञजन स्वयं विचारलेवेंगे।

३७— चूलिका संबंधी एक अज्ञानता ॥

कितनेक लोग शास्त्रोंके रहस्यको समझे विनाही कहतेहैं, कि जैसे-लाख योजनके मेरुपर्वतमें उसकी चूलिका नहीं गिनी जाती, तैसेही १२ महीनोंके वर्षमें अधिक महीनाभी नहीं गिना जाता। ऐसा कहकर अधिक महीनेकी गिनती उडाना चाहते हैं, सो उन्होंकी अज्ञानताहै, क्योंकि एक लाख योजनके मेरुपर्वत उपर ४० योजनकी उंची चूलिका है, उसपर एक शाश्वत जिन चैत्य है, उसमें १२० शाश्वत जिन प्रतिमायें हैं, इसलिये ४० योजनकी चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित एक लाख उपर ४०योजनके मेरुपर्वतका प्रमाण क्षेत्रसमासादि शास्त्रोंमें खुलासालिखाहै, तैसेही १२ महीनोंके ३५४ दिनोंके एकवर्षकेप्रमाणउपर अधिकमहीनेकेदिनोंकी गिनतीसहित ३८३ दिनोंको वर्षकी गिनतीमेंलियेहैं, इसलिये चूलिकाके दृष्टांतसे अधिकमहिना गिनतीमें निषेध नहींहोसकता,मगर गिनतीमें विशेष पुष्ट होताहै। औरभी देखो पंचपरमेष्ठि मंत्र कहनेसे सामान्यतासे पांचपदोंके ३५ अक्षरोंका नवकार कहाजाताहै, मगर उसपरकी ४ चूलिकाओंके ४ पदोंके ३३ अक्षर साथमें मिलानेसे विशेषतासे नवपदोंके ६८अक्षरोंका 'नवकार' चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित कहनेमें आता है। इसतरह दशवैकालिक व आचारांगकी दो दो चूलिकाओंका प्रमाणभी गिनतीमें आता है। तैसेही सामान्यतासे एक लाख योजनका मेरुपर्वत, व १२ महीनोंका एक वर्ष कहनेमें आता है। मगर विशेषतासे तो चूलिकाके प्रमाणकी गिनतीसहित एकलाख चालीस योजनका मेरुपर्वत, व अधिक महीनेकी गिनती

सहित १३ महीनोंका अभिवर्द्धित वर्ष कहनेमें आता है। इसलिये अधिक महीना व मेरुचूलिका वगैरह सब विशेषतासे गिनतीमें आते हैं, जिसपर चूलिकाके नामसे अधिक महीना गिनतीमें निषेध करते हैं सो अज्ञानता है, इसको विशेष विवेकी तत्त्वज्ञ पाठक गण स्वंय विचार लेवेंगे।

३८– पर्युषणा पर्व शाश्वत है, या अशाश्वत है ?

यद्यपि भरतक्षेत्रमें व ऐरवर्तक्षेत्रमें चौवीश तीर्थंकर महा जोंमें प्रथम और चौवीशवें तीर्थंकर महाराजके साधुओंको चौ- सा ठहरने व पर्युषणा पर्व करने संबंधी निज निज तीर्थकी अपे- से तो पर्युषणापर्व अशाश्वत है, मगर अनादि कालकी अपेक्षासे शाश्वतहीहै. इसलिये तीनों चौमासीपर्व या पर्युषणापर्व वा आ- चैत्रकी ओलियोंकीअठ्ठाई आनेसे, भुवनपति–व्यंतर–ज्योतिषी र वैमानिक इंद्रादि असंख्य देव देवी, अपने समुदाय सहित दे- लोकसंबंधी अनंत सुखको छोडकर, आठवा नंदीश्वरद्वीपमें जाकर, हां शाश्ववत चैत्योंमें जिनेश्वर भगवान्के शाश्वत जिन बिंबोंकी ल-चंदन पुष्पादिसे द्रव्यपूजा व स्तवन-नाटक-वाजित्रादिसे भाव- जा करते हुए महोत्सव करके अपनी आत्माको निर्मल करते हैं। यह धिकार श्री जीवाभिगमसूत्र व उसकी टीकामें खुलासा लिखा है. सी प्रकार पर्युषणादि पर्व आराधन करनेके लिये श्रावकोंकोभी शेष रूपसे धर्मकार्य करने योग्य हैं इसका विशेष खुलासा 'प- षणा अठ्ठाई व्याख्यान' में और कल्पसूत्रकी सबी टीकाओंमें प्रकट है, इसलिये यहां विशेष लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

९– पर्युषणाके विवाद संबंधी सत्यकी परिक्षा करो.

जिनाज्ञानुसार सत्यग्रहण करनेवाले आत्महितेषी सज्जनोंको दन किया जाता है, कि— आगम-- निर्युक्ति--भाष्य--चूर्णि- वृत्ति रणादि प्राचीन व आजकालके पर्युषणा संबंधी सबी शास्त्रोंके ाका व सभी गच्छोंके पूर्वाचार्योंके वचनोंका इसग्रंथमें मैंने सं- किया है। और इस भूमिकामेंभी वर्तमानिक सभी शंकाओंका र वार क्रमसे समाधानभी खुलासापूर्वक करके बतलायाहै। औ- सग्रंथमें अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमें निषेध करनेवाले क लेखकोंके सबी लेखोंको पूरेपूरे लिखकर, पीछे सब लेखोंकी

पंक्ति पंक्तिकी समिक्षा करके (इसग्रंथमें) खूलासापूर्वक यतलाया है, मगर पर्युपणासंबंधी किसीभी लेखककी शंकावाली एकभी बातको छोडी नहीं है। इसलिये इसग्रंथमें वादी प्रतिवादी दोनोंके सब पूरे लेखोंको, और आगम पंचागीके शास्त्र पाठोंको; पक्षपात रहित होकर न्याय बुद्धिसे संपूर्ण वांचने वाले सत्यके अभिलाषियोंको अवश्यही जिनाज्ञानुसार सत्यकी परीक्षा स्वयंहीहो जावेगी।

४०– जिनाज्ञाकी दुर्लभता।

जैसे पुर्व दिशा तरफ कोई नगर होंवें उसमें जानेके लिये थोडा २ भी पुर्व दिशा तरफ चलनेसे अवश्यही उस नगरकी प्राप्ति होतीहै,। मगर पुर्वदिशा छोडकर पश्चिम दिशामें बहुत २ चलेंतोभी वो नगर दूर दूरही जायगा, मगर नजदीककभी नहीं आसकेगा इसीतरह जिनाज्ञानुसार थोडा २ धर्मकार्य किया हूआभी मुक्ति रूपी नगरमें आत्माको पहूचाने वाला होताहै, परंतु जिनाज्ञा विरुद्ध बहुत २ तपश्चर्यादि धर्मध्यान व्यवहारमें करें, तो भी तत्वदृष्टिसे शून्य होनेसे मुक्तिनगरमें पहुचानेवाला नहीं होता.किंतु संसार बढानेवाला होता है। और वर्तमानिक आग्रही जनोंकी भिन्न २ प्ररूपणा होनेसे भोले भव्य भद्रजीवोंको जिनाज्ञानुसार सत्यबातकी प्राप्ति होना बहुत मुश्किल है. यही दशा पर्युपणा संबंधी विवादमेंभी हो गई है। इसलिये भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसार पर्युपणा जैसे उत्तमपर्वके आराधन होनेकी प्राप्ति होनेके लिये आगम पंचांगी सम्मत, व सब लेखकोंकी शंकाओंका समाधान पूर्वक मैंने इसग्रंथमें इतना लिखा है। उसको अपने गच्छका आग्रह छोडकर तत्वदृष्टिसे पढनेवालोंको अवश्यही जिनाज्ञानुसार सत्यकी प्राप्ति होवेगी.

और मनुष्यभवमें शुद्ध श्रद्धा पूर्वक जिनाज्ञानुसार धर्म कार्य करनेकी सामग्री मिलना अनंतकालसे अनंत भवोंमेंभी महान् दुर्लभ है, वारंवार ऐसा सुअवसर नहीं मिल सकता.। इसलिये गच्छका पक्षपात,दृष्टिराग,लोकलज्जाकी शर्म, विद्वत्ताका झूठा अभिमान,जिनाज्ञा विरुद्ध अपने गच्छ परंपराकी रूढी,व बहुत समुदायकी देखादेखीकी प्रवृत्ति वगैरह बातोंको छोडकर जिनाज्ञानुसार सत्यग्रहण करनेमेंही आत्मसाधन होंनेसे, नरकादि ४ गतियोंके जन्म-मरण-गर्भावास वगैरह अनंत दुखोंसे छुटना होता है, इसलिये जिनाज्ञानुसार सत्यको समझे बादभी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे भोलेजीवोंको उन्मार्गमें

गेरनेकेलिये विद्वत्ताके अभिमानसे शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर झूठी २ कुयुक्तियें लगाना संसार वृद्धि व दुर्लभबोधि का कारण होनेसे आत्मार्थीयोंको सर्वथा योग्य नहीं है।

४१– पर्युषणापर्व ईधरके उधर कभी नहीं होसकते.

कितनेक लोग जिनाज्ञाका मर्म समझे विनाही कहते हैं, कि-- पर्युषणापर्व अधिक महीना होवे तब ५० दिने करो, या ८० दिने करो, मगर आगे या पिछे कभी करने चाहिये. ऐसा कहनेवाले सोने और पितल दोनोंको समान बनानेकी तरह जिनाज्ञानुसार सत्य बातको, और जिनाज्ञा विरुद्ध झुठी बातको, एक समान ठहराते हैं। इसलिये उन्होंका कथन प्रमाणभूत नहीं होसकता. किंतु मोक्षका हेतुभूत जिनाज्ञानुसार ५० दिनेही पर्युषणा पर्वका आराधना करना योग्य है, मगर ८० दिने करना जिनाज्ञा विरुद्ध होनेसे कदापि योग्य नहीं ठहर सकता. देखो—जमालि वगैरहोंने जप, तप, ध्यान, आगमोंका अध्ययन, परोपदेश, क्रिया अनुष्ठानादि बहुत २ किये थे तो भी जिनाज्ञा विरुद्ध होनेसे संसार बढाने वाले हुए, मगर यही कार्य अनुष्ठान जिनाज्ञानुसार करते तो निश्चय उसी भवमें मोक्ष-प्राप्त करने वाले होते. इसलिये आत्मार्थी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारही ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वका आराधन करना योग्य है, मगर जिनाज्ञा विरुद्ध ८० दिने करना योग्य नहीं है। इसको विशेष तत्त्वज्ञ जन स्वंय विचार लेवेंगे।

४२– पयुर्षणा पर्वकी आराधना करनेके बदले विराधना करना योग्य नहीं है।

पर्युषणा जैसे आनंद मंगलमय शांतिके दिनोंमें जिनाज्ञानुसार. धर्मकार्य करके पर्वकी आराधना करते हुए, सब जीवोंसे मैत्रिभाव-पुर्वक शांततासे वर्ताव करनाचाहिये. और वर्ष भरके लगेहुए अतिचारोंकी आलोचना करके सब जीवोंके साथ भावपूर्वक क्षमत क्षामणे करके अपनी आत्माको निर्मल करना चाहिये। जिसके बदले कितनेही आग्रही जन पर्युषणाकेही व्याख्यानमें सुबोधिका-दीपिका-कीरणावलि आदि वांचनेके समय श्रीमहावीर स्वामीके छ कल्याणक आगमोंमेंकहेहैं उन्होंको व अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लियेहैं इन्होंको निषेध करनेकेलिये,कितनीही जगहतो शास्त्रविरुद्ध,व कित-

मीही जगह प्रत्यक्ष मिथ्या कथन करके, आपसमेंही खंडनमंडनके झगडे चलातेहैं,और सब जीवोंकी जगह केवल जैनीमात्रसेभी मित्रता नहीं रख सकते, उससे मैत्री भावनाका भंग, विरोधभावकी वृद्धि व खंडन मंडनसे रागद्वेष करके कर्म बंधनका कारण करते हैं। और शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करनेसे जिनाज्ञाकीभी विराधना करते हैं उससे परिणामोंकी मलिनता होनेसे पर्व दिनोंमें वर्षभरके अतिचारोंकी आलोचना करके आत्माको निर्मल करनेकेबदले विशेष मलीन करते हैं। और खंडन मंडनके झगडेके लिये सब जीवोंसे क्षमत क्षामणे करनेकेबदले अपने सब जैनीभाईयोंसेभी क्षमत क्षामणे नहीं करसकते. उससे अनंतानुबंधी कषायके उदय होनेका प्रसंग आनेसे सम्यक्त्वकी व संयमकी विरोधना होकर संसार भ्रमणका कारण करते हैं, इसलिये कर्मक्षय कारक महा मंगलमय शांतिके दिनोंमें व्याख्यानमें श्री महावीरस्वामीके छ कल्याणक आगमोंमें कहेहैं उन्होंको व अधिक महिनेके ३० दिनोंको गिनतीमें लिये हैं उन्होंको निषेध करनेकेलिये खंडनमंडनके विवादके झगडे कितनेक तपगच्छ के मुनि महाराज जो चलातेहैं सो पर्वकी विराधना करनेवाले, शांतिके भंग करनेवाले, अमंगलरूप अशांतिको बढानेवाले, व उत्सूत्रप्ररूपणासे संसार बढानेवाले होनेसे, तत्त्वदर्शी,विवेकी,आत्मार्थी भव भिरु, सज्जनोंको अवश्यही छोडना योग्य है। इसको विशेष निष्पक्षपाति पाठकगण स्वयं विचार सकते हैं।

४३- पर्युषणाके मंगलिक दिनोंमें क्लेशकारक अमंगलिक करना योग्य नहीं है।

यहबात व्यवहारसे प्रत्यक्ष अनुभवपूर्वक देखनेमें आती है, कि मांगलिकरूप धार्मिक पर्व दिन सुखशांतिसे हर्षपूर्वक व्यतीत होवे, तो,वो वर्ष संपूर्ण सुखशांतिसे व्यतीत होता है, मगर मांगलिकरूप पर्व दिनोंमें किसीके साथ विरोध भाव कलेश होकर अमंगलरूप अपशुकन होवे, तो, वर्षभर चिंतासे कलेशमेंही जाता है। इसलिये पर्वके दिनोंमें तो अवश्यही शांति रखना योग्य है। इसप्रकार व्यवहारिक बातकेभी विरुद्ध होकर तपगच्छके कितनेही मुनिमहाराज पर्युषणा जैसे परम मांगलिकके दिनोंमेंभी शांतिसे नहीं बैठते, और सुबोधिका-दीपिका-किरणावलि वगैरहके विवादवाले विषय हाथमें लेकर श्रीमहावीरस्वामिके छ कल्याणक आगमपंचांगी प्रमे-

क शास्त्रोंमें कहेहैं उन्होंको, व अधिकमहीनेके ३० दिन गिनतीमेंलिये हैं, उन्होंकोंनिषेधकरनेकेलिये. अपनेधर्मबंधुओंके सामने व्याख्यानमें अशांतिके हेतुभूत व अमंगलरूप आपसके खंडनमंडनसे विरोध भावके झगडे खडेकरतेहैं,उससे 'जैसे राजा वैसी प्रजा' की तरह यही गुण श्रावकोंमेंभी प्रवेशकरताहैं, इसलिये वर्षभरके झगडे पर्युषणामें लाकर कलेशकरके विशेष कर्मबंधनकरतेहैं। इसलिये साधुओंके और श्रावकोंके दोनोंके एक एककी निंदाकरनेमें, झूठीवडाई करनेमें, दूसरे का विगाडनेमें, या कोई शासन उन्नतिके कार्य करें तो उसकी साहाता करनेके वदले उसमें कोईभी अवगुण वतलाकर उसका खंडन करनेमें इत्यादि अमंगलरूप कलेशके कार्योंमें वर्ष चला जाता है। इसलिये दिनोंदिन शाशनकी यह दशा होती हुई चली जाती है। और इससे अपने आत्मके कल्याणमें व परोपकारके कार्योंमेंभी विघ्न आतेहैं। इसलिये मंगलिकरूप पर्वके दिनोंमें अमंगलिकरूप खंडनमंडनसंवंधी विरोधभाव करना सर्वथा अनुचितहै। और अपनी सचाई जमानेकेलिये खंडनमंडन वैरविरोधके झगडेही करनेकी इच्छा हो तो पर्व दिन छोडकर अन्यभी वहुत दिन मौजूद हैं, मगर पर्युषणा पर्व अराधन करनेके लिये सवगच्छवाले श्रावक मुनिराजोंके पास उपाश्रय-धर्मशालामें आवें, उस वखत अपनें आपसके खंडनमंडनके विरोधभाववाली वात चलाना,यह कितनी वडी अनुचित वात है।और मंगलिकरूपपर्वदिन किसीप्रकारसेभी कलेशकारक खंडनमंडनके विरोधभावसे अमंगलिकरूप नवनकर शास्त्रानुसार शांतिसे पर्वकाआराधन होवे तो आत्माभी निर्मल होवे,वर्षभी हर्षपूर्वक सुखशांतिसे जावे, बुद्धिभी अच्छी होवे, और आत्मसाधन व परोपकारभी विशेषरूपसे होवे, संपसे शासन उन्नतिके कार्योंमेंभी वृद्धि होनेसे वर्तमानिक दशाकाभी सुधारा होवे। इसलिये वार्षिक पर्वरूप पर्युषणा शांतिमय सब जीवोंके साथ मैत्रिभावपूर्वक आराधन करके उसमें मांगलिकके कार्य करने चाहिये। और विरोधभावके कारण रूप खंडनमंडनके अनुचित वर्तावको छोडनाही अपनेको व दूसरे भव्यजीवोंकोंभी कल्याणकारक है। और शासनकी उन्नतिकाभी हेतुभूत है. इसको जो आत्मार्थी होगा सो दीर्घ दृष्टिसे खूब विचारेगा और उपर मुजब शास्त्रविरुद्ध अनुचित व्यवहरको छोडकर; शास्त्रानुसार उचित व्यवहारको अवश्यमेव ही ग्रहण करेगा, व दूसरोंकोंभी ग्रहण करावेगा.

४४–अभीके आग्रही जनोंकी मलीन बुद्धि व सम्यक्त्वी मिथ्यात्वीकी परीक्षा.

कोईभी वाद विवादके विषयकी चर्चा करनेमें,पहिलेवा म्यक्त्वी आत्मार्थी होतेथे वो तो तत्त्वदृष्टि तरफ विचार करके बात ग्रहण करतेथे और अपनापक्ष छोडनेमें किसीप्रकारकीभी नहीं समझतेथे. श्री गौतमस्वामि आदिगणधर महाराजोंकी तथा सिद्धसेनदिवाकर,हरिभद्रसूरिजीवगैरह उत्तमपुरुषोंकी और अभीके झूठे अभिमानी अंतर मिथ्यात्वी हठाग्रही होते हैं तो शास्त्रोंकी बातको मनमे समझने परभी अभिमानसे सत्यग्र हणकरके अपना पक्ष छोडनेमें बडीभारी हानी समझतेहैं, अ सागरजी शांतिविजयजीवगैरहोंकीतरह(इसका खुलासा आगे गा)औरशास्त्रोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर व्यर्थही झूठी २कुयुक्ति गाते हैं, या विषयांतर करके सामनेवालेपर या उसके समुदा विरोध भावको बढानेवाले आक्षेपकरने लगजाते हैं।और मुख्य विवादको छोडकर निंदा ईर्षासे राग द्वेप करके विरोधभावसे को और दूसरोंकोभी कर्मबंधन करानेमें हेतुभूत बनतेहैं. मगर आग्रहसे उत्सूत्र प्ररूपणा करके कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंको उन्‍ में गेरनेसे या राग द्वेपसे विरोधभाव करनेसे संसार बढनेक नहीं रखते हैं, इसलिये अभीके आग्रहीजनोंकी मलीन बुद्धि जाती है। इसीप्रकार पर्युषणासंबंधीभी यहग्रंथ बांचेबाद अब नेमें आवेगा, कि– ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाका विषयको छोड मास प्रतिबद्ध होली दिवाली आदिके विषयांतरमें या अंगतअ करनेमें कौन २ महाशय अपने अंतर आत्माके कैसे २ गुण प्र शित करेंगे, सो तत्त्वज्ञ जन स्वयं देख लेवेंगे, इसलिये यह विशेष लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

४५– इस ग्रंथ संबंधी लेखकोंको सूचना.

इसग्रंथपर किसी तरहकाभी लेख लिखनेवाले महाशयोंको चना करनेमें आती है, कि–जैसे मैंने इसग्रंथमें सुबोधिका-दीपि कीरणावली वगैरहके विवादवाले प्रत्येक लेखोंको पूरेपूरे लिख पीछे शास्त्रानुसार व युक्तिपूर्वक उसकी समीक्षामें खुलासा क बतलाया है मगर विवादवाली एकभी बातको छोडी नहीं है. वै ही इसग्रंथपर लेख लिखनेवाले आप लोगभी इसग्रंथके प्रत्येक

षयको पूरेपूरा लिखकर पीछे उसपर अपना विचार सुखसे लिखें मगर शास्त्रोंके पाठोंवाली सत्यरबातोंके पृष्ठकेपृष्ठ छोडकर कहींकहीं की अधूरी २ बात लिखकर शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर संबंधविनाके अधूरे २पाठ लिखकर या कुयुक्तियोंसे सत्यबातको झूठी ठहरनेका व भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेका उद्यम न करें अन्यथा लेखकोंमें कितना न्याय व आत्मार्थीपना है और सम्यक्त्वका अंशभी कितना है, उसकी परीक्षा विवेकी विद्वानोंमें अच्छी तरहसे हो जावेगा और उसको सभामें सिद्ध करनेको तैयार होना पडेगा फिर शास्त्रार्थ करनेमें मुह नहीं छिपाना विशेष क्या लिखें।

४६– उत्सूत्र प्ररूपणाके विपाक.

शास्त्रार्थ करनेको सभामें सामने आना मंजूर करना नहीं, व अपना झुठा आग्रह छोडकर सत्य वात ग्रहणभी करना नहीं और विषयांतर करके कुयुक्तियोंसे शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करते हुए भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनें का उद्यम करते रहना. उससे दृष्टिरागी, अज्ञानी लोग चाहे जैसे पूजेंगे मानेंगे मगर "उत्सूत्त भासगाणं वाहिणासो अणंत संसारो" इत्यादि तथा "सम्मतं उच्छिदिय, मिच्छत्तारोवणं कुणई निय कुलस्स ॥ तेण सयलो वि वंसो, कुगई मुह समुहो नीओ ॥ १ ॥" इत्यादि देखो— उत्सूत्र प्ररूपणाकरनेवालेके वोधिबीज (सम्यक्त्व) का नाश होकर अनंत संसार बढताहै,और जिसने अपने कुलमें गणमें (गच्छमें) समुदायमें सम्यक्त्वका नाशकरनेवाली मिथ्यात्वकी प्ररूपणाकी हो वे, वो अपने सब वंशको, गच्छको, समुदायको, दुर्गतिमें गेरनेवाला होताहै। शिवभूति-लुंका-लवजी-भीखम वगैरह मतप्रवर्तकोंकी तरह इत्यादि भावको विचारो और संसारसे उदासीन भावधारण करनेवाले आत्मार्थी भव्यजीवोंको मुक्तिमार्गका रस्ता बतलानेके भरोसे उन्मार्गका रस्ता बतलानेवाला 'शरणे आनेवालोंका विश्वास घातसे शिरच्छेदन करनेवालेसेभी' अधिक दोषी ठहरताहै। और याद रखना दृष्टिराग, लोकपूजा मानता, व झूठा आग्रहका अभिमान परभवमें साथ न चलेगा. मगर उत्सूत्रप्ररूपक ८४ लाख जीवायोनीका घात करनेवाला होनेसे उसके विपाक अवश्यही भवांतरमें भोगेविना कभी नहीं छुटेंगें,इसबातपर खूब विचारकरना चाहिये। और जिनाज्ञानुसार सत्यप्ररूपणा करके भव्य जीवोंको मुक्तिमार्गका रस्ता बतलानेवाले ८४लाख जीवायोनीके सर्वजीवोंकोअभयदान देनेसे महान्पु-

ण्यके भागी होते हैं, और अपने कुलको गच्छको समुदायकोभी स-द्गतिके भागी बनाते हैं व आपभी अपनी आत्माको निर्मल करके अल्पकालमें निर्वाण प्राप्त करनेवाले होते हैं, गणधरादि उपकारी महाराजोंकी तरह। इसलिये संसारसे डरनेवाले आत्मार्थियोंको झूठा आग्रह छोडकर वगर विलंबसे सत्यग्रहण करना चाहिये, और अन्यभव्य जीवोंकोभी सत्य ग्रहण करवाना चाहिये । इसको विशेष विवेकी निष्पक्षपाती पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे।

४७– सुबोधिका-दीपिका–क़िरणावली वगैरहके पर्युषणा व छ कल्याणक संबंधी शास्त्रविरुद्ध भूलोंकों सुधारनेकी खास आवश्यकताहै.

१- जैनपंचांगके अभावसे अभी महीना बढे तो भी " जैन टिप्पणाकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगं ते चाषाढ एव वर्धते, नान्येमासा स्तट्टिप्पणकं तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते,ततः पंचाश तैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः " इस वाक्यसे सुबोधिका--दीपिका कीरणवली इन तीनों टीकाकारोंने अपने तपगच्छकेही पूर्वाचार्योंकी आज्ञासे ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्वकी आराधना करनेका लिखा, फीर उसीकोही उत्थापन करनेके लिये शास्त्रविरुद्ध होकर कुयुक्तियोंका संग्रह किया है, यह सबसे बडी प्रथम भूलकीहै, उसको वगर विलंबसे खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

२- निशीथ चूर्णिमें अधिक महीनेको कालचूला कहकर उसके ३०दिन पर्युषणासंबंधी गिनतीमें लियेहैं, उसकोभी कालचूलाके नामसे निषध किये सो दूसरी भूलकी है।

३— निशीथ चूर्णिके अधिकमासके अभाव संबंधी अधूरे २ पाठ भोलेजीवोंकों बतलाकर अभी दो श्रावण होंवे तबभी जिनाज्ञाविरुद्ध ८० दिने पर्युषणाहोनेका भय न करके भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका ठहराया सो तीसरी भूलकी है।

४— अधिक महीनेके अभावसे सामान्यतासे पर्युषणाके पिछाडी कार्तिकतक ७० दिन रहनेका कहा है, उसको समझे बिना अधिक महीना होवे तब विशेषतासे १०० दिन होते हैं उसकी जगभी ७० दिन रहनेका आग्रह कियासो चौथी भूलकी है।

५- पौष-आषाढ-श्रावणादि वढें तव पांच महीनोंसे फालगुन-आषाढ-कार्तिकमें चौमासी प्रतिक्रमण करनेमें आता है, जिसपरभी श्रावणादि वढें तव आसोजमेंकी महीनोंसे चौमासीप्रतिक्रमण करने का बतलाया सो भी पांचवी भूलकी है ।

६- पहिले मास वढताथा तवभी २०दिने वार्पिक कार्यकरतेथे, उसको सर्वथा उडादिये सो यह छट्ठी भूलकी है ।

७- मास वढे तव १३ महीनोंके क्षामणे वार्पिक प्रतिक्रमणमें वा पांचमहीनोंके क्षामणे चौमासी प्रतिक्रमणमें हम लोग करते हैं, जिसपरभी१२महीनोंके वार्पिक क्षामणे वा ४ महीनोंके चौमासी क्षा मणे करनेका प्रत्यक्ष झूठ लिखा सोभी यह सातवी भूलकी है ।

८- पौष-चैत्रादि महीने वढें तव प्रत्यक्षमें १० कल्पी विहार होता है, जिसपरभी मास वृद्धिके अभावसंवंधी ९कल्पी विहारकी वात वतलाकर १० कल्पीविहारका निषेध किया सोभी यह आठवी भूलकी है ।

९- अधिक महीनेमें सूर्याचार होता है, जिसपरभी नहीं होनेका वतलाया सोभी यह नवमी भूलकी है ।

१०- श्रावणादि महीने वढे, तव उसकी गिनतीसहित पांचवें महीनेके नवमें पक्षमें ४॥ महीनोंसे दिवाली पर्व करनेमें आता है, और कभी दो कार्तिक महीने होवे तव प्रथम कार्तिक महीनेमें दीवाली पर्व करनेमें आताहै. जिसपरभी दिवाली वगैरह पर्वोंमें अधिक महीना नहींगिननेका प्रत्यक्षही झूठ लिखा सोभी यह दशवी भूलकीहै

११-यज्ञोपवित, दीक्षा, प्रतिष्ठा, विवाह, सादी वगैरह मुहूर्तवाले कार्य तो अधिक महीनेमें, क्षय महीनेमें, चौमासेमें, और सिंहस्थादिमें भी नहीं करते. मगर चौमासी पर्व व पर्युषणापर्व तो अधिक महीनेमें, क्षयमहीनेमें, चौमासेमें, और सिंहस्थादिमेंभी करते हैं । जिसपरभी मुहुर्तवाले कार्योंकी तरह अधिक महीनेमें पर्युषणा करनेकाभी निषध किया सो यहभी जिनाज्ञा विरुद्ध उत्सूत्रप्ररूपणारूप इग्यारहवी भूलकी है.

१२- ५०दिने प्रथमभाद्रपदमें पर्युषणाकरनाचाहिये जिसकेवदले दूसरे भाद्रपदमें करनेका लिखा सो ८० दिन होनेसे यहभी शास्त्रविरुद्ध वारहवी भूल की है ।

१३- जैसे देवपुजा, मुनिदान आवश्यकादि कार्य दिन प्रतिवद्ध हैं, वैसेही पर्युषणापर्व भी ५० दिन प्रतिवद्धहैं, इसलिये जैसे अधिक

महीनेके ३० दिन देवपूजा मुनिदानादि कार्योंमें गिनतीमें आते हैं, तैसेही पर्युषणामेंभी अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें आते हैं, जिसपरभी पर्युषणामें अधिक महीनेके ३० दिन नहीं गिननेका लिखा सोभी यह तेरहवी भूलकीहै।

१४- अधिक महीनेके ३० दिनोंमें वनस्पति बढती है। व फूल-फलादि भी होते हैं, जिसपरभी आवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ समझे विनाही अधिक महीनेमें वनस्पति पुष्पवाली नहीं होनेका लिखा सोभी यह चौदहवी भूलकी है।

इत्यादि अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध होकर अधिक महीनेके ३० दिनोंको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेकेलिये उत्सूत्रप्ररूपणारूप बहुत भूलेंकी हैं उन्होंको खास सुधारनेकी आवश्यकता है।

अब श्रीमहावीरस्वामिके आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करने संबंधी भूलोंका थोडासा खुलासा लिखते हैं।

१५- तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन-जन्मादिकोंको कल्याणकपना आगमानुसार अनादि सिद्ध है, इसलिये उन्होंको च्यवनादि वस्तु कहो, चाहे च्यवनादि स्थान कहो, या च्यवनादि कल्याणक कहो, यद्यपि वस्तु व स्थान शब्द अनेकार्थवाले हैं तोभी तीर्थंकरमहाराजके चरित्रमें प्रसंगसे च्यवन जन्मादिकमें सब एकार्थवाले पर्यायवाचक शब्द अलग २ हैं, मगर सबका भावार्थ एकहीहै, किंतु भिन्न २ नहीं है। इसलिये श्रीपार्श्वनाथस्वामिके तथा श्री नमिनाथ स्वामिके च्यवनादि पाच पाच कल्याणकोंकी तरहही श्री महावीर स्वामिकेभी च्यवनादि पाच कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें और छठा निर्वाण कल्याणक स्वातिनक्षत्रमें होनेका कल्पसूत्रादि आगमोंमें खुलासा पूर्वक कहाहै। जिसका मर्म समझे विना कल्पसूत्रकेमूल पाठके अर्थमें च्यवनादि छकल्याणकोंका निषेध करनेकेलिये छ वस्तु या स्थान कहकर अनादिसिद्धकल्याणक अर्थको उडादिया यह सूत्रार्थके उत्थापन करनेवाली उत्सूत्रप्ररूपणारूप सबसे बडी पंदरहवी भूलकी है।

१६- श्रीमहावीर स्वामिके प्रथम च्यवन कल्याणकके दिनमें तो आषाढ सुदी ६ को इन्द्र महाराजका आसन चलायमानभी नहीं

हुवा, तथा इन्द्र महाराजने अवधिज्ञानसे भगवानको देखे भी नहीं और नमुत्थुणं वगैरह कुछभी नहीं किया, तोभी उन्हीको कल्याणकप-ना मानते हैं और कल्पसूत्रमूल तथा उन्हीकी सवी टीकाओंके अनु-सार तो यही सिद्ध होता है, कि- ८२ दिन गये बाद गर्भापहाररूप दूसरे च्यवन कल्याणकके दिनमें आसोज वदी १३ को इन्द्रमहारा-जनें अवधिज्ञानसे भगवान्को देखे, तब हर्षसहित सिंहासनसे नीचे उत्तर कर विधिपूर्वक 'नमुत्थु णं' किया और हरिणेगमेषिदेवको आज्ञा करके त्रिशलामाताकी कुक्षिमें स्थापित करवाये, तब त्रि-शलामातानें आसोज वदी १३ की रात्रिको तीर्थंकर भगवानके अव-तार लेनेकी सूचना करानेवाले १४ महास्वप्न देखे हैं। और कलि-काल सर्वज्ञ विरुद धारक श्रीहेमचन्द्रसूरिजी महाराजनें तो 'श्रीत्रि-षष्ठिशलाका पुरुषचरित्र' के दशवेंपर्वमें श्रीमहावीरस्वामिके चरि-त्रमें लिखाहै, कि-गर्भापहारकेदिन आसोजवदी १३को इन्द्रमहाराज-काआसनचलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवानको देखकर नम-स्काररूप 'नमुत्थु णं' किया और हरिणेगमेषिदेव द्वारा त्रिशलाके गर्भमें स्थापित करवाये, तब त्रिशलामातानें तीर्थंकर भगवान्के अ-वतार लेनेकी सूचना करानेवाले १४महा स्वप्न देखेहैं, उसके बाद खास इन्द्रमहाराजने त्रिशलामाताकेपासमें आकर १४ स्वप्न देखनेसे उसका फल तीर्थंकर पुत्र होनेका कहाहै, तथा धनदभंडारीको आ-ज्ञा करके देवताओं द्वारा धन धान्यादिकसे सिद्धार्थ राजाके राज्य ऋद्धिकी भंडारादिमें वृद्धि कराई है, इत्यादि अनेक बातें च्यवन क-ल्याणकपनेकी सिद्धिकरनेवाली प्रत्यक्षमें हुयी हैं। इसलिये इन्हको गर्भापहाररूप दूसरा च्यवन कल्याणक मानते हैं। उसका भावार्थ समझे विनाही कल्याणकपनेका निषेध करनेकेलिये राज्याभिषेककी बात बीचमें लाते हैं, मगर श्रीऋषभदेव भगवान्के राज्याभिषेकमें तो किसीभी कल्याणकपनेके कोईभी लक्षण नहीं हैं इसलिये राज्या-भिषेकको कोईभी कल्याणक नहीं मानसकते. परंतु इस अवसर्पि-णीमें प्रथम राज्याभिषेक उत्तराषाढा नक्षत्रमें इन्द्रमहाराजनें किया, और प्रथम राज्यप्रवृत्ति चलाया, उसकी यादगिरीके लिये केवल राज्याभिषेकका नक्षत्र मात्रही च्यवनादि कल्याणकोंके साथ बत-लाया है, उसका भावार्थ समझे विना उसकोभी कल्याणकपना ठह-रानेका आग्रहकरना या राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी क-ल्याणकपने रहित ठहराना सोभी गर्भापहारके और राज्याभिषेकके

भावार्थको समझे बिना व्यर्थ ही यह सोलहवी बडी भूलकीहै ।

१७– जैसे श्री मल्लीनाथस्वामि स्त्रीत्वपनमें तीर्थंकर उत्पन्न हुएहैं सो विशेषतासे प्रसिद्धही है, तो भी चौवीश तीर्थंकरमहाराजोंकी अपेक्षासे सामान्यतासे श्री मल्लीनाथ स्वामीकोभी पुरुषत्वपनेमें कहनेमें आते हैं. मगर उसमे सामान्य विशेष संबंधी अपेक्षाकी भिन्नता होनेसे कोई तरहका विरोध भाव नहीं आ सकता। तैसेही श्रीमहावीर स्वामीकेभी विशेषतासे छ कल्याणक आचारांग-स्थानांग– कल्पसूत्रादि आगमोंमें कहेहैं. तो भी अतित, अनागत, और वर्तमान कालसंबंधी भरतक्षेत्रके तथा ऐरवर्त क्षेत्रके सर्व तीर्थंकर-महाराजों की अपेक्षासे सामान्यतासे श्रीमहावीर स्वामिके भी पांच कल्याणक 'पंचाशक सूत्रवृत्ति' में कहे हैं, मगर उसमें सामान्य-विशेष अपेक्षाकी भिन्नता होनेसे इनके आपसमें कोई तरहका विरोधभाव नहीं आ सकता, जिसपरभी आचारांग, स्थानांगादि आगमोंके छ कल्याणक संबंधी विशेषताके और 'पंचाशक' के पांच-कल्याणक संबंधी सामान्यताके अभिप्रायको समझे विनाही सामान्य पांच कल्याणक संबंधी पूर्वापार संबंध विनाका अधूरापाठ भोले जीवोंको बतलाकर आगमोंमें विशेषतापूर्वक छ कल्याणक कहे हैं उन्हीका निषेध करनेके लिये आग्रह किया है,सो भी अज्ञानता जनक सर्वथा अनुचित यह सत्तरहवी बडी भूलकी है।

१८– आचारांग, स्थानांगादि मूल आगमोंमें च्यवनादि अलग २ छ कल्याणक खुलासा पूर्वक बतलाये हैं, और उन्हींकी टीकाओंमें-भी कल्याणक अर्थकी सूचना करनेवाले पर्यायवाचक च्यवनादि छ स्थान बतलाये हैं उसका भावार्थ समझे विनाही च्यवनादिकोंको वस्तु या स्थान कहकर कल्याणकपनेका सर्वथा निषेध किया सोभी अतीवगहनाशयवाले आगमोंके भावार्थका अजानपना होनेसे यहभी अठाहरवी बडी भूलकी है।

१९– आषाढ सुदी ६ को भगवान देवानन्दामाताकी कुक्षिमें आये, सो नीचगौत्रके कर्म विपाकका उदयरूप है,उसीकोही शास्त्रकारोंने आश्चर्यरूप अच्छेरा कहा है तोभी उसको प्रथम च्यवनकल्याणक मानते हैं। और नीच गौत्रका कर्मविपाक क्षय हुए बाद उंच-गौत्रके कर्मविपाकका उदय होनेसे आसोज वदी १३ को त्रिशला-माताकी कुक्षिमें उत्तम कुलमें भगवान् पधारे तब अनादि मर्या-

दामुजब तीर्थंकरमहाराजोंकी माताओंकेगर्भमें तीर्थंकर उत्पन्न होने-की सूचना करने वाले १४ महास्वप्न देखनेकी तरहही त्रिशलामाता-नेभी१४महास्वप्न आकाशसे उतरते हुएदेखेहैं,इसलिये यहतो दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपना प्रत्यक्षमेंही सिद्धहै। उन्हीको नीचगोत्रका विपाकरूप और आश्चर्यरूप कहकर कल्याणकपनेका निषेध किया सो यहभी एकोणवीशवीभी बडी भूलकी है।

२०- जैसे देवलोकसे देवभवसंबंधी आयु पूर्ण होने पर वहांसे च्यवनरूप कारण होनेसे माताकेगर्भमें उत्पन्न होनेरूप (अवतार लेने रूप) कल्याणकपनेका कार्य होता है, तो भी कारण कार्य भावसे च्यवनकोही कल्याणकपना कहनेमें आता है। तैसेही गर्भापहाररूप कारणहोनेसे तीर्थंकर पनेमें प्रकट होनेकेलिये गर्भसंक्रमणरूप(अव-तारलेनेरूप) दूसराच्यवनरूप कल्याणकपनेका कार्य हुआ है, तोभी कारण कार्यभावसे गर्भापहारको कल्याणकपना कहनेमें आताहै। इसलिये उनको गर्भापहार कहो; गर्भसंक्रमण कहो, त्रिशलाकुक्षि-में अवतार लेनेका कहो,या दूसराच्यवनरूप कल्याणक कहो. सबका तात्पर्यार्थसे भावार्थ एकही है, इनमे किसी तरहका विरोध नहीं है. इसप्रकार तीर्थंकरपनेमें प्रकट होनेके लिये त्रिशलाके गर्भमें अवता-र लेनेरूप गर्भापहारके उत्तम कार्यके भावार्थको समझे विनाही ग-र्भापहारको अतिनिंदनीक कहतेहैं सो तीर्थंकर भगवान्‌के अवर्णवाद बोलनेरूप (आशातनाकरनेरूप) दुर्लभ बोधिपनेकी हेतुभूत यहभी वीशवी बडी भूल की है।

२१- जैसे श्रीआदीश्वर भगवान् १०८ मुनियोंके साथ एक स-मयमें अष्टापदपर्वत ऊपर मोक्ष पधारे, उनको आश्चर्यरूप कहते हैं, तो भी मोक्ष कल्याणकभी मानतेहैं. तथा श्रीमल्लीनाथ स्वामिके ज-न्म, दीक्षा, व केवलज्ञानकी उत्पत्ति वगैरह सर्व कार्य स्त्रीत्वपनेमें हुए हैं, उन्होंको आश्चर्य कारक अच्छेरे कहते हैं. तोभी उन्होंकोही जन्म, दीक्षादिक कल्याणकभी मानतेहैं। तैसे ही श्रीमहावीरस्वामि-के गर्भापहारको आश्चर्य कारक अच्छेरा कहते हैं, तो भी उनको दू-सरा च्यवनरूप कल्याणक माननेमें आता है. उसका आशय समझे-विनाही गर्भापहारको आश्चर्य कहके कल्याणकपनेका निषेध किया सोभी अज्ञानताजनक यह एकवीशवीभी बडी भूल की है।

२२- जैसे श्रीसिद्धसेनदीवाकरसूरिजी महाराजने उज्जैनीनगरीमें

दर्वाहुई श्रीपर्वतिपार्श्वनाथजीकी प्राचीनप्रतिमाकोफिरसेप्रकटकरी, तथा गुजरातमें अणहिलपुर पाटणमें शिथिलाचारी चैत्यवासियोंने संयमधर्मको दबादियाथा,उसको श्रीजिनेश्वरसूरीजीमहाराजने वहां जाकर फिरसे प्रकटकिया और श्रीनवांगीवृत्तिकारक खरतरगच्छना-यक श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजने श्री स्थंभनपार्श्वनाथजीकी प्रति-माको प्रकट करी तैसेही कल्प-स्थानांग-दशा श्रुतस्कंध आचारांगा-दि आगमोंमें कहेहुए श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकों-कों, मेवाडदेशमें चितोडनगरमें शिथिलाचारी, लिंगधारी, चैत्य-वासियोंनें दबा दिये थे, उन्हींकोंही श्री जिनवल्लभसूरिजी महाराज-नें वहां जाकर फिरसे प्रकट किये हैं, सो शास्त्रविरुद्ध नवीन नहीं किंतु आगमोक्त प्राचीनही है. जिसका भावार्थ समझे विनाही न वीन प्रकट करनेका कहतेहैं, सोभी अज्ञानता जनक प्रत्यक्षही मिथ्या भाषणरूप यह वादीशवीभी बडी भूल की है।

२३- जैसे अभी वर्तमानिक गच्छोंके पक्षपाती जन अहमदाबाद वगैरह शहरोंमें अपने गच्छके उपाश्रय वा धर्मशाला वगैरह मकान खाली पडे होंवे तोभी अन्य गच्छवाले शुद्ध संयमी मुनियोंको उस-में ठहरनें नहीं देते. और यति लोकभी अपनें गच्छके आश्रित भग-वान्‌के मंदिरमें अन्य गच्छके यतिको स्नात्र महोत्सवादि पूजा पढा-नें नहींदेते, जिसपरभी अन्यगच्छवाला यति अपनेगच्छके आश्रितमं-दिरमेंस्नात्रमहोत्सवादि पूजापढानेकोआवेतो, वोलोग मरणे-मारणे-शिरफोडनेको तैयार होतेथे, और कहतेथे,कि-ऐसाकभी पहिले हुआ नहीं और अभी होनेदेंगेभी नहीं. यहबात गच्छोंके विरोधभावसे मा-रवाड, गुजरात वगैरहदेशोंमें पहिले प्रसिद्धहीथी और कोई शहरोंमें अबीभी देखनेंमेंआतीहै। इसीतरहसेही पहिले चैत्यवासीलोगभी आ-पसके द्वेषसे या लोभदशासे अपने गच्छके आश्रित मंदिरमें अन्यग-च्छवालेको स्नात्रपूजा महोत्सव,प्रतिष्ठादि कार्य नहींकरने देतेथे.उस अवसरमें श्री जिनवल्लभसूरिजी महाराज गुजरात देशसे विहार क-रके मेवाडदेशमें विशेष लाभ जानकर जिनाज्ञाविरुद्ध शिथिलाचारी चैत्यवासियोंका अविधिमार्गका खंडन करतेहुए,जिनाज्ञानुसार शुद्ध विधिमार्गका उपदेशद्वारा स्थापन करते हुए, भव्यजीवोंके उपकार केलिये चितोडनगरमेंपधारे। तब वहां वाले चैत्यवासियोंनें और उ-न्होंके पक्षपाती भक्तलोगोंने अपनी भूल प्रकटहोनेके भयसे महाराज को शहरमें ठहरनेके लिये कोईभी जगह नहीं दिया और द्वेषबुद्धिसे

चामुंडिका देवीके मंदीरमें ठहरनेका बतलाया,तब महाराज तो दे-वीकी आज्ञालेकर वहांही ठहरे. उनके संयमानुष्ठान, जप, तप,ध्यान, धैर्य,ज्ञानादिगुण देखकर देवीभी प्रसन्न होकर जीवहिंसा छोडकर, जी-वदया पालनेवाली व महाराजकी भक्ति करनेवाली होगई. और शहर वालेभी पुण्यवान भव्यजीव जिनाज्ञानुसार सत्यधर्मकी परीक्षा कर-नेको वहां महाराजकेपास थोडे २ आनेलगे. और अन्य दर्शनियोंमेंभी महाराजके विद्वत्ताकी बडी भारी प्रसिद्धि होनेसे बहुत लोग अपना संशय निवारण करनेकेलिये महाराजकेपास आनेलगे, शहरभरमें ब-हुत प्रसंशा होनेलगी, तब कितनेक गुणग्राहीश्रावकलोगभी महाराज-को गीतार्थ, शुद्धसंयमी और शास्त्रानुसार विधिमार्गकी सत्यबातें ब-तलानेवाले जानकर, चैत्यवासियोंकी शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाकी तथा चैत्यकी पैदाससे अपनी आजीविका चलानेकी स्वार्थीकल्पितबातों-कों छोडकर महाराजकेपास शास्त्रानुसार सत्यबातोंका ग्रहण करने वाले होगये, पीछे महाराजका चौमासाभी वहां करवाया. तब तो महाराज चैत्यवासियोंकी शिथिलता और अविधिको खूब जोरशो-रसे निषेध करने लगे और जिनाज्ञानुसार विधिमार्गकी सत्यबातें विशेषरूपसे प्रकाशित करनेलगे, उसको देखकर बहुत भव्यजीव चैत्यवासियोंकी मायाजालसे छुटकर शास्त्रानुसार क्रिया अनुष्ठान करने लगे। तबतो चैत्यवासी लोग महाराजपर बहुत नाराज होग-ये और अपनी शास्त्रविरुद्ध भूलोंको सुधारनेके बदले पांचसौ चैत्य वासी इकट्ठे होकर लकडीयें वगैरह हाथमें लेकर महाराजको मार-नेकेलिये आये, इसबातकी अच्छे २ आगेवान श्रावकोंद्वारा चितोड नगरके राजाको मालूम पडनेसे महाराज ऊपरका यह उपसर्ग रा-जाने दूर किया, चैत्यवासीलोग बहुत द्वेष करतेथे और नगरभरके सबमंदिर चैत्यवासियोंके ताबेमेंथे. इसअवसर में महाराज श्रावकोंके साथ श्रीमहावीर स्वामीके दूसरेच्यवन कल्याणक संबंधी आसोज वदी १३ को चैत्यवासियोंके मंदिरमें देववंदनादि करनेको जाने लगे, तब पहिलेके विरोधभावके कारणसे राज्यमान आगेवान् श्रा-वकलोग साथमेंथे इसलिये चैत्यवासीलोग तो कुछबोल सके नहीं, मगर एक चैत्यवासीनी बुढिया अपने तुच्छ स्वभावसे अपनेगच्छके आश्रित मंदिरके दरवाजेपर आडी सोगई और क्रोधसे बोलने लगी कि-' पहिले ऐसा कभी हुआ नहीं और यह अभी करते हैं सो मेरे जीवते तो मंदिरमेंनहींजानेदूंगी;मेरेको मारकर पीछेभले अंदर जावो'

ऐसा उस चैत्यवासीनी बुढियाका क्रोधसहित अनुचितवर्तावको देखकर यद्यपि श्रावक लोग उसको दरवाजेसे हटाकर मंदिरमें दर्शन करनेको जा सकतेथे, तोभी स्त्रीकेसाथ वैसा करना योग्य न समझ कर महाराजकेसाथ पीछे अपने स्थानपर चले आये. इत्यादि 'गणधरसार्धशतक' बृहद्वृत्ति वगैरहमें श्रीजिनवल्लभसूरिजीमहाराजका चरित्रसंबंधी पूर्वापरके आगे पीछेके प्रसंगको, व चितोड निवासी चैत्यवासियोंके विरोधभावको, विवेकीबुद्धिसे समझेविनाही अथवा तो जानबुझकर आगे पीछेका संबंधको छुपाकरके कितनेकलोग कहतेहैं, कि- 'श्रीजिनवल्लभसूरिजीने चितोडनगरमें छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणाकरी उसको बुढियाने मना किया तो भी माना नहीं.' ऐसा कहनेवाले अपनी अज्ञानता प्रकट करते हैं, क्योंकि देखो वो चैत्यवासीनी बुढिया अज्ञानी आगमोंके भावार्थको नहीं जाननेवालीथी, व शिथिलाचारी होकर अपनी आजीविकाके लिये चैत्यमें रहकरके चैत्यकी पैदाससे अपना गुजरानकरतीथी. और श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज चैत्यमें [मंदिरमें] रहनेका, व उसकी पैदाससे अपनी आजीविका चलानेका निषेध करनेवाले, तथा शास्त्रानुसार व्यवहार करनेवाले शुद्ध संयमी थे. इसलिये चितोडके सब चैत्यवासियोंकी तरह वह बुढियाभी महाराजसे द्वेष धारण करने वालीथी और बुढियाके जन्मभरमें भी उसके सामने कोई भी शुद्ध संयमी चैत्यवासका निषेद्ध करनेवाला चितोड नगरमें पहिले कभी नहीं आयाथा. उससेही शास्त्रानुसार विधि मार्गकी बातोंकी उसको मालूम नहींथी. इसलिये इनमहाराजका आगमानुसार छठे कल्याणकका कथनभी उसबुढीयाको नवीन मालूम पडा. और अपने चैत्यवासकी तथा उससे अपनी आजीविका चलानेकी बातकाखंडन करनेवाला तथा अपनी शिथिलाचारकी भूलोंको प्रकटकरनेवाला,ऐसा अपना विरोधी अपने तावेके मंदिरमें अपने सामने चला आवे सो उस बुढियासे सहन नहीं होसका. इसलिये क्रोधसे मंदिरके दरवाजे आडी पड गई, सो उस निर्विवेकी अज्ञानी क्रोधसे विरोध भाव धारण करने वाली बुढियाके कहनेसे प्रत्यक्ष आगम प्रमाण मौजूद होनेसे छठा कल्याणक नवीन नहीं ठहर सकता. जिसपरभी उस बुढियाके अज्ञानताजनक वचनोंका भावार्थ समझेविनाही उस चैत्यवासीनी बुढियाकी परंपरावाले अभी वर्तमानमेंभी कितनेक आग्रही जन अज्ञानतासे बुढियाकी तरह द्वेष बुद्धिसे, छठे कल्या-

णककी नवीन प्ररूपणा करनेका श्रीजिनवल्लभसूरिजीमहाराजपर झू-
ठा दोष आरोपण करतेहैं. मगर प्रत्यक्षपने आगमप्रमाणोंको उत्थापन
करके मिथ्याभाषणसे त्रेवीशवी यहभी वडीभूल करके विवेकीतत्त्व-
ज्ञ विद्वानोंके सामने अपनी लघुताका कारण करातेहुए कुछभी वि-
चार नहीं किया। यह कितनी वडी लज्जा [शर्म] की बात है, इसको
विशेष तत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयं विचार सकते हैं।

और भी प्रत्यक्ष प्रमाण देखिये-श्रीअंतरिक्ष पार्श्वनाथजीकी या-
त्रा करनेलिये मुंवईसे संघ गयाथा, सो रस्तामें संघके दर्शनकरनेके
लिये साथमें भगवान्‌के प्रतिमाजीथे, उनको वहां संघ ठहरे तवतक
मंदिरमें विराजमान करनेलगे, सो दिगंवरलोगोंने मना किया, उन-
के सामने जवराई करनेकोगये. तव आपसमें मारपीट हुई,शिर-फुटे
कोर्टकचेरीमें गये, दंडहोनेका या कैदमें जानेकामोका आया, हजारो
रुपयें संघके खर्च हुए, तव छूटे. और आपसमें विरोधभाव तथा
शासन हिलना वहुत हुई। इसपर अव विचार करना चाहिये, कि-
उस समय संघवाले तथा संघकेसाथ आनंदसागरजी वगैरह साधु
लोगभी विवेकवालेहोते, तो व्यर्थ हठकरके तकरार खडी न करते,
तो इतना नुकसान उठाना नहींपडता. इसीतरहसे श्रीजिनवल्लभसू-
रिजीमहाराजभी व्यर्थ तकरार न होनेके लिये वुढियाका हठ देखकर
वहांसे पीछे चले आये, सो तो दीर्घ दृष्टिसे विवेकतापूर्वक वहुत अ-
च्छा काम किया। जिसके वदले उनको झूठ ठहरानेका दोष लगाना
यह कीतनी वडी अज्ञानता है।

और न्यातन्यातमें,गांवगांवमें,देशदेशमें,अपने २ पाडोसीपाडोसी-
में,पंच पंचायतमें,राजदरवारमें या गच्छ गच्छमें वा अंधपरारूढीकी
खोटी प्रवृत्तिमें, आपसके विरोध भाव संवंधी " ऐसे पहिले कभी
हुआ नहीं, और अभी यह ऐसा करते हैं। सो कभी होने देगेंभी न-
हीं " इस तरहसे कहनेकी एक प्रकारकी रूढी है, उसमें सत्यासत्य
की परीक्षाकियेविना किसीको झूठा ठहराना सर्वथा निर्विवेकता है.
इसी तरहसेही उन चैत्यवासीनी वुढियानेंभी अपने आग्रहसे वैसा
कहाथा, उसका भावार्थ समझेविना छठे कल्याणकको नवीन ठह-
राना,सोभी आगमोंकेउत्थापनकरनेरूप तथा श्रीजिनवल्लभसूरिजीम-
हाराजपर झूठा दोष आरोपणकरनेरूप व अज्ञानताजनक वडी भारी
भूलकीहै इसवातको विशेष विवेकीतत्त्वज्ञजनस्वंयविचार सकतेहैं।

२४-देवानंदामाताकेगर्भसे ८२दिनवाद त्रिशलामाताकेगर्भमें आने

को च्यवन कल्याणकपना प्रकट तया सिद्धकरनेकेलियेही खासकल्प सूत्रमेंही च्यवनकल्याणकके सर्व कार्य देवानंदा मातासंबंधी वर्णन नहीं किये,किंतु त्रिशलामाता संबंधी वर्णन किये हैं,तथा समवायांग सूत्रवृत्तिमेंभी देवानंदामाताके गर्भसे८२दिन गयेबाद त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको अलग२भव गिनतीमें लियेहैं और कल्पसूत्र तथाउन्हीं की सवी टीकाओंमें तथा श्रीवीरचरित्रादि अनेकशास्त्रोंमेंभीदेवानंदा माताकेगर्भसे८२दिन गयेबाद,आसोजवदी१३को त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आयेहैं, यह अधिकार बहुत विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ कथन किया है। इसलिये देवानंदामाताकी कुक्षिसे जन्म होनेके बदले त्रिशलामाताकी कुक्षिसे जन्म होने संबंधी किसी तरहकीभी असंगतिरूप शंका नहीं हो सकती.जिसपरभी असंगतिरूप शंका निवारण करनेकेलिये गर्भापहारका नक्षत्रयतलानेका कहकर, उनमें अलग २ भव गिनने व १४ महास्वप्न देखने वगैरह बातोंको सर्वथा उडाकर दूसराच्यवनरूप गर्भापहारको कल्याणकपने रहित ठहरातेहैं और बहुततुच्छ समझकर वडीनिंदाकरतेहैं सोयहभी माया वृत्तिसे तीर्थंकरभगवान्‌की आशातनारूप चौवीशवी वडीभूलकीहै.

२५- श्रीऋषभदेवआदि तीर्थंकर महाराज पहिले होगये,तथा श्री सीमंधरस्वामिआदि वर्तमानमें हैं.उन्हीं सबीने श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणक कथन कियेहैं, उन्होंकेही अनुसार गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंनेभी आचारांग, स्थानांगादि आगमोंमेंभी च्यवनादि छ कल्याणक कथन किये हैं, उसीकेही अनुसार तपगच्छके पूर्वज वडगच्छके श्रीविनयचंद्रसूरिजीने कल्पसूत्रके निरूक्तमें, तथा चंद्रगच्छके श्रीपृथ्वीचंद्रसूरिजीने कल्पसूत्रके टिप्पणमें और श्री पार्श्वनाथस्वामिकी पट्टपरंपरामें उपकेशगच्छीय श्रीदेवगुप्तसूरिजीने कल्पसूत्रकी टीकामें इत्यादि अनेक प्राचीन शास्त्रोंमेंभी खुलासा पूर्वक च्यवनादि छ कल्याणक लिखे हैं। उसीकेही अनुसार तपगच्छकेभी पूर्वाचार्य श्रीकुलमंडनसूरिजी वगैरहोंनेभी श्रीकल्पावचूरि आदिमें च्यवनादि छ कल्याणक लिखे हैं। इसलिये श्रीतीर्थंकर-गणधर - पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके प्राचीन समयसेही आगमानुसार आत्मार्थी सर्व गच्छवाले च्यवनादि छ कल्याणक मानने वाले थे, जिसपरभी आगमादि सबी प्राचीनशास्त्रोंके प्रमाणोंको जानबुझकर छुपा करके, या अज्ञानतासे 'श्रीजिनवल्लभसूरिजीने चितोडमें छठे कल्याणककी नवीन प्ररूपणा करी, ऐसा कहकर जो लोग छठे क-

ल्याणकका निषेध करते हैं. वो लोग तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी और खास अपने तपगच्छकेभी पूर्वाचार्योंकी आशातना करनेवाले ठहरते हैं। इसलिये आत्मार्थी भवभिरू विवेकी जनोंको तो छठे कल्याणकका निषेध करना सर्वथा योग्य नहीं है. मगर करनेवालोंने यह पचीशवीभी बडी भूलकी है। इसकोभी विशेष तत्त्वज्ञजन स्वंय विचार सकते हैं।

२६– सभा मंडलमें जाहीर व्याख्यान करतेहुए परोपकारकेलिये, सत्य वात प्रकट करनेमें अपनी स्वभाविक प्रकृतिसे, सच्चके जोशमें आकरकितनेक वक्तालोग चौकी,टेवल,या पाटापर जोरसे अपनाहाथ पिछाडतेहुए अपना मंतव्य प्रकटकरते हैं, तथा कितनेक छातीठोकते हुए,या भुजा आस्फालन करते हुए, अपनी सत्यवात प्रकट करते हैं, और कोई विशेष प्रवल विद्वान् वादी तो हाथमें खूब उंचा झंडा लेकर नगारा पीटवाते हुए विवाद करनेलिये नगरमें उद्घोषणा ककरवातेहैं। मगर यहवात कोई प्रकारसे अनुचित नहींहै,किंतु सत्य वात प्रकाशित करनेमें अपनीहिम्मत वहादुरीकी स्वाभाविक प्रकृति है। इसीतरहसे श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी सवशिथिलाचारी चैत्यवासियोंके सामनेचैत्यवासका निषेध व आगमनानुसार श्रीमहावीरस्वामिके छ कल्याणक मानने वगैरह विषयों संबंधी सत्य वातें प्रकाशित करनेमें अपनी हिम्मत वहादुरीसे भुजास्फालन पूर्वक कहाथा, कि– 'ऊपरकी वातें जो न मानने वाले होंवें वो उन्होंकी शास्त्रार्थकरनेकीताकत हो तो मेरेसामने आकर उनवातोंका शास्त्रार्थसे निर्णय करो' मगर उस समय किसीभी चैत्यवासीकी महाराजकेसाथ शास्त्रार्थकरनेकी हिम्मतनहींहुई। तव महाराजने सवलोगोंके सामने ऊपरमुजव सत्यवातें प्रकाशितकी. इसतरहसे 'गणधरसार्धशतक' वृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति वगैरहका भावार्थ समझेविनाही श्रीजिनवल्लभसूरिजीने 'स्कंधास्फालनपूर्वक' छठा कल्याणक नवीन प्रकट किया' ऐसा कहकर चैत्यवास वगैरह सव वातोंका संवंध छुपाकर छठे कल्याणकका निषेध करते हैं. सो मायावृत्तिसे या अज्ञानतासे व्यर्थही भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेके लिये मिथ्या भाषण करके यह भी छवीशवी वडी भूल की है।

२७– श्रीजिनवल्लभसूरिजीमहाराज चैत्यवासका खंडन करनेवाले थे,इसलिये चैत्यवासियोंने महाराजको शहरमें ठहरनेको जगह नहीं दिया और द्वेषवुद्धिसे चामुंडिका देवीके मंदिरमें ठहरनेका वतला-

या. तब महाराज तो यहांही ठहरकर अनेक प्रकारके कष्ट सहन क
रतेहुएभी भव्यजीवोंके उपकारकेलिये जिनाज्ञानुसार सत्यबातें लो
गोंको बतलाते रहे, और चैत्यमें ठहरने वगैरह चैत्यवासियोंकी क
ल्पित बातोंका खंडन करते रहे। यहबात 'गणधर सार्धशतक' ग्रं
थकी लघुवृत्ति तथा वृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें खुलासा लिखी है।
जिसपरभी ऊपरमुजब चैत्यवासियोंकी भूलोंके तथा जिनाज्ञानुसार
सत्य बातोंके प्रसंगको मायावृत्तिसे छुपाकरके 'अपना नवीन मत
स्थापन करनेकेलिये चामुंडिकादेवीके मंदिरमें ठहरेथे' ऐसा प्रत्यक्ष
मिथ्या लिखकर महाराजकी झूठी निंदाकी और दृष्टिरागी बाल जी-
वोंकोंभी परम उपकारी युग प्रधान आचार्य महाराजके झूठे अवर्ण-
वाद बोलनेवाले बनाये यहभी सतावीशवीं बडी भूल की है।

२८- "यो न शेष सूरीणामज्ञातसिद्धांतरहस्यानाम्" इत्यादि
'गणधर सार्धशतक' ग्रंथकी १२२वी गाथाकी लघुवृत्ति तथा वृह-
द्वृत्तिके यह वाक्य-सिद्धांतके रहस्यको नहीं जाननेवाले द्रव्यलिं-
गी चैत्यवासियों संबंधी है, मगर पहिले होगये हैं उन सबपूर्वाचा-
र्योंसंबंधी नहींहै, जिसपरभी 'पहिले जितने आचार्य होगये हैं उन
सर्वोंको सिद्धांतके रहस्यको नहीं जाननेवाले ठहराकर जिनवल्लभ-
सूरिजीने छठा कल्याणकनवीन प्रकाशितकिया' ऐसा अर्थ कहतेहैं।
सो अपनी विद्वत्ताकी लघुताकारक अपनी अज्ञानता प्रकट करतेहैं।
क्योंकि 'शेष' कहनेसे सिद्धांतके रहस्यको जाननेवाले सब पूर्वा-
चार्योंको छोडकर बाकीके सिद्धांतके रहस्यको नहीं जाननेवाले अ-
ज्ञानियोंका ग्रहण होता है और 'अशेष' कहनेसे सबका ग्रहण हो
सकता है, मगर यहां तो 'अशेष' शब्द नहीं है, किंतु 'शेष' शब्द
है। इसलिये सर्व पूर्वाचार्योंका ग्रहण नहीं हो सकता, जिसपरभी
सबका ग्रहण करते हैं सो 'शेष' शब्दके अर्थकोभी नहीं जानने
वाले, अपनी अज्ञानतासे, शास्त्रोंके खोटे २ अर्थकरके, यहभी अठा-
वीशवी बडी भूलकी हैं। इसबातको विशेष विवेकी तत्त्वज्ञ विद्वान्
लोग स्वयं विचार सकते हैं।

देखिये-खरतर गच्छवालोंने अपने पूर्वाचार्योंके चरित्रोंमें, जै-
से-श्री अभयदेवसूरिजी महाराज संबंधी 'स्थंभन पार्श्वनाथ प्रक-
ट कर्ता' तथा 'नवांगी वृत्ति कर्ता' वगैरह बातें उन महाराजने
जैनसमाजपर किये हुए उपकारोंकी यादगिरीकेलिये प्रसंशारूप लि-
खीहैं। वैसे ही श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज संबंधीभी 'दश सह-

स्त्र नवीनश्रावक तथा चामुंडिका देवी प्रतिबोधक' 'चैत्यवास शिथि-
लाचार निषेधक' 'षट्र कल्याणक प्रकट कर्ता' वगैरह बातेंभी इन
महाराजने जैनसमाजपर किये हुए उपकारोंकी याद गिरिकेलिये
प्रसंशारूप लिखी हैं, सो नवीन कल्पित नहीं, किंतु शास्त्रानुसार
प्राचीनहीहैं. इसलिये प्रसंशारूप लिखी हैं। जिसका मर्मभेद सम-
झेविना, 'गणधर सार्द्ध शतक' ग्रंथकी लघुवृत्ति तथा बृहद्वृ-
त्तिके 'यो न शेषसूरीणां' इत्यादि पाठोंके ऊपर मुजब सत्यअ-
र्थोंको छुपाकरके अपनी मतिकल्पना मुजब खोटे खोटे अर्थकरके
भोले जीवोंको मिथ्यात्वके उन्मार्गमें गेरनेकेलिये धर्मसागरजीकी अंध
परंपरावाले उनकी देखा देखी वर्तमानिक न्यायांभोनिधिजी, शास्त्र
विशारदजी, न्यायविशारदजी, विद्यासागर न्यायरत्नजी, जैनरत्न,
व्याख्यानवाचस्पति, आगमोद्धारक, गीतार्थ, वगैरह विशेषणोंको धा-
रणकेरनवाल आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्त्तक, गणि, पन्यास, प्रसिद्धवक्ता,
विद्वान् मुनिजनआदि सर्व ऐसेही अनर्थ करते हुए चले जातेहैं. और
सामान्यविशेष बातका भेदसमझे विनाही सर्वतीर्थंकर महाराजों सं-
बंधी 'पंचाशक सूत्रवृत्ति' का पांच कल्याणकों संबंधी सामान्यपाठको
आगे करके कल्प, स्थानांग, आचारांगादिमें विशेषता पूर्वक च्यवनादि
छ कल्याणककहेहैं, उन्होंका निषेधकरनेकेलिये आगमोंके अनादिसिद्ध
च्यवनादि कल्याणक अर्थको उडा देतेहैं. तथा जैसे यति-मुनि-साधु-
अणगार शब्द एकार्थके भावार्थवालेहैं, तैसेही च्यवनादि वस्तु-स्थान-
कल्याणक शब्दभी एकार्थके भावार्थवालेहैं, उसकाभेद समझे विना
ही च्यवनादिकोंको वस्तु-स्थान कहकर कल्याणकपने रहित ठहराते
हैं। मगर दीर्घदृष्टिसे विवेकबुद्धिपूर्वक शास्त्रकार महाराजोंके अभि
प्राय तरफ उपयोग लगाकर सत्य तत्त्व बातका कोईभी विचार नहीं
करतेहैं, यह अंधपरंपराकी कितनी वडीभारी लज्जनीय अनुचित प्रवृ
त्तिहै. इसकोविशेष विवेकीतत्त्वज्ञ पाठकगण स्वयंविचार सकतेहैं

औरभी देखिये-विवेक बुद्धिसे खूब विचारकरीये, यदि-नीचगौत्र
कर्मविपाकरूप तथा आश्चर्यरूप कहनेसे कल्याणकपनेका निषेध हो
सकता होवे, तवतो आषाढशुदी ६ को देवानंदामाताके गर्भमें भग
वानआये, सोही नीचगौत्र कर्मविपाकरूप होनेसे कल्पसूत्रादि शास्त्रों
में उनको आश्चर्यकहाहै, इसलिये तुम्हारे मंतव्य मुजबतो उनकोभी क
ल्याणकपनेका निषेध हो जावेगा. और विशेष अधिक आश्चर्यकारक
दूसरे च्यवनकी तरह प्रथमच्यवनभी कल्याणकपने रहित होनेसे श

पचाकोंके ४कल्याणकही रहजायँगे.और नीचगोत्रके विपाकरूप तथा आश्चर्यरूप कहते हुएभी प्रथम च्यवनको कल्याणकपना मानोंगे,तो नीचगोत्र विपाकरूप और आश्चर्यरूप कहकर दूसरे च्यवनरूप गर्भा पहारको कल्याणकपने रहित ठहराया सो प्रत्यक्षमिथ्या व्यर्थही झूठा आग्रह सिद्ध होवेगा. इसलिये ऐसे झूठे आग्रहसे भोले जीवोंको संशयरूप मिथ्यात्वके भ्रममें गेरकर भगवानकी आशातनाका हेतुभूत अनर्थ करना सर्वथा योग्य नहीं है. किंतु प्रथम च्यवनमें कल्याणकपना माननेकी तरहही दूसरे च्यवनमेंभी कल्याणकपना आगमादि शास्त्रप्रमाण तथा युक्तिसम्मत होनेसे आत्मार्थियोंको अवश्यही मान्यकरना उचितहै, इसको विशेष तत्त्वज्ञजन स्वयंविचारसकतेहैं।

औरभी प्रत्यक्ष शास्त्रप्रमाण देखिये-कल्पसूत्रकी सर्व टीकायें वगैरह बहुतशास्त्रोंमें श्रीजंबूस्वामिके निर्वाणगयेबाद दश(१०) वस्तु विच्छेद होनेका लिखाहै. उसमें-केवलज्ञान,केवलदर्शन, यथाख्यातचारित्र,मुक्तिगमन वगैरह बातोंकोभी वस्तु कहाहै. और 'गुणस्थानक्रमारोह'वगैरह शास्त्रोंमेंभी केवलज्ञान उत्पन्नहोनेको,तथा मुक्तिगमनको १३-१४ वा गुणस्थान कहाहै. इसी तरहसे इन शास्त्रप्रमाण मुजबभी तीर्थंकर भगवानके केवलज्ञान उत्पन्न होनेको तथा मुक्तिगमन निर्वाणको वस्तु कहो या स्थान कहो और उन्होंकोंही केवलज्ञान तथा निर्वाण कल्याणकभी मानो,तो भी इस बातमें कोई तरहका विशेषभाव नहींहै, इसलिये च्यवनादिकोंको वस्तु कहो, या स्थान कहो, या कल्याणककहो, सबका तात्पर्यार्थसे भावार्थ एकहीहै. जिस परभी वस्तु-स्थान कहकर कल्याणकपनेका निषेध करनेवाले अपनी अज्ञानतासे शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करके भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरते हैं, और अपनी आत्माकोभी उत्सूत्र प्ररूपणाके दोषसे मलीन करते हैं. इसबातकोभी विवेकी तत्त्वज्ञजन स्वयं विचार सकते हैं।

और तीर्थंकरभगवानके च्यवनादिकोंको कल्याणकपना आगमानुसार अनादिसिद्धहै, उन्हीं च्यवनादिकोंको शास्त्रोंमें एक जगह स्थान कहे,दूसरी जगह वस्तु कहे,तीसरी जगह कल्याणक कहे. इससेभी वस्तु-स्थान-कल्याणक यह तीनों शब्द पर्यायवाचक एकार्थवाले सिद्ध होतेहैं जिसपरभी वस्तु-स्थान शब्द देखकर अनादिसिद्ध च्यवनादिमें कल्याणक अर्थको उडादेना सो अपने झूठे पक्षपातके आग्रहसे शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करनेरूप यह कितनी बडी भूल है इसको

आत्मार्थी विवेकी तत्वज्ञ पाठक जन स्वयं विचार सकते हैं।

छ कल्याणक संबंधी ऊपरके संक्षिप्त लेखसेभी जो आत्मार्थी स
ग्रहण करने वाले निकट भव्य होंगे, वह तो थोडेसेमेंही सार
मझ लेवेंगे, कि-गर्भापहारको अलग भव गिननेसे तथा त्रिशलामात
सर्व तीर्थंकर माताओंकी तरह आकाशसे उतरते हुए १४ महास
प्रदेखने वगैरह कार्योंसे दूसराच्यवनरूप कल्याणकपनेकी उत्तमता
छुपाकरके व्यर्थही छठे कल्याणककी निंदाकरना सर्वथा योग्यनहं
और शास्त्रोंकेअर्थ बदलकरके उत्सूत्रप्ररूपणासे व कुयुक्तियोंसे भो
जीवोंकोंभी उत्तम कार्यके हेतुभूत गर्भापहारकी निंदा करवाने व
बनवाकर तीर्थंकर भगवानकी आशातनासे भवहार जानेका कार
कराना कदापि योग्य नहींहै। ऊपरकी इन सब बातोंका विशेष
र्णय शास्त्रोंके संपूर्ण पाठोंके प्रमाणोंसहित इस ग्रंथके पृष्ठ ४५२
८२६ तक छप चुका है, सो तीसरे भागमें प्रकट होगा. उसके वां
नेसे सर्व शंकाओंका खुलासा समाधान अच्छी तरहसे होजावेग

और शासन नायक श्रीमहावीरस्वामि आदि सर्व तीर्थंकर
हाराजोंके चरित्र भव्यजीवोंकों कर्मोंकी निर्जरा करानेवाले कल
णकारक मंगलरूपही हैं, इसलिये पर्युषणाके मंगलिक पर्व दिनं
आत्मकल्याणके लिये वांचनेमेंआतेहैं. और श्रीमहावीरस्वामिके ग
पहाररूप दूसरा च्यवनका कार्य तो त्रिशलामाता, सिद्धार्थपि
व इंद्रमहाराज वगैरह सर्व जीवोंकों कल्याण मंगलरूप हर्षका हे
वालाहुआहै। तथा उनका आराधन करनेवाले अल्पसंसारी आत
र्थी भव्यजीवोंकोंभी अभिमानरहित कर्मोंकी विचित्रताकी भावन
कर्मोंकी निर्जरा करानेवाला कल्याणकारक मंगलरूपहोता है। म
गर्भापहारके नाम सुननेमात्रसेही चमकउठनेवाले और उनको नं
गौत्रविपाकरूप, आश्चर्यरूप अतीवनिंदनीककहकरनिंदाकरनेवालों
तीर्थंकरभगवानके अवर्णवाद बोलनेसेसंसारपरिभ्रमणके बहुतवि
प दुःख भोगनेवाकी होंगे, इसलिये उन्होंकों वो कार्य अमंगलरूप
कल्याणरूप मालूमपडता होगा। इससे उनकार्यसे द्वेषरखकर व
वर्ष पर्युषणाके मांगलिकरूप कल्याणकारक पर्वादिनोंके व्याख्य
उनकी निंदा करते हुए अकल्याणरूप अतिनिंदनीक ठहराकार
र्थंकर भगवानकी आशातना करनेसे अपनेको और दूसरे भव्य
वोंकेंभी अकल्याणरूप दुर्लभबोधिका हेतुकरतेहैं, ऐसी २ अनर्थ
अनुचित बातोंसेही 'सुबोधिका' नाम रखखाहै। मगर वास्तवि

तो 'दुर्लभबोधिका' नाम सिद्ध होताहै । इसबातको विशेष आत्मा॰ र्थी तत्त्वज्ञ पाठकगण स्वंय विचार लेवेंगे।

एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडती हैं ॥

देखो-एक अधिकमहीना व छ कल्याणक उत्थापनकरनेसे उसकी पुष्टिकेलिये, अनेक शास्त्रोंके अर्थबदलनेपडे। अनेक जगह शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध आग्रह करना पडा। कितनीही जगह मिथ्या बातें भी लिखनी पडी। कितनीक जगह शास्त्रोंके आगे पीछे के संबंधवाले पाठोंको छोडकर विनासंबंधके अधूरे २ पाठभी भोले जीवोंको बतलाकर अपनापक्षकी सत्यता बतलानेका परिश्रम करना पड़ा और कितनीही जगहतो शास्त्रोंकी, पूर्वाचार्योंकी व भगवानकी॰ भी आशातनाके हेतुभूत अनुचित शब्दभी लिखने पडे. उसकाअनुभवतो सुबोधिक-किरणावलीआदिककी२८भूलोंवाले ऊपरकेलेखसे तथा इसभूमिकाके सबलेखपरसे और इस ग्रंथके अवलोकन करनेसे पाठकगणको अच्छी तरहसे होसकेगा, इसलिये 'एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडतीहैं' यह लोकरूढीकी कहावतकी बात ऊपरके विषयमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है।

इसप्रकार पर्युषणासंबंधी, व छ कल्याणक संबंधी अपना झूटा पक्ष स्थापन करनेकेलिये और भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेकेलिये, शास्त्र विरुद्ध होकर विनयविजयजीने सुबोधिकामें, तथा जयविजयजीने दीपिकामें, और धर्मसागरजीने किरणावलीमें, ऊपर मुजब अनेक भूलें की हैं, उन्हीं भूलोंको तपगच्छके कितनेक आग्रही जन पर्युषणाके व्याख्यानमें वर्षोवर्ष वांचते हैं. उससे जिनाज्ञाकी विराधनाहोकर भवबढनेका व दुर्लभबोधिका हेतुभूत अनर्थ होताहै. इसलिये अल्पसंसारी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारसत्यबातोंकी प्राप्ति होनेरूप उपकारकेलिये उपरकी सब बातोंका खुलासा निर्णय इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आया है। उसको देखकर यदि शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणासे संसार परिभ्रमणका भय लगता हो तो उन भूलोंको सुधारो, व्याख्यानमें वांचनेका बंध करो, और सत्यबातोंको ग्रहण करो या बडोदा वगैरह किसीभी राज्य दरबारमें इन भूलोंसंबंधी श्रीगौतमस्वामिआदि गणधरमहाराज व सिद्धसेनदीवाकर, हरिभद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी तरह सत्य ग्रहण करनेकी प्रति-

ज्ञापूर्वक शास्त्रार्थ करनेको तैयारहो, हमने तो इनका सत्य निर्णय अ
च्छी तरहसे करलियाहै,तोभी इन शास्त्रार्थमें सत्यनिर्णय ठहरेगा से
मंजूर है, इसलिये जो महाशय ऊपरकी भूलोंसंबंधी शास्त्रार्थ करन
चाहते होवें, वो अपनी सहीसे अपना प्रतिज्ञा पत्र जाहिर रूपसे ह
मको भेजें.समय, स्थान, नियम, साक्षि वगैरहकी व्यवस्था तो सब
के अनुकूल उसी राज्यके नियममुजब होसकेगी, विशेष क्या लिखें

पर्युषणा संबंधी मंतव्यके कथनका संक्षिप्त सार.

१- जैनटिप्पणाके अभावसे लौकिक टिप्पणामुजब मास-पक्ष
थि-वर्ष वगैरह माननेका व्यवहार करना और पर्युषणादि धा
कार्योंका व्यवहार जैन सिद्धांतोके अनुसार करना. तथा जैनसि
तोंके अनुसार या लौकिक टिप्पणाके अनुसारभी अधिक मही
३० दिनोंको दान, पुण्य, परोपकार, जप, तप, धर्म ध्यानादि क
व ब्रह्मचर्य पालनेमें या देशविरती-सर्वविरती संयम पालनेमें,
कर्मबंधनकी स्थितिके प्रमाणमें और कर्मोंकी निर्जरा करने व
कार्योंमें गिनतीमें लियेजातेहैं, तैसेही ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषण
का आराधन करनेमेंभी उसके३० दिन गिनतीमें लेकर खरतरग
तपगच्छादिककी कल्पसूत्रकी टीकाओंके " पंचाशतैव दिनैः
पणा संगतेति वृद्धाः" इसवाक्यमुजब अभी दूसरेश्रावणमें या
भाद्रपदमें५०दिने पर्युषणापर्वकरना, यही शास्त्रानुसार जिनाज्ञा

२- मास प्रतिबद्ध कार्य तो एक महीनेकी जगह दूसरे महीने
करनेमें आवे, तो भी कोई शास्त्रमें उनका दोष नहीं बतलाया.
पर्युषणापर्व करनेमें तो ५०दिनकी जगह ५१दिनभी कभी नहीं
करते, इसलिये विनामुहूर्तवाले ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्वके
मास प्रतिबद्ध या मुहूर्त्त प्रतिबद्ध होली, ओली, दीवाली, दश
अक्षयतृतीया,पोष-श्रावणादिक महिनोंके कल्याणकादितप,या
पचित, दीक्षा, प्रतिष्ठा, विवाह सादी वगैरह कोईभी कार्योंका स
नहीं है। जिसपरभी दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व आराधन करे
चर्चामें मासप्रतिबद्ध या मुहूर्त प्रतिबद्ध कार्योंकी बात बीचमें
हैं. वो लोग पर्युषणापर्वकरने संबंधी शास्त्रकार महाराजोंका
शय नहीं जानने वाले होनेसे, शास्त्रोंकी आज्ञा विरुद्ध होकर व्य
कुयुक्तियोंसे विषयांतर करके भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरते हैं

तो 'दुर्लभबोधिका' नाम सिद्ध होताहै । इसबातको विशेष आत्मा-र्थी तत्वज्ञ पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे।

एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडती हैं ॥

देखो-एक अधिकमहीना व छ कल्याणक उत्थापनकरनेसे उसकी पुष्टिकेलिये, अनेक शास्त्रोंके अर्थबदलनेपडे। अनेक जगह शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध आग्रह करना पडा। कितनीही जगह मिथ्या बातें भी लिखनी पडी। कितनीक जगह शास्त्रोंके आगे पीछे के संबंधवाले पाठोंको छोडकर विनासंबंधके अधूरे २ पाठभी भोले जीवोंको बतलाकर अपनापक्षकी सत्यता बतलानेका परिश्रम करना पडा और कितनीही जगहतो शास्त्रोंकी, पूर्वाचार्योंकी व भगवानकी भी आशातनाके हेतुभूत अनुचित शब्दभी लिखने पडे. उसकाअनुभवतो सुबोधिक-किरणावलीआदिककी२८भूलोंवाले ऊपरकेलेखसे तथा इसभूमिकाके सबलेखपरसे और इस ग्रंथके अवलोकन करनेसे पाठकगणको अच्छी तरहसे होसकेगा, इसलिये 'एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडतीहैं' यह लोकरूढीकी कहावतकी बात ऊपरके विषयमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है।

इसप्रकार पर्युषणासंबंधी, व छ कल्याणक संबंधी अपना झूटा पक्ष स्थापन करनेकेलिये और भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेकेलिये, शास्त्र विरुद्ध होकर विनयविजयजीने सुबोधिकामें, तथा जयविजयजीने दीपिकामें, और धर्मसागरजीने किरणावलीमें, ऊपर मुजब अनेक भूलें की हैं, उन्हीं भूलोंको तपगच्छके कितनेक आग्रही जन पर्युषणाके व्याख्यानमें वर्षोवर्ष वांचते हैं. उससे जिनाज्ञाकी विराधनाहोकर भववढनेका व दुर्लभबोधिका हेतुभूत अनर्थ होताहै. इसलिये अल्पसंसारी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारसत्यबातोंकी प्राप्ति होनेरूप उपकारकेलिये उपरकी सब बातोंका खुलासा निर्णय इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आया है। उसको देखकर यदि शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणासे संसार परिभ्रमणका भय लगता हो तो उन भूलोंको सुधारो, व्याख्यानमें वांचनेका बंध करो, और सत्यबातोंको ग्रहण करो या बडोदा वगैरह किसीभी राज्य दरबारमें इन भूलोंसंबंधी श्रीगौतमस्वामिआदि गणधरमहाराज व सिद्धसेनदीवाकर, हरिभद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी तरह सत्य ग्रहण करनेकी प्रति-

ज्ञापूर्वक शास्त्रार्थ करनेको तैयारहो, हमने तो इनका सत्य निर्णय अच्छी तरहसे करलियाहै,तोभी इन शास्त्रार्थमें सत्यनिर्णय ठहरेगा सो मंजूर है, इसलिये जो महाशय ऊपरकी भूलोंसंबंधी शास्त्रार्थ करना चाहते होवें, वो अपनी सहीसे अपना प्रतिज्ञा पत्र जाहिर रूपसे हमको भेजें.समय, स्थान, नियम, साक्षि वगैरह की व्यवस्था तो सबके अनुकूल उसी राज्यके नियममुजब होसकेगी, विशेष क्या लिखें।

पर्युषणा संबंधी मंतव्यके कथनका संक्षिप्त सार.

१– जैनटिप्पणाके अभावसे लौकिक टिप्पणामुजब मास-पक्ष-तिथि–वर्ष वगैरह माननेका व्यवहार करना और पर्युषणादि धार्मिक कार्योंका व्यवहार जैन सिद्धांतोके अनुसार करना. तथा जैनसिद्धांतोंके अनुसार या लौकिक टिप्पणाके अनुसारभी अधिक महीनेके ३० दिनोंको दान, पुण्य, परोपकार, जप, तप, धर्म ध्यानादि करनेमें व ब्रह्मचर्य पालनेमें या देशविरती–सर्वविरती संयम पालनेमें, तथा कर्मबंधनकी स्थितिके प्रमाणमें और कर्मोंकी निर्जरा करने वगैरह कार्योंमें गिनतीमें लियेजातेहैं, तैसेही ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व का आराधन करनेमेंभी उसके३० दिन गिनतीमें लेकर खरतरगच्छ, तपगच्छादिककी कल्पसूत्रकी टीकाओंके " पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः" इसवाक्यमुजब अभी दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें५०दिने पर्युषणापर्वकरना, यही शास्त्रानुसार जिनाज्ञा है।

२– मास प्रतिबद्ध कार्य तो एक महीनेकी जगह दूसरे महीनेमेंभी करनेमें आवे, तो भी कोई शास्त्रमें उनका दोष नहीं बतलाया. मगर पर्युषणापर्व करनेमें तो ५०दिनकी जगह ५१दिनभी कभी नहींहोसकते, इसलिये बिनामुहूर्त्तवाले ५० दिन प्रतिवद्ध पर्युषणापर्वके साथ मास प्रतिबद्ध या मुहूर्त्त प्रतिबद्ध होली, ओली, दीवाली, दशहरा, अक्षयतृतीया,पौष–श्रावणादिक महिनोंके कल्याणकादितप,या यज्ञोपवित, दीक्षा, प्रतिष्ठा,विवाह,सादी वगैरह कोईभी कार्योंका संबंध नहीं है। जिसपरभी दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व आराधन करनेकी चर्चामें मासप्रतिबद्ध या मुहूर्त प्रतिबद्ध कार्योंकी बात बीचमें लाते हैं. वो लोग पर्युषणापर्वकरने संबंधी शास्त्रकार महाराजोंका आशय नहीं जानने वाले होनेसे, शास्त्रोंकी आज्ञा विरुद्ध होकर व्यर्थही कुयुक्तियोंसे विषयांतर करके भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरते हैं।

तो 'दुर्लभबोधिका' नाम सिद्ध होताहै । इसबातको विशेष आत्मा-र्थी तरहसे पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे ।

एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडती हैं ॥

देखो एक अधिकमहीना व छ कल्याणक उत्थापनकरनेसे उसकी पुष्टिकेलिये, अनेक शास्त्रोंके अर्थबदलनेपडे। अनेक जगह शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध आग्रह करना पडा। कितनीही जगह मिथ्या बातें भी लिखनी पडी। कितनीक जगह शास्त्रोंके आगे पीछे के संबंधवाले पाठोंको छोडकर विनासंबंधके अधूरे २ पाठभी भोले जीवोंको बतलाकर अपनापक्षकी सत्यता बतलानेका परिश्रम करना पडा और कितनीही जगहतो शास्त्रोंकी, पूर्वाचार्योंकी व भगवानकी भी आशातनाके हेतुभूत अनुचित शब्दभी लिखने पडे. उसकाअनुभवतो सुबोधिका-किरणावलीआदिककी२८भूलोंवाले ऊपरकेलेखसे तथा इसभूमिकाके सबलेखपरसे और इस ग्रंथके अवलोकन करनेसे पाठकगणको अच्छी तरहसे होसकेगा, इसलिये ' एक बात उत्थापन करनेसे अनेक बातें उत्थापन करनी पडतीहैं ' यह लोकरूढीकी कहावतकी बात ऊपरके विषयमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है ।

इसप्रकार पर्युषणासंबंधी, व छ कल्याणक संबंधी अपना झूटा पक्ष स्थापन करनेकेलिये और भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरनेकेलिये, शास्त्र विरुद्ध होकर विनयविजयजीने सुबोधिकामें, तथा जयविजयजीने दीपिकामें, और धर्मसागरजीने किरणावलीमें, ऊपर मुजब अनेक भूलें की हैं, उन्हीं भूलोंको तपगच्छके कितनेक आग्रही जन पर्युषणाके व्याख्यानमें वर्षोवर्ष वांचते हैं. उससे जिनाज्ञाकी विराधनाहोकर भवबढनेका व दुर्लभबोधिका हेतुभूत अनर्थ होताहै. इसलिये अल्पसंसारी भव्यजीवोंको जिनाज्ञानुसारसत्यबातोंकी प्राप्ति होनेरूप उपकारकेलिये उपरकी सब बातोंका खुलासा निर्णय इसग्रंथमें अच्छीतरहसे लिखनेमें आया है। उसको देखकर यदि शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणासे संसार परिभ्रमणका भय लगता हो तो उन भूलोंको सुधारो, व्याख्यानमें वांचनेका बंध करो, और सत्यबातोंको ग्रहण करो या वडोदा वगैरह किसीभी राज्य दरबारमें इन भूलोंसंबंधी श्रीगौतमस्वामिआदि गणधरमहाराज व सिद्धसेनदीवाकर, हरिभद्रसूरिजी वगैरह महाराजोंकी तरह सत्य ग्रहण करनेकी प्रति-

ज्ञापूर्वक शास्त्रार्थ करनेको तैयारहो, हमने तो इनका सत्य निर्णय अच्छी तरहसे करालियाहै,तोभी इन शास्त्रार्थमें सत्यनिर्णय ठहरेगा सो मंजूर है, इसलिये जो महाशय ऊपरकी भूलोंसंबंधी शास्त्रार्थ करना चाहते होवें, वो अपनी सहीसे अपना प्रतिज्ञा पत्र जाहिर रूपसे हमको भेजें.समय, स्थान, नियम, साक्षि वगैरहकी व्यवस्था तो सबके अनुकूल उसी राज्यके नियममुजब होसकेगी, विशेष क्या लिखें।

पर्युषणा संबंधी मंतव्यके कथनका संक्षिप्त सार.

१- जैनटिप्पणाके अभावसे लौकिक टिप्पणामुजब मास-पक्ष-तिथि-वर्ष वगैरह माननेका व्यवहार करना और पर्युषणादि धार्मिक कार्योंका व्यवहार जैन सिद्धांतोके अनुसार करना. तथा जैनसिद्धांतोंके अनुसार या लौकिक टिप्पणाके अनुसारभी अधिक महीनेके ३० दिनोंको दान, पुण्य, परोपकार, जप, तप, धर्म ध्यानादि करनेमें व ब्रह्मचर्य पालनेमें या देशविरती-सर्वविरती संयम पालनेमें, तथा कर्मबंधनकी स्थितिके प्रमाणमें और कर्मोंकी निर्जरा करने वगैरह कार्योंमें गिनतीमें लियेजातेहैं, तैसेही ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व का आराधन करनेमेंभी उसके३० दिन गिनतीमें लेकर खरतरगच्छ, तपगच्छादिककी कल्पसूत्रकी टीकाओंके "पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः" इसवाक्यमुजब अभी दूसरेश्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें५०दिने पर्युषणापर्वकरना, यही शास्त्रानुसार जिनाज्ञा है।

२- मास प्रतिबद्ध कार्य तो एक महीनेकी जगह दूसरे महीनेमेंभी करनेमें आवे, तो भी कोई शास्त्रमें उनका दोष नहीं बतलाया. मगर पर्युषणापर्व करनेमें तो ५०दिनकी जगह ५१दिनभी कभी नहींहोसकते, इसलिये बिनामुहूर्त्तवाले ५० दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्वके साथ मास प्रतिबद्ध या मुहूर्त्त प्रतिबद्ध होली, ओली, दीवाली, दशहरा, अक्षयतृतीया,पौष-श्रावणादिक महिनोंके कल्याणकादितप,या यज्ञोपवित, दीक्षा, प्रतिष्ठा, विवाह सादी वगैरह कोईभी कार्योंका संबंध नहीं है। जिसपरभी दिन प्रतिबद्ध पर्युषणापर्व आराधन करनेकी चर्चामें मासप्रतिबद्ध या मुहूर्त प्रतिबद्ध कार्योंकी बात बीचमें लाते हैं. वो लोग पर्युषणापर्वकरने संबंधी शास्त्रकार महाराजोंका आशय नहीं जानने वाले होनेसे, शास्त्रोंकी आज्ञा विरुद्ध होकर व्यर्थही कुयुक्तियोंसे विषयांतर करके भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरते हैं।

३- अधिक महीनेके अभावसबंधी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेके व उसकेपीछे ७० दिन रहनेके और १२ मासी क्षामणे वगैरहके सामान्यपाठोंको अधिकमहीना होवे तबभी आगेलातेहैं। और अधिकमहीनेसबंधी " पचाशतैव दिने पर्युषणा सगतेति वृद्धा " कल्पसूत्रकी सर्व टीकाओंके इस विशेषपाठको, तथा स्थानांगसूत्रवृत्ति, निशीथचूर्णि,बृहत्कल्पचूर्णि वृत्ति, पर्युषणाकल्प चूर्णि वगैरह शास्त्रोंके १०० दिन रहने सबधीआदि विशेषताके पाठोंको सत्यबातोंको छुपाकरके छोड देते हैं, सो यह सर्वथा अनुचित है।

४- धार्मिक कार्य करनेमें १२ महीनोंके सर्व दिन, या अधिक महीना होवे तब १३ महीनोंकेभी सर्व दिन, या क्षय महीनेकेभी सर्व दिन बरोबर समानही हैं, उनमें कर्मबधनके ससारिक कार्य और कर्म निर्जराके धार्मिक कार्य हमेशा बराबर होते रहते हैं, इसलिये तत्त्वदृष्टिसे तो उनमेंसे एक समय मात्रभी गिनतीमें नहीं छुट सकता जिसपरभी कार्तिकादि क्षयमहीनेके २० दिनोंमें दीवाली, ज्ञानपचमी, चौमासी वगैरह धार्मिक कार्य करते हुएभी अधिक महीनेके ३० दिनोंको तुच्छ समझकर बडी निंदा करते हैं, या कालचूलाके नामसे गिनतीमें छोड देनेका कहते हैं, सो सर्वथा जिनाज्ञाका उत्थापन करते हैं।

५— जैन ज्योतिषविषयसबधी प्ररूपणा आगमानुसार करनी और श्रद्धाभी उसीमुजबरखनी,परतु अभी पडताकालमें जैनटिप्पणा बध होनेसे उस मुख्य व्यवहार नहींकरसकते और लौकिकटिप्पणा मुजब व्यवहार करनेमें आता है। इसलिये अभी जैन शास्त्रमुजब पौष आषाढ अधिक होनेसबधी पाठ बतलाकर लौकिक टिप्पणास बधीश्रेत्रश्रावणादि अधिकमहीनें मान्यकरनेका निषेध नहीं करसकते। और जैसे जिनकल्पी व्यवहार अभी विच्छेद है तोभी उन्हकी प्ररूपणाकरनेमें आतीहै, तैसेही पौष-आषाढ बढनेकी प्ररूपणा तो शास्त्रानुसार करसकते हैं, मगर मास पक्ष तिथि वगैरहका वर्ताव तो लौकिक टिप्पणा मुजबही करना योग्य है।

इन सर्व बातोंका विशेष निर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इस ग्रथमें अच्छी तरहसे हो चुका है। यहा तो उसका सक्षिप्तसार मात्रही बतलाया है मगर विशेष निर्णय करनेकी अभिलाषावाले पाठकगण इसग्रथको सपूरणतया वांचेंगेतो सबखुलासा हो जावेगा

छ कल्याणकों संबंधी मंतव्यके कथनका संक्षिप्त सार.

१- कल्पसूत्र तथा आचारांग सूत्रादि आगमानुसार विशेपतासे श्रीमहावीरस्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकमान्य करने,और अतित अनागत-वर्तमानकालके सर्वतीर्थंकर महाराजोंकी अपेक्षासंबंधी स मान्यतासे पंचाशकादि शास्त्रानुसार पांचकल्याणकभी मान्य करने इनमें कोई दोप नहींहै. मगर कितनेक लोग शास्त्रकार महाराजों अभिप्रायको नहीं जाननेसे पंचाशकके पांच कल्याणकों संबंधी स मान्य पाठकों भोले जीवोंको बतलाकर; विशेपतासे कल्प-आचार गादि आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करते हैं, सो अज्ञानता शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते हैं।

२- श्रीऋषभदेवस्वामिके राज्याभिषेकके कार्यमें तो च्यवन-जन्म दीक्षादि कोईभी कल्याणकके कुछभी लक्षण नहीं हैं, तथा उन मास,पक्ष,तिथि वगैरहकाभीकहीं उल्लेखनहींहै.और श्रीमहावीरस्व मिके दूसरे च्यवनरूप गर्भापहारके कार्यमें तो सर्व तीर्थंकर महार जोंकी माताओंकी तरह त्रिशला मातानेभी १४ महास्वप्न आका से उतरते हुए देखेहैं, तथा उसी दिन इन्द्रमहाराजका त्रिशलामात केपास आगमनहुआहै, तीर्थंकर पुत्र होनेका स्वप्नफल कहाहै,व नके मास-पक्ष-तिथि वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य प्रत्यक्ष ने शास्त्रोंमें कथन किये हुए हैं. और समवायांगसूत्रवृत्ति, लोकप्रक शादिशास्त्रोंमें उनको अलग भव गिनतीमेंलियाहै,इसलिये गर्भापह रूप दूसरे च्यवनके कार्यमें तो च्यवन कल्याणकपनेके सर्व लक्ष मौजूद हैं,जिसपरभी राज्याभिषेकके समान गर्भापहारकोभी ठहर हैं, और उनको कल्याणकपने रहित कहतेहैं सो सर्वथा अनुचित

३- श्रीमल्लीनाथस्वामिके स्त्रीत्वपनेमें तीर्थंकरपनेके जन्म-दीक्षा कार्य अच्छेरारूप हुए हैं, तो भी उन्होंकोही कल्याणकपना मानने आताहै. तथा श्रीमहावीरस्वामि भगवानभी ब्राह्मण कुलमें देवानं माताके गर्भमें उत्पन्न हुए सो अच्छेरा रूपहै, तो भी उनको प्रथ च्यवनरूप कल्याणकपना मानते हैं । तैसेही गर्भापहाररूप आश्च को भी दूसरा च्यवनरूप कल्याणकपना माननेमें आता है, इसलि आश्चर्य कहनेसे कल्याणकपना निषेध नहीं हो सकता. जिसपर आश्चर्य कहकर कल्याणकपनेका जो निषेध करतेहैं, वो लोग अप अज्ञानतासे बडी भूल करते हैं।

४- देवानन्दामाताकी कुक्षिमें भगवान आये सो ही नीचगौत्र कर्म विपाकरूपहै, उनका क्षय हुए बाद उचगौत्रके कर्मका उदय होनेसेही गर्भापहार करनापडाहै,तो भी शास्त्रकार महाराजोंने तो देवानन्दाकी कुक्षिमे आनेको तथा त्रिशलामाताकी कुक्षिमें आनेको इन दोनों वा र्योंको तीर्थंकर भगवानके चरित्रमें उत्तमतापूर्वक कल्याणकारक माने हैं। जिसपरभी त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको नीचगौत्र कर्म विपाकरूप अतिनिंदनीक कहकर जो लोग वर्षोंवर्ष पर्युषणाके माग लिक पर्व दिनोंके व्याख्यानमें प्रत्यक्ष झूठ बोलकर भगवानकी निंदा करतेहैं,सो तीर्थंकर भगवान्के अवर्णवाद बोलनेवाले होनेसे आशा तनाके दोषी ठहरते हैं।

५- जैसे श्रीअभयदेवसूरिजीमहाराजने श्रीस्थंभनपार्श्वनाथजीकी प्रतिमाको प्रकट किया, उनका आशय समझेविना कितनेक ढूंढिये व तेरहापंथी लोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कहे तो उन्होंकी अज्ञानता समझी जाये मगर तत्त्वदृष्टिवाले विवेकीलोग जिनप्रति माकी नवीन प्ररूपणा कभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीनही कहेंगे। तैसेही श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी षट् कल्याणकको प्रकट किया उनका आशय समझेविना कितनेक लोग उनकी नवी न प्ररूपणा कहते हैं, वो उन्होंकी अज्ञानता समझनी चाहिये मगर तत्त्व दृष्टिवाले विवेकीलोग उनकी नवीन प्ररूपणाकर्म नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीन ही कहेंगे

६- भगवानके शरीर इन्द्रीय पर्याप्तिके अवयव [पुद्गलपरमाणु] देवानन्दामाताके शरीरसे बने हुए थे और उसी शरीरसे त्रिशला- माताके गर्भमें भगवान् आगयेथे, यहबात आश्चर्यकारक होनेसे श रीर-इन्द्रीय पर्याप्ति बदले विनाभी शास्त्रकार महाराजोंने उनको अलग भव गिना है। उनमें प्रत्यक्षपने च्यवन कल्याणकपना दिख लानेके लियेही खास कल्पसूत्रके मूलपाठमें त्रिशलामाताने १४ स्व प्न देखेहैं उन सबधी"ए ए चउदस सुमिणे, सव्वा पासेई तित्थयर माया। ज रयणि वक्कमई कुच्छिसि महायसो अरिहा ४७॥' यह पाठ लिखा है, और इसपाठकी सुबोधिका टीकामें इस प्रकार व्या ख्या किया है "अत्र प्रसगेन एतेषा स्वप्नाना गर्भकाले सकलजिन राजजननीविलोकनीयत्व दर्शयन्नाह एतान् चतुर्दश स्वप्नान्,सर्वा पश्यति तीर्थंकर मातर। यस्या रजन्या उत्पद्यत, कुक्षौ महायशस अर्हन्त ॥४७॥ इसी तरहसेही सर्व टीकाओंमेभी ऐसेही भावार्थका

पाठजानलेना. देखो-जिसरात्रिको तीर्थंकरभगवान माताकेगर्भमेंआके र उत्पन्नहोवें,उसरात्रिको उन्होंकीमाता गर्भकाले अर्थात् च्यवन कल्याणक समय सर्व तीर्थंकरोंकी मातायें यह१४महास्वप्न देखती हैं। ऐसेही श्री महावीरस्वामिभी त्रिशलामाताके गर्भमें आये,तब त्रिशलामातानेंभी १४महास्वप्न देखें हैं। इस ऊपरके पाठपर अच्छी तरहसे तत्वदृष्टिसे विचारकिया जावे. तो–अनादिकालकी मर्यादा मुजब सर्व तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणककी तरहही आश्विन वदी १३ की रात्रिको त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आये; उनको खास सूत्र कारने और सुबोधिका, दीपिका, किरणावली वगैरह सर्व टीकाकारोंनेभी च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै। और तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणकमें इंद्रमहाराजाका आसन चलायमानहोनेसे विधिपूर्वक नमस्काररूप'नमुत्थुणं'करना। तीनजगतमें उद्योत होना, तथा सर्व संसारी प्राणी मात्रको थोडीदेर सुखकी प्राप्ति होना, वगैरह कार्यहोतेहैं। यह अनादि मर्यादा आगमानुसार प्रसिद्धहीहै। यही सर्व कार्य आसोज वदी १३को भगवान त्रिशलामाताके गर्भमें आये तब उसीरोज होनेका ऊपरके कल्पसूत्रके मूलपाठसे तथा उन्हींकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके प्रमाणोंसेभी प्रत्यक्ष सिद्धहोताहै,क्योंकि देखो– आषाढ शुद्द ६ को भगवान देवानंदामाताके गर्भमें आये तब उसी समय तो सिर्फ देवानंदामाताने १४ महा स्वप्न देखे सो अपने पति ऋषभदत्त ब्राह्मणको कहे, उनने स्वप्नोंके अनुसार उत्तम लक्षण वाला गुणवान् पुत्र होनेका कहा, सो बात अंगीकार किया और उसके बाद दोनो दंपति संसारिक सुखभोगते हुए काल व्यतीत करने लगे. इसप्रकार कल्पसूत्रादि सर्व शास्त्रोंमें लिखाहै, मगर भगवान् देवानंदा माताके गर्भमें आषाढशुदी६को आये,तब उसीरोज १४ महास्वप्न देखनेके सिवाय इन्द्रका आसन चलायमान होनेका व नमुत्थुणं वगैरह कोईभी च्यवन कल्याणकके कार्य होनेका उल्लेख कल्पसूत्र व भगवानके चरित्र संबंधी किसीभी शास्त्रमें देखनेमें नहीं आता. और त्रिशिलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भगवान आये,उसीरोज तो 'महापुरुष चरित्र' व 'त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र' तथा कल्पसूत्र और उन्होंकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके पाठोंसे प्रत्यक्षमेंही 'नमुत्थुणं' वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य होनेका देखनेमेंआताहै. इसलिये कल्पसूत्रमें जो'नमुत्थुणं' होनेका पाठ है, सो. आषाढ शुदी ६ के दिन संबंधी नहीं है, किंतु

४- देवानंदामाताकी कुक्षिमें भगवान आये सो ही नीचगौत्र कर्म विपाकरूपहै, उनका क्षय हुए बाद उच्चगौत्रके कर्मका उदय होनेसेही गर्भापहार करनापड़ाहै,तो भी शास्त्रकार महाराजोंने तो देवानंदाकी कुक्षिमे आनेको तथा त्रिशलामाताकी कुक्षिमें आनेको,इन दोनों कार्योंको तीर्थंकर भगवानके चरित्रमें उत्तमतापूर्वक कल्याणकारक माने हैं । जिसपरभी त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको नीचगौत्र कर्मविपाकरूप अतिनिंदनीक कहकर जो लोग वर्षोवर्ष पर्युषणाके मांगलिक पर्व दिनोंके व्याख्यानमें प्रत्यक्ष झूठ बोलकर भगवानकी निंदा करतेहैं,सो तीर्थंकर भगवान्के अवर्णवाद बोलनेवाले होनेसे आशातनाके दोषी ठहरते हैं ।

५- जैसे श्रीअभयदेवसूरिजीमहाराजने श्रीस्थंभनपार्श्वनाथजीकी प्रतिमाको प्रकट किया, उनका आशय समझेविना कितनेक ढूंढिये व तेरहापंथी लोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कहैं, तो उन्होंकी अज्ञानता समझी जावे. मगर तत्त्वदृष्टिवाले विवेकीलोग जिनप्रतिमाकी नवीन प्ररूपणा कभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीनही कहेंगे । तैसेही श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजनेभी षट् कल्याणकको प्रकट किया, उनका आशय समझेविना कितनेक लोग उनकी नवीन प्ररूपणा कहते हैं, वो उन्होंकी अज्ञानता समझनी चाहिये. मगर तत्त्व दृष्टिवाले विवेकीलोग उनकी नवीन प्ररूपणाकभी नहीं कहेंगे, किंतु आगमोक्त प्राचीन ही कहेंगे.

६- भगवानके शरीर-इन्द्रीय-पर्याप्तिके अवयव [पुद्गलपरमाणु] देवानंदामाताके शरीरसे बने हुए थे, और उसी शरीरसे त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आगयेथे, यहबात आश्चर्यकारक होनेसे शरीर-इन्द्रीय पर्याप्ति बदले विनाभी शास्त्रकार महाराजोंने उनको अलग भव गिना है । उनमें प्रत्यक्षपने च्यवन कल्याणकपना दिखलानेके लियेही खास कल्पसूत्रके मूलपाठमें त्रिशलामाताने १४ स्वप्न देखेहैं उन संबंधी"ए ए चउदस सुमिणे, सव्वा पासेई तित्थयरमाया । जं रयणिं वक्कमई, कुच्छिंसि महायसो अरिहा ४७। " यह पाठ लिखा है, और इसपाठकी सुबोधिका टीकामें इस प्रकार व्याख्या.किया है "अत्र प्रसंगेन एतेषां स्वप्नानां गर्भकाले सकलजिनराजजननीविलोकनीयत्वं दर्शयन्नाह-एतान् चतुर्दश स्वप्नान्,सर्वाः पश्यंति तीर्थंकर मातरः। यस्यां रजन्यां उत्पद्यंते, कुक्षौ महायशसः अर्हन्तः॥४७॥ इसी तरहसेही सर्व टीकाओंमेभी ऐसेही भावार्थका

पाठजानलेना. देखो-जिसरात्रिको तीर्थंकरभगवान माताकेगर्भमेंआके र उत्पन्नहोवें,उसरात्रिको उन्होंकीमाता गर्भकाले अर्थात् च्यवन कल्याणक समय सर्व तीर्थंकरोंकी मातायें यह१४महास्वप्न देखती हैं। ऐसेही श्री महावीरस्वामिभी त्रिशलामाताके गर्भमें आये,तब त्रिशलामातानेभी १४महास्वप्न देखे हैं। इस ऊपरके पाठपर अच्छी तरहसे तत्त्वदृष्टिसे विचारकिया जावे. तो-अनादिकालकी मर्यादा मुजब सर्व तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणककी तरहही आश्विन वदी १३ की रात्रिको त्रिशलामाताके गर्भमें भगवान् आये; उनको खास सूत्र कारने और सुबोधिका, दीपिका, किरणावली वगैरह सर्व टीकाकारोंनेभी च्यवन कल्याणक मान्य कियाहै। और तीर्थंकर महाराजोंके च्यवन कल्याणकमें इंद्रमहाराजाका आसन चलायमानहोनेसे विधिपूर्वक नमस्काररूप'नमुत्थुणं'करना। तीनजगतमें उद्योत होना, तथा सर्व संसारी प्राणी मात्रको थोडीदेर सुखकी प्राप्ति होना, वगैरह कार्यहोतेहैं। यह अनादि मर्यादा आगमानुसार प्रसिद्धहीहै। यही सर्व कार्य आसोज वदी १३को भगवान त्रिशलामाताके गर्भमें आये तब उसीरोज होनेका ऊपरके कल्पसूत्रके मूलपाठसे तथा उन्होंकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके प्रमाणोंसेभी प्रत्यक्ष सिद्धहोताहै,क्योंकि देखो- आषाढ शुद्द ६ को भगवान देवानंदामाताके गर्भमें आये तब उसी समय तो सिर्फ देवानंदामाताने १४ महा स्वप्न देखे सो अपने पति ऋषभदत ब्राह्मणको कहे, उनने स्वप्नोंके अनुसार उत्तम लक्षण वाला गुणवान् पुत्र होनेका कहा, सो बात अंगीकार किया और उसके बाद दोनो दंपति संसारिक सुखभोगते हुए काल व्यतीत करने लगे. इसप्रकार कल्पसूत्रादि सर्व शास्त्रोंमें लिखाहै, मगर भगवान् देवानंदा माताके गर्भमें आषाढशुदी६को आये,तब उसीरोज १४ महास्वप्न देखनेके सिवाय इन्द्रका आसन चलायमान होनेका व नमुत्थुणं वगैरह कोईभी च्यवन कल्याणकके कार्य होनेका उल्लेख कल्पसूत्र व भगवानके चरित्र संबंधी किसीभी शास्त्रमें देखनेमें नहीं आता. और त्रिशलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भगवान आये,उसीरोज तो 'महापुरुष चरित्र' व 'त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र' तथा कल्पसूत्र और उन्होंकी सर्व टीकायें वगैरह बहुत शास्त्रोंके पाठोंसे प्रत्यक्षमेंही 'नमुत्थुणं' वगैरह च्यवन कल्याणकके सर्व कार्य होनेका देखनेमेंआताहै. इसलिये कल्पसूत्रमें जो'नमुत्थुणं' होनेका पाठ है, सो आषाढ शुदी ६ के दिन संबंधी नहीं है, किंतु

आसोज वदी १३ के दिन संबंधी है, ऐसा समझना चाहिये.क्योंकि देखो— इन्द्रमहाराजने भगवानको नमुत्थुणं करके अपने सिंहासन पर बैठकर, प्राचीन कर्म उदयसे देवानंदाके गर्भमें भगवानको उत्पन्न होना पडा, ऐसा अच्छेरारूप विचारके हरिणेगमेषिदेवको आज्ञाकरके आसोज वदी १३को त्रिशलामाताके गर्भमें भगवानको संक्रमण करवाये, इसलिये यह सबबातें आसोज वदी १३को उसी समय हुईहैं, इसलिये ८२दिन तकतो इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान नहीं होनेसे भगवान देवानंदाके गर्भमें उत्पन्नहुएहैं,ऐसा मालूमभी नहीं पडा,मगर संपूर्ण ८२ दिन गये बाद अवधिज्ञानसे मालूम पडा, तब हर्षसे विधिपूर्वक नमस्कार रूप नमुत्थुण किया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये। इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेके दिन आसोज वदी १३ को नमुत्थुणं करनेका कल्पसूत्रादि आगमानुसार प्रत्यक्षही सिद्ध होताहै, और तीर्थंकर भगवान माताके गर्भमें आकर उत्पन्न होवें, तब इन्द्रमहाराजको अवधिज्ञानसे मालूम पडे, उसी समय ' नमुत्थु णं' रूप नमस्कार करनेकी आगमानुसार अनादि मर्यादा है, मगर उस समय वहां सामान्य नमस्कार करनेकी मर्यादा नहींहै। इसलिये 'महापुरुष चरित्र' में और ' श्रीत्रिषष्ठिशलाका पुरुषचरित्र ' के १० वें पर्वमें श्रीमहावीरस्वामिके चरित्रमें आसोज वदी१३को इन्द्रमहाराजका आसन चलायमान होनेसे अवधिज्ञानसे भगवानको देवानंदाके गर्भमें देखकरनमस्कार किया ऐसा अधिकारहै, सो नमुत्थुणं रूप नमस्कार करनेका समझना चाहिये मगर सामान्य नमस्कार करनेका नहीं समझना। और तीर्थंकर भगवानके च्यवन समये इन्द्रमहाराज नमुत्थुणंरूप नमस्कार हमेशां करतेहैं,तथा उसीसमय तीनजगतमें उद्योत,और सर्व जीवोंको क्षणमात्र सुखकी प्राप्ति होती है,उन्हींकोही च्यवन कल्याणक मानते हैं, यही सर्व कार्य आसोज वदी १३ के रोज होनेका ऊपरके लेखसे आगमादि प्राचीन शास्त्रानुसार सिद्ध होताहै.और समवायांग सूत्रवृत्ति वगैरह आगमादि शास्त्रोंमें त्रिशलामाताके गर्भमें आसोज वदी १३ को भगवान् आये उन्होंकोही तीर्थंकर पनेके भवमें गिना है, इसलिये त्रिशलामाताके गर्भमें आनेको आसोज वदी १३ के रोज दूसरा च्यवनरूप कल्याणक पना मान्य करना आत्मार्थी निकट भव्य जीवोंको उचितहीहै. जिसपरभी उनको कल्याणकपनेका निषेध करनेके लिये देवानंदाके १४ महास्वप्न त्रिशलाने हरण हुए हैं, इस

लिये वो कल्याणक नहीं होसकता. ऐसा कहनेवालोंकी बडी अज्ञानताहै, क्योंकि देखो- जैसे देवानंदाने मेरे १४ महा स्वप्न त्रिशला ने हरण किये ऐसा स्वप्न देखा, वैसेही त्रिशलाभी मैने देवानंदाके १४ महा स्वप्न हरण कियेहैं, वैसा सिर्फ एकहीस्वप्न देखती और च्यवन कल्याणककी सिद्धि बतलानेवाले नमुत्थुणं वगैरह अन्य कोई भी कार्य उसीरोज न होते तथा कल्पसूत्रमेंभी "एए चउदस सुमिणा, सव्वा पासेइ तित्थयरमाया । जं रयणिं वक्कमई कुच्छिंसि,महायसो अरिहा" यहपाठ अनादि मर्यादामुजब त्रिशला संबंधी न कहकर देवानंदा संबंधी कहते और पार्श्वनाथस्वामिके तथा नेमिनाथस्वामिके च्यवन कल्याणक संबंधी उन्होंकी माताओंने १४महास्वप्न देखे,उसी समय इन्द्रकाआसन चलाय मान हुआ, तबविधिपूर्वक हर्षसे नमुत्थुणं किया और प्रभातमें राजाओंने स्वप्न पाठकोंको बुलाकर स्वप्नोंका फल पूछा, तब स्वप्न पाठकोंने १४ महास्वप्न देखनेसे रागद्वेषको जितनेवाले जिने;त्रैलोक्य पूज्यनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा. इत्यादि च्यवन कल्याणकके कार्योंकी भलामणभी त्रिशला संबंधी न देकर देवानंदा संबंधी देते. और आषाढ शुदी ६ को ही नमुत्थुणं होने वगैरह उपरके तमाम कार्योंका उल्लेख कल्पसूत्रादिमें शास्त्रकार करते,व समवायांगसूत्रवृत्तिमें अलग भवभी न गिनते और आसोजवदी १३को नमुत्थुणं वगैरह च्यवन कल्याणकके कोईभी कार्य नहीं होते,तबतो त्रिशलाके गर्भमें आनेको च्यवनकल्याणक नहींमानते तो भी चल सकता,मगर ऐसा नहींहै,और आषाढ शुदी ६ को नमुत्थुणं वगैरह च्यवन कल्याणकके कार्य नहीं हुए, किंतु आसोज वदी १३को हुए हैं. इसलिये आसोज वदी १३को ही च्यवन कल्याणकके तमाम कार्य होनेसे उनको अवश्यही कल्याणकपना मान्य करना योग्य है। और स्वप्न हरण वगैरहके बहानेसे कल्याणकपना निषेध करना सो अज्ञानतासे शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करना योग्यनहींहै. और जन्म त्रिशलामाताकेगर्भसे हुआहै,तथा च्यवनकल्याणकके सर्वकार्यभी त्रिशलाके गर्भमेंआये तबहुएहैं,इसलिये त्रिशलाके गर्भमें आनेरूप च्यवन माननाही आगम प्रमाण अनुसार और युक्तियुक्तहै,च्यवनके सिवाय जन्मभी नहींमानसकते.यह जगत विख्यात प्रसिद्ध न्यायकी बातहै. त्रिशलाके गर्भमें आये तब अनादि मर्यादामुजब च्यवन कल्याणकके सर्वकार्य खाससूत्रकारनेलिखेहैं, जिसपरभी उन्होंको उत्थापनकरके अकल्याणकरूप ठहरानेके लिये उसबातको निंदनीक कहकर बाल

जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममेंगेरनेका अनर्थ करना सर्वथा अनुचितहै.

और जैसे-देवलोकसे च्यवन हुए बाद तथा माताके गर्भमें अवतार लेनेबाद् नमुत्थुणं वगैरह च्यवन कल्याणकके कार्य होते हैं, तो भी 'कारणमें कार्यका उपचार' होता है, इसलिये च्यवनसमय नमुत्थुणं वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है। तैसेही यद्यपि देवानंदामाताके गर्भमें नमुत्थुणं हुआ तो भी आषाढशुदीके दिननहीं, किंतु आसोज वदी १३ के दिन हुआहै, तथा उसी समय त्रिशला माताके गर्भमें आनेका होनेसे उन्हींके निमित्त भूतहो 'कारणमें कार्यका उपचार' मानकर त्रिशला माताके गर्भमें आने संबंधी नमुत्थुणं वगैरह कार्य होनेका कहनेमें आता है. और इन्द्रमहाराज भगवान्के विनयवान भक्त थे; इसलिये अवधिज्ञानसे भगवान्को देखतेही उसीसमय नमुत्थुणं किया और त्रिशला माताके गर्भमें पधराये. यदि भगवान्को अवधिज्ञानसे देवानंदामाताके गर्भमें देखकर त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये बाद पीछेसेनमुत्थुणंकरते तो विनयभक्तिरूप मर्यादाकाभंग होता,इसलिये विनय भक्तिरूप मर्यादा रखनेकेलिये पहिले नमुत्थुणं किया और पीछे त्रिशलामाताकेगर्भमें पधराये देखो,जैसे कोई राजा महाराजा भगवान्का आगमनसुनने मात्रसेही हर्षयुक्त होकर उसीसमय उसी दिशा तरफ पहिले वहांसेही भगवान्को नमस्कारकरते हैं, और बादमें भगवानके पास वहां जाकर उचित भक्ति करते हैं। तैसेही इन्द्रमहाराजनेभी अवधिज्ञानसे भगवानको देखतेही वहांसे नमुत्थुणंरूप नमस्कारकिया और त्रिशलामाताके गर्भमें पधराये,बाद त्रिशला माताके पासभी आकर तीन जगतके पूजनीक तीर्थंकर पुत्र होनेका कहा और देवताओंको आज्ञा करके धनधान्यादिककी वृद्धि करवाने वगैरह कार्योंसे भगवानकी उचित भक्ती करी। यह सर्व कार्य आसोजवदी१३के दिन हुएहैं,इसलिये कारणमें कार्यका उपचार माननेसे नमुत्थुणं वगैरह तमाम कार्य त्रिशलामाताके गर्भमें आनेसंबंधी समझने चाहिये.जिसपरभी देवानंदाके गर्भमें नमुत्थुणं होनेका कहकर त्रिशलाके गर्भमें आनेसबंधी आसोज वदी १३के दिनको च्यवन कल्याणकपने रहित कहतेहैं उन्होंकी अज्ञानता है।

और जोबातनहीं बननेवालीहोवे;असंगतीरूप या असंभवित होवे, वोही बात कभी कालांतरमें बनजावे, उन्हीं बातको शास्त्रोंमें आश्चर्य कारक अच्छेरारूप कहते हैं। इसलिये जिसबातको अच्छेरा कह दिया, उस बातमें अन्य शास्त्र प्रमाणकी मर्यादा बाधक

नहीं हो सकती.इसी तरहसे भगवानकेभी देवानंदा माता तथा त्रिशलामाता दोनोंका गर्भकाल मिलकर ९ महीने और ऊपर ७॥ दिन मानतेहैं, मगर देवानंदाके गर्भमें आनेको शास्त्रकारोंने अच्छेरा कहा है. और ८२ दिन गये बाद त्रिशलाके गर्भमें आनेको तीर्थंकर पनेके भवमें गिनाहै,इसलिये देवानंदाके गर्भमें आये तब च्यवन कल्याणक के सर्वकार्य नहीं हुए, परंतु त्रिशलाके गर्भमें आये तबही च्यवनकल्याणकके सर्व कार्य हुए हैं. तो भी देवानंदाके गर्भमें भगवान आये तब माताने १४ महास्वप्न देखे,तथा ८२ दिनतक वहां विश्रामलिया और शरीर-इन्द्रीय-पर्याप्ति देवानंदामाताके शरीरसे बने हैं. इसलिये देवानंदाके गर्भमें आनेकोभी भगवानके प्रथम च्यवनरूप कल्याणक पना मानते हैं। और जैसे-मारवाड,गुजरात,दक्षिण, पूर्व वगैरह देशोंमें पुत्रको दत्तक [गोद] लेनेमें आताहै, उनके पहिलेके मातापिता अलगहोतेहैं और पीछेपालने पोषनेवाले दूसरे मातापिता अलगहोते हैं, इसलिये उनके दो माता और दो पिता कहनेमें कोई दोष नहीं आता, मगर नाम पीछेवालोंका चलता है । तैसेही भगवानकेभी देवानंदाके गर्भसे ८२दिन गये बाद आश्चर्यरूप त्रिशलाके गर्भमें आना पडा, उससे दो माता तथा दो पिता और दो च्यवन कल्याणक माननेमें आते हैं. इसलिये दोनों माताओंका गर्भकाल मिलकर ९महीने और ७॥ दिन हुए हैं, तो भी दो च्यवन कल्याणक माननेमें कोईभी शास्त्र बाधा नहीं आ सकती और कोई कुयुक्ति व वितर्कभी बाधकनहीं होसकती, इस बातको विशेष तत्त्वज्ञजन स्वयंविचार सकते हैं।

इन सर्वबातोंका विशेषनिर्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इस ग्रंथमें अच्छीतरहसे सर्व शंकाओंका निवारणपूर्वक खुलासा हो चुकाहै, यहां तो उसका संक्षिप्तसार बतलायाहै,और विशेष निर्णय करनेकी अभिलाषावाले तत्त्वसारग्रहण करनेवाले पाठकगण इस ग्रंथको संपूर्ण वांचेगे तो सर्वबातोंका खुलासा अच्छी तरहसे होजावेगा

विवादवाले विषयों संबंधी अभिप्राय.

तपगच्छके श्रीमान् विजयधर्मसूरिजीके शिष्यश्रीमान् रत्नविजयजीने विवादवाले विषयों संबंधी पौषशुदी३बुधवार,श्रीवीरनिर्वाण संवत् २४४३ के जैन शासन पत्रके पृष्ठ ५८८ में श्रीपार्श्वनाथस्वामीकी परंपरासंबंधी उपकेशगच्छ (कवलागच्छ) की हकीकत छपवाया है, उसका थोडासा उतारा यहांपर बतलाते हैं ।

"श्रीरत्नप्रभसूरिजीकृत सामाचारीमां लख्युंछे के,पुष्पवती'थया-वाद स्त्रीने पूजा नहीं करवी. आंबिलमां २-३ द्रव्य कल्पे. तथा देव-गुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रनी टीकामां ६ कल्याणिक लख्यां छे,पजोस-णा ५० दिवसे करवा इत्यादि" तथा " वीर प्रभुना २८ भव लख्या छे, सुधर्मा, जंबु, प्रभव, सिजंभव ए चारना ८४ शाखा, ४१ गण, ८ कुल थया. आ सामाचारी तथा कल्प टीका हालनां गच्छोथी घणी प्राचीन बनेली छे, प्राचीन समयथी ६ कल्याणिक, स्त्री पूजा निषेध विगेरे प्रवृत्तिओ चाली आवीछे, जिनदत्तसूरिजी, जिनवल्लभसूरिजी विगेराने लोको खाली निंदे छे, नवुं कोईए कर्युं नथी. 'पजोषण जे-वा वीतराग पर्वमां कल्पसूत्रना मांगलिक व्याख्यानमां चतुर्विध श्रीसंघमां अकारण कलह करी जैनभाईयोनां अंतकरण दुभावी ध-र्मनी निंदा करावी वर्षोवर्ष अनी जे वातने ' अभूनदभोवेचिव ' क-रीने किंतुना कलासमां दाखल करवी, ए कोई रीते इच्छवा योग्य नथी, शासन प्रेमी महाशयो आ बाबत बराबर समजी गया हशे, [अयं निजपरोवेत्ति, गणनालघु चेतसा। उदार चरितानां तु,वसुधैव कुटुंबकम्' ॥१॥] आमा ' वसुधैव कुटुंबकं ' ए वाक्य अत्यंत श्रेष्ठ छे पण अने बदले ' सर्वे गच्छ कुटुंबकं ' एवुं बनो,एज प्रार्थना, याचना अने सलाह"यहींलेख उसीअरसेमे जैनपत्रमेंभी प्रकाशित होगयाहै औरमीजेठवदि१२बुधवार वीर सं०२४४४ के जैनशासनपत्रकेपृष्ठ१६८ में श्रीरत्नविजयजीने पर्युषणामें समभावरखनेसंबंधी लेख छपवाया-था,उसमेंसे थोडासावतलातेहैं."दरेकगच्छनीपट्टावलीजुओ,तेमांपर स्पर पठनपाठन साथे रहेता,वंदनादि व्यवहार करता,विनयमूल ध-र्मनी वृद्धि करनारा हता,आजे विरोधभाव करनारा थोकनथीराखता-खरतरगच्छना आचार्योने सत्कारआपनारा तपगच्छना साधुओहता अने तपगच्छनाआचार्योने बहुमान आपनारा खरतरगच्छनासाधुओ हता, तपगच्छमां जेवा परम प्रभाविक पुरुषो थयाछे तेवाज खरतर गच्छमां परम प्रभाविक पुरुषो थया छे.जिनदत्तसूरिजी, जिनकुशल सूरिजी जेणे सवालाखनवा जैनो बनाव्या,हजारोराजा महाराजाओने जैन धर्म अंगीकार कराव्यो, हजारो क्षत्रीयोने ओसवाल बनाव्या, जिनचंद्रसूरि,जिनहर्षसूरि जिनप्रभसूरि आदि अनेक प्रभाविक पुरुषो थया. तेवा महा पुरुषोना अवर्णवाद बोलवा,आवते भवे जीभ पाम वी मुश्केल छे. उपकारी नो उपकार रद्दी करवो महा भयंकर पाप छे, एक खास मुद्दो तपावोके आजे साधुओ व्याख्यानमां टीकाओ

वांचेछे तथा चरित्रोनां चरित्रो वांचेछे, ग्रंथो वांचेछे ते घणेभागे खरतर गच्छना बनावेला ग्रंथो छे, परस्पर गच्छवालाओ वांचे छे सर्व गच्छवालाओ श्रद्धाथी सांभले छे ' पुरुष विश्वासे वचन विश्वास' जेना बनावेला पुस्तको हाथमां लई सन्मुख धरी वांचो छो, अने मोढेथी तेज आचार्योनी बद बोई कराय. आजे दादा साहेबने मानवा वाला चरण पादुकाना दर्शन करनारा तपगच्छवाला हजारो भाविक भक्तो छे तथा श्री हीरविजयसूरि प्रमुखने माननारा खरतरगच्छना हजारो भाविक भक्तोछे. आवा शंभु मेलामां खाली विक्षेप पेदा करवाथी कोईनुं कल्याण थवानुं नथी " इत्यादि.

देखो-ऊपर मुजब खास तपगच्छके श्रीरत्नविजयजीके लेख पर खूब दीर्घ दृष्टिसे विवेकपूर्वक विचार किया जावे, तो श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी परंपराके श्रीदेवगुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रकी प्राचीन टीका वगैरह शास्त्रानुसार पहिले पूर्वाचार्योंके समयसेही श्रीवीर प्रभुके २८ भव, तथा छ कल्याणक मानने वगैरह बातें प्रचलीतह थी. उन्हीके अनुसार श्रीजिनवल्लभसूरिजी वगैरह महाराजोंने चैत्यवासियोंको हटाते हुए, भव्य जीवोंके सामने विशेषरूपसे प्रकटपने कथन की हैं। परंतु शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणा नहीं की जिसपरभी आगमप्रमाणोंको उत्थापन करके शास्त्रकार महाराजों अभिप्रायको समझेविना अपनी मतिकल्पनासे शास्त्रपाठोंके खोटे खोटे अर्थ करके नवीन छठे कल्याणककी प्ररूपणा करनेका झूठा दोष लगाते हैं. सो प्रत्यक्षपणे मिथ्याभाषणकरके अपने दूसरे महाव्रतका भंग करना और भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरना सर्वथा अनुचितहै

और श्रीजिनवल्लभसूरिजी, श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जैसे शासन प्रभावक परम उपकारी पुरुषोंने, चैत्यवासियोंकी उत्सूत्रप्ररूपणाके तथा शिथिलाचारके मिथ्यात्वको हटाया, और क्षत्री-ब्राह्मणादि लाखों अन्य दर्शनियोंको प्रतिबोधकर जैनी श्रावक बनाये, उन्होंकीही वंश परंपरा वाले अभी वर्तमानमेंभी गुजरात, कच्छ, मारवाड, पूर्व, पंजाब,दक्षिणादि देशोंमें लाखों जैनी विद्यमान मौजूद हैं। इसलिये उन महाराजोंने परंपराके हिसाबसे करोंडो जीवोंको सम्यक्त्व प्राप्त कराने संबंधी बडाभारी महान् उपकार किया है तथा विद्या,मंत्र, देवसाह्य,व संयमानुष्टान-आत्मशक्ति प्रकाशित करके बहुत बडीभारी जैनशासनकी प्रभावना करी. उन महाराजोंके प्रतिबोधे हुए श्रावकोंकी वंश परंपरावाले श्रावकोंसेही, वर्तमान

"श्रीरत्नप्रभसूरिजीकृत सामाचारीमां लख्युंछे केपुष्पवती थया बाद स्त्रीने पूजा नहीं करवी आंबिलमां १-२ द्रव्य कल्पे. तथा देवगुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रनी टीकामां ६ कल्याणिक लख्यां छे,पज्जोसणा ५० दिवसे करवा इत्यादि" तथा "वीर प्रभुना २८ भव लख्या छे, सुधर्मा, जंबु, प्रभव, सिज्जंभव ए चारना ८४ शाखा, ४१ गण, ८ कुल थया. आ सामाचारी तथा कल्प टीका हालनां गच्छोथी घणीं प्राचीन बनेली छे, प्राचीन समयथी ६ कल्याणिक, स्त्री पूजा निषेध विगेरे प्रवृत्तिओ चाली आवीछे, जिनदत्तसूरिजी, जिनवल्लभसूरिजी विगेराने लोको खाली निंदे छे, नवुं कोईए कर्युं नथी. पजोषण जेवा वीतराग पर्वमां कल्पसूत्रना मांगलिक व्याख्यानमां चतुर्विध श्रीसंघमां अकारण कलह करी जैनभाईयोनां अंतकरण दुभावी धर्मनी निंदा करावी वर्षोवर्ष अनी ये वातने ' अभूतदभावेच्चि ' करीने किंतुना कलासमां दाखल करवी, ए कोई रीते इच्छवा योग्य नथी, शासन प्रेमी महाशयो आ बाबत बराबर समजी गया हशे, [अयं निजपरोवेत्ति, गणनालघु चेतसा। उदार चरितानां तु,वसुधैव कुटुंबकम् ॥१॥] आमा ' वसुधैव कुटुंबकं ' ए वाक्य अत्यंत श्रेष्ट छे पण अने बदले ' सर्व गच्छ कुटुंबकं ' एवुं बनो,एज प्रार्थना, याचना अने सलाह"यहीलेख उसीअरसेमे जैनपत्रमेभी प्रकाशित होगयाहै औरमीजेठवदि१बुधवार वीर सं०२४४४ के जैनशासनपत्रकेपृष्ठ१६८ में श्रीरत्नविजयजीने पर्युषणामें समभावरखनेसंबंधी लेख छपवाया था,उसमेसे थोडासावतलातेहैं."दरेकगच्छनीपट्टावलीजुओ,तेमांपरस्पर पठनपाठन साथे रहेता,वंदनादि व्यवहार करता,विनयमूल धर्मनी पुष्टि करनाराहता,आजे विरोधभाव करनारा थीकनथीराखता. खरतरगच्छना आचार्योने सत्कारआपनारा तपगच्छना साधुओहता अने तपगच्छनाआचार्योने बहुमान आपनारा खरतरगच्छनासाधुओ हता, तपगच्छनां जेवा परम प्रभाविक पुरुषो थयाछे तेवाज खरतरगच्छमां परम प्रभाविक पुरुषो थया छे जिनदत्तसूरिजी, जिनकुशलसूरिजी जेणे सवालाखनवा जैनो बनाव्या,हजारोराजा महाराजाओने जैन धर्म अंगीकार कराव्यो, हजारो क्षत्रीयोने ओसवाल बनाव्या, जिनचंद्रसूरि,जिनहर्षसूरि जिनप्रभसूरि आदि अनेक प्रभाविक पुरुषो थया. तेवा महा पुरुषोना अवर्णवाद बोलवा,आबतें भवे जीभ पाम वी मुश्किल छे. उपकारी नो उपकार रदी करवो महा भयकर पाप छे, एक खास मुद्दो तपाशोके आजे साधुओ वखाणमां टीकाओ

वांचेछे तथा चरित्रोनां चरित्रो वांचेछे, ग्रंथो वांचेछे ते प्रणेभागे खरतर गच्छना बनावेला ग्रंथो छे, परस्पर गच्छवालाओ वांचे छे सर्व गच्छवालाओ श्रद्धाथी सांभले छे ' पुरुष विश्वासे वचन वि श्वास' जेना बनावेला पुस्तको हाथमां लई सन्मुख धरी वांचो छो, अने मोढेथी तेज आचार्योनी बद वोई कराय. आजे दादा साहेबने मानवा वाला चरण पादुकाना दर्शन करनारा तपगच्छवाला हजारो भाविक भक्तो छे तथा श्री हीरविजयसूरि प्रमुखने माननारा खरतरगच्छना हजारो भाविक भक्तोछे. आवा शंभु मेलामां खाली विक्षेप पेदा करवाथी कोईनुं कल्याण थवानुं नथी " इत्यादि.

देखो-ऊपर मुजब खास तपगच्छके श्रीरत्नविजयजीके लेखपर खूब दीर्घ दृष्टिसे विवेकपूर्वक विचार किया जावे, तो श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी परंपराके श्रीदेवगुप्तसूरिजीकृत कल्पसूत्रकी प्राचीन टीका वगैरह शास्त्रानुसार पहिले पूर्वाचार्योंके समयसेही श्रीवीर प्रभुके २८ भव, तथा छ कल्याणक मानने वगैरह बातें प्रचलीतही थीं. उन्हींके अनुसार श्रीजिनवल्लभसूरिजी वगैरह महाराजोंने चैत्यवासियोंको हटाते हुए, भव्य जीवोंके सामने विशेषरूपसे प्रकटपने कथन की हैं। परंतु शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणा नहीं की, जिसपरभी आगमप्रमाणोंको उत्थापन करके शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायको समझेविना अपनी मतिकल्पनासे शास्त्रपाठोंके खोटे खोटे अर्थ करके नवीन छठे कल्याणककी प्ररूपणा करनेका झूठा दोष लगाते हैं. सो प्रत्यक्षपणे मिथ्याभाषणकरके अपने दूसरे महाव्रतका भंग करना और भोलेजीवोंको उन्मार्गमें गेरना सर्वथा अनुचितहै।

और श्रीजिनवल्लभसूरिजी, श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जैसे शासनप्रभावक परम उपकारी पुरुषोंने, चैत्यवासियोंकी उत्सूत्रप्ररूपणाके तथा शिथिलाचारके मिथ्यात्वको हटाया, और क्षत्री-ब्राह्मणादि लाखों अन्य दर्शनियोंको प्रतिबोधकर जैनी श्रावक बनाये, उन्होंकीही वंश परंपरा वाले अभी वर्त्तमानमेंभी गुजरात, कच्छ, मारवाड, पूर्व, पंजाब,दक्षिणादि देशोंमें लाखों जैनी विद्यमान मौजूद हैं। इसलिये उन महाराजोंने परंपराके हिसाबसे करोडो जीवोंको सम्यक्त्व प्राप्त कराने संबंधी बडाभारी महान् उपकार किया है। तथा विद्या,मंत्र, देवसाह्य,व संयमानुष्ठान-आत्मशक्ति प्रकाशित करके बहुत बडीभारी जैनशासनकी प्रभावना करी. उन महाराजोंके प्रतिबोधे हुए श्रावकोंकी वंश परंपरावाले श्रावकोंसेही, वर्तमानिक

सबगच्छवाले बहुतसाधुओंको आहार,पानी,तथा संयम उपकरणोंसे निर्वाह होता है। ऐसे महान् शासन प्रभावक परम उपकारी महाराजोंने पूर्वाचार्योंकी प्रवृत्ति मुजब तथा आगमादि प्राचीन शास्त्रानुसारही सत्य प्ररूपणाकरीहै, मगर शास्त्रविरुद्ध होकर नवीन प्ररूपणानहींकरी. जिसपरभी कितनेक पक्षपातीजन उपकारी महाराजोंके उपकारोंको छुपादेतेहैं, और छठे कल्याणक प्रकटकरनेकी तथा स्त्रीपूजा निषेधकरनेकी नवीनप्ररूपणाकरनेकाझूठा दोषलगाकर अनेक तरहसे निंदा करते हुए आक्षेप करते हैं। उन्होंको परभवमें जीभ मिलना मुश्किलहै यहबात तपगच्छवालेही गुणानुरागी मध्यस्थ भावसे लिखतेहैं। अर्थात् ऐसे उपकारोंको भूलकर झूठा दोष लगाकर निंदा करनेवाले एकेन्द्रिय होवेंगे, फिर उन्होंको जैनधर्म प्राप्त होना बहुत मुश्किल होवेगा, संसारमें बहुत काल परिभ्रमण करेंगे इसलिये भवभिरु आत्मार्थी भव्य जीवोंको संसार परिभ्रमण के हेतुभूत उपकारी पुरुषोंकी झूठी निंदा करके भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेरूप अनर्थ करना सर्वथा अनुचित है।

और ऊपरके लेखसे श्रीरत्नविजयजीके लेखमुजब तपगच्छके तथा खरतरगच्छके आपसमें विशेषरूपसे संपकी वृद्धि होना चाहिये और कुसंपके कारण भूत पर्युषणामें खंडनमंडनके विवाद वाले विषयोंको सर्वथा त्याग करके सबसे शासन उन्नतिके कार्योंमें कटिबद्ध होना, यही अपने और दूसरे भव्यजीवोंकेभी आत्म कल्याणका हेतु है। ऐसी ही श्रद्धा तथा प्ररूपणा और प्रवृत्तिका शुद्ध हृदयसे व्यवहारकरके उपकारी पुरुषोंकी झूठीनिंदा छोडकर, प्राचीन पूर्वाचार्योंकी परंपरामुजब शास्त्रानुसार आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें या प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा पर्वका आराधन करके तथा श्री महावीर स्वामिके च्यवनादि छ कल्याणकोंको आगमानुसार भावपूर्वक मान्य करके भगवान्की आज्ञानुसार धर्मकार्योंसे निज और परका कल्याणकरो,संसार परिभ्रमणके,दुःखसे छुटो,और अक्षय सुख प्राप्त करो. यही आत्मिक हृदयकी विशुद्ध प्रेम भावसे आत्महितैषी पाठक गण भव्यजीवोंके प्रति प्रार्थनाहै. इति शुभम्.

विक्रम संवत् १९७७, प्रथम श्रावण शुदी १३ बुधवार.
हस्ताक्षर – श्रीमान् उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके लघुशिष्य—मुनि- मणिसागर. जैन धर्मशाल, धुलिया—खानदेश.

श्रीवीतरागाय नमः।

दूसरे भागकी पीठिका।

इनकोंभी पहिले अवश्यही वांचिये.

अब हम यहांपर दूसरे भागकी पीठिकामें न्यायरत्नजी शांति- विजयजी संबंधी थोडासा लिखतेहैं, जिसमें ३ वर्ष पहिले दो भाद्र- पदहोनेसे पर्युषणापर्व प्रथम भाद्रपदमें करने या दूसरेभाद्रपदमें,इस विषयकी मुंबईशहरमें चर्चा खूब जोरशोरसे दोनोंतरफसे चलीथी. उससमय मैंनेभी 'लघुपर्युषणा निर्णयका प्रथमअंक' नामा छोटासी पुस्तकमें मुख्य २ सर्व बातोंकी शंकाओंका समाधान अच्छीतरहसे- लिखदियाथा. वह पुस्तक एकश्रावकनेछपवाकर प्रसिद्धकरीथी.उस पर न्यायरत्नजीने उनपुस्तककी शास्त्रानुसार सत्य२ बातोंको ग्रहण तो नहींकरी और मेरे सबलेखोंको अनुक्रमसे पूरेपूरे लिखकर पीछेउ- नसबका जबाब देनेकीभी ताकत न होनेसे जानबूझकर कुयुक्तियोंसे अनेकबातें शास्त्रविरुद्ध लिखकर'पर्युषणपर्वनिर्णय' तथा'अधिकमास निर्णय'में प्रकटकरीथी.उसपर मैंने उन दोनों पुस्तकोंकी शास्त्रविरुद्ध बातोंसंबंधी शास्त्रार्थसे सभामें निर्णय करनेकेलिये न्यायरत्नजीको जाहिररूपसे छपवाकर सूचना दीथी. उसका लेख नीचे मुजबहै.

विज्ञापन, नं० ७

न्यायरत्नजी शांतिविजयजी सावधान ! शास्त्रार्थके लिये जलदी तैयार हो.

मैंने- आपको शहर पुणामें शास्त्रार्थ संबंधी विज्ञापन नंबर १-२-३-४ भेजेथे और वर्तमानिक पर्युषणाकी चर्चासंबंधी आपकीब- नाई 'पर्युषणापर्वनिर्णय' किताब "शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध, जिनआज्ञा बाहिर और कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंको उन्मार्गमें गेरने- वालीहै," यह सूचना विज्ञापन नंबर पहिलेमें लिखकर,इसका वि- शेष खुलासा मुंबईकी सभामें शास्त्रार्थ द्वारा करनेके लिये आपको आमंत्रण कियाथा और श्रीकच्छी जैनअसोसीयन सभानेभी सब मु- निमहाराजोंकी तरह आपकोभी पर्युषणाका निर्णय करनेसंबंधी वि- नतीपत्र भेजाथा, जिसपरभी आपने मुंबईमें शास्त्रार्थकरना मंजूर न

किया और दूसरोंपर गेरकर मौनही करबैठे, तथा दूरसेही फिर " अधिकमासनिर्णय " की छोटीसी किताब छपवाकर प्रगटकी उसके बाद थोडे रोज पीछे आप मुंबई दादर आये, तब मैंने आपको दोनों किताबों संबंधी शास्त्रार्थकरनेकी सूचना पत्रद्वारा दीथी उसकी नकल नीचे मुजब है :—

"श्रीदादर मध्ये श्रीमान् न्यायरत्नजी शांतिविजयजी योग्य श्रीमुंबईवालकेश्वरसे मुनि मणिसागरकी तरफसे सूचना. मैंने कलरात्रिको आपके दादर आनेकासुनाहै उससेआपको सूचनादेताहूं,कि-आपने " पर्युषणापर्व निर्णय " और " अधिकमासनिर्णय " दोनोंपुस्तकोंमें बहुत जगह शास्त्रविरुद्ध होकर उत्सूत्र प्ररूपणारूप लिखाहै, आपने दोनोंपुस्तकोंमें सर्वथा शास्त्रविरुद्ध और कल्पित बातोंकाही संग्रहकियाहै, इसलिये हम सभामें शास्त्रार्थसे आपकी दोनों पुस्तकें जिनाज्ञाविरुद्ध सिद्ध करनेको तैयारहैं, शास्त्रार्थ किये बिना आप चले जावोगे तो झूठे समझे जावोगे, विशेष क्यालिखूं, शास्त्रार्थका विज्ञापन नं. १ आपको पहिलेभी भेज चुका हूं, कल दादर आवुंगा. आप जाना नहीं. इसका उत्तर अभीही लालबागमें आदमीके साथ पीछा भेजना मैं लालबाग जाताहूं, हस्ताक्षर मुनि-मणिसागर, पौष शुदी १ रविवार, सं० १९७४."इस मुजबपत्र पौषसुदी१ को आदमीभेजकर आपकोपहुचाया,और दूजके दिन खास मैं और मुनि श्रीलब्धिमुनिजी, तथा अंचलगच्छीय मुनि दानसागरजी और केवलचंदजी चारोंही ठाणे दादर आये, और शास्त्रार्थ करनेका आपसे कहा, तब आपनेभी अन्य मुनियोंकी तरह आनंदसागरजीकी आडलेकर दो महीनोंबाद शास्त्रार्थकरनेका कहाथा,सो २महीनेकी जगह ४ महीने होगये, अब जलदी करो. आनंदसागरजी तो आडी आडी बातोंसे दूसरेका नाम आगे करतेहैं, अपना नामसे लिखतेभी डरते हैं, तो सभामें नियमानुसार क्या शास्त्रार्थ करेंगे, और आपने किताबें बनवानेमें किसी अगेवानोंकी व आनंदसागरजी वगैरह मुनियोंकी आड न ली, तो फिर उसका खुलासा करनेमें दूसरोंकी आड लेते हो— यही आपका अन्याय समझा जाताहै. वालकेश्वरमें जब हमारे गुरुजी महाराजकेसाथ आपकी मुलाकात हुईथी, तबभी झगडीया वगैरह तीर्थयात्राको जाकर आये बाद शास्त्रार्थ करनेका मंजूर कियाथा, सो आप यात्राकरके आगये, अब आमनेसामने या लेखद्वारा या सभामें आपकी इच्छाहो वैसे शास्त्रार्थ करना मंजूरकरिये,

और विशेष सूचनायें विज्ञापन, नंबर ६ से समझ लीजिये. और नि-यमभी जो आपकीइच्छा हो सो प्रतिज्ञापत्रके साथ १५ दिनके भीत-रप्रगट करीये, आनंदसागरजी, विजयधर्मसूरिजी, विद्याविजयजी व न्यायविजयजीकी तरह आडीआडी बातें निकालकर शास्त्रार्थ क-रना मंजूर न करोंगे,तो-आपकीभी हार समझीजावेगी. अथवा श्री-कच्छी जैनएसोसीयनकी विनतीके अनुसार व मेरे विज्ञापनोंके अ-नुसार यदि आपको मुंबईमें ठहरकरसभामें शास्त्रार्थ करनेमें अनुकू-लतानहोंव तो लीजिये चलिये-लेख द्वाराही सही, मगर विज्ञापन नं-बर६ मुजब प्रतिज्ञा वगैरह नियमोके साथ उत्तर दीजिये. देखो—

न्यायरत्नजी मेरे बनाये ' लघुपर्युपणानिर्णय के प्रथम अंक 'के सब लेखोंका न्यायसे पूरेपूरा उत्तर देनेकी आपमें ताकत नहीहै, य-दि होती तो उसके पृष्ठ३-४-५-६-७ और १०में अधिकमासमें सूर्यचा-र न होवे, वनस्पति न फूले, वैगरह सुबोधिकाकी ११बातोंका खु-लासा मैने लिखाथा. उनसबको लिखकर अनुक्रमसे पूरा उत्तर क्यों न दिया,यदि भूल गयेहो, तो अभीही देवो । और पृष्ठ १७ के अंतके पाठका खुलासाभी साथही करो ॥ और मैने ' लघुपर्युपणा निर्णय ' में निशीथचूर्णि और दशवैकालिक बृहद्वृत्तिके पाठसे अधिकमास-को कालचूला कहकरकेभी दिनोंकी गिनतीमेंलेनेका सिद्धकर दिखा-याहै, इसलिये दिनोंकीगिनतीमें निषेधनहींहो सकता, देखो-लघुपर्यु-षणानिर्णयके पृष्ट २४-२५ ॥ और लौकिक शास्त्रानुसारभी अधिक-मासको दिनोंमें गिनाहै, देखो-लघु पर्युपणानिर्णय के पृष्ट २८-२९ ॥ और अधिकमासमें मुहूर्तवाले शुभकार्य न होवें, उसीतरह चौमासे-में, सिंहस्थमें,गुरुशुक्रके अस्तमें, पौष- चैत्र-मलमासमें, क्षयमासमें, वदीपक्षकी १३-१४ और अमावास्या इन तीनक्षीणतिथीयोंमें,और वै-धृति-गंडांत-व्यतिपात-भद्रा वगैरह कुयोगोंमें, तिथी, वार, नक्षत्र चंद्रादि बहुत मास-पक्ष-वर्ष-दिन वगैरह योगोंमेभी मुहुर्त्तवाले शुभ-कार्य न होवे, देखो—ज्योतिःशास्त्रे "जंभारिति पुरोहिते हरिगते,सुप्ते मुकुंदेविभो । जातेधर्मघने धनशफरयोः क्षीणे कुवारास्तिथिः॥ अस्ते-भार्गव जीवयोः कुदिने, मासाधिके वैधृतौ । गंडांते व्यतिपात विष्टि-क शुभं, कार्यं न कार्यं बुधैः॥ १ ॥" मगर दान, शील, तप, भाव, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध वगैरह धर्मकार्य अधिक मासमे भी होसकतेहैं । उसी तरह पर्युपणापर्वभी दिन प्रतिबद्ध होनेसे अधिक-मासमें करनेमें कोई बाधा नहीहै । देखो लघुपर्युषणा निर्णयके पृष्ट

२७-२८ ॥ और मासवृद्धि होनेपरभी पर्युषणाके पिछाडी ७०दिन र-हनेका किसीभी शास्त्रमें नहींलिखा, समवायांगका पाठ तो मास वृ-द्धिके अभावकाहै, इसलिये अधिकमास होनेपरभी ७० दिन रहनेका कहना शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध होनेसे मिथ्याहै, देखो लघुपर्यु-षणा निर्णयके पृष्ठ १८-१९-२०-२१ ॥ इसीतरहसे दोनोंआषाढ वगैर-हका खुलासाभी लघुपर्युषणाके पृष्ठ २५-२६में अच्छी तरहसे दिख-ला दिया था ॥ जिसपरभी न्यायरत्नजी आपने मेरे लेखोंका आगे पीछेका संबंध तोडकर मेरे अभिप्रायके विरुद्ध होकर अधूरे अधूरे लेख, भोलेजीवोंको दिखलाकर अपनी दोनों किताबोंमें आप वारंवा-र अधिकमहीनेके दिनोंको गिनतीमेंसे उडा देनेकेलिये कोईभीशास्त्र-कापाठ बतलाये विनाही, और लघुपर्युषणाके पृष्ठ २७-२८ का लेख-को पूरा विचारे विनाही,'अधिकमासनिर्णय'के दूसरे पृष्ठकी आदिमें आप लिखते होकि'अधिकमहिनेमें विवाह सादी वगेरा कामनहींकि-येजाते, दीक्षा प्रतिष्ठा वगैरा धार्मिक कामभी अधिकमहीनेमें नहीं-कियेजाते, फिर पर्युषणापर्व जैसा उमदापर्व अधिकमहिनेमें कैसे-कियाजाय.' तथा 'पर्युषणापर्व निर्णय' के मुख्यपृष्ठ परभी 'दीक्षा प्रतिष्ठा और दुनियादारीके विवाह सादी वगेराकाम अधिकमहीनेमें नहींकियेजाते,तो फिर पर्युषणापर्व जैसा उमदापर्व कैसेकिया जाय' यह दोनों लेख आपके जिनाज्ञाविरुद्ध उत्सूत्र प्ररूपणारूपहीहैं. यदि मुहूर्त्तवाले दीक्षा प्रतिष्ठा व संसारी विवाह सादीकी तरह पर्युषणा भी आप मानोंगे, तबतो चौमासेमें, तथा १३ महीनों तक सिंहस्थ-वाले वर्षमेंभी पर्युषणा करनाही नहीं बनेगा, मगर शास्त्रोंमें तो चौ मासेमेंही और सिंहस्थवाले वर्षमेंभी वर्षा ऋतुमेंही दिनोंकी गिनती से५०वेंदिन अवश्यही पर्युषणा करनाकहाहै, मुहूर्त्तवाले विवाहसादी वगैरह लौकिक कार्योंके साथ, विना मुहूर्त्तवाले लोकोत्तर पर्युषणाप-र्वका कोईभीसंबंधनहीहै.सिंहस्थ,अधिकमास, क्षयमास,गुरु शुक्रका अस्त,चौमासा,व्यतिपात, भद्रा,और चंद्र व सूर्य ग्रहण वगैरहकोईभी योग पर्युषणा करनेमें बाधक नहीं होसकते, इसलिये आपका उत्सू-त्र प्ररूपणाका और प्रत्यक्ष अयुक्त व मिथ्यालेखको पीछा खींच ली-जिये और मिच्छामिदुक्कडं प्रकट करिये, नहीं तो सभामें सिद्ध क-रनेको तैयार हो जाइये ॥ १ ॥ औरभी आपने 'मानव धर्म संहिता' के पृष्ठ ८०० में लिखाहै कि " अगर अधिकमास गिनतीमें लियाजा-ता हो तो पर्युषणापर्व दूसरे वर्ष श्रावणमें और इसतरह अधिकम

हीनोंके हिसाबसे हमेशां उक्त पर्व फिरते हुए चले जायेंगे जैसे मु-सलमानोंके ताजिये--हर अधिकमासमें बदलतेहैं" यह लेखभी उ-त्सूत्र प्ररूपणारूपहीहै, क्योंकि जिनेंद्रभगवान्ने अधिकमहीना आने-परभी वर्षाऋतुमेंही पर्युषणा करना फरमायाहै, मगर वर्षाऋतुविना माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाखमें शरदी व धूपकालमें पर्युषणा करना नहीं फरमाया, जिसपरभी आप अधिकमहीनाके ३० दिन उडा दे-नेकेलिये मुसलमानोंके ताजियोंके दृष्टांतसे हर अधिक महीनेके हि-साबसे बारांही महीनोंमें [छही ऋतुओंमें] पर्युषणा फिरते हुए च-ले जानेका बतलाते हो, सो किस शास्त्र प्रमाणसे उसकाभी पाठ ब-तलाइये, या अपनी भूलका मिच्छामि दुक्कडं दीजिये, अथवा सभा-में सत्य ठहरनेको तैयार हो जाईये ॥ २ ॥ और भी 'पर्युषणापर्व नि-र्णय' के मुख्यपृष्ठपर 'अधिकमहीना जिसवर्षमें आवे उसवर्षका नाम अभिवर्द्धित संवत्सर कहते हैं और वो अभिवर्द्धित संवत्सर तेरह महीनोंका होता है, मगर अधिक महीना कालपुरुषकी चूला यानी चोटी समान कहा इसलिये उसको चातुर्मासिक- वार्षिक और क-ल्याणिकपर्वके व्रत नियमकी अपेक्षा गिनतीमें नही लियाजाता' तथा 'अधिकमास निर्णय' के प्रथम पृष्ठके अंतमें 'अधिक महीना काल-पुरुषकी चूला यानी चोटीसमानहै, आदमीके शरीरके मापमें चोटी-का माप नहीं गिनाजाता, इसतरह अधिक महीना अच्छे काममें न-हीं लियाजाता' इस लेखसे अधिक मासको केशोंकी चोटी समा-नकहतेहो और गिनतीमें लेना निषेध करते हो सोभी सर्वथा जिना-ज्ञा विरुद्ध है, देखो-चोटी तो १०-२० अंगुल, अथवा १-२ हाथ लंबी-भी होसकतीहै, व नहींभी होतीहै. और शरीरके मापमें चोटीका कु-छभी भाग नहीलियाजाता, इसीतरह यदि अधिकमासभी चोटी स-मान गिनतीमें नही लियाजाता तो फिर उसको गिनतीमें लेकर १३ महीनोंके, २६ पक्षोंके, ३८३ दिनोंका अभिवर्द्धित संवत्सर क्यों कहा? देखिये-जैसे पर्वतोंकेशिखर और घास एकसमाननहीं है तथा मंदि-रोंकेशिखर और ध्वज एक समाननहींहै. तैसेही चूला याने शिखर-और चोटीएकसमाननहींहै इसलियेचोटीकहोंगे तो गिनतीमेंनहीं औ-र गिनतीमे लेवोंगे तो चोटी समाननहीं. चोटीकहोंगे तो अभिवर्द्धि-त संवत्सर कैसे बना सकोंगे ? इसको विचारो, अधिकमासको चो-टी समान कहकर गिनतीमे छोडना किसीभी जैनशास्त्रमें नहीं कहा, निशीथचूर्णि व दशवैकालिक वृत्तिमें कालचूला याने शिखरकहाहै,

और गिनतीमेंभी लियाहै, देखो लघुपर्युषणाके पृष्ठ २५ में. इसलिये शिखरको चोटी कहना और गिनतीमें छोड देना बडी भूल है ॥३॥ इसीतरहसे अधिकमहीनेमें धर्म, ध्यान, व्रत, पच्चखान, तप, जप, चौमासी, पर्युषणा, कल्याणकादि धर्म कार्य निषेध करना ॥ ४ ॥ वर्तमानिक श्रावण, भाद्रपद, आश्विन बढनेपरभी समवायांग सूत्रवृत्तिकारका अभिप्राय को समझे विनाही पीछे ७० दिन ठहरनेका आग्रह करना ॥ ५ ॥ श्रावण-पौष बढनेपर एक महीनेमें कल्याणिक माननेसे दूसरे महीनेको छुटनेका कहकर अधिकमासके ३० दिन उडादेना ॥ ६ ॥ दो आषाढ होनेपर प्रथम आषाढको कालचूला ठहराना ॥ ७ ॥ दूसरे आषाढमें चौमासी करनेसे प्रथम छुट जानेका कहना ॥ ८ ॥ और नवतत्व—षट्द्रव्यके स्वरूपकी तरह चंद्र और अभिवर्धित दोनो वर्षोंका समानही स्वरूपकहा है, तथा दोनोंसेही मास-पक्ष-तिथि वर्ष वगैरहका व्यवहार चलता है, तिसपरभी दिनोंकी गिनतीके विषयमें दिन प्रतिबद्ध पर्युषणाकी चर्चामें विषयांतर करके मास व ऋतु प्रतिबद्ध कार्योंको दिखलाकर अधिकमासके दिन गिनतीमें छोड देना ॥ ९ ॥ अधिकमास आनेसे ५० वें दिन पर्युषणा पर्व करनेको जैनशास्त्र खिलाफ ठहराना॥१०॥और पंचाशकके पूर्वापर संबंधवाले संपूर्ण सामान्य पाठको छोडकर शास्त्रकार महाराजके अभिप्रायको समझेविना थोडासा अधूरा पाठ भोलेजीवोंको दिखलाकर, वीरप्रभुके विशेषतासे आगमोक्त छ कल्याणकोंका निषेध करना ॥ ११ ॥ और सुबोधिकाकी तरह समयसुंदरोपाध्यायजी कृत कल्पलतामें खंडन मंडनका विषय संबंधी कुछभी अधिकार नहींहै. तो भी झूंठा दोष आरोप रखना ॥ १२ ॥ इत्यादि अनेक बातें आपकी दोनों कीताबोंमें शास्त्रविरुद्ध व प्रत्यक्ष मिथ्या और बालजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेवाली भरीहुईहैं, उसका लेख द्वारा या सभामें निर्णय करनेको तैयार हो जाईये, मगर झुंठेको क्या प्रायश्चित देना वगैरह नियम होने चाहिये. वीरनिर्वाण २४४४, विक्रमसंवत्१९७५, वैशाखवदी १२, हस्ताक्षर-मुनि-मणिसागर, लालबाग, मुंबई.

उपर मुजब छपाहुआ विज्ञापन न्यायरत्नजीको पहुंचाया मगर उसमें लिखेप्रमाणे सभामें आकर शास्त्रार्थ करनेका मंजूर नहीं किया तथा इन विज्ञापनमें बतलाई हुई उत्सूत्र प्ररूपणारूप अपनी भूलोंको सुधारनेकाभी प्रकट नहीं किया, और शास्त्रप्रमाणसे साबित करके भी बतला सकेनहीं.सर्वथा मौनकरबैठे तब हमने उनकीहारका विज्ञापन छपवाकर प्रकाशित कियाथा सो नीचे मुजब है :-

विज्ञापन नं० ९

न्यायरत्नजी शांतिविजयजी हार गये !

सत्याग्राही पाठकगणसे निवेदन कियाजाताहै, कि-न्यायरत्नजी शांतिविजयजी को पर्युषणा बाबत सभामें शास्त्रार्थ करनेके लिये मैंने विज्ञापन नं.७ वेंमें सूचना दीथी, उसमें १५ दिनके भीतर शास्त्रार्थ करना मंजूर न करोंगे, तो आपकी हार समझी जावेगी, यह बात खुलासा लिखीथी. और वैशाख शुदी १०को विज्ञापन नं. ७-८ के साथ१ पत्रभी उनको डाक मारफत रजिष्टरी द्वारा'ठाणे' भेजाथा, उसमें १५ दिनकी जगह २० दिनका करार लिखाथा, उसको आज २३दिन होगये, तोभी न्यायरत्नजीने शास्त्रार्थ करना मंजूर नहींकिया और वैशाख शुदी १३ को फिरभी दूसरा पत्र भेजाथा उसमें हमने ठाणेमेंही शास्त्रार्थ करना मंजूर कियाथा. उसकाभी कुछभी उत्तर न मिला और लेखद्वारा शास्त्रार्थ शुरू करनेके लिये प्रतिज्ञापत्र व साक्षी वगैरह नियमभीप्रगटनहींकिये.इससे मालूमहोताहैकि,-न्यायरत्नजीमें न्यायानुसार धर्मवादका शास्त्रार्थकरनेकी सत्यता नहींहै, इसलिये चुप लगाकर बैठेहैं,उससे वो हारगये समझे जातेहैं.पाठकगणको मालूम होनेके लिये दोनों पत्रोंकी नकल यहां बतलाते हैं.

प्रथम पत्रकी नकल " श्रीमान् न्यायरत्नजी शांतिविजयजी विज्ञापन नं० ७-८ भेजता हूं. लघुपर्युषणा निर्णयके सत्य सत्य लेख छोडदिये और मेरेअभिप्रायविरुद्ध उलटा उलटाही लिखमारा,वैसा अब न करना. सबका पूरा उत्तर देना, आजसे १५-२० दिन तकमें वैशाख शुदी १० सोमवार. हस्ताक्षर मुनि—मणिसागर. "

दूसरे पत्रकी नकल "श्रीठाणा मध्ये न्यायरत्नजी शांतिविजयजी योग्य श्रीमुंबईसे मुनि-मणिसागरकी तरफसे सूचना.

१—आप ठाणेमें शास्त्रार्थ करनाचाहते हो तो, हम ठाणे आनेकोभी तैयार हैं. मगर विज्ञापन नं० ६ की ३-४-५ सूचना मुजब नियम मंजूरकरो और कल्पसूत्रकी कौन२ प्राचीनटीका आप मानते हो उत्तर दो, ठाणेकी कोटवालीमें शास्त्रार्थ होगा.

२—शास्त्रार्थ आपका और मेराहै, इसमें मुंबई के सब संघको व आगेवानोंको बीचमें लानेकी कोई जरुरत नहीं है, आप संघको बीचमें लानेका लिखो या कहो यही आपकी कमजोरी है, न सब संघ बीचमें पडे और न हमारी पोल खुले, ऐसी कपटता छोडो.

ताकत हो तो मुंबईकी पोलीश चौकी कोटवालीमें शास्त्रार्थ करनेको आवो, दूरसे कागज काले करके मनमानी आडी२ लंबी चौडी झूठीझूठी बातें लिखकर भोलेजीवोंको भरमानेका काम नहीं करना.

३—दोनोंको सब लेख सिद्ध करके बतलाने पडेंगे.उसमें झूठेको क्या आलोयणा लेनी, सो लिखो. वैशाखशुदी १३."

न्यायरत्नजी आपकी धर्मवाद करनेकी ताकातहोती तो इतने दिन मौनकरके क्यों बैठे, खैर! ! ! जैसी आपकी इच्छा. मगर याद रखना सभामें योग्य नियमानुसार शास्त्रार्थ न करना, और अपने झूठे पक्षकी बात रखनेके लिये वितंडावाद करना या सामने न आकर साक्षि व प्रतिज्ञा विनाही दूरसे कागज काले करते रहना और विपर्यास व कुयुक्तियोंसे उत्सूत्रप्ररूपणाको आपकी दोनों कीताबें सची बनाना चाहो सो कभी नहीं हो सकेगा, किंतु इसके विपाक भवांतरमें अवश्यही भोगनेपडेगे.मरीचि और जमालिसेभी आपका उत्सूत्र बहुत ज्यादे है, आत्महित चाहते हो तो हृदयगम करके प्रायश्चित्त लेवो, उससे श्रेय हो. तथास्तु. सं० १९७१ ज्येष्ठ शुदी २ सोमवार. हस्ताक्षर-मुनि मणिसागर.

इसप्रकार उपरमुजब लेख प्रकटहोनेसे न्यायरत्नजी 'झूठेहैं इसलिये चुप लगाकर बैठे है' इत्यादि बहुत चर्चा होने लगी तब अपनी झूठी इज्जत रखनेकेलिये १ हेंडबील छपवाया उसमें लिखाथा कि, ' सभा हुईनहीं शास्त्रार्थ हुआनहीं फिर हारजीत कैसे होसके ' इसके जवाबमें हमनेभी विज्ञापन १०वा छपवाकर उनके लेखका अच्छीतरहसे खुलासा कियाथा वो लेखभी नीचे मुजबहै :-

विज्ञापन, नंबर १०.

श्रीतपगच्छके न्यायरत्नजी शांतिविजयजीके हारका कारण, और उनकी अधिकमाससे शास्त्रार्थकी जाहिर सूचनाका उत्तर.

१-न्यायरत्नजी लिखतेहैंकि,-'सभाहुईनहीं शास्त्रार्थहुवानहीं फिर हारजीत कैसे होसके'जवाब-आपकी हारका कारण विज्ञापन ७वें में और ९ वें में लिख चुका हुं. उसको पूरेपूरा लिखकर सबका उत्तर क्यों न दिया ? फिरभी देखिये-मैंरे विज्ञापन न. ७ के सब लेखोंका पूरेपूरा उत्तर नियत समयपर आप देसकेनहीं १, विज्ञापन ६ मुजब सभाके नियमभी मंजूर किये नहीं २, आजकल वारंवार मुंबईमें आ-

४ आना जाना करतेहैं, मगर सभा करनेको खडे होते नहीं ३,सभामें सत्यग्रहण करनेकी प्रतिज्ञाभी करते नहीं ४, झूठे पक्षवालेको क्या प्रायश्चित्त देना सो भी स्वीकार करते नहीं ५, और श्रीकच्छीजैन एसोसीयन सभाकी विनतीसेभी सभा करनेको आप आते नहीं ६, और लेखीत व्यहारसेभी शास्त्रार्थ शुरु किया नहीं, ७, इसलिये आपकी हार समजी गई, महाशयजी ! ९ महीनोंसे शास्त्रार्थ करनेके लिये आपसे लिखता हुं, मगर आपतो आडी २ बातें बीचमें लाकर शास्त्रार्थ करनेसे दूरहीभटकतेहैं, फिर हारमें क्या कसररही. जवतक दूसरी आड छोडकर शास्त्रार्थकरनेको सामने न आवोंगे तवतकही आपकी कम जोरी समझी जावेगी.अभीभी अपनी हार आपको स्वीकार न करना हो,तो, थाणा छोडकर आगे पधारना नहीं. शास्त्रार्थ करनेको जलदी पधारो. कंठशोष-सुष्क विवाद व वितंडवादसे कागजकाले करनेकी व कालक्षेप करनेकी और व्यर्थ श्रावकोंके पैसे वरबाद करवानेकी कोई जरूरत नहीं है।

२- " शास्त्रार्थ आपका और मेरा है, इसमें मुंबईके सब संघको व आगेवानोंको बीचमें लानेकी कोई जरूरत नहीं है,आप संघको बीचमें लानेका लिखो या कहो यही आपकी कमजोरीहै, न सब संघ बीचमें पडे और न हमारी [न्यायरत्नजीकी] पोल खुले, ऐसी कपटता छोडो " इसतरहसे विज्ञापन नं० ९ वें के मेरे पूरे सब लेखको आपने छोडदिया और मेरे अभिप्राय विरुद्ध होकर आप लिखतेहैं, कि " शास्त्रार्थ करना और फिर जैन संघकी जरूरत नहीं यह कैसे वन सकेगा " महाशयजी ! यह आपका लिखना सर्वथा अर्थका अनर्थ करनाहै,कौन कहताहै जैन संघकी जरूरत नहींहै, मेरे लेखका अभिप्राय तो सिर्फ इतनाहीहै, कि—मुंबईमें सबगच्छोंका,सब देशोंका, व सब न्यातोंका अलग २ संघ समुदाय होनेसे सब संघ आपके और हमारे शास्त्रार्थके बीचमें पंचरूपसे आगेवान नहीं होसकता, मगर सत्यासत्यकी परीक्षाके इच्छावालोंको सभामें आनेकी मनाई नहीं, सभामें आना व सत्य ग्रहण करना मुंबईके संघको तो क्या मगर अन्यत्रकेभी सब संघको अधिकारहै, और इतनी बडी सभामें हजारों आदमियोंके बीचमें पक्षपाती व अल्प विचार वाले कोईभी किसी तरहका वखेडा खडाकरदेवे,या अपना निजका द्वेषसे आपसमें गडवड करदेवे,तो मुंबईके संघको व आगेवानोंको सुरतके झगडेकी तरह कर्मकथा, धनहानी, शासनहिलना व कुसंप वगैरह-

प्रपंचमें फँसना पडे,इस अभिप्रायसे मैंने मुबईके सब संघको बीच-मे न पडनेका लिखाथा, जिसपर आप "संघको जरूरत नहीं" ऐसा उलटा लिखते हो सो अनुचित है, मुबईके, व अन्यग्रामेंभी सब संघको सभामें आना व शांतिपूर्वक सत्यग्रहण करना, यह खास जरूरत है, इसलिये-सभामें अवश्य पधारना और पक्षपात रहित होकर सत्यग्राही होना चाहिये

३-और आपभी अपनी बनाई 'पर्युषणापर्वनिर्णय'के पृष्ट २२ वें की पंक्ति ४-५-६ में लिखतेहैं, कि-" सभामें वादी प्रतिवादी-सभा-दक्ष-दंडनायक और साक्षी ये पांचवातें होना चाहिये दोनों पक्षवालोंकी रायसे सभा करनेका स्थान और दिन मुकरर करना चाहिये' देखिये-न्यायरतनजी यह आपकेलेख मुजबही हममंजूर करतेहैं, अब आपकोभी अपना यह लेख मंजूर हो तो सभा करना मंजूर करो,आपका और हमारा शास्त्रार्थ कबहोवे, यह देखनेको सारी दुनिया उत्सुक हो रही है जब सभाका दिन मुकरर होगा तब मुंबईके व अन्यजगहकेभी बहुतसे आदमी स्वयं देखनेको आजायेंगे " सभाका २ महिनेका समय होनेसे दशांतरकेभी श्रावक सभाका लाभ ले सकेंगे " यहकथन दादर और बालकेश्वरमें आपहीकाथा, अब आपकेलेख मुजबही साक्षीवगैरहके नाम व अन्य नियमभी मिलकर करनेचाहिये, पहिले विज्ञापनमें मैंभी लिख चुकाहूं

४ आप लिखतेहैं कि "सघका मेरेपर आमंत्रण आवे तो मैं सभामें शास्त्रार्थकेलिये आनेकोतयार हूं" यह आपका लिखना शास्त्रार्थसे भगनेकाहै, क्योंकि पहिले आपही लिखचुके हो कि स्थान और दिन दोनोंमिलकर मुकररकरें,अब संघपर गेरतेहो यहन्यायविरुद्धहै, और पहिले कभी राजा महाराजोंकी सभामें शास्त्रार्थ होताथा,तबभी वादी प्रतिवादीको संघ तरफसे आमंत्रण हो या न हो, मगर अपना पक्षकी सत्यता दिखलानेको स्वयं राजसभामें जातेथे या अपनेपक्षके संघ अपनेविश्वासी गुरुको विनती करताथा, मगर सब संघ दोनोंपक्षवाले विनती कभीनहीं करसकते,इसलिये आपको संघकीविनतीकी आवश्यकतानहींहै, स्वयं आनाचाहिये, या आपके तपगच्छके संघको आपपर पूराभरोसा [विश्वास]होगातो वो विनतीकरेंगे अन्य संघ नहीं करसकते देखो 'आनंदसागरजी बडौदेकी राजसभामें शास्त्रार्थ करनेको तैयारहुएथे, और मुंबईमेंभी शास्त्रार्थकरनेका मंजूर कियाथा तबभीसंघकी विनतीनहीं मागीथी,स्वयं आनेको तैयारहुए

थे.मगर अब शास्त्रार्थ क्यों नहींकरते,सो उनकी आत्मा जाने' इतने-परभी आप संघके आमंत्रणका लिखते हो सो भी 'श्रीकच्छीजैन एसोसीयन सभा' ने सर्व जैनश्वेतांबर मुनिमहाराजोंको सभाकरनेकी विनती की थी, सो आमंत्रण हो ही चुका फिर वारंवार क्या? यदि आप मुनिमंडळमें हैं तवतो आपकोभी आमंत्रण होचुका, यदि आप अपनेको भिन्न समझतेहैं तो संघ आमंत्रणभी कैसे कर सकताहै, मैं पहिलेही लिखचुकाहूं कि 'न सब संघ बीचमें पडे और न न्यायरत्नजीको शास्त्रार्थ करनापडे'ऐसी कपटता क्यों रखतेहो,आपके गच्छवालोंको आपका भरोसा न होवे, तो वे आपको विनती न करें, अथवा आपकी वात सच्ची मालूम न होवे तो मौनकर जावें,इसमें हम क्याकरें. आप अपनापक्ष सच्चा समझतेहोतो शास्त्रार्थको पधारो. आप दूरदूरसे खंडनमंडनका विवाद चलाते हैं, कितावें छपवाते हैं, तवतो संघसे पूछनेकी दरकार रखतेनहींहैं, फिर उसबातका निर्णय करनेकी अपनेमें ताकत न होनेसे संघकी वात बीचमेंलाते हैं, यहभी एक तरहकी कमजोरी व अन्यायकीही वातहै और यह विवाद तो खास करके मुख्यतासे साधुओंकाही है, श्रावकोंका नहीं.श्रावक तो साधुओंके कहने मुजब पर्युषणापर्वका आराधन करनेवाले हैं,इसलिये साधुओंकोही मिलकर इसका निर्णय करना चाहिये.

५-पहिले राजा महाराजाओंकी सभामें शास्त्रार्थ होताथा और अभीके भारतकेमहाराज लंडनमें हजारों कोशवहुतदुरहैं,उनकी आज्ञाकारिणी और प्रजापालीनी कोर्ट व कोतवाली है, इसलिये वहां सभामें किसी तरहका वखेडा न होनेके लिये और शांतिसे पक्षपात रहित पूरा न्याय होनेके लिये विद्वानोंकी साक्षीपूर्वक शास्त्रार्थ होनेमें कोई तरहकाभी हरजा नहींहै.यह तो जगतप्रसिद्धही वातहै,कि अदालतमें जो न्यायालय है,उसमें सुलह शांतिसे पूरा न्याय मिलताहै इसलिये न्यायाधीशके समक्ष इन्साफ मिलनेके लिये शास्त्रार्थ करनेका हमने लिखा सो न्याय युक्तही है. देखो-पंजाबमें जैनियोंके और-आर्यसमाजियोंके अदालतमेंही शास्त्रार्थ हुआथा उससेही जैनियोंको पूरा न्याय मिला, विजय हुईथी.उसीतरह न्यायसे धर्मवाद करनेको वहां हम वहुत खुशीसे तैयार हैं, अब आपभी जलदी पधारो, हम तो सिर्फ न्यायसे इन्साफ चाहते हैं. वहांभी वहुत आदमी देखनेको आसकते हैं, सच्चेको भय नहीं रहता झूठेको भय रहता है.इसलिये वो बीचमें आडी२ वातोंसे झूठे२ वहाने वतलाकर किसी तरह-

सेभी अपनी इज्जतका बचावकरके शास्त्रार्थकरनेसे भगने चाहताहै।

६- आपकी इच्छा धर्म स्थानमेंही सभा करनेकी हो तो भी हम तैयार हैं, देखो- आपकेही गच्छके आपके बडील आचार्य आनंद सागरजीजोअभी मुंबईमें श्रीगोडीजीकेउपाश्रयमेंहै,उनके व्याख्यानमें हजारों आदमियोंकीसभाभरातीहै, वहां आपका और हमारा शास्त्रार्थहोतोभी हमेंमंजूरहै,मगर ऊपर लिखेमुजबनियमानुसार होनाचाहिये. अथवा मुंबईमें अन्य स्थानभी बहुतहै, जहां आप लिखे वहांही सही. वालकेश्वरमें हमारे गुरुजी महाराजके पास २-३ श्रावकोंके समक्ष आपने कहाथा, कि- आनंदसागरजी शास्त्रार्थ करेंगे, तो मैं साक्षीरहूंगा औरयदि मैं शास्त्रार्थ करूंगातो आनंदसागरजीको साक्षी बनाऊंगा सो वह योगभी आपके बन गया है, अब अपनी प्रतिज्ञासे आपको बदलना उचित नहींहै,और सभादक्ष-दंडनायक वगैरह नियमभी मिलकर जलदी करोयेगा.

७- और आप लिखतेहैं, कि " पर्युषणापर्व निर्णय,छपनेको नव महीने होगये दरेक बयानका पूरेपूरा उत्तर दीजिये" जवाब-महाशयजी श्रावकोंके विशेष पैसे खर्च न होनेके लिये व किताबें छपवानेसे बहुत वर्षोतक खंडन मंडनका प्रपंच नहीं चलानेके लियेही आपकी किताबोंका उत्तर सभामें देनेका विचार रक्खा है,सो प्रथम विज्ञापनमें लिखभी चुका हूं. इसलिये ९ महीनेका लिखना आपका अनुचितहै. और श्रीमान् पन्यासजी केशरमुनिजीके बनाये ' प्रश्नोत्तर विचार " और ' हर्षहृदयदर्पण'का दूसरा भागके पर्युषणासंबंधी लेख, व 'प्रश्नोत्तर मंजूरी'के तीन (३) भागके ४००-५०० पृष्ट छपेको आज ४ वर्ष ऊपर हो चुका है,उनकी प्रत्येक बातका उत्तर आजतक आप कुछभी नहींदेसकते, तो फिर ९ महीने किस हिसाबमें हैं,और मेरे लघुपर्युषणा निर्णयके सब लेखोंकाभी पूरा उत्तर ११ महीने हो गये तो भी आजतक आप न दे सके, बल्कि सत्य सत्य लेखोंके पृष्ठकेपृष्ठ और पंक्तियेंकी पंक्तियें छोडकर अधूरा२लेख लिखकर उलटा२ ही जवाब देतेहैं, यह जवाब नहीं कहा जा सकता,सत्यता तभी मानी जा सकेगा कि पूरे पूरा लेख लिखकर अभिप्राय मुजब बरोबर उत्तर दिया जावे, सो तो आपने अपनी दोनों किताबोंमें कहींभी नहीं किया,और उलट पुलट झूठाझूठाही लिख दिखलायाहै, सो यह युक्तहै है सत्यको कौन असत्य बना सकताहै।मगर कुकियोंसे बात को अपनी तरफ खींचना अलग बात है। देखिये हमने तो आपकी

हटको छोडाभी नहीं. यह कितना वडा भारी अभिनिवेशिक मिथ्या-त्वका आग्रह कहाजावे सो दीर्घदर्शीतत्त्वज्ञ जनस्वयंविचार सकतेहैं.

औरभी न्यायरत्नजीने एक हँडबील तथा 'अधिकमासदर्पण' नामा छोटीसी एक किताब छपवाया, उनमेंभी विज्ञापन ७ वेंमें जो हमने उनकी १२ भूलें बतलायीथी, उन सब भूलोंका अनुक्रमसे पूरे पूराखुलासाकरनेके बदले १भूलकाभी पूरेपुरा खुलासा करसके नहीं और मास वृद्धिके अभावसे पर्युषणाके बाद ७० दिन रहनेका व दू-सरेआषाढमें चौमासी कार्य करनेका तथा श्रावण-पौषसंबंधी कल्या-णक तप वगैरह सब बातोंका स्पष्ट खुलासापूर्वक निर्णय 'लघुपर्यु-षणा'में और सातवे विज्ञापनमें अच्छीतरहसे हमबतला चुकेहैं, तो-भी उन्ही बातोंको बालहटकी तरह वारंवार लिखे करना और स्था-नांगसूत्रवृत्ति, निशीथचूर्णि, कल्पसूत्रकी टीकायें आदि बहुत शास्त्रों-मे मास बढे तब पर्युषणाके बाद १०० दिन ठहरनेका कहा है, तथा अधिक महीनेके ३० दिन गिनतीमें लिये हैं, इसलिये अधिक महीना होवे तब ७० दिनकी जगह १०० दिन होवें उसमे कोई दोष नहीं है. मगर पर्युषणापर्व किये विना ५०वें दिनको उल्लंघन करें तो जिनाज्ञा भंगका दोष कहाहै,इसीलिये ५०दिनकी जगह ८०दिनतो क्या परंतु ५१ दिनभी कभी नहीं होसकते इत्यादि बहुत सत्य २ बातोंको उडा-देनेका उद्यम किया सो सर्वथाअनुचितहै,इनसब बातोंका विशेषनि-र्णय ऊपरके भूमिकाके लेखमें और इन ग्रंथमें विस्तार पूर्वक शास्त्रों-के प्रमाणोंसहित अच्छी तरहसे खुलासासे छपचुका है, इसलिये यहांपर फिरसे लिखनेकी कोई आवश्यकता नहींहै, पाठक गण ऊप-रके लेखसे सब समझ लेंगे।

अब हम यहां पर 'खरतरगच्छ समीक्षा' के विषयमें थोडासा लिखतेहैं,न्यायरत्नजी'खरतरगच्छ समीक्षा' नामा किताब छपवा-ने संबंधी वारंवार जाहेर खबर लिखतेहैं, यह किताब आज लगभ-ग १२—१३ वर्षहुए उनोंने बनायाहै, जब हम संवत् १९६५ को श्री-अंतरिक्ष पार्श्वनाथजी महाराजकीयात्रा करनेकेलिये बराड देशमें गये थे, तब बालापुरमें न्यायरत्नजी हमकोमिलेथे, उससमय उस किता-बकी कॉपी उन्होंनेहीखास मेरेको बंचायाथा,तब मैने उस किताबपर महानिशीथ वगैरह कितनेही शास्त्रोंका प्रमाण मांगा, तब न्यायरत्न-जी बोले अभीमेरे पास महानिशीथसूत्र वगैरह शास्त्र यहांपर मौजुद नहींहै, फिर कभी आनेदेखाजावेगा,ऐसा कहकर उस समय बातको

डाल दिया. अब वोही किताब छपवाना चाहतेहैं, उस किताबमें सामायिक—कल्याणक–पर्युषणा–अभयदेवसूरिजी-तिथि वगैरह वातोंसंबंधी शास्त्रानुसार सत्य २ वातोंको झूठी ठहरानेके लिये शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे २ पाठ लिखकर उन पाठोंके अपनी कल्पना मुजब जान वुझकर खोटे खोटे अर्थ करके कुयुक्तियोंसे उत्सूत्र प्ररूपणारूप और प्रत्यक्ष मिथ्या बहुतजगह लिखाहै, उसका थोडासा नमूना पाठकगणको यहांपर बतलाते हैं, जिसमें प्रथम सामायिक संबंधी लिखतेहैं :–

१ – श्रावकके सामायिक करनेकी विधि संबंधी सर्व शास्त्रोंमें पहिले करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका लिखाहै, देखो–श्रीजिनदासगणिमहत्तराचार्यजी कृत आवश्यक सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीहरिभद्रसूरिजीकृत बृहद्वृत्तिमें २, तिलकाचार्यजी कृत लघुवृत्तिमें ३, देवगुप्तसूरिजी कृत नवपदप्रकरण वृत्तिमें ४, लक्ष्मीतिलकसूरिजी कृत श्रावकधर्म प्रकरण वृत्तिमें ५, श्रीनवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी कृत पंचाशक सूत्रकी वृत्तिमें ६, विजयसिंहाचार्यजीकृत वंदीतासूत्रकीचूर्णिमें ७, हेमचंद्राचार्यजी कृत योगशास्त्र वृत्तिमें, ८, तपगच्छीय देवेंद्रसूरिजी कृत श्राद्धदिनकृत्यसूत्रकीवृत्तिमें ९, कुलमंडनसूरिजी कृत विचारामृत संग्रहमें १०, मानविजयजी कृत धर्मसंग्रह वृत्तिमें ११, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें खास तपगच्छादि सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंने प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका बतलायाहै.

२ – श्रीमान् देवेंद्रसूरिजी कृत श्राद्धदिनकृत्य सूत्रवृत्तिका पाठ यहां पर बतलाताहूं. सो देखिये :—

"श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं, ततोऽसौ साधुसमीपे गत्वा किं करोति इत्याह–साधुसाक्षिकं पुनः सामायिकंकृत्वा इर्याप्रतिक्रम्यागमनमालोचयेत् । तत आचार्यादीन् वंदित्वा स्वाध्यायं कालेचावश्यकं करोति" इत्यादि

इस पाठमें गुरुपास जाकर करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीकरके आचार्यादिकोंको वंदनाकरके स्वाध्यायकरना बतलायाहै और पीछे अवसर आवे तब छ आवश्यक रूप प्रतिक्रमण करनेकाभी बतलाया है ।

३— श्रीहीरविजयसूरिजीके संतानीय श्रीमानविजयोपाध्यायजीकृत धर्मसंग्रह वृत्तिका पाठभी देखो:—

" साध्वाश्रयंगतया साधूनमस्कृत्य सामायिकं करोति, तत्सूत्र यथा - ' करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं,मणेणं वायाए कायएणं,न करेमि न कारवेमि, तस्स भंते पडिक्कमामि, निंदामि,गरिहामि,अप्पाणं वो सिरामि ' त्ति, एवं कृतसामायिक ईर्यापथिक्याप्रतिक्रामति, पश्चा दागमनमालोच्य यथा ज्येष्ठमाचार्यादीन्वंदते, पुनरपि गुरु वंदित्वा प्रत्युपेक्षितासने निविष्टः शृणोति पठति पृच्छति वा " इत्यादि

इसपाठमेंभी उपाश्रयमें जाकर साधुमहाराजको वंदना करके पहिले करेमिभंतेका पाठ उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावहीकर के अनुक्रमसे बडील आचार्यादिकोंको वंदनाकर फिर शास्त्र सुने, वांचे या धर्म चर्चाकी बातें गुरुसे पूछता रहे ऐसा खुलासा लिखाहै

४- श्री रत्नशेखरसूरिजीकृत श्रावक धर्म प्रकरण वृत्तिका पाठभी यहांपर बतलाताहूं, सो देखो —

" चैत्यालये विधि चैत्ये, स्वनिश्राने स्वगृहे, साधुसमिपे, पौषोधानादीना धियते अस्मिन्निति पौषध पर्वानुष्ठान, उपलक्षणतया सर्व धर्मानुष्ठानार्थं शालागृहं पौषधशाला तत्र वा, तत्र सामायिक कार्यं श्राद्धैः सदा नोभयसरूपमेवेत्यर्थः । कथं तद्विधिना इत्याह- ' खमासमण दाउ, इच्छाकारेण संदिस्सह भगवन् सामाइय मुहप त्ति पडिलेहेमित्ति भणिय, बीयखमासणपुव्व सामाइय ठाविसि,पुणु खमासमण दाणपुव्व अध्धावणओ पंच मगळ कड्डिता ' करेमिभ ते सामाइयं'इच्चाइ सामाइय सुत्तभणइ,पच्छा इरियपडिक्कमइ,इत्यादि

देखिये—इस प्राचीन पाठमेंभी मंदिरमें, अपने गृहमें, साधुपा स उपाश्रयमें, अथवा पौषधशालामें, जब संसारिक कार्योंसे निवृत्ति होवे तब किसीभी समयमें सामायिक करनेका बतलाया है, सो प हिले खमासणसे आज्ञा लेकर सामायिक मुहपत्तिकापडिलेहण करके फिरभी दो खमासमणसे सामायिक संदिसाहणेका तथा सामायिक ठाणेका आदेशलेकर विनयसहित करेमिभंतेका पाठ उच्चारण करके पीछेसे इरियावही करनेका खुलासापूर्वक स्पष्ट बतलाया है ।

५- इसीही तरहसे श्री हरिभद्रसूरिजीने आवश्यकबृहद्वृत्तिमें, श्रीनवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजीने पंचाशकवृत्तिमें, श्रीहेमचंद्रा चार्यजीने योगशास्त्रवृत्तिमें इत्यादि अनेक प्रभावक प्राचीन आचार्यों ने अनेक शास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछे इरि यावही करनेका खुलासा पूर्वक स्पष्ट बतलाया है ।

६- " पयमक्खरंपि इकं, जो न रोएइ सुत्तनिद्दिठ्ठं । सेसं रोअंतो वि हु, मिच्छादिठ्ठी जमालिव्व ॥१॥" इत्यादि शास्त्रीय प्रमाणके इस वाक्यसे सर्वशास्त्रोंकी बातोंपर श्रद्धा रखनेवालाभी यदि शास्त्रोंके एक पद या अक्षरमात्रपरभी अश्रद्धाकरे, तो उसको जमालिकीतरह मिथ्या दृष्टि समझना चाहिये। अब इस जगह श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सज्जनोंको विचार करना चाहिये, कि—श्रीहरिभद्रसूरिजी, नवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी, हेमचंद्राचार्यजी, लक्ष्मीतिलकसूरिजी, देवेंद्रसूरिजी, वगैरह महापुरुषोंके कथन मुजब आवश्यक वृहद्वृत्ति वगैरह प्रामाणिक व प्राचीन शास्त्रोंके पाठोंसे श्रावकके सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करने संबंधी जिनाज्ञानुसार सत्य बातपर श्रद्धा नहीं रखने वाले, तथा इस सत्य बातकी प्ररूपणाभी नहीं करनेवाले, और उसमुजब श्रावकोंकोभीनहीं करवानेवाले, व इससे सर्वथाविपरीत प्रथमइरियावही पीछे करेमिभंते करवानेका आग्रह करनेवालोंको ऊपरके शास्त्रवाक्य मुजब जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सम्यग्दृष्टि कैसे कहसकतेहैं, सो आपने गच्छके पक्षपातका दृष्टिरागको और परंपराके आग्रहको छोडकर तत्व दृष्टिसे सत्यशोधक पाठकगणको खूब विचार करना चाहिये।

७- ऊपर मुजब सत्यबातको न्यायरत्नजीनें 'खरतर गच्छ समीक्षा'में सर्वथा उडादियाहै, और इनसत्य बातकेसर्वथा विरुद्ध होकर सामायिक करनेमें प्रथम इरियावही किये बाद पीछेसे करेमिभंतेका उच्चारणकरनेका ठहरानेके लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके संबंधवाले पाठोंको छोडकर विना संबंधवाले अधूरे २ (थोडे २) पाठ लिखकर अपनी मति कल्पना मुजब खोटे २ अर्थ करके व्यर्थही उत्सूत्रप्ररूपणासे उन्मार्गको पुष्ट किया है, उसकाभी यहां पर पाठकगणको निसंदेह होनेकेलिये प्रत्यक्ष प्रमाणसे थोडासा नमूना बतलाता हूं:-

८- श्रीमहानिशीथसूत्रके तीसरे अध्ययनमें उपधान करने संबंधी चैत्यवंदन करनेकेलिये जो पाठहै, सो पहिले दिखलाताहूं, यथा-

" असुहकम्मक्खयठ्ठा, किंचि आयहियं चिइवंदणाई अणूठ्ठिज्जा, तयाऽत्थयठ्ठे चेव उवउत्ते से भवेज्जा, जयाणं से तयठ्ठे उवउत्ते भवेज्जा, तया तस्सणं परमेगग्गचित्त समाही हवेज्जा, तयाचेव सव्वजगजीवपाणभूयसत्ताणं जहिठ्ठफलसंपत्ती भवेज्जा, ता गोयमा णं अपडिक्कंताए इरियावहियाए नकप्पइ चेवकाउं किंचिइचंदणं सज्झायज्झाणाइयंकाउं; इठ्ठफलासायमभिकंखुगाणं, एएणं अठ्ठेणं गोय-

मा एवं वुचई,जहाणं समुत्तत्थोभयं पंचमंगलं थिरपरिचियं काउणं तओ इरियावहियं अहीए त्ति. से भयवं कयराए विहिए तं इरिया· वहीयाए अहीए गोयमा जहाणं पंचमंगलं महासुयखंध. से भयवं· इरियावहीयमहिझित्ताणं, तओ किमहिझे गोयमा सक्कत्थयाइयं चे· इयवंदणं विहाणं, णवरं. सक्कत्थयं एगट्ठम बत्तीसाए आयंबिलेहिं इत्यादि "

इसपाठमें अशुभकर्मोंके क्षयके लिये तथा अपनी आत्माको हित· कारी होवे वैसे चैत्यवंदनादि करने चाहिये, इसमें उपयोगयुक्त हो· नेसे उत्कृष्टचित्तकी समाधी होती है, इसलिये गमनागमनकी आलो· चनारूप इरियावही किये विना चैत्यवंदन,स्वाध्याय,ध्यानादिकरना नहीं कल्पता है. अतएव चैत्यवंदनकरनेके लिये पहिले पंचपरमेष्ठि नवकारमंत्रके उपधान वहनकरने चाहिये उसके बाद इरियावही, नमुत्थुणं, अरिहंत चेइयाणं वगैरहके आयंबिल उपवासादि पूर्वक उपधान वहन करने चाहिये.

९ — देखिये ऊपरके पाठमें उपधान वहन करनेके अधिकार में विधिसहित उपयोगयुक्त चैत्यवंदन-स्वाध्याय-ध्यानादिकार्यकरने संबंधी पहिले इरियावही करके पीछेसे चैत्यवंदनादिकरें,ऐसा खु· लासासे बतलाया है. इसलिये ऊपरका पाठ पौषधग्राही उपधान वहन करनेवालों संबंधीहै, और पौषध(पौषह) करनेवालोंको तो इरियावही कियेबिना चैत्यवंदन, स्वाध्याय-पढना गुणना, तथा ध्या· नादि नोकरवालीफेरना वगैरह धर्मकार्यकरना नहींकल्पताहै, इसलि· ये यहबात तो अभीवर्तमानमेंभी सर्वगच्छवाले उसी मुजब करतेहैं. मगर इस पाठमें सामायिकके अधिकारमें, प्रथम इरियावही किये बाद पीछेसे करेमिभंतेका उच्चारणकरने संबंधी कुछभी अधिकारका गंधभी नहींहै जिसपरभीसूत्रकारमहाराजोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर आगे पीछेके उपधानके संबंधवाले संपूर्णपाठको छोडकर बीचमेंसें थोडासा अधूरापाठ लिखकर उसकाभी अपना मनमाना अर्थकरके सामायिककरने संबंधी प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहराना. सो ऊपर मुजब आवश्यक चूर्णि वगैरह अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध होनेसे सर्वथा उत्सूत्रप्ररूपणारूपही है।

१० – श्रीदशवैकालिकसूत्रकी दूसरीचूलिकाकी ७ वी गाथा· की टीकामें साधुके गमनागमनादि कारणसें इरियावही करनेका कहा है, सो पाठभी यहांपर बतलाता हूं. देखो :—

"अभीक्ष्णं, पुनः पुनः पुष्टकारणाभावे, निर्विकृतिकश्च, निर्गत विकृतिपरिभोगश्च भवेत् । अनेनपरिभोगोचित्तविकृत्तिनामप्यकारणे प्रतिषेधमाह. तथा अभीक्ष्णं, गमनागमनादिषु, विकृति परिभोगेऽपि चान्ये किमित्याह–कायोत्सर्गकारीभवेत्, ईर्यापथिकीप्रतिक्रमणमकृत्वा न किंचिदन्यत् कुर्यादशुद्धतापत्तेरितिभावः। तथा स्वाध्यायोगे,वाचनाद्युपचार व्यापार आचामाम्लादौ पयतोऽतिशय यत्नपरो भवेत्तथैव तस्य फलवत्त्वाद्विपर्यय उन्मादादि दोष प्रसंगादिति"

ऊपरके पाठमें साधुओंके उपदेशके अधिकारमें–दुध-दही-घी-शक्कर-पक्वान् वगैरह विगयोंका त्याग करनेका बतलायाहै,तथा आहार पानी–देव दर्शन या ठले– मात्रे वगैरह गमनागमनादि कार्योंसे इरियावही किये विना कायोत्सर्गकरना,स्वाध्याय-सूत्रपाठपढना गुणना, ध्यानादि करना नहीं कल्पे, इस लिये पहिले इरियावही करके पीछे सूत्र वाचनादि कार्योंमें प्रवृत्ति करें, इत्यादि.

११ — इस ऊपरके पाठमेंभी साधुओंके गमनागमनादिकारणसे व स्वाध्यायादि करनेकेलिये इरियावहीकरनेका बतलाया है, मगर श्रावकके सामायिक करनेसंबंधी प्रथम इरियावहीकरके पीछे करेमि भंते उच्चारण करनेका नहीं बतलायाहै,जिसपरभी पंचमहाव्रतधारी सर्व विरति साधुओंके इरियावहीके पाठका आगे पीछेका संबंध छोड कर अधूरे पाठसे सामायिकका अर्थ करना बडी भूल है.

१२– इसी तरहसे किसी जगह पौषधसंबंधी इरियावहीके, किसी जगह उपधानसंबंधी इरियावहीके, किसीजगह साधुओंके गमनागमन संबंधी इरियावहीके,किसी जगह प्रतिक्रमण संबंधी इरिया वहीके, किसीजगह चैत्यवंदन– स्वाध्याय–ध्यानसंबंधी इरियावहीके अक्षरोंको देखकर, उन जगहके प्रसंगसंबंधी शास्त्रकारोंके अभिप्रायकोसमझेविनाही अथवा तो अपना झूठा आग्रह स्थापन करनेके लिये आवश्यक चूर्णि–बृहद्वृत्ति–लघुवृत्ति–श्रावकधर्मप्रकरणवृत्ति वगैरह अनेकशास्त्रपाठोंकेविरुद्धहोकर पौषधादिसंबंधी इरियावहीको सामायिकमें जोडकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेके पाठका उच्चारण करनेका ठहराना सो सर्वथा प्रकारसे अज्ञानतासे या जानःबुझकरके उत्सूत्रप्ररूपणारूपही मालूम होता है.

देखिये— सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवालोंको अनेक दोषोंकी प्राप्ति होतीहै, सोही दिखाताहूं :-

१३ – जैनाचार्योंकी शास्त्ररचना अविसंवादी पूर्वापर विरोध

रहित होती है, तथा पूर्वापर विरोधी विसंवादीको शास्त्रोंमें मिथ्या-त्वी कहा है, और श्री हरिभद्रसूरिजी महाराजने आवश्यक बृहद्वृत्तिमें तथा श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्तिमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका साफ खुलासा लिखाहै, और महानिशीथ सूत्रका उद्धारभी इन्हीं महाराजने किया है, इसलिये महानिशीथ सूत्रके पाठसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेमें आवे, तो श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजको विसंवादी कथनरूप मिथ्यात्वके दोष आनेकी आपत्ति आतीहै, इसलिये आवश्यक वृत्ति आदिके विरुद्ध होकर इन्हीं महाराजके नामसे महानिशीथसूत्रके पाठसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनासो पूर्वापर विसंवाद-रूप मिथ्यात्वका कारण होनेसे सर्वथा अनुचित है।

१४- महानिशीथसूत्रके पाठसे 'इरियावही किये विना कुछभी धर्म कार्य नहीं कल्पे,' इसलिये सर्व धर्मकार्य इरियावही करके ही करने चाहिये, ऐसा एकांत आग्रह करोगे तो भी नहीं बन सकेगा, क्योंकि देखो-देव दर्शनको या गुरु वंदनको जाती वख्त १, जिनप्रतिमाको या गुरुको देखतेही नमस्काररूप वंदना करती वख्त २, तीर्थयात्राको जाती वख्त ३, नवकारसी,पोरसी, उपवासादि पच्चख्खाण करती वख्त ४, मंदिरमें जघन्य चैत्यवंदन करती वख्त ५, गुरुमहाराजको आहारवस्त्रादि वहोराती वख्त६,इत्यादि अनेक धर्मकार्य इरियावही कियेविनाभी प्रत्यक्षपने करनेमें आते हैं, इसलिये इरियावही किये बिना कुछभी धर्मकार्य नहीं करना, ऐसा एकांत आग्रह करना सो सर्वथा विवेक बिनाकाही मालूम होताहै,इसलिये कौनर कार्योंमें पहिले इरियावही करना, कौन २ कार्योंमें पीछेसे इरियावही करना, व कौन २ कार्य इरियावही किये बिनाभी हो सकतेहैं, इन बातोंका गुरुगम्यतासे भेद समझे बिना सामायिकमें प्रथम इरियावही करनेका एकांत आग्रह करना सो अज्ञानतासे सर्वथा शास्त्र विरुद्धहै.

१५-औरभीदेखिये-स्वाध्याय,ध्यानादिमें प्रथम इरियावही करनाकहाहै,उसमें आदि पदसे सामायिकमेंभी प्रथम इरियावही करनेका आग्रहकियाजावे, तोभी सर्वथाअनुचितहै,क्योंकि,देखो-श्रीखरतरगच्छनायक श्रीनवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी, तथा कलिकाल सर्वज्ञ बिरुद धारक श्रीहेमचंद्राचार्यजी और खास तपगच्छनायक श्रीदेवेंद्रसूरिजीआदि पूर्वाचार्योंने महानिशीथसूत्र अवश्यही देखाथा तथा स्वाध्यायध्यान आदिपदका अर्थभी अच्छीतरहसे जाननेवालेथे

तोभी सामायिकमें प्रथम इरियावही करनेका नहीं कहते हुए अपने २ बनाये ग्रंथोंमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेकाखुलासा लिखगयेहैं, उसका भावार्थ समझेविनाही उन महाराजोंके विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करतेहैं, सो उन महाराजोंके वचन उत्थापनरूप और उन महाराजोंके विरुद्ध प्ररूपणा करनेरूप दोषके भागी होते हैं।

१६- दशवैकालिकसूत्रकी टीकाके पाठसेभी 'इरियावही किये विना कोईभी कार्यकरें तो अशुद्ध होताहै', इस बात परसे सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करतेहैं सो भी बडीही भूलहै, क्योंकि यह तो जैनसमाजमें प्रसिद्धही बात है, कि-दशवैकालिकमूलसूत्रमें और उसकी टीकामें सर्वजगह साधुओंके आचार-विचार-कर्तव्य संबंधीही अधिकार है, उसमें किसी जगहभी श्रावकके सामायिक वगैरह कार्योंसंबंधी कुछभी अधिकारनहींहै, इसलिये साधुओंके गमनागमनसे जाने आनेसे इरियावही करके पीछे स्वाध्याय, ध्यानादिधर्म कार्य करने बतलाये हैं, उसके आगे पीछेके संबंधवाले पाठको छोडकर अधूरे पाठसे सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करना सर्वथा अनुचित है.

१७- श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजनें'आवश्यकसूत्र'की बडी टीकामें तथा श्री उमास्वातिवाचक विरचित 'श्रावकप्रज्ञप्ति' की टीकामेंभी सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही कहना खुलासा लिखा है, और इन्ही महाराजनें श्रीदशवैकालिकसूत्रकी टीकाभी बनाया है, इसलिये इन्हीं महाराजके नामसे दशवैकालिकसूत्रकीटीकाके पाठसे प्रथम इरियावही स्थापन करनेसे इन महाराजके कथनमें पूर्वापर विरोधभाव विसंवादरूप दोषकी प्राप्ति होतीहै,इसलिये इनमहाराज के अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे पाठसे सामायिक संबंधी खोटा अर्थ करके विसंवादका झूठा दोष लगाना बडी भूल है. यह महाराजतो विसंवादी नहीं थे. मगर संबंध विरुद्ध आग्रह करनेवालेही प्रत्यक्ष मिथ्या भाषणसे बालजीवोंको उन्मार्गमें गेरनेके दोषी ठहरतेहैं.

१८ - श्रीदेवेंद्रसूरिजी महाराजने 'श्राद्धदिनकृत्य'सूत्रकीवृत्तिमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासा लिखाहै, तथा धर्मरत्न प्रकरणकी वृत्तिमें तो-वाचना,पृच्छना, परावर्तना, अनुप्रेक्षा व धर्मकथारूप पांचप्रकारकीस्वाध्यायकरने संबंधी अधिकारमें सिर्फ परावर्तनारूप (शास्त्रपाठ पढे हुए फिरसे याद करने रूप)स्वाध्याय करनेके

लिये इरियावही करनेका बतलायाहै,उसका आशय समझे विनाही अपने गच्छके पूर्वज आचार्य महाराजकोभी विसंवादरूप मिथ्यात्वका दोष लगानेका भय नहीं करते हुए सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करते हैं, सो भी बडी भूल करते हैं.

१९ – औरभी देखो धर्मरत्नप्रकरण वृत्तिमें "इरियं तु पडिकंतो कड समइयं " इरियावही पूर्वक स्वाध्याय करें; ऐसा पाठ है,उसमें ' समइय ' शब्दकीजगह ' सामाइय ' शब्द बनाकर दो मात्राज्यादे अधिक पाठमें प्रक्षेपन करके स्वाध्यायकी जगह सामायिकका अर्थ बदलातेहैं सो यहभी सर्वथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणारूप बडीभूलहै.

२०– श्रीधर्मघोषसूरिजीने 'संघाचारभाष्यवृत्ति'में चैत्यवंदन संबंधी दशत्रिकके अधिकारमें सातवी त्रिकमें तीनवार भूमिप्रमार्जन करके इरियावहीपूर्वक-चैत्यवंदन करनेका बतलाया है, उसकेभी पूर्वापरका संबंध छोडकर उसपाठका भावार्थ समझे विना उसपाठसे भी सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरते हैं, और इन महाराजकेही गुरु महाराज श्रीदेवेंद्रसूरिजीने प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही लिखा है, उस बातके विरुद्ध प्ररूपणाकरनेवाले बनाते हैं, सो भी बडी भूल है.

२१-वंदीत्तासूत्रकीटीकाके पाठसेभीसामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते ठहरानेहैं,सोभी सर्वथाअनुचितहै,क्योंकि देखो-वंदीत्तासूत्रकी प्राचीन चूर्णि और श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्ति वगैरह अनेकप्राचीन शास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका खुलासा लिखा है और खास वंदीत्तासूत्रकी टीकामेंभी नवमा सामायिक व्रतकी विधिसंबंधी आवश्यकचूर्णि,पंचाशकचूर्णि,योग शास्त्रवृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार सामायिककरनेकी विधि लिखीहै, उन्हीं सर्व शास्त्रोंमें भी प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही लिखीहै, इसलिये प्राचीन चूर्णि आदिअनेक शास्त्रोंके विरुद्ध होकर पूर्वापर विसंवादीरूप वि विरोधी कथन — एकही विषयमें ; एकही ग्रंथमें ; कभी नहीं होसकताहै, जिसपरभी एकही विषयमें, एकही ग्रथमें विसंवादी कथन माननेवाले या कहनेवाले शास्त्रविरुद्ध श्रद्धा रखनेवाले सर्वथा अज्ञानी समझने चाहिये.

२२– पंचाशकसूत्रकी चूर्णिके पाठसेभी नवमें सामायिक व्रतमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका स्थापन करते हैं,सो भी सर्वथा अनुचितहै,क्योंकि इन्हीं चूर्णिमें नवमें सामायिकव्रत संबंधी प्रथम

करेमिभंतेपीछे इरियावहीकरनेकाखुलासालिखाहै,जिसपरभीचूर्णिके लिखे सत्य पाठको छुपा देना, और चूर्णिकारने रात्रिपौषध वालोंके लिये ११ वा पौषधव्रत संबंधी इरियावही लिखी है, उसको चूर्णिकारके अभिप्राय विरुद्ध होकर ९ वें सामायिक व्रतमें भोले जीवोंको दिखलाना,सो मायावृत्तिरूपप्रपंचसे प्रत्यक्षझूठबोलकर शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करना संसारवृद्धिका कारण होनेसे आत्मार्थियोंको कदापि योग्यनहींहै.यहांपर लडकोंके खेल जैसी प्रपंचताकी बातें नहीं हैं, किंतु सर्वज्ञ शासनकी बातें हैं,इसलिये एकही ग्रंथमें,एकही विषयमें, एकही पूर्वाचार्यको पूर्वापर विरोधी विसंवादी कथन करनेवाले ठहराना, सो बडी अज्ञानताहै.अथवा जान बुझकर पूर्वाचार्योंकी आशातनाका और शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणाका भय न रखकर इस लोककी पूजा मानताकेलिये अपना झूठा आग्रह स्थापन करनेकेलिये व्यर्थही एसी शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते होंगे, सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने. हम इस बातमें विशेष कुछभी नहीं कहसकते हैं।

२३-इसीतरहसे सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कहनेका स्थापनकरनेवाले न्यायरत्नजीआदिको पूर्वाचार्योंको विसंवादीके झूठे दोपलगानेके हेतूभूत तथा अनेक शास्त्रोंके विरुद्धप्ररूपणा करनेरूप अनेक दोषोंके भागी होनापडता है,और पूर्वाचार्योंको झूठा दोष लगानेकी आशातनासे तथा शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्धप्ररूपणा करनेसे आपने व अपने पक्षके आग्रहकरनेवाले बालजीवोंकेभी संसारवृद्धिका कारणरूप महान् अनर्थ होता है, यही सर्व बातें न्यायरत्नजीने 'खरतरगच्छ समीक्षा' में सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावहीकरनेकी आवश्यक चूर्णि, बृहद्वृत्ति वगैरह शास्त्रानुसार सत्य बातको निषेध करनेके लिये और प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेके लिये महानिशीथ-दशवैकालिक सूत्रकी टीकाकारवगैरह बहुतशास्त्रकारमहाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध होकर अधूरे२पाठोंसे उलटा२संबंध लगाकर उत्सूत्रप्ररूपणासे बडा अनर्थ किया है, उसका नमूनारूप थोडासा सामायिक संबंधी पाठकगणको निसंदेह होनेकेलिये हमनें ऊपरमें इतना लिखाहै. मगर इस प्रकरणका विशेष खुलासा पूर्वक इसीही "बृहत्पर्युषणा निर्णय" ग्रंथके पृष्ठ२०९से३२९तक अच्छी तरहसे छप चुका है, वहांसे विशेष जान लेना और "आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः" नामा ग्रंथमेंभी विस्तारपूर्वक शास्त्रोंके पाठोंसहित निर्णय हमारी तरफसे छप चुका है, इस लिये

यहांपर फिरसे ज्यादे विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है।

२४-अब सत्यप्रिय पाठकगणसे हमारा इतनाही कहनाहै, कि-महानिशीथसूत्रके उपधान चैत्यवंदनसंबंधी इरियावहीके अधूरे पाठसे, तथा दशवैकालिककी टीकाके साधुओंके स्वाध्याय करनेसंबंधी इरियावहीके अधूरे पाठसे, श्री हरिभद्रसूरिजीमहाराजके अभिप्राय विरुद्ध होकर सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करतेहैं, और इन्हीं महाराजने जिनाज्ञानुसारही प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासा पूर्वक आवश्यकसूत्रकी बडी टीकामें लिखा है, उसको निषेध करतेहैं, या उसपर अविश्वास लाकर कुयुक्तियोंसे भोलेजीवोंकोभी उस बातपर शंकाशील बनातेहैं, वो लोग जिनाज्ञा विरुद्धहोकर उत्सूत्रप्ररूपणाकरतेहुए अपने सम्यक्त्वकोमालिन करतेहैं.

२५-और किसीभी प्राचीन पूर्वाचार्यमहाराजनेअपने बनाये किसीभी ग्रंथमें, किसी जगहभी ९ वें सामायिकव्रतसंबंधी प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते नहींलिखा. मगर खास तपगच्छादि सर्व गच्छोंके सर्वपूर्वाचार्योंने प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही स्पष्ट खुलासा पूर्वक लिखा है, इसलिये इस बातमें पाठांतरसे पहिले इरियावहीभी नहीं कह सकते, जिसपरभी पाठांतरके नामसे पहिले इरियावही स्थापन करें सो भी शास्त्रविरुद्ध होनेसे प्रत्यक्ष मिथ्या है.

२६- और कितनेक अज्ञानी लोग अपनी मति कल्पनासे कहते हैं, कि- पहिले इरियावही करें तो क्या, और पीछे करें तो भी क्या, किसी तरहसे सामायिक तो करनाहै, ऐसा मिश्र भाषण करने वालेभी सर्वथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करते हैं, उन लोगोंको सामायिकमें प्रथम करेमिभंते कहनेसंबंधी शास्त्रकारोंके गंभीर अभिप्रायको समझमें नहीं आया मालूम होताहै, नहीं तो ऐसा शास्त्रविरुद्ध मिश्र भाषण कभी नहीं करते. क्योंकि देखो-सर्व शास्त्रोंमें स्वाध्याय, ध्यान, प्रतिक्रमण, पौषधादिधर्मकार्योंमें पहिले इरियावही कहाहै, और सामायिकमें करेमिभंते पहिले कहे बाद पीछेसे इरियावही करनेका कहा है, सो इसमें गुरुगम्यताका अतीव गंभीरार्थवाला कुछभी रहस्य होना चाहिये, नहीं तो सर्व शास्त्रोंमें महान् शासन प्रभावक श्री हरिभद्रसूरिजी, नवांगीवृत्तिकार अभयदेवसूरिजी, कलिकाल सर्वज्ञबिरुदधारक हेमचंद्राचार्यजीआदिगीतार्थमहाराज प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही कभी नहीं लिखते. इसलिये इनमहाराजोंके गंभीराशयको समझेबिना इनसे विरुद्ध प्ररूपणा करना बडी भूलहै.

२७- कितनेकलोग अपना असत्य आग्रह छोडसकतेनहीं,व सत्य बात ग्रहणभी कर सकते नहीं, इसलिये भोले जीवोंको अपने पक्षमें लानेके लिये जान बुझकर कुतर्क करते हैं, कि, श्रीआवश्यक सूत्रकी च्यूर्णि-वृहद्वृत्ति- लघुवृत्ति-पंचाशकच्यूर्णि-वृत्ति-श्राद्धदिनकृत्यसूत्रवृत्ति-श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति-नवपद प्रकरणवृत्ति-योगशास्त्र वृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें सामायिकमें पहिले करेमिभंतेका उच्चारण करके पीछेसे इरियावही करनेका कहाहै, सो वह शास्त्र पाठ स्वाध्याय संबंधीहैं ? या चैत्यवंदन-गुरुवंदन संबंधीहैं ? या आलोयणा संबंधी हैं? अथवा सामायिक संबंधीहैं? इसकी हमको अच्छी तरहसे मालूम नहीं पडती, उससे वह शास्त्र पाठ सामायिक संबंधीहैं, ऐसा निश्चयनहींहोसकता.इसलिये उनशास्त्रपाठोंके अनुसार सामायिकमें पहिले करेमिभंते पीछे इरियावही कैसे किया जावे ? ऐसी२ कुतर्क करतेहैं,सो सर्वथा झूठीहीहैं,क्योंकि ऊपरके सर्व शास्त्रपाठोंमें श्रावकके १२ व्रतोंमें ९में सामायिकव्रतसंबंधी सामायिक करनेके लियेही सामायिककी विधिसंबंधी खुलासापूर्वक प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही करनेका लिखाहै,उसके विषयमें सत्य ग्रहण करनेवाले आत्मार्थी भव्यजीवोंको निस्संदेह होनेकोलिये थोडेसे शास्त्रोंके पाठभी यहां पर बतलाते हैं.

२८— श्री यशोदेव सूरिजी महाराज कृत श्री पंचाशक सूत्रकी च्यूर्णिका पाठ देखो—

"तिविहेण साहुणो णमिऊण सामाइयं करेइ 'करेमिभंते ! सामाइअं' एवमाइ उच्चरिऊण, तउ पच्छा इरियावहीयाए पडिक्कमइ, आलोएत्ता, वंदित्ता आयरियादि, जहा- रायणिए, पुणरवि गुरुं वंदित्ता, पडिलेहित्ता णिविट्ठो पुच्छति पढति वा" इत्यादि.

२९- श्रीचंद्रगच्छीय श्रीविजयसिंहाचार्यजी कृत श्रावकप्रतिक्रमण [वंदित्तासूत्र] की च्यूर्णिका पाठ भी देखो -

"वंदिऊण थोभ वंदणेण गुरुं संदिसाविऊण सामाइय दंडकमणु कड्डिय, जहा- 'करेमिभंते ! सामाइयं, जाव-अप्पाणं वोसिरामि' तओ इरिअं पडिक्कमिय आगमणं आलोएइ, पच्छा, जहा-जेट्ठ साहुणो वंदिऊण, पढइ सुणइ वा" इत्यादि.

३०- श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रावकधर्मप्रकरणवृत्तिका पाठ यहांपर दिखलाताहूं यथा- "अत्र क्रियमाणं श्राद्धानां सामायिकं निष्प्रत्यूहं निर्वहति तत्स्थानमुपदिशति—

चैत्यालये स्वनिशांते, साधूनामंतिकेऽपि वा ॥
कार्यं पौषधशालायां, श्राद्धैस्तद्विधिना सदा ॥ १ ॥

व्याख्या- चैत्यालये विधिचैत्ये, स्वनिशांते स्वगृहेऽपि विजन-स्थान इत्यर्थः। साधुसमीपे, पौषो ज्ञानादीनां धीयतेऽनेनेति पौषधं पर्वानुष्ठानं उपलक्षणात् सर्वधर्मानुष्ठानार्थं शालागृहं पौषधशाला, तत्र वा तत् सामायिकं कार्यं श्राद्धैः सदा नोभयसंध्यमेवेत्यर्थः। कथं तद्विधिना इत्याह-खमासमणं दाउ इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामाइयमुहपत्ति पडिलेहेमि त्ति भणिय, बीय खमासमण पुव्वं मुहपत्तिं पडिलेहिय, पुणरवि पढम खमासमणेण सामाइयं संदिसाविय, बीय खमासमणपुव्वं सामाइयं ठामि त्ति वुत्तं, खमासमणदाणपुव्वं अद्धावणय गत्तो पंचमंगलं कड्डित्ता 'करेमि भंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि' त्ति सामाइय सुत्तं भणति, तओ पच्छा इरियंपडिक्कमति, इत्यादिपूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन। अत्र च ईर्यां प्रतिक्रम्यैव सामायिकोच्चारण यत्केचिदाचक्षते तत्सिद्धांतादनुचीर्णम्, यत उक्तमावश्यक चूर्णि-बृहद्वृत्त्यादौ- यथा " करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणमिति, काउण पच्छा इरियं पडिक्कमइ त्ति " इत्यादि

३१-श्रीपार्श्वनाथस्वामीके संतानीय परंपरामें श्रीउपकेशगच्छीय श्रीदेवगुप्तसूरिजी महाराजने श्री नवपदप्रकरणवृत्तिमेंभी प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सामायिक संबंधी कहा है, सो पाठभी यहां पर बतलाते हैं, यथा :--

" आवश्यक चूर्ण्यादयुक्त समाचारी त्वियं-सामायिकं श्रावकेण कथं कार्यं ? तत्रोच्यते- श्रावको द्विविधोऽनृद्धिप्राप्तः ऋद्धिप्राप्तश्च, तत्राद्यश्चैत्यगृहे, साधुसमीपे, पौषधशालायां, स्वगृहे वा. यत्र वा विश्राम्यति तिष्ठति च निर्व्यापारस्तत्र करोति, चतुर्षु स्थानेषु नियमेन करोति, चैत्यगृहे, साधुमूले पौषधशालायां स्वगृहे वा अवश्यं कुर्वाण इति. एतेषु च यदि चैत्यगृहे साधुमूले वा करोति, तत्र यदि केनाऽपि सह विवादो नास्ति, यदि भयं कुतोऽपि न विद्यते, यस्य कस्यापि किंचिद् न धारयति, मा तत्कृताकर्षापकर्षौ भूतां, यदि वाऽधम धर्ष्यं मवर्ष्यमवलोक्य न गृह्णीयात्, मा भांक्षीत् इति बुद्ध्या यदि वा गच्छन् न किमपि व्यापारं व्यापारयेत्, तदा गृहे एव सामायिकं गृही-

त्वा चैत्यगृहं साधुमूलं वा यथा साधुः पंचसमितिसमितस्त्रिगुप्तिगुप्तस्तथा याति, आगतश्च त्रिविधेन साधुन् नमस्कृत्य तत्साक्षिकं पुनः सामायिकं करोति " करेमिभंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं " इत्यादि सूत्रमुच्चार्य, ततः, ईर्यापथिकीं प्रतिक्राम्यति, आगमनं चालोचयति. ततः, आचार्यादीन् यथारत्नाधिकतयाभिवंद्य सर्वसाधून्, उपयुक्तोपविष्टः पठति, पुस्तक वाचनादि वा करोति। चैत्यगृहे तु यदि वा साधवो न संति, तदा ईर्यापथिकी प्रतिक्रमण पूर्वमागमनालोचनं च विधाय चैत्यवंदनां करोति,पठनादि विधत्ते,साधुसद्भावे तु पूर्व एव विधिः। एवं पौषधशालायामपि। केवलं यथा गृहे आवश्यकं कुर्वाणोगृह्णाति—तथैव गमनविरहितं इत्यादि। तथा ऋद्धिप्राप्तस्तु चैत्यमूलं साधुमूलं वा महर्द्ध्यैव एति, येन लोकस्य आस्था जायते, चैत्यानि साधवश्च सत्पुरुषपरिग्रहेण विशेष पूज्यानि भवंति. पूजित पूजकत्वात् लोकस्य। अतस्तेन गृह एव सामायिकमादाय नागतव्यमधिकरण भयेन हस्त्यश्वाद्यनानयनप्रसंगात्, आगतश्च चैत्यालये विधिना प्रविश्य चैत्यानि च द्रव्य-भावस्तवेनाभिष्टुत्य, यथासंभवं साधुसमीपे मुखपोतिका प्रत्युपेक्षणपूर्वं "करेमि भंते ! सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि " त्ति उच्चार्य ईर्यापथिक्यादि प्रतिक्राम्य यथा रत्नाधिकतया सर्वसाधूंश्चाभिवंद्य प्रश्नादि करोति, सामायिकं च कुर्वाण एव मुकुटमुपनयति कुंडलयुगलनाम मुद्रे च पुष्प-तांबूल-प्रावरणादिव्युत्सृजति। किंच यदि एष श्रावक एव तदाऽस्यागमनवेलायां न कश्चिदुत्तिष्ठति, अथ यथा भद्रकस्तदाऽस्यापि सन्मानो दर्शितो भवति,इति बुद्ध्या आचार्याणां पूर्वरचितमासनंध्रियते अस्य च, आचार्यास्तु उत्थायैवेतस्ततश्चंक्रमणं कुर्वाणा आसते तावद् यावदेष आयाति, ततः सममेवोपविशंति। अन्यथा उत्थानानुत्थानदोषाविभाव्याः, एतच्चं प्रासंगिकमुक्तम्। प्रकृतं तु सामायिकस्थेन विकथादि न कार्यं,स्वाध्यायादिपरेण आसितव्यं" इत्यादि.

३२-श्रीतपगच्छनायक श्रीदेवेंद्रसूरिजी महाराज कृत श्राद्धदिनकृत्यसूत्रकी वृत्तिका पाठभी देखोः—

"तओ वियाल वेलाए,अत्थमिए दिवायरे। पुव्वुत्तेण विहाणेण,पुणो वंदे जिणोत्तमे॥२८॥ तओ पोसहसालं तु,गंतुण तु पमज्जए। ठावित्ता

तत्थसूरिं, तओ सामाइयं करे ॥२९॥ काऊणय सामाइयं, इरियंपडि-क्कमियं,गमणमालोए। वंदित्तु सूरिमाइ, सज्झायावस्सयं कुणइ ॥३०॥

व्याख्या— सांप्रतमग्रदश सत्कार द्वारमाह- ततो वैकालिका-नंतरं, विकालवेलायां अंतर्मुहूर्त्तरूपायां, तामेवव्यनक्ति अस्तभितेदि-धाकरे अर्द्धबिंबादयाक् इत्यर्थ । पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाकृत्वेतिशेष.। पुनर्वंदते जिनोत्तमान् प्रसिद्ध चैत्यवंदन विधिना ॥ २८ ॥ अथैकोन विंशति वंदनकोपलक्षितमावश्यक द्वारमाह—ततस्तृतीय पूजा नंत-रं श्रावक पौषधशालांगत्वा यतनया प्रमार्ष्टि, ततो नमस्कार पूर्वकं व्यवहित तुशब्दस्यैवकारार्थ त्वात् स्थापयित्वैव तत्र सूरिं स्थापना-चार्य, ततो विधिना सामायिकं करोति ॥ २९ ॥ अथ तत्र साधवोऽ पिसंति श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं, ततोऽसौसाधुसमीपे गत्वा-किं करोति इत्याह - साधुसाक्षिकं पुन सामायिकं कृत्वा ईर्याप्रतिक्र-म्यागमनमालोचयेत् तत आचार्यादीन् वंदित्वा स्वाध्यायं काले चा-वश्यकं करोति ॥ ३० ॥ इत्यादि "

३३-अब देखिये-ऊपरके सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंमें श्रावकको सामायिक कैसे करना चाहिये? इस सवालके जबाबमें सर्व शास्त्र कार महाराजोंने इस प्रकार खुलासा पूर्वक लिखा है.

१-सामायिक करनेवाले राजादि धनवान् व व्यवहारिक धन रहित ऐसे दो प्रकारके श्रावक बतलाये.

२- धन रहित श्रावकको भगवान्के मंदिरमें १, उपद्रवरहित एकांत जगहमें अपने घरमें २, साधु महाराजके पासमें ३, वा पौषध शालामें ४, ऐसे ४ स्थान सामायिक करनेके लिये बतलाये.

३ - जब श्रावकको संसारिक कार्योंसे निवृत्ति होंवे [फुरसत मिले] तब हरेक समय सामायिक करनेका बतलाया.

४-धर्म कार्योंमें अनेक तरहके विघ्न आतेहैं, और उपयोगी वि-वेकवाले श्रावकको धर्मकार्योंके बिना समय मात्रभी खाली व्यर्थ ग-मानायोग्यनहींहै,इसलिये संसारिक कार्योंसे फुरसद मिलतेही रस्ते चलनेमें यदि किसीके साथ लेने देने वगैरहसे कोईतरहका भयनहीं होंवे तो अपनेघरमें सामायिकलेकर पीछे गुरुपासजानेकाबतलाया.

५-जैसे उपवासादिकके पच्चखाण अपनेघरमें करलिये हों तो भी गुरुमहाराजकेपास जाकर फिर गुरु साक्षिसे उपवासादि पच्च-क्खाण करनेमेंआतेहैं. तैसेही- श्रावकको अपने घरमें सामायिक ले-

कर सावद्य योगका त्याग करके साधुकी तरह पंचसमिति और तीन गुप्तिसहितउपयोगसे गुरुमहाराजपास आकर फिर सामायिकका उच्चारणकरके पीछे इरियावहीपूर्वक स्वाध्यायादि करनेकावतलाया.

६-शामको छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमणकरनेकेलिये पहिले मंदिरमें देवदर्शन,पूजा आरति वगैरहकरके पीछे उपाश्रय या पौषधशालामें आकर गुरुके अभावमें भूमिका प्रमार्जनपूर्वक सामायिककरनेके लिये नवकार गुणकर स्थापनाचार्यकी स्थापनकरनेका वतलाया.

७- सामायिक करनेके लिये खमासमण पूर्वक गुरुसे आदेश लेकर सामायिकलेनेसंबंधी मुहपत्तिका पडिलेहणकरनेका वतलाया.

८- मुहपत्तिका पडिलेहणकरके प्रथम खमासमण पूर्वक सामायिक संदिसाहणेका, तथा फिर दूसरा खमासमण पूर्वक सामायिक ठाणेका आदेश लेनेका वतलाया.

९- विनय सहित मस्तक नमाकर नवकारपूर्वक 'करेमिभंते! सामाइयं' इत्यादि सामायिकका पाठ उच्चारण करनेका वतलाया.

१०- करेमिभंतेका पाठ उच्चारण कियेबाद पीछेसे इरियावही-करनेकावतलाया सो 'इरियावही' कहनेसे इरियावही,तस्स उत्तरी, अन्नत्थ उससिए णं, कहकरके ४ नवकार या १ लोगस्सका काउस्सग्ग करनेका और ऊपर संपूर्ण लोगस्स कहनेका समझलेना चाहिये.

११- जैसे पौषधवाला देवदर्शनादिक कार्योंसे गमनकरके आया होंवे वो इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करे, अर्थात्- इरियासमिति इत्यादि अष्टप्रवचनमाताके विराधनाकी आलोचनाकरके मिच्छामि दुक्कडं देताहै, तैसेही-यदि श्रावक अपने घरसे सामायिक लेकर इरियासमिति आदि पांच समिति और तीन गुप्ति सहित उपयोगसे गुरुपास आया होंवे तो फिर गुरु साक्षिसे 'करेमि भंते!' इत्यादि सामायिक लेकर पीछे इरियावहीपूर्वक इरियासमिति इत्यादि आगमनकी आलोचना करनेका वतलाया.

१२-सामायिक लेकर पीछे इरियावही करके आगमनकी आलोचना करे, बाद यथा योग्य आचार्यादिक वडीलोंको अनुक्रमसे सर्व साधुओंको वंदना करनेका वतलाया.

१३ — 'पूर्वसूरिनिर्दिष्टविधानेन' तथा 'पडिलेहित्ता' अर्थात्-जगह आसनादिकका प्रमार्जन पडिलेहण पूर्वक बैठने स्वाध्यायादि करनेका आदेश लेकर अपना धर्मकार्य करनेका वतलाया.

१४- सामायिक लिये बाद गुरुके साथ धर्म वार्ता करें या कोई

तत्थसूरिं, तओ सामाइयं करे ॥२९॥ काऊणय सामाइयं, इरियंपडि-
कमियं,गमणमालोए। वंदित्तु सूरिमाइ, सज्झायावस्सयं कुणइ ॥३०॥

व्याख्या— सांप्रतमष्टदशं सत्कार द्वारमाह– ततो वैकालिका-
नंतरे, विकालवेलायां अंतर्मुहूर्त्तरूपायां, तामेवव्यनक्ति अस्तमितेदि-
वाकरे अर्द्धविंबादयाक् इत्थं। पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाकृत्वेतिशेषः।
पुनर्वंदते जिनोत्तमान् प्रसिद्ध चैत्यवंदन विधिना ॥ २८ ॥ अथैकोन
विंशति वंदनकोपलक्षितमावश्यक द्वारमाह—ततस्तृतीय पूजा नंत-
रं श्रावकः पौषधशालांगत्वा यतनया प्रमार्ष्टि, ततो नमस्कार पूर्वकं
व्यवहित तुशब्दस्यैवकारार्थ त्वात् स्थापयित्वैव तत्र सूरिं स्थापना-
चार्य, ततो विधिना सामायिकं करोति ॥ २९ ॥ अथ तत्र साधवोऽ
पिसंति श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं, ततोऽसौसाधुसमीपे गत्वा-
किं करोति इत्याह- साधुसाक्षिकं पुन. सामायिकं कृत्वा ईर्याप्रतिक्र-
म्यागमनमालोचयेत् तत आचार्यादीन् वंदित्वा स्वाध्यायं काले चा-
वश्यकं करोति॥ ३० ॥ इत्यादि"

३३-अब देखिये-ऊपरके सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंमें-श्रावकको
सामायिक कैसे करना चाहिये? इस सवालके जवाबमें सर्व शास्त्र
कार महाराजोंने इस प्रकार खुलासा पूर्वक लिखा है.

१-सामायिक करनेवाले राजादि धनवान् व व्यवहारिक धन
रहित ऐसे दो प्रकारके श्रावक बतलाये.

२- धन रहित श्रावकको भगवान्‌के मंदिरमें १, उपद्रवरहित
एकांत जगहमें अपने घरमें २, साधु महाराजके पासमें ३, या पौषध
शालामें ४, ऐसे ४ स्थान सामायिक करनेके लिये बतलाये.

३ – जब श्रावकको संसारिक कार्योंसे निवृत्ति होवे [फुरसत
मिले] तब हरेक समय सामायिक करनेका बतलाया.

४-धर्म कार्योंमें अनेक तरहके विघ्न आतेहैं, और उपयोगी वि-
वेकवाले श्रावकको धर्मकार्योंके विना समय मात्रभी खाली व्यर्थ ग-
मानायोग्यनहींहै,इसलिये संसारिक कार्योंसे फुरसद मिलतेही रस्ते
चलनेमें यदि किसीके साथ लेने देने वगैरहसे कोईतरहका भयनहीं
होवे तो अपनेघरमें सामायिकलेकर पीछे गुरुपासजानेकाबतलाया.

५-जैसे उपवासादिकके पच्चखाण अपनेघरमें करलिये हों तो
भी गुरुमहाराजकेपास जाकर फिर गुरु साक्षिसे उपवासादि पच्च-
क्खाण करनेमेंआतेहैं, तैसेही- श्रावकको अपने घरमें सामायिक ले-

ना होवे, तथा भगवान् उपर और गुरुमहाराज उपर लोगोंकी श्रद्धा बढे, वहुत जीवोंको धर्म प्राप्तिका महान् लाभ होवे, इसलिये घरसे सामायिक लेकर नंगे पैरसे पैदल इरियासमितियुक्त आनेके बदले बडे आडंबरसे गुरुपास आकर पीछे सामायिक करें.

२१ — राज्यऋद्धिकी सोभा युक्त गुरुपास आकर जो नजदीक भगवान्का मंदिर होवे तो पहिले वहां मंदिरमें जाकर विधिसहित उपयोग युक्त भावसे- केशर चंदनादिसे पहिले द्रव्य पूजा करें बाद पीछे चैत्यवंदन स्तवनादिसे भाव पूजा करें उसके बादमें गुरु पास आकर "यथासंभवं साधु समीपे मुखपोतिका प्रत्युपेक्षणपूर्वं" अर्थात्- खमासमणपूर्वक मुहपत्तिकापडिलेहणकरके सामायिक संदिसाहणे वगैरहके आदेश लेकर ऊपर मुजब विधिसे पहिले करेमिभंतेका उच्चारणकरके पीछे इरियावही पूर्वक स्वाध्यायादि करें.

२२- राजादिक सामायिक करें तब तक राज्यचिन्ह मुकुटादिकको अलग रखें, त्याग करें.

२३-इसप्रकार सामायिक करनेवाले वहां विकथादि कर्मबंधनकेहेतुभूत कोईभी कार्य न करें, किंतु स्वाध्याय ध्यानादि कर्मोंकीनिर्जराके हेतुभूत धर्मकार्य करनेमें अपना समय व्यतीत करें, इत्यादि,

२४- अब देखिये-ऊपर मुजब सर्वमान्य प्राचीन शास्त्रपाठोंपर विवेक बुद्धिसे तत्त्व दृष्टिपूर्वक बिचार किया जावे तो सामायिक करनेके लिये प्रत्येकवार खमासमण सहित 'सामाइय मुहपत्ति पडिलेहेमि' 'सामाइयंसंदिसावेमि' 'सामाइयंठावेमि' इत्यादि वाक्योंसे सामायिक करनेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक विनयसहित 'करेमिभंते ! सामाइयं' इत्यादि संपूर्ण सामायिकका पाठ उच्चारण कियेबाद पीछेसे इरियावही करनेका सुस्पष्टतासे साफ खुलासा पूर्वक सब शास्त्रकार सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंने लिखा है, सो अल्प बुद्धिवालाभी ऊपरके शास्त्र पाठोंपरसे सामायिकका अधिकारको अच्छी तरहसे समझ सकताहै. जिसपरभी ऊपरकी तमाम सर्व बातोंको छोडकर " ऊपरके शास्त्रपाठ आलोयणा संबंधी हैं, या स्वाध्याय संबंधी हैं, या वंदनासंबंधी हैं, अथवा सामायिक संबंधी हैं. इसकी हमको अच्छी तरहसे मालूम नहीं पडती, इसलिये ऊपरके शास्त्र प्रमाणोंसे सामायिकमें प्रथम करेमि भंते और पीछे इरियावही कैसे किया जावे?" ऐसी २ कुतर्कें जान बुझकरके या उपरके शास्त्रपाठोंको बांचे, विचारे, समझे विनाही परंपराकी अज्ञानतासे करते हैं, सो तो अ-

शंका होवे तो गुरुसे पूछे या पुस्तकादि वांचे, अथवा दूसरा कोई पुस्तकादि वांचता होवे तो उपयोगयुक्त सुनता रहे.

१५- अपने घरसे सामायिक लेकर भगवान्‌के मंदिरमें आया होवे,वहां पासमें साधु न होवे तो भी भगवान्‌के समक्ष फिरसे सामायिक लेकर इरियावही पूर्वक आगमनकी आलोचना करके पीछे चैत्यवंदन, शास्त्रपाठ पढना गुणनादि धर्म कार्य करनेका बतलाया.

१६ — उपाश्रयमें गुरु महाराज होवे,तो उपर मुजब सामायिक करनेकी विधि बतलायी है, ऐसेही पौषधशालामेंभी सामायिक करनेकी विधि समझ लेना चाहिये.

१७— उपाश्रयमें गुरु महाराज न होवे, या समयके अभावसे कारणवश गुरु पास जाकर सामायिक करनेका अवसर न होवे और केवल अपने घरमेंही छ आवश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेकेलिये सामायिक ग्रहण करे,तो भी ऊपर मुजब खमासमणपूर्वक सामायिक मुहपत्तिके पडिलेहणका,सामायिक संदिसाहणेका व ठाणेका आदेश लेकर नवकारपूर्वक करेमिभंतेका उच्चारणकरके पीछेसे इरियावही पूर्वक अपना धर्मकार्य करे,मगर वहांसे गुरु पास जाने वगैरह कार्योंसे गमनागमन नहीं होनेसे आगमनकी आलोचना न करे. परंतु शेष बाकीकी उपर मुजब सर्व विधि करनेका बतलाया.

१८- यहांपर कोई पहिले इरियावही करके पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करनेका कहतेहैं,वोलोग शास्त्रोंके भावार्थको नहींजाननेवालेहैं,क्योंकि आवश्यकचूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह प्राचीनशास्त्रोंमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही साफ खुलासा पूर्वक कहा है।

१९- कभी गुरुके अभावमें अपनेघरमें या पौषधशालामें सामायिक करे,तब वहां "जाव नियम पज्जुवा सामि" ऐसा पाठ उच्चारणकरे और उपाश्रयमें गुरु समक्ष सामायिक करे, तब वहां "जाव साहू पज्जुवा सामि " ऐसा पाठ उच्चारण करे और इरियावही पूर्वक अपने धर्मकार्योंमें समय व्यतीत करनेका बतलाया.

२०-राजा-महाराजादि महर्द्धिक होवे,उन्होंको शहरकेरस्तोंमें नंगे पैर पैदल चलना योग्य न होनेसे वो अपने घरसे सामायिक लेकर गुरु पास उपाश्रयमें नहीं जावें,किंतु-हाथी, अश्व, पदातिक आदिक राज्यऋद्धिकी शोभा युक्त भेरी भंभादि वाजिंत्र सहित बडे आडंबरसे सामायिक करनेकेलिये गुरुपास आवें, उससे शासनकी प्रभाव-

मायिककी सबपूरी विधि करलेनाचाहिये. जिसकेबदले उसको अधूरी विधि कहकर निषेध करने वालोंको व उसके सर्वथा विरुद्ध अपनी कल्पनामुजब करवाने वालोंको श्रीआवश्यकसूत्रादि आगमार्थरूप पं-चांगीके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप दोषके भागी होनापडता है, इसलिये आत्मार्थी भवभिरुयोंको ऐसा करना योग्य नहीं है।

३७- औरभी देखिये जैसे-जिनमंदिरमें विधियुक्त 'द्रव्य भाव पूजा कर निजघर गया' ऐसा किसी शास्त्रमें संक्षेपमें सूचनारूप अधिकार आया होवे, उसका विशेष भावार्थ तत्त्वदृष्टिसे समझे विनाही उसमें स्नान करने, पवित्र वस्त्र पहिरने, मुख कोश बांधने, केशर चंदना-दि सामग्री लेने वगैरहके अक्षर न देखकर उसको जिनपूजाकी अधू-री विधि कहकर सर्वथा जिनपूजाका निषेध करने वालोंको अज्ञानी समझनेमें आतेहैं, क्योंकि उपयोगयुक्त भावसे हमेश जिनपूजा करने वाले तो जिनपूजाकी सब पूरी विधिको अच्छी तरहसे जाननेवाले होते हैं, उन्होंके लिये विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, किंतु 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे उपयोग युक्त स्नान करने, पवित्र वस्त्र धारन करने, मुखकोश बांधने, जिन मंदिरमें प्रवेश करने, निसीही कहने, मंदिरकी सार संभाल लेने, ३ प्रदिक्षणा देने, केशर-चंदन-धूप-दीप-अक्षतादि सामग्री लेने, और चैत्यवंदन-शक्रस्तव- जिनगु-ण स्तुति आदिसे दश त्रिकसहित उपयोगसे पूजा करने वगैरहकी सब बातें तो अपने आपही समझलेतेहैं.इसलिये 'द्रव्य भाव पूजा' क-हनेसे संक्षेपमें जिनपूजाकी सब पूरी विधि समझनी चाहिये, तैसेही-सामायिककी विधिको जानने वाले उपयोग युक्त हमेश सामायिक करनेवालोंके लिये तो- 'अपने घरसे सामायिकलेकर साधुकीतरह इरिया समिति पूर्वक उपयोगसे गुरुपास आवे' इस वाक्यसे, तथा 'गुरुको वंदनाकरके फिर सामायिकका उच्चारण करे बाद इरियाव-हीपूर्वक पढे सुने वा पूछे' इस वाक्यसे सामायिक करनेके लिये प-वित्रवस्त्र धारणकरनेका तथा मुहपत्ति आदि सामग्री लेनेका और खमासमणपूर्वक सामायिक संबंधी मुहपत्ति पडिलेहणादिकके आ-देशलेने वगैरहसे सामायिककी सब विधिपूरी समझ लेना चाहिये, जानकारोंकेलिये उसजगह इससे विशेष लिखें तो पुनरुक्ति दोष आ-वे, पिष्टपेषण जैसे होवे, उससे वहां 'जागृतको जगाने' की तरह विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं हैं, इसलिये गुरुगम्यतासे तत्त्व-दृष्टिपूर्वक विवेकबुद्धिसे शास्त्रकार महाराजोंके गंभीर आशयको स-

ज्ञानीजीमहाराज जाने. मगर ऐसी २ कुतर्के करके जिनाज्ञानुसार प्रत्यक्ष अनेक शास्त्र प्रमाण मुजब सत्य बात परसे भोले जीवोंकी श्रद्धा उडादेते हैं, और जिनाज्ञाविरुद्ध कोईभी शास्त्रप्रमाण विनाही अपने झूठे हठवादके आग्रहकी बातको स्थापन करनेकेलिये शास्त्रों के सत्य२ पाठोंपरभी झूठी२ शंका लाकर उत्सूत्र प्ररूपणासे उन्मार्ग को पुष्ट करते हैं, सो यह काम संसार बढानेवाला अनर्थ भूत होनेसे आत्मार्थी भवभिरुयोंको तो करना योग्यनहींहै. इसविषयको विशेष तत्वज्ञ पाठक गण स्वयं विचार लेवेंगे.

३५-कितनेक कहतेहैं,-'सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इ-रियावही करनेसंबंधी आवश्यक सूत्रकी चूर्णि-बृहद्वृत्ति वगैरह शा-स्त्रपाठोंमें सामायिकमुहपत्ति पडिलेहणके, सामायिक संदिसाहणेके, सामायिक ठाणेके आदेशलेनेवगैरह सवपूरी विधिनहींहै,ऐसा कहने-वालेभी प्रत्यक्षही मिथ्या भाषण करके जिनाज्ञाका उत्थापन करतेहैं, क्योंकि देखो-श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति तथा वंदित्तासूत्रकी चूर्णि व-गैरह शास्त्रपाठोंमें सामायिक मुहपत्ति पडिलेहणके,सामायिक संदि-साहणेके, सामायिकठाणेवगैरहके आदेशलेकर नवकारपूर्वक विनय-सहित 'करेमि भंते' इत्यादि पाठ उच्चारण करके पीछेसे इरियावही किये बाद स्वाध्यायादि करनेका संक्षेपमेंभी साफ बतलायाहै, उसके भावार्थमें गुरुगम्यतासे सामायिकमें सब पूरीविधि समझना चाहिये.

३६-आवश्यक निर्युक्ति, उत्तराध्ययनादि शास्त्रोंमें सामान्यतासे संक्षेपमें प्रतिक्रमणकी विधि बतलायाहै,परंतु उसका विस्तारपूर्वक विशेष अधिकार भावपरंपरानुसार पूर्वाचार्योंके सामाचारियोंके ग्रं-थोंसे जाननेमें आताहै, और उसी मुजबही अभी प्रतिक्रमणकी सर्व-क्रियायें करनेमें आतीहैं.मगर कोई अज्ञानी आवश्यकनिर्युक्ति-उत्तरा-ध्ययनादिशास्त्रोंकी प्रतिक्रमण विधिको अधूरी कहकर निषेधकरे औ-र उसकेविरुद्ध ढूंढियोंकी तरह अपनी मतिकल्पना मुजब प्रतिक्रमण की विधिको स्थापन करें, तो आवश्यकादि आगमार्थरूप पंचांगीके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप मिथ्यात्वके दोषके भागी होनापडता-है, वैसेही- आवश्यक चूर्णि, बृहद्वृत्ति वगैरह ऊपरमुजब शास्त्रपा-ठोंमें सामायिक संबंधीभी सूचनारूप संक्षेपमें सामान्यतासे शास्त्रका-र महाराजोंने सामायिककी विधि लिखीहै. उसका विस्तारसे विशे-ष अधिकार भावपरंपरानुसार पूर्वाचार्योंके सामाचारियोंके ग्रंथों-से जानना चाहिये और उसी मुजबही आत्मार्थी भव्य जीवोंको सा-

मायिककी सबपूरी विधि करलेनाचाहिये. जिसकेबदले उसको अधूरी विधि कहकर निषेध करने वालोंको व उसके सर्वथा विरुद्ध अपनी कल्पनामुजब करवाने वालोंको श्रीआवश्यकसूत्रादि आगमार्थरूप पंचांगीके उत्थापनसे उत्सूत्रप्ररूपणारूप दोषके भागी होनापडता है, इसलिये आत्मार्थी भवभिरुयोंको ऐसा करना योग्य नहीं है।

३७- औरभी देखिये जैसे-जिनमंदिरमें विधियुक्त 'द्रव्य भाव पूजा कर निजघर गया' ऐसा किसी शास्त्रमें संक्षेपमें सूचनारूप अधिकार आया होवे, उसका विशेष भावार्थ तत्त्वदृष्टिसे समझे विनाही उसमें स्नान करने, पवित्र वस्त्र पहिरने, मुख कोश बांधने, केशर चंदनादि सामग्री लेने वगैरहके अक्षर न देखकर उसको जिनपूजाकी अधूरी विधि कहकर सर्वथा जिनपूजाका निषेध करने वालोंको अज्ञानी समझनेमें आतेहैं, क्योंकि उपयोगयुक्त भावसे हमेश जिनपूजा करने वाले तो जिनपूजाकी सब पूरी विधिको अच्छी तरहसे जाननेवाले होते हैं, उन्होंके लिये विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, किंतु 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे उपयोग युक्त स्नान करने, पवित्र वस्त्र धारन करने, मुखकोश बांधने, जिन मंदिरमें प्रवेश करने, निसीही कहने, मंदिरकी सार संभाल लेने, ३ प्रदिक्षणा देने, केशर-चंदन-धूप-दीप-अक्षतादि सामग्री लेने, और चैत्यवंदन-शक्रस्तव: जिनगुण स्तुति आदिसे दश त्रिकसहित उपयोगसे पूजा करने वगैरहकी सब बातें तो अपने आपही समझलेतेहैं.इसलिये 'द्रव्य भाव पूजा' कहनेसे संक्षेपमें जिनपूजाकी सब पूरी विधि समझनी चाहिये, तैसेही-सामायिककी विधिको जानने वाले उपयोग युक्त हमेश सामायिक करनेवालोंके लिये तो- 'अपने घरसे सामायिकलेकर साधुकीतरह इरिया समिति पूर्वक उपयोगसे गुरुपास आवे' इस वाक्यसे, तथा 'गुरुको वंदनाकरके फिर सामायिकका उच्चारण करे बाद इरियावहीपूर्वक पढे सुने वा पूछे' इस वाक्यसे सामायिक करनेके लिये पवित्रवस्त्र धारणकरनेका तथा मुहपत्ति आदि सामग्री लेनेका और खमासमणपूर्वक सामायिक संबंधी मुहपत्ति पडिलेहणादिकके आदेशलेने वगैरहसे सामायिककी सब विधिपूरी समझ लेना चाहिये, जानकारोंकेलिये उसजगह इससे विशेष लिखें तो पुनरुक्ति दोष आवे, पिष्टपेषण जैसे होवे, उससे वहां 'जागृतको जगाने' की तरह विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है, इसलिये गुरुगम्यतासे तत्त्वदृष्टिपूर्वक विवेकबुद्धिसे शास्त्रकार महाराजोंके गंभीर आशयको स-

१४

मेंही बिना अधूरी विधिके नामसे सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही करनेकी सत्यबातको सर्वथा उडादेना सो उत्सूत्र प्ररूपणारूप होनेसे आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है.

३८-देखो विवेकबुद्धिसे खूब विचारकरो- श्रीजिनदासगणिमहत्तराचार्यजी पूर्वधर,श्रीहरिभद्रसूरिजी,अभयदेवसूरिजी,देवगुप्तसूरिजी,हेमचंद्राचार्यजी,देवेंद्रसूरिजी,आदिगीतार्थ शासन प्रभावक महाराजोंको तो सामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछे इरियावहीकी बात तत्त्वज्ञानसे जिनाज्ञानुसार सत्यमालूमपडी, इसलिये अपने२बनाये ग्रंथोंमें निःसंदेहपूर्वक लिखगये तथा आत्मार्थी भव्यजीवभी शंकारहित सत्यबात समझकर उस मुजब सामायिककी सब विधिभी करतेथे और अभी करतेभी हैं। जिसपरभी कितनेक लोग अपने तपगच्छ नायक श्री देवेंद्रसूरिजी महाराज वगैरह पूर्वाचार्योंकेभी विरुद्ध होकर इस बातमें सर्वथा विपरीत रीतिसे प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते स्थापन करके जिनाज्ञाके आराधक बनना चाहतेहैं और प्रथम करेमिभंते पीछेइरियावहीको शास्त्रविरुद्ध ठहराकरनिषेधकरतेहैं.अब विचार करना चाहिये, कि- प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही स्थापनकरनेवाले जिनाज्ञाके आराधक ठहरतेहैं,या प्रथम इरियावही पीछे करेमि भंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक ठहरतेहैं, यदि-प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक बनेंगे, तो प्रथम करेमि भंते पीछे इरियावही स्थापन करने वाले प्राचीन सर्व पूर्वाचार्य जिनाज्ञाविरुद्ध मिथ्यात्वकी खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरेंगे और यदि प्राचीन सर्व पूर्वाचार्य प्रथम करेमि भंते पीछे इरियावही स्थापन करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक सत्यप्ररूपणा करने वाले मानोंगे, तो, उन सर्व पूर्वाचार्योंके विरुद्ध होकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वकी खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहर जावेंगे. तथा इस बातमें पाठांतरभी न होनेसे पूर्वापर विरोधी दोनों बातेंभी कभी सत्य ठहर सकतीनहीं. और प्राचीन सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंकोभी खोटी प्ररूपणा करनेवालेभी कभी ठहरासकतेनहीं. मगर उन्हीं गीतार्थ महाराजोंके विरुद्ध आग्रह करनेवालेही खोटी प्ररूपणा करनेवाले ठहरतेहैं, इसलिये सर्व गीतार्थ पूर्वाचार्योंको जिनाज्ञाके आराधक सत्य प्ररूपणा करनेवाले समझ करके उन सर्व महाराजोंकी आज्ञा मुजब सामायिकमें प्रथम करेमि भंते पीछे इरियावही मान्य करना और इनके

विरुद्ध प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेकी शास्त्र विरुद्ध और पूर्वाचार्योंकी आज्ञावाहिर कल्पितवातकोछोडदेना यही जिनाज्ञाके आराधकभवभिरु निकटभव्य आत्मार्थियोंकोउचितहै. ज्यादे क्या लिखें.

३९– कितनेकलोग शंका करतेहैं, कि–पौषध, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, ध्यानादि कार्योंमें पहिले इरियावही करनेका कहा है, और सामायिकमें प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये वाद पीछेसे इरियावही करनेका कहा है, उसका क्या कारण होना चाहिये ? इसका समाधान यह है कि–पौषध–प्रतिक्रमणादिक कार्य तो आत्माको निर्मलकरनेके हेतुभूत क्रियारूपहैं सो मनकी स्थिरतासे होसकते हैं, इसलिये मनकी स्थिरता करनेकेलिये गमनागमनकी आलोचनारूप इरियावहीकरके पीछे इनकार्योंमें प्रवृत्ति करें तो शांततापूर्वक उपयोग शुद्धरहताहै, इसलिये इनकार्योंमें पहिले इरियावही करनेका कहा है. मगर सामायिकको तो श्रीभगवती–आवश्यकादि आगमोंमें " आया खलु सामाइअं " इत्यादि पाठोंसे सामायिकको खास आत्मा कहाहै, इसलिये आत्माकीस्थापनाकरनेकेलिये और आत्माके साथ कर्मबंधनकेहेतुरूप आतेहुए आश्रवको रोकनेकेलिये प्रथम करेमिभंतेका पच्चख्खाण करनेका कहा है. पहिले आत्माकी स्थापनारूप और आश्रवनिरोधरूप सामायिकका उच्चारण होगया, तो, उसके वादमें पीछे आत्माको निर्मल करनेके लिये स्वाध्याय ध्यानादि कार्य करनेके लिये इरियावही करनेकीआवश्यकताहुई. इसलिये पीछेसे इरियावहीपूर्वक स्वाध्याय, ध्यानादिधर्मकार्यकरनेचाहिये, और आत्माकी स्थापनारूप व आश्रव निरोधरूप जबतक सामायिकके पच्चख्खाण न होंगे, तव तक एकवार तो क्या मगर हजारवार इरियावही करतेही रहेंगे तो भी आश्रवनिरोध विना निजआत्मगुणकी प्राप्ति कभी नहीं होसकेगी, इसलिये सर्वशास्त्रोंकी आज्ञामुजब पहिले आत्माकी स्थापनारूप सामायिकके पच्चख्खाण करके पीछेसे आत्माकी शुद्धिके लिये इरियावही पूर्वक स्वाध्यायादि धर्मकार्य करने चाहिये. इस प्रकार सामायिकमें प्रथम करेमिभंते कहने संबंधी शास्त्रकारोंके गंभीर आशयको समझे विना पौषधादि कार्योंकी तरह सामायिकमेंभी प्रथम करेमिभंते का उच्चारण किये पहिलेसेही इरियावही स्थापन करनेका आग्रह करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है ।

४०– कितनेकमहाशय कहतेहैं, कि–श्रीनवकारमंत्रके पीछे इरिया-

वहीके उपधानकहेहैं,मगर इरियावहीके पहिले करेमिभंतेकेउपधान नहींकहेहैं,इसलिये सामायिकमेंभी पहिले इरियावही करना योग्यहै, ऐसा कहनेवालोंको सामायिकके स्वरूप संबंधी शास्त्रकारमहाराजों के अभिप्रायको समझमें नहीं आया मालूम होताहै। क्योंकि देखिये-शास्त्रोंमें सामायिकको आत्मा कहा है, और इरियावही वगैरह क्रियारूपसूत्र कहेहैं,और आत्माके उपधान तो कभी होसकतेनहीं, किंतु आत्माकीशुद्धिरूप क्रियाके उपधान होसकतेहैं. आत्मा तो स्वयं उपधान करनेवालाहै, और उपधान क्रियारूपहैं, सामायिकरूप आत्माके उपधान तो इरियावहीके पहिले या पीछेभी किसी शास्त्रमें नहींकहेहैं, इसलिये आत्माके निजगुणरूप सामायिक संबंधी और इरियावही वगैरह आत्माकी शुद्धिरूप क्रियासंबंधी शास्त्रकार महाराजोंके भावार्थकोसमझेबिनाही पहिले इरियावहीके उपधानकरनेका पाठ देखकर सामायिकमेंभी पहिलेइरियावही स्थापनकरतेहैं, उन्होंकी अज्ञानताहै.

४१– कितनेकआग्रहीलोग नवांगीवृत्तिकार श्रीअभयदेवसूरिजी के नामसे अथवा उन्होंके शिष्य श्रीपरमानंदसूरिजीके नामसे सामायिकमें पहिलेइरियावही पीछेकरेमिभंते कहनेसंबंधी श्रीअभयदेवसूरिजीकृत 'सामाचारी' ग्रंथका पाठ भोलेजीवोंको बतलातेहैं, सोभी प्रत्यक्ष मिथ्याहै,क्योंकि–देखो श्रीनवांगीवृत्तिकार महाराजने खास 'पंचाशक' सूत्रकीवृत्तिमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही खुलासापूर्वक लिखीहै, सर्व प्राचीन पूर्वाचार्यभी वैसेही लिखे गयेहैं, यही बात जिनाज्ञानुसार है । इसलिये इन्हीं महाराजने खास 'सामाचारी' ग्रंथमेंभी प्रथम करेमिभंते और पीछे इरियावही लिखी थी,उसपाठको निकाल देना और प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कहनेका पाठ अपनी मति कल्पना मुजब नवीन बनवाकर बडे प्रौढ प्रामाणिकपुरुषोंकेबनाये ग्रंथमें प्रक्षेपकरके भोलेजीवोंकोबतलाकर उन्मार्ग चलाना यह बडाभारीदोषहै, देखिये-कोईभीपूर्वाचार्यमहाराजने सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते नहीं लिखी, किंतु प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सर्व प्राचीन पूर्वाचार्योंने सर्वशास्त्रोंमें लिखीहै. तो फिर श्रीनवांगीवृत्तिकारक जैसे प्रौढ प्रामाणिक सर्व सम्मत यह महाराज सर्व पूर्वाचार्योंके विरुद्ध होकर प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते कैसे लिखेंगे, ऐसा कभी नहीं हो सकता.इसलिये इन महाराजके नामसे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते करनेका ठहराने वाले प्रत्यक्ष मिथ्यावादी हैं ।

४२- औरभी देखो खूब विचारकरो- शास्त्रोंमें विसंवादी कथन करनेवालोंको मिथ्यात्वी कहेहैं, और जैनाचार्य तो अविसंवादीहोतेहैं. इसलिये श्रीनवांगीवृत्तिकारक यह महाराजभी विसंवादीनहींथे. किंतु अविसंवादीथे, इसलिये इन्हीं महाराजके बनाये वृत्ति-प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमेंसे एकही विषयमें पूर्वापर विरोधी विसंवादी वाक्य किसीभी ग्रंथमें किसी जगहभी देखनेमें नहीं आते, इसलिये इन महाराजकी बनाई सामाचारीमेंभी विसंवादी वाक्य नहींहैं, किंतु 'पंचाशकसूत्रवृत्तिके अनुसार प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करने का पाठथा, उसको उडा करके इन महाराजके सत्य कथनके पूर्वापर विरोधी विसंवादीरूप प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंतेकहनेका पाठबनाकर भोलेजीवोंको बतलाकर खोटी प्ररूपणा करनेवालोंकी बडी भारीभूलहै. यह महाराज तो विसंवादी कथन करनेवाले कभी नहीं-ठहरसकते,मगर ऐसे महापुरुषोंके नामसे झूठापाठ बनानेवालेही मिथ्यात्वीठहरतेहैं। अबपाठकगणसे मेराइतनाहीकहनाहै,कि-नवांगीवृत्तिकारकने या उन्होंकेशिष्योंने अथवा अन्यकिसीभी जिनाज्ञाकेआराधक पूर्वाचार्य महाराजने किसीभी ग्रंथमें सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते किसी जगहभी नहीं लिखी, व्यर्थ भोले जीवोंको भरमानेका काम करना आत्मार्थियोंको योग्य नहीं है।

४३- कितनेक श्रीउत्तराध्ययनसूत्रकी बडी टीकाके नामसे सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते करनेका ठहरातेहैं,सोभी प्रत्यक्ष मिथ्याहै.क्योंकि देखो उत्तराध्ययन सूत्रमें या इनकी बडी टीकामें सामायिक करनेसंबंधी प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते करनेका कुछभी अधिकारनहींहै.किंतु-२९वें अध्ययनमें "सामाइएणं भंते! जीवे किं जणेइ? सावज्जजोग विरई जणयइ॥ चउवीसत्थएणं भंते! जीवे किं जणेइ? दंसण विसोहिं जणइ॥

व्याख्या-'सामायिकेन' उक्तरूपेण सहावद्येन वर्त्तत इति सावद्याः-कर्मबंधनहेतवो योगा-व्यापारास्तेभ्यो विरतिः-उपरमः सावद्ययोग विरतिस्तां जनयति, तद्विरति सहितस्यैव सामायिक संभवात्, न चैवं तुल्यकालत्वेनानयोः कार्यकारण भावासंभव इति वाच्यं, केषुचित्तुल्यकालेष्वपि वृक्षच्छायादिवत्कार्यकारण भावदर्शनाद्, एवं सर्वत्रभावनीयं॥ सामायिकं च प्रतिपत्तुकामेन तत्प्रणेतारःस्तोतव्याः ते च तत्त्वतस्तीर्थकृत एवेति,तत्सूत्रमाह 'चतुर्विंशतिस्तवेन' एतदवसर्पिणी प्रभवतीर्थकृदुत्कीर्तनात्मकेन दर्शनं सम्यक्त्वं तस्याविशुद्धिः-

तदुपघातिक कर्मापगमतो निर्मलीभवनं दर्शनविशुद्धस्तां जनयति"

ऐसा कहकर सामान्यतासे सामायिक, चउवीसत्थो,वंदन, प्र-तिक्रमण, काउसग्ग आदि कर्तव्योंका फलबतलायाहै.मगर वहां सा-मायिककरनेकी विधिमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते उच्चारण करनेका नहीं बतलाया. इसलिये उत्तराध्ययन सूत्रवृत्तिके नामसे प्र-थम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापनकरनेवालोंकी बडीभूलहै.

४४-अब आत्मार्थी तत्त्वग्राही पाठकगणसे मेरा यही कहनाहै,कि-ीमहानिशीथसूत्रका उद्धार श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजनेकियाहै । दिशवैकालिकसूत्रचूलिकाकी बडी टीकाभी इन्हीं महाराजने बनाया ,तथा आवश्यक सूत्रकी बडी टीकाभी इन्हीं महाराजने बनाया है । ावक प्रज्ञप्तिकी टीकाभी इन्हीं महाराजने बनायाहै, अब देखो-आव-यक बडीटीकामें व श्रावकप्रज्ञप्तिटीकामें सामायिक विधिमें प्रथम रेमिभंते पीछे इरियावही करनेका खुलासापूर्वक पाठ है तथा महा-शीथसूत्रके तीसरेअध्ययनमें उपधान चैत्यवंदनसंबंधी इरियावही रनेका पाठहै, और दशवैकालिक चूलिकाकीटीकामें साधुके गम-गमनसंबंधी इरियावही करके स्वाध्यायादि करनेकापाठहै,इसलिये ाम२ अपेक्षावाले इन शास्त्रपाठोंके आपसमें किसीतरहकाभी विसं-द नहीं है, और विसंवादी शास्त्रोंको व विसंवादी कथन करनेवा-को शास्त्रोंमें मिथ्यात्वी कहे हैं । इसलिये जैनशास्त्रोंको व पूर्वा-योंको अविसंवादी कहनेमें आतेहैं, इसी तरह श्री हरिभद्रसूरिजी ाराजभी अविसंवादी होनेसे इन्हीं महाराजके बनाये ऊपरके सर्व ्रोंको अविसंवादी कहनेमेंआतेहैं, और श्रीआवश्यकसूत्रकी बडी ा व श्रावकप्रज्ञप्ति टीकामें सामायिक करने संबंधी प्रथम करे-ंते पीछे इरियावही करनेका पाठ मौजूद होने परभी महानिशीथ, वैकालिक चूलिकाकी टीकाके भिन्न २ अपेक्षावाले अधूरे २ पाठों-उलटा २ अर्थकरके शास्त्रकारोंके अभिप्रायविरुद्ध होकर सामा-में प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेसे ऊपरके ्पाठोंमें और इन्हीं शास्त्रोंके करनेवाले श्रीहरिभद्रसूरिजी महा-के वचनोंमें एकही विषय संबंधी आपसमें पूर्वापर विसंवाद-दूषणआताहै,मगर इन्हीं शास्त्रपाठोंमें व इन्हींमहाराजके कथनमें ा प्रकारसेभी कभी विसंवादका दूषण नहीं आ सकता. यह तो ायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका स्थापन करनेके ़ करनेवालोंकीही पूर्ण अज्ञानताहै, कि-ऐसे अविसंवादी शास्त्र-

शास्त्रोंकों व ऐसे शासनप्रभावक गीतार्थ महापुरुषोंको विसंवादीका झूठा कलंक लगानेकाभी भय न करके अपना आग्रहकी प्रत्यक्ष असत्य बातको दृढकरनेके लिये ऐसे २ अनर्थ करते हैं। इसलिये आत्मार्थी भव भिरुयोंको ऐसा असत्य आग्रह छोडकर प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावहीकरनेकी सत्यबातको श्रद्धापूर्वक अंगीकार करनाही जिनाज्ञानुसार होनेसे श्रेयरूपहै. इसीतरहसे आवश्यक चूर्णि-बृहद्वृत्ति-लघुवृत्ति-पंचाशकचूर्णि-वृत्ति-श्रावकधर्म प्रकरणवृत्ति-योगशास्त्रवृत्ति वगैरह अनेकशास्त्रानुसार सामायिकमें प्रथमकरेमिभंते पीछे इरियावहीकी सत्य बातको निषेध करनेवाले और महानिशीथ-दशवैकालिक-पंचाशक चूर्णि-उत्तराध्ययन-संघाचार भाष्य वृत्ति-धर्मरत्न प्रकरण वृत्ति वगैरह शास्त्रकारमहाराजोंके अपेक्षा विरुद्ध और अधूरे २ पाठोंके नामसे या किसीप्रकारकीभी कुयुक्तिसे सामायिकमें प्रथम इरियावही और पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले आगमपंचागीके अनेक शास्त्रपाठोंके उत्थापनकरनेके दोषी बनतेहैं. और खास अपने तपगच्छादिक सर्व गच्छोंके पूर्वाचार्योंकीभी आज्ञालोपने वाले बनते हैं [इसका विशेष खुलासा निर्णय उपरमें देखो] और तपगच्छमें पहिले तो प्रथमकरेमिभंते पीछेइरियावही करतेथे, इसलिये श्रीदेवेंद्रसूरिजी,श्रीकुलमंडनसूरिजी वगैरहोंने अपने२बनाये ग्रंथोमें प्रथमकरेमिभंते और पीछे इरियावही करनेका खुलासापूर्वक लिखाहै, मगर थोडे समयसे अपने प्राचीन पूर्वाचार्योंके कथन विरुद्ध प्रथम इरियावहीकरनेका आग्रह चल पडा है, मगर जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थियोंको ऐसा आग्रहकरना योग्यनहींहै। देखो-'सेनप्रश्न' में श्रीविजयसेनसूरिजीने सर्व पूर्वाचार्योंके और अपने गच्छकेभी पूर्वाचार्योंके विरुद्धहोकर सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते करनेका कहा है,मगर तोभी उन्हीकेही संतानीय अंतेवासी श्रीमानविजयजी और सुप्रसिद्धन्यायविशारदश्रीयशोविजयजीने 'धर्मसंग्रह'वृत्तिमें आवश्यक चूर्णि-पंचाशकचूर्णि-योगशास्त्रवृत्ति आदि अनेक शास्त्रानुसार प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका खुलासा लिखा हैं, इसी तरहसे आत्मार्थियोंको अपने गच्छका या गुरुकाभी झूठ पक्षपातको त्याग करके प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावहीकी जिनाज्ञानुसार सत्य बातको आवश्यमेवही ग्रहण करना उचित है

न्यायरत्नजी शांतिविजयजीने महानिशीथ, दशवैकालिकादिकशास्त्रोंके भिन्न २ अपेक्षावाले अधूरे २ पाठोंसे शास्त्रकारमहाराजोंके

अभिप्रायविरुद्धहोकर सामायिकमें प्रथमइरियावही पीछेकरेमिभंते-का स्थापन करनेके लिये 'खरतरगच्छ समीक्षा' में अनेक तरहसे शास्त्रविरुद्ध व कुयुक्तियोंसे अनर्थ किये हैं, उसका खुलासा ऊपरके लेखसे पाठकगण स्वयं विचार लेंगे. इसी तरहसे आनंदसागरजीने 'धर्म संग्रह' की प्रस्तावनामें, चतुरविजयजीने 'संबोधसत्तरिप्रकरण वृत्ति'की टिप्पणिकामें, श्रीकीर्तिविजयजी अमरविजयजीने 'जैनसिद्धांतसामाचारी'में, धर्मसागरजीने इरियावही षट्त्रिंशिका-प्रवचन परीक्षादिकमें औरभी कोईभी महाशय कोईभी ग्रंथमें सामायिकमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करनेका निषेधकरके, प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते स्थापन करनेवाले सब शास्त्र विरुद्ध प्ररूपणा करनेवाले उपरके लेखसे समझ लेने चाहिये.

और पर्युषणासंबंधी, तथा छ कल्याणक संबंधीभी न्यायरत्नजीने अनेक शास्त्रविरुद्ध और कुयुक्तियोंके संग्रहसे ऐसेरही अनर्थकियेहैं, उन सबका खुलासा समाधान पूर्वक निर्णय इसी ग्रंथमें और इस ग्रंथके प्रथम भागकी भूमिकाके ४७ प्रकरणोंमें और सुबोधिकादिककी २८ भूलोंवाले लेखमें अच्छी तरहसे खुलासा सहित छप चुका है। इसलिये यहां पर फिरसे विशेष लिखनेकी कोई जरूरत नहींहै, सत्य तत्त्वाभिलाषी पाठक गण यहांसे समझ लेंगे। औरभी न्यायरत्नजीने श्रीअभयदेवसूरिजी संबंधी व तिथि संबंधी जो जो शास्त्रविरुद्ध बातें लिखी हैं, उन सबका खुलासा श्रीमान् पन्यासजी श्री केशर मुनिजीनें 'प्रश्नोत्तरमंजरी' के तीनों भागोंमें अच्छी तरहसे छपवाकर प्रसिद्ध कियाहै, उनके वांचनेसे सब खुलासा हो जावेगा. औरमैं भी तीसरे भागकी उद्घोषणामें थोड़ासा नमूनारूप लिखूंगा तब वहां जैनमुनियोंको रेल विहार निषेध, व व्याख्यानके समय मुह पत्तिका बांधना और देशकालानुसार विशेष लाभ जानकर स्त्री-पुरुषोंकी सभामें साध्वियोंको धर्म शास्त्रका व्याख्यान करना [धर्म का उपदेश देना] वगैरह बातों संबंधीभी खुलासा लिखनेमें आवेगा. पाठक गण यहांसे सर्व निर्णय समझ लेना. इति शुभम्.

विक्रम संवत् १९७८ वैशाख वदी पंचमी बुधवार.

हस्ताक्षर श्रीमान्-उपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजीमहाराजके लघु शिष्य मुनि--मणिसागर. जैन धर्मशाला, खानदेश--धूलिया.

॥ ओम् ॥

॥ श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः ॥

श्रीपर्युषणा निर्णय नामाग्रंथः प्रारभ्यते

नत्वा श्रीशासनाधीशं, विघ्न व्यूह विदारणं,
पर्युषणादि कार्याणां. निर्णयः क्रियते खलु ॥१॥
आत्मार्थिनाञ्च लाभाय, पाखण्ड पथ शान्तये
वाणी गुरु प्रसादेन, शास्त्रयुक्त्यनुसारतः॥२॥ युग्मम्

विघ्नोंके समूहकोनाश करने वाले शासन नायक श्रीवर्द्ध-मानस्वामीको नमस्कार करके श्रीसरस्वती देवी तथा श्रीगुरु महाराजके प्रसादसे, शास्त्रोंके प्रमाण पूर्वक तथा युक्तियोंके अनुसार, आत्मार्थि भव्यजीवोंको श्रीजिनाज्ञाकीप्राप्ति रूप लाभके वास्ते और उत्सूत्रपरूपणा रूप पाखण्डमार्गकी शान्तिके लिये श्रीपर्युषणपर्वादि सम्बन्धी कार्योंका निश्चयके साथ निर्णय करता हूं। सो इस ग्रन्थमें सम्बन्ध तो मुख्य करके अधिक मासके ३० दिनोंकी गिनतीके प्रमाण करनेका है। और दो श्रावण अथवा दो भाद्र पद होनेसे आषाढ़ चौमासी से ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें श्रीपर्यु-षणपर्वका आराधन करने सम्बन्धी निर्णयरूप कथन कर-
इस ग्रन्थमें मुख्य विषय है और वर्त्तमानकालमें गच्छोंके
५ आपसमें जूदी जूदी प्ररूपणाके होनेसे भोले-
श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धामें मिथ्यात्वरूप भ्रम
है, उसीको निवारण करनेके लिये पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक
अनुसार इस ग्रन्थकी रचना करता हूं, सो इसको

॥ ओम् ॥

॥ श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः ॥

श्रीपर्युषणा निर्णय नामाग्रंथः प्रारभ्यते

नत्वा श्रीशासनाधीशं, विघ्न व्यूह विदारणं,
पर्युषणादि कार्याणां. निर्णयः क्रियते खलु ॥१॥
आत्मार्थिनाञ्च लाभाय, पाखण्ड पथ शान्तये
वाणी गुरु प्रसादेन, शास्त्रयुक्त्यनुसारतः॥२॥ युग्मम्

विघ्नोंके समूहकोनाश करने वाले शासन नायक श्रीवर्द्धमानस्वामीको नमस्कार करके श्रीसरस्वती देवी तथा श्रीगुरु महाराजके प्रसादसे, शास्त्रोंके प्रमाण पूर्वक तथा युक्तियोंके अनुसार, आत्मार्थि भव्यजीवोंको श्रीजिनाज्ञाकीप्राप्ति रूप लाभके वास्ते और उत्सूत्रपरूपणा रूप पाखण्डमार्गकी शान्तिके लिये श्रीपर्युषणपर्वादि सम्बन्धी कार्योंका निश्चयके साथ निर्णय करता हूं। सो इस ग्रन्थमें सम्बन्ध तो मुख्य करके अधिक मासके ३० दिनोंकी गिनतीके प्रमाण करनेका है। और दो श्रावण अथवा दो भाद्र पद होनेसे आषाढ़ चौमासी से ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें श्रीपर्युषणपर्वका आराधन करने सम्बन्धी निर्णयरूप कथन करनेका इस ग्रन्थमें मुख्य विषय है और वर्त्तमानकालमें गच्छोंके पक्षपातसे आपसमें जूदी जूदी प्ररूपणाके होनेसे भोले-जीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धामें मिथ्यात्वरूप भ्रम पड़ता है, उसीको निवारण करनेके लिये पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक युक्ति अनुसार इस ग्रन्थकी रचना करता हूं, सो इसको

॥ ओम् ॥

॥ श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः ॥

श्रीपर्युषणा निर्णय नामाग्रंथः प्रारभ्यते

नत्वा श्रीशासनाधीशं, विघ्न व्यूह विदारणं,
पर्युषणादि कार्याणां. निर्णयः क्रियते खलु ॥१॥
आत्मार्थिनाञ्च लाभाय, पाखण्ड पथ शान्तये
वाणी गुरु प्रसादेन, शास्त्रयुक्त्यनुसारतः॥२॥ युग्मम्

विघ्नोंके समूहकोनाश करने वाले शासन नायक श्रीवर्द्ध-मानस्वामीको नमस्कार करके श्रीसरस्वती देवी तथा श्रीगुरु महाराजके प्रसादसे, शास्त्रोंके प्रमाण पूर्वक तथा युक्तियोंके अनुसार, आत्मार्थि भव्यजीवोंको श्रीजिनाज्ञाकीप्राप्ति रूप लाभके वास्ते और उत्सूत्रपरूपणा रूप पाखण्डमार्गकी शान्तिके लिये श्रीपर्युषणपर्वादि सम्बन्धी कार्योंका निश्चयके साथ निर्णय करता हूं। सो इस ग्रन्थमें सम्बन्ध तो मुख्य करके अधिक मासके ३० दिनोंकी गिनतीके प्रमाण करनेका है। और दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसे आषाढ़ चौमासी ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें श्रीपर्यु-षणपर्वका आराधन करने सम्बन्धी निर्णयरूप कथन कर-नेका इस ग्रन्थमें मुख्य विषय है और वर्त्तमानकालमें गच्छोंके पक्षपातसे आपसमें जूदी जूदी प्ररूपणाके होनेसे भोले-जीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धामें मिथ्यात्वरूप भ्रम पड़ता है, उसीको निवारण करनेके लिये पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक युक्ति अनुसार इस ग्रन्थकी रचना करता हूं, सो इसको

॥ ओम् ॥

॥ श्रीपञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः ॥

श्रीपर्युषणा निर्णय नामाग्रंथः प्रारभ्यते

नत्वा श्रीशासनाधीशं, विघ्न व्यूह विदारणं,
पर्युषणादि कार्याणां. निर्णयः क्रियते खलु ॥१॥
आत्मार्थिनाञ्च लाभाय, पाखण्ड पथ शान्तये
वाणी गुरु प्रसादेन, शास्त्रयुक्त्यनुसारतः॥२॥ युग्मम्

विघ्नोंके समूहकोनाश करने वाले शासन नायक श्रीवर्द्ध-मानस्वामीको नमस्कार करके श्रीसरस्वती देवी तथा श्रीगुरु महाराजके प्रसादसे, शास्त्रोंके प्रमाण पूर्वक तथा युक्तियोंके अनुसार, आत्मार्थि भव्यजीवोंको श्रीजिनाज्ञाकीप्राप्ति रूप लाभके वास्ते और उत्सूत्रपरूपणा रूप पाखण्डमार्गकी शान्तिके लिये श्रीपर्युषणपर्वादि सम्बन्धी कार्योंका निश्चयके साथ निर्णय करता हूं। सो इस ग्रन्थमें सम्बन्ध तो मुख्य करके अधिक मासके ३० दिनोंकी गिनतीके प्रमाण करनेका है। और दो श्रावण अथवा दो भाद्र पद होनेसे आषाढ़ चौमासी से ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें श्रीपर्यु-षणपर्वका आराधन करने सम्बन्धी निर्णयरूप कथन कर-नेका इस ग्रन्थमें मुख्य विषय है और वर्त्तमानकालमें गच्छोंके पक्षपातसे आपसमें जूदी जूदी प्ररूपणाके होनेसे भोले-जीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धामें मिथ्यात्वरूप भ्रम पड़ता है, उसीको निवारण करनेके लिये पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक युक्ति अनुसार इस ग्रन्थकी रचना करता हूं, सो इसकी

अवलोकन करनेसे असत्यको छोड़कर सत्यको ग्रहण करके मोक्षाभिलाषी जन अपने आत्म कल्याणमें उद्यम करें, यही इस ग्रन्थकारका तथा इस ग्रन्थका मुख्य प्रयोजन है। और इस ग्रन्थका अधिकारी तो वही होगा जो कि अपने गच्छ सम्बधी परंपराके पक्षपातका कदाग्रह रहित तथा जिनाज्ञा इच्छक और शास्त्रोक्त शुद्ध व्यवहारको अङ्गीकार करनेवाला सम्यक्त्वधारी मोक्षाभिलाषी, नतु अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी बहुलससारी गड्डरीह प्रवाही ।

मङ्गलाचरण और सम्बन्ध चतुष्टय कहे बाद सर्वसज्जन पुरुषोंको निवेदन करनेमें आता है कि–वर्तमानकालमें संवत् १९६६ के लौकिक पञ्चाङ्गमें दो श्रावण होनेसे श्री खरतर गच्छादिवाले पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक तथा श्रीपूर्वाचार्योंकी आज्ञामुजब आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें श्रीपर्युषणपर्वका आराधन करते हैं जिन्होंको प्रथम श्रीवल्लभविजयजीने अपनी मति कल्पनासे कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना जैनपत्रद्वारा आज्ञा भङ्गका दूषण लगाकरके कुसपके दृक्षका बीज लगाया तथा प्रत्यक्ष श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें यावत् ८० दिने श्रीपर्युषणपर्वका आराधन करके भी मायावृत्तिसे आप आज्ञाके आराधक बनना चाहा, तथा उन्हीकाही अनुकरण करके दूसरे काशीसे श्रीधर्मविजयजीने अपने शिष्य विद्याविजयजीके नामसे 'पर्युषणा विचार' का लेख प्रगट कराया जिसमें भी उत्सूत्र भाषणोंका तथा कुयुक्तियोंका संग्रह करके अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे शास्त्रोंके आगे पीछेके पाठोंको छोड़करके विना सम्बन्धके अधूरे अधूरे पाठ लिखकर शास्त्रकार महाराजोंके

ष्यमें ३, और श्रीजिनदासगणि महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर कृत श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिमें ४, श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत श्री-दशाश्रुत स्कन्ध सूत्रमें ५, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत तत्सूत्रकी चूर्णिमें ६, श्रीपार्श्वचंद्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजीकृत तत्सूत्रकीवृत्तिमें ७, श्रीपूर्वाचार्यजी कृत श्रीबृहत्कल्पसूत्रके लघुभाष्यमें ८, बृहद्भाष्यमें ९, तथा चूर्णिमें १०, और श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी कृत श्रीबृहत्कल्पसूत्रकी वृत्तिमें ११, श्रीसुधर्म्मस्वामीजी कृत श्रीसमवायांगजी सूत्रमें १२, तथा श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध श्रीनवांगीवृत्तिकार श्रीअभयदेव सूरिजी कृत तत्सूत्रकी वृत्तिमें १३, और उक्त महाराज कृत श्रीस्थानांगजीसूत्रकी वृत्तिमें १४, श्रीभद्रबाहुस्वामीजी कृत श्रीकल्पसूत्रमें १५, तथा निर्युक्तिमें १६, और श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी श्रीसंदेहविषौषधि वृत्तिमें १७, तथा निर्युक्तिकीवृत्तिमें १८, और विधिप्रपा नाम श्री समाचारी ग्रन्थमें १९, और श्रीखरतरगच्छके श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी कल्पद्रुमकलिकावृत्तिमें २० तथा श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुन्दरजी कृत श्रीकल्पकल्पलतावृत्तिमें २१ और उक्त महाराज कृत श्रीसमाचारीशतकनाम ग्रन्थमें २२, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीकल्पावचूरिमें २३, तथा श्रीतपगच्छके श्रीधर्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें २४, और श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिकावृत्तिमें २५, और श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुबोधिकावृत्तिमें २६, श्रीसंघविजयजी कृत श्रीकल्पप्रदीपिकावृत्तिमें २७, श्रीविजयविमलगणिजी कृत श्रीगच्छाचारपयन्नाकीवृत्तिमें २८ श्रीअञ्चलगच्छके श्रीउदयसागरजी कृत श्रीकल्पावचूरिरूपवृत्तिमें २९, श्रीखरतर

गच्छके श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसमाचारीग्रन्थमें ३० तथा श्रीसंघपट्टकवृहद्वृत्तिमें ३१ और श्रीहर्षराजगणी कृत श्रीसंघपट्टककी लघुवृत्तिमें ३२, और श्रीपूर्वाचार्य्योंके बनाये तीन श्रीकल्पान्तरवाच्योंमें ३५, इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसे ५० दिन जानेसे अवश्यमेव पर्युषणा करना कहा है उसीकेही अनुसार तथा श्रीपूर्वाचार्य्योंकी आज्ञामुजब वर्त्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें अथवा दो भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पर्युषणा करनेमें आती है इसी विषयकी पुष्टिके लिये पाठकवर्गको निःसन्देह होनेके वास्ते शास्त्रोंके थोड़ेसे पाठ भी लिख दिखाता हूं ।

१ श्रीकल्पसूत्रके पृष्ठ ५३ से ५४ तकका पर्युषणा संबंधी पाठ नीचे लिखे मुजब जानो, यथा—

तेणंकालेणं तेणंसमएणं समणेभगवंमहावीरे वासाणं सवीसइराएमासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ॥१॥ सेकेणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ समणेभगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ । जउणं पाएणं, अगारीणं अगाराइं,कडियाइं, उक्कंपियाइं, छन्नाइं, लित्ताइं, घट्ठाइं, मट्ठाइं, संधूपियाइं, खाउ दगाइं, खायनिद्धमणाइं, अप्पणो अट्ठाए कडाइं, परिभुत्ताइं, परिणामियाइं भवंति ॥ सेतेणट्ठेणं एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ॥२॥ जहाणं समणेभगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ । तहाणं गणहराவि वासाणं सवीसइ राए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति ॥ ३ ॥ जहाणं गणहरावि

वासाणं सवीसइराएमासे जाव पज्जोसविंति। तहाणं गणहर सीसावि वासाणं जाव पज्जोसविंति॥४॥ जहाणंगणहरसीसा वामाणं जाव पज्जोसविंति । तहाणं थेरावि वासावासंजाव पज्जोसविंति ॥५॥ जहाणं थेरा वासाणं जाव पज्जोसविंति। तहाणं जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एएवि-अणं वासाणं जाव पज्जोसविंति।६॥ जहाणं जे इमे अज्ज-त्ताए समणा निग्गंथावि वासाणं सवीसइराए मासे विइ-क्कन्ते वासवासं पज्जोसविंति । तहाणं अम्हंपि आयरिया उवज्झाया वासाणं जाव पज्जोसविंति ॥७॥ जहाणं अम्हंपि आयरिया उवज्झाया वासाणं जाव पज्जोसविंति। तहाणं अम्हेवि वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कन्ते वसावासं पज्जोसवेमो । अंतराविपसे कप्पइ नोसे कप्पइ तं रयणिं उवायणावित्तए॥८॥ इत्यादि

भावार्थः—तिसकाल तिससमयके विषे श्रमणभगवान् श्रीमहावीरस्वामी वर्षा संबंधी आषाढ़ चौमासीसे बीस दिन सहित एक मास याने ५० दिन जानेसे वर्षावासमें पर्युषणा करते भये, ॥१॥ यहां पर शिष्य पूछता है कि हेभगवान् किस कारणसे ऐसा कहते हो तब गुरु महाराज उत्तर देते हैं कि-प्राय करके गृहस्थ लोग भगवान्का महा-त्म्य जान करके इस समय वर्षा बहुत होगी ऐसा विचार करके अपने घरोंको चटाइयोंसे आच्छादित करेंगे, चूनादि से सफेदी करेंगे, घास तृणादिसे ऊपरमें बंदोबस्त करेंगे, गोबरसे लिंपन करेंगे,आसपासमें वाड़ वगैरहसे आवता करेंगे, ऊंची नीची भूमीको तोड़कर बराबर करेंगे, पाषाणादिसे घस करके चीकणी करेंगे, मकानोंको धूपादिसे सुगंधयुक्त करेंगे और

अपने घरोंके ऊपरका वर्षा संबंधी पाणी निकलनेके लिये प्रणालिका करेंगे, और सब घरका पानी निकलनेके वास्ते नवीन खाल बनावेंगे, अथवा पहिलेका खाल होवे उसीका सुधारा करेंगे, और उपयोगी सचित वस्तुओंको अचितकरके रखेंगे, इत्यादि अनेक तरहके आरम्भादि कार्य पहिलेसेही अपने लिये करलेवेंगे इसलिये उपरोक्त दोषोंका निमित्त कारण न होने के वास्ते आषाढ़ चौमासीसे १ मास और २० दिन गये बाद भगवान् पर्युषणा करते थे, ॥२॥ जैसे १ मास और २० दिन गयेबाद भगवान् पर्युषणा करते थे तैसेहीगणधरमहाराजभी १ मास और २० दिन गयेबाद पर्युषणा करते थे॥३॥ जैसे गणधर महाराज पर्युषणा करतेथे, तैसेही गणधरमहाराजके शिष्य प्रशिष्यादि भी पर्युषणा करते थे ॥४॥ जैसे गणधर महाराजके शिष्यादि पर्युषणा करते थे तैसेहीस्थविर भी करते थे ॥५॥ जैसे स्थविर करते थे तैसेही वर्तमानमें श्रमण निर्ग्रन्थ विचरने वाले हैं सो भी उपरोक्त विधिके अनुसार पर्युषणाकरते हैं॥६॥ जैसे वर्तमानमें श्रमण निर्ग्रन्थ पर्युषणा करते हैं तैसेही हमारे आचार्य उपाध्याय ५० दिने पर्युषणा करते हैं ॥७॥ जैसे हमारे आचार्यउपाध्याय ५० दिने पर्युषणा करते हैं तैसेही हमभी आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करते हैं जिसमें भी कारण योगे ५० दिन के भीतर पर्युषणा करना कल्पता है परन्तु कारण योगसे ५० वे दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करना नहीं कल्पता है, याने ५० वें दिनकी रात्रिको उल्लंघन करनेवाले को जिनाज्ञा विरुद्ध दूषणकी प्राप्ति होवे ।

अब देखिये उपरोक्त सुप्रसिद्ध श्रीकल्पसूत्रानुसार दूसरे

श्रावणमे पर्युषणा करनेवालोंको वृथा द्वेषबुद्धिसे आज्ञाभङ्गका दूषण लगाना और दो श्रावण होते भी आषाढ चौमासीसे दो मास उपर बीस दिन याने ८० दिने (प्रत्यक्ष पंचाङ्गी विरुद्ध अपनी मति कल्पनासे) पर्युषणा करके भी आज्ञाके आराधक बनना सो गच्छकदाग्रहि उत्सूत्र भाषण करनेवालोंके सिवाय और कौन होगा सो विवेकी सज्जनोंको विचार करना चाहिये । और दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमे तथा दो भाद्रपद होनेसे भी दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करनेवाले महाशयोंको हर वर्ष पर्युषणा मे प्राय करके सब जगह पर बंचाता हुआ मूलमन्त्ररूप उपरोक्त मूत्रपाठको विवेक बुद्धिसे विचारके असत्यको छोड़ कर सत्यको ग्रहण करना चाहिये ।

और अब ऊपरके सब पाठकी सब व्याख्याओंके सबपाठ बहोत विस्तार हो जानेके कारणसे नहीं लिखता हूं परंतु (अन्तरा वियसे कप्पइ नोसे कप्पइ त रयणि उवायणा वित्तए) इस अन्तके पाठकी थोडीसी व्याख्याओंके पाठ लिखके पाठक वर्गको विशेष निःसन्देह होनेके लिये लिख दिखलाता हूं ।

२ श्रीखरतरगच्छके श्रीसमयसुन्दरजी कृत श्रीकल्पकल्पलता वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तकका तत्पाठ —

अन्तराबियसेकप्पइ पज्जोसवित्तए । अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते पर्युषितु, "नोसेकप्पइ त रयणि" परं न कल्पते ता रजनींभाद्रपद शुक्लपञ्चमीं "उवाइणावित्तएत्ति," अति क्रमितु । उपमिधाने इत्यागमिकोधातु, इह पर्युषणाद्विधागृहिज्ञाता गृहस्थाज्ञाताच तत्र गृहिणामज्ञातायां वर्षा योग्य

पीठफलकादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते, सा स्थापना आषाढ़पूर्णिमायां, योग्यक्षेत्राभावेतु पञ्च पञ्च दिनवृद्धया यावद्भाद्रपद शुक्ल पञ्चमीं एकादशसुपर्वसु तिथिषु क्रियते, गृहि ज्ञातायां तु यस्यां साम्वत्सरिकातिचारालोचनं १, लुञ्चनं २, पर्युषणायां कल्पसूत्राकर्णनं वा कथनं ३, चैत्यपरिपाटी ४, अष्टमंतपः ५, साम्वत्सरिकंचप्रतिक्रमणं क्रियते, ययाचव्रत पर्यायवर्षाणि गण्यंते सा भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां, युगप्रधान कालकसूर्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटा कार्या यत्तु अभिवर्द्धितवर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यं, तत्सिद्धान्तटिप्पनानुसारेण तत्रहि युगमध्येपौषो युगान्तेच आषाढ एव वर्द्धते, तान्येतानि च अधुना न सम्यग् ज्ञायंते अतो दिनपञ्चाशतैव पर्युषितव्यम् ॥

३ और श्रीखरतरगच्छके श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पद्रुमकलिकावृत्तिके पृष्ठ २४२सेर४३ तकका तत्पाठः—

(सूत्रम्) अन्तरावियसे कप्पइ-इत्यादि, अर्थ-अन्तरापिच अर्वागपि महाकार्य विशेषात् भाद्रपद शुक्लपञ्चमीतःइतःकल्पते पर्युषणापर्वकर्तुं, परं न कल्पते तां रजनीं भाद्रपद शुक्लपञ्चमीं अतिक्रमितुं । पूर्वं उत्सर्गनयः प्रोक्तः अन्तराविय से इत्यादिना अपवादनयः प्रोक्तः । एकादशसु पञ्चकेषु कुर्वत्सु आषाढ पूर्णिमादिवसे प्रथमं पर्व, एवमग्रे पञ्चभिः पञ्चभिर्दिवसैः एकैकंपर्व, एवं कुर्वतां साधूनां पञ्चाशद्दिनैः एकादश पर्वाणि भवन्ति, एतेषु एकादशपर्वदिवसेषु पर्युपणापर्व कर्त्तव्यं। पर्वसु एकस्मिन्नदिने न्यूनेपि कारण विशेषेण पर्युषणा कर्त्तव्या, परं एकादशभ्यः पर्वभ्यः उपरि अधिके एकस्मिन्नपि दिने गते पर्युपणा पर्व न कर्तव्यमुपरिदिनं नोल्लङ्घनीय मित्यर्थः।

अधिकमासोऽपि गणनीय अधिकमासाभावे तु सरलमाव गण-
नया आषाढ़चतुर्मासात् पञ्चाशद्दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमी दिने
पर्युषणा पर्व भवति, श्रीकालिकाचार्याणामादेशात् भाद्र-
पदशुक्लपंचमीतः इतः चतुर्थ्यांक्रियते, भाद्रपदशुक्लपञ्चम्या
रात्रिमुल्लङ्घ्य अग्रेपर्युषणा न कल्पते अनादि सिद्धानां तीर्थं-
कराणां आज्ञया। इदानीमपि चतुर्थ्यां पर्युषणां कुर्वंतः
साधवो गीतार्थास्तीर्थंकराज्ञाराधका ज्ञेया ॥

४ और श्रीतपगच्छके श्रीकुलमंडन सूरिजीकृत श्रीकल्पा-
वचूरिके पृष्ठ ११२ में तत्पाठः—

अन्तरा वियसे कप्पइ, अंतरापि च अर्वागपि कल्पते,
"पज्जोसवेयव" पर्युषितुं परं "नोसेकप्पइ" न कल्पते
"तं रयणि उवायणा वित्तए" तांरजनीं भाद्रपद शुक्लपञ्चमीं अ-
तिक्रमितुं ॥ उपनिवासे इत्यागमिकोधातुः ॥ इहहि पर्यु-
षणा द्विधा गृहिज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्यां
वर्षायोग्य पीठ फलकादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र,
काल,भाव, स्थापना क्रियते सा आषाढ़पूर्णिमायां, योग्य-
क्षेत्राभावेतु पंच पंच दिन वृद्धया यावद्भाद्रपदसित पंचमीं,
सावेकादशसु पर्वतिथिषु, क्रियते, गृहिज्ञाता यस्यां तु सांव-
त्सरिकातिचारालोचनं, लुञ्चनं, पर्युषणायां कल्पसूत्रकथनं,
चैत्यपरिपाटी, अष्टमं, सांवत्सरिकंप्रतिक्रमणंचक्रियते, यथाच
व्रतपर्याय वर्षाणि गण्यन्ते, सा नभस्य शुक्लपञ्चम्यां कालक-
सूर्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या, यत्पुनरभिवर्द्धित
वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते, तत्सिद्धांत टिप्प-
नानुसारेण तत्रहि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ़ एव वर्द्धते
नान्येमासास्तानिचअधुना न सम्यग् ज्ञायन्तेऽतो दिन पञ्चा-
शतैव पर्युषणा सङ्गतेतिवृद्धाः ॥

५ और श्रीतपगच्छके श्रीधर्म्मसागरजी कृत श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिके पृष्ठ २५७ से २५८ तकका तत्पाठः—

तत्र अन्तरापिच अर्वागपि कल्पते पर्युषितुं परं न कल्पते तां रजनीं भाद्रपद शुक्ल पंचमीं, "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितुं, उपनिवासे इत्यागमिकोधातुः। वस निवास इति गणसंबन्धीवाधातुः। इहहि पर्युषणा द्विविधा गृहि ज्ञाताज्ञातभेदात् तत्र गृहिणामज्ञाता यस्यां, वर्षायोग्य पीठफल कादौ प्राप्ते यत्नेन कल्पोक्तद्रव्य,क्षेत्र काल.भाव स्थापनाक्रियते सा चाषाढ़पूर्णिमायां,योग्यक्षेत्राभावेतु, पंच पंच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपदसितपंचमीमेवेति गृहिज्ञाता तु द्विधा साम्वत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र साम्वत्सरिक कृत्यानि, "सांवत्सरप्रतिक्रान्ति १ लुंञ्चनं २ चाष्टमन्तपः ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजाच ४ सङ्घस्य क्षामणं मिथः ५" एतत्कृत्य विशिष्टा भाद्रपदसितपंचम्यां कालकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटाकार्या, द्वितीयातु अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिक दिनादारभ्य विंशत्यादिनैः वयमत्रस्थितास्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति सातु गृहिज्ञात मात्रैव, तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्तेचाषाढ़ एव वर्द्धते नाऽन्येमासाः तच्चाधुना सम्यग् न ज्ञायतेऽतः पंचाशतैवदिनैः पर्युषणासङ्गतेति वृद्धाः ॥

६ और श्रीतपगच्छके श्रीजयविजयजी कृत श्रीकल्पदीपिका वृत्तिके पृष्ठ १३० में तत्पाठः—

अन्तरावियसेकप्पइत्ति, अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते पर्युषितुं, परं न कल्पते तां रजनीं भाद्रपदशुक्लपंचमीं "उवायणा वित्तएत्ति" अतिक्रमितुं, उपनिवासे इत्यागमि

को धातुः, यस निवास इति गणसंबंधीया धातुः।इहहि पर्युषणा द्विविधा गहिज्ञाताज्ञातभेदात् तत्रगृहिणामज्ञाता यस्यां वर्षायोग्य पीठ फलकादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते, सा च आषाढ़पूर्णिमायां, योग्यक्षेत्राभावे तु पंच पंच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपदसित पंचमीमेवेति। गृहिज्ञाता तु द्विधा सांवत्सरिककृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्रा च तत्र सांवत्सरिक कृत्यानि, "सांवत्सरिकप्रतिक्रमणं १, लुंचनं २, अष्टमं तपः ३, चैत्यपरिपाटी, संघक्षामणं" एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रपदसित पंचम्यां कालकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यां जनप्रकटं कार्या, द्वितीयातु अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्यादिनैः वयमत्रस्थितास्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति सातु गृहिज्ञातमात्रव तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते च आषाढ़ एव वर्द्धते नान्येमासाः तच्चाधुना सम्यग् न ज्ञायते अतः पंचाशतैवदिनैः पर्युषणासङ्गतेति वृद्धाः ॥

७ और श्रीतपगच्छके श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुखबोधिकावृत्तिके पृष्ठ १४६ में तथाच तत्पाठः—

अंतरावियसेकप्पइ, अंतरापिचअर्वागपि कल्पते पर्युषितुं परं न कल्पते तां रात्रिं भाद्रपदशुक्लपंचमीं, "उवायणावित्तएत्ति" अतिक्रमितुं, तत्र परिसामस्त्येन उषणं वसनं पर्युषणा, साद्विधा गृहस्थैरज्ञाता गृहस्थैर्ज्ञाताच, तत्र गृहस्थैरज्ञाता यस्यां वर्षायोग्य पीठफलकादौ प्राप्ते कल्पोक्तद्रव्य क्षेत्र काल भाव स्थापना क्रियते साचाषाढ़पूर्णिमायां, योग्य क्षेत्राभावेतु पंच पंच दिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्र पद सितपंचम्याम्, एवं गृहिज्ञाता तु द्विधा

सांम्वत्सरिककृत्याविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच, तत्र साम्व-
त्सरिककृत्यानि "सांवत्सर प्रतिक्रांति १ लुंचनं २ चाष्ट-
मंतपः ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजाच ४ संघस्यक्षामणं विधः ५ ॥ १ ॥"
तत्कृत्यविशिष्टा भाद्रपदसित पंचम्यामेव कालिकाचार्या-
देशाच्चतुर्थ्यामपिकार्या, केवलं गृहिज्ञातातु सा यद् अभि-
वर्द्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनाद् रभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्रस्थिता-
स्मइति पृच्छतां गृहस्थानां पुरोवदंति तदपि जैनटिप्पनका-
नुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाषाढएव वर्द्धते
नान्येमासास्तट्टिप्पनकन्तु अधुनासम्यग् न ज्ञायते अतः
पंचाशतैवदिनैः पर्युषणायुक्तेतिवृद्धाः ॥

उपरोक्त श्रीखरतरगच्छ तथा श्रीतपगच्छ इन दोनों गच्छ-
वालोंके छ पाठोंका संक्षिप्त भावार्थः—अंतरा वियसे कप्पइ।
अन्तरापिच अर्वागपि कल्पते पर्युषितुं, इत्यादि
कहनेसे-जो आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करनेमें
आती है जिसमें कारण योगे ५० दिनके अंदर ४९ वे दिन
पर्युषणा करना कल्पता है परन्तु ५० वे दिनकी जो भाद्रपद
शुक्लपंचमीकी रात्रिहै उसीको उल्लंघन करना नहीं कल्पता है
और वषधातुसे उषणा बनता है तथा परिउपसर्ग लगनेसे
पर्युषणा बन जाता है सो उषधातु निवास अर्थमें वर्तती है
अथवा गण संबंधी वस धातु भी निवासार्थमें वर्तती है और
ग्रामानुग्राम विहार करनेका निवारण करके सर्वथा प्रकारसे
वर्षाकाले एकस्थानमें निवास करना सो पर्युषणा कही जाती
सो पर्युषणा यहां दो प्रकारकी है गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई
तथा गृहस्थी लोगोंकी नहीं जानीहुई तिनमें गृहस्थीलोगों
से नहीं जानी हुई पर्युषणा जिसमें वर्षाकालके उचित

पाट पाटलादि द्रव्योंका योग बननेसे यत्न करके शास्त्रोक्त विधिसे द्रव्य क्षेत्र काल और भावकी स्थापना करनी जिसमें उपयोगी वस्तुओंका संग्रहसो द्रव्य स्थापना, और विहारका निषेध परन्तु आहारादि कारणसे मर्यादा पूर्वक जानेका नियम सो क्षेत्रस्थापना, और वर्षाकालमें जघन्यसे ७० दिन तक तथा मध्यमसे १२० दिन तक और उत्कृष्टसे १८० दिन तक एक स्थानमें निवास करना सो कालस्थापना, और रागादि कर्मबन्धके हेतुओंका निवारण करके इरियासमिति आदिका उपयोग पूर्वक वर्ताव करना सो भावस्थापना, इस तरहसे सो द्रव्यादि चतुर्विध स्थापना आषाढ़ पूर्णिमामें करनी परन्तु योग्य क्षेत्रके अभावमें तो आषाढ़ पूर्णिमासे पांच पांच दिनकी वृद्धि करके दशपंचक तिथियोंमें क्रममें यावत् भाद्र-पद सुदी पंचमी तक, आषाढ़ पूर्णिमासे दशपंचकमें परन्तु आषाढ सुदी १० मी के निवासकी गिनतीसे एकादशपंचकोंमें जहां द्रव्यादिका योग मिले वहां पूर्वोक्त कहे वैसे दोषोंका निमित्त कारण न होनेके लिये अज्ञात पर्युषणा स्थापन करनी और आषाढ़ चौमासीसे ५०दिने गृहस्थी लोगोंकीजानी हुई पर्युषणा जिसमें वार्षिकातिचारोंकी आलोचना करनी, लोंकार्लुचन करना,श्रीकल्पसूत्रकासुनना वा पठनकरना, अट्ठम करना, चैत्यपरिपाटी (जिन मन्दिरोंमें दर्शनकरने) और सम्वत्सरिक प्रतिक्रमण करना, और सर्व संघकोक्षामणे करना और दीक्षापर्यायके वर्षोंकी गिनती करना सो ज्ञातपर्युषणा भाद्रशुक्ल पंचमीमें होती थी, परन्तु युग प्रधान श्रीकालका चार्यजीमहाराजके आदेशसे भाद्रशुक्लचतुर्थीके दिन करनेमें आती है। सो गीतार्थों की आचरणा होनेसे श्रीजिनाज्ञा

मुजबही जाननी सो भाद्र पदकी पर्युषणा मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सर संबंधिनी जाननी। और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें तो आषाढ़चौमासीसे बीस दिन करके याने श्रावणशुक्लपंचमी को गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा करनेमें आती थी सो तो जैन सिद्धान्त का टिप्पणानुसार युगके मध्यमें पौषमास और युगके अन्तमें आषाढ़मासकी वृद्धि होती थी परन्तु और किसी भी मासकी वृद्धिका अभाव था। वो टिप्पणा तो अभी इस कालमें अच्छी तरहसे देखनेमें नहीं आता है इसलिये मासवृद्धि हो तो भी ५० दिनोंसे पर्युषणा करनी योग्य है इस तरहसे वृद्धाचार्य कहते हैं अर्थात् मासवृद्धि होनेसे जैनपंचांगानुसार बीस दिने श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती थी परन्तु जैनपंचांगके अभावसे लौकिक पंचांगानुसार मासवृद्धि दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होतो भी उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करनेकी प्राचीनाचार्योंकी आज्ञा है इसी ही कारणसे श्रीलक्ष्मीवल्लभ गणिजीने अधिमासकी गिनती पूर्वक ५० दिन पर्यूषणा करनेका खुलासा लिखा है। उसी मुजब आत्मार्थियोंको पक्षपात छोड़कर वर्तना चाहिये।

और श्रीधर्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन तीनों महाशयोंके बनाये (श्रीकल्पकिरणावली श्रीकल्प दीपिका श्रीसुखबोधिका इन तीनों वृत्तियोंके) पर्युषणा सम्बन्धी पाठ ऊपरमें लिखे हैं उसीमें इन तीनों महाशयोंने, ज्ञात याने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा दे। प्रकारकी लिखी है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ चौमा-

भीसे बीस दिने पर्युषणा करनेमें आती थी उसीको वार्षिक कृत्येरिहत केवल गृहस्थोंलेगोंके कहने मात्रही ठहराई है सो कदापि नहीं बन सकता है क्योंकि अधिक मास होनेसे बीस दिनकी पर्युषणाकोही जैन पंचाङ्गके अभावसे अधिक मास होतो भी ५० दिने पर्युषणा पूर्वाचार्योंने ठहराई है इस लिये बीस दिनकी पर्युषणा कहनेमात्रही ठहरानेसे ५० दिनकी पर्युषणा भी कहनेमात्रही ठहर जायगी और वार्षिक कृत्य उसी दिन करनेका नहीं बनेगा इसलिये जैसे मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य होते हैं तैसेही मासवृद्धि होनेसे बीस दिनकी ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य मानने चाहिये क्योंकि ज्ञात पर्युषणा एकही प्रकारकी शास्त्रोंमें लिखी है परन्तु बीस दिने ज्ञात पर्युषणा करके फिर आगे वार्षिक कृत्य करे ऐसा तो किसी भी शास्त्रमें नहीं लिखा है इसलिये जहां ज्ञात पर्युषणा वहांही वार्षिक कृत्य शास्त्रोक्त युक्ति पूर्वक सिद्ध होते हैं इसका विशेष विस्तार इनही तीनों महाशयोंके लिखे (अधिक मासकी गिनती निषेध सम्बन्धी पूर्वापरविरोध) लेखोंकी आगे समीक्षा होगी वहां लिखनेमें आवेगा।

अब देखिये बड़ेही आश्चर्यकीबातहै कि श्रीतपगच्छके इतने विद्वान् मुनीमहली वगैरह महाशय उपरोक्त व्याख्याओंको हर वर्ष पर्युषणाके व्याख्यानमें बांचते हैं इसलिये उपरोक्त पाठार्थीको भी जानते हैं तथापि मिथ्या हठवादसे भोले जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेके लिये पौष अथवा आषाढ़के अधिक होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक जैनपंचांगानुसार प्राचीनकालमें आषाढ चौमासीसे बीस दिने श्रावण सुदीमें

पर्युषणा होती थी परन्तु जैन पंचांगके अभावसे वर्त्तमान-कालमेंभी लौकिक पंचाङ्गानुसार अधिक मास होनेसे उसीकी गिनती पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी मर्यादा है ऐसा उपरोक्त पाठार्थोंसे खुलासा दिखता है तथापि उपरोक्त पाठार्थोंका भावार्थ बदला करके मासवृद्धिके अभावसे ५० दिने भाद्र-पदमें पर्युषणा कही है उमीकोही वर्त्तमानमें मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने जिनाज्ञा विरुद्धका भय न करते हुए भाद्रपदमें ठहरानेका वृथा आग्रह करते हैं सो क्या लाभ प्राप्त करेंगे। तथा उपरोक्त व्याख्याओंमें "अभिवर्द्धित वर्षे" इस शब्दसे श्रीखरतरगच्छके श्रीसमय सुंदरजी तथा श्रीतपगच्छके श्रीकुलमंडनसूरिजी श्रीधर्म-सागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी इन सबी महाशयोंके लिखे वाक्यसे अधिक मासकी गिनती प्रत्यक्षपने सिद्ध है इसलिये अधिकमासकी गिनती निषेध भी नहीं हो सकती है तथापि कोई निषेध करेगा तो उत्सूत्र भाषणरूप होनेसे श्रीअनंत तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वजोंकी आज्ञा उल्लंघनका दूषण लगेगा क्योंकि श्रीअनंत तीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोंने अधिकमासके दिनोंकी गिनती पूर्वक तेरह मासोंका अभिवर्द्धितसंवत्सर कहाहै इसका विस्तार आगे शास्त्रोंके पाठार्थों सहित तथा युक्ति पूर्वक लिखनेमें आवेगा—

और भी श्रीपार्श्वचंद्रगच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुत स्कन्ध सूत्रकी वृत्तिके पृष्ठ ११२ से ११५ तकका पर्युषणा सम्बन्धी पाठ यहां दिखाता हूं तथाच तत्पाठः—

तेणं कालेणं तेणं समएणमित्यादि। व्याख्यातार्थः वासा- णन्ति आषाढ़चातुर्मासिक दिनादारभ्य सविंशति रात्रेमासे व्यतिक्रान्ते भगवान् "पज्जोसवेइति" पर्युषणामकार्षीत्। परिमाणस्त्येन उषणं निवासः। इत्युक्तेशिष्यःप्रश्नयितुमाह सेकेणट्ठेणमित्यादि प्रश्नवाक्यंसुबोधं गुरुराह। जन्नणमित्यादि निर्वचनवाक्यं यतः णं प्राग्वत् पएणमित्यादि अगारिणां गृह- स्थानां, अगाराणि गृहाणिः, कडियाइंत्ति कटयुक्तानि,उक्कं- पियाइं-धवलितानि, छन्नाइं-तृणादिभिः, लित्ताइं-लिप्तानि छगणाद्यैःक्वचित् गुत्ताइंत्ति पाठ स्तत्र गुप्तानि वृत्तिकरणं द्वार- पिधानादिभिः,घट्ठाइं विषमभूमिभंजनात्,मट्ठाइंश्लक्ष्णीकृतानि क्वचित्सम ट्ठाइंतिपाठ स्तत्र समन्तात् मृष्टानि मसृणीकृतानि, संधूपियाइंति-सौगन्ध्यापादनार्थं धूपनैर्वासितानि, खाओ- दगाइं कृतप्रणालीरूपजलमार्गाणि, खायनिद्धमणाइं-निद्धमणं खालं गृहात्सलिलं येन निर्गच्छति, अप्पणोअट्ठाए आत्मार्थं स्वार्थं गृहस्थैः कृतानि परिकर्मितानि करोति, कायइं करो- तीत्यादि विविधपरिकर्मार्थत्वात्, परिभुक्तानि तैः स्वय परिभुज्यमानत्वात्, अतएव परिणामितानि अचित्तीकृतानि भवन्ति, ततः सविंशतिरात्रे मासे गते अमी अधिकरणदोषा न भवन्ति। यदि पुनः प्रथममेव साधवः स्थिताःस्म इति ब्रूयुस्तदा ते प्रव्रजितानामवस्थानेन सुभिक्षं सम्भाव्यं गृहिणस्तत्रायो गोलकल्पा दंताल क्षेत्रकर्षण, गृहच्छादनादीनि कुर्युः, तथा चाधिकरणदोषा अतः पञ्चाशद्दिनैः स्थिता स्म इति वाच्यं, गणहराविति गणधरा अपि एवमेवाकार्षुः, अज्जत्ताए इति अद्य- कालीना आर्य्यतया व्रतस्थविरा इत्येके,अम्हंपित्ति अस्माक- मपि आचार्य्योपाध्याया, अम्हेविति वयमपीत्यर्थः॥ अन्तरा-

वियसे कप्पइ इत्यादि अन्तरापि च अर्वागपि कल्पते युज्यते पर्यु पितुं पर न कल्पते तां रजनीं भाद्रपदशुक्लपञ्चमीं उवायणा वित्तएति अतिक्रमितुं।उष निवासे इत्यागमिको धातुः पर्युषितुं वस्तुमिति सूत्रार्थः॥ अत्र अन्तरा वियसे कप्पइ इति कथनात् पर्युषणा द्विधा सूचिता, गृहिज्ञाताज्ञातभेदात्। तत्र गृहिणामज्ञाता यस्यां, वर्षायोग्य पीठफलकादौ प्राप्ते यतेन कल्पोक्त-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव स्थापना क्रियते, सा आषाढ़ शुक्लपौर्णमास्यां, योग्यक्षेत्राभावेतु पञ्च पञ्च दिन वृद्धया यावद्भाद्रपदसितपञ्चम्यां सावेकादशसु पर्वतिथिषु क्रियते। गृहिज्ञाता तु यस्यां सांवत्सरिकातिचारालोचनं, लुंचनं, पर्युषणा कल्पसूत्राकर्णनं, चैत्यपरिपाटी, अष्टमं, सांवत्सरिकंप्रतिक्रमणं च क्रियते, यया च व्रतपर्य्याय वर्षाणि गण्यन्ते सा नभस्य शुक्लपञ्चम्यां, एतावता यदा भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां सांवत्सरिकप्रतिक्रमण कृतं ततः ऊर्द्ध्वन्तु न कल्पते विहर्तुं, ततस्तदवधि विहर्त्तव्यं। अन्तरापिचैकादशसु पर्वतिथिषु क्रियते निवासो नतु प्रतिक्रमणं। कैश्चिदुच्यते यत्र वासस्तत्रैव प्रतिक्रमणमपि वेद्यं, यदियत्रैव वासस्तत्रैव प्रतिक्रमणंचेत्तर्ह्याषाढ़शुक्ल पञ्चदश्यामपि तत्कर्त्तव्यं न चैवं दृष्टमिष्टं वा, ततो नियत निवासएव वासोयुक्त इति परमार्थः। अमुमेवार्थं श्रीसुधर्मस्वामिव्यासः प्रतिपादयति। श्रीसमवायांगे यथा समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राए मासे विइक्कन्ते सत्तरिएहिंराइंदिएहिंसेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइत्ति। व्याख्यातु समणे इत्यादि वर्षाणां चातुर्मासप्रमाणस्य वर्षाकालस्य सविंशतिदिवसाधिके मासे व्यतिक्रान्ते पञ्चाशतिदिनेष्वतीतेष्वित्यर्थः। सप्तत्यां च रात्रि दिवसेषु शेषेषु संवत्सरप्रतिक्रम-

पजूष पर्म्मंदिवसे भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थः। वर्षास्वावासे वर्षावासः वर्षायस्थानं 'पज्जोसवेइत्ति' परिवसति सर्वथा करोति पञ्चाशद्दिनेषु व्यतिक्रान्तेषु तथाविध वसत्यभावादि कारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति, परं भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि नियमतोसि हृदयं। चन्द्रसंवत्सरस्यैवायं नियमः नाभिवर्द्धितस्येत्यादि। तथाहि निर्युक्तिकारः–एत्थउ पणगं पणगंकारणीयं जाय सवीसइमासो॥ सुद्धदसमी ठियाण आसाढीपुण्णिमो सरणं ॥१॥ इयसत्तरी जहण्णा असीइ णउई दसुत्तर सयंच॥ जइ वास मग्गसिरे दसरायातिण्णि उक्कोसा ॥२॥ काउण मासकप्पं तत्थेव ठियाण जइवास मग्गसिरे सालंबणाणं छम्मासितो जेठोग्गहोहोइ ॥३॥ सुगमाश्चैता नवरमाद्यगाथा द्वयस्य चूर्णिः॥ आसाढपुण्णिमाए ठियाण जति तण डगलादीणि गहियाणि पज्जोसवणाकप्पो य कहितो ते सावणबहुल पञ्चमीए पज्जोसवेंति। असति खेत्ते सावणबहुलदसमीए। असति खेत्ते सावणबहुलपन्नरसीए एवं पञ्च पञ्च उस्सारं तेणं जाव असतिखेत्ते भद्दवयसुद्धपञ्चमीए। अतोपरेण ण वट्टति अतिकमितुं आसाढपुण्णिमा तो आढत्तं मग्गंताणं जाव भद्दवय जोण्हस्स पञ्चमीए एत्थन्तरे जतिवासखेतं ण लद्धं ताहे रुक्खहेट्ठे ठितो तोवि पज्जोसवेयव्व एतेसु पव्वेसु जहालंभे पज्जोसवेयव्वमिति अपव्वे ण वट्टति अत्र पूर्वोक्तानि एकादशपर्व्वाणि अन्यानि तु वसतिमाश्रित्य अपर्व्वाणि ज्ञेयानि संवत्सरप्रतिक्रमणं तु भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामेवेति द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्थापना तु सम्प्रत्यध्ययने दर्शितैवेति न पुनरुच्यते ततएवावसेया। नवरं कल्पमाश्रित्य जघन्यतो नभस्य सितपञ्चम्यारारभ्य कार्त्तिकचातुर्मासंयावत् सप्ततिदिनमान एतावता

यदा सप्तत्या अहोरात्रेण चातुर्मासिकंप्रतिक्रमणं विहितं तद्-नन्तरं प्रत्यूषे विहर्त्तव्यं कारणान्तराभावे। तत्सद्भावे तु मार्ग-शीर्षेणापि सह आषाढ़ मासेनापि च सह षण्मासा इति ; यत् पुनरभिवर्द्धितवर्षे दिन विंशत्या पर्युषितव्यमिति, उच्यते तत्सिद्धान्त टिप्पनानुसारेण तत्र हि प्रायो युगमध्ये पैाषो युगान्ते चाषाढ़एववर्द्धते तानि च नाधुना सम्यग् ज्ञायन्ते अतो लौकिकटिप्पनानुसारेण यो मासो यत्र वर्द्धते स तत्रैव गणयितव्यः नान्याकल्पनाकार्य्या दृष्टं परित्यज्याऽदृष्टक-ल्पनानसङ्गता आम्नाया ऽपरिज्ञानात्तु कल्पनापि न निश्चयि-तव्येति सांप्रतं तु कालकाचार्य्याचरणाच्चतुर्थ्यामपि पर्युषणां विदधति इत्यादि ।

देखिये ऊपरके पाठमें श्रीसमवायाङ्गजी यथा तद्वृत्ति और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी निर्युक्ति तथा उसीकी चूर्णिके पाठोंके प्रमाण पूर्वक दिनोंकी गिनतीसे आषाढ़ चौमासीसे ५० वें दिन मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें निश्चय निवास पूवक ज्ञात पर्युषणामें सांवत्सरिक प्रतिक्रम-णादि करनेका प्रगटपने खुलासे दिखाया है और योग्य क्षेत्रके अभावसे ५० वें दिनकी रात्रिको भी उल्लंघन न करते हुए जंगलमें वृक्ष नीचे पर्युषणा करलेनेका भी खुलासा लिखाहै और चन्द्रसंवत्सरमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे कार्त्तिक तक स्वभावसेही ७० दिन रहते हैं सो जघन्यकालावग्रह कहा जाता है और प्राचीनकालमें जैन पंचाङ्गानुसार पौष वा आषाढ़की वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धितसंवत्सरमें आषाढ़ चौमा-सीसे वीस दिने श्रावण सुदीमें ज्ञात पर्युषणा करनेमें आती थी तब भी पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक स्वभावसेही

१०० दिन रहते थे इसलिये वर्त्तमानमें मास वृद्धि दो श्रावणादि होते भी पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखनेका आग्रह करना सो अज्ञानतासे प्रत्यक्ष अनुचित है और जैन पञ्चाङ्ग इस कालमें अच्छी तरहसे नहीं जाना जाता है इसलिये उसीके अभावसे लौकिक पंचाङ्गानुसार जिस महीनेकी जिस जगह वृद्धि होवे उसीकोही उसी जगह गिनना चाहिये परन्तु अन्य कल्पना नहीं करनी, अर्थात् जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार पौष, आषाढ़के सिवाय चैत्र, श्रावणादि मासोंके वृद्धिकी गिनती निषेध करनेके लिये गच्छाग्रहसे अपनी मति कल्पना करके अन्यान्य कल्पनायें भी नहीं करनी चाहिये क्योंकि लौकिक पंचाङ्गानुसार चैत्र, श्रावणादि मासोंकी वृद्धि होनेका प्रत्यक्ष प्रमाणको छोड़ करके पौष आषाढ़की वृद्धि होनेवाला जैन पंचाङ्ग वर्त्तमानमें प्रचलित नही होते भी उसी सम्बन्धी मास वृद्धिका अप्रत्यक्ष प्रमाणको ग्रहण करनेका आग्रह करना सो भी योग्य नहीं है क्योंकि जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पंचाङ्गानुसार वर्त्ताव करते भी उसी मुजब मास वृद्धिकी गिनती नहीं करना ऐसा कोई भी शास्त्रका प्रमाण नहीं होनेसे गच्छाग्रहकी युक्ति रहित कल्पना भी मान्य नहीं हो सकती है और आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना सो तो शास्त्रोक्त प्रमाण पूर्वक तथा युक्ति सहित प्रसिद्ध न्यायकी बात है ।

और अब प्राचीनकालमें जैन पञ्चाङ्गानुसार पर्युषणा की मर्यादावाला एक पाठ वांचक वर्गको ज्ञात होनेके लिये दिखाता हूं श्रीचैत्रवालगच्छके श्रीजगचंद्र सूरिजीकी परंपरामें

श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजी कृत श्रीबृहत्कल्पसूत्रकी वृत्तिका तीसरा खण्डका तीसरा उद्देशाके पृष्ठ ५८ से ५९ तकका पाठ नीचे मुजब जानो, यथा—

अथ यस्मिन् काले वर्षावासे स्थातव्यं यावन्तंवा कालं येन विधिना तदेतदुपदर्शयति । आसाढ़पुण्णिमाए वासावासमु होति अतिगमणं मग्गसिरबहुल दसमीउ जावएक्कंमि खेत्तंमि ॥ आषाढ़पूर्णिमायां वर्षावास प्रयोग्य क्षेत्रे गमनं प्रवेशः कर्त्तव्यं भवति तत्र चापवादतो मार्गशीर्ष बहुलदशमी यावदेकत्र क्षेत्रे वस्तव्यं एतच्च चिक्खिल्ल वर्षादिकं वक्ष्यमाणं कारणमङ्गीकृत्योक्तं,उत्सर्गतस्तु कार्त्तिकपूर्णिमायां निर्गन्तव्यं इदमेव भावयति ॥ बाहिट्ठिया वसभेहिं खेत्तंगाहितु वास पाउग्गं कप्पंकथेतुट्ठवणा सावणबहुलस्स पञ्चाहे ॥ यत्राषाढ़मासकल्पं कृतस्तत्रान्यत्र वा प्रत्यासन्नग्रामेस्थिता वर्षावासयोग्यक्षेत्रेवृषभासाधुसामाचारीं ग्राहयन्ति,तेच वृषभा वर्षा प्रयोग्यं संस्तारकं तृण डगल क्षार मल्लकादिकमुपधिं गृह्णन्ति, तत आषाढ़पूर्णिमायां प्रविष्टाः प्रतिपदमारभ्य पञ्चभिरहोभिः पर्युषणा कल्पं कथयित्वा श्रावण बहुल पञ्चम्यां वर्षाकाले सामाचार्याःस्थापनां कुर्वन्ति पर्युषयन्तीत्यर्थः॥ इत्थय अणभिग्गहिय वीसतिरायं सवीसइ मासं तेण परमभिग्गहियं गाहिणायं कत्तिओजाव ॥ अत्रेत्ति श्रावण बहुल पञ्चम्यादौ आत्मना पर्युषितेऽपि अनभिग्रहीतमनवधारितं गृहस्थानां पुरतः कर्त्तव्यं किमुक्तं भवति यदि गृहस्थाः पृच्छेयुरार्यायूयमत्र वर्षाकाले स्थितावा न वेति एवं पृष्टे सति स्थितावयमत्रेति सावधारणं न कर्त्तव्यं, किन्तु तत्संदिग्धं, यथा नाद्यापि निश्चितः स्थिता अस्थिता वेति,इत्थमनभिगृहीतं कियन्तं कालं वक्तव्यं उच्यते

यद्यभिवर्द्धितो सौ संवत्सरस्ततो विंशतिरात्रि दिनानि,अथ चान्द्रोसौ ततः स विंशतिरात्रं मासं यावदनभिगृहीतं कर्त्तव्यं, तेण विभक्ति व्यत्यया ततः परं विंशति रात्र मासा चोर्द्ध मभिगृहीतं निश्चितं कर्त्तव्यं गृहिज्ञातश्च गृहस्थानां पृच्छतां स्थापना कर्त्तव्या, यथा वयमत्र वर्षाकालेस्थिता एतच्च गृहिज्ञातं कार्त्तिकमासं यावत् कर्त्तव्यं किं पुनः कारणम् कियति काले व्यतीत एव गृहिज्ञातं क्रियते नार्वागित्यत्रो-च्यते ॥ असिवाइ कारणेहिं अहवा वासं ण सुट्ठु आरद्धं अभिवट्ढियंमि वीसा इयरेसु सवीसइ मासो ॥ कदाचित्तत्-क्षेत्रे अशिवं भवेत् आदिशब्दात् राजदुष्टादिकं वा भयमुप-जायेत एवमादिभिः कारणैः, अथवा तत्र क्षेत्रे न सुष्टु वर्षं वर्षितुमारब्धं येन धान्यनिष्पत्तिरुपजायते ततश्च प्रथममेव स्थिता वयमित्युक्ते पश्चादशिवादि कारणे समुपस्थिते यदि गच्छन्ति ततो लोको ब्रूयात् अहो एते आत्मानं सर्वज्ञ पुत्र तयाख्यापयन्ति परं न किमपि जानन्ति मृषावादं वा भाषन्ते स्थिता स्म इति भणित्वा सम्प्रति गच्छन्तीति। अथाशिवादि कारणेषु सञ्जातेषु अपि न गच्छंति तत आज्ञाऽतिक्रमणादि दोषा अपिच स्थिता स्म इत्युक्ते गृहस्थाश्चिन्तयेयुरवश्यं वर्षं भविष्यति येनेति वर्षा रात्रमत्र स्थिताः ततो धान्यंविक्री-णीयुः गृहं वाच्छादयेयुः हलादीनि वा स्थापयेयुः यतएव मतो अभिवर्द्धितवर्षे विंशतिरात्रे गते इतरेषु च त्रिषु चन्द्रसम्वत्सरेषु सविंशतिरात्रे मासे गते गृहिज्ञातं कुर्वन्ति॥ एत्थय पणगं पणगं कारणीयं, जाव सवीसइ मासो, सुद्ध दसमी ठियाण,आसाढीपुण्णिमोसरणं॥ अत्रेति आषाढ़पूर्णि-मायां स्थिताः पञ्चाहं यावदेव संस्तारकं डगलादि गृह्णन्ति

रात्रौ च पर्युषणाकल्पं कथयन्ति ततः श्रावण बहुलपञ्च
पर्युषणां कुर्वन्ति, अथाषाढ़पूर्णिमायां क्षेत्रं न प्राप्तास्तत
मेव पञ्चरात्रं वर्षावास प्रयोग्यमुपधिं गृहीत्वा पर्युषणा क
च कथयित्वा श्रावणबहुलदशम्यां पर्युषणयन्ति एवं कार
रात्रि दिवानां पंचकं पंचकं वर्द्धयता तावत्स्थेयं या
सविंशति रात्रो मासः पूर्णः। अथवा ते आषाढ़शुद्ध दशम्या
वर्षाक्षेत्रे स्थितास्ततस्तेषां पंचरात्रेण डगलादौ गृहीते प
षणा कल्पे च कथिते आषाढ़ पूर्णिमायां समवसरणं पर्यु
भवति एषउत्सर्गः॥ अत ऊर्द्ध्वं कालं पर्युषणमनुतिष्ठतां स
ऽप्यपवादः। अपवादेऽपि सविंशतिरात्रात् मासात् प
नातिक्रमयितुं कल्पते यद्येतावत्कालेऽपि गते वर्षायोग्यक्षे
लभ्यते ततो वृक्षमूलेऽपि पर्युषितव्यं॥ अथ पंचक परि
णिमधिकृत्य ज्येष्ठकल्पावग्रहप्रमाणमाह। इयस
जहन्ना असीइ णउई दसुत्तरसयं च जइवास मग्गसिरे दस
तिण्णि उक्कोसा॥ इयइति उपदर्शने ये किलाषाढ़पू
मायाः सविंशतिरात्रे मासे गते पर्युषयन्ति तेषां सप्तति
सानि जघन्यो वर्षा वासावग्रहो भवति, भाद्रपदशुद्धपंचम
नन्तरं कार्त्तिकपूर्णिमायां सप्ततिदिनसद्भावात्। एवं भ
पदबहुलदशम्यां पर्युषयन्ति तेषामशीतिर्दिवसा म
वर्षाकालावग्रहः। श्रावणपूर्णिमायां नवतिर्दिवसाः। श्र
बहुलदशम्यां दशोत्तरशतं दिवसा मध्यमएवकालावग्रहो
वन्ति॥ समवायांगेनुक्तमपि इत्थं वक्तव्यं। भाद्रपदामावास
पर्युषणे क्रियमाणे पंचसप्ततिदिवसाः। भाद्रपदबहुलपंच
पंचाशीति। श्रावणशुद्धदशम्यां पंचनवतिः। श्रावणामा
पंचोत्तरशतं। श्रावण बहुलपंचम्यां पंचदशोत्तरशतं। अ

यद्यभिवर्द्धितो सौ संवत्सरस्ततो विंशतिरात्रि दिनानि,अथ चान्द्रोसौ ततः स विंशतिरात्रं मासं यावदनभिगृहीतं कर्त्तव्यं, तेण विप्पक्कि व्यत्यया ततः परं विंशति रात्र मासा चोर्द्धमभिगृहीतं निश्चितं कर्त्तव्यं गृहिज्ञातश्च गृहस्थानां पृष्छर्ता ज्ञापना कर्त्तव्या, यथा वयमत्र वर्षाकालेस्थिता एतच्च गृहिज्ञातं कार्त्तिकमासं यावत् कर्तव्यं किं पुनः कारणम् कियति काले व्यतीत एव गृहिज्ञातं क्रियते नार्वागित्यत्रो-च्यते ॥ असिवाइ कारणेहि अहवा वासं ण सुट्‌ठु आरद्धं अभिवट्ढियंमि वीसा इयरेसु सवीसइ मासो ॥ कदाचित्तत्-क्षेत्रे अशिवं भवेत् आदिशब्दात् राजदुष्टादिकं वा भयमुप-जायेत एवमादिभिः कारणे, अथवा तत्र क्षेत्रे न सुष्ठु वर्षं वर्षितुमारब्धं येन धान्यनिष्पत्तिरुपजायते ततश्च प्रथममेव स्थिता वयमित्युक्ते पश्चादशिवादि कारणे समुपस्थिते यदि गच्छन्ति ततो लोको ब्रूयात् अहो एते आत्मानं सर्वज्ञ पुत्र तयाख्यापयन्ति परं न किमपि जानन्ति मृषावादं वा भावन्ते स्थिता स्म इति भणित्वा सम्प्रति गच्छन्तीति । अथाशिवादि कारणेषु सञ्जातेषु अपि न गच्छंति तत आज्ञाअतिक्रमणादि दोषा अपिच स्थिता स्म इत्युक्ते गृहस्थाश्चिन्तयेयुरवश्यं वर्षं भविष्यति येनेति वर्षा रात्रमत्र स्थिताः ततो धान्यंविक्री-णीयुः गृहं वाच्छादयेयुः हलादीनि वा स्थापयेयुः यतएव मतो अभिवर्द्धितवर्षे विंशतिरात्रे गते इतरेषु च त्रिषु चन्द्रसम्वत्सरेषु सविंशतिरात्रे मासे गते गृहिज्ञानं कुर्वन्ति॥ एत्थय पणगं पणगं कारणीयं, जाव सवीसइ मासो, सुद्ध दसमी ठियाण,आसाढीपुण्णिमोसरणं॥ अत्रेति आषाढ़पूर्णि-मायां स्थिताः पञ्चाहं यावदेव संस्तारकं डगलादि गृह्णन्ति

२० दिने तथा ५० दिने ज्ञात याने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई प्रसिद्ध पर्युषणा करे सो यावत् कार्त्तिकतक उसी क्षेत्रमें ठहरे और जघन्यसे ७० दिन, तथा मध्यमसे १२० दिन और उत्कृष्टसे १८० दिनका कालावग्रह होता है ।

और भी पर्युषणा सम्बन्धी-भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, समाचारी, तथा प्रकरणादि ग्रन्थोंके अनेक पाठ मौजूद हैं परन्तु विस्तारके कारणसे यहां नहीं लिखता हूं। तथापि श्रीदशाश्रुत स्कन्ध सत्रकी चूर्णि, श्रीनिशीथचूर्णि, श्रीवृहत्कल्पचूर्णि वगैरह कितनेही शास्त्रोंके पाठ आगेप्रशांगोंपात लिखनेमें भी आवेंगे ।

अब मेरा सत्यग्रहणाभिलाषी श्रीजिनाज्ञा इच्छुक सज्जन पुरुषोंको इतनाही कहना है कि वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार जिस मासकी वृद्धि होवे उसीके ३० दिनोंमें प्रत्यक्ष पने सांसारिक तथा धार्म्मिक व्यवहार सब दुनियांमें करनेमें आता है तथा समय, आवलिका, मुहुर्त्तादि शास्त्रोक्त कालके व्यतीतकी व्याख्यानुसार और सूर्योदयसे तिथि वारोंके परावर्तन करके दिनोंकी गिनती निश्चयके साथ प्रत्यक्ष सिद्ध है तथापि उसीकी गिनती निषेध करते हैं सो निष्केवल हठवादसे संसारवृद्धिकारक उत्सूत्र भाषणरूप बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये वृथा प्रयास करते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोंकी गिनती पूर्वक उपरोक्त व्याख्याओंके अनुसार आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो श्रीजिनाज्ञाका आराधनपना है। इसलिये-मैं-प्रतिज्ञा पूर्वक आत्मार्थियोंको कहता हूं कि-वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमण्डली वगैरह विद्वान् महाशय पक्षपात रहित हो करके विवेक बुद्धिसे उपरोक्त श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओंका तात्पर्यार्थको विचारेंगे तो मासवृद्धि होनेसे अपने पूर्वजोंकी

पूर्णिमायां तु पर्युषिते विंशत्युत्तरं दिवसशतं भवति ॥ एव मेतेषां प्रकाराणां पर्यावासानामेकक्षेत्रे स्थित्वाकार्त्तिक चातुर्मासिक प्रतिपदि निर्गन्तव्यं । अथ मार्गशीर्षे वर्षा भवति कर्द्दमजलाकुलाः पन्थानः ततोअपवादेनैक दशरात्रं भवतीति । अथ तथापि वर्षा नोपरते ततो द्वितीय दशरात्रं तथा यति अथैव मपि वर्षा न तिष्ठति ततस्तृतीयमपि दशरात्रमासितव्य एव त्रीणि दशरात्राणि उत्कर्षतस्तत्र क्षेत्रे आसितव्यं मार्गशिर पौर्णमासीं यावदित्यर्थः ॥ तत उर्द्धं यद्यपि कर्द्दमाकुला पंथानो वर्षं वा गाढमनुपरतं वर्षति यद्यपि च पानीयैः पूर्य्यमाणैस्तदानीं गम्यते तथापि अवश्यं निर्गन्तव्यं एवं पण्मासिको ज्येष्टकल्पावग्रहः सम्पन्नः ॥ अथ तमेव षाण्मासिकमाह । काऊण मासकप्पं तत्थेव ठियाण तइवास मग्गसिरे सालंवणाणं छम्मासिओ जेट्टो ग्गहोहोइति । यस्मिन् क्षेत्रे आषाढ़मास कल्पकृतः तदन्यद्वर्षावासयोग्य तथाविधं क्षेत्रं न प्राप्तं ततो मासकल्पं कृत्वा तत्रैव वर्षावासं स्थितानां ततश्चातुर्मासानन्तरं कर्द्दमवर्षादिभिः कारणैरतीते मार्गशीर्षमासे निर्गतानां षाण्मासिको ज्येष्टकल्पावग्रहो भवति एकक्षेत्रे अवस्थानमित्यर्थः ॥

देखिये ऊपरके पाठमें अधिकरण दोषोंका निमित्तकारण । और कारण योगे गमन करना पड़े तो साधुधर्मकी अवहेलना न होनेके लिये वर्षायोग्य उपधिकी प्राप्ति होनेसे योग्य-क्षेत्रमें अज्ञात याने गृहस्थी लोगोंको नहीं मालूम हुई अनिश्चित पर्युषणा स्थापन करे वहां उसी रात्रिको पर्युषणा कल्प कहे (श्रीकल्पसूत्रका पठन करे) और योग्यक्षेत्रके अभावसे पांच पांच दिनकी वृद्धि करते चन्द्रसंवत्सरमें ५० दिन तक तथा 'अभिवर्द्धित संवत्सरमें २० दिनतक अज्ञात पर्युषणा करे परन्तु

२० दिने तथा ५० दिने ज्ञात माने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई प्रसिद्ध पर्युषणा करे सो यावत् कार्त्तिकतक उसी क्षेत्रमें ठहरे और जघन्यसे ७० दिन, तथा मध्यमसे १२० दिन और उत्कृष्टसे १८० दिनका कालावग्रह होता है।

और भी पर्युषणा सम्बन्धी-भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, समाचारी, तथा प्रकरणादि ग्रन्थोंके अनेक पाठ मौजूद हैं परन्तु विस्तारके कारणसे यहां नहीं लिखता हूं। तथापि श्रीदशाश्रुत स्कन्ध सत्रकी चूर्णि, श्रीनिशीथचूर्णि, श्रीवृहत्कल्पचूर्णि वगैरह कितनेही शास्त्रोंके पाठ आगेप्रशांगोंपात लिखनेमें भी आवेंगे।

अब मेरा सत्यग्रहणाभिलाषी श्रीजिनाज्ञा इच्छुक सज्जन पुरुषोंको इतनाही कहना है कि वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार जिस मासकी वृद्धि होवे उसीके ३० दिनोंमें प्रत्यक्ष पने सांसारिक तथा धार्म्मिक व्यवहार सब दुनियांमें करनेमें आता है तथा समय, आवलिका, मुहुर्त्तादि शास्त्रोक्त कालके व्यतीतकी व्याख्यानुसार और सूर्योदयसे तिथि वारोंके परावर्तन करके दिनोंकी गिनती निश्चयके साथ प्रत्यक्ष सिद्ध है तथापि उसीकी गिनती निषेध करते हैं सो निष्केवल हठवादसे संसारवृद्धिकारक उत्सूत्र भाषणरूप बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये वृथा प्रयास करते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोंकी गिनती पूर्वक उपरोक्त व्याख्याओंके अनुसार आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो श्रीजिनाज्ञाका आराधनपना है। इसलिये-मैं-प्रतिज्ञा पूर्वक आत्मार्थियोंको कहता हूं कि-वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमण्डली वगैरह विद्वान् महाशय पक्षपात रहित हो करके विवेक बुद्धिसे उपरोक्त श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओंका तात्पर्यार्थको विचारेंगे तो मासवृद्धि होनेसे अपने पूर्वजोंकी

मर्यादाके प्रतिकूल तथा पञ्चाङ्गीके ,प्रमाणोंके भी विरुद्ध होकरके गच्छाग्रहके पक्षपातसे दो श्रावण होते भी प्रत्यक्षपने ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका वृथा आग्रह कदापि नहीं करेंगे। और उपरोक्त शास्त्रानुसार तथा युक्ति पूर्वक ५० दिने दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करनेवाले श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषों पर द्वेष बुद्धिसे वृथा उत्सूत्र रूप मिथ्याभाषणसे आज्ञा भङ्गका दूषण लगाकर बाल-जीवोंको भ्रममें गेरनेका साहस भी कदापि नहीं करेंगे।

और फिर अपनी चातुराईसे आप निर्दूषण बननेके लिये जैन शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें नहीं गिना है ऐसा उत्सूत्र भाषणरूप कहके अज्ञजीवोंके आगे मिथ्यात्व फैलाते हैं उसीका निवारण करनेके लिये और भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेके लिये इसजगह अधिक मासकी गिनतीके प्रमाण करने सम्बन्धी पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाण यहां दिखाता हूं।

श्रीसुधर्मस्वामीजी कृत श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्रमें १, तथा श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रमें २, औरसंवत् १३०० के अनुमान श्रीमलयगिरिजी कृत उपरोक्त दोनों सूत्रोंकी दोनों वृत्ति-योंमें ४, श्रीभद्रबाहुस्वामिजीकृत श्रीदशवैकालिकसूत्रके चूलिकाकी निर्युक्तिमें ५, तथा श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत तत् निर्युक्तिकी वृहद्वृत्तिमें ६, श्रीनिशीथसूत्रके लघुभाष्यमें, वृह-द्भाष्यमें ७, चूर्णिमें ८ श्रीवृहत्कल्पके लघुभाष्यमें, वृहद्भाष्यमें९, चूर्णिमें १० और वृत्तिमें ११ श्रीसमवायांगजीमें १२, तथा तद्वृत्तिमें १३ औरश्रीस्थानांगजीसूत्रकी वृत्तिमें १४ श्रीनेमीचन्द्रसूरिजी कृत श्रीप्रवचनसारोद्धारमें १५, श्रीसिद्ध-सेनसूरिजी कृत तत्सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें १६, श्रीउदयसागरजी कृत तत्सूत्रकी लघुवृत्तिमें १७, श्रीजिनपतिसूरिजीकृत श्रीसमा-चारी ग्रन्थमें १८,श्रीसंघपट्टक लघुवृत्तिमें, वृहद्वृत्तिमें १९ श्रीजि नप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपासमाचारीमें २० और श्रीसमय

न्दरजी कृत श्रीसमाचारी शतकमें २१ और श्रीपार्श्वचन्द्र
गच्छके श्रीब्रह्मर्षिजी कृत श्रीदशाश्रुतस्कन्ध सूत्रकी वृत्तिमें
२२ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको गिनतीमें
प्रमाण किया हैं इसलिये जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी
पुरुष अधिकमासकी गिनती कदापि निषेध नहीं कर सकते
हैं इस जगह भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेके वास्ते
थोड़ेसे अधिकमासकी गिनतीके विषयवाले पाठ लिख
देखाता हुं —

श्रीतपगच्छके पूर्वज कहलाते श्रीनेमिचन्द्र सूरिजी महा-
राज कृत श्रीप्रवचनसारोद्धार मूलसूत्र गुजराती भाषा सहित
मुंबईवाले श्रावक भीमसिंह माणककी तरफसें श्रीप्रकरण
रत्नाकरके तीसरे भागमें छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके पृष्ठ
३६४ सें ३६५ तक नीचे सुजब भाषा सहित पाठ जानो—

अवतरणः—मासाण पञ्चभेयत्ति एटले मासना पांच-
भेदोनुं एकसोने एकतालीसमुंद्वार कहे छे। मूलः—मासाय
पंचसुत्ते, नस्कत्ते चंदीओय रिउमासो॥ आइच्चोवियेअवरो,
अभिवढ्ढिओ तहय पंचमओ॥९०४॥

अर्थः-सूत्र जे श्रीअरिहंत परमात्मानुं प्रवचन तेने विषे
मास पांच कह्या छे। तेमा प्रथमजे नक्षत्रनी गणनाये थाय
तेनी रीतकहे छेः-चंद्रमाचारके० संचरतो जेटले काले अभि-
जितादिकथी विचरतो उतराषाढ़ा नक्षत्र सुधी जाय तेने
प्रथम नक्षत्र मास कहिये। बीजो चंदिओयके० चंद्रथकीथाय
ते अंधारा पड़वाथकी आरंभीने अजवाली पूर्णिमा सुधी
चंद्रमास केहेवाये। त्रीजोरिओके० ऋतु ते लोक रूढ़िये साठ
अहोरात्रीये ऋतु कहिये। तेनो अर्द्धमास एटले त्रीस अहो-

रात्री प्रमाणनो ते ऋतुमास जाणवो। चोथो, आदित्य जे सूर्य तेहनुं अयन एकसोने ज्यासी दिवसनुं होय। तेनो छट्ठोभाग ते आदित्य मास कहिये। पांचमो अभिवर्द्धित ते तेर चंद्रमासे थाय। बार चंद्रमासे संवत्सर जांणवो परन्तु जेवारे एक वधे तेवारे तेने अभिवर्द्धित मास कहिये एनुंज प्रमाण विशेष देखाड़े छे। मूल.—अहरत्तसित्तवीस तिसत्त सत्तट्ठि भाग नक्खतो॥ चंदोअ उगतीस बसट्ठिभागाय बत्तीसं॥ ९०५॥

अर्थः—सतावीस अहोरात्री अने एक अहोरात्रीना अड़सठ भाग करिये तेवा एकवीस भागे अधिक एक नक्षत्र मासथाय। अने मासना उगणत्रीस अहोरात्री तेना उपर एक अहोरात्रिना बासठभाग करिये एवा बत्रीस भागे अधिक एक चंद्रमास थाय।

मूलः—उउमासो तीसदिणो, आइच्चोवि तीस होइ अद्धंच। अभिवड्ढिओअ मासो चउवीस सएण छेएण ॥९०६॥ अर्थः—ऋतुमास ते संपूर्ण त्रीसदिवस प्रमाणनो जाणवो तथा आदित्यमास ते त्रीसदिवस अने उपर एक दिवसना साठिया त्रीसभाग करिये तेटला प्रमाणनो जांणवो। अने अभिवर्द्धितमास ते चउवीसे अधिक एकशतछेद एटले भाग तेज देखाड़े छे॥ ९०६॥ मूलः—भागाणिगवीससयं, तीसाऐगाहिया दिणाणंव। एएजह निप्पत्तिं, लहंति समयाऊतहनेयं॥ ९०७॥ अर्थः—ते पूर्वोक्त एकसोने चोवीसभाग एक अहोरात्रना करिये तेवा एकसो एकवीसभाग अने एकदिवसे अधिक त्रीस एटले एकत्रीस दिवस अर्थात् एकत्रीस दिवसने एक अहोरात्रीना एकसो चोवीसभाग मांहेला

एकसोने एकवीसभाग उपर एटेलुं अभिवर्द्धित मासनुं प्रमाण जाणवुं एरीतेए पांचमासनी जेम निःप्पत्ति एटले प्राप्तिथाय छे तेमसमयके० सिद्धान्त थकी जांणवी इति गाथाचतुष्ट-यार्थ ॥ ९०७ ॥ अवतरणः—वरिमाणपंचभेयत्ति एटले वर्षना पांचभेदनुं एकसोने बेतालीसमु द्वार कहे छे ।

मूलः—संवछराउ पंचउ "चंदे चंदे भिवड्ढिए चेव । चंदे भिवड्ढएतह बासट्ठिमासे हि जुगमाणं॥९०८॥ अर्थः—चंद्रादिक संवत्सर पांचकह्याछे तेमा पूर्वोक्त चंद्रमासे जे नीपन्योते चंद्र-संवत्सर जांणवो । तेनु प्रमाण त्रणसे चोपनदिवस अने एक दिवसना बासठभाग करिये तेवा बारभाग उपर जाणवा तेमज बीजा चंद्रसंवत्सरनुं पण मानजाणवुं । हवे चंद्रसंवत्सर थी एक अधिकमास थाय ऐटले तेने अभिवर्द्धित संवत्सरजांणवो तेनु प्रमाण त्रणसे त्र्यासीदिवस अने एक दिवसना बासठ-भाग करी तेमांना चुमालीसभाग एवो एक अभिवर्द्धित संवत्सर जाणवो एकत्रीश अहोरात्र अने एकदिवसना एकसो चोवीसभाग करिये तेमांहिला एकसो एकवीसभाग उपर ए अभिवर्द्धित मासनुं मान जाणवुं । हवे पूर्वोक्त माने अभि-वर्द्धित संवत्सर बे अने चंद्रसंवत्सर त्रण एवा पांच संवत्सरे एक युगमान थाय छे ते बासठचंद्रमास प्रमाणक छे । सारांश एकयुगमां त्रण चांद्रसंवत्सर ते चांद्रसंवत्सरना प्रत्येक बार-मास मली छत्रीस चांद्रमास अने बे अभिवर्द्धित संवत्सर तेमां एक अभिवर्द्धित संवत्सरना तेरे चांद्रमास ए प्रमाणे बीजा वर्षना पण तेरे मलो एकंदर छवीसमास अने पूर्वोक्त चांद्रमास छत्रीस मलीने बासठ चांद्रमासे एक युगनुं मान-थाय ॥ ९०८ ॥ इति—

देखिये उपरमें श्रीतपगच्छके पूर्वज श्रीनेमिचंद्र सूरिजीनें अधिक मासकी गिनती मंजूर करके तेरह चंद्रमाससे अभिवर्द्धित संवत्सर कहा और एकयुगके बासठ (६२) मासकी गिनती दिखाइ अधिक मासके दिनोंकी भी गिनती खुलासें लिखी हैं इस लिये वर्तमानमें श्रीतपगच्छवाले महाशयोंको अपने पूर्वजके प्रतिकुल होकर अधिकमासकी गिनती निषेध करनी नही चाहिये किन्तु अधिकमासकी गिनती अवश्य-मेव मंजूर करनी योग्य हैं ।

औरसुनिये—श्रीमलयगिरिजी कृत श्रीचंद्रप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ ९९ से १०० तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरः पंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव उक्तंच चंदो चंदो अभिवड्ढितोय, चंदो अभिवड्ढितो चेव। पंचसहियं जुगमिणं, दिट्ठं ते लोकदंसीहिं ॥ १ ॥ पढम बिइयाउ चंदातइयं अभिवड्ढियं वियाणाहिं। चंदे चेव चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण ॥ २ ॥ तत्र द्वादशपूर्णमासी परावर्त्ता यावता कालेन परिसमाप्ति मुपयाति तावत्काल विशेषश्चंद्रसंवत्सरः। उक्तंच । पुन्निम परियट्टा पुण बारस मासे हवइ चंदो। एकश्च पूर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रोमासस्तस्मिंश्च चंदे मासेऽहोरात्र परिमाण चिंतायामेकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टि भाग अहोरात्रस्य एतत् द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रिंदिवानां द्वादशच द्वाषष्टि-भागा रात्रिंदिवसस्य एवं परिमाणश्चांद्रः संवत्सरः तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेन त्रयोदश चंद्रस्य मासा भवति सोऽभिवर्द्धित संवत्सरः॥ उक्तंच ॥ तेरसय चंद्रमासा

वासो अभिवढ्ढिओय नायव्वो । एकस्मिन् चंद्रमासे अहो-
रात्रा एकोनत्रिंशद् भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागस्य अहो-
रात्रस्य एतच्चानन्तरं चोक्तं तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुणिते
जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वा
रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्रप्रमाणोऽभि
वर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धि
संवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते
इह युगं चंद्राऽभिवर्द्धितरूप पञ्चसंवत्सरात्मकं सूर्य्यसंवत्सरा
पेक्षया परिभाव्यमान नन्यूनातिरिक्तानि पञ्चवर्षाणि
भवन्ति सूर्य्यमासश्च सार्द्धत्रिंशदहोरात्राणि प्रमाण चंद्रमास
एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्य तते
गणितपरिभावनया सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रां
एकश्चांद्रमासोऽधिको लभ्यते तथाच पूर्वाचार्य्यप्रदर्शितेयं क
रण गाथा ॥ चंदस्स जो विसेसो आइच्चस्स य हविज्ज मासस्स
तीसइ गुणिओ संतो हवइ हु अहिमासओ एक्को ॥१॥ अस्याऽक्षर
गमनिका आदित्यस्य आदित्य संवत्सरः सम्बन्धिनो मासस्य
मध्यात् चंद्रस्य चंद्रमासस्य यो भवति विश्लेष इह विश्ले
कृते सति यदवशिष्यते तदुपचारात् विश्लेषः स त्रिंशत
गुण्यते गणितः सन् भवत्येकोऽधिकमासः तत्र सूर्य्यमासपरि
माणात् सार्द्धत्रिंशदहोरात्ररूपात् । चन्द्रमासपरिमाणमेकोन
त्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्येवं रूप शो
ध्यते तत स्थितं पश्चाद्दिनमेकमेकेन द्वाषष्टिभागेन न्यूनं तच्च
दिनं त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रिंशद्दिनानि एकश्च द्वाषष्टिभा
त्रिंशता गुणितो जातास्त्रिंशत् द्वाषष्टिभागाः ते त्रिंशद्दिनेभ्य
शोध्यन्ते ततस्थितानि शेषाणि एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिं

अथ द्वाषष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्य्यमासाः षष्टिस्तौ भूयोऽपि सूर्य्यसम्वत्सरः सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासग्गो जुगद्धंमि बावीसे पव्वसए हवइ हु बीओ जुगंतंमि॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्द्दिक्षुः प्रतिवर्षं पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालङ्कारौ चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्वसंख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशति. पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव॥ उक्तंच॥ चंदो चंदो अभिवढ्ढिओय चंदोऽभिवढ्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठंते लोक दंसीहिं॥ १॥ पढम विइयाउ चंदा तइयं अभिवढ्ढिअं वियाणा हि चंदेचेव चउत्थं पंचममभिवढ्ढियं जाण॥ २॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्तायां यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत् कालविशेषश्चन्द्र संवत्सरः॥ उक्तंच॥ पुन्निम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चंदो॥ एकस्य पौर्णमासी परावर्त्ते एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चांद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः॥ उक्तंच॥ तेरसय चंदमासा वासो अभिवढ्ढिओय नायव्वो॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशश्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानित्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

अथ द्वाषष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्यसम्वत्सरः सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धंमि बावीसे पव्वसए हवइ हु बीओ जुगंतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिकान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्द्दिशुः प्रतिवर्षं पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्स णमित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालंकृतौ चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्वसंख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव॥ उक्तंच॥ चंदो चंदो अभिवड्ढिओय चंदोऽभिवड्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठं ते लोक्क दंसीहिं॥ १॥ पढम बिइयाउ चंदा तइयं अभिवड्ढिअं वियाणा हि चंदेचेव चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण॥ २॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्तायावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत् कालविशेषश्चान्द्र संवत्सरः॥ उक्तंच॥ पुण्णिम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चंदो॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चांद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः॥ उक्तंच॥ तेरसय चंदमासा वासो अभिवड्ढिओय नायव्वो॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

शश्च द्वापष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्य्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्य्यसम्वत्सरः सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धंमि बावीसे पव्वसए हवइ हु बीओ जुगंतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिशुः प्रतिवर्षं पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालङ्कारे चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्वसंख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव॥ उक्तंच॥ चंदो चंदो अभिवड्ढिओय चंदोऽभिवड्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठं ते लोक दंसीहिं॥ १॥ पढम विइयाउ चंदा तइयं अभिवड्ढिअं वियाणा हि चंदेचेव चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण॥ २॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्ताया यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत् कालविशेषश्चान्द्र संवत्सरः॥ उक्तंच॥ पुण्णिम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चंदो॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चांद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः॥ उक्तंच॥ तेरसय चंदमासा वासो अभिवड्ढिओय नायव्वो॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

शश्च द्वापष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्य्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्य्यसम्वत्सरः सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धंमि बावीसे पव्वसए हवइ हु बीओ जुगंतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्ध प्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्द्दिसुः प्रतिवर्षं पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालङ्कारौ चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्व संख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशति. पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं सर्वैरपि तीर्थंकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव॥ उक्तंच॥ चंदो चंदो अभिवड्ढिओय चंदोऽभिवड्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठं ते लोक्क दंसीहि॥ १॥ पढम बिइयाउ चंदा तइयं अभिवड्ढिअं वियाणा हि चंदेचेव चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण॥ २॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्ताया यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत् कालविशेषश्चन्द्र संवत्सरः॥ उक्तंच॥ पुन्निम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चंदो॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चांद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः॥ उक्तंच॥ तेरसय चंदमासा वासो अभिवड्ढिओय नायव्वो॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

शश्च द्वाषष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्य्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्य्यसम्वत्सरः सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्दंमि बावीसे पव्वसए हवइ हु बीओ जुगंतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिदिक्षुः प्रतिवर्ष पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालंकारे चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्व संख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्त तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव॥ उक्तंच॥ चंदो चंदो अभिवढ्ढिओय चंदोऽभिवढ्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठं ते लोक्क दंसीहिं॥ १॥ पढम बिइयाउ चंदा तइयं अभिवढ्ढिअं वियाणा हि चंदेचेव चउत्थं पंचमसभिवढ्ढियं जाण॥ २॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्तोया यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत् कालविशेषश्चन्द्र संवत्सरः॥ उक्तंच॥ पुम्निम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चंदो॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चांद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः॥ उक्तंच॥ तेरसय चंदमासा वासो अभिवढ्ढिओय नायव्वो॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

शश्च द्वाषष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्य्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्य्यसम्वत्सरसत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धंमि बावीसे पव्वसए हवइ हु वीओ जुगंतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिदिक्षुः प्रतिवर्षं पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालङ्कारे चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्वसंख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव ॥ उक्तंच ॥ चंदो चंदो अभिवड्ढिओय चंदोऽभिवड्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठं ते लोक दंसीहिं ॥ १ ॥ पढम विइयाउ चंदा तइयं अभिवड्ढिअं वियाणा हि चंदेचेव चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण ॥ २ ॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्ताया यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत् कालविशेषश्चान्द्र संवत्सरः ॥ उक्तंच ॥ पुण्णिम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चंदो ॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चांद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः ॥ उक्तंच ॥ तेरसय चंदमासा वासो अभिवड्ढिओय नायव्वो ॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

अथ द्वापष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्य्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्य्यसम्वत्सरः सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सट्ठीये अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धंमि बावीसे पव्वसए हवइ हु बीओ जुगंतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टी अतीताया षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिदिक्षुः प्रतिवर्षं पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालंकृतौ चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्व संख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्तरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ——

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव ॥ उक्तंच ॥ चंदो चंदो अभिवड्ढिओय चंदोऽभिवड्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठं ते लोक दंसीहिं ॥ १ ॥ पढम विइयाउ चंदा तइयं अभिवड्ढिअं वियाणा हि चंदेचेव चउत्थं पंचममभिवड्ढियं जाण ॥ २ ॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्ताया यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत् कालविशेषश्चन्द्र संवत्सरः ॥ उक्तंच ॥ पुण्णिम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चंदो ॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चांद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः ॥ उक्तंच ॥ तेरसय चंदमासा वासो अभिवड्ढिओय नायव्वो ॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

शय द्वापष्टिभागादिनस्य एतावत्परिमाणश्चन्द्रमास इति भवति सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्य्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्य्यसम्वत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तंच सद्वीये अद्वयाए एवइ हु अहिमासगो जुगंमि यावीसे पव्वसए एवइ हु यीओ जुगंतंमि ॥१॥ अस्याऽपि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनन्तरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेषु अतिक्रान्तेषु इत्यर्थः। एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्धप्रमाणे एकोऽधिकोमासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगपर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसंवत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युगे अभिवर्द्धितसंवत्सरौ संप्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्दिदिक्षुः प्रतिवर्षं पर्वसंख्यामाह। ता पढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालंकृतौ चन्द्रस्य संवत्सरस्य चतुर्विंशतिपर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चान्द्रः संवत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्व संख्यया चन्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि द्वितीयस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चान्द्रसंवत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याऽभिवर्द्धित संवत्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि। कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेवोक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वा वरेणंति पूर्वापर गणितमिलनेन पञ्चसांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यातं सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति।

और भी इन महाराज कृत श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति सूत्र वृत्तिके पृष्ठ १११ से ११२ तक तत्पाठ—

युगसंवत्सरेणमित्यादि। ता युगसंवत्सरो युगपूरकः संवत्सरपंचविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा। चंद्रश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चांद्रोऽभिवर्द्धितश्चैव॥ उक्तंच॥ चंदो चंदो अभिवढ्ढिओय चंदोऽभिवढ्ढिओ चेव पंचसहियं युगमिणं दिट्ठंते लोक दंसीहिं॥ १॥ पढम बिइयाउ चंदा तइयं अभिवढ्ढिअं वियाणा हि चंदेचेव चउत्थं पंचममभिवढ्ढियं जाण॥२॥ तत्र द्वादशपौर्णमासी परावर्त्तया यावता कालेन परिसमाप्तिमुपयांति तावत् कालविशेषश्चान्द्र संवत्सरः॥ उक्तंच॥ पुण्णिम परियट्टा पुण बारसमासे हवइ चंदो॥ एकश्च पौर्णमासी परावर्त्त एकश्चंद्रमास स्तस्मिं चांद्रमासे रात्रि दिवसपरिमाणचिन्तायां एकोनत्रिंशदहोरात्रा द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एतद्द्वादशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि रात्रि दिवानां द्वादश च द्वाषष्टिभागा रात्रि दिवसस्य एवं परिमाणश्चान्द्रः संवत्सरः। तथा यस्मिन् संवत्सरे अधिकमास सम्भवेत् त्रयोदशचन्द्रमासा भवन्ति सोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः॥ उक्तंच॥ तेरसय चंदमासा वासो अभिवढ्ढिओय नायव्वो॥ एकस्मिं चंद्रमासे अहोरात्रा एकोनत्रिंशद्भवन्ति द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतच्चानन्तरमेवोक्तं। तत एष राशिस्त्रयोदशभिर्गुण्यते जातानि त्रीणि अहोरात्रशतानि त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्वाषष्टिभागा अहोरात्रस्य एतावदहोरात्र प्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कथमधिकमाससम्भवो येनाभिवर्द्धितसंवत्सर उपजायते कियता वा कालेन सम्भवतीति उच्यते। इह युगं

चन्द्राभिवर्द्धि तरूप पञ्चसंवत्सरात्मकं सूर्य्यसंवत्सरापेक्षया परि भाव्यमानमन्यूनातिरिक्तानि पंचवर्षाणि भवन्ति सूर्य्यमासश्च सार्द्ध त्रिंशदहोरात्रिप्रमाण चन्द्रमास एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्य ततो गणितसंभावनया सूर्य्यसंवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकश्चन्द्रमासोऽधिको लभ्यते। स च यथा लभ्यते तथा पूर्वाचार्य्यप्रदर्शितेयं करणं गाथा॥ चंदस्स जो विसेसो आइच्चस्सइ हविज्ज मासस्स तीसइ गुणिओ संतो हवइ हु अहि मासगो एक्को॥१॥अस्याक्षरगमनिका आदित्यस्य आदित्यसंवत्सरसम्बन्धिनो मासस्य मध्यात् चंद्रस्य चंद्रमासस्य यो भवति विश्लेष इह विश्लेष कृते सति यदवशिष्यते तदप्युपचाराद्विश्लेषः स त्रिंशता गुण्यते गुणितः सन् भवत्येकोऽधिकमासः तत्र सूर्य्यमासपरिमाणात् सार्द्ध त्रिंशदहोरात्ररूपं चंद्रमासपरिमाणमेकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्येत्येवं रूप शोध्यते ततः स्थितं पश्चाद्दिनमेकमेकेन द्वाषष्टिभागेन न्यूनं तच्च दिनं त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रिंशद्दिनानि एकश्च द्वाषष्टिभाग त्रिंशता गुणितो जातास्त्रिंशद्द्वाषष्टिभागास्ते त्रिंशद्दिनेभ्यः शोध्यन्ते तत स्थितानि शेषाणि एकोनत्रिंशद्दिनानि द्वात्रिंशच्च द्वाषष्टिभागा दिनस्य एतावत्परिमाणश्चान्द्रोमास इति भवति सूर्य संवत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे एकोऽधिकमासो युगे च सूर्यमासाः षष्टिस्तो भूयोऽपि सूर्यसम्वत्सर सत्क त्रिंशन्मासातिक्रमे द्वितीयोऽधिकमासो भवति। उक्तं च सट्ठीए अइयाए हवइ हु अहिमासगो जुगद्धं मि बावीसे पव्वसए हवइहु बीओ जुगतंमि॥१॥ अस्यापि अक्षरगमनिका एकस्मिन् युगे अनंतरोदित स्वरूपे पर्वणां पक्षाणां षष्टौ अतीतायां षष्टिसंख्येषु पक्षेष्वति-

क्रान्तेषु इत्यर्थः एतस्मिन्नवसरे युगार्द्धे युगार्द्ध प्रमाणे एकोऽधिको मासो भवति द्वितीयस्त्वधिकमासो द्वात्रिंशत्यधिके पर्वशते (पक्षशते) अतिक्रान्ते युगस्यान्ते युगस्य पर्य्यवसाने भवति तेन युगमध्ये तृतीयसम्वत्सरे अधिकमासः पञ्चमे चेति द्वौ युग अभिवर्द्धितसम्वत्सरौ सम्प्रति युगे सर्वसंख्यया यावन्ति पर्व्वाणि भवन्ति तावन्ति निर्द्दिक्षुः प्रतिवर्षं पर्वसंख्या माह ॥ तापढमस्सण मित्यादि ता इति तत्र युगे प्रथमस्य णमिति वाक्यालंकृतौ चान्द्रस्य-सम्वत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि प्रज्ञप्तानि द्वादशमासात्मको हि चांद्रः सम्वत्सरः एकैकस्मिंश्च मासे द्वे द्वे पर्वणि ततः सर्वसंख्यया चान्द्रसंवत्सरे चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति द्वितीयस्याऽपि चांद्रसम्वत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि भवन्ति अभिवर्द्धित सम्वत्सरस्य षड्-विंशतिः पर्वाणि तस्य त्रयोदशमासात्मकत्वात् चतुर्थस्य चांद्र सम्वत्सरस्य चतुर्विंशतिः पर्वाणि पञ्चमस्याभिवर्द्धितसम्व-त्सरस्य षड्विंशतिः पर्वाणि कारणमनन्तरमेवोक्तं तत एवमेव उक्तेनैव प्रकारेण सपुव्वावरेणंति पूर्वापरिगणितमिलनेन पञ्च सांवत्सरिके युगे चतुर्विंशत्यधिकं पर्वशतं भवतीत्याख्यात सर्वैरपि तीर्थकृद्भिर्मया चेति ।

देखिये उपरके दोनुं पाठमें खुलासा पूर्वक प्रथम चन्द्र संवत्सर दूसरा चन्द्र संवत्सर तीसरा अभिवर्द्धित संवत्सर चौथा फिर चन्द्रसंवत्सर और पांचमा फिर अभिवर्द्धित संवत्सर इन पांच संवत्सरों सें एक युगकी संपूर्णता लोक दर्शी केवली भगवान् नें देखी हैं कही हैं जिसमें एक चन्द्र मासका प्रमाण एकोनतीस संपूर्ण अहोरात्रि और एक अहो रात्रिके बासठ भाग करके बतीस भाग ग्रहण करनेसे २९

३२।६२ अर्थात् २" दिन ३० घटीका और ५८ पल प्रमाणे एक चन्द्रमास होता हैं इसको बारह चान्द्रमासो से बारह गुणा करने से एक चन्द्रस वत्सरमें तीनसे चौपन स पूर्ण अहोरात्रि और एक अहोरात्रिके बासठ भाग करके बारह भाग ग्रहण करनेसे ३५४।१२।६२ अथात् ३५४ दिन ११ घटीका और ३६ पल प्रमाणें एक चन्द्र स वत्सर होता हैं और जिस स वत्सरमें अधिकमास होता है उसीमें तेरह चन्द्रमास होने से अभिवर्द्धित नाम स वत्सर कहते हैं जिसका प्रमाण तीनसे तैयाशी अहोरात्रि और एक अहोरात्रिके बासठ भाग करके चौमालीस भाग ग्रहण करनेसे ३८३।४४।६२ अर्थात् ३८३ दिन ४२ घटीका और ३८ पल प्रमाणे एक अभिवर्द्धित स वत्सर तेरह चन्द्रमासोकी गिनतीका प्रमाण से होता हैं इस तरहके तीन चद्रस वत्सर और दोय अभिवर्द्धित सवत्सर एसे पाच सवत्सरो से एक युग होता हैं अब एक युगके सर्वपर्वो की गिनती कहते हैं प्रथम चन्द्र सवत्सरके बारहमास जिसमें एक एक मासकी दोय दोय पर्वणि होनेसे बारहमासो की चौवीश (२४) पर्वणि प्रथम चन्द्र सवत्सरमे होती है तैसे ही दूसरा चन्द्र सवत्सरमे भी २४ पर्वणि होती हैं और तीसरा अभिवर्द्धित सवत्सरमें छवीश (२६) पर्वणि मासवृद्धि होने से तेरह मासोकी होती हैं तथा चौथा चन्द्र स वत्सरमें २४ पर्वणि होती हैं और पाचमा अभिवर्द्धितसवत्सरमें २६ पर्वणि होती हैं सो कारण उपरके दोनु पाठमे कहा है इन सर्व पर्वोकी गिनती मिलनेसे पाच सवत्सरोमें एक युगकी एकसो चौवीश (१२४) पर्वणि अर्थात् पाक्षिक होती है यह १२४

पर्वकी व्याख्या सर्वतीर्थङ्कर महाराजों नें अर्थात् अनन्त तीर्थङ्करों ने कही हैं तैसे ही वृत्तिकार मलयगिरिजीने चन्द्र प्रज्ञप्तिकी तथा सूर्य्यप्रज्ञप्ति की वृत्तिमें खुलासें लिखी हैं और श्रीचंद्रप्रज्ञप्ति वृत्तिमें पृष्ठ १११ सें ११३ में तथा १३४ में और श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिवृत्तिमें पृष्ठ १२४ सें १२८ तक नक्षत्र संवत्सर १ चन्द्र संवत्सर २ ऋतु संवत्सर ३ आदित्य (सूर्य्य) सम्वत्सर ४ और अभिवर्द्धित संवत्सर ५ इन पांच संवत्सरों का प्रमाण विस्तार पूर्वक वर्णन किया हैं जिसकी इच्छा होवें सो देखके नि:सन्देह होना इस जगह विस्तार के कारण सें सब पाठ नही लिखते हैं ।

और भी श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायांगजी मूलसूत्र तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेव सूरिजी कृत वृत्ति और श्रीपार्श्वचन्द्रजी कृत भाषा सहित (श्रीमकसूदाबाद निवासी राय बहादुर धनपतसिंहजीका जैनागम संग्रह के भाग चौथेमें) छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके ६१ मा और ६२ मा समवायाङ्गमें मासोंकी गिनतीके सम्बन्ध वाला पृष्ठ ११९ और १२० का पाठ नीचे मुजब जानो यथा—

पंचसंवच्छरियस्सणं जुगस्सरिउ मासेणं मिज्जमाणस्स इगसट्ठिं उउ मासापन्नता ।

अथैकषष्टिस्थानकं तत्र पञ्चेत्यादि पञ्चभिः संवत्सरैर्निर्वृतमिति पञ्चसांवत्सरिकं तस्यणमित्यलङ्कारे युगस्य कालमानविशेषस्य ऋतुमासेन चन्द्रादिमासेन मीयमानस्य एकषष्टिः ऋतुमासाः प्रज्ञप्ताः इह चायं भावार्थः युगं हि पञ्चसंवत्सरा न्निष्पादयन्ति तद्यथा—चन्द्रश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितश्चेति तत्र एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशच्च द्विषष्टिभागा

अहोरात्रस्येत्येव प्रमाणेम २९ । ३२ । ६२ । कृष्णप्रतिपदारभ्य पौर्णमासी निष्ठितेन चन्द्रमासेन द्वादशमास परिमाणश्चन्द्रस वत्सरस्तस्य च प्रमाणमिदम् त्रीणि शतान्यह्ना चतु पञ्चाशदुत्तराणि द्वादश च द्विपष्टिभागा दिवसस्य ३५४। १२ । ६२ । तथा एकत्रिंशदह्ना एकविंशत्युत्तर च शत चतुर्विंशतीत्युत्तरशतभागाना दिवसस्येत्येव प्रमाणोऽभिवर्द्धित मास इति एतेन ३१ । १२१ । १२४ । च मासेन द्वादशमास प्रमाणोऽभिवर्द्धित स वत्सरो भवति स च प्रमाणेन त्रीणि शतान्यह्ना त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्विषष्टिभागा दिवसस्य ३८३ । ४४ । ६२ । तदेव त्रयाणा चन्द्रस वत्सराणा द्वयोरभिवर्द्धित स वत्सरयोरेकी करणे जातानि दिनाना त्रिंशदुत्तराणि अष्टादशशतानि अहोरात्राणा १८३० ऋतुमासश्च त्रिंशताहोरात्रैर्भवतीति त्रिंशताभागहारे लब्धा एकषष्टि ऋतुमासा इति ।

हिवे ६१ मो लिखे छे । चन्द्र १ चन्द्र २ अभिवर्द्धित ३ चन्द्र ४ अभिवर्द्धित ५ एम पाचवर्षनो १ युगथाय ते ऋतु मासे करी मीयमानछे चन्द्रमासनोमान २९ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ३२ भाग ६२ ठिया ते कृष्णपक्षनी पडिवाथी पौर्णमासीये पूरोथाय एहमासमान १२ गुणोकीजे तिवारे वर्षनो मान ३५४ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना १२ भाग ६२ ठियाथाय तेहने त्रिगुणो कीजे तिवार १०६२ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ६२ ठिया ३६ भागथाय एम अभिवर्द्धित मासनो मान ३१ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना १२४ भाग हाइय १२१ भाग प्रमाणे थाय तेहने १२ गुणो कीजे तिवारे अभिवर्द्धित वर्षनो मान ३८३ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना

४४ भाग ६२ ठिया तेहने बेगुणा कीजे ७६७ सातसो सडसठ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना २६ भाग ६२ ठिया थाय तेहने पहिले ३ चन्द्रवर्षना मानमांहि घातिये तिवारे १८३० अहोरात्रिथाय ऋतु मासनो मान ३० अहोरात्रिनु तेमाटे १८३० नें भागें हरिये तो १ युगने विषें ६१ ऋतुमास थाय ।

पंचसंवच्छरिएणं जुगे बावठिं पुन्निमाउ बावठिं अमावसाउ पन्नता

अथ द्विषष्ठिस्थानकं पंचेत्यादि तत्र युगे त्रयश्चन्द्रसंवत्सरा भवन्ति तेषु षट्त्रिंशत् पौर्णमास्यो भवन्ति द्वौचाभिवर्द्धितसंवत्सरौ भवतस्तत्र चाभिवर्द्धितसंवत्सरस्त्रयोदशभिश्चंद्रमासैर्भवतीति तयो षड्विंशतिः पौर्णमास्य इत्येवं द्विषष्ठिस्ता भवन्ति इत्येवममावास्यापीति ।

हिवे ६२ मो लिखे छे । पांचसंवत्सरानो युगहोय तेह मांहि ६२ पुनिम अनें ६२ अमावस्या कही १ युगमाही ३ चन्द्रवर्ष होय तेह मांहि मास ३६ बारेत्रिक ३६ पूर्णिमा अनें ३६ अमावस्या होय अनें युगमाहि २ अभिवर्द्धित वर्ष होय तेहना मास २६ होय तेमाटे पूनिम २६ अमावस्या २६ सर्व पांच वर्षनामिलि ६२ पूर्णिमा अनें ६२ अमावस्या होय ॥

देखिये पञ्चमगणधर श्रीसुधर्मस्वामिजीनें भी उपरकें श्रीसमवायाङ्गजीके मूलसूत्र पाठमें और श्रीअभयदेवसूरिजी वृत्तिकारनें भी अधिक मासकी गिनती बरोबर किवी और चंद्रमासोंसें चंद्रसंवत्सरका प्रमाण तथा अभिवर्द्धितमासोंसें अभिवर्द्धितसंवत्सरका प्रमाण दिनोंकी गिनतीसें खुलासा करके एक युगके बासठ चंद्रमासके हिसावसें ६२ पूर्णिमासी तथा ६२ अमावस्यां और चंद्रमासकी गिनतीके प्रमाणसें

अहोरात्रस्येत्येवं प्रमाणेन २९ । ३२ । ६२ । कृष्णप्रतिपदा रभ्य पौर्णमासी निष्ठितेन चन्द्रमासेन द्वादशमास परिमाणश्चन्द्रसंवत्सरस्तस्य च प्रमाणमिदम् त्रीणि शतान्यह्नां चतुःपञ्चाशदुत्तराणि द्वादश च द्विषष्टिभागा दिवसस्य ३५४। १२ । ६२ । तथा एकत्रिंशदह्नां एकविंशत्युत्तरं च शतं चतुर्विंशतीत्युत्तरशतभागानां दिवसस्येत्येवं प्रमाणोऽभिवर्द्धितमास इति एतेन ३१ । १२१ । १२४ । च मासेन द्वादशमास प्रमोणोऽभिवर्द्धित संवत्सरो भवति स च प्रमाणेन त्रीणि शतान्यह्नां त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्विषष्टिभागा दिवसस्य ३८३ । ४४ । ६२। तदेवं त्रयाणां चन्द्रसंवत्सराणां द्वयोरभिवर्द्धित संवत्सरयोरेकी करणे जातानि दिनानां त्रिंशदुत्तराणि अष्टादशशतानि अहोरात्राणां १८३० ऋतुमासश्च त्रिंशताहोरात्रैर्भवतीति. त्रिंशताभागहारे लब्धा एकषष्टिः ऋतुमासा इति ।

हिवे ६१ मो लिखे छे । चन्द्र १ चन्द्र २ अभिवर्द्धित ३ चन्द्र ४ अभिवर्द्धित ५ एम पांचवर्षनो १ युगथाय ते ऋतुमासे करी मीयमानछे चन्द्रमासनोमान २९ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ३२ भाग ६२ ठिया ते कृष्णपक्षनी पडिवाथी पौर्णमासीये पूरोथाय एहमासमान १२ गुणोकीजे तिवारे वर्षनो मान ३५४ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना १२ भाग ६२ ठियाथाय तेहने त्रिगुणो कीजे तिवार १०६२ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना ६२ ठिया ३६ भागथाय एम अभिवर्द्धित मासनो मान ३१ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना १२४ भाग हाइय १२१ भाग प्रमाणे थाय तेहने १२ गुणो कीजे तिवारे अभिवर्द्धित वर्षनो मान ३८३ अहोरात्रि अनें १ अहोरात्रिना

४४ भाग ६२ ठिया तेहने बेगुणा कीजे ७६७ सातसो सड़सठ अहोरात्रि अने १ अहोरात्रिना २६ भाग ६२ ठिया थाय तेहने पहिले ३ चन्द्रवर्षना मानमांहि घालिये तिवारे १८३० अहोरात्रिथाय ऋतु मासनो मान ३० अहोरात्रिनु तेमाटे १८३० नें भागें हरिये तो १ युगने विषें ६१ ऋतुमास थाय।

पंचसंवच्छरिएणं जुगे बावठिं पुन्निमाउ बावठिं अमावसाउ पन्नता

अथ द्विषष्ठिस्थानकं पंचेत्यादि तत्र युगे त्रयश्चन्द्रसंवत्सरा भवन्ति तेषु षट्त्रिंशत् पौर्णमास्यों भवन्ति द्वौचाभिवर्द्धितसंवत्सरौ भवतस्तत्र चाभिवर्द्धितसंवत्सरस्त्रयोदशभिश्चंद्रमासैर्भवतीति तयो षड्विंशतिः पौर्णमास्य इत्येवं द्विषष्ठिस्ता भवन्ति इत्येवममावास्यापीति।

हिवे ६२ मो लिखे छे। पांचसंवत्सरानो युगहोय तेह मांहि ६२ पुनिम अनें ६२ अमावस्या कही १ युगमाही ३ चन्द्रवर्ष होय तेहमांहि मास ३६ बारेत्रिक ३६ पूर्णिमा अनें ३६ अमावस्या होय अनें युगमाहि २ अभिवर्द्धित वर्ष होय तेहना मास २६ होय तेमाटे पूनिम २६ अमावस्या २६ सर्व पांच वर्षनामिलि ६२ पूर्णिमा अनें ६२ अमावस्या होय॥

देखिये पञ्चमगणधर श्रीसुधर्मस्वामिजीनें भी उपरके श्रीसमवायाङ्गजीके मूलसूत्र पाठमें और श्रीअभयदेवसूरिजी वृत्तिकारनें भी अधिक मासकी गिनती बरोबर किवी और चंद्रमासोंसें चंद्रसंवत्सरका प्रमाण तथा अभिवर्द्धितमासोंसें अभिवर्द्धितसंवत्सरका प्रमाण दिनोंकी गिनतीसें खुलासा करके एक युगके बासठ चंद्रमासके हिसावसें ६२ पूर्णिमासी तथा ६२ अमावस्यां और चंद्रमासकी गिनतीके प्रमाणसें

६२ चन्द्र मासके १८३० दिन एक युगकी पूर्ति करनेवाले दिखाये हैं तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादि वाले मेरे धर्म्मबन्धु अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं जिनोंको विचार करना चाहिये ॥

और भी श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्यजी श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पवृत्ति खंभायतके भंडारवालीके दूसरे उद्देशे दूसरे खण्डमें—नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से ६ प्रकारके मासोंकी व्याख्या किवी हैं जिसमें से इस जगह एक काल मासकी व्याख्या वर्तमानिक श्रीतपगच्छवालोंको अपने पूर्वजका वचन याद करानेके वास्ते और भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेके लिये पृष्ठ १९८ वें का पाठ दिखाते हैं तथाच तत्पाठ—

कालमासः श्रावणादिः यद्वा कालमासो नक्षत्रादिकः पञ्चविधस्तद्यथा नक्षत्रमासः चंद्रमासः ऋतुमास आदित्यमास अभिवर्द्धितमास अमीषामेव परिमाणमाह गाथाः नरकत्ती खलु मासो, सत्तावीसं हवंति अहोरत्ता ॥ भागाय एक्कवीसं, सत्तट्ठि कएण वेएणं ॥१॥ अउण तीसं चंदो, विसट्ठि भागाय हुंति बत्तीसा॥ कम्मो तीसइ दिवसो, तीसा अध्धंच आइच्चो ॥२॥ अभिवढ्ढिढ इक्कतीसा चउवीसं भाग सयंवड़तिगहीणं भावे मूलाइक्क उपगयं पुण कम्म मासेणं ॥३॥ नक्षत्रेषु भवो नक्षत्र-स खलु मासः सप्तविंशत्यहोरात्राणि सप्तषष्ठी कृतेन छेदेन छिन्नस्याहोरात्रस्यैकविंशति सप्तषष्टीभागाः तथाहि चंद्रस्स भरण्यार्द्राश्लेषा स्वाति ज्येष्टा शतभिषग् नामानि षट्नक्षत्राणि पञ्चदशमुहूर्त्तभोग्यानि तिस्र उत्तराः पुनर्वसु रोहिणी विशाखा चेति षट् पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त्तभोग्यानि शेषाणि तु

पञ्चदशनक्षत्राणि त्रिंशन्मुहूर्त्तानीति जातानि सर्वसंख्यया मुहूर्त्तानामष्टाशतानि दशोत्तराणि एतेषां च त्रिंशन्मुहूर्त्तैरहोरात्रमिति कृत्वा त्रिंशता भागो ह्रियते लब्धानि सप्तविंशति रहोरात्राणि अभिजिद्योगश्चैकविंशति सप्तषष्टीभागा इति तैरप्यधिकानि सप्तविंशतिरहोरात्राणि सकल नक्षत्रमराड-लोपभोगकालो नक्षत्रमासो उच्यते १ चंद्रे भवश्चांद्रः कृष्ण-पक्षप्रतिपदारभ्य यावत् पौर्णमासी परिसमाप्तिस्तावत् कालमानः स च एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशत् द्वाषष्टि-भागा अहोरात्रस्य २ कर्म्ममास ऋतुमास इत्येकोऽर्थः स त्रिंश-द्दिवसप्रमाणः ३ आदित्यमासस्त्रिंशदहोरात्राणि रात्रि दिव-सस्य चार्द्ध दक्षिणायनस्यो उत्तरायणस्य वा षष्टभागमान इत्यर्थः ४ अभिवर्द्धितो नाम मुख्यतस्त्रयोदशचंद्रमास प्रमाणः वत्सरः परं तत् द्वादशभागप्रमाणो मासोऽपि अवयवे समु-ायोपचारादभिवर्द्धितः स चैकत्रिंशदहोरात्राणि चतुर्विंश-युत्तरशतभागी कृतस्य चाहोरात्रस्स त्रिकहीनं चतुर्विंशति-गानां भवति एकविंशमिति भावः एतेषां चानयनाय इयं रण गाथा॥ जुगमासेहिं उभइए, जगंमिलद्धं हविज्ज नायव्वं॥ ासाणं पंचन्ह, विषयं राइदियपमाणं॥१॥ इह सूर्य्यस्य दक्षिणा त्तरं वा अयनं त्र्यशीत्यधिकदिनशतात्मकं द्वि अयने वर्ष-ति कृत्वा वर्षे षट्षष्ट्यधिकानि त्रिणि शतानि भवन्ति पञ्च-त्सराद्युगमिति कृत्वा तानि पञ्चभिर्गुणयन्ते जातानि अष्टा-शतानि त्रिंशद्दिवसानां एतेषां नक्षत्रमासदिवसानेनाय प्तषष्टिर्युगे नक्षत्रमासा इति सप्तषष्ट्या भागा ह्रियते लब्धाः प्तविंशतिरहोरात्रा एकविंशतिरहोरात्रस्य सप्तषष्टीभागाः १ था चंद्रमास दिवसानयनाय द्वाषष्टिर्युगे चंद्रमासा इति

द्वापस्या तस्यैव युगदिन रात्रेर्भागा ह्रियते लब्धाहि एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशत् द्वापष्टिभागाः एवं युगदिवसामामेवैकपष्ट्युगे कर्म्मासा इत्येकपष्ट्या भाग ह्रियते लब्धानि कर्म्ममासस्य त्रिंशत् दिनानि ३ तथा युगे षष्टि सूर्य्यमासा इति षष्ट्या युगदिनानां भाग ह्रियते लब्धाः सूर्य्यमासदिवसास्त्रिंशदहोरात्रस्यार्द्धं च ४ तथा युगदिवसा एव अभिवर्द्धितमासा दिवसानयनाय त्रयोदशगुणाः क्रियन्ते जातानि त्रयोविंशतिसहस्राणि सप्तशतानि नवत्यधिकानि तेषां चतुश्चत्वारिंशते सप्तभि शतैर्भागो ह्रियते लब्धा एकत्रिंशद्दिवसा शेषाण्यवतिष्ठन्ते षट्विंशत्यधिकानि सप्तशतानि चतुश्चत्वारिंशत्सप्तशतभागानां ततः उभयेषामप्यङ्कानां षड्भिरपवर्तना क्रियते जातामेकविंशशतं चतुर्विंशत्युत्तरशतभागानामिति उक्ताः पञ्चापि कालमासाः ॥ १ ॥

देखिये उपरके पाठमें श्रीतपगच्छके मुख्याचार्य्यजी श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी अपने (स्वयं) नक्षत्रमास १ चंद्रमास २ ऋतुमास ३ आदित्यमास ४ और अभिवर्द्धितमास ५ इन पांचमासोंकी व्याख्या करते पांचमा अभिवर्द्धित मासकी और अभिवर्द्धित संवत्सरकी विशेष व्याख्या खुलासें कर दिखाइ हैं कि—

अभिवर्द्धितनाम संवत्सर मुख्य तेरह चंद्रमासोंसें होता है एक चंद्रमासका प्रमाण गुनतीस दिन बत्रीस बासटीया भाग अर्थात् २९ दिन ३० घटीका और ५८ पल प्रमाणे होता हैं जिसकों तेरह चंद्रमासोंसे तेरह गुना करने से दिन ३८३। ४४। ६२ भाग अर्थात् ३८३ दिन ४२ घटीका और ३४ पल प्रमाणे एक अभिवर्द्धित संवत्सर होता हैं चंद्रमासकी व्याख्या

उपरमें लिखीहै सोही तेरह चंद्रमास के अभि वर्द्धितसंवत्सर का प्रमाणको बारह भाग में करनेसे एक भाग में ३१।१२४।१२१ होता है सोही प्रमाण एक अभिवर्द्धित मासका जानना, याने ३१ अहोरात्रि और एक अहोरात्रि के १२४ भाग करके उपरके तीन भाग छोड़कर बाकीके १२१ भाग ग्रहण करना अर्थात ३१ दिन तथा ५८ घटीका और ३३ पलसे दश अक्षर उच्चारणमें न्यून इतने प्रमाणका एक अभिवर्द्धित मास होताहै सो अवयवोंके उच्चारणसे अभिवर्द्धित मास कहतेहैं अर्थात् जिस संवत्सरमें जब अधिक मास होताहै तब तेरह चंद्रमास प्रमाणे अभिवर्द्धित संवत्सर कहतेहैं उसी के तेरहवा चंद्रमासके प्रमाणको बारह भागोंमें करके बारह चंद्रमासोंके साथ मिलानेसे बारह चंद्रमासोंमें तेरहवा अधिकमासके प्रमाणों (अवयवों) की वृद्धिहुई इसलिये अवयवोंके उच्चारणसे मासका नाम अभिवर्द्धित कहाजाता है एसे बारह अभिवर्द्धित मासोंसे जो हुवा संवत्सरका प्रमाण उसीको अभिवर्द्धित संवत्सर कहतेहैं परंतु अधिक मासके कारणसे तेरह चंद्रमासोंसे अभिवर्द्धित संवत्सर होताहै सो गिनतीके प्रमाणमेंतो तेरहाही मास गिनेजावेंगे सोतो श्रीप्रवचनसारोद्धार, श्रीचंद्रप्रज्ञप्तिवृत्ति, श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति वृत्ति श्रीसमवायांगजीसूत्रवृत्ति के जो पाठ उपरमें छपगये हैं उनपाठोंसे खुलासा दिखता है ।

और पांचोंही प्रकारके मासोंके निज निज मास प्रमाण से निज निज संवत्सरका प्रमाण तथा निज निज मासके और निज निज संवत्सरके प्रमाणसे पांच वर्षोंसे एक युगके १८३० दिनोंकी गिनती का हिसाब संबंधी आगे यंत्र (कोष्टक) लिखनेमें आवेगें जिससे पाठक वर्गको सरलता पूर्वक जल्दी अच्छी तरहसे समझमें आसकेगा ।

और भी अधिक मासकी गिनती प्रमाण करने सम्बन्धि सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि वृत्ति और प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठ मौजूद हैं परंतु विस्तारके कारण से यहां नहीं लिखताहू तथापि विवेकी जनते उपरोक्त पाठार्थोंसे भी स्वयं समझ जावेंगे ।

अब इस जगह जिनाज्ञा विरुद्ध प्ररूपणा से तथा वर्तने वर्तानेसे संसार वृद्धिका भय रखनेवाले और जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी निपक्षपाती सज्जनपुरुषोंको मैं निवेदन करता हूं कि देखो उपरमें श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिवृत्तिमें तथा श्रीसूर्य्य प्रज्ञप्तिवृत्तिमें सर्व (अनन्त) श्रीतीर्थंङ्कर महाराजोंके कथनानुसार श्रीमलयगिरिजीने। तथा श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्मस्वामीजीने और श्रीसमवायाङ्ग जी सूत्रकी वृत्तिमें श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजीने और श्रीप्रवचनसारोद्धारमें श्रीतपगच्छके पूर्वज श्रीनेमिचन्द्र सूरिजीने । तथा श्रीवृहत्कल्पवृत्तिमें श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजीने इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर किया हैं जैसे बारे मासोकी गिनतीमें कोई न्यूनाधिक नहीं हैं तैसे ही अधिकमास होनेसे तेरहमासोंकी गिनतीमें भी कोई न्यूनाधिक नहीं हैं किन्तु सबी हीबरो बरहैं सो उपरोक्त पाठार्थोंसे प्रत्यक्ष दिखता है सो विशेष करके अधिक मासकोभी मुहूर्तोंमें, दिनोंमें, पक्षों में, मासोंमें वर्षोंमें, गिनकर पांचसंवत्सरोंके एकयुगकी गिनती के दिनोंका, पक्षोंका, मासोंका, वर्षोंका प्रमाण श्रीअनन्ततीर्थंङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्यों ने और श्री खरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोंने कहा है सो

आत्मार्थी जिनाज्ञाके आराधक पुरुषोंको प्रमाण करने योग्य हैं।

इस संसारको अनन्ते काल हो गये हैं जिनमें अनन्त चौवीशी व्यतित हो गई चन्द्र सूर्य्यादिके विमान भी अनन्त कालसें सरू हैं इस लिये जैनज्योतिष भी अनन्ते कालसें प्रचलित हैं जिसमें अधिक मास भी अनन्ते कालसें चला आता हैं—मास वृद्धिके अभावसें वारह मासके संवत्सरका नाम चन्द्र संवत्सर हैं और मासवृद्धि होनेसें तेरहमासकी गिनतीके कारणसें संवत्सरका नाम अभिवर्द्धित संवत्सर हैं तीन चन्द्रसंवत्सर और दोय अभिवर्द्धित संवत्सर इन पांच संवत्सरोंसें एकयुग होता हैं एकयुगमें पांच संवत्सरोंके वासठ (६२) मासोंकी वासठ (६२) पूर्णिमासी और वासठ (६२) अमावस्याके एकसो चौवीश (१२४) पर्वणि अर्थात् पाक्षिक अनन्त तीर्थङ्करादिकोंनें कही हैं जिससें अनन्तकाल हुए अधिकमासकी गिनती दिन, पक्ष, मास, वर्षादिमें चली आती हैं किसीने भी अधिकमासकी गिनती का एकदिन मात्र भी निषेध नही किया हैं तथपि वड़े आफसोस की वात हैं कि, वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमास की गिनती वड़े जोरके साथ वारंवार निषेध करके एकमासके ३० दिनोंकी गिनती एकदम छोड़ देते हैं और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर महाराजोंकी श्रीगणधर महाराजोंकी श्रीपूर्वधर पूर्वाचार्य्योंजी की तथा इनलोगोंके खास पूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविकाचार्य्योंजी की आज्ञा भङ्गका भय नही करते हैं और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंजी की आज्ञा मुजब वर्तमानमें श्रीखरतरगच्छादिवाले अधिक-

मासकों प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर करते हैं जिन्होंकों आज्ञा भङ्गका मिथ्या दूषण लगाके उलटा निषेध करते हैं फिर आप आज्ञाके आराधक बनते हैं यह कितनी बड़ी आश्चर्य्यकी बात हैं ।

श्रीअनन्त तीर्थङ्करादिकोंने अधिकमासको गिनतीमें प्रमाण किया हैं इसलिये जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुष कदापि निषेध नही कर सकते हैं तथापि वर्तमानमें जो अधिक मासको गिनतीमें निषेध करते हैं जिन्होको श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपने पूर्वजोंकी आज्ञाभङ्गके सिवाय और क्या लाभ होगा सो निर्पक्षाती आत्मार्थी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगें ।

प्रश्नः—अजी तुम तो श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंजी की शास्त्रिसें अधिकमासको दिनोंमें पक्षोंमें, मासोमें, वर्षोंमें, गिनती करनेका प्रत्यक्षप्रमाण उपरोक्त शास्त्रोंके प्रमाणसें दिखाया हैं परन्तु वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमास तो एककाल चूलारूप हैं इसलिये गिनतीमें नही लेना एसा कहते हैं सो कैसें ।

उत्तरः—भो देवानुप्रिये वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले अधिकमासको कालचूला कहके गिनतीमें निषेध करते हैं सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि अधिकमासको कालचूला किस कारणसें कही हैं जिसका अभिप्राय और कालचूला कहनेसें भी विशेष करके गिनती करने योग्य हैं तथा कालचूलाकी ओपमा बहुत उत्तम श्रेष्ठ शास्त्रकारोंने दिवी हैं सो हमतो क्या कुल जैन श्वेतांबर जिनाज्ञाके आराधन करनेवाले आत्मार्थी सबी पुरुषोंकों मान्य करने योग्य हैं

और गिनती भी करनें योग्य है जिसका कारण शास्त्रों
प्रमाण सहित दिखाते हैं श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यः
पूर्वधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रकी चूर्णि श्रीमोह
लालजी महाराजके सुरतका ज्ञानभंडारसें आई थी जिस
प्रथम उद्देशेके पृष्ट २१ में तत्पाठ—

इयाणिं चूलेति दारं ॥ णाम ठवणा गाहा णिरु
गाहा ॥ कंठा ॥ णाम ठवणाउमयाउ दव्वचूला दुवि
आगमतो णो आगमतोय आगमउ जाणए अणुवउते
आगमतो जाणय भव्वसरीरं जाणयभव्वसरीरवइरित्ता ति
य दव्वचूला गाहा पुव्वद्धं ॥ कंठं ॥ पढमो वसद्दो वधा
वितिउरु मुव्वये पुव्वद्धे जहा संखंमि ॥उदाहरणा ॥ सचित्त
कुक्कुटचूला सा मंसपेसी चेव केवला लोकप्रतिता मीसा
मोरसिहा तस्स मंसपेसीए रोमाणि भवंति अचित्ता
मणीकुंतगा वा आदिसद्दाउ सीहकस्स पासाद थूभअग्गाणि
दव्वचूलागता ॥ इदाणिं खेत्तचूला सा तिविहा ॥ अह ति
उढ्ढ । गाहा॥अह इति अधोलोकः तिरिय इति तिरियल
उढ्ढ॥ इति ऊर्द्ध्व लोकः लोगस्स सद्दो पत्तेगं चूला इति नि
होंति । भवति । इमाद्दति प्रत्यक्षो तु शब्दो क्षेत्रावध
अहोलोगा दीण पच्छद्धुंण जहा संखं उदाहरणा सीम
इति सीमंतगो णरगो रयणप्पभाय पुढवीउ पढमो सो
लोगस्स चूला । मंदरोमेरु सो तिरियलोगस्सचूलातिक्रान्त
अहवा तिरिय लोगपति ठियस्स मेरोवरि चत्तालीसं जो
चूला सो तिरिय लोगचूला वसद्दो समुच्चये पाय पूरणे
इसित्ति अप्पभावे पढइति प्रायो वृत्याभार इति भारक्कं
पुरिसस्स गायं पाय सो इसिणयं भवति जाव एवं ठितासा

इतिपभाराणाम इति एतमभिहाणं तस्स साय सुव्वट्ठ सिद्धि विनाणाउ उवरिं बारसेहिं जोयणेहिं भवति तेण सा उड्डलोग भवति । गता खेत्तचूला । इयाणिं काल भावचूलाउ दोविएग गाहाए भणति । अहिमासउउकाले। गाहा । बारसमांस वरि साउ अहिटमासो अहिमासउ अहिवड्ढिय वरिसे भवति सोय अधिकत्यात् कालचूला भवति तु सद्दोर्थप्प दरिसणेण केवलं अधिको कालो कालचूला भवति अंतो विवड्ढमाणो कालो कालचूलाए भवति एवं जहाउसप्पिणीए अंते अंति दूस समाए सा उस्सप्पिणीए अंते कालस्सचूला भवति। कालचूला गता । इयाणिं भावचूला । भवणं भावः पर्याय इत्यर्थः॥ तस्स चूला भावचूला सोय दुविहा आगमउय णो आगमउय आगमउजाणए उवउत्तेण णो आगमउय इमाचेव तुसद्दो । खउवसम भावविसेसेण दट्ठवो इमाइति । पकप्प भयण चूला एग सद्दोवधारणे चूलेगठिता चूलात्तिवा विभूसणंति वा सीहरंति वा एते एगठो॥ चूलेति दारगयं॥ इति श्रीनिशीथसूत्रके पहिले उद्देशे की चूर्णिके पृष्ठ २२ तक

और भी १४४४ ग्रन्थकार सुप्रसिद्ध महान् विद्वान् श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीदशवैकालिकसूत्रके प्रथम चूलिकाकी वृहत्‌वृत्तिका पाठ सुनिये श्रीदशवैकालिकमूलसूत्र, अवचूरि, भाषार्थ,दीपिका और वृहत्‌वृत्ति सहित मुम्बईसें छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके पृष्ठ ६४० और ६४१का चूला विषयका नीचे मुजब पाठ जानो—यथा—

अधुनौचतयूड़े आरभ्यते अनयोश्चायमभिसम्बन्धः । इहा नन्तराध्ययने भिक्षुगुणयुक्त एव भिक्षुरुक्तः सचैवं भूतोऽपि कदाचित् कर्म्मपरतन्त्रत्वात् कर्म्मणश्च बलवत्त्वात्सीदेत

एतत् स्थिरीकरणं कर्तव्यमिति तदर्थाधिकारवच्चूडाद्वयमभि- धीयते तत्र चूडाशब्दार्थमेवाभिधातुकाम आह॥ दव्वे खेत्ते काले, भावम्मिअ चूलिआय निक्खेवो॥ तं पुण उत्तरतंतं, सुअ गहि- अत्थं तु संगहणी ॥ २६ ॥ व्याख्या ॥ नाम स्थापनेक्षुण्णत्वा- दनादृत्याह द्रव्ये क्षेत्रे काले भावे च द्रव्यादिविषयश्चूडाया निक्षेपो न्यास इति। तत्पुनश्चूडाद्वयमुत्तरतन्त्रमुत्तरसूत्रम् दशवैकालिकस्याचारपञ्चचूडावत् एतच्चोत्तरतन्त्रं श्रुतगृही- तार्थमेव दशवैकालिकाख्य श्रुतेन गृहीतोऽर्थोऽस्येति विग्रहः यद्येवमपार्थकमिदम्। नेत्याह संग्रहणी तदुक्ता नुक्तार्थ- संक्षेपं इति गाथार्थः द्रव्यचूडादिव्याचिख्यासयाह ॥ दव्वे सच्चित्ताई, कुक्कुट चूडामणी मऊराइ ॥ खेत्तमि लोगनिक्कुड मंदरचूडा अ कूडाइ ॥ २७ ॥ व्याख्या ॥ द्रव्य इति द्रव्यचूडा आगम नोआगम ज्ञशरीरेतरादिव्यतिरिक्ता त्रिविधा स चित्ताद्या। सचित्ता अचित्ता मिश्राच। यथा संख्यमाह— कुक्कुट चूडा सचित्ता मणिचूडा अचित्ता मयूरशिखामिश्रा। क्षेत्र इति क्षेत्रचूडा लोकनिष्कुटा उपरिवर्तिनः मन्दरचूडा च पाण्डुकम्बला। चूडाद्यश्च तदन्यपर्वतानां क्षेत्रप्राधा- न्यात् आदिशब्दादधोलोकस्य सीमंतकः तिर्य्यग् लोकस्य मन्दर ऊर्द्ध्वलोकस्येषत्प्राग्भार इति गाथार्थः ॥ अइरित्त अहिगमासा, अहिगा संवत्सराअकालंमि ॥ भावे खउवस- मिए, इमाउ चूडामुणे अव्वा ॥ २८ ॥ व्याख्या॥ अतिरिक्ता उचितकालात् समधिका अधिकमासका प्रतीताः अधिकाः संवत्सराश्च षष्ठ्यब्दाद्यपेक्षया काल इति कालचूडा भाव इति भावचूडा क्षायोपशमिके भावे इयमेव द्विप्रकारा चूडा मन्तव्या, विज्ञेया क्षायोपशमिकत्वाच्छ्रुतस्येति गाथार्थः तत्रापि प्रथमा रतिवाक्यचूडा इत्यादि।

और भी श्रीजिनभद्र गणिक्षमाश्रमणजी महाराज युगप्रधान महाप्रभाविक प्रसिद्ध हैं जिन्होंके शिष्य श्रीशीलाङ्गाचार्य्यजी भी महाविद्वान् श्रीआचाराङ्गादि ११ अङ्गरूप मूत्रोंकी टीका करनेवाले प्रसिद्ध हैं जिसमें श्रीआचाराङ्गजी तथा श्रीसूयगडाङ्गजी सूत्रकी टीका तो सुप्रसिद्धिसे वर्त रही हैं और बाकी श्रीस्थानाङ्गजी आदि नवसूत्रोंकी टीका विच्छेद होगई थी जिससे श्रीअभयदेवसूरिजीनें दूसरी वार बनाई है सो प्रसिद्ध है श्रीशीलाङ्गाचार्य्यजी विक्रम संवत् ६५० के लगभग हुवे हैं सो श्रीआचाराङ्गजी सूत्रकी व्याख्या रूप टीका करते दूसरे श्रुतस्कन्धकी व्याख्याके आदिमें ही चूलाका विस्तार किया है परन्तु यहाँ थोड़ासा लिखता हुं श्रीमकसुदाबाद निवासी धनपतिसिंह बहादुरकी तरफ सें श्रीआचाराङ्गजी मूलसूत्र, भावार्थ, दीपिका और वृहत् वृत्ति सहित छपके प्रसिद्ध हुवा है जिसके दूसरा श्रुतस्कन्धके पृष्ठ ४में सें चूलाविषयका थोड़ासा पाठ नीचे मुजब जानो यथा—

चूडाया निक्षेपः नामादिः षड्विधः नामस्थापने क्षुर्ण द्रव्यचूड़ा व्यतिरिक्ता सचित्ता कुक्कुटस्य अचित्ता मुकुटस्य चूडामिश्रामयूरस्य, क्षेत्रचूड़ा लोकनिःकुटरूपा कालचूड़ा अधिकमासक स्वभावा भावचूड़ात्वियमेव क्षयोपशमिकभाववर्तित्वात् तथा (इसके पहले तीसरे पृष्ठमें) कालाप्रमधिकमासकः यदिवाग्र शब्दः परिमाणवाचक इत्यादि—
देखो ऊपरोक्तशास्त्रोंके कर्तामें श्रीजिनदासमहत्तराचार्य्यजी पूर्वधरगीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है तथा श्रीहरिभद्र सूरिजी भी पूर्वधर गत गीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध हैं और श्रीजिनभद्रगणि

माश्रमणजी महाराजके पट्टधरशिष्य श्रीशीलांगाचार्य्यजी
हाराज भी महाप्रभाविक गीतार्थ पुरुष प्रसिद्ध है। इस
ऽये उपरके पाठ सर्व जैनश्वेतांवर आत्मार्थी पुरुषोंको
माण करनें योग्य हैं ऊपरके पाठमें नाम, स्थापना, द्रव्य,
ात्र, काल, भाव सें, छ (६) प्रकारकी चूला कही हैं जिसमें
ाम, स्थापना, तो प्रसिद्ध हैं और द्रव्य चूलादि की
ाख्या खुलासा किवी हैं कि,—द्रव्यचूला दो प्रकारकी
थम आगमरूप शास्त्रोंमें कही हुइ और दूसरी नो आगम
ा मति, अवधि, मनपर्यव, तथा केवल ज्ञानसें जानी हुइ
य चूला सो भव्य शरीर अर्थात् ज्ञानीजी महाराज अपने
नसें पहलेसें ही देखके जानलेवें कि यह मनुष्य आगामी
ले साधु आदि धर्मी पुरुष होने वाला हैं ऐसा जो मनुष्य
शरीर जिसको द्रव्य चूला कहते हैं, कारण कि, इस
सारमें अनन्तीवार शरीर पाया परन्तु उत्तम पदवी पाने
व्य शरीर पाना बहुत मुश्किल हैं तथापि अब पाया
ससें धर्मप्राप्तिका योग्य होवे एसें शरीर को ज्ञानी महा-
जनें भव्यशरीर कहा हैं सो उस शरीरको अनन्ते सब
रीरोंसें उत्तम कहो तथा श्रेष्ट कहो अथवा चूलारूप
हो सबीका तात्पर्य्य एकार्थका हैं—और भी प्रसिद्ध द्रव्य
ला तीनप्रकारकी कही है जिसमें प्रथम कुक्कुट (मुरगा)
मस्तक उपर शिखररूप मांसपेसी सहित होनेसें उसीकों
चित्तचूला कही जाती हैं तथा दूसरी मोर (मयूर) के
तक उपर शिखररूप मांसपेसी और रोंम सहित होनेसें
सीको मिश्र चूला कही जाती हैं और तीसरी मणि तथा
त और मुकुटादिकके उपर शिखररूप होवे उसीकों अचित्त

चूला कही जाती हैं इन्होंको चूलाकी ओपमा देनें यही कारण है कि सब अवअवयोंसें विशेष सोभाका सुन्दर उत्तम होनेसे शिखरकी अर्थात् चूलाकी ओपमा शास्त्रकारोंने दिवी हैं, द्रव्यचूलारूप भव्यशरीरको गिनती करके प्रमाण करने योग्य हैं, द्रव्यनिक्षेपावत् अर्थात् रावण कृष्ण श्रेणिकादि अभी द्रव्य निक्षेपेमें गिने जाते हैं परन्तु जब केवल ज्ञान पावेंगे तब भाव निक्षेपेमें गिने जावेंगे तैसेही भव्यशरीर जो द्रव्यचूलामें है सो जब साधु आदि धर्मकी प्राप्ति होगा तब भावचूलामें गिना जावेगा। द्रव्यचूला की गिनती नही करोगे तो आगे भावचूलामें कैसे गिना जावेगा इस लिये द्रव्यचूलाकी गिनती प्रमाण करने योग्य है।

और क्षेत्रचूला भी तीनप्रकार की कही हैं जिसमें प्रथम अधोलोकमें रत्नप्रभा पृथ्वीके सीमन्तनामा नरकावासा अधो लोकके उपर जो शिखररूप है उसीको अधोलोक चूला कही जाती हैं तथा दूसरी तिर्यग् (तीरछा) लोकमे सुप्रसिद्ध जो मेरुपर्वत हैं उसीको तिर्यग् लोकचूला कहते हैं कारण कि तिर्यग् लोकका प्रमाण उचा १८०० सो योजनका हैं परन्तु मेरुपर्वत तो एक लक्ष योजनका होनेसे तिर्यग्लोकको भी अतिक्रान्त (उल्लङ्घन) करके उचा चला गया इस लिये तिर्यग्लोकके उपर शिखररूप होनेसे मेरुपर्वतको चूलामें गिना जाता हैं तथा मेरुके उपर जो ४० योजनकी चूलीका हैं सो भी मेरुके शिखररूप होनेसे चूलामें गिनी जाती है और मेरुके चार वनोमें १६ तथा १ चूलीकाका मिलके १७ मन्दिरोमे २०४० श्रीजिनेश्वर भगवान्‌ की शाश्वती प्रति माजी हैं इसलिये क्षेत्रचूलाका प्रमाण एक अंशमात्र भी

गिनतीमें नही छुटसकता हैं और तीसरी ऊर्द्ध (उंचा) लोकमें सर्वार्थ सिद्धि विमानसें बारह योजन पर ईषत्प्राग्भारा नाम पृथ्वी जो सिद्धसिला ४५००००० लक्ष योजन प्रमाणे लंबी और चौड़ी हैं तथा बीचमें आठ योजन की जाड़ी हैं जिसके उपर श्रीअनन्त सि भगवान् विराजमान हैं एसी जो सिद्ध शिला सो ऊर्द्ध लोकके शिखररूप होनेसें चूलामें गिनी जाती हैं यह क्षेत्रचूला भी प्रमाण करके गिनतीमें करनें योग्य हैं।

और कालचूला उसीको कहते हैं कि जो बारह चन्द्र मासोंसें चन्द्रसंवत्सर एकवर्ष होता हैं जिसका उचितकाल हैं उसमें भी एक अधिक मासकी वृद्धि हो कर बारह मासोंके उपर पड़ता हैं सो लोकोंमें प्रसिद्ध भी हैं और अनादि कालसें अधिकमासका एसाही स्वभाव है सो प्रमाण करनें योग्य हैं और अधिकमास ज्यादा पड़नेसें संवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित होजाता हैं बारहमासोंका कालके शिखररूप अधिकमास ज्यादा होनेसें उसको कालचूला कही जाती है तथा जैन ज्योतिषके शास्त्रोंसें साठ (६०) वर्षोंकी अपेक्षासें एक वर्षकी भी वृद्धि होती थी जिसकों भी काल-चूला कहते हैं और उत्सर्पिणीके अन्तमें भी जो काल वर्त्ते सोभी कालचूलामें गिना जाता हैं तथा कालचूलारूप जो अधिकमास है उसीको प्रमाण करके गिनतीमें मंजूर करना चाहिये क्योंकि अधिकमासको कालचूलाकी जो ओपमा है सो निषेधकवाची नहीं है किन्तु विशेष शोभाकारी उत्तम होनेसें अवश्य ही गिनती करनेके योग्य है। तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छादिवाले जो महाशय अधिकमास को

कालचूला कहके गिनती में नही लेते हैं और निषेध
करते है। जिन्होंको मेरा इतना ही पूछना है कि आ
लोग अधिक मासको कालचूला जानके गिनती नही कर
हो तो अभिवर्द्धित नाम संवत्सर कैसे कहते हो औ
अभिवर्द्धित नाम सवत्सर तो कालचूलारूप अधिकमा
ज्यादा होनेंसे तेरह चन्द्रमासोंकी गिनती करनेसें ही होत
है तथाहि—

अभिवर्द्धीत्यभिवर्द्धितः अभिवर्द्धितश्चासौ संवत्सरोऽभि-
वर्द्धितसंवत्सरः अभिवर्द्धतश्चात्राभिवृद्धिरूपः अभिवृद्धिस्तु
अधिकमासे नैव बोधव्य अनयारीत्या अयं संवत्सर अन्वर्थ-
संज्ञां लब्धवान् अन्वर्थसंज्ञायाः कारणतातु अधिकमासनिष्ठैव
कारणत्वावच्छिन्नस्तु शिरोमौलिमुकुटहीरायमाणोऽधिक-
मास एव अधिकमासनिरुक्तिश्चेत्थं यतोऽत्र संवत्सरे द्वादश-
मासेभ्योऽधिकः पतति अतोऽधिकमासः एतद्गणनामन्तरेण तु
अन्वर्थसंज्ञायासङ्गत्यापत्तिरेवेति ध्येयम्।

अर्थः जो और संवत्सरोंकी अपेक्षासें ज्यादा हो यानें
अधिक महिनावालो होय सो अभिवर्द्धित संवत्सर इस
संवत्सरमें वृद्धि जो है सो अधिकमास ही करके है इस
कारणसे इस संवत्सरका अर्थानुसार अभिवर्द्धित नाम हुवा
अर्थानुसार अभिवर्द्धित नाम रखनेमें अधिकमास कारण
हुवा और अभिवर्द्धितनाम कार्य्य हुवा इनोंका कार्य्य कारण
भाव सिद्ध हुवा कारणताधर्मयुक्त होनेसें यह अधिकमास सब
मासोंके मस्तकके शोभा करने वाला जो मुकुट जिसकी
शोभा करनें वाला जो हीरारत्न उसकी तुल्य हुवा और
जिस कारणसें इस महिनें का नाम अधिकमास हुवा सो

कारण यह है कि यहे मास इस संवत्सरमें बारहमासे अधिक पड़ा इसलिये इसका नाम भी अर्थानुसार है इस गणनाके बिना अर्थानुसार नाम अभिवर्द्धित संवत्सर न होगा न होनेसें असङ्गति दोष रहता है यह चिन्तन कर चाहिये। अब अधिक मासकी गिनती नही क वाले महाशय तेरह चन्द्रमासोंके विना अभिवर्द्धित संव कैसे बनावेंगे क्योंकि तेरह चन्द्रमासोंके विना अभिवर्द्धि संवत्सर नही हो सकता हैं तथा अभिवर्द्धित संवत्स बिना एकयुगके ६२ चन्द्रमासोंकी ६२ अमावस्या और पूर्णिमासीके १२४ पाक्षिकोंकी गिनती नही बन सकेगा लिये कालचूलारूप अधिक मासकी गिनती करनेसें अ वर्द्धित संवत्सर तेरह चन्द्रमासोंकी गिनतीसें होत सोही श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधर पूर्वाधरादि पूर्वाचार्य्य खरतरगच्छके और तपगच्छादिके पूर्वाचार्य्योंने अि मासकों दिनोंमें पक्षोंमें मासोंमें वर्षोंमें गिनतीसें प्र करके एकयुगके ६२ चन्द्रमासोंके १८३० दिनोंकी गिनती व है सो उपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंसे लिख आये हैं जि जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोंको अधिक मा गिनती मंजूर करनी चाहिये इसके लिये आगे युक्ति दिखावेंगे इति कालचूला सम्बन्धी किञ्चित् अधिकार—

और चौथी भावचूला भी आगमसें तथा नो आग क्षयोपशमादिकी व्याख्या प्रसिद्ध हैं और श्रीदशवै लिकजी सूत्रकी दो चूला तथा श्रीआचाराङ्गजी सू दो चूला और मन्त्राधिराज महामङ्गलकारी श्रीपरं मन्त्रकी चार चूला इत्यादि सब भावचूला कही जा

कालचूला कहके गिनती में नही लेते हैं और निषेध
करते है। जिन्होंको मेरा इतना ही पूछना है कि आ
लोग अधिक मासको कालचूला जानके गिनती नही कर
हो तो अभिवर्द्धित नाम संवत्सर कैसे कहते हो औ
अभिवर्द्धित नाम सवत्सर तो कालचूलारूप अधिकमा
ज्यादा होनेंसे तेरह चन्द्रमासोंकी गिनती करनेसें ही होत
है तथाहि—

अभिवर्द्धीत्यभिवर्द्धितः अभिवर्द्धितश्चासौ संवत्सरोऽभि-
वर्द्धितसंवत्सरः अभिवर्द्ध तश्चात्राभिवृद्धिरूपः अभिवृद्धिस्तु
अधिकमासे नैव बोधव्य अनयारीत्या अयं संवत्सर अन्वर्थ-
संज्ञां लब्धवान् अन्वर्थसंज्ञायाः कारणतातु अधिकमासनिष्ठैव
कारणत्वावच्छिन्नस्तु शिरोमौलिमुकुटहीरायमाणोऽधिक-
मास एव अधिकमासनिरुक्तिश्चेत्थं यतोऽत्र संवत्सरे द्वादश-
मासेभ्योऽधिकः पतति अतोऽधिकमासः एतद्गणनामन्तरेण तु
अन्वर्थसंज्ञायारसङ्गत्यापत्तिरेवेति ध्येयम्।

अर्थः जो और संवत्सरोंकी अपेक्षासें ज्यादा हो यानें
अधिक महिनावालो होय सो अभिवर्द्धित संवत्सर इस
संवत्सरमें वृद्धि जो है सो अधिकमास ही करके है इस
कारणसे इस संवत्सरका अर्थानुसार अभिवर्द्धित नाम हुवा
अर्थानुसार अभिवर्द्धित नाम रखनेमें अधिकमास कारण
हुवा और अभिवर्द्धितनाम कार्य्य हुवा इनोंका कार्य्य कारण
भाव सिद्ध हुवा कारणताधर्मयुक्त होनेसें यह अधिकमास सब
मासोंके मस्तकके शोभा करने वाला जो मुकुट जिसकी
शोभा करनें वाला जो हीरारत्न उसकी तुल्य हुवा और
जिस कारणसें इस महिनें का नाम अधिकमास हुवा सो

कारण यह है कि यह मास इस संवत्सरमें बारहमासोंसे अधिक पड़ा इसलिये इसका नाम भी अर्थानुसार है इसकी गणनाके विना अर्थानुसार नाम अभिवर्द्धित संवत्सरका न होगा न होनेसें असङ्गति दोष रहता है यह चिन्तन करना चाहिये। अब अधिक मासकी गिनती नही करने वाले महाशय तेरह चन्द्रमासोंके विना अभिवर्द्धित संवत्सर कैसे बनावेंगे क्योंकि तेरह चन्द्रमासोंके विना अभिवर्द्धित-संवत्सर नही हो सकता हैं तथा अभिवर्द्धित संवत्सरके विना एकयुगके ६२ चन्द्रमासोंकी ६२ अमावस्या और ६२ पूर्णिमासीके १२४ पाक्षिकोंकी गिनती नही बन सकेगा इस लिये कालचूलारूप अधिक मासकी गिनती करनेसें अभि-वर्द्धित संवत्सर तेरह चन्द्रमासोंकी गिनतीसें होता है सोही श्रीअनन्ततीर्थङ्कर गणधर पूर्वाधरादि पूर्वाचार्य्य तथा खरतरगच्छके और तपगच्छादिके पूर्वाचार्य्योंने अधिक-मासको दिनोंसें पक्षोंमें मासोंमें वर्षोंमें गिनतीमें प्रमाण करके एकयुगके ६२ चन्द्रमासोंके १८३० दिनोंकी गिनती कही है सो उपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंसे लिख आये हैं जिससे जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोंको अधिक मासकी गिनती मंजूर करनी चाहिये इसके लिये आगे युक्ति भी दिखावेंगे इति कालचूला सम्बन्धी किञ्चित् अधिकार—

और चौथी भावचूला भी आगमसें तथा नो आगमसे क्षयोपशमादिकी व्याख्या प्रसिद्ध हैं और श्रीदशवैका-लिकजी सूत्रकी दो चूला तथा श्रीआचाराङ्गजी सूत्रकी दो चूला और मन्त्राधिराज महामङ्गलकारी श्रीपरमेष्टि-मन्त्रकी चार चूला इत्यादि सब भावचूला कही जाती है

सो विभूषणा कहो, शोभारूप कहो, शिखररूप कहो विशेष सुन्दरता मुगटरूप कहो अथवा चूलारूप कहो, सब मतलबका तात्पर्य्य एकार्थका हैं इसलिये गिनती करने योग्य है और जैसें द्रव्य, भाव, नाम, स्थापनासें चार निक्षेपे कहे हैं सो मान्य करने योग्य है तथापि द्रव्य, स्थापनादि का निषेध करने वालोंकों (श्रीखरतरगच्छवाले तथा श्रीतप-गच्छादि वाले सर्व धर्म्मबन्धु) मिथ्यात्वी कहते हैं तैसे ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावसे जो चूला कही है सो अनादि-कालसे प्रवर्त्तना सरू हैं श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंने प्रमाण किवीं है सो आत्मार्थियोंकों प्रमाण करके मान्य करनें योग्य है तथापि क्षेत्रकालादि चूलायोंकों गिनतीमें मान्य नही करते उलटा निषेध करते हैं और जो मान्य करते हैं जिन्होंको दूषण लगाते हैं ऐसे श्रीतीर्थङ्करादि महाराजों के विरुद्ध वर्तने वाले विद्वान् नामधारक वर्तमानिक महा-शयोंको आत्मार्थी पुरुष क्या कहेंगे जिसका निष्पक्षपाती श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके पाठक वर्ग स्वयं विचार लेवेंगे—

और अधिक मासको कालचूला कहनेसें भी गिनतीमें निषेध कदापि नही हो सकता है किन्तु अनेक शास्त्रोंके प्रमाणोंसें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार अवश्यमेव गिनतीमें प्रमाण करणा योग्य है तथापि जैन सिद्धान्त समाचारीकारनें कालचूलाके नामसें अधिकमासकी गिनती उत्सूत्रभाषणरूप निषेध किवी है जिसका उतारा प्रथम इसजगह लिख दिखाते हैं और पीछे इसकी समालोचनारूप समीक्षा कर दिखावेंगे, जैनसिद्धान्त समाचारीके पृष्ठ ७की

पंक्ति १६॥ से पृष्ठ ९१ की पंक्ति १३ वीं तक चूला सम्बन्धी लेखका उतारा नीचे मुजब जानो—

[इस अधिक मासकों कालचूला मानते हैं सो अब दिखाते हैं, चूला चार प्रकारकी शास्त्रोंमें कथन करी है, यथा—निशीथे दशवैकालिक वृत्तौ च॥ तथाहि—'चूला चातुर्विध्यं। द्रव्यादिभेदात् तत्र द्रव्यचूला ताम्र चूलादि १ क्षेत्रचूला मेरोश्चत्वारिंशद्योजन प्रमाण चूलिका २ कालचूला युगे तृतीयपञ्चमयोर्वर्षयोरधिकमासकः ३ भावचूला तु दश-वैकालिकस्य चूलिकाद्वयं ४ इति॥

(भावार्थः) जैसें निशीथसूत्र विषे और दशवैकालिक वृत्ति विषे है तैसें दिखाते हैं, चूला चार प्रकारकी है, द्रव्यादि भेद करके तिसमें द्रव्यचूला उसकों कहते है कि-जो मुरगादिके शिरपर होती है. १ क्षेत्रचूला यह है कि-मेरुपर्वतकी चालीश योजन प्रमाण जो चूला है. २ काल चूला उसकों कहते है कि-जो तीसरे वर्ष और पाँचमें वर्षमें अधिक मास होता है. ३ भावचूला उसकों कहते है कि-जो दशवैकालिक की चूलिका है॥ ४॥

(पूर्वपक्ष) कालचूला कहनेसें आपकी क्या सिद्धि हुइ ?

(उत्तर) हे परीक्षक! कालचूला कहनेसें यह सिद्ध होता है कि-चूलावाले पदार्थके साथ प्रमाणका विचार करना होवे तो उस पदार्थसें चूला न्यारी नही गिनी जाती है. जैसें मेरुका लक्ष योजन प्रमाण कहेंगे तब चूलिकाका प्रमाण भिन्न नही गिणेंगे।

तैसें चतुर्मासके विचारमें और वर्षके विचार करनेके

अवसरमें अधिक मासका विचार न्यारा नही करेंगे इस वास्ते अधिक मासकों कालचूला कहते है]।

उपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि—प्रथमतो जैन सिद्धान्त समाचारीकारनें निशीथ सूत्रके नामसें चूलाका पाठ लिखा है सो सूत्रमें बिलकुल नही है किन्तु निशीथ सूत्रकी चूर्णिमें जिनदास महत्तराचार्य्यजीने चूलासम्बन्धी व्याख्या किवी है और दशवैकालिक सूत्रकी वृत्तिके पाठका नाम लिखा सोभी नही है किन्तु दशवैकालिक सूत्रकी प्रथम चूलिका की वृहत् वृत्तिमें पाठ हैं और उपरमें जो चूला चातुर्विध्यं इत्यादि पाठ लिखा है सो न तो चूर्णि-कारका है और न वृत्तिकारका है क्योंकि चूर्णिकारनें और वृत्तिकारनें द्रव्यचूला, आगम नो आगमसे भव्यशरीर और सचित्त, अचित्त, मिश्र, तथा क्षेत्रचूला भी सिद्धशिला और मेरुपर्वत अथवा मेरुचूलिका इत्यादि कालचूला भाव चूलाकी विस्तारसे व्याख्या किवी हैं सो हम उपरमें सम्पूर्ण पाठ लिख आये हैं। जिसको और जैनसिद्धान्त समाचारी कारका लिखा पाठको वांचकवर्ग आपसमें मिलावेंगे तो स्वयं मालुम हो सकेगा कि जैनसिद्धान्त समाचारीकारने जो पाठ लिखा है सोनिकेवल बनावटी है क्योंकि हमने उपरमें सम्पूर्ण पाठ लिखा है जिसके साथ इस पाठका अक्षर अक्षर और पंक्ति पंक्ति नही मिलती है तथा चूर्णिकार की प्राकृत सस्कृत मिली हुवी भाषा है और वृत्तिकारकी निर्युक्ति सहित व्याख्या किवी हुई है। जिनसें उपरका पाठ बिलकुल भाषा वर्गणादिमें बरोबर नही है इस लिये उपरका पाठ बनावटी हैं—सो प्रत्यक्ष दिखता है तथापि

जैन सिद्धान्त समाचारी कारनें (यथा निशीथे दशवैकालिक वृत्तौच—इस वाक्यसें जैसे निशीथ सूत्र विषे और दशवैकालिक वृत्तिविषे है तैसे दिखाते हैं) एसा लिखके भोले जीवोंको शास्त्रके नाम लिख दिखाये परन्तु शास्त्रकारका बनाया पाठ नही लिखा एसा करना आत्मार्थी उत्तम पुरुषको योग्य नही है और पाठका भावार्थ लिखे बाद पूर्वपक्ष उठायके उत्तर लिखा है जिसमें भी शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप बिलकुल सर्वथा अनुचित लिख दिया है क्योंकि (चूलावाले पदार्थके साथ प्रमाण का विचार करना होवे तो उस पदार्थसें चूला न्यारी नही गिनी जाती है) इन अक्षरो करके चूलाकी गिनती भिन्न नही करनी करते है सो भी मिथ्या है, क्योंकि शास्त्रकारों नें चूला की गिनती भिन्न करके मूलके साथ मिलाई है सोही दिखाते है कि—देखो जैसे श्रीमन्त्राधिराज महामङ्गलकारी श्रीपरमेष्ठि मन्त्रमें मूल पांचपदके ३५ अक्षर है तथा चार चूलिका के ३३ अक्षर हैं सो मूलके साथ मिलने सें नवपदोसें चूलिकायों सहित ६८ अक्षरका श्रीनवकार परमेष्ठि मन्त्र कहा जाता है और श्रीदशवैकालिकजी मूलसूत्रके दश अध्ययन है तथा दो चूलिका है जिसको भी शास्त्रकारोनें अध्ययन रूप ही मान्य किवी है और निर्युक्ति, चूर्णि, अवचूरि, वृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति, शब्दार्थवृत्ति वगैरह सबी व्याख्याकारोंनें जैसें दश अध्ययनोंका अनुक्रमे सम्बन्ध मिलायके व्याख्या किवी है तैसें ही दो चूलिकारूप अध्ययनकी भी अनुक्रमणिका सम्बन्ध मिलायके व्याख्या किवी है और व्याख्यायोंके श्लोकोंकी संख्या भी चूलिकाके साथ सामिल करनेमें आती

है एसे ही श्रीआचारांगजीकी चूलिका, श्रीव्यवहार सूत्रजी की चूलिका, श्रीमहानिशीथसूत्रकी चूलिका वगैरह सभी चूलिकायोंकी गिनती शास्त्रोंके साथ श्लोकोंकी संख्यामें आती है तथा व्याख्यानावसरमें भी चूलिका साथ सूत्र वांचनेमें आता है। परन्तु चूलिकाकी गिनती नही करनी एसे तो किसी भी जैन शास्त्रमें नही लिखा हैं इस लिये जो जो चूलावाले पदार्थ है उसीके प्रमाणका विचार और गिनतीका व्यवहारमें चूलाका प्रमाण सहित गिना जाता हैं और क्षेत्र चूलाके विषयमें जैनसिद्धान्त समाचारीकारनें लिखा है कि (जैसे मेरुका लक्षयोजनका प्रमाण कहेंगें तब चूलिकाका प्रमाण भिन्न नही गिनेंगे) इन अक्षरोंको लिखके मेरुपर्वतके उपर जो चालीस योजनके प्रमाणवाली चूलिका है। जिसके प्रमाणकी गिणती मेरुसे भिन्न नही कहते हैं सोभी अनुचित है क्योंकि शास्त्रोंमें मेरुके लक्ष-योजनका प्रमाण तथा चूलिकाका चालीस योजनका प्रमाण खुलासा पूर्वक भिन्न कहा हैं सोही दिखाते हैं कि—खास जैन सिद्धान्त समाचारीकारके ही परम पूज्य श्रीरत्नशेखर सूरिजीनें लघुक्षेत्र समास नामा ग्रन्थ बनाया हैं सो गुजराती भाषा सहित श्रीमुंबईवाला श्रावक भीमसिंहमाणक की तरफसें श्रीप्रकरण रत्नाकरका चौथाभागमें छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके पृष्ठ २३४ में मेरुकी चूलिकाके सम्बन्धवाली ११३ भी गाथा भाषा सहित नीचे मुजब जानो यथा—

तदुवरि चालीसुच्चा, वट्टामूलुवरि बारचउपिहुला वेरुलिया वरचूला, सिरिभवण प्रमाण चेइहरा ॥ ११३ ॥

अर्थः—तदुपरि के, ते लाखयोजन प्रमाणना उंचा

रुपर्वत उपरे, चालीसुच्चा के०, चालीस योजननी उंची, ाने, वट्ट के०, वर्तुल तथा, मूलुवरि वारचउपिहुला के०, ्लने विषे वार योजन पहोली अने उपर चारयोजन होली, तथा, वेरुलिया के०, वेडूर्यनामे जे नीलारत्न तेनी, र के०, प्रधान, चूला के०, चूलिका छे तेवली चूलिका ाहवी छे, सिरिभवण पमाण चेइहरा के०, श्रीदेवीना वन सरखा चैत्यग्रह एटले जिन भवण तेणे करि महा- ोभित छे इति गाथार्थ ॥ ११३ ॥ उपरकी श्रीरत्नशेखर रिजी कृत गाथासे पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे कि, प्रगट नेसे लक्षयोजनका मेरुके उपरकी चूलिकाके चालीस योजन ा प्रनाण भिन्न गिना हैं तथापि जैनसिद्धान्त समाचारीकार न्न नही गिनना कहते हैं सो कैसे बनेगा तथा और भी नियेजो चूलिकाके प्रमाणको भिन्न नही गिनोंगे तो फिर लिकाके उपर एक चैत्य है जिसमें १२० शाश्वती श्रीजिने- ार भगवान्‌की प्रतिमाजी है उन्होंकी गिनती कैसे करोगे ोंकि मेरुमें तो १६ चैत्य कहे है जिसमें १९२० प्रतिमाजी । तथा एक चूलिकाके चैत्यकी १२० प्रतिमाजीकी गिनती ास्त्रकारोंने भिन्न किवी है सो, जैनमें प्रसिद्ध है । इस लिये लेकाकी गिनती अवश्यमेव करनी योग्य है तथापि जो ्के चूलिकाकी गिनती भिन्न नही करते हैं जिन्होंको ऽ चैत्यकी १२० शाश्वती जिन प्रतिमाजीकी गिनतीका ।षेधके दूषणकी प्राप्ति होनेका प्रत्यक्ष दिखता है ।

और भी आगे कालचूलाके विषयमें जैन सिद्धान्तसमा- रीके कर्त्ताने ऐसे लिखा है कि (तैसे चतुर्मासके विचारमें ार वर्षके विचार करनेके अवसरमें अधिक मासका विचार

न्यारा नही करेंगे इस वास्ते अधिकमासको कालचू
कहते हैं) इन अक्षरोंको लिखके अधिक मासको का
चूला कहनेसें चतुर्मासकी और वर्षकी गिनतीमें नही ले
ऐसा कहते हैं सो भी अयुक्त है क्योंकि अधिक मास
कालचूला कहनेसें भी अवश्यमेव गिनतीमें लेना योग्य
सो उपरमें विस्तारसे लिख आये है, इसलिये अधि
मासकी गिनती कदापि निषेध नही हो सकती है श्रीतीर्थं
रादि महाराजोंने प्रमाण किवी है और अधिकमासको काल
चूलाकी ओपमा देनेवाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर
महाराज भी अधिक मासकी गिनती निश्चयके साथ करते
हैं सोही दिखाते हैं श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिके दशवें उद्देशेमें
पर्युषणाकी व्याख्याके अधिकारमें पृष्ठ ३२२का तथाच तत्पाठः–

अभिवढ्ढिय वरिसे वीसती राते गते गिहिणा तं करंति
तिसुचन्दवरिसे सवीसति राते गते गिहिणा तं करंति
जत्थ अधिमासगो पड़ति वरिसे तं अभिवढ्ढिय वरिसं
भस्रति जत्थ ण पड़ति तं चन्द वरिसं—सोय अधिमासगो
जुगस्संते मज्झे वा भवंति जतितो णियमा दो आसाढ़ा
भवंति अहमज्झे दो पोसा–सीसो पुछति जम्हा अभिवढ्ढिय
वरिसे वीसति रातं, चन्द वरिसे सवीसति मासो उच्यते,
जम्हा अभिवढ्ढिय वरिसे गिम्हे चेव सो मासो अतिक्कंतो
तम्हा वीस दिना अणभिग्गहियं करंति, इयरेसु तिसु चन्द
वरिसेसु सवीसति मासो इत्यर्थः॥

देखिये उपरके पाठमें अधिक मास जिस वर्षमें पड़ता
हैं उसीको अभिवर्द्धित संवत्सर कहते हैं जहाँ अधिक मास
जिस वर्षमें नही पड़ना है उसीको चन्द्र सवत्सर कहते हैं

सो अधिक मास नियम करके होनेंसे युगके मध्यमें दो पौष तथा युगके अन्तमें दो आषाढ़ होते हैं जव दो आषाढ़ होते हैं तव ग्रीष्म ऋतुमें चेव निश्चय वो अधिकमास अतिक्रान्त (व्यतित) होगया इस लिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ़ चौमासीसे वीश दिन तक अनियत वास, परन्तु वीशमें दिन जो श्रावण शुक्लपञ्चमी उसी दिनसें नियत वास निश्चय पर्युषणा होवे और चन्द्र संवत्सरमें पचास दिन तक अनियत वास, परन्तु पचासमें दिन जो भाद्रपदशुक्लपञ्चमी उसी दिनसे नियत वास निश्चय पर्युषणा होवे—

अव उपरके पाठसे पाठकवर्ग पक्षपात रहित होकर स्वयं विचार करेंगें तो प्रत्यक्ष निर्णय हो सकेगा कि खास चूर्णिकार महाराजनें मास वृद्धिको गिनतीमें चेव (निश्चय) अवश्यमेव कहा है और प्रथम उद्देशेका जो पहिले पाठ लिखचुके हैं जिसमें कालचूलाकी भी उत्तम ओपमा दिवी है सो अधिक मासकी गिनती करनेसेही अभिवर्द्धित नाम संवत्सर वनता है सो विशेष उपर लिख आये है तथापि जैन सिद्धान्त समाचारीके कर्त्ताने चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थमें कालचूला कहनेसें अधिक मासकी गिनती नही करना ऐसा लिखनेमें क्या लाभ उठाया होगा सो पाठकवर्ग विचार लेना-इति ॥

तथा और इसके अगाड़ी श्रीतपगच्छके अर्वाचीन (थोड़े कालके) तथा वर्त्तमानिक त्यागी, वैरागी, संयमी, उत्कृष्टि क्रिया करनेवाले जिनाज्ञा मुजव शास्त्रानुसार चलने वाले शुद्धपरूपक सत्यवादी और सुप्रसिद्ध विद्वान् नाम धराते भी प्रथम श्रीधर्म्मसागरजीनें श्रीकल्पकिरणावलीमें

दूसरे श्रीजयविजयजीनें श्रीकल्पदीपिकामें तीसरे श्रीविनय विजयजीनें श्रीसुखबोधिकामें चौथे न्यायांभोनिधिजी श्री आत्मारामजीनें जैन सिद्धान्तसमाचारी नामा पुस्तकमें पांचवें। न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीनें मानवधर्म्म संहिता पुस्तकमें छठे श्रीवल्लभविजयजीनें वर्तमानिक जैन पत्र द्वारा सातवें श्रीधर्म्मविजयजीने पर्युषणा विचारनामकी छोटीसी १० पृष्ठकी पुस्तकमें और आठवा श्रावक भगुभाई फतेचंदने भी पर्युषणा विचार नामका लेख खास जैन पत्रके २३ में अङ्कके आदिमें। इन सबीमहाशयोंने जैन शास्त्रोंके अति गम्भिरार्थका तात्पर्य्य गुरुगमसें समझे विना श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंके तथा खास श्रीतपगच्छकेही पूर्वाचार्योंके भी विरुद्ध होकर शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप अधूरे अधूरे पाठ लिखके (परभवका भय न रखते मिथ्या) अपनी अपनी इच्छानुसार अधिक मास की गिनती निषेध सम्बन्धी अनेक तरहके विकल्प श्रीखरतरगच्छादिवालोंके ऊपर आक्षेपरूप किये है।

जिसको पढ़नेसें भोले जीवोंकी श्रद्धा भङ्ग होनेका कारण जानके निर्पक्षपाती आत्मार्थी जिनाज्ञाके आराधक सत्यग्राही भव्य जीवोंको सत्यासत्यका निर्णय दिखानेके लिये उपरोक्त महाशयोंके लिखे हुए लेखोंकी समालोचनारूप समीक्षा शास्त्रानुसार तथा ग्रन्थकार महाराजके अभिप्राय सहित और युक्तिपूर्वक लिख दिखाता हुं—

प्रश्न.—तुम उपरोक्त महाशयोंके लिखे हुए लेखोंकी समीक्षा करोगें जिसमें जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तक श्रीआत्मारामजी की बनाई हुई नहीं है किन्तु उनके शिष्य

श्रीकान्तिविजयजी तथानें श्रीअमरविजयजीनें बनाई है ऐसा उक्त पुस्तकमें छपा है फिर श्रीआत्मारामजीका नाम उपरमें क्यों लिखा है और पर्युषणा विचार नामकी छोटी पुस्तकके लेखक भी श्रीधर्म्मविजयजी नही है किन्तु उनके शिष्य विद्याविजयजी हैं फिर श्रीधर्म्मविजयजीका नाम उपरमें क्यों लिखा है।

उत्तरः—भो देवानुप्रिय! मेंने उपरमें श्रीआत्माराम जीका और श्रीधर्म्मविजयजीका नाम लिखा है जिसका कारण यह हैं कि जैन शास्त्रानुसार गुरु महाराजकी आज्ञा विना शिष्य कोई कार्य्य नही कर सकता हैं इस लिये शिष्यके जो जो कार्य्य करनेकी जरूरत होवे सो सो गुरु महाराजसें निवेदन करे जब गुरु महराज योग्यता पूर्वक कार्य्य करनें की आज्ञा देवें तब शिष्य गुरु महाराजकी आज्ञानुसार जो कार्य्य करना होवे सो कर सकता हैं उन कार्य्यके लाभा-लाभके अधिकारी गुरु महाराज होते हैं परन्तु शिष्य गुरु महाराजकी आज्ञानुसार कार्य्यकारक होता है इस लिये उस कार्य्यकों करानेंके मुख्य अधिकारी गुरु महाराज हैं इस न्यायके अनुसार प्रथम श्रीकान्तिविजयजीनें तथा श्री-अमरविजयजीनें, जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तक बनानेके लिये श्रीआत्मारामजीसे आज्ञा मांगी होगी और बनाये पीछे भी अवश्यमेव दिखाई होगी जिसको श्रीआत्माराम जीने पढ़के छपानेकी आज्ञा दिवी होगी तब छपके प्रसिद्ध हुई है जो श्रीआत्मारामजी बनानेकी तथा छपाके प्रसिद्ध करनेकी आज्ञा न देते तो कदापि प्रसिद्ध नही हो सकती इस लिये जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके प्रगटकारक

श्रीआत्मारामजी ठहरे, आप कोई कार्य्य करना अथवा आप आज्ञा देकर कोई कार्य्य कराना सोभी बरोबर है जिससे मैंने श्रीआत्मारामजीका नाम लिखा है इसी न्यायसे श्रीधर्म्मविजयजीका भी नाम जानो—कदाचित् कोई ऐसा कहेगा कि गुरु महाराजकी आज्ञाविनाही प्रसिद्ध कर दिवी होगी तो इसपर मेरा इतनाही कहना है कि गुरु महाराजकी आज्ञा विना जो कोई भी कार्य्य शिष्य करे तो उसको गुरु आज्ञा विराधक अविनित तथा अनन्तसंसारी शास्त्रकारोंने कहा हैं ऐसेको हितशिक्षारूप प्रायश्चित्त दिया जाता हैं तथापि अविनित पनेसें नही माने तो अपने गच्छसे अलग करनेमें आता है सो बात प्रसिद्ध है इसलिये जो श्रीआत्मारामजीकी आज्ञासे जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तक तथा श्रीधर्म्मविजयजीकी आज्ञासे पर्युषणा विचारकी पुस्तक प्रसिद्ध हुई होवे तब तो उस दोनो पुस्तकमें शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उत्सूत्रभाषणरूप अनुचित बाते लिखी है जिसके मुख्य लाभार्थी दोनो गुरुजन है इसी अभिप्रायसे मैंने भी दोनो गुरुजनके नाम लिखे हैं—

और अब उपरोक्त महाशयोंके लिखे लिखोंकी समीक्षा करते हैं जिसमें प्रथम इस जगह श्रीविनयविजयजी कृत श्रीकल्पसूत्रकी सुबोधिका (सुखबोधिका) वृत्तिविशेष करके श्रीतपगच्छमें प्रसिद्ध है तथा वर्तमानिक श्रीतपगच्छके साधु आदि प्रायः सब कोई शुद्ध श्रद्धापूर्वक सरल जानके उसीको हर वर्ष गांव गांवके विषे श्रीपर्युषणापर्वमें यांचते हैं जिसमें अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये लिखा हैं जिसको यहाँ लिखकर पीछे उसीमें जो अनुचित है

जिसकी समीक्षा करके दिखावुंगा जिससे आत्मार्थी प्राणियोंको सत्यासत्यकी स्वयंमालुम हो सकेगा श्रीसुखबोधिका वृत्ति मेरे पास हैं जिसके पृष्ठ १४६ की दूसरी पुठीकी आदि से लेकर पृष्ठ १४७ की दूसरी पुठीकी आदि तकका नीचे मुजब पाठ जानो यथा—

अन्तरावियत्ति अर्वागपि कल्पते परं न कल्पते तां रात्रिं भाद्रशुक्लपञ्चमी उवायणा वित्तएत्ति अतिक्रमयितुं तत्र परि-सामस्त्येन उषणं वसनं पर्युषणा सा द्वेधा गृहस्थज्ञाता गृहस्थै अज्ञाताच तत्र गृहस्थै अज्ञाता यस्यां वर्षायोग्य पीठफल-कादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते साचाषाढ़पूर्णिमायां योग्यक्षेत्राभावे तु पञ्च पञ्चदिन वृद्धया दशपर्वतिथि क्रमेण यावत् भाद्रपद सितपञ्चम्यां एवं गृहि-ज्ञाता तु द्वेधा सांवत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्राच तत्र सांवत्सरिक कृत्यानि॥संवत्सरप्रतिक्रान्ति १ लुञ्चनं २ चाष्टमं तपः ३ सर्वार्हद्भक्तिपूजा च ४ संघस्य क्षामणं मिथः ५ ॥ १ ॥ एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रसितपञ्चम्यामेव कालिकाचार्यादेशा-च्चतुर्थ्यामपि केवलगृहिज्ञाता तु सा यत् अभिवर्द्धिते वर्षे चतुर्मासकदिनादारभ्य विंशत्यादिनैः वयमत्र स्थितास्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति। तदपि जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ़ो वर्द्धते नान्येमासा-स्तट्टिप्पनकंतु अधुना सम्यग् न ज्ञायते ततः पञ्चाशतैश्च दिनैः पर्य्युषणायुक्तेति वृद्धाः अत्र कश्चिदाह ननु श्रावणवृद्धौ श्रावणसित चतुर्थ्यामेव पर्युषणायुक्ता नतु भाद्रसितचतुर्थ्यां दिनानामशीत्यापत्तेः। वासाणं सवीसइराए मासेवइक्कंते इति वचनबाधा स्यादिति चेन्नैवं अहो देवानां प्रिय एवमाश्विन-

वृद्धौ चतुर्मासककृत्य माश्विनसितचतुर्दश्यां कर्तव्यं स्यात् कार्तिकसितचतुर्दश्यां करणे तु दिनानां शतापत्या॥ समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिराइंदिएहिं॥ इति समवायांगवचनबाधा स्यात्। नच वाच्यं चतुर्मासकानां ही आषाढ़ादिमासप्रतिवद्धानि तस्मात्कार्तिकचतुर्मासिकं कार्तिकसितचतुर्दश्यामेव युक्तं दिनगणनायां त्वाधिकमासः कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां सप्ततिरेवेति कुत समवायांगवचनबाधा इति यतो यथा चतुर्मासकानि आषाढ़ादिमास प्रतिवद्धानि तथा पर्युषणापि भाद्रपदमास प्रतिवद्धा तत्रैव कर्त्तव्या दिनगणनायां त्वधिकमासः कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशदेव कुतोऽशीतिवार्तापि नच भाद्रपदप्रतिवद्धं तु पर्युषणा अयुक्तं बहुष्वागमेषु तथा प्रतिपादनात्॥ तथाहि॥ "अन्नया पज्जोसवणादिवसे आगए अज्जकालगेण सालवाहणो भणिओ, भद्दवयजुण्ह पंचमीए पज्जोसवणा" ॥ इत्यादि॥ पर्युषणाकल्पचूर्णौ तथा "तत्थ य सालवाहणो राया, सो अ सावगो, सो अ कालगज्जं इंतं सोऊण निग्गओ, अभिमूहो समणसंघो अ, महाविभूईए पविट्ठो कालगज्जो, पविट्ठेहिं अ भणिअं, भद्दवयसुद्धपंचमीए पज्जोसविज्जइ, समणसंघेण पडिवन्नं, ताहे रण्णा भणिअं, तद्दिवसं मम लोगाणुवत्तीए इंदो अणुजाणेयव्वो होहित्ति साहू चेइए अणुपज्जुवासिस्सं, सो छट्ठीए पज्जोसवणा किज्जइ, आयरिएहिं भणिअं, न वट्टति अतिक्कमितुं, ताहे रण्णा भणिअं, ता अणागए चउत्थीए पज्जोसविज्जति, आयरिएहिं भणिअं, एवं भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोसवितं एवं जुगप्पहाणेहिं कारणे चउत्थी पवत्तिआ, सा चेवाणुमतासव्वसाहू-

णमित्यादि ॥ श्रीनिशीथचूर्णौ दशमोद्देशके एवं यत्र कुत्रापि पर्यूषणानिरूपणम् तत्र भाद्रपदविशेषितमेव नतु क्काप्यागमे भद्दवयसुद्धपंचमीए पज्जोसविज्ज इति पाठवत् अभिवद्ढिअ वरिसे सावणसुद्धपंचमीए पज्जोसविज्जइति पाठ उपलभ्यते ततः कार्त्तिकमासप्रतिबद्ध चतुर्मासिकः कृत्य करणे यथा नाधिकमासः प्रमाणं तथा भाद्रमासप्रतिबद्ध पर्युषणाकरणेऽपि नाधिकमासः प्रमाणमिति त्यजकदाग्रहम् ।

श्रीविनयविजयजी कृत उपरके पाठका संक्षिप्त भावार्थः— अन्तरा वियसेत्ति इत्यादि कहनेसे आषाढ़पूर्णिमासे पचासमें दिन भाद्रपद शुक्ल पञ्चमी जिसके अन्तरसे कारण योगे पर्युषणा करना कल्पे परन्तु पञ्चमीको उल्लङ्घन करना नही कल्पे वर्षाकालमें सर्वथा एकस्थानमें निवास करना सो पर्युषणा जिसमें योग्यक्षेत्रके अभावसे पांच पांच दिनकी वृद्धि करते दशपर्वतिथिमें यावत् पचासमें दिन भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको परन्तु श्रीकालकाचार्य्यजीसे चतुर्थी को गृहस्थो लोगोंको साधुके वर्षाकालका निवास अर्थात् पर्युषणाकी मालुम होती थी सो चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासे परन्तु मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धितनाम संवत्सरमें वीशदिने गृहस्थीलोगोंको साधुके निवास (पर्युषणा) कीं मालुम होती थी सो जैन टिप्पनाके अनुसारे एकयुगके मध्यमें पोषकी तथा अन्तमें आषाढ़की वृद्धि होती थी इसके सिवाय और मासोंके वृद्धिका अभाव था तब चन्द्रमें पचास दिनका तथा अभिवर्द्धितमें वीशदिनका नियम था, परन्तु अब वर्त्तमानकाले जैन टिप्पना नही वर्तता है तथा लौकिक टिप्पनामें हरेकमासोंकी वृद्धि होती है इस लिये—पंचाशतैश्चदिनैः पर्युषणायुक्तेति वृद्धाः—अर्थात् इस

कालमें मास वृद्धि हो अथवा न हो परन्तु पचासदिने पर्युषणा करना योग्य है ऐसे वृद्धाचार्य्य कहते हैं यहाँ कोई कहते हैं कि इस न्यायानुसार वर्तमान कालमें जब दो श्रावण होते हैं तब तो पचास दिनकी गिनतीसे दूजा श्रावण सुदी चौथके दिन पर्युषणा करना योग्य है परन्तु दो श्रावण होते भी भाद्रव सुदी चौथके दिन पर्युषणा करना योग्य नही है क्योंकि ८० दिन होजावेंगे, और श्रीकल्पसूत्रमें–वासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते–अर्थात् आषाढ़ चौमासीसे एक मास और वीशदिन उपर, कुल पचाशदिन जानेसे पर्युषणा कहा है तथापि ८० दिने करनेसें सूत्रका इस वाक्यको बाधा आती हैं इस लिये ८० दिने पर्युषणा करना योग्य नही है,–ऐसा प्रश्नरूप वाक्य सुनके इसका उत्तर रूप वाक्य श्रीविनय विजयजी अपनी विद्वत्ताके जोरसे कहते हैं कि अहो देवाना प्रिय-अहो इति आश्चर्य्य हेमूर्ख-अधिकमासकी गिनती करके दो श्रावण होनेसे दूजा श्रावणमें ५० दिने पर्युषणा करना कहता है तो दो आश्विन (आसोज) मास होनेसे ७० दिन की गिनती से दूजा आश्विन मासमें तेरेको चतुर्मासिक कृत्य करना पड़ेगा तथापि कार्तिक मासमें चतुर्मासिक कृत्य करेगा तो १०० दिन हो जावेगें, क्योंकि समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासेवइक्कंते सत्तरिएराइं दिएहिं इति। श्रीसमवायांगजीमें पीछाड़ीके ७० दिन रहना कहा है इसवास्ते दूजा आसोजमें चौमासिक कृत्य करना पड़ेगा तथापि कार्तिकमें करेगा तो १०० दिन होजावेंगें तो श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके वचनको बाधा आवेगी इस लिये अधिक मासकी गिनती करनेसें दूजा श्रावणमें पर्युषणा करना योग्य

है। ऐसा नहीं कहना क्योंकि चतुर्मासिक कृत्य आषाढ़ादि-मासोंमें करनेका नियम हैं तिस कारणसें दो आश्विनमास होवे तोभी कार्त्तिक चौमासी कार्त्तिक शुदी चतुर्द्दशीके दिन करना योग्य है जिसमें अधिकमास कालचूला होनेसें दिनों की गिनतीमें नही आता है इसलिये दो आश्विन होवे तो भी कार्तिकमें १०० दिने चौमासी किया ऐसा नही समझना किन्तु ७० दिने ही किया गया ऐसा कहनेसें श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके वचनमें बाधा नहीं आती हैं इस कारणसें जैसें चतुर्मासिक आषाढ़ादि मासोंमें करनेका नियम हैं तैसे ही पर्युषणा भी भाद्रपद मासमें करनेका नियम हैं जिससे उसी (भाद्रवे) में करना चाहिये जिसमें भी अधिकमास आवे तो दिनोंकी गिनतीमें नही लेनेसे दो श्रावण होते भी भाद्रवेमें पर्युषणा करनेसे ५० दिने ही किया ऐसा गिना जाता है इस लिये ८० दिनोंकी वार्त्ता भी नही समझना तथा पर्युषणा भाद्रवेमें करनेका नियम है सो ही बहुत आगमोंमें कहा है तैसा ही श्रीविनयविजयजीने यहाँ श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णिका तथा श्रीनिशीथ चूर्णिका पाठ लिख दिखाया जिसमें भी श्रीकालकाचार्य्यजी महाराज आषाढ़ चतुर्मासीके पीछे कारणयोगे विहार करके सालिवाहनराजा की प्रतिष्ठानपुर नगरीमें आने लगे तब राजा और श्रमण सङ्घ आचार्य्यजी महाराजके सामने आये, और महा महोत्सवपूर्वक नगरीमें प्रवेश कराया और पर्युषणा पर्व नजिक आये थे जब आचार्य्यजी महाराजके कहनेसे भाद्रव शुदी पञ्चमीके दिन पर्युषणा करनेके लिये सर्व सङ्घने मंजूर किया तब राजाने कहा कि महाराज उसी (पञ्चमी) के

दिन मेरे नगरीके लोगोंकी सम्मतीसे इन्द्रध्वजका महोत्सव होता है जिससे एक दिनमें दो कार्य्यके महोत्सव बननेमें तकलीफ होगा इस लिये पर्युपणा छठकी करो तब आचार्य्यजी महाराजने कहा कि छठकी पर्युपणा करना नही कल्पे जब फिर राजाने कहा कि चौथकी करो तब आचार्य्यजीने कहा यह बन सकता है, युगप्रधान महाराजकी इस बातको सर्व सङ्घने भी प्रमाण किवी है इत्यादि श्रीनिशीथ चूर्णिके दशवे उद्देशेमें इसी प्रकारसे पर्युपणाकी व्याख्या है सो भाद्रव मासमें करने की हैं जैसे ही मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सर (वर्ष)में श्रावण शुदी पञ्चमीकी पर्युपणा करनी ऐसा पाठ कोई भी आगममें नही मिलता है तिस कारणसे कार्तिकमास बद्ध (आश्री) चतुर्मासिक कृत्य करनेमें जैसे अधिक मास प्रमाण नही है तैसे ही भाद्रव मास प्रतिबद्ध पर्युपणा करने में भी अधिकमास प्रमाण नही है इति अधिकमासकी गिनती करनेका कदाग्रहको छोड़ो—

उपरका लेख अधिकमासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये श्रीविनयविजयजीकृत श्रीसुखबोधिकावृत्तिके उपरोक्तपाठसे हुवा है इसी ही तरहके मतलबका लेख श्रीधर्म्मसागरजीने श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें तथा श्रीजयविजयजीने श्रीकल्प दीपिका वृत्तिमे अपने स्वहस्थे लिखा है सो यहाँ गौरवता ग्रन्थ बढ़ जानेके भयसे नही लिखते हैं जिसकी इच्छा होवे सो किरणावलीके तथा दीपिकाके नवमा व्याख्यानाधिकारे देख लेना इन तीनों महाशयोंके लेख प्रायः एक सदृश (तुल्य) है जिसमें भी विशेष प्रसिद्ध सुखबोधिका होनेसे मैंने उपर लिखा है सोही भावार्थः तथा पाठ तीनो महा-

शयोंके जान लेना—अब तीनो महाशयोंके लेखकी शास्त्रानु सार और युक्तिपूर्वक समीक्षा करता हुं—इन तीनो महाशयों का मुख्य तात्पर्य्य सिर्फ इतना ही है कि अधिकमासको गिनतीमें नही लेना इस वातको पुष्ट करनेके लिये अनेक तरहके विकल्प लिखे हैं जिसको और अवमें समीक्षा करता हुं उसीको मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही पुरुष निष्पक्षपातसे पढ़के सत्यासत्यका स्वयं विचारके गच्छका पक्षपातके दृष्टि रागका फंदको न रखते असत्यको छोड़ना और सत्यको ग्रहण करना येही सज्जन पुरुषोंकी मुख्य प्रतिज्ञाका काम है अब मेरी समीक्षा को सुनिये—श्रीधर्म्मसागरजी तथा श्रीजय विजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनों श्रीतपगच्छके विद्वान् महाशयोंको प्रथमतो अधिक मासको कालचूला जानके गिनतीमें निषेध करना ही सर्वथा अनुचित है क्यों कि श्रीअनन्ततीर्थङ्करगणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्योंने तथा श्रीतपगच्छके पूर्वज और प्रभाविकाचार्योंने अधिक मासको दिनोंमें, पक्षोंमें, मासोंमें, वर्षोंमें, गिनती खुलासा पूर्वक किवी है तथा कालचूलाकी उत्तम ओपमा भी शास्त्रकारोंने गिनती करने योग्य दिवी है और कालचूलाकी ओपमा देनेवाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर भी अधिक मासको निश्चयके साथ गिनते हैं जिसका और श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंने अधिक मासको गिनतीमें लिया है जिसके अनेक शास्त्रोंके प्रमाणों सहित विस्तार पूर्वक उपरमें लिख आया हुं जिन शास्त्रोंके पाठोंसें जैनश्वेताम्बर सामान्य पुरुष आत्मार्थी होगा और शास्त्रोंके विरुद्ध परूपनासे संसारवृद्धिका भय रखनेवाला सम्यक्त्वी नामधारी होगा सो भी कदापि

अधिक मासकी गिनती निषेध नहीं करेगा तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय विद्वान् नाम धराते भी अपने बनाये ग्रन्थोंमें अपने स्वहस्ते श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंके विरुद्ध होकर अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं सो कैसे बनेगा अपितु कदापि नहीं इस लिये इन तीनो महाशयोंका कालचूलाके नामसे अधिक मासको गिनतीमें निषेध करना सर्वथा जैन शास्त्रोंके विरुद्ध है तथा और भी सुनिये जैन शास्त्रोंमें पांच प्रकारके मासोसें और पांच प्रकारके संवत्सरोंसे एक युगके दिनोंका प्रमाण श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंने कहा है सो सबही निश्चयके साथ प्रमाण करके गिनती करने योग्य है जिसके कोष्टक नीचे मुजब जानो यथा—

मासोंके नाम	दिनोंका प्रमाण	और उपर एक अहोरात्रिके	
		भाग करके	ग्रहण करना
नक्षत्र मास	२७	६७	२१
चन्द्र मास	२९	६२	३२
ऋतु मास	३०	०	०
सूर्य्य मास	३०	६०	३०
अभिवर्द्धित मास	३१	१२४	१२१

संवत्सरोके नाम	दिनोंका प्रमाण	और उपर एक अहोरात्रिके	
		भाग करके	ग्रहण करना
नक्षत्र संवत्सर	३२७	६७	५१
चन्द्र संवत्सर	३५४	६२	१२
ऋतु संवत्सर	३६०	०	०
सूर्य्य संवत्सर	३६६	०	०
अभिवर्द्धित सं०	३८३	६२	[illegible]

मासोंकी गिनती तथा मासोंके नाम	संवत्सरोंके तथा मासोंके प्रमाणसें	एक युगकेदिनों का प्रमाण
६७ नक्षत्र मासके	पाँच नक्षत्र संवत्सर और उपर सात नक्षत्र मास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६२ चन्द्र मासके	पाँच संवत्सर जिसमें बारह बारह मासोंके तीन चन्द्र संवत्सर और तेरह तेरह मासोंके दो अभिवर्द्धित संवत्सर एसे पाँच संवत्सर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६१ ऋतु मासके	पाँच ऋतु संवत्सर और उपर एक ऋतुमास जानेसे	एक युगके १८३० दिन
६० सूर्य्य मासके	पाँच सूर्य्य संवत्सर जानेसे	एक युगके १८३० दिन
५७ अभिवर्द्धित मास तथा उपर ७ दिन और एक अहोरात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करनेसे	चार अभिवर्द्धित संवत्सरके उपर नव (९) अभिवर्द्धित मास और ७ दिनके उपर एक अहो रात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जितना काल जानेसे	एक युगके १८३० दिन

उपरोक्त कोष्टकों में पाँच प्रकारके मासोंका प्रमाणसे पाँच प्रकारके संवत्सरोंका प्रमाण, और एक युगके १८३० दिन का प्रमाण श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने कहा है जिसके अनुसार श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजीने भी श्रीवृहत्कल्पवृत्तिमें लिखा है सो पाठ भी उपर लिख आया हुं जैन शास्त्रोंमें सूर्य्य मासकी गिनतीकी अपेक्षासे एकयुगके ६०सूर्य्य मासोंके पाँच सूर्य्य संवत्सरोंमें एक युगके १८३० दिन होते हैं जिसमें सूर्य्यमासकी अपेक्षा लेकर गिनती करनेसे मासवृद्धिका ही अभाव है परन्तु एकयुगके १८३० दिनकी गिनती बरोबर सामिल होनेके लिये खास ऋतुमासोंकी अपेक्षासे पाँच ऋतु संवत्सरोंमें सिर्फ एकही ऋतुमास बढ़ता है और चन्द्रमासों की अपेक्षासे पाँच चन्द्रसंवत्सरोंमें दो चन्द्रमास बढ़ते हैं तथा नक्षत्रमासोंकी गिनतीकी अपेक्षासे पाँच नक्षत्रसंवत्सरोंमें सात नक्षत्रमास बढ़ते है और अभिवर्द्धित मासोंकी गिनतीकी अपेक्षासे तो चार अभिवर्द्धित संवत्सर उपर ९ अभिवर्द्धित मास और सात (७) दिन तथा एक अहो रात्रिके १२४ भाग करके ४७ भाग ग्रहण करे जितना काल जानसे (नक्षत्रमास, चन्द्रमास, ऋतुमास, सूर्य्यमास, और अभिवर्द्धित, मास इन सबोंके हिसाबके प्रमाण से) एक युगके १८३० दिन होजाते है सो उपरके कोष्टोंमें खुलासा है उपरका प्रमाण श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि पूर्वाचार्यों का तथा श्रीखरतरच्छके और श्रीतपगच्छके पूर्वज पुरुषोंका कहा हुवा होनेसे इन महाराजोंकी आशातनासे डरनेवाला प्राणी १८३०दिनोंकी गिनतीमेंका एक दिन तथा घड़ी अथवा पल मात्र भी गिनतीमें निषेध नहीं कर सकता है तथापि

श्रीतपगच्छके अर्वाचीन तथा वर्तमानिक त्यागी, वैरागी संयमी, उत्कृष्टिक्रिया करनेवाले जिनाज्ञाके आराधक शुद्ध परूपक श्रद्धाधारी सम्यकत्वी विद्वान् नाम धराते भी महान् उत्तम श्रीतीर्थङ्कर गणधर और पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य तथा खास श्रीतपगच्छकेही पूर्वजपूज्य पुरुषोंकी आशातनाका भय न रखते चन्द्रमासोंकी अपेक्षासे जो अधिक मास होता है जिसकी गिनती निषेध करकें उत्तम पुरुषोंके कहे हुवे पाँच प्रकारके मासोंका तथा संवत्सरोंका प्रमाणकों भङ्ग करके एकयुगके दिनोंकी गिनतीमें भी भङ्ग डालते है जिन्होंकी विद्वत्ताको में कैसी ओपमा लिखुं इसका विचार करता था जिसमें श्रीआत्मारामजीकाही बनाया अज्ञानतिमिर भास्कर ग्रन्थका लेख मुजे उसी वख्तयाद आया सो लिख दिखाता हुं अज्ञानतिमिर भास्कर ग्रन्थके पृष्ठ २९४ के अन्तसे पृष्ठ २९६ के आदि तक का लेख नीचे मुजब जानो—

संविज्ञ गीतार्थ मोक्षाभिलाषी तिस तिसकाल सम्बन्धी बहुत आगमोंके जानकार और विधिमार्गके रसीये बहुमान देनेवाले संविज्ञ होनेसें पूर्वसूरि चिरन्तन मुनियोंके नायक जो होगये हैं तिन्होनें निषेध नही करा है ; जो आचरित आचरण सर्वधर्मी लोक जिस व्यवहारको मानते हैं तिसकों विशिष्ट श्रुत अवधि ज्ञानादि रहित कौन निषेध करे ? पूर्व पूर्वतर उत्तमाचार्य्योंकी आशातनासे डरनेवाला अपितु कोई नही करे बहुल कर्मीकों वर्जके ते पूर्वोक्तगीतार्थो ऐसे विचारते हैं जाज्वल्यमान अग्निमें प्रवेश करनेवालेसें भी अधिक साहस यह है उत्सूत्र प्ररूपणा, सूत्र निरपेक्ष देशना, कटुक विपाक, दारुण, खोटे फलकी देनेवाली, ऐसे जानते हुए भी

देते हैं, मरीचिवत्, मरीचि एक दुर्भाषित वचनसे दुःखरु
समुद्रकों प्राप्त हुआ ; एक कोटा कोटी सागर प्रमाण संसा
में भ्रमण करता हुआ जो उत्सूत्र आचरण करे सो जी
चीकणे कर्मका बन्ध करते हैं । संसारकी वृद्धि और माय
मृषा करते हैं तथा जो जीव उन्मार्गका उपदेश करें, औ
सन्मार्गका नाश करे सो गूढ़ हृदयवाला कपटी होवे, धूर्त
चारी होवे शल्य संयुक्त होवे सो जीव तिर्यंच गतिका आयु
बन्ध करता है । उन्मार्गका उपदेश देनेसे भगवन्तके कथन
करे चारित्रका नाश करता है, ऐसे सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टकों
देखना भी योग्य नही है, इत्यादि आगम वचन सुनके भी
स्व अपने आग्रहरूप ग्रहकरी ग्रस्त चित्तवाला जो उत्सूत्र
कहता है क्योंकि जिसका उरला परला कांठा नही है ऐसे
संसार समुद्रमें महादु:ख अंगीकार करनें से ।

प्रश्न—क्या शास्त्रकों जानके भी कोई अन्यथा प्ररूपणा करता है ।

उत्तर—करता है सोई दिखाते हैं देखनेमें आते हैं—दुषमकालमें वक्रजड़ बहुत साहसिक जीव भवरूप भयानक संसार पिशाचसे न डरने वाले निजमतिकल्पित कुयुक्तियों करके विधिमार्गकों निषेध करने में प्रवर्त्तते है कितनीक क्रियांकों जे आगममें नही कथन करी है तिनको करते हैं और जे आगमने निषेध नही करी है चिरंतन जनोंने आचरण करी है तिनको अविधि कह करके निषेध करते हैं और कहते हैं—यह क्रियाओ धर्मीजनोंकों करने योग्य नही है ।

उपरमें श्री आत्मारामजीके लेखमें जो पूर्वाचार्योंनें आचरीत (प्रमाण) करी हुई बातको निषेध करनेवालाकों

यावत् सम्यग् दर्शनसे भ्रष्टकों देखना भी योग्य नही है इत्यादि कहा तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार रोंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंनें चंद्रमासकी अपेक्षासे जो अधिकमासकी वृद्धि होती है जिसको गिनतीमें प्रमाण किया है, तथापि श्रीतपगच्छके तीनो महाशय तथा वर्तमानिक विद्वान् नाम धराते भी निषेध करते हैं जिन्होंका त्याग, वैराग्य, संयम और जिनाज्ञाके शुद्ध श्रद्धाका आराधकपना कैसे बनेगा और शुद्ध परूपनाके बदले प्रत्यक्ष अनेक शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध, उत्सूत्र भाषणका क्या फल प्राप्त करेंगें सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना—

और श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजय जी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् हो करके भी गच्छ कदाग्रहका पक्षपातसे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध परूपनाके फल विपाकका बिलकुल भय न करते सर्वथा प्रकार से अधिक मासकी गिनती निषेध कर दिवी तथा औरभी अपने लिखे वाक्यका भी क्या अर्थ भूल गये सो अधिक मासकी गिनती निषेध करते अटके नही क्योंकि इन तीनो महाशयोंके लिखे वाक्यसे भी अधिक मास गिनतीमें सिद्ध होता है सोही दिखाते हैं (अभिवर्द्धित वर्षे चतुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्यादिनैर्वयमत्र स्थिताः स्म) यह वाक्य तीनो महाशयोंने लिखा है इस वाक्यमें अभिवर्द्धित वर्ष (संवत्सर) लिखा है सो अभिवर्द्धित वर्ष मास वृद्धि होनेसे तेरह चन्द्रमासोंकी गिनतीसे होता है इसमें अधिक मासकी गिनती खुलासा पूर्वक प्रमाण होती है और अधिकमासकी गिनतीके बिना अभिवर्द्धित नाम संवत्सर नही बनता है

क्योंकि अधिक मासकी गिनती नही करनेसे बारह चन्द्र-मासोंसे चन्द्र संवत्सर होता है परन्तु अभिवर्द्धित नाम नही बनेगा जब अधिक मासकी गिनती होगा तब ही तेरह चन्द्रमासोंसे अभिवर्द्धित नाम संवत्सर बनेगा जिसका विस्तार उपर लिख आये हैं इस लिये अधिक मासकी गिनती तीनो महाशयोंके वाक्यसे सिद्ध प्रत्यक्ष पने होती है और फिरभी इन तीनो महाशयोंने (जैन टिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते च आषाढ़ो एव वर्द्धते नान्येमासाः तच्चाधुना सम्यग् न ज्ञायते ततः पञ्चाशतैव दिनैः पर्युषणा सङ्गतेति वृद्धाः) यह भी अक्षर लिखे हैं सो इन अक्षरोंसे भी सूर्य्यवत् प्रकाशकी तरह प्रगट दिखाव होता है कि जैन टिप्पनामें पौष और आषाढ़की वृद्धि होती थी सो टिप्पना इस कालमें नही हैं इस लिये पचास दिने पर्युषणा करना योग्य है यह श्रीतपगच्छके पूर्वज वृद्धाचार्योंका कहना है सो बातभी सत्य है क्योंकि इन तीनो महाशयोंके परमपूज्य श्रीतपगच्छके प्रभाविक श्रीकुलमण्डन सूरिजीने भी लिखी है जिसका पाठ इसी पुस्तकके नवमें (९) पृष्ठमें छप गया हैं—

अधिक मासकी गिनती अनेक जैन शास्त्रोंसे तथा उपरके वाक्यसे भी सिद्ध होती है और पचास दिने पर्युषणा करना अपने पूर्वजोंकी आज्ञासे तीनो महाशय लिखते हैं जिससे पाठकवर्ग विचार करे तो शीघ्रही प्रत्यक्ष मालुम हो सकता है कि वर्त्तमानमें दो श्रावण होतो दूजा श्रावणमें अथवा दो भाद्रव होतो भी प्रथम भाद्रवमें पचास दिनोंकी गिनतीसे ही पर्युषणा करना चाहिये यह न्याय स्वयं सिद्ध है

इन तीनो महाशयोंने प्रथम अभिवर्द्धित वर्षे इत्यादि वाक्य लिखे जिससे अधिक मासकी गिनती सिद्ध हुई और (पञ्चाशतैश्च दिनैः पर्युषणा युक्तेति वृद्धाः) यह वाक्य लिखके इस कालमें पचास दिने पर्युषणा करना ऐसे सिद्ध किया जिसमें जैन टिप्पनाके अभावसे भी पचास दिनका तो निश्चय रक्खा इस लिये वर्तमान कालमें पर्युषणा सर्वथा भाद्रव पदमें ही करनेका नियम नही रहा क्योंकि श्रावण मासकी वृद्धि होने से दूजा श्रावणमें और दो भाद्रव होनेसे प्रथम भाद्रवमें पचास दिनकी गिनती पूरी होती है यह मतलब तीनो महाशयोंके लिखे हुवे वाक्यसेभी सिद्ध होता है तथापि उपर का मतलबको ये तीनो महाशय जानते भी गच्छके पक्षपात के जोरसे अपनी विद्वत्ताकी लघुता कारक और अप्रमाण रूप विसंवादी (पूर्वापर विरोधि) वाक्य अपने स्वहस्ते लिखते बिलकुल विचार न किया और आषाढ़ चौमासीसे दो श्रावण होनेके कारणसे भाद्रव शुदी तक ८० दिन प्रत्यक्ष होते हैं जिसको भी निषेध करनेके लिये (पर्युषणापि भाद्रपदमास प्रति बद्धा तत्रैव कर्तव्या दिनगणनायांत्वधिक मासः कालचूलेत्य विवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशतैव कुतोऽशीति वार्त्तापि) इन अक्षरोंको तीनो महाशयोंने लिखे है जिस में मास वृद्धि होनेसे भी भाद्रपदमें पर्युषणा करना और दो श्रावण होवे तोभी भाद्रवेमें पर्युषणा करनेसे ८० दिन होते हैं ऐसी वार्त्तापि नही करना क्योंकि अधिक मास कालचूला होनेसे दिनोंकी गिनतीमें नही आता है इस लिये ५० दिने पर्युषणा किया समझना ऐसे मतलबके वाक्य लिखना तीनो महाशयोंके पूर्वापर विरोधी तथा पूर्वाचार्य्योंकी आज्ञा

खण्डनरूप सर्वथा जैन शास्त्रोंसे और युक्तिसे भी प्रतिकुल हैं क्योंकि प्रथमतो अधिक मासको गिनतीमें लेनेसेही अभिवर्द्धित नाम संवत्सर बनता हैं सो अभिवर्द्धित संवत्सर तीनो महाशयोंने उपरमें लिखा हैं जो अभिवर्द्धित संवत्सर का नाम श्रीतीर्थङ्करादि महाराजोंकी आज्ञानुसार कायम तीनो महाशय रक्खेंगें तो अधिकमास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसे मतलबका लिखना तीनो महाशयोंका सर्वथा मिथ्या हो जायगा—

और अधिकमास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसे मतलबको कायम रक्खेंगे तो जो अधिकमास की गिनतीसे अभिवर्द्धित नाम संवत्सर होता है सो नही बनेगा यह दोनो बात पूर्वापर विरोधी होनेसे नही बनेगे इस लिये अबजो ये तीनो महाशय अधिकमासको दिनोकी गिनतीमें नही लेवेंगें तब तो श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि तथा श्रीतपगच्छके नायक पूर्वाचार्योंने अधिक मासको दिनो की गिनतीमें लिया है जिन महाराजोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणरूप तीनो महाशयोंका वचन होगया सो आत्मार्थियोंको सर्वथा त्यागने योग्य हैं इस लिये तीनो महाशयोंको जिनाज्ञा विरुद्ध परूपणाका भय होता तो अधिकमासकी गिनती निषेध किवी जिसका मिथ्या दुष्कृत्यादिसे अपनी आत्मा को उत्सूत्र भाषणके कृत्योंसे बचानी थी सो तो वर्तमान कालमें रहे नही है परलोक गयेको अनेक वर्ष होगये हैं परन्तु वर्तमान कालमें श्रीतपगच्छके अनेक साधुजी विद्वान् नाम धराते हैं और उन्ही तीनो महाशयोंके लिखे वाक्यको सत्य मानते है तथा हर वर्ष उसीको पर्युषणामें वाँचते है

जिसमें प्रायः करके गांव गांवमें श्रीतपगच्छके सब साधुजी अधिकमासकी गिनती निषेध जैन शास्त्रोंके विरुद्ध करते है जिससे श्रीतीर्थङ्करगणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य तथा श्रीतपगच्छके पूर्वज पुरुषोंकी आज्ञाभङ्गका कारण होता है सो आत्मार्थी पुरुषोंको करना उचित नही हैं इसलिये जो श्रीतपगच्छके वर्तमानिक मुनिमहाशयोंको जिनाज्ञा विरुद्ध रूपणाका भय होवे तो अधिकमासकी गिनती निषेध नेका छोड़ देना ही उचित है और आजतक निषेध या जिसका मिथ्या दुष्कृत्य देकर अपनी आत्माको उत्सूत्र पणके पापकृत्योंसे बचानी चाहिये, तथापि विद्वत्ताके भिमानसे और गच्छके कदाग्रहका पक्षपातके जोरसे उपर वातको अङ्गीकार नही करते हुए अधिकमासकी नती निषेध करते रहेगे तो आत्मार्थीपना नही रहेगा ा अधिकमासकी गिनती निषेध जैन शास्त्रोंके विरुद्ध सेसे कोई आत्मार्थी प्रमाण नही कर सकता है इस लिये शास्त्रानुसार श्रीतीर्थङ्करगणधरादि महाराजोंकी तथा ने पूर्वाचार्य्योंकी आज्ञा मुजब अधिकमासकी गिनती गा प्रकारसे अवश्यमेव प्रमाण करनी सोही सम्यक्त्व ो पुरुषोंका काम है जैनटिप्पनानुसार पौष तथा ाढ़मासकी वृद्धि होती थी जब भी गिनतीमें लेते थे इस णसे तेरह चन्द्रमासोंसे संवत्सरका नाम अभिवर्द्धित होता सो वर्तमान कालमें भी अनेक जैन शास्त्रोंमें प्रसिद्ध या श्रीधर्म्मसागरजी श्रीजयविजयजी श्रीविनयविजयजी, तीनो महाशय भी अभिवर्द्धित संवत्सर लिखते हैं में अधिकमासकी गिनती आजाती है इस मतलबका

विचार न करते उलटा विरुद्धार्थ में तीनो महाशयोंने अपने स्वयं विसंवादी (पूर्वापरविरोधि) वाक्यरूप अधिक मास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसा लिख दिया, और विसंवादी वाक्यका विचार भी न किया। विसंवादी पुरुषका दुनियांमें भी कोई भरोसा नहीं करता है तथा राजदरबारमें भी विसंवादी पुरुष झूठा अप्रमाणिक होता है और जैनशास्त्रोंमें तो श्रावककों भी धर्म व्यवहारमें विसंवादी वचन बोलनेका निषेध किया है सोही दिखाते हैं श्रीआत्मारामजीने अज्ञानतिमिरभास्कर ग्रन्थके पृष्ठ २५६में श्रावककों यथार्थ कहना अविसंवादी वचन धर्म्मे व्यवहारमें॥ तथा श्रीधर्म्मसंग्रह वृत्तिके ग्रन्थमें भी यही बात लिखी है और श्रीधर्म्मरत्नप्रकरण वृत्तिमें भी यही बात लिखी है सोही दिखाते हैं। श्रीधर्म्मरत्नप्रकरण वृत्ति गुजरातीभाषा सहित श्रीपालीताणामें श्रीविद्याप्रसारकवर्ग है जिसकी तरफसे छपके प्रसिद्ध हुवी है जिसके दूसरे भागमें पृष्ठ २१४ विषे यथा—

ऋजुप्रगुणं व्यवहरणमृजुव्यवहारो भावश्रावकलक्षणत्व-सुर्द्वा चतुःप्रकारो भवति तद्यथा–यथार्थभणनमविसंवादि वचनं धर्मव्यवहारे।

अर्थ–ऋजु एटले सरल चालवुं ते ऋजुव्यवहार ते चार प्रकारनो छे जेमके एकतो यथार्थ भणन एटले अविसंवादी बोलवुं ते धर्मनीबाबतमां।

देखिये अब उपरमें श्रावककों भी धर्म्म व्यवहारमें विसंवादीरूप मिथ्याभाषण बोलनेका जैन शास्त्रोमें नही कहा है। तो फिर विद्वान् साधुजी होकर विसंवादी वाक्य

अपने बनाये ग्रन्थमें लिखना क्या उचित है। कदापि नही और इसी ही श्रीधर्मरत्नप्रकरणके दूसरे भागमें पृष्ठ २४६ की आदिसे पृष्ठ २४७ की आदि तकका लेखमें विसंवादी आदि वाक्य बोलने वालेको जो फलकी प्राप्ति होती है सो दिखाते है यथा—

अन्यथा भणनमयथार्थजल्पनमादिशब्दाद्वंचक क्रिया दोपोपेक्षाऽसद्भावमैत्री परिग्रहस्तेषु सत्सु श्रावकस्येति भावः—अबोधेर्धर्माप्राप्तेर्बीजं मूलकारणं परस्य मिथ्या दृष्टे-र्नियमेन निश्चयेन भवतीति शेषः।

तथाहि—श्रावकमेतेषु वर्त्तमानमालोक्य वक्तारः सम्भ-वन्ति॥ धिगस्तु जैनं शासनं? यत्र श्रावकस्य शिष्टजन-निन्दितेऽलीकभाषणादौ कुकर्मणि निवृ तिर्नोपदिश्यते॥ इति निन्दाकरणादमी प्राणिनो जन्मकोटिष्वपि बोधिं न प्राप्नुवन्तीत्यबोधि बीजमिदमुच्यते ततश्चाबोधिबीजाद् भव-परिवृद्धिर्भवति तन्निन्दाकारिणस्तन्निमित्तभूतस्य श्रावकस्यापि यदवाचि—शासनस्योपघातेयो–नाभोगेनापि वर्त्तते सत-न्मिथ्यात्वहेतुत्वादन्येषां प्राणिनामिति॥१॥ बध्नात्यपि तदेवालं परं संसारकारणं विपाकदारुणं घोरं सर्वानर्थ विवर्द्धन (मिति)॥२॥

टीकानो अर्थः—अन्यथा भणन एटले अयथार्थ भाषण आदि शब्द थी वंचक क्रिया दोषोनी उपेक्षा तथा कपट मैत्री लेवी अेदोषो होय तो श्रावक बीजा मिथ्या दृष्टि जीवने नक्कीपणे अबोधिनुं बीजथइ पड़ेछे एटले के तेथी बीजा धर्मपामी शक्ता नथी। कारणके अे दोषोमां वर्त्तता श्रावकने जोइ तेओ येवुबोलेके “जिन शासनने धिक्कार

थाओ" के ज्यां श्रावकोने आवा शिष्टजनने निन्दनीय मृषा भाषण वगेरा कुकर्म थी अटकाववानो उपदेश करवामां नथी आवतो अेवो रीते निन्दा करवाथी ते प्राणिओ क्रोड़-जन्मो लगी पण बोधिने पामी शकता नथी तेथी ते अबोधिबीज कहवायें छे अने ते अबोधिबीजथी तेवी निन्दा करनारनो संसारवधे छे एटलुंज नहीं पण तेना निमित्त भूत श्रावकनो संसार वधे छे, जे माटे कहेलुं छे के–जे पुरुष अजाणतां पण शासननी लघुता करावे ते बीजा प्राणिओंने तेवी रीते मिथ्यात्वनो हेतु थई तेना जेटलाज, संसारनु कारण कर्म बांधवा समर्थ थई पड़े छे के जे कर्मविपाक दारुण घोर अने सर्व अनर्थनुं वधारनार थइ पड़ेछे ॥ १–२ ॥

उपरमें अन्यथा अयथार्थ भाषण अर्थात् विसंवादी वाक्यरूप मिथ्याभाषणादि करने वाला श्रावक निश्चय करके मिथ्या दृष्टि जीवोंको विशेष मिथ्यात बढ़ानेवाला होता है और उससे दूसरे जीव धर्म प्राप्त नही कर सकते हैं किन्तु ऐसे श्रावकको देखके जैन शासनकी निन्दा करने वालोंको संसारकी वृद्धि होती है । और विसंवादीरूप मिथ्याभाषण करनेवाला श्रावक भी निन्दा करानेका कारणरूप होनेसे अनन्त संसारी होता है तो इस जगह पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुषोंको विचार करना चाहिये कि श्रीधर्मसागरजी श्रीजय-विजयजी श्रीविनयविजयजी ये तीनो महाशय इतने विद्वान् होते भी अनेक जैनशास्त्रोंके विरुद्ध और अपने स्वहस्ते अभिवर्द्धित संवत्सर उपरमें लिखा है जिसका भी भङ्ग कारक अधिकमास की गिनती निषेधरूप विसंवादी मिथ्या वाक्य भी अपने स्वहस्ते लिखते अनन्त संसार वृद्धिका भी

भय नही करते हैं तो अब ऐसे विद्वानोंको आत्मार्थी कैसे कहे जावे और अधिक मासकी गिनती निषेधरूप विसंवादी मिथ्या वाक्य इन विद्वानोंका आत्मार्थी पुरुष कैसे ग्रहण करेगें अपितु कदापि नही तथापि जो अधिक मासकी गिनती निषेध श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा विरुद्ध होते भी वर्तमानिक पक्षपाती जन करते हैं जिन्होंको सम्यक्त्वरूप रत्न कैसे प्राप्त होगा इस बातको पाठकवर्ग स्वयं विचार शकते हैं—

और जैनशास्त्रानुसार अधिकमासके दिनोकी गिनती करनाही युक्त है इस लिये अधिकमास कालचूला है सो दिनोंकी गिनतीमें नही आता है ऐसा मतलब तीनो महाशयोंका शास्त्रोंके विरुद्ध है सो उपरोक्त लेखसे प्रत्यक्ष दिखता है इन शास्त्रों के न्यायानुसार वर्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेसे ८० दिन प्रत्यक्ष होते हैं सो बात जगत् भी मान्य करता हैं तथापि ये तीनो महाशय और वर्तमानिक श्रीतपगच्छके महाशय भी मंजूर नही करते हैं तो इस जगह एक युक्ति भी दिखलाने के लिये श्रीतपगच्छके विद्वान् महाशयोंसें मेरा इतना ही पूछना है कि आषाढ़ चतुर्मासीसे किसी पुरुष वा स्त्रीने उपवास करना सरू किया तथा उसी वर्षमें दो श्रावण हुवे तो उस पुरुष वा स्त्रीको पचास (५०) उपवास कब पूरे होवेंगे और अशी (८०) उपवास कब पूरे होवेंगे इसका उत्तरमें श्रीतपगच्छके सर्व विद्वान् महाशयोंको अवश्यमेव निश्चय कहना ही पड़ेगा कि—' दो श्रावण होनेसे पचास उपवास दूजा श्रावण शुदी में और ८० उपवास दो श्रावण होनेके कारणसे भाद्रपदमें पूरे होवेंगे

इस युक्तिसे अधिक मासकी गिनती निश्चय के साथ श्रीतप-गच्छके विद्वान् महाशयोंके कहने से भी सिद्ध होगई तथा अनेक शास्त्रानुसार ५० दिने दूजा श्रावण शुदीमें श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेवाले जिनाज्ञा के आराधक सिद्ध हो गये और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करने वाले, शास्त्रोंकी मर्य्यादाके विरुद्ध होनेमें कोई शंसय भी करेगा अपितु नही, तथापि इन तीनो महाशयोंने(दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक ८० दिनकी वार्त्ता भी नही समझना) ऐसे मतलबको लिखा है सो कैसे सत्य बनेगा तथापि वर्तमानिक श्रीतपगच्छके मुनिमहाशय विद्वान् होते भी उपरकी इस मिथ्या वातको सत्य मानके वारंवार कहते हैं जिन्होंको मृषावादका त्यागरूप दूजामहाव्रत कैसे रहेगा सो भी विचारने की वात है, इस उपरोक्त न्यायानु-सार भी अधिक मासकी गिनती निषेध कदापि नही हो सकती हैं तथापि तीनो महाशय करते हैं सो सर्वथा महा मिथ्या है इसलिये दो श्रावण होनेसें भाद्रव शुदी तक ८०दिन अवश्यमेव निश्चय होते हैं जिससे गिनती निषेध करना ही नही वनता है और मासवृद्धि होनेसे भी पर्युषणा भाद्रपद मास प्रति बद्ध है ऐसा लिखना भी तीनो महाशयोंका सर्वथा जैनशास्त्रोंसे प्रतिकुल है क्योंकि प्राचीनकालमें भी मासवृद्धि होती थी जब भी वीश दिने श्रावण शुक्लपञ्चमी के दिन पर्यु-षणा करनेमें आते थे जैसे चन्द्र संवत्सरमें पचास दिनके उपरान्त सर्वथा विहार करना नही कल्पें तैसे ही अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिनके उपरान्त सर्वथा विहार करना नही कल्पे और वीश दिन तक अज्ञात पर्युषणा परन्तु ग्रीष्ममें

दिनसे ज्ञात पर्युषणा करे सो १००दिन यावत् कार्तिकपूर्णिमा तक उसी क्षेत्रमें ठहरे ऐसा श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्ति सूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठमें विस्तारपूर्वक कहा है ऐसे ही अनेक शास्त्रोंमें कहा है जिसके पाठ भी श्रीवृहत्कल्प वृत्त्यादिकके कितने ही पहिले लिख आया हुं और आगे भी लिख दिखावुंगा और खास तीनो महाशयोंके लिखे पाठसे भी अभिवर्द्धितमें बीश दिने श्रावणशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेमें आतेथे इसका विशेष खुलासाके साथ आगे विस्तार पूर्वक लिखुंगा जिससे वहाँ प्राचीनकालका तथा वर्तमानिक कालका अच्छी तरहसे निर्णय हो जावेगा—

और आगे इन तीनो महाशयोंने श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णिका तथा श्रीनिशीथचूर्णिका पाठ लिखके मासवृद्धि वर्तमानिक दो श्रावण होते भी भाद्रव मासमें ही पर्युषणा करने का दिखाया है इस पर मेरा इतना ही कहना है कि इन तीनो महाशयोंने (श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णिमें और श्रीनिशीथचूर्णिमें ग्रन्थकार महाराजने पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारपूर्वक पाठ लिखाथा जिसके) आगे और पीछे का संपूर्ण सम्बन्धका पाठको छोड़के ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप माया वृत्तिसे अधूरा थोड़ासा पाठ लिखके भोले जीवोंको शास्त्रके पाठ लिख दिखाये और अपनी विद्वत्ताकी बात दृष्टिरागियोंमें जमाई हैं इस लिये इस जगह भव्य जीवोंको निःसन्देह होनेसे सत्य बातपर शुद्धश्रद्धा होकरके सत्यबात ग्रहण करे इस लिये दोनो चूर्णिकार पूर्वधर महाराज कृत संपूर्ण पर्युषणा सम्बन्धी पाठ यहाँ लिख दिखाता हुं श्रीपूर्वधर पूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीपर्युषणा कल्प

(दशाश्रुतस्कन्ध सूत्रका अष्टम अध्ययनके) चूर्णिके पृष्ठ ३१ से ३२ तक तत्पाठः—

आसाढ़चाउम्मासियं पडिक्कमंति, पंचहिं दियसेहिं पज्जो सयणा कप्पं कढ्ढेति, सावण बहुल पंचमीए पज्जोसवेति णय वाहिट्ठितेहिं ण गहिता णित्यरादीणि, ताहे कधं कहंता चेव गिरहंति मलयादीणि एवं आसाढ़पुणिमाए ठिता, जाव मग्गसिरबहुलस्स दसमी, तावएगंमि खेत्ते अच्छेज्जा, तिन्निवा दस्सराता, एवंतिन्निपुण दस राता, चिक्खलादीहिं कारणेहिं॥ एत्यठ गाथा पटयंति पज्जोसविते, सवीसति राय मासस्स आरात्तो जति गिहत्या पुच्छंति, तुब्भे अज्जो वासा रत्तं ठिता, अहवा ण ठिता एय, पुच्छितेहिं, जति अहिवढ्ढिय संवच्छरे, जत्थ अहिमासतो पडिति तो, आसाढ़पुणिमाओ वीसति राते गते भणति, ठितामोति आरतो ण कथयति वोत्थं ठिता मोति, अथ इतरे तिन्निवंद संवच्छरा तेसु सवीसति राते मासे गते भणंति, ठितामोति आरतो ण कथयति वोतुं ठिता मोति, किं कारणं असिवादि, गाथा कयाइ, असिवादीणि उप्प ज्जेज्जा जेहिं निग्गमणं होज्जा ताहेति, गिहत्था मणं ज्ज, ण किंचि एते जाणंति, मुसावात वाउलावेंति, जेणं ठितामोति भणित्ता, निग्गत्ता, अहवा वासं ण सुट्ठ आरद्धं, तेण लोगो भीता धणंज्जं पितुं, ठितो साहूहिं भणितो ठियामोति जाणति, एते वरिसास्सति तो सुयामो धणं विक्किणामो, अधि करणं घराणियत्यप्पंति, हलादीणय संवप्पं करेंति, जम्हा एते दोसा, तम्हा वीसती राते आगते, सवीसति राते वा मासे आगते, ण कथंति वोतुं ठितामोति॥ एत्थउ गाथा॥ आसाढ़पुणिमाए ठिताणं कतितणडगलादीणि गहियाणि, पज्जोसवणा कप्पोय

ण कहितो, तो सावण बहुलपञ्चमीएपज्जोसवेंति असति खेते सावण बहुलदसमीए, असति खेते सावणबहुलस्स पन्नरसीए, एवं पंचपंच उसारं तेण जाव,असति भद्दव सुद्ध पंचमीए, अतो परेण ण वट्टति अतिकमितुं,आसाढ़पुणिमातो अढत्तं मग्गंताणं, जाव भद्दवय जोण्हस पञ्चमीए एत्यन्तरे जति ण लं ताहे रुक्कस्स हेठ्ठेठितो तोविपज्जोसवेयव्वं, एतेसु पव्वेसु जहा लंभे पज्जोसवेयव्वं, अपव्वे ण वट्टति, कारिणिया चउत्थीवि अज्ज कालएहिं पवित्तिता कहं पुण उज्जेणीए णगरीए, बलमित्त भाणुमित्तो रायाणो, तेसिं भाइणेज्जो अज्ज कालए पव्वाविता,तेहिराईहं पट्टुट्ठेहिं, अज्ज कालतो निव्विसत्तोकत्तो सोपतिट्ठाणं आगतो, तत्थय सालवाहणो राया सावगो तेण समणपुयणात्यणो पवित्तितो ॥ अंते पुरंच भणितं असावसाए उववासं काउद्दअट्ठमिमाईसु उववासं काउ ॥ इति पाठांतरं ॥ पारणाए साहूण भिरकं दातुं पारिज्जव ॥ अन्नय पज्जो सवणादिवसे आसन्ने आगते अज्ज कालएण सालवाहणो भणितो, भद्दवय जोण्हस्स पंचमीए पज्जोसवणा, रणा भणितो तद्दिवसं मम इंदो अणुजातव्वो होहित्ति तो निप्पज्ज वासिताणि चेतियाणि साहूणोय भविस्संतित्ति कोऊं तो छट्ठीए पज्जोसवणा भवतु, आयरिएण भणितं न वट्टत्ति अतिक्कामेसु, रणा भणिय तो चउत्थीए भवतु आयरिएण भणितं एवं होउत्ति ॥ चउत्थीए कतो पज्जोसवणा एवं चउत्थीविजाता कारणिता, सुद्ध दसमी ठिताण आसाढ़ी पुण्णिमो सरणति जत्थ आसाढ़मासकप्पो कतो तत्थ खेतं वासावासं पाउग्गं असच णत्थि खेतं वासावासं पाउग्गं अथवा अज्जासे चेव अणी खेत्तं वासावास पाउग्गं सव्वंच पडिपुन्नं संथारग डग-

लगाइ कयपभूमीय वहु वासंच गाढं अक्कोरयं आहूतं, ताहे आसाढ़पुस्मिमाए चेव पज्जोसवेज्जति, एवं पंचाहं परिहाणि मधिकृत्योच्यते, इय सत्तरी गाथा, इय प्रदर्शने आसाढ़चाउ मासियातो सवीसति राते मासे गते पज्जोसवेंति, तेसिं सत्तरी दिवसा जहराणतो जेट्ठोग्गहो भवति, कहं पुण सत्तरी, चउरहं मासाणं सवीसं दिवस सतं भवति, ततो सवीसति रातो मासो, पणासं दिवसा सो छितो सेसा सत्तरी, दिवसा से भद्दवय बहुलस्स दसमीए पज्जोसवेंति, तेसिं असीति दिवसा जेट्ठोग्गहो, जे सावण पुस्मिमाए पज्जोसवेंति तेसिं णउतिदिवसा जेट्ठोग्गहो, जे सावण बहुल दसमी ठिता तेसिं दसुत्तरं दिवससतं जेट्ठोग्गहो, एवमादीहिं पग्गारेहिं वरिसारत्तं एग खेत्ते अच्छिता कत्तिय चाउमासिए णिग्गंतव्वं, अह वासं ण उवरमति, तो मग्गसिरे मासे जं दिवसं पक्क मट्टियं जात तद्दिवसं चेव निग्गंतव्वं, उक्कोसेण तिन्नि दसराया न निग्गच्छेज्जा मग्गसिर पुस्मिमाएत्ति भणियं होइद मग्गसिर पुस्मिमाए परेण, जइविप्लवंतेहिं तहवि णिग्गंतव्वं, अथ न निग्गच्छंति तो चउलहुग्ग, एवं पंचमासिउं जेट्ठोग्गहो जाओ, काउय गाहा ॥ आसाढ़मासकप्पं काउं जत्थ अन्नं वासा वासे पाउग्गं तत्थ आसाढमासकप्पो कओ तत्थेव पज्जोसविते आसाढ पुस्मिमाए वा सालंवणाणं मग्गसिरं पिसव्वं, वासा णतो विरमति तेण ण निग्गता असीवादीणिवा वाहिमवं सालंवणाणं छमासि तो जेट्ठोग्गहो ॥ इत्यादि ॥

और श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराज कृत श्रीनिशीथ सूत्रकी चूर्णिके दशमे उद्देशेके पृष्ठ ३२१ से पृष्ठ ३२४ तक का पर्युषणा सम्बन्धीका पाठ नीचे मुजब जानो, यथा—

वासावासेकंमि खेत्तकंमि काले पवेसियव्वं,अतो भणति, आसाढपुण्णिमा ॥ गाहा ॥ वाययंति उस्सग्गेण पज्जोसवेयव्वं, अहवा प्रवेष्टव्यं, तंमि पविठा उस्सग्गेण कत्तिय पुण्णिमं जाव अच्छंति, अववादेण मग्गसिर बहुल दसमी जाव तंमि एग खेत्ते अच्छंति, दसरायगाहणातो अववातो दंसितो अणे वि दो दसराता अच्छेज्जा,अववातेण मार्गसिरमासं तत्रैवास्त्ये-त्यर्थः॥ कहं पुण वासा पाउग्गं खेत्तं पविसंति,इमेण विहिणा वाहिठिता॥ गाहा॥ वाहिठियत्ति जत्थ,आसाढमासकप्पो कतो अणत्थवा आसण्णे ठिता वा समायारी खेत्तं, वसभेहिं गाहेंति भाववंतीत्यर्थः॥ आसाढपुण्णिमाए पविठा, पडिवयाउ आरभ्भ पंचदिणा,संथारग तण डलगछार मल्लादीयं गिण्हति, तंमिचेवपणगेरातिए पज्जो सवणा कप्पं कहेंति, ताहे सावण बहुल पञ्चमीए वासकाल सामायारिं ठवेति, एत्थउअ ॥गाहा॥ एत्थंतिएत्थ, आसाढपुण्णिमाए, सावण बहुलपञ्चमीए, वासावासं पज्जोसविएवि, अप्पणो अणभिग्गहियं, अहवा जति गिहत्था पुच्छंति अज्जो तुब्भे, अत्थेव वारिसाकालं ठिया, अहवा ण ठिया, एवं पुच्छिएहिं, अणभिग्गहियंत्ति संदिग्धं वक्तव्यं, अह अन्यत्रवाप्यपि निश्चयो भवतीत्यर्थः ॥ एवं सन्दिग्धं कियत्कालं वक्तव्यं ॥ उच्यते ॥ वीसतिरायं, वीसतीमासं, जति अभिवड्ढियवरिसं, तो, वीसतिरायं, णाव अणाभिग्गहियं, अह चंदवरिसं तो सवीसतिरायं, णाव अणाभिग्गहियं भवति तेणं ततकालात्परतः अप्पणो अभिरासुख्येन गृहीतं, अभिगृहीतं इदं व्यवस्थिता इति, इहट्ठियामो वरिसाकालंति किं पुण कारणंति, वीसति राते, सवीसतिरासे वा मासे गते, अप्पणो अभिग्गहियं गिहिणा

तंवा कहेंति ॥ आरतो न कहेंति उच्यते ॥ असिवादि गाहा कयाइ ॥ असिवं भये आदिगाहणतो रायदुठाइ वा वासं ण सुट्ठ आरद्धं वासितुं, एवमादिहिं कारणेहिं, जइ अच्छंति तो आणा तीता दोसा, अहगच्छंति ततो गिहत्था भणंति एते, सव्वणुपुत्तगा ण किंचिजाणंति, मुसावायं भासंति, ठिता-मोत्ति भणित्ता जेण णिग्गता लोगो वा भणिज्ज साहूएत्थ वरिसारत्तं ठिता, अवस्सं वासं भविस्सति, ततो धण्णं विक्कणति, लोगो घरादीनिच्छादेति, अह हलादिकं माणि-वाम ठवेति, अणिगाहिते गिहिणा तेय आरतो कतो, जम्हा एवमादिया अधिकरणदोसा, तम्हा अभिवड्ढिय-यवरिसे,वीसतीराते गते गिहिणा तं करेंति, तिसु चंदवरिसे सवीसति राते मासे गते गिहिणा तं करेंति, जत्थ अधि-मासगो पडति वरिसे,तं अभिवड्ढियवरिसं भणति, जत्थ ण पडति, तं चंदवरिसं सोय अधिमासगो जुगस्सगंते मज्जे वा भवन्ति, जइ तो नियमा दो आसाढा भवंति, अहमज्जे दो पोसा, सीसो, पुच्छति जम्हा अभिवड्ढियवरिसे वीसति-रातं, चन्दवरिसे सवीसतिमासो ॥ उच्यते ॥ जम्हा अभि-वड्ढियवरिसे, गिम्हे चेव सो मासो अतिक्कंतो, तम्हा वीस दिना अणभिगाहियं तंकरेंति, इयरेसु तिसु चंदवरिसेसु सवी-सतिमासा इत्यर्थः ॥ एत्थ पणगं गाहा ॥ एत्थउ आसाढपुण्णि माए, ठिया डगलादीयं गिण्हंति,पज्जोसवणाकप्पंच कहेंति, पंचदिणा ततो सावण बहुल पञ्चमीए, पज्जोसवेंति, खेत्ता भावे कारणेन पणगेसु वुड्ढे दसमीए, पज्जोसवेंति, एवं पण रसीए, एवं पणगवड्ढी,तावकज्जति, जाव सवीसति मासो, पुणो सोय सवीसति मासो भद्दवयसुद्ध पञ्चमी पयुज्जति,

अहवा आसाढ़सुद्ध दसमीए वासा खेत्त पविठा, अहवा, जत्थ आसाढमासकप्पोकओ तं वासप्पाउग्गं खेत्तं, अस्स च णत्थि वास पाउग्गं ताहे तत्थेव पज्जोसवेंति, वासंच गाढं अणु वरयं आषाढ़पुण्णिमाहिं तत्थेव पज्जोसवेंति, एक्कारसीओ आढवेउ डगलादी तं गेण्हंति पज्जोसवणा कप्पं कहेंति, ताहे आसाढ पुण्णिमाए पज्जोसवेंति, एस उस्सग्गो, सेस कालं पज्जोसवेत्ताणं सव्वो अववातो, अववातेवि सवीसति रातमासा तो परेण अतिक्कामेउ ण वट्टति, सवीसति राते मासे पुणे जतिवासखेत्तं ण लब्भति तो रुक्ख हेट्ठेवि पज्जोसवेयव्वं तं पुण्णिमाए पञ्चमीए दसमीए एवमादि पव्वेसु पज्जोसवेयव्वं, णोअपव्वे ॥ सीसो पुच्छति इयाणिं कहं चउत्थिए अपव्वे पज्जोसविज्जति, आयरिओ भणति, कारणिया चउत्थी, अज्जकालगायरियाहिं पवत्तिया, कहं भण्णते कारणं, कालगायरिओ विहरंतो, उज्जेणिं गतो तत्थ वासावासो वासातरंठितो तत्थ ॥ णगरीए बलमित्तो राया, तस्स कणिट्ठो भाया भाणुमित्तो जुवराया, तेसिं भगणी भाणुसिरी णामं तस्स पुत्तो बलभाणू णाम, सोयपगितिभद्दविणीययाए साहू तो पज्जवासति आयरिहिं से धम्मो कहिंतो पडिवुद्धोपव्वावितोय, तेहि य बलमित्त भाणुमित्तेहिं कालग्गज्जापज्जोसवितेणिविसतो कत्तो, आयरिया भणंति जहा, बलमित्त भाणुमित्ता कालगायरियाणं भागिणेज्जा भवंति, माउलोत्ति, काउ महंतं आयरं करेंति, अब्भुठाणादियंतं च पुरोहियस्स अप्पत्तियं भणातिय, एसमुद्दपासंडोवेतादितादिरोहणोअ अतो पुणो पुणो उल्लावेंतो, आयरिएण णिप्पठप्पसिण वागरणो कतो, ताहे सो पुरोहितो आयरियस्स पदुट्ठो, रायाणं आणुलोमेहिं

विप्परिणामेति एते रिसितो महाणुभावा एते जेणं गच्छन्ति
तेण पहेणं जति रणो णागच्छति पताणि वा असमितो
असिवं भवति, तम्हा विसज्जाहं ताहे विसज्जिता अणे
भणंति, रणा उवाएण विसज्जिता कहं सव्वंमिणगारकिल
रणा अणेसणा कराविता, ताहे णिग्गता एवमादियाण
कारणाण अणुक्कमेण णिग्गता विहरंता पतिठ्ठाणं णयरं,
तेण पविठा पतिठ्ठाण समणसंघस्सय अज्जकालगेहिंसदिठं,
जावाहं आगच्छामि ताव तुब्भेहिं णो पज्जोसवियव्व, तत्थ
सालवाहणोराया सो सावगो सोयकालगज्जंएतं सोउंणणिग्गतो
अभिमुहो समणसंघोय महसा विभूतीए पविठो, कालगज्जो
पविठेहि भणियं भद्दवय सुद्ध पञ्चमीए पज्जोसविज्जति,
समणसघेण पडिवण्ण,ताहे रणा भणियं तद्दिवसं मम लोगाणु-
वत्तीए इन्दो अणुजायव्वो होहेत्ति, साहूचेतितेणपज्जवासे
स्सती तो छट्ठीए पज्जोसवणा किज्जउ, आयरिएहिं भणियं,
ण वट्टति, अतिकामेउ ताहे रणा भणियं, तो अणागए, चउ-
त्थीए पज्जोसविज्जति, आयरिएहि भणियं एव भवउ, ताहे
चउत्थीए पज्जोसवियं, एवं, जुगप्पहाणेंहिं चउत्थी कारणे
पवत्तिता, साचेवाणुमत्ता सव्व साधूणं, रणा अंते पुरियाउ
भणिता तुब्भे अमावसाए उवावासंकाउं पडिवयाए सव्व
खज्ज भोज्ज विहीहिं साधू उत्तरपारणए पडिलाभेत्ता पारे
ज्जाहा, पज्जोसवणाए अठ्ठमतिकाउ पडीवयाए उत्तर-
पारणयं भवति तंच सव्वभोगेण विकयंततोपमिति मरहठ-
विसपसवण पूव्वत्तिवणोपवश्ले ॥ इयाणिं पंचगपरिहाणि-
मधिकृत्य कालावग्राहोच्यते ॥ इय सत्तरी गाहा ॥ इय
रि चरमइ्थंने जे आ शाइ शाउम्मा।विया तो सवीसति राते

मासे गते पज्जोसवेंति, तेसिं सत्तरी दिवसा जहणो वासा कालोगाहो भवति, कहं सत्तरीं उच्यते, चउण्हं मासाणं विसुत्तरं दिवससतं भवति, सवीसति मासो पण्णासं दिवसा, ते वीसुत्तरमज्जतो साधितो, सेसा सत्तरी, जे भद्दवय बहुलदस मीए पज्जोसवेंति, तेसिं असति दिवसा मझिमो वासा कालो गाहो भवति, सावणपुस्मिमाए पज्जोसवेंति तेसिं णिउति दिवसा मज्झिमो चेव वासकालो गाहो भवति, जे सावण बहुलदसमी पज्जोसवेंति तेसिं दसुत्तरं सतंमज्झिमो चेव वासा कालोगाहो भवति, जे आसाढ़पुस्मिमाए पज्जोसवेंति, तेसिं वीसुत्तरं दिवससयं जेठो वासोग्गहोभवइ सेसन्तरेसु दिवस पमाणं वत्तव्वं, पमालिप्पगारेहिं वरिसारत्तं एग्गखेत्ते, कत्तियं चउम्मासिय, पडिवयाए अवस्स णिग्गंतव्वं, अह मग्गसिर मासे वासति चिरक्खाजलाउलापंथा तो अववातेण एक्कं उक्कोसेणं तिसि वा दसराया जावतम्मिखेत्ते अच्छंति, मार्ग-सिरपौर्णमासीयावेत्यर्थः॥ मग्गसिर पुस्मिमाए जं परतो जतिचिरक्खा पंथा वासं वा गाढं अणावरयं वासति, जति विप्लंवंतेहिं तहावि अवस्सं णिग्गंतव्वं, अह ण णिग्ग-च्छति, तो चउगुरूगा, एवं पञ्चमासि तो जेठो गाहो जातो,काउण मास गाहा, जंमि खेत्ते कतोआसाढ़मासकप्पो तंच वासावासं पाउग्गं खेत्ते अणंमिअलद्धे वास पाउग्गे खेत्ते जत्थ आसाढ़मासकप्पो कतो तत्थेव वासावासं ठिता तीसे वासा वासे चिरक्खादिएहिं कारणेहिं तत्थेव मग्गसिरं ठिता एवं सालंवणाण कारणे अववातेण छ मासितो जेठो गहो भवतीत्यर्थः॥

उपरोक्त दोनुं पाठ मेरे देखनेमें आयेथे वैसेही छपा दिये हैं

इसलिये कुछ विशेष अशुद्धता होवे तो दूसरी शुद्ध पुस्तकसे उपरोक्त दोनों पाठका मिलान करके वाँचना अब उपरोक्तदोनुं पाठका संक्षिप्त भावार्थः सुनो–वर्षाकालके लिये एक क्षेत्रमें प्रवेश करना ठहरना सो कितना काल तक सोही कहते हैं आषाढ़पूर्णिमासे लेकर उत्सर्गसे पर्युषणा करे अथवा प्रवेश करे सो यावत् कार्त्तिक पूर्णिमा तक रहे और अपवादसे मार्गशीर्ष कृष्ण दशमी तक यावत् रहे तथा फिर भी कारणयोगे दो दशरात्रि (वीशदिन) यानी मार्गशीर्ष पूर्णिमा तक भी रहना कल्पे सो प्रथम किस विधिसे प्रवेश करके पर्युषणा करे वह दिखाते हैं—जहां आषाढ़मासकल्प रहा होवे वहाँ अथवा अन्य क्षेत्रमें आषाढ़पूर्णिमाके दिन चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद प्रतिपदा (एकम) से लेकर पाँच दिनमें उपयोगी वस्तु ग्रहण करके पञ्चमी रात्रि याने श्रावण कृष्णपञ्चमीकी रात्रिको पर्युषणा कल्प कहके वर्षा-कालकी समाचारी को स्थापन करे, याने पर्युषणा करे, सो अधिकरण दोष न होने के कारणसे और उपद्रवादि कारणसे दूसरे स्थानमें जावेतो अवहेलना न होवे इसलिये अनि-श्चय पर्युषणा करे, अधिकरण दोषोंका वर्णन संक्षेपसे पहिलेही लिखा गया है इसलिये पुनः नही लिखता हुं और निश्चय पर्युषणा कब करे सो कहते है कि अभिवर्द्धित वर्षमें वीशदिने और चन्द्रवर्षमें पचाशदिने निश्चय पर्यु-षणा करे, क्योंकि जैसे युगान्तमें जब दो आषाढ होते हैं तब ग्रीष्म ऋतुमें चेव निश्चय अधिक मास व्यतीत होजाता है इसलिये अभिवर्द्धित वर्षमें आषाढ़ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद प्रतिपदासे वीशदिन तक अनिश्चय पर्युषणा

परन्तु वीशमें दिन श्रावणशुक्लपञ्चमीसे निश्चय प्रसिद्ध पर्युषणा होवे, और चन्द्रवर्षमें पचाश दिन तक अनिश्चय पर्युषणा परन्तु पचाशमें दिन भाद्रपद शुक्लपञ्चमीसे निश्चय प्रसिद्ध पर्युषणा होवे, सो जब आषाढ़पूर्णिमासेही योग्यक्षेत्र मिले और उपयोगी वस्तुका योग्य होवे तो ग्रहण करके चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद उसी रात्रिको पर्युषणा कल्प कहे याने जो अकेला साधु होवे तब तो उस रात्रिको श्रीकल्पसूत्रका पठन करके अनिश्चय पर्युषणा स्थापन करे और साधुओंका समुदाय होवे तो सर्व साधु कायोत्सर्गमें सुने और वृद्धसाधुजी मधुर स्वरसे श्रीपर्युषणा कल्पका उच्चारण करके अनिश्चय पर्युषणा स्थापन करे तथा योग्यक्षेत्र न मिले तो फिर पाँच दिन तक दूसरे स्थान (गांव) में जाके उपयोगी वस्तु ग्रहण करके श्रावण कृष्ण पञ्चमीको पर्युषणा करे इसी तरहसे योग्यक्षेत्राभावादि कारणे अपवादसे पांच पांच दिनकी वृद्धि करते यावत् भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको अवश्यही पर्युषणा निश्चय करे तथापि भाद्रपदशुक्लपञ्चमी तक योग्यक्षेत्र नही मिलेतो जङ्गलमें वृक्ष नीचे भी अवश्यही पर्युषणा करे परन्तु पञ्चमीकी रात्रिको उल्लङ्घन करना नही कल्पे और भाद्रपद शुक्लपञ्चमीके पहले आषाढ पूर्णिमासे योग्यता मिलनेसे अनिश्चय पर्युषणा स्थापन करनेमें आते है जिसमें स्थापन करे उसी रात्रिको श्रीपर्युषणा कल्प कहके पर्युषणा स्थापे जिसको गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई पर्युषणा कहते हैं और पचासमें दिन भाद्रपद शुक्लपञ्चमी की निश्चय प्रसिद्धसे पर्युषणा उसीमें सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करे जिसको गृहस्थी लोगोंके

जानी हुई पर्युषणा कहते हैं और भाद्रपद शुक्लपञ्चमी के उपरान्त विहार करना सर्वथा नही कल्पे इस लिये योग्य-क्षेत्रके अभावसे वृक्ष नीचे भी अवश्यही निवास (पर्युषणा) करना कहा है जैसे चन्द्रवर्षमें पचास दिनका निश्चय है तैसे ही अभिवर्द्धितवर्षमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीकी निश्चय पर्युषणा करने का नियम था परन्तु वीशदिनमें श्रावण शुक्लपञ्चमीकी रात्रिको उल्लङ्घन करना सर्वथा प्रकारसे नही कल्पे इस तरह पञ्चमी, दशमी, पूर्णिमादि पर्वतिथिमें पर्युषणा करे, परन्तु अपर्वमें नही, जब शिष्य पूछता है कि आप अपर्वमें पर्युषणा करना नही कहते हो फिर चतुर्थीका अपर्वमें कैसे पर्युषणा करते हो तब आचार्य्यजी महाराज कहते है कि कारण से चतुर्थी को पर्युषणा करनेमें आते हैं सोही कारण उपरोक्त पाठानुसार जैन इतिहासों में तथा श्रीकल्पसूत्र की व्याख्याओंमें प्रसिद्ध है और इसीपुस्तकमें पहिले संक्षेप से लिखागया है इस लिये यहां भाषार्थमें विस्तारके कारणसे नहीं लिखता हुं, अब जघन्य, मध्यम, और उत्कृष्ट से पर्युषणाके कालावग्रहका प्रमाण कहते है कि चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल होता है तब आषाढ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद पचासदिने पर्युषणा करे तो सत्तर (७०) दिवस जघन्यसे कार्त्तिक चौमासी तक रहते हैं परन्तु योग्यक्षेत्र मिलनेसे भाद्रव कृष्णदशमी को ही पर्युषणा कर लेवे उसीको ८० दिन मध्यमसे रहते हैं तथा श्रावण पूर्णिमा को पर्युषणा करे तो ९० दिन मध्यमसे रहते हैं। इसी तरह यावत् श्रावण कृष्णपञ्चमी को पर्युषणा किवी हो तो ११५ दिन मध्यम से रहते हैं और आषाढ पूर्णिमासे ही

पर्युषणा किवी होवे तो उत्कृष्ट से १२० दिन रहते हैं पी
उत्सर्गसे कार्तिक पूर्णिमाको अवश्य विहार करे, परन्तु वर्षा
कारणसे चिक्खल कर्दमादि कारण योगे अपवाद से मा
शीर्ष पूर्णिमा तक भी रहना कल्पे पीछे तो अपवाद से
अवश्य निकले विहार करे, नही करे तो प्रायश्चित अ
जहां आषाढमास कल्प किया होवे वहां ही चौमासी ठ
तथा मार्गशीर्ष पूर्णिमाको विहार करे तो उत्कृष्ट छ मास
कालावग्रह होता है इत्यादि—

अब पाठकवर्ग देखिये उपरका दोनु पाठ प्राचीनक
में पूर्वधरोंके समयका उग्रविहारी महानुभाव पुरुषों
जैन ज्योतिषानुसार वर्तने का है जिसमें उत्सर्गसे आष
पूर्णिमा से कार्तिक पूर्णिमातक पर्युषणा करे और अ
वादसे श्रावण कृष्ण। ५ । १० । ३० । श्रावण शुक्ल ५ । १
१५ । भाद्र कृष्ण । ५ । १० । ३० । और भाद्र शुक्ल ५ ।
दिनोंमें जहां योग्यक्षेत्र मिले वहां ही पर्युषणा करे । प
पञ्चमीको उल्लङ्घन नही करे, जिससे जघन्यमें ७० दिन
पर्युषणा होती है तथा मध्यमसे । ७५ । ८० । ८५ । ९० । ९
१०० । १०५ । ११० । ११५ । ऐसे नव प्रकारकी पर्युषणा ह
है और उत्कृष्टसे १२० दिन की पर्युषणा होती है ।

जिसमें चन्द्र संवत्सरमें अपवादसे भी पचास दि
की भाद्रवशुक्ल पञ्चमीको उल्लङ्घन नही करे जि
पीछाड़ीके ७० दिन रहते हैं तैसेही अभिवर्द्धित संवत्
सें अपवादसे भी वीशमें दिनकी श्रावणशुक्लपञ्चमी
उल्लङ्घन नही करे जिससें पीछाड़ीके कार्तिकपूर्णिमा त
१०० दिन रहते हैं और श्रावण शुक्लपञ्चमीको सांवत्सरि

प्रतिक्रमणादि भी पूर्वधरोंके समयमें जैन ज्योतिषानुसार करनेमें आतेथे सो उपरमें लिख आया हु और आगे भी खुलासापूर्वक लिखुंगा वहां विशेष निर्णय होजावेगा—

और आषाढ़ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद योग्यतापूर्वक पांच पांच दिने पर्युषणा करे सो सिर्फ एक श्रीकल्पसूत्रका रात्रिको पठण करके पर्युषणा स्थापन करे परन्तु अधिकरण दोष उत्पन्न होने के कारणसे गृहस्थी लोगों को कहे नही और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने तथा चन्द्रसंवत्सरमें पचासदिने वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से गृहस्थी लोगों को पर्युषणाकी मालुम होती है सो यावत् कार्तिकपूर्णिमा तक उसी क्षेत्रमें साधु ठहरे सर्वथा प्रकारसे एक स्थानमें निवास करना सो पर्युषणा कही जाती है इस लिये आषाढ़ चौमासी पीछे योग्यतापूर्वक जहां निवास करे उसीको पर्युषणा कहते हैं सो अज्ञात पर्युषणा कही जाती है और चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने तथा अभिवर्द्धितमें वीशदिन सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से ज्ञात पर्युषणा कही जाती है इसका विशेष विस्तार आगे भी करनेमें आवेंगा—

और श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णिके तीस (३०)के पृष्ठमें (पढमंकाल ठवणा भणामि किंकारणं जेण एयं सुत्तं काल ठवणाएसुत्ता देसेणं परुवेयव्वं कालो समयादिओ,गाथा—असंखेज्जसमया आवलिया एवं सुत्तालावएणजावसंवच्छरं एत्थपुणउदूबद्धे चासारत्तेणपयगतं अधिकारेत्यर्थः) इत्यादि व्याख्या प्रथम कियी हैं सो इस पाठमें कालकी व्याख्यासूत्रानुसार करनी कही है । [illegible]

आवलिका होती हैं १,६७,७७,२१६ आवलिका जाने सें एक मुहूर्त्त होता है त्रीश मुहूर्त्तसे एक अहोरात्रिरूप दिवस होता है ऐसे पन्दरह दिवसोंसे एकपक्ष होता हैं दो पक्षसे एकमास होता है इसी तरह सें अनुक्रमे वर्ष, युग, पूर्वाङ्ग, पूर्व, पल्योपम, सागरादि कालकी व्याख्या अनेक जैन शास्त्रोंमें विस्तारपूर्वक प्रसिद्ध है।

अब इस जगह पाठकवर्ग सज्जन पुरुषोंसे मेरेको इतना ही कहना है कि श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णिमें और श्रीनिशीथ चूर्णिमें खुलासा पूर्वक अधिकमासको निश्चयके साथ प्रमाण करके गिनतीमें भी लिया है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने तथा चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने निश्चय पर्युषणा कही हैं और मासवृद्धिके अभावसेही भाद्रपद शुक्लचतुर्थीको पचास दिनके अन्तरमें कारणयोगे श्रीकालकाचार्य्यजीनें पर्युषणा किवी सो दिखाया है और पचासदिने योग्यक्षेत्रके अभावसे जंगलमें वृक्ष नीचे भी पर्युषणा करनी कही है परन्तु पचासमें दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन करना भी नही कल्पे इत्यादि विस्तारपूर्वक संपूर्ण सम्बन्धके दोनो पूर्वधर महाराज कृत पाठ उपरोक्त छपगये है जिसको विचारो और श्रीधर्मसागरजी तथा श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनों महाशयोंने दोनों चूर्णिकार पूर्वधर महाराजके विरुद्धार्थमें वर्तमानमें मासवृद्धि दो श्रावण होनेसे भी आषाढ़ चौमासीसे यावत् ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा सिद्ध करनेके लिये आगे और पीछेके सम्बन्धके पाठको और अधिकमासके प्रमाण करनेके पाठको छोड़कर अधूरा बिना सम्बन्धका थोड़ासा पाठ लिखके भोले जीवोंको शास्त्रोंके नामसे पाठ

प्रतिक्रमणादि भी पूर्वधरोंके समयमें जैन ज्योतिषानुसार करनेमें आतेथे सो उपरमें लिख आया हुं और आगे भी खुलासापूर्वक लिखुंगा वहां विशेष निर्णय होजावेगा—

और आषाढ़ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद योग्यतापूर्वक पांच पांच दिने पर्युषणा करे सो सिर्फ एक श्रीकल्पसूत्रका रात्रिको पठण करके पर्युषणा स्थापन करे परन्तु अधिकरण दोष उत्पन्न होने के कारणसे गृहस्थी लोगों को कहे नही और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने तथा चन्द्रसंवत्सरमें पचासदिने वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से गृहस्थी लोगों को पर्युषणाकी मालुम होती है सो यावत् कार्तिकपूर्णिमा तक उसी क्षेत्रमें साधु ठहरे सर्वथा प्रकारसे एक स्थानमें निवास करना सो पर्युषणा कही जाती है इस लिये आषाढ़ चौमासी पीछे योग्यतापूर्वक जहां निवास करे उसीको पर्युषणा कहते हैं सो अज्ञात पर्युषणा कही जाती है और चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने तथा अभिवर्द्धितमें वीशदिन सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से ज्ञात पर्युषणा कही जाती है इसका विशेष विस्तार आगे भी करनेमें आवेंगा—

और श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णिके तीस (३०)के पृष्ठमें (पढमंकाल ठवणा भणामि किंकारणं जेण एयं सुत्तं काल ठवणाएसुसा देसेणं परुवेयव्वं कालो समयादिओ,गाथा—असंखेज्जसमया आवलिया एयं सुत्तालावएणजावसंवच्छरं एत्थपुणउदूबद्धे यासारत्तेणपयगंतं अधिकारेत्यर्थः) इत्यादि व्याख्या प्रथम कियी हैं सो इस पाठमें कालकी व्याख्यासूत्रानुसार करनी कही है। समयादि काल करके असंख्याते समय जानेसे एक

आवलिका होती हैं १,६७,७७,२१६ आवलिका जाने सें एक मुहूर्त्त होता है त्रीश मुहूर्त्तसे एक अहोरात्रिरूप दिवस होता है ऐसे पन्दरह दिवसोंसे एकपक्ष होता हैं दो पक्षसे एकमास होता है इसी तरह सें अनुक्रमे वर्ष, युग, पूर्वाङ्ग, पूर्व, पल्योपम, सागरादि कालकी व्याख्या अनेक जैन शास्त्रोंमें विस्तारपूर्वक प्रसिद्ध है ।

अब इस जगह पाठकवर्ग सज्जन पुरुषोंसे मेरेको इतना ही कहना है कि श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णिमें और श्रीनिशीथ चूर्णिमें खुलासा पूर्वक अधिकमासको निश्चयके साथ प्रमाण करके गिनतीमें भी लिया है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने तथा चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने निश्चय पर्युषणा कही हैं और मासवृद्धिके अभावसेही भाद्रपद शुक्लचतुर्थीको पचास दिनकेअन्तरमें कारणयोगे श्रीकालकाचार्य्यजीनें पर्युषणा किवी सो दिखाया है और पचासदिने योग्यक्षेत्रके अभावसे जंगलमें वृक्ष नीचे भी पर्युषणा करनी कही है परन्तु पचासमें दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन करना भी नही कल्पे इत्यादि विस्तारपूर्वक संपूर्ण सम्बन्धके दोनो पूर्वधर महाराज कृत पाठ उपरोक्त छपगये है जिसको विचारो और श्रीधर्मसागरजी तथा श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनों महाशयोंने दोनों चूर्णिकार पूर्वधर महाराजके विरुद्धार्थमें वर्तमानमें मासवृद्धि दो श्रावण होनेसे भी आषाढ़ चौमासीसे यावत् ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणा सिद्ध करनेके लियें आगे और पीछेके सम्बन्धके पाठको और अधिकमासके प्रमाण करनेके पाठको छोड़कर अधूरा विना सम्बन्धका थोड़ासा पाठ लिखके भोले जीवोंको शास्त्रोंके नामसे पाठ

लिख दिखाया जिसमें भाद्रपदका ही नाममात्र लिखा परन्तु मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपद है किंवा मासवृद्धि होते भी भाद्रपद है जिसका कुछ भी लिखा नहीं और चूर्णिकार महाराजने समयादिसे कालका प्रमाण दिखाया है जिसमें अधिक मास भी गिनतीमें सर्वथा आता है तथापि तीनों महाशयोंने निषेध करदिया और मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदकी व्याख्या चूर्णिकारने किवी थी जिसको भी मासवृद्धि होते लिख दिया इस तरहका तीनों महाशयोंको विरुद्धार्थका अधूरा थोड़ासा पाठको विचारो और निष्पक्षपातसे सत्यासत्यका निर्णय करो जिसमें असत्यको छोड़ो और सत्यको ग्रहण करो जिससे आत्म कल्याणका रस्ता पावो यह सज्जन पुरुषोंको मेरा कहना है।

और बुद्धिजन सर्व सज्जन पुरुष प्रायः जानते भी होवेंगे कि–जैन शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें एक मात्रा, बिंदु तथा अक्षर वा पद की उलटी जो परूपना करे तथा उत्थापन करे और उलटा वर्ते वह प्राणी मिथ्या दृष्टि संसारगामी कहा जाता है, जमालीवत् अनेक दृष्टान्त जैनमें प्रसिद्ध है तथापि इन तीनों महाशयोंने तो संसार वृद्धिका किञ्चित् भी भय न किया और चूर्णिकार महाराजने अधिक मासकी गिनती विस्तार पूर्वक प्रमाण किवी थी जिसको निषेध कर दिवी और अभिवर्द्धित संवत्सरमें बीशदिने प्रसिद्ध पर्युषणा कही थी जिसके सब पाठको उत्थापन करके यावत् ८० दिने पर्युषणा चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थमें स्थापन करके भोले जीवोंको कदाग्रहमें गेरे हैं, हा, हा, अति खेदः ॥—

और इसके अगाड़ी फिर भी तीनो महाशयोंने प्रत्यक्ष मायावृत्तिसे उत्सूत्र भाषणरूप अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध लिखके अपनी बात जमाई है कि (एवं यत्र कुत्रापि पर्युषणा निरूपणम् तत्र भाद्रपदविशेषितमेव नतु क्वाप्यागमे भद्दवयसुद्ध पञ्चमीए पज्जोसविज्जइति पाठवत् अभिवढ्ढियवरिसे सावण सुद्धपञ्चमीए पज्जोसविज्जइति पाठ उपलभ्यते) इन वाक्योंको तीनो महाशयोंने लिखके इसका मतलब ऐसे लाये है कि श्रीपर्युषणा कल्प चूर्णिमें तथा श्रीनिशीथचूर्णिमें भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कहीहै इसी प्रकारसे जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणाकी व्याख्या है तहां भाद्रपदके नामसे है परन्तु कोई भी शास्त्रमें भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनी ऐसा पाठकी तरह मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सम्बत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनी ऐसा पाठ नही दिखता है, इस तरहके तीनो महाशयों के लेख पर मेरा इतनाही कहना है कि इन तीनो महाशयोंने (अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें श्रावणशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रोंमें पाठ नहीं दिखता है) इस मतलबको लिखा है सो सर्वथा मिथ्या है क्योंकि जिन जिन शास्त्रोंमें चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने, ज्ञात, याने-गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है उसी शास्त्रोंमें अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिने ज्ञात पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है सो यह बात अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रगटपने लिखी है तथापि इन तीनो महाशयोंने भोले जीवोंको मिथ्या भ्रममें गेरनेके लिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रमें पाठ नहीं दिखाता है ऐसा लिख दिया है तो अब ऐसे मिथ्या भ्रमको दूर करनेके लिये इस जगह शास्त्रोंके प्रमाण

भी दिखाते हैं कि-श्रीनिशीथसूत्रके लघुभाष्यमें १ तथा बृहद्भाष्यमें ३, और चूर्णिमें ३, श्रीदशाश्रुतस्कन्ध चूर्णिमें ४, और वृत्तिमें ५, श्रीवृहत्कल्पसूत्रके लघुभाष्यमें ६, बृहद्भाष्यमें ७, तथा चूर्णिमें ८, और वृत्तिमें ९, श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिमें १०, श्रीकल्पसूत्रकी निर्युक्तिमें ११ तथा निर्युक्तिकी वृत्तिमें १२ और श्रीकल्पसूत्रकी चार वृत्तिओंमें १६, श्रीगच्छाचारपयन्नाकी वृत्तिमें १७, श्रीविधिप्रपासमाचारीमें १८, श्रीसमाचारीशतकमें १९, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक लिखा है कि-अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ़ चौमासीसे लेकरके २० दिने, याने-श्रावण सुदी पञ्चमीको पर्युषणा करनेमें आती थी। सो इसीही विषय सम्बन्धी इसी ग्रन्थकी आदिमेंही श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओंके पाठ भावार्थ सहित तथा श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठ पृष्ठ २३।२४ में, श्रीपर्युषणाकल्पचूर्णिका पाठ पृष्ठ ९२ में तथा श्रीनिशीथचूर्णिका पाठ पृष्ठ ९५।९६ में छप गया है और आगे भी कितनेही शास्त्रोंके पाठ छपेंगे जिसको और अब इसीही बातका विशेष खुलासा करता हूं जिसको विवेक बुद्धिसे पक्षपात रहित होकर पढ़ोगे तो प्रत्यक्ष निर्णय हो जावेगा कि अभिवर्द्धितमें बीशदिने पर्युषणा होती थी इसके विषयमें उपरोक्त अनेक शास्त्रोंके पाठोंके साथ तपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठ भी पृष्ठ २३ तथा २४ में विस्तार पूर्वक छपगया है तथापि इस जगह थोड़ासा फिर भी लिख दिखाता हूं तथाच पाठ यथा—

इत्थममभिगृहीत कियन्तं कालंयकल्प्यं,उच्यते। यद्यभिवर्द्धितो सौ संवत्सरस्ततो विंशतिरात्रिंदिवानि अथ चंद्रोसौ सविंशतिरात्रं मासं यावदमभिगृहीतं कर्त्तव्यं। तेणाति

विभक्तिव्यत्यया ततःपरं विंशतिरात्रमासा चोर्द्धमनभिगृहीतं निश्चितं कर्त्तव्यं गृहीज्ञातंच गृहिस्थानां पृच्छतां ज्ञापना कर्त्तव्या यथा वयमत्र वर्षाकालस्थिताः एतच्च गृहिज्ञात कार्तिकमासं यावत् कर्तव्यं इत्यादि—

इसका भावार्थः ऐसा है कि—वर्षाकालमें साधु एक स्थानमें ठहरने रूप निवासकी पर्युषणा करे सो प्रथम गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई अनिश्चय पर्युषणा होती है और दूसरी जानी हुई निश्चय पर्युषणा होती है इस प्रकारकी न जानी हुई पर्युषणा कितने काल तक और जानी हुई पर्युषणा कितने काल तक होती है सो कहते है कि—एक युगमें पाँच संवत्सर होते हैं जिसमें दो अभिवर्द्धित और तीन चन्द्रसंवत्सर होते हैं जब अभिवर्द्धित संवत्सर होता है तब आषाढ़चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद वीश अहोरात्रि अर्थात् श्रावण शुक्लपञ्चमी तक और चन्द्र संवत्सर होता है तब पचास अहोरात्रि अर्थात् भाद्रपद शुक्लपञ्चमी तक गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई अनिश्चय पर्युषणा होती है परन्तु पीछे जानी हुई निश्चय पर्युषणा होती है और कोई गृहस्थी लोग साधुजीको आषाढ चौमासी बाद पूछे कि आप यहाँ वर्षाकालमें ठहरे अथवा नही तब उसीको साधुजी अभि-वर्द्धितमें वीशदिन और चंद्रमें पचास दिनतक, हम यहाँ ठहरे हैं ऐसा अधिकरण दोषोंकी उत्पत्तिके कारणसे न कहे और पीछे याने अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमी के बाद और चंद्रमें पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीके बाद गृहस्थी लोगोंको कह देवें कि—हम यहाँ वर्षाकालमें ठहरे हैं ऐसा कहनेसे गृहस्थी लोगोंको जानी हुई पर्युषणा कही

जाती हैं ऐसी गृहस्थी लोगोंके जानी हुई पर्युषणा यावत् कार्तिक पूर्णिमा तक याने जो अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको जानी हुई पर्युषणा करे सो कार्तिक पूर्णिमा तक १०० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे और चन्द्रमें पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको जानी हुई पर्युषणा करे सो कार्तिक पूर्णिमा तक ७० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे।

उपरोक्त श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत पाठके भावार्थः मुजयही अनेक जैन शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक व्याख्या हैं सो उपरमें श्रीनिशीथचूर्णि श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णि श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यों वगैरहके पाठ भी छपगये हैं और कितनेही शास्त्रोंके पाठ इस ग्रन्थमें विस्तारके भयसे नही छपाये हैं सो अबी मेरे पास मोजूद है जिसमें भी उपर मुजयही चतुर्मासीमें पर्युषणा संबन्धी अज्ञात और ज्ञातकी खुलासा पूर्वक व्याख्या है।

उपरके पाठमें श्रावण तथा भाद्रव मासका नाम नही हैं परन्तु वीश तथा पचास दिनका नाम लिखा है जिससे वीश दिनकी गिनती आषाढ़पूर्णिमासे श्रावण शुक्लपञ्चमीको और पचास दिनकी गिनती भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको पूरी होती हैं इस लिये भावार्थमें श्रावण तथा भाद्रपदका नाम तिथि सहित लिखा जाता है—

उपरोक्त पाठमें आषाढ़ चौमासीसे कार्तिक चौमासी तककी व्याख्या दिनोंकी गिनती सहित खुलासा पूर्वक पर्युषणा सम्बन्धी करी है परन्तु आषाढ़ चौमासीसे इतने दिन गये बाद पर्युषणामें वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि असुक दिने करे ऐसा नही लिखा हैं परन्त

आषाढ़ चौमासीसे अभिवर्द्धितमें वीशदिन तथा चन्द्रमें पचास दिन तक गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई अनिश्चय और वीश तथा पचासके उपर जानी हुई निश्चय यावत् कार्तिक तकका लिखा है और श्रीकल्पसूत्रकी अनेक टीकाओंमें पाँच पाँच दिनकी वृद्धिसे पचासदिन तक न जानी हुई पर्युषणा परन्तु पचाश दिने वार्षिक कृत्यों करके प्रसिद्ध जानी हुई पर्युषणा चंद्र संवत्सरमें खुलासा लिखी है तैसेही अभिवर्द्धितमें वीशदिने पर्युषणा जानी हुई लिखी है इस लिये अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से गृहस्थी लोगों को पर्युषणाकी मालुम होती थी और चंद्रमें पचासदिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करनेसे गृहस्थी लोगोंको पर्युषणाकी मालुम होती थी क्योंकि जैसे न जानी हुई पर्युषणा वीश तथा पचास दिन तक शास्त्रकारोंने खुलासा कही है तैसेही जानी हुई पर्युषणा अभिवर्द्धितमें १०० दिन और चंद्रमें ७० दिन तक ऐसा खुलासा पूर्वक लिखा हैं. सो पाठ भी सब उपरमें छप गया है।

और पर्युषणा अज्ञात तथा ज्ञात दो प्रकारकी कही है परन्तु अमुकदिने ज्ञात पर्युषणा करे तथा अमुक दिने वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करे ऐसा कोई भी प्राचीन शास्त्रोंमें नही दिखता है इसलिये ज्ञात पर्युषणा होवे उसी दिन वार्षिककृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमण केशलुंचनादि समझने क्योंकि सबी शास्त्रकारोंने गृहस्थी लोगोंको ज्ञात पर्युषणा यावत् कार्तिकमास तक खुलासा लिख

लिख दिखाया जिसमें भाद्रपदका ही नाममात्र लिखा परन्तु मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपद है किंवा मासवृद्धि होते भी भाद्रपद है जिसका कुछ भी लिखा नही और चूर्णिकार महाराजने समयादिसे कालका प्रमाण दिखाया है जिसमें अधिक मास भी गिनतीमें सर्वथा आता है तथापि तीनो महाशयोंने निषेध करदिया और मासवृद्धिके अभावसे भाद्रपदकी व्याख्या चूर्णिकारने किवी थी जिसको भी मासवृद्धि होते लिख दिया इस तरहका तीनो महाशयोंको विरुद्धार्थका अधूरा थोड़ासा पाठको विचारो और निष्पक्षपातसे सत्यासत्यका निर्णय करो जिसमें असत्यको छोड़ो और सत्यको ग्रहण करो जिससे आत्म कल्याणका रस्ता पावो यही सज्जन पुरुषोंको मेरा कहना है।

और बुद्धिजन सर्व सज्जन पुरुष प्रायः जानते भी होवेंगे कि–जैन शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें एक मात्रा, बिंदु तथा अक्षर वा पद की उलटी जो परूपना करे तथा उत्थापन करे और उलटा वर्ते वह प्राणी मिथ्या दृष्टि संसारगामी कहा जाता है, जमालीवत् अनेक दृष्टान्त जैनमें प्रसिद्ध है तथापि इन तीनों महाशयोंने तो संसार वृद्धिका किञ्चित् भी भय न किया और चूर्णिकार महाराजने अधिक मासकी गिनती विस्तार पूर्वक प्रमाण कियी थी जिसको निषेध कर दिवी और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने प्रसिद्ध पर्युषणा कही थी जिसके सब पाठको उत्थापन करके यावत् ८० दिने पर्युषणा चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थमें स्थापन करके भोले जीवोंको कदाग्रहमें गेरे हैं, हा, हा, अति खेदः॥—

और इसके अगाड़ी फिर भी तीनो महाशयोंने प्रत्यक्ष मायावृत्तिसे उत्सूत्र भाषणरूप अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध लिखके अपनी बात जमाई है कि (एवं यत्र कुत्रापि पर्युषणा निरूपणम् तत्र भाद्रपदविशेषितमेव नतु क्वाप्यागमे भद्दवयसुद्ध पञ्चमीए पज्जोसविज्जइति पाठवत् अभिवड्ढियवरिसे सावण सुद्धपञ्चमीए पज्जोसविज्जइति पाठ उपलभ्यते) इन वाक्योंको तीनो महाशयोंने लिखके इसका मतलब ऐसे लाये है कि श्रीपर्युषणा कल्प चूर्णिमें तथा श्रीनिशीथचूर्णिमें भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कहीहै इसी प्रकारसे जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणाकी व्याख्या है तहां भाद्रपदके नामसे है परन्तु कोई भी शास्त्रमें भाद्रपदशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनी ऐसा पाठकी तरह मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनी ऐसा पाठ नही दिखता है, इस तरहके तीनो महाशयों के लेख पर मेरा इतनाही कहना है कि इन तीनो महाशयोंने (अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें श्रावणशुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रोंमें पाठ नहीं दिखता है) इस मतलबको लिखा है सो सर्वथा मिथ्या है क्योंकि जिन जिन शास्त्रोंमें चन्द्र-संवत्सरमें पचास दिने, ज्ञात, याने-गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा करनेका निनय दिखाया है उसी शास्त्रोंमें अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिने ज्ञात पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है सो यह बात अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रगटपने लिखी है तथापि इन तीनो महाशयोंने भोले जीवोंको मिथ्या भ्रममें गेरनेके लिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रमें पाठ नहीं दिखाता है ऐसा लिख दिया है तो अब ऐसे मिथ्या भ्रमको दूर करनेके लिये इस जगह शास्त्रोंके प्रमाण

भी दिखाते हैं कि-श्रीनिशीथसूत्रके लघुभाष्यमें १ तथा बृहद्भाष्यमें ३, और चूर्णिमें ३, श्रीदशाश्रुतस्कन्ध चूर्णिमें ४, और वृत्तिमें ५, श्रीबृहत्कल्पसूत्रके लघुभाष्यमें ६, बृहद्भाष्यमें ७, तथा चूर्णिमें ८, और वृत्तिमें ९, श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिमें १०, श्रीकल्पसूत्रकी निर्युक्तिमें ११ तथा निर्युक्तिकी वृत्तिमें १२ और श्रीकल्पसूत्रकी चार वृत्तिओंमें १६, श्रीगच्छाचारपयन्नाकी वृत्तिमें १७, श्रीविधिप्रपासमाचारीमें १८, श्रीसमाचारीशतकमें १९, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक लिखा है कि-अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ़ चौमासीसे लेकरके २० दिने, याने-श्रावण सुदी पञ्चमीको पर्युषणा करनेमें आती थी। सो इसीही विषय सम्बन्धी इसी ग्रन्थकी आदिमेंही श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्याओंके पाठ भावार्थ सहित तथा श्रीबृहत्कल्पवृत्तिका पाठ पृष्ठ २३।२४ में, श्रीपर्युषणाकल्पचूर्णिका पाठ पृष्ठ ९२ में तथा श्रीनिशीथचूर्णिका पाठ पृष्ठ ९५।९६ में छप गया है और आगे भी कितनेही शास्त्रोंके पाठ छपेंगे जिसको और अब इसीही बातका विशेष खुलासा करता हूं जिसको विवेक बुद्धिसे पक्षपात रहित होकर पढ़ोगे तो प्रत्यक्ष निर्णय हो जावेगा कि अभिवर्द्धितमें बीशदिने पर्युषणा होती थी इसके विषयमें उपरोक्त अनेक शास्त्रोंके पाठोंके साथ श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत श्रीबृहत्कल्पवृत्तिका पाठ भी पृष्ठ २३ तथा २४ में विस्तार पूर्वक छपगया है तथापि इस जगह थोड़ासा फिर भी लिख दिखाता हूं तथाच तत्पाठ यथा—

इत्यमनभिगृहीतं कियन्तं कालंवक्तव्यं,उच्यते। यद्यभिवर्द्धितो सौ संवत्सरस्ततो विंशतिरात्रिदिवानि अथ चंद्रोसौ ततः सविंशतिरात्रं मासं यावदनभिगृहीतं कर्त्तव्यं। तेणनि

चिंशत्किव्यत्यया ततःपरं विंशतिरात्रमासा चोर्द्धमनभिगृहीतं निश्चितं कर्त्तव्यं गृहीज्ञातंच गृहिस्थानां पृच्छतां ज्ञापना कर्त्तव्या यथा वयमत्र वर्षाकालस्थिताः एतच्च गृहिज्ञात कार्तिकमासं यावत् कर्तव्यं इत्यादि—

इसका भावार्थः ऐसा है कि—वर्षाकालमें साधु एक स्थानमें ठहरने रूप निवासकी पर्युषणा करे सो प्रथम गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई अनिश्चय पर्युषणा होती है और दूसरी जानी हुई निश्चय पर्युषणा होती है इस प्रकारकी न जानी हुई पर्युषणा कितने काल तक और जानी हुई पर्युषणा कितने काल तक होती है सो कहते है कि—एक युगमें पाँच संवत्सर होते हैं जिसमें दो अभिवर्द्धित और तीन चन्द्रसंवत्सर होते हैं जब अभिवर्द्धित संवत्सर होता है तब आषाढ़चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद वीश अहोरात्रि अर्थात् श्रावण शुक्लपञ्चमी तक और चन्द्र संवत्सर होता है तब पचास अहोरात्रि अर्थात् भाद्रपद शुक्लपञ्चमी तक गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई अनिश्चय पर्युषणा होती है परन्तु पीछे जानी हुई निश्चय पर्युषणा होती है और कोई गृहस्थी लोग साधुजीको आषाढ चौमासी बाद पूछे कि आप यहाँ वर्षाकालमें ठहरे अथवा नही तब उसीको साधुजी अभिवर्द्धितमें वीशदिन और चंद्रमें पचास दिनतक, हम यहाँ ठहरे हैं ऐसा अधिकरण दोषोंकी उत्पत्तिके कारणसे न कहे और पीछे याने अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमी के बाद और चंद्रमें पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीके बाद गृहस्थी लोगोंको कह देवें कि—हम यहाँ वर्षाकालमें ठहरे हैं ऐसा कहनेसे गृहस्थी लोगोंको जानी हुई पर्युषणा कही

जाती हैं ऐसी गृहस्थी लोगोंके जानी हुई पर्युषणा यावत् कार्तिक पूर्णिमा तक याने जो अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको जानी हुई पर्युषणा करे सो कार्तिक पूर्णिमा तक १०० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे और चन्द्रमें पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको जानी हुई पर्युषणा करे सो कार्तिक पूर्णिमा तक ७० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे ।

उपरोक्त श्रीतपगच्छके श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी कृत पाठके भावार्थः मुजबही अनेक जैन शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक व्याख्या हैं सो उपरमें श्रीनिशीथचूर्णि श्रीदशाश्रुतस्कन्धचूर्णि श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यों वगैरहके पाठ भी छपगये हैं और कितनेही शास्त्रोंके पाठ इस ग्रन्थमें विस्तारके भयसे नही छपाये हैं सो अबी मेरे पास मोजूद है जिसमें भी उपर मुजबही चतुर्मासीमें पर्युषणा संबन्धी अज्ञात और ज्ञातकी खुलासा पूर्वक व्याख्या हैं ।

उपरके पाठमें श्रावण तथा भाद्रव मासका नाम नही हैं परन्तु वीश तथा पचास दिनका नाम लिखा है जिससे वीश दिनकी गिनती आषाढ़पूर्णिमासे श्रावण शुक्लपञ्चमीको और पचास दिनकी गिनती भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको पूरी होती हैं इस लिये भावार्थमें श्रावण तथा भाद्रपदका नाम तिथि सहित लिखा जाता है—

उपरोक्त पाठमें आषाढ़ चौमासीसे कार्तिक चौमासी तककी व्याख्या दिनोंकी गिनती सहित खुलासा पूर्वक पर्युषणा सम्बन्धी करी है परन्तु आषाढ़ चौमासीसे इतने दिन गये बाद पर्युषणामें वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि अमुक दिने करे ऐसा नही लिखा हैं परन्तु

आषाढ़ चौमासीसे अभिवर्द्धितमें वीशदिन तथा चन्द्र
पचास दिन तक गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई अनिश्च
और वीश तथा पचासके उपर जानी हुई निश्चय याव
कार्तिक तकका लिखा है और श्रीकल्पसूत्रकी अनेक टीक
ओंमें पाँच पाँच दिनकी वृद्धिसे पचासदिन तक न जान
हुई पर्युषणा परन्तु पचाश दिने वार्षिक कृत्यों करके प्रसि
जानी हुई पर्युषणा चंद्र संवत्सरमें खुलासा लिखी है तैसेह
अभिवर्द्धितमें वीशदिने पर्युषणा जानी हुई लिखी है इ
लिये अभिवर्द्धितमें वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको वार्षि
कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करने से गृहस्थी लोगे
को पर्युषणाकी मालुम होती थी और चंद्रमें पचासदि
भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रम
णादि करनेसे गृहस्थी लोगोंको पर्युषणाकी मालु
होती थी क्योंकि जैसे न जानी हुई पर्युषणा वीश त
पचास दिन तक शास्त्रकारोंने खुलासा कही है तैसेह
जानी हुई पर्युषणा अभिवर्द्धितमें १०० दिन और चंद्र
७० दिन तक ऐसा खुलासा पूर्वक लिखा हैं. सो पाठ भ
सब उपरमें छप गया है।

और पर्युषणा अज्ञात तथा ज्ञात दो प्रकारकी कह
है परन्तु अमुकदिने ज्ञात पर्युषणा करे तथा अमुक दि
वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि करे ऐसा कोई भ
प्राचीन शास्त्रोंमें नही दिखता है इसलिये ज्ञात पर्युष
होवे उसी दिन वार्षिककृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमण केशलुं
नादि समझने क्योंकि सबी शास्त्रकारोंने गृहस्थी लोगों
ज्ञात पर्युषणा यावत् कार्तिकमास तक खुलासा लि

दिया है जिससे ज्ञात पर्युषणा आषाढ़ चौमासीसे वीशे तथा पचाशे करे और सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि अन्य असुकदिने करे ऐसा कदापि नही बनता है किन्तु जहाँ ज्ञात पर्युषणा वहाँ ही वार्षिक कृत्य बनते हैं इसलिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ़ चौमासीसे लेकर वीशदिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको और चंद्र संवत्सरमें पचासदिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि वार्षिक कृत्य अवश्यमेव निश्चय करनेमें आते थे यह निःसन्देहकी बात हैं तथा और भी जो पहिले तीनो महाशयोंने लिखा है (अभिवर्द्धिते वर्षे चतुर्मासिकदिनादारभ्यः विंशत्यादिनैः वयमत्र स्थिताः स्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति) और इसका मतलब ऐसे लाये है कि—अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ़चतुर्मासीसे लेकर वीशदिने याने श्रावण शुक्लपञ्चमी सेही कोई गृहस्थी लोग पूछे तो कह देवे कि वर्षाकालमें हम यहाँ ठहरे हैं ॥ वर्षाकालमें एक स्थानमें सर्वथा निवास करना सो पर्युषणा हैं इस मतलबसे भी आषाढ़ चौमासीसे वीशदिने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा करे सो यावत् १०० दिन कार्तिक पूर्णिमा तक उसी क्षेत्रमें ठहरे ॥

उपरोक्त तीनो महाशयोंके लिखे वाक्यार्थको भी विवेकी बुद्धिजन पुरुष निष्पक्षपातसे विचारेंगे तो प्रत्यक्ष मालुम हो जावेंगा कि प्राचीन कालमें अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिने श्रावण शुक्लपञ्चमीसे गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई पर्युषणा करनेमें आती थी क्योंकि जिस जिस शास्त्रानुसार चंद्र संवत्सरमें पचासदिने जो जो कार्य्य करनेमें आते हैं

सोही कार्य्य प्राचीनकालमें अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिने करनेमें आतेथे यह बात उपरोक्त अनेक शास्त्रोंके न्यायानुसार सिद्ध होगई तथा और आगे भी लिखनेमें आवेगा इसलिये इन तीनो महाशयोंका (अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावण शुक्लपञ्चमीका पर्युषणा करनेका कोई भी शास्त्रमें नहीं दिखता है) ऐसा लिखना सर्वथा अप्रमाण हो गया सो आत्मार्थी निष्पक्षपाती पाठकवर्ग विचार लेना—

और अभिवर्द्धित संवत्सरमें आषाढ़ चौमासीसे वीश दिने निश्चय पर्युषणा वार्षिक कृत्योंसे भी करनेमें आती थी तथापि इन तीनो महाशयोंने पक्षपातके जोरसे उसको निषेध करनेके लिये गृहस्थी लोगोंके जानी हुई पर्युषणा दो प्रकारकी ठहराकर अभिवर्द्धितमें वीशदिनकी पर्युषणाको केवल गृहस्थी लोगोंके जानी हुई कहने मात्रही ठहराते है सो भी मिथ्या है क्योंकि अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने गृहस्थी लोगोंको कह देवे कि हम यहाँ वर्षाकालमें ठहरे हैं ऐसा कहकर फिर एक मासके बाद भाद्रपदमें वार्षिक कृत्य करे इस तरहका कोई भी शास्त्रमें नही लिखा है इसलिये इन तीनों महाशयोंका कहना शास्त्रोंके प्रमाण बिनाका होनेसे प्रत्यक्ष उत्सूत्रभाषणरूप है और आषाढ़पूर्णमासे योग्यक्षेत्राभावादि कारणे पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते दशवे पंचकमें याने पचासदिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको पर्युषणा करे इस वाक्यको देखके— जो तीनो महाशय अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिनकी पर्युषणाको गृहस्थी लोगोंके जानी हुई सिर्फ कहने

मात्रही ठहरा कर फिर वार्षिक कृत्य अभिवर्द्धित संवत्सरमें भी दशपञ्चके पचासदिने ठहराते होवेंगे तो भी तीनों महाशयोंको जैन शास्त्रोंका अति गम्भिरार्थका तात्पर्य्य समझमें नही आया मालुम होता है क्योंकि जिस जिस शास्त्रमें दशपञ्चके पचासदिने अवश्य पर्युपणा करनी कही है सो निकेवल चंद्रसंवत्सरमें ही करनी कही है नतु अभिवर्द्धित संवत्सरमें क्योंकि दशपञ्चक तकका विहार चंद्रसंवत्सरमेंही होता है और अभिवर्द्धित संवत्सरमें तो निकेवल चारपञ्चकमें वीशदिने निश्चय प्रसिद्ध पर्युपणा क्रियी जाती थी सो उपरमें भी विस्तार पूर्वक लिख आया हुं—जिससे चारपञ्चकके उपर सर्वथा प्रकारसे विहार करनाही नही कल्पे तथापि अभिवर्द्धितमें वीश-दिनके उपरान्त विहार करे तो छकायके जीवोंको विराधना करने वाला और आत्मघाति आज्ञा विराधककहा जाता है सो श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्ति वगैरह शास्त्रोमें प्रसिद्ध है इसलिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें दशपञ्चक कदापि नही बनते हैं जहाँ जहाँ दशपञ्चके पचासदिने पर्युपणा करनेकी व्याख्या लिखी है सो सब चंद्रसंवत्सरमें करनेकी समझनी—

और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने गृहस्थी लोगोंको साधु कह देवें कि हम यहां वर्षाकालमें ठहरे हैं इस वाक्यको देखके तीनों महाशय वीशदिनकी पर्युपणाको कहने मात्रही ठहराते होवेंगे तब तो इन तीनों महाशयोंकी गुरुगम रहित तथा विवेक विनाकी अपूर्व विद्वत्ताको देखकर मेरे को बड़ा आश्चर्य्य आता है क्योंकि जैसे अभिवर्द्धित संवत्सर में वीश दिने गृहस्थी लोगोंको साधु कह देवें कि हम यहाँ

वर्षाकालमें ठहरे हैं तैसेही चंद्र संवत्सरमें भी पचासदिने कह देवें कि हम वर्षाकालमें यहाँ ठहरे हैं ऐसे अक्षर खुलासा पूर्वक चन्द्रके तथा अभिवर्द्धितके लिये अनेक शास्त्रकारोंने लिखे है सो इन शास्त्रकारोंके लिखे वाक्यपरसे तो इन तीनों विद्वान् महाशयोंकी विद्वत्ताके अनुसार चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीकी पर्युषणा भी गृहस्थी लोगोंके कहने मात्रही ठहर जावेंगे और सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि वार्षिक कृत्य करनाही नही बनेगा क्योंकि ज्ञात पर्युषणा चन्द्रमें पचासदिने तथा अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने करे सो यावत् कार्त्तिकपूर्णिमा तक खुलासा पूर्वक शास्त्रकारोंने लिख दिया है और अमुक दिने ज्ञात पर्युषणा करे और अमुक दिने वार्षिक कृत्य करे ऐसा कोई भी जगह नही लिखा है इसलिये तीनों महाशय जो ज्ञात पर्युषणा के दिन वार्षिक कृत्य मानेंगे तव तो अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने वार्षिक कृत्य भी माननें पड़ेंगे और वीश दिनकी पर्युषणा कहने मात्रही है ऐसा लिखना भी मिथ्या होनेमें कुछ वाकी नही रहा और चन्द्रसंवत्सरमें पचासदिने ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य मानोगें और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीशदिने ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य नही मानोगें ऐसा मन कल्पनाका अन्याय तीनों महाशयोंका आत्मार्थी बुद्धिजन पुरुष कदापि नही मान सकते हैं किन्तु वीशे तथा पचासे ज्ञात पर्युषणा वहाँ ही वार्षिक कृत्य यह न्यायशास्त्रानुसार होनेसे सर्व आत्मार्थियोंको अवश्यही प्रमाण करने योग्य है इसलिये अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिने श्रावण शुक्लपञ्चमीको ज्ञात पर्युषणा वार्षिक कृत्यों

सहित होती थी सो निश्चय निःसन्देहकी बात है और पर्युषणा अज्ञात तथा ज्ञात दो प्रकारकी सबी शास्त्रकारोंने कही है इसलिये इन तीनों महाशयोंने ज्ञात पर्युषणाका भी दो भेद लिखके बीशदिनकी कहने मात्र ठहराई तथा पचासदिनकी वार्षिक कृत्योसे ठहराई सो सर्वथा शास्त्र विरुद्ध हैं क्योंकि जैसी ज्ञात पर्युषणा चंद्रसंवत्सरमें पचास दिने होती थी तैसीही अभिवर्द्धित संवत्सरमे बीशदिने होती थी सो ज्ञात पर्युषणाका एकही भेद सर्व शास्त्रकारोंने लिखा है परन्तु ज्ञात पर्युषणाका दो भेद कोई भी प्राचीन शास्त्रोंमें नही है इसलिये तीनों महाशयोंका ज्ञात पर्युषणा दो प्रकारकी लिखना प्रत्यक्ष शास्त्र विरुद्ध हैं—

और आषाढ़पूर्णिमाको योग्यक्षेत्राभावादि कारणे श्रावण कृष्णपञ्चमी, दशमी वगैरह पाँच पाँचदिने जो पर्युषणा कही है सो गृहस्थी लोगोंको न जानी हुई और अनिश्चय होती हैं इसलिये अज्ञात और अनिश्चय पर्युषणामें वार्षिक कृत्य नही बनते हैं किन्तु बीशे तथा पचासे ज्ञात और निश्चय पर्युषणामें वार्षिक कृत्य बनते हैं।

और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रके अष्टमाध्ययन (पर्युषणाकल्प) की चूर्णिका और श्रीनिशीथसूत्रके दशवें उद्देशेकी चूर्णिका पाठमे श्रीकालकाचार्यजीने कारणयोगे चतुर्थीकी पर्युषणा किधी है सो भी चंद्रसंवत्सरमें किवी थी नतु अभिवर्द्धितमें क्योंकि खास चूर्णिकार महाराजने अभिवर्द्धितमें बीशे तथा चंद्रमें पचासे ज्ञात निश्चय पर्युषणा करनी कही है जिसका सब पाठ उपरोक्त छपगया हैं इसलिये मासवृद्धि होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापते हैं सो मिथ्यावादी है क्योंकि

प्राचीनकालमें जैन ज्योतिषके पञ्चाङ्गकी रीतिसे चंद्रमें पचासदिने भाद्रपद शुक्लपञ्चमीको और अभिवर्द्धितमें वीश-दिने श्रावणशुक्लपञ्चमीको प्रसिद्ध निश्चय पर्युषणा वार्षिक कृत्योंसे करनेमें आती थी जब जैन पञ्चाङ्गमें सिर्फ पौष तथा आषाढ़ मासकी वृद्धि होती थी और मासोंकी वृद्धिका अभाव था जिससे वर्षाकालके चारमासमें श्रावणादि कोई भी मासकी वृद्धि नही होती थी परन्तु अब वर्त्तमानकाल में जैनज्योतिषके पञ्चाङ्गका अभाव होनेसे लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होती है जिससे वर्षाकालमें श्रावण भाद्रपदादि मास भी बढ़ने लगे [और अभिवर्द्धित संवत्सरमें योग्यक्षेत्राभावादिकारणे पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते यावत् चारपञ्चके वीशदिने पर्युषणा करनेका तथा चंद्र-संवत्सरमें भी योग्यक्षेत्राभावादि कारणे पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते यावत् दशपञ्चके पर्युषणा करनेका कल्प कालानुसार श्रीसङ्घकी आज्ञासे विच्छेद हुआ है इसका विशेष विस्तार आगे करनेमें आवेगा]

इसलिये वर्त्तमानकालमें मासवृद्धि होवे तो भी आषाढ़ चौमासीसे पचास दिनकी गिनतीसे पर्युषणा करनेकी श्रीखर तरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके पूर्वज पूर्वाचार्योंकी आज्ञा है जिससे दो श्रावण हो तो दूजा श्रावणमें तथा दो भाद्रपद हो तो प्रथम भाद्रपदमें प्रसिद्ध पर्युषणा श्रीजिनेश्वर भग-वान्की तथा श्रीपूर्वाचार्योंकी आज्ञाके आराधन करनेवाले मोक्षार्थी प्राणी अवश्य करते हैं इसलिये दो श्रावण तथा दो भाद्रपद अथवा दो आश्विनमास होनेसे पांचमासके १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा होता है जिसमें पचासदिने

पर्युषणा करनेसे कार्त्तिक चौमासी तक पीछाड़ीके १००दिन रहते हैं तो भी कोई दूषण नहीं कहा है परन्तु मासवृद्धि की गिनती निषेध करनेसे श्रीअनन्ततीर्थङ्करगणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घनरूप महान् मिथ्यात्वके दूषणकी अवश्यही प्राप्ति होती है तथापि इन तीनों महाशयोंने उसके दूषणका जरा भी विचार न किया और श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्थापनका भी बिलकुल विचार न करते सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें पाठ लिखके भोले जीवोंको सत्य बात परसे श्रद्धा उतारके जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वरूप झगड़ेकी डोर हाथमें देकर कदाग्रहमें गेरदिये हैं और अधिकमासको गिनतीमें लेने वालेको उलटा मिथ्या दूषण दिखाते हैं और अधिक मासकी गिनती नहीं करते भी आप निर्दूषण बनके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठसे सत्यवादी तथा आज्ञा के आराधक बनते हैं जिसका पाठ इसी पुस्तकमें पृष्ठ ६९। ७० में और भावार्थः पृष्ठ ७२। ७३ में छपगया है इसलिये इस जगह पुनः पाठ न लिखते थोड़ासा मतलब लिखके पीछे उसमें जो जो शास्त्रविरुद्ध है सो दिखावेंगे—तीनों महाशयोंका खास अभिप्रायः यह है कि अधिक मासको गिनती में करनेवालोंको दो आश्विन मास होनेसे दूजा आश्विनमें चौमासी कृत्य करना पड़ेगा और दूजा आश्विनमें चौमासी कृत्य न करते कार्त्तिकमें करेंगे तो पर्युषणाके पीछाड़ी १०० दिन हो जावेंगे तो श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके वचनको बाधा आवेगा क्योंकि—समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइ-राइ मासे विइक्कंते सत्तरिएहिंराइंदिएहिं इत्यादि श्रीसम-

वायाङ्गजीमें पीछाड़ीके ७० दिन रखना कहा है ऐसा लिखके तीनों महाशयोंने पर्युषणाके पीछे अवश्यही ७० दिन रखनेका दिखाकर अधिक मासकी गिनती करके पर्युषणा करनेवालों को कार्त्तिक तक १०० दिन होनेसे श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठके बाधक ठहराये [इस न्यायानुसार तो तीनों महाशय तथा तीनों महाशयोंके पक्षवाले सबी महाशय भी श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके बाधक ठहर जाते हैं क्योंकि दो आश्विन होनेसे भी चौमासी कृत्य कार्त्तिक मासमें करनेसे पर्युषणाके पीछाड़ी १०० दिन होते हैं तथापि अब आप निदूषण बननेके लिये फिर लिखते हैं कि कार्त्तिक चौमासी कार्त्तिक शुदीमें करना चाहिये जिसमें दो आश्विनमास होवे तो भी १०० दिन हुआ ऐसा नही समझना किन्तु अधिकमासको गिनतीमें नही लेनेसे ७० दिनही हुआ समझना और दो श्रावण होवे तो भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेसे ८० दिन हुआ ऐसा नही समझना किन्तु अधिकमासको गिनतीमें नही लेनेसे ५० दिनही हुआ समझना, दो श्रावण हो तथा दो आश्विन हो तो भी गिनतीमें नही लेनेसे श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके वचनको बाधा भी नही आवेगी और शास्त्रोंके कहे पर्युषणाके पहिले ५० दिन तथा पीछाड़ी ७० दिन यह दोनु बात रह जाती है] इस तरहका तीनों महाशयोंका मुख्य अभिप्राय है ॥—

इस पर मेरेको बड़ा खेद उत्पन्न होता है कि तीनों महाशयोंने कदाग्रहके जोरसे अपनी हठवादकी मिथ्या बातको स्थापनेके लिये सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें

सविंशतिरात्रं मासं पंचाशतं दिनामीति अत्र चैते दोषा छक्कायविराहणया, आवडणं विसमखाणुकंटेसु ॥ बुज्झणअभि हणरुक्खो, झसावणतेण उवचरए ॥ १ ॥ अक्खुत्तेसु पहेसु, पुढवी उदगंवहोइदुविहंतु ॥ उल्लपयावणअगणि, इहरापण ओहरियकुंथुत्ति ॥ २ ॥ तत स्तत्र प्रावृषि किमत आह एकस्माद् ग्रामा दवधिभूता दुत्तरग्रामाणा मनतिक्रमो ग्रामानुग्रामं तेन ग्रामपरम्परयेत्यर्थः अथवा एक ग्रामाल्लघु-पश्चाद्ग्रामाभ्यां ग्रामोऽनुग्रामो गामोय अणुगामोय गामाणुगामं तत्र दूइज्जित्त एत्ति द्रोतुं विहर्त्तुमित्युत्सर्गोपवादमाह पंचेत्यादि तथैव नवर मिह प्रत्ययेत ग्रामाद्वालये भिक्काशयेत् कश्चित् उदकौघेवा आगच्छति ततो नश्येदिति उक्तंच आवाहे दुभिक्खे, भएदओघंसिवामहंतंसि ॥ परिभवणं तालणवा, जया परोवाकरेज्जासित्ति ॥१॥ तथा वर्षासु वर्षाकाले वर्षावृष्टिः वर्षावर्षावर्षासु वा आवासोऽवस्थानं वर्षावास स्तं स च जघन्यत आकार्त्तिक्या दिन सप्ततिप्रमाणो मध्यमवृत्याच चतुर्मासप्रमाण उत्कृष्टतः षण्मासमान स्तदुक्तं इयसत्तरीजहन्ना, असिईनउईसिसुत्तरसयच ॥ जइवासेमग्गसिर, दसरामातिन्निउक्कोसा ॥१॥ [मासमित्यर्थः] फाउणमासकप्प, तथेवठियाणतीत मग्गसिरे ॥ सालंवणाणछम्मा, सिओउ जिट्ठोगहोहोइत्ति ॥ २ ॥ पज्जोसवियाणति परीति सामस्त्येनो षितानां पर्युषणाकल्पेन नियमवद्वस्तु मारब्धानामित्यर्थः पर्युषणा कल्पश्च न्यूनोदरताकरणं विकृतिनवकपरित्यागः पीठफलकादि संस्तारकादान मुच्चारादि मात्रकग्रहणं लोचकरणं शैक्षाप्रव्राजनं प्राग्गृहीतानां भस्मडगलकादीना परित्यजन मितरेषां ग्रहणं द्विगुणवर्षोपग्रहो-

पकरणधरण मभिनवोपकरणग्रहणं स क्रोशयोजनात्परतो गमनवर्जन मित्यादि ।

देखिये उपरोक्त पाठमें श्रीवृत्तिकार महाराजनें चार मासके वर्षाकालमें अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीस दिन और चन्द्र संवत्सरमें पचास दिन के उपरान्त विहार करने वालोंको छ कायके जीवोंकी विराधना करने वाला कहा अर्थात् वीसे और पचासे अवश्यही पर्युषणा करनी कही सो यावत् कार्त्तिक तक याने अभिवर्द्धितमें वीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाडी१०० दिन और चन्द्रमें पचास दिने पर्युषणा करनेसे पीछाडी ७० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे ॥ इत्यादि ॥

अब श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधन करने वाले मोक्षाभिलाषि निर्पक्षपाती सज्जन पुरुषों को इस जगह विचार करना चाहिये कि श्रीगणधर महाराजनें श्रीसमवायांगजी मूलसूत्रमें और श्रीअभयदेवसूरिजी महा-राजनें वृत्तिमें मास वृद्धिके अभावसें चन्द्रसंवत्सरमें जैन ज्योतिषके पंचाङ्गकी रीतिमुजब वर्तनें के अभिप्रायसे चार मासके वर्षाकालमें प्रथम पचास दिन जानेसे और पीछाडी ७० दिन रहने से पर्युषणा करनी कही है तथा विशेष खुलासा करते वृत्तिकार महाराजनें योग्यक्षत्रके अभावसे वृक्ष नीचे भी पचास दिनेअवश्यही पर्युषणा करनी कही और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वृत्तिकार महाराजनें और पूर्वधरादि महाराजोंनें वीस दिने अवश्यही पर्युषणा करनी कही है जिससे पी-छाडी एकसो दिन रहते हैं;—तथापि ये तीनों महाशय अपनी कल्पनासें वृत्तिकार और पूर्वधरादि महाराजों का (अभिवर्द्धितमें वीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाडी एकसो

उत्सूत्र भाषणरूप वृथा क्यों परिश्रम करके भोले जीवोंको भ्रमजालमें गेरते संसारवृद्धिका भय कुछ भी नहीं रक्खा है इसलिये अब लाचार होकर भव्यजीवोंकी शुद्धश्रद्धा होनेके कारणरूप उपकारके लिये और तीनों महाशयोंका सूत्रकारके विरुद्ध उत्सूत्रभाषणके कदाग्रहको दूर करनेके वास्ते सूत्रकार और वृत्तिकार महाराजके अभिप्राय को ईस जगह लिख दिखता हुं—

श्रीसुधर्मस्वामिजी कृत श्रीसमवायाङ्गजीमूलसूत्र तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरिजी कृत वृत्ति और गुजराती भाषासहित छपके प्रसिद्ध हुआ है जिसके पृष्ठ १२७ में तथाच तत्पाठः—

समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराइ मासे वइक्कंते सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ ॥

अथ सप्ततिस्थानके किमपि लिख्यते समणेत्यादि— वर्षाणां चातुर्मासप्रमाणस्य वर्षाकालस्य सविंशतिदिवाधिके मासे व्यतिक्रान्ते पञ्चाशतिदिनेष्वतीतेष्वित्यर्थः सप्तत्याञ्च रात्रिदिनेषु शेषेषु भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थ., वर्षास्वावासो वर्षावासः वर्षास्थानं पज्जोसवेइत्ति परिवसति सर्वथा करोति पञ्चाशतिप्राक्तनेषु दिवसेषु तथाविध वसत्यभावादिकारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति अतिभाद्रपद शुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि निवसतीति हृदयमिति ॥

भावार्थः—श्रमण भगवन् श्रीमहावीरस्वामिजीने वर्षाकाल के चारमास कहे है जिसके १२० दिन होते हैं जिसमें एकमास अधिक वीशदिन याने ५० दिन जानेसे और ७० दिन पीछाड़ी बाकी रहनेसे भाद्रपद शुक्लपञ्चमीके

दिन वर्षाकालमें रहनेका सर्वथा प्रकारसे अवश्यही निश्चय करना सो 'पज्जोसवणा' अर्थात् पर्युषणा है जिसमें भाद्रपद शुक्ल पञ्चमीके पहिले ५० दिनके अन्दरमें योग्य क्षेत्राभावादि कारणे दूसरे स्थानमें भी विहार करके जाना बन सकता है परन्तु पचासमें दिन योग्य क्षेत्रके अभावसे जङ्गलमें वृक्ष नीचे भी अवश्यही पर्युषणा करे यह मुख्य तात्पर्य है।

और चन्द्र संवत्सरमें पचास दिने पर्युषणा करनेसे पीछाडी ७० दिन रहते हैं तैसे ही मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें बीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाडी १०० दिन रहते हैं सो उपरमें अनेक जगह खुलासा पूर्वक छप गया है तैसेही इन्हीं वृत्तिकार महाराजनें श्रीस्थानांगजी सूत्रकी वृत्तिमें कहा है जिसका यहाँ पाठ दिखाता हुं। छपी हुई श्रीस्थानांगजी सूत्र वृत्तिके पृष्ठ ३६५ का तथाच तत्पाठः—

पढमपाउसंसित्ति॥ इहाषाढ श्रावणौ प्रावृट् आषाढस्तु प्रथम प्रावृट् ऋतुनां वा प्रथम इति प्रथमप्रावृट् अथवा चतुर्मासप्रमाणो वर्षाकालः प्रावृडिति विवक्षित स्तत्र सप्तति-दिनप्रमाणे प्रावृषे द्वितीये भागे तावन्नकल्पत एव गन्तु म्प्रथम भागेऽपि पञ्चाशद्दिनप्रमाणे विंशति दिनप्रमाणे वा न कल्पते जीवव्याकुलभूतत्वा दुक्तंच एत्थय अणभिग्गहियं, वीसइराइंसवीसईमासं॥ तेणपरमभिग्गहियं, गिहिनायं-कत्तियंजावत्ति॥१॥ अनभिगृहीत, मनिश्चित मशिवा-दिभि निर्गमभावात् आहच असिवादिकारणेहिं, अहवावा-संनसुट्ठु- आरद्धं॥ अभिवड्ढियंमिवीसा, इहरेसु सवीस-ईमासो॥१॥ यत्र संवत्सरेऽधिकमासको भवति तत्राषाढ्याः विंशतिदिनानि याव दनभिग्रहिक आवासो ऽन्यत्र

सविंशतिरात्रं मासं पंचाशतं दिनानीति अत्र चैते दोषाः छक्कायविराहणया,आवडणं विसमखाणुकंटेसु॥ वुज्झणअभि-हणरुक्खो, झसावणतेण उवधरए ॥ १ ॥ अक्खुत्तेसु पहेसु, पुढवी उदगंवहोइदुविहंतु ॥ उल्लपयावणअगणि, इहरापण ओहरियकुथुत्ति ॥ २ ॥ तत स्तत्र प्रावृषि किमत आह एकस्माद् ग्रामा दवधिभूता दुत्तरग्रामाणा मनतिक्रमो ग्रा-मानुग्रामं तेन ग्रामपरम्परयेत्यर्थः अथवा एक ग्रामाल्लघु-पश्चाद्‌ग्रामाभ्यां ग्रामोऽनुग्रामो गामोय अणुगामोय गामा-णुगामं तत्र दूइज्जित्त एत्ति द्रोतुं विहर्त्तुमित्युत्सर्गो पवादमाह पंचेत्यादि तथैव नवर मिह प्रत्ययेत ग्रामा-श्वालये भिक्काशयेत् कश्चित् उदकौघेवा आगच्छति ततो मर्य्यदिति उक्तंच आवाहे दुब्भिक्खे, भएदओघंसिवामहं-तंसि ॥ परिभवणं तालणवा, जया परोवाकरेज्जासित्ति ॥१॥ तथा वर्षासु वर्षाकाले वर्षावृष्टिः वर्षावर्षोवर्षासु वा आवा-सोऽवस्थानं वर्षावास स्तं स च जधन्यत आकार्त्तिक्या दिन सप्ततिप्रमाणो मध्यमवृत्याच चतुर्मासप्रमाण उत्कृष्टतः षण्मास-मान स्तदुक्तं इयसत्तरीजहन्ना, असिईनउईवीसुत्तरसयंच ॥ जइवासेमग्गसिर, दसरायातिन्निउक्कोसा ॥१॥ [मासमित्यर्थः] काऊणमासकप्प, तत्थेवठियाणतीत मग्गसिरे ॥ सालंबणाण-छम्मा, सिओउ जिठ्ठोग्गहोहोइत्ति ॥ २ ॥ पज्जोसवियाणंति परीति सामस्त्येनो षितानां पर्युषणाकल्पेन नियमवद्धस्तु मारब्धानामित्यर्थः पर्युषणा कल्पश्च न्यूनोदरताकरणं विकृति-नवकपरित्यागः पीठफलकादि संस्तारकादान मुच्चारादि मात्रकसंग्रहणं लोचकरणं शैक्षाप्रव्राजनं प्राग्गृहीतानां भस्म-डगलकादीना परित्यजन मितरेषां ग्रहणं द्विगुणवर्षोंपग्रहो-

पकरणधरण मभिनवोपकरणग्रहणं स क्रोशयोजनात्परतो गमनवर्जन नित्यादि ।

देखिये उपरोक्त पाठमें श्रीवृत्तिकार महाराजनें चार मासके वर्षाकालमें अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीस दिन और चन्द्र संवत्सरमें पचास दिन के उपरान्त विहार करने वालोंको छ कायके जीवोंकी विराधना करने वाला कहा अर्थात् वीसे और पचासे अवश्यही पर्युषणा करनी कही सो यावत् कार्त्तिक तक याने अभिवर्द्धितमें वीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाड़ी १०० दिन और चन्द्रमें पचास दिने पर्युषणा करनेसे पीछाड़ी ७० दिन उसी क्षेत्रमें ठहरे ॥ इत्यादि ॥

अव श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाकेआराधन करने वाले मोक्षाभिलाषि निर्पक्षपाती सज्जन पुरुषों को इस जगह विचार करना चाहिये कि श्रीगणधर महाराजनें श्रीसमवायांगजी मूलसूत्रमें और श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजनें वृत्तिमें मास वृद्धिके अभावसें चन्द्रसंवत्सरमें जैन ज्योतिषके पंचाङ्गकी रीतिमुजब वर्तनें के अभिप्रायसे चार मासके वर्षाकालमें प्रथम पचास दिन जानेसे और पीछाड़ी ७० दिन रहने से पर्युषणा करनी कही है तथा विशेष खुलासा करते वृत्तिकार महाराजनें योग्यक्षत्रके अभावसे वृक्ष नीचे भी पचास दिने अवश्यही पर्युषणा करनी कही और अभिवर्द्धित संवत्सरमें वृत्तिकार महाराजनें और पूर्वधरादि महाराजोंनें वीस दिने अवश्यही पर्युषणा करनी कही है जिससे पीछाड़ी एकसो दिन रहते हैं;—तथापि ये तीनों महाशय अपनी कल्पनासें वृत्तिकार और पूर्वधारादि महाराजों का (अभिवर्द्धितमें वीस दिने पर्युषणा करनेसे पीछाड़ी एकसो

दिन रहते हैं) इस अभिप्राय के व्यवहारको जड़मूलसे ही उड़ा करके अभिवर्द्धितमें भी पचास दिने पर्यु षणा और पीछाड़ी ७० दिन रखनेका शास्त्रकारों के विरुद्धार्थमें वृथा आग्रहसे हठ करते हैं क्योंकि श्रीगणधर महाराजने श्रीसमवायांगजी मूलसूत्रमें और श्रीअभयदेवसूरिजीने वृत्तिमें प्रथम पचास दिन जानेसे और पीछाड़ी ७० दिन रहनेसे जो पर्यु षणा करनी कही है सो चन्द्रसंवत्सरमें नतु अभिवर्द्धितमें तथापि तीनों महाशय श्रीसमवायांगजीका पाठको अभिवर्द्धितमें स्थापन करते हैं सो निःकेवल श्रीगणधर महाराजके और वृत्तिकार महाराजके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषण करते हैं इसलिये मास वृद्धि होते भी पीछाड़ी ७० दिन रखनेका पाठको दिखाकर संशय रूप भ्रमजालमें भोले जीवोंको गेरना सर्वथा शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें है इसलिये मास वृद्धि होते भी बीस दिने पर्युषणा करनेसे पर्युषणा के पीछाड़ी एकसो दिन प्राचीन कालमें भी रहते थे उसमें कोई दूषण नहीं—और अब जैन पंचाङ्गके अभावसे वर्तमानिक लौकिक पचाङ्गमें श्रावणादि हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसे शास्त्रानुसार तथा पूर्वाचार्योंकी आज्ञा मुजब पचास दिने दूजा श्रावण शुदीमें पर्यु षणा श्रीखरतरगच्छादि वालोंकेकरनेमें आती है जिन्होंको पर्युषणाके पीछाड़ी कार्त्तिक तक एकसो दिन स्वाभावसेही रहते हैं सो शास्त्रानुमार युक्ति पूर्वक है क्योंकि दो श्रावणादि होनेसे पाँच मासके १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा होता है जिसमें पचास दिने पर्यु षणा होवे तब पीछाड़ीके एकसो दिन नियमित रीतिसे रहते हैं यह बात जगत्प्रसिद्ध है इसमें कोई भी दूषण नहीं है इसलिये

अधिक मासकी गिनती करने वाले श्रीखरतरगच्छादि वालोंको पर्युषणाके पीछाडी एकसो दिन होते हैं परन्तु कोई शास्त्रके वचनको बाधाका कारण नहीं है और श्रीसमवायांगजीमें पीछाडी ७० दिन रहने का कहा है सो मास वृद्धिके अभावसे है इसका खुलासा उपरोक्त देखो इसलिये मास वृद्धि होनेसे १०० दिन होवे तो भी श्रीसमवायांगजी सूत्रके वचनको कोई भी बाधाका कारण नहीं है। तथापि तीनों महाशय श्रीसमवायांगजी सूत्रके नामसे पीछाडीके ७० दिन रखनेका हठ करते है। और श्रीखरतरगच्छादि वालोंके उपर आक्षेपरूप पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रखने के लिये दो आश्विनमास होनेंसे दूजा आश्विनमें चौमासी कृत्य करनेका दिखाते है। और कार्त्तिक में करनेसें १०० दिन होते है जिससे श्रीसमवायांगजी सूत्रका पाठके बाधक ठहराते हैं सो मिथ्या हैं क्योंकि श्रीखरतरगच्छवाले श्रीसमवायांगजी सूत्रका पाठके बाधक कदापि नही ठहरते हैं किन्तु तीनों महाशय और तीनों महाशयोंके पक्षधारी सब ही श्रीसमवायांगजी सूत्रके पाठके उत्थापक बनते हैं सो ही दिखाताहुं। तीनों महाशय (समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राइमासे वीइक्कंते इत्यादि) पाठको तो खास करके मंजूर करते हैं। इस पाठमें पचास दिन कहे हैं, वर्तमानिक कालानुसार पचास दिने पर्युषणा इस पाठसे करनी मानों तो श्रावणमासकी वृद्धि होते दूजा श्रावण शुदीमें पचासदिने पर्युषणा तीनों महाशयोंको और इन्हों के पक्षधारिओंको मंजूर करनी चाहिये। सो नही करते हैं और दो श्रावण होते भी ८० दिने पर्युषणा करते

हैं इसलिये श्रीसमवायांगजी सूत्रका इसी ही पाठको न माननेवाले तथा उत्थापक तीनों महाशय और इन्होंके पक्षधारी प्रत्यक्ष बनते है । तथापि निर्दूषण बनने के लिये अधिक मासकी गिनती निषेध करके, ८० दिनके बदले ५० दिन मानकर निर्दूषण बनते है । और पर्युषणाके पीछाड़ी दो आश्विनमास होनेसे कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं । तथापि इसको निषेध करने के लिये अधिकमासकी गिनती निषेध करके १०० दिनके बदले ७० दिन मानकर अपनी मनोकल्पनासे निर्दूषण बनते है और श्रीसमवायांगजी सूत्रका पाठके आराधक बनते है । परन्तु शास्त्रार्थको आत्मार्थी पुरुष निर्पक्षपातसे देखके विचार करते हैं तबतो दोनों अधिक मासका गिनतीमें निषेध करनेका तीनों महाशयोंका और इन्होंके पक्षधारिओंका महान् अनर्थ देखके बड़े आश्चर्य सहित खेदको प्राप्त होते हैं क्योंकि तीनो महाशय और इन्होंके पक्षधारी अधिकमासकी गिनती निषेध करके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठके आराधक बनते है परन्तु खास इसीही श्रीसमवायांगजी मूलसूत्रमें अनेक जगह खुलसा पूर्वक अधिकमासको प्रमाणकिया हैं जिसमें का ६१ और ६२ का श्रीसमवायांगका पाठ भी वृत्ति भाषा सहित इसी ही पुस्तकमें ३९ । ४० । ४१ पृष्ठ में छप गया है जिसमें पांच संवत्सरोंका एक युगमें दोनु अधिकमास को दिनोमें पक्षोमें मासोमें वर्षोमें खुलासा पूर्वक गिनके प्रमाण दिखायाहै इस लिये अधिकमासकी गिनतीका निषेध कदापि नही हो शकता है तथापि अधिकमासकी गिनती निषेध करके जो श्रीसमवायांगजी [illegible] पाठके आराधक बनते है सो आराधकके बदले

उलटे विराधक बनते हैं और मासवृद्धि दो श्रावणादि होते भी भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करणी और वर्तमानिक पाँचमास के १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा होते भी पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रखनेका आग्रहसे हठकरना, और पर्युषणाके पीछाड़ी मास वृद्धि होनेसे १०० दिन मानने वालोंको दूषित ठहराना। और अधिक मासकी गिनती निषेध करके भी आप निर्दूषण बनना। ऐसा जो जो महाशय वर्तमानकालमें मानते है श्रद्धारखते है तथा परूपते भी है—सो निःकेवल अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषण करते दृष्टिरागी भोलेजीवों को जिनाज्ञा विरुद्ध कदाग्रहकी भ्रमजालमें गेरके अपनी आत्माको संसारगामी करते है इसलिये अधिकमासके निषेध करने वाले कदापि निर्दूषण नही बनशकते है,—और अधिक-मासका निषेध करनेकी ऐसी बाललीला मिथ्यात्व रूप मन कल्पना की गपोल खीचड़ी, क्या, अनन्तगुणी अविसंवादी सर्वज्ञ महाराज अतिउत्तमोत्तम श्रीतीर्थङ्कर केवलज्ञानी भगवान् उपदेशित शास्त्रोंमें कदापि चल शकती है अपितु सर्वथा प्रकारसें नही, नही, नही, क्योंकि अधिकमास को श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराज खुलासा पूर्वक गिनती में प्रमाण करते हैं। इसलिये तीनों महाशय तथा इन्होंके पक्षधारी वर्तमानिक महाशयोंकी अधिक मासके निषेध करनेकी सर्व कल्पना संसार वृद्धि कारक मिथ्यात्वकी हेतु हैं इसलिये वर्तमानिक श्रीतपगच्छादि वाले आत्मार्थी मोक्षाभिलाषि निर्पक्षपाती सज्जन पुरुषोंसे मेरा यही कहना है कि—हे धर्म बन्धवों तुमको संसार वृद्धिका

भय होवे और श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधन करने की इच्छा होवे तो अधिक मासकी गिनतीको प्रमाण करो और दो श्रावण हो तो दूजा श्रावणमें तथा दो भाद्र पद हो तो प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनी मंजूर करो करावो श्रद्धो परूपो और मास वृद्धि होनेसे पर्युषणाके पीछाड़ी १०० दिन स्वभाविक होते है जिसको मान्य करो इस तरहका जब प्रमाण करोगे तब ही जिनाज्ञाके आराधक निर्दूषण बनोंगे। नहीं तो कदापि नही, आगे, इच्छा तुम्हारी—इतने परभी श्रीसमवायांगजी सूत्रका पर्युषणा के पहिले५० और पीछाड़ी ७० दिनका पाठको दिखाकर मास वृद्धि होते भी दोनुं बात रखने के लिये जितनी जितनी कल्पना कोजो महाशय करते रहेंगे सोसो सूत्रकारके विरुद्धार्थमें वृथा परिश्रम करके उत्सूत्र भाषक बनेंगे—क्योंकि ५० और ७० दिन चारमासके १२० दिनका वर्षाकाल संबंधी पाठ है इसलिये दो श्रावणादि होनेसे पाँचमासके १५० दिनका वर्षाकालमें श्रीसमवायांगजीका पाठको लिखना सो प्रत्यक्ष सूत्रकारके वृत्तिकार के और न्याय युक्तिसे भी सर्वथा विरुद्धार्थमें हैं इसका विशेष खुलसा उपरोक्त देखो।

और एक युगके पांच संवत्सरोमें दोनुं अधिकमासकों खास श्रीसमवायाङ्गजी मूलसूत्रमें तथा वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक प्रमाण किये है जिसके विषयमें २२ शास्त्रोंके प्रमाण तो इसी ही पुस्तक के पृष्ठ २७ तथा २८ और २९ मे छपगये है और भी सूत्र, वृत्ति, प्रकरण, वगैरह अनेक शास्त्रोंके प्रमाण अधिक मासको गिनतीमें करने के लिये हमको मिले है सो आगे लिखने में आवेंगे, अधिक

मासको दिनोमें यावत् मुहूर्त्तोमें भी खुलासासे प्रमाण कि
है इसलिये अधिकमासकी गिनती निषेध करने वाले त
महाशय और इन्होंके पक्षधारी वर्तमानिक महाशय
श्रीअनन्ततीर्थङ्कर, गणधर, पूर्वधर पूर्वाचार्य्यों के और अ
ही पूर्वजों के वचनों का खण्डन करते, सूत्र, वृत्ति, भ
चूर्णि, निर्युक्ति, और प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंके पाठों
मानने वाले तथा उत्थापक प्रत्यक्ष बनते है और भोले जीव
भी उसी रस्ते पहोचाते मिथ्यात्वकी वृद्धिकारक सं
बढ़ाते है। इस लिये गच्छके पक्षपातका कदाग्रहको, छो
शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक अधिक मासको प्रमाण कर
सत्यबातको ग्रहण करना और सब जनसमाजको ग्रहण क
यही सम्यक्त्व धारीसज्जन पुरुषों का काम हैं;—

और भी तीनों महाशय चौमासी कृत्य आषाढ़
मास प्रतिवद्धा की तरह मास वृद्धि होने से पर्युषणा
भाद्रपदमास प्रतिवद्धा ठहराते है सो भी शास्त्रों के वि
है क्योंकि प्राचीन काल में भी मास वृद्धि होनेसे श्रावण
प्रतिवद्धा पर्युषणाथी और वर्त्तमान कालमें भी दो श्र
होनेसे कालानुसार दूजा श्रावण में पर्युषणा करने
शास्त्रकारों की आज्ञा हैं सोही श्रीखरतरगच्छादिमे कर
आती हैं इसलिये मास वृद्धि होते भी प्राचीन कालमें भ
पद प्रतिवद्धा और वर्तमानमें दो श्रावण होते भी भाद्र
प्रतिवद्धा पर्युषणा ठहराना शास्त्रोंके विरुद्ध है इस बा
उपरमें विशेष खुलासा देखके सत्यासत्यका निर्णय पाठक
स्वयंकर सकते हैं। और जैसे चौमासी कृत्यमें अधिक मास
गिना जाता है तैसे ही पर्युषणा में भी अधिक मास

अवश्यही गिना जाता हैं इस लिये धर्मकार्यों में और गिनती का प्रमाणमें अधिक मासका शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक प्रमाण करना ही उचित होनेसे आत्मार्थियों को अवश्य ही प्रमाण करना चाहिये। अधिक मास को प्रमाण करना इसमें कोई भी तरहका हठवाद नहीं हैं किन्तु अधिक मास की गिनती निषेध करना सो निःकेवल शास्त्रकारों के विरुद्धार्थमें हैं.—तथापि इन तीनों महाशयोंने बड़े जोरसे अधिक मासकी गिनती निषेध किवी तब उपरोक्त समीक्षा मुझेभी अधिक मासकी गिनती करने के सम्बन्ध की करनी पड़ी और आगे फिर भी इन तीनों महाशयोंने अपनी चातुराई अधिक मास को निषेध करने के लिये प्रगट किवी है जिसमें के एक तीसरे महाशय श्री विनयविजयजी कृत श्रीसुखबोधिका वृत्तिका पाठ इसही पुस्तक के पृष्ठ ६९।७२।७१ मे छपा था जिसमेका पीछाड़ीकाशेष पाठ रहा था जिसको यहाँ लिखके पीछे इसीकी समीक्षा भी करके दिखाता हुं श्रीसुखबोधिकावृत्ति के पृष्ठ १४७ की दूसरी पुठी की आदि से पृष्ठ १४८ के प्रथम पुठी की मध्य तक का पाठ नीचे मुजब जानो यथाः—

किं काकेन भक्षितः किं वा तस्मिन्मासे पापं न लगति उत बुभुक्षा न लगति इत्याद्युपहस्य स्वकीयं ग्रहिलत्वं प्रकटयत स्त्वमपि अधिकमासे सति त्रयोदशसु मासेषु जातेष्वपि सांवत्सरिक क्षामणे, बारसण्हं मासाणमित्यादिकं वदन्नधिकमासमंगीकरोषि एवं चतुर्मास क्षामणे अधिकमास सद्भावेपि, चउण्हंमासाणमित्यादि पाक्षिक क्षामणके अधिक तिथि संभवेपि, पन्नरसण्हं दिवसाणमिति च ब्रूपे-

ा नवकल्पिविहारोहि लोकोत्तरकार्येषु,आसाढमासे दुप्पया,
यादि सूर्य्यचारे,लोकेपि दीपालिका अक्षय तृतीयादि पर्वसु
र कलत्रादिषु च अधिकमासो न गण्यते तदपि त्वं
नासि अन्यच्च सर्वाणि शुभकार्य्याणि अभिवर्द्धिते मासे
ुंसक इति कृत्वा ज्योतिः शास्त्रे निषिद्धानि अतएव
स्त्वा मन्योऽभिवर्द्धितो भाद्रपदवृद्धौ प्रथमो भाद्रप-
पि अप्रमाणमेव यथा चतुर्दशी वृद्धौ प्रथमां चतुर्द्दशी-
ागण्य द्वितीयायां चतुर्द्दश्यां पाक्षिक कृत्यं क्रियते—
ात्रापि एवं तर्हि अप्रमाणे मासे देवपूजा मुनि
नाऽवश्यकादि कार्य्यमपि न कार्य्यमित्यपि वक्तुमाधरौष्टं
ालय यतो यानि हि दिनप्रतिबद्धानि देवपूजा मुनि
नादि कृत्यादि तानि तु प्रतिदिन कर्त्तव्यान्येवं यानि च
ध्यादि समय प्रतिबद्धानि आवश्यकादीनि तान्यपि य
व्रन सन्ध्यादि समयं प्राप्य कर्त्तव्यान्येव यानि तु भाद्र-
ादि मास प्रतिबद्धानि तानि तु तद्द्वयसम्भवे कस्मिन्क्रियते
ते विचारे प्रथम मवगण्य द्वितीये क्रियते इति सम्यग्
चारय तथाच पश्य अचेतना वनस्पतयोपि अधिकमास
गी कुर्वते येनाधिकमासे प्रथमं परितज्य द्वितीय एव
से पुष्पति—यदुक्तम् आवश्यकनिर्युक्तौ, जइफुल्लाकणि
रडा, चूअग अहिमासयंमिघुट्ठंमि॥ तुहनखमं फुल्लेउं,
पच्चंताकरिंति डमराइं॥१॥ तथा च कश्चित्॥
भिवड्ढियंमिवीसा, इयरेसु सवीसइ मासो,। इति
ान बलेन मासाभिवृद्धौ विंशत्यादि तैरेव लोचादि कृत्य
शिष्टां पर्युषणां करोति तदप्ययुक्तं, येन अभिवड्ढियं-
वीसा इति वचनं गृहिज्ञातमात्रापेक्षया अन्यथा आसाढ-

पुग्गिमाए पज्जोसवेंति एमदसग्गो सेसकाल पज्जो-सवणाण अयवावत्ति, श्रीनिशीथचूर्णिदशमोद्देशक वचना-दपाठ पूर्णिमायामेव लोचादि कृत्यविशिष्टा पर्युषणा कर्त्तव्या स्यात् इत्यल प्रसगेन—

उपरोक्तपाठ जैसा मैंने देखा वैसा ही यहाँ छपा दिया है और जैसे श्रीविनयविजयजीने उपरोक्त पाठ लिखा हैं वैसा ही अभिप्राय का श्रीधर्मसागरजीने श्रीकल्पकिरणा-वली वृत्तिमें और श्रीजयविजयजीने श्रीकल्पदीपिका वृत्ति में अपनी अपनी विद्वत्ताकी चातुराई से अनेक तरहके उटपटाग, पूर्वापर विरोधी विसवादी और उत्सूत्र भाषण रूप शास्त्र कारोके विरुद्वार्थ में अपनी मनकल्पना से लिखके गच्छकदाग्रही दृष्टि रागी श्रावकोके दिलमें जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वका भ्रमगेरा हैं। जिसका सबपाठ यहाँ लिखने से ग्रन्थ बढजावे,और वाचकवर्गको विस्तारके कारणसे विशेष वख्तलगे इसें नही लिखा और तीनो महाशयोका अभिप्राय उपरके पाठ मुजब ही खास एक समान है, इसलिये तीनो महाशयोके पाठको न लिखते एकही श्रीसुखबोधिका वृत्तिका पाठ उपरमे लिखा है उसीकी समीक्षा करता हु सो तीनो महाशयोके अभिप्रायका लेखकी समझ लेना—अब समीक्षा-सुनो तीनो महाशय अधिकमासकी गिनती निषेध करके फिर उसीको ही पुष्टी करने के लिये प्रश्नोत्तर रूपमें लिखते है कि—अधिकमासको गिनती मे नही करते होतो (कि काकेन भक्षित,—इत्यादि) क्या अधिकमासको काकने भक्षण करलिया कि वा तिस अधिक मासमें पाप नही लगता है और उस अधिकमासमे क्षुधा भी नही लगती है

सो अधिकमासको गिनतीमें नही लेते हो अर्थात् जो अधिक मास में पाप लगता होवे और क्षुधा भी लगती होवे तो अधिकमासको गिनतीमें भी प्रमाण करके मंजूर करणा चाहिये—इत्यादि मतलबसे उपहास करता प्रश्नकार वादीको ठहराकर फिर श्रीविनयविजयजी अपनी विद्वत्ता के जोरसे प्रतिवादी वनके उपरके प्रश्नका उत्तर देने मे लिखते है कि— मास्वकीयं ग्रहिलत्वं प्रगटयत स्त्वमपि अधिक मासे सति त्रयोदशसु मासेषु जातेष्वपि—इत्यादि अर्थात् अधिकमासको क्या काकने भक्षण करलिया तथा क्या तिस अधिकमासमें पाप नही लगता है और क्षुधा भी नही लगती है सो गिनतीमे नही लेते हो इत्यादि उपहास करता हुवा तेरा पागलपना प्रगट मत कर क्योंकि—त्वमपि अर्थात् हमारी तरह जिस संवत्सरमें अधिकमास होता है उसी संवत्सरमें तेरहमास होते भी साम्वत्सरिक क्षामणे 'बारसण्हंमासाणं' इत्यादि वोलके अधिकमासको गिनती में अङ्गीकार तु भी नही करता है और तैसे ही चौमासी क्षामणेमें भी अधिकमास होनेसे पांच मासका सद्भाव होते भी 'चउण्हंमासाणंइत्यादि वोलके अधिकमासकी गिनती नही करता है ;—

अब हम उपरके मतलब की समीक्षा करते हैं कि हे पाठकवर्ग ! भव्यजीवों तुम इन तीनों विद्वान् महाशयों की विद्वत्ताका नमुना तो देखो–प्रथम किस रीतिसे प्रश्न उठाते हैं और फिर उसीका उत्तरमें क्या लिखते हैं प्रश्नके समाधानका गन्ध भी उत्तरमें नही लाते और और वाते लिख दिखाते हैं क्योंकि उपरोक्त प्रश्नमें अधिक मासको गिनतीमें नहीं लेते हो तो क्या काकने

भक्षण करलिया इत्यादि प्रश्न उठाकर इसका संबंध छोड़के—तुंभी मास्वत्सरिक क्षामणामें तेरहमास होते भी बारहमासके क्षामणे करता है इत्यादि लिख कर क्षामणाका संबंध लिख दिखाया और प्रश्न कारके उपर ही गेरके अपनी विद्वत्ता दिखाई परन्तु सम्पूर्ण प्रश्नके संबंधका समाधान उत्तरमें शास्त्रोंके प्रमाणसें तो दूर रहा परन्तु युक्ति पूर्वक भी कुछ नहीं कर शके वथा अलौकिक अपूर्व विद्वत्ता प्रश्नके उत्तर देनेमें तीनों विद्वानोंने खर्च किवी हैं सो पाठक वर्ग बुद्धि जन पुरुष स्वयं विचार लेना, और तुंभी अधिकमास होनेसे तेरह मासके क्षामणा न करते बारह मासका करके अधिक मासको अङ्गीकार नही करता हैं इत्यादि तीनों महाशयोंने लिखा हैं सो मिथ्या हैं क्योंकि अधिक मासकी ° करने वाले मुख्य श्रीखरतर गच्छवाले जब अधिक- होता है तब अभिवर्द्धित संवत्सराश्रय सांवत्सरिक ‌ में तेरह मास तथा छवीश पक्षादि और अभिवर्द्धित चौमासेमें भी पांचमास तथा दशपक्षादि खुलासा कहकर सांवत्सरिक और चौमासी क्षामणेमें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करते हैं इसलिये अधिक मासको क्षामणामें अङ्गीकार नही करता हैं ऐसा तीनो महाशयों का लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या हो गया और इस जगह किसीको यह संशय उत्पन्न होगा कि तेरह मास छवीश पक्षादि किस शास्त्रमें लिखे है तो इस बातका सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजी के नामसे पर्युषणा विचार नामकी छोटीसी पुस्तक की आगे में समीक्षा करुंगा वहाँ विशेष खुलासा शास्त्रोंके प्रमाणसे लिखा जायगा सो पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जायेगा ।

और पाठकवर्ग तथा विशेष करके श्रीतपगच्छके मुनि महाशय और श्रावकादि महाशयों को मेरा इस जगह इतना ही कहना है कि आप लोग निष्पक्षपातसे विवेक बुद्धि हृदय में लाकर तीनों महाशयोंके लेखको टुक नजरसे थोड़ासा भी तो विचार करके देखो इस जगह क्षामणा के सम्बन्धमें दूसरों को कहने के लिये तीनों महाशयोंने 'अधिकमासेसति त्रयोदशषु मासेषु जातेष्वपि, इत्यादि। तथा 'एवं चतुर्मासक-क्षामणेऽधिकमास सद्भावेऽपि,—यह वाक्य लिखके अधिकमास को गिनतीमें लेकर तेरह मास अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें और चौमासामें भी अधिक मासका सद्भाव मान्यकर अभिवर्द्धित चौमासा पाँचमास का दिखाया। इस जगह उपरोक्त इस वाक्यसे अधिकमासको तीनों महाशयोंने प्रमाण करके मंजूर कर-लिया—और पहिले पर्युषणाके सम्बन्धमें अधिक श्रावणकी और अधिक आश्विनकी गिनती निषेध कर दिवी, जब क्षामणा के सम्बन्धमें अधिक मासको गिनतीमें खुलासा मंजूर करलिया तो फिर विसम्वादी वाक्यरूप संसार वृद्धिकारक अधिक मासकी गिनतीका निषेध वृथा क्यों किया इसका विशेष विचार पाठकवर्ग स्वयं करलेना,—और अब श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक महाशयोंको मेरा इतनाही कहना है कि आप-लोग तीनों महाशयोंके वचनोंको प्रमाण करते हो तो इन्होंके लिखे शब्दानुसार अधिक मासकी गिनती मंजूर करोगे किम्वा विसंवादी पूर्वापर विरोधी वाक्यरूप निषेधको मंजूर करोगे जो गिनती मंजूरकरोगे तबतो वर्त्तमानिक लौकिक पञ्चागमें दो श्रावण वा दो भाद्रपद अथवा दो आश्विनादि मासोंकी वृद्धि होनेसे अधिक मासका गिनतीमें

निषेध करनाही नहीं बनेगा, और जो निषेधको मंजूर करोगे तब तो अनेक सूत्र, वृत्ति भाष्यं, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंके न माननेवाले उत्थापक बनोंगे इसलिये जैसा तुम्हारी आत्माको हितकारी होवें वैसा पक्षपात छोड़कर ग्रहण करना सोही सम्यक्त्वधारी सज्जन पुरुषोंको उचित है मेरा तो धर्मबन्धुओंकी प्रीति सें हितशिक्षारूप लिखना उचित था सो लिख दिखाया मान्य करना किंवा न करना सो तो आपलोगों की खुसी की बात है ;—

और आगे भी सुनो, तीनों महाशयोंने पाक्षिक क्षामणे अधिक तिथि होते भी "पन्नरसण्हंदिवसाणं", ऐसा कहके अधिक तिथि को नहीं गिनता है यह वाक्य लिखा है इससें मालुम होता है कि तिथिओंकी हाणी वृद्धि की और पाक्षिक क्षामणा संबंधी जैन शास्त्रकारोंका रहस्यके तात्पर्य्यको तीनों महाशयोंके समजमें नही आया दिखता नही तो यह वाक्य कदापि नही लिखते इसका विशेष खुलासा श्रीधर्मविजयजीके नामसें पर्युषणा विचार नामकी छोटीसी पुस्तक की में समीक्षा आगे करूंगा वहाँ अच्छी तरह सें तिथियो की हाणी वृद्धि सबंधी और पाक्षिक क्षामणा सम्बधी निर्णय लिखनेमें आवेगा—और नवकल्पि विहारका लिखा सो मासवृद्धिके अभावसे नतु पौषादिमास वृद्धि होते भी क्योंकि मासवृद्धि पौष तथा आषाढ़की प्राचीन कालमें होती थी अब और वर्त्तमानमें भी वर्षाऋतुके सिवाय मास वृद्धिमें अधिक मासकी गिनती करके अवश्यही दशकल्पि विहार होता है यह बात शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इस का भी विशेष निर्णय वहाँ ही करनें में आवेगा—और

(आसाढ़े मासे दुप्पया इत्यादि सूर्य्यचारे) इस वाक्यको लिखके तीनों महाशय अधिक मासमें सूर्यचार नहीं होता है ऐसा ठहराते है सो भी मिथ्या हैं क्योंकि अधिक मासमें अवश्यही निश्चय करके सूर्यचार आनादिकाल से होता आया है और आगे भी होता रहेगा तथा वर्तमान कालमें भी होता है सो देखिये शास्त्रोंके प्रमाण श्रीचन्द्रप्रज्ञप्तिसूत्रमें १ तथा वृतिमें २ श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रमें ३ तथा वृत्ति में ४ श्री-वृहत्कल्प वृत्तिमें ५ श्रीभगवतीजी मूलसूत्रके पञ्चम शतकके प्रथम उद्देशेमें ६ तत्वृत्तिमें ७ श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रमें ८ तथा इन्हीं सूत्रकी पांच वृत्तियों मे १३ श्रीज्योतिष-करंडपयन्नेकीवृत्ति में १४ श्रीव्यवहारसूत्र वृत्ति में १५ और लघु तथा वृहत्दोनुसंग्रहणीसूत्र में १७ तथा तिस की चार वृत्तियों में २१ और क्षेत्रसमास के तीन मूल ग्रन्थों में २४ तथा तीन क्षेत्रसमासों की सात वृत्तिओं में ३१ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें अधिक मासमें सूर्यचार होनेका कहा है अर्थात् सूर्यचारके १८४ मांडलेके १८३ अन्तरे खुलासा पूर्वक कहे है जिसमें दिन प्रते सूर्य अपनी मर्यादा पूर्वक हमेसां गति करके १८३ दिने दक्षिणा-यनसे उत्तरायण और फिर १८३ दिने उत्तरायणसे दक्षिणायन इसीही तरहसे एक युगके पांच सूर्य संवत्सरोंके १८३० दिनोंमें सूर्यचारके १० आयन होते हैं जिसमें चन्द्रमासकी अपेक्षासे दो मासकी वृद्धि होने से ६२ चन्द्रमासके १८३० दिन होते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोंकी गनती करनेसेही सूर्यचारके गतिका प्रमाण मिल शकेगा, अन्यथा नहीं ?

और लौकिक पञ्चांगमें भी अधिक मासके दिनोंकी गिनती सहित सूर्यचार होता है सोही वर्त्तमानिक संवत्सर

निषेध करनाही नही बनेगा, और जो निषेधको मंजूर करोगे तब तो अनेक सूत्र, वृत्ति भाष्य, चूर्णि, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंके न माननेवाले उत्थापक बनोंगे इसलिये जैसा तुम्हारी आत्माको हितकारी होवें वैसा पक्षपात छोड़कर ग्रहण करना सोही सम्यक्त्वधारी सज्जन पुरुषोंको उचित है मेरा तो धर्मबन्धुओंकी प्रीति सें हितशिक्षारूप लिखना उचित था सो लिख दिखाया मान्य करना किंवा न करना सो तो आपलोगों की खुसी की बात है ;—

और आगे भी सुनो, तीनों महाशयोंने पाक्षिक क्षामणे अधिक तिथि होते भी "पन्नरसण्हंदिवसाणं", ऐसा कहके अधिक तिथि को नहीं गिनता है यह वाक्य लिखा है इससें मालुम होता है कि तिथिओंकी हाणी वृद्धि की और पाक्षिक क्षामणा संबंधी जैन शास्त्रकारोंका रहस्यके तात्पर्य्यको तीनों महाशयोंके समजमें नही आया दिखता है नही तो यह वाक्य कदापि नही लिखते इसका विशेष खुलासा श्रीधर्मविजयजीके नामसें पर्युषणा विचार नामकी छोटीसी पुस्तक की में समीक्षा आगे करुंगा वहाँ अच्छी तरह सें तिथियों की हाणी वृद्धि सबधी और पाक्षिक क्षामणा सम्बधी निर्णय लिखनेमें आयेगा—और नवकल्पि विहारका लिखा सो मासवृद्धिके अभावसे नतु पौषादिमास वृद्धि होते भी क्योंकि मासवृद्धि पौष तथा आषाढ़की प्राचीन कालमें होती थी जब और वर्त्तमानमें भी वर्षाऋतुके सिवाय मास वृद्धिमें अधिक मासकी गिनती करके अवश्यही दशकल्पि विहार होता है यह बात शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इस का भी विशेष निर्णय वहाँ ही करनेमें आवेगा—और

को दिखाता हुं,-सम्वत् १९६६ का जोधपुरी चंडु पञ्चांगमें आषाढ़ शुक्र ५ के दिन सूर्य उत्तरायनसे दक्षिणायन में हुवा था जिसमें मास वृद्धिसे दो श्रावण मास हुवे तब अधिक मासके दिनोंकी गिनती सहित चन्द्रमासकी अपेक्षासे तिथियोंकी हाणी वृद्धि हो करके भी १८३ वें दिन मार्ग-शीर्ष शुक्र ९ के दिन फिर भी सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में हुवा है सो पाठकवर्गके सामनेकी ही बात है, इसी तरहसे लोकिक पञ्चाग में हरेक अधिक मासोकी गिनतीसे सूर्यचारकी गिनती समझ लेना और सम्वत् १९६९में खास दो आषढ़ मास होवेगें तबभी सूर्यचारकी गतिको देखके पाठकवर्ग प्रत्यक्ष निर्णय करलेना—और मेरेपास विक्रम सम्वत् १९७१ से लेकर सम्वत् १९९९वें तकके अधिक मासोंका प्रमाण मौजूद है परन्तु ग्रन्थगौरवके कारणसे नहीं लिखता हुं, इसलिये तीनो मास में होता है ऐसा ठहराते है पूर्वक और लोकिक भी

को दिखाता हुं,—सम्वत् १९६६ का जोधपुरी चंडु पञ्चांगमें आषाढ़ शुक्ल ५ के दिन सूर्य उत्तरायनसे दक्षिणायन में हुवा था जिसमें मास वृद्धिसे दो श्रावण मास हुवे तब अधिक मासके दिनोंकी गिनती सहित चन्द्रमासकी अपेक्षासे तिथियोंकी हाणी वृद्धि हो करके भी १८३ वें दिन मार्ग-शीर्ष शुक्ल ९ के दिन फिर भी सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में हुवा है सो पाठकवर्गके सामनेकी ही बात हैं, इसी तरहसे लौकिक पञ्चाग में हरेक अधिक मासोंकी गिनतीसे सूर्यचारकी गिनती समझ लेना और सम्वत् १९६९में खास दो आषढ़ मास होवेगें तबभी सूर्यचारकी गतिको देखके पाठकवर्ग प्रत्यक्ष निर्णय करलेना—और मेरेपास विक्रम सम्वत् १९०१ से लेकर सम्वत् १९९९वें तकके अधिक मासोंका प्रमाण मौजूद है परन्तु ग्रन्थगौरवके कारणसे नहीं लिखता हुं, इसलिये तीनों महाशय अधिक मास में सूर्यचार नहीं होता है ऐसा ठहराते है सो जैनशास्त्रानुसार तथा युक्ति-पूर्वक और लौकिक पञ्चाङ्गकी रीतिसे भी प्रत्यक्ष मिथ्या हैं तथापि तीनों महाशयोने भोले जीवोंकों अपने पक्ष में लानेके लिये (आसाढ़ेमासे दुप्पया) इस वाक्यको लिखके सूत्रकार गणधर महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध हो करके और फिरभी अधूरा लिख दिया क्योंकि गणधर महाराज श्रीसु-धर्मस्वामिजीनें श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रके छवीश (२६) वें अध्ययन में साधुसमाचारी सम्बन्धी पौरसाधिकारे-असाढ़े मासे दुप्पया, पोसेमासे चउप्पया ॥ चित्तासोएसु मासेसु, तिप्पया हवइपोरसी ११ इत्यादि १२।१३।१४।१५।१६ गाथाओं से खुलासा पूर्वक व्याख्या मास वृद्धिके अभावसे स्वभाविक

रीतिसें किवी थी और इन्हीं गाथाओंकी अनेक पूर्वाचा-र्योंने विस्तार करके अच्छी तरहसे टीका बनाई हैं उन सब व्याख्यायोंको और सूत्रकारके सम्बधकी सब गाथायोंको छोड़करके सिर्फ एक पद लिखा सोभी मास वृद्धिके अभावका था जिसको भी मास वृद्धि होते भी लिखके दिखाना सो आत्मार्थी भवभीरु पुरुषोंका काम नहीं हैं और में इस जगह श्रीउत्तराध्ययनजीसूत्र के २६ वा अध्ययनकी गाथा ११ वीं, से १६ वी तक तथा व्याख्यायोंके भावार्थ सहित विस्तार के कारणसे नहीं लिख सक्ता हुं परन्तु जिसके देखनेकी इच्छा होवे सो रायबहादुर धनपतसिंहजी की तरफसे जैनागम संग्रहका ४१ वा भागमें श्रीउत्तराध्ययनजी मूलसूत्र तथा श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत वृत्ति और गुजराती भाषा सहित छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके २६ वा अध्ययन में साधुसमाचारी संम्बधी पौरषीका अधिकार पृष्ठ ७६६ से ७६९ तक गाथा ११वी से १६वी तथा वृत्ति और भाषा देखके निर्णय करलेना और जिसके पास हस्तलिखित पुस्तक मूल की तथा वृत्तिकीहोवे सोभी उपरोक्त अध्ययनकी गाथा और वृत्ति देखलेना और श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रकार श्रीगणधर महाराज अधिक मासको अच्छी तरहसे खुलासा पूर्वक यावत् मुहूर्तोंमें भी गिनती करके मान्य करने वाले थे तथा अधिक मासके भी दिनोंकी गिनती सहित सूर्यचार को मान्यने वाले थे इसलिये सूत्रकार गणधर महाराजके अभिप्रायः के सम्बन्धका सब पाठको छोड़के एकपद लिखनेसें अधिक मासमें सूर्यचार नहीं होता है ऐसा तीनों महाशयोंका लिखना कदापि सत्य नहीं होशक्ता हैं अर्थात् सर्वथा मिथ्या हैं ।

को दिखाता हुं,—सम्वत् १९६६ का जोधपुरी चंडु पञ्चांगमें आषाढ़ शुक्ल ५ के दिन सूर्य उत्तरायनसे दक्षिणायन में हुवा था जिसमें मास वृद्धिसे दो श्रावण मास हुवे तब अधिक मासके दिनोंकी गिनती सहित चन्द्रमासकी अपेक्षासे तिथियोंकी हाणी वृद्धि हो करके भी १८३ वें दिन मार्गशीर्ष शुक्ल ९ के दिन फिर भी सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में हुवा है सो पाठकवर्गके सामनेकी ही बात हैं, इसी तरहसे लौकिक पञ्चाग में हरेक अधिक मासोंकी गिनतीसे सूर्यचारकी गिनती समझ लेना और सम्वत् १९६९में खास दो आषढ़ मास होवेगें तबभी सूर्यचारकी गतिको देखके पाठकवर्ग प्रत्यक्ष निर्णय करलेना—और मेरेपास विक्रम सम्वत् १९०१ से लेकर सम्वत् १९९९वें तकके अधिक मासोंका प्रमाण मौजूद है परन्तु ग्रन्थगौरवके कारणसे नहीं लिखता हुं, इसलिये तीनों महाशय अधिक मास में सूर्यचार नहीं होता है ऐसा ठहराते है सो जैनशास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वक और लौकिक पंञ्चाङ्गकी रीतिसे भी प्रत्यक्ष मिथ्या हैं तथापि तीनों महाशयोंने भोले जीवोंकों अपने पक्ष में लानेके लिये (आसाढ़ेमासे दुप्पया) इस वाक्यको लिखके सूत्रकार गणधर महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध हो करके औरफिरभी अधूरालिखदिया क्योंकि गणधरमहाराज श्रीसुधर्मस्वामिजीनें श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रके छवीश (२६) वें अध्ययन में साधुसमाचारी सम्बन्धी पौरस्याधिकारे—असाढ़े मासे दुप्पया, पोसेमासे चउप्पया ॥ चित्तासोएसु मासेसु, तिप्पया हवइपोरसी ११ इत्यादि १२।१३।१४।१५।१६ गाथाओ से खुलासा पूर्वक व्याख्या मास वृद्धिके अभावसे स्वभाविक

निषेध करना नहीं बनेगा, और अधिक मासको निषेध करनेके लिये जो जो कल्पना उपरके पाठमें लिखी है सो सबही वृथा होजावेगी सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना;—

और जैसे श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की प्रतिमाजीके निंदक जैनाभास ढूंढिये और तेरहापन्थी हठग्राही कदाग्रहीलोग अपने पक्षकी भ्रमजालमें भोले जीवोंको फसानेके लिये जिस सूत्रका पाठ लोगोंको दिखाते हैं उन्हीं सूत्रके पाठको जड़ मूलसेही उत्थापन करते है तैसेही इन तीनों महाशयोंने भी किया अर्थात् श्रीदशाश्रुतस्कंधसूत्रके अष्टमाध्ययनरूप पर्युषणा कल्पचूर्णिका और श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिके दशवें उद्देशेका पाठ लिखके भोले जीवोंको दिखाया था उन्हीं चूर्णिके पाठको जड़मूलसे उत्थापन भी कर दिया, क्योंकि प्रथम पर्युषणा भाद्रपदमें ठहरानेके लिये दोनुं चूर्णिके पाठ लिखे थे जिसमें स्वभाविक रीतिसे आषाढ़ चौमासीसें पचास दिनके अन्तरमें कारण योगसें श्रीकालकाचार्यजीने पर्युषणा किवी थी सोभी प्राचीनकालाश्रय गुनपचास (४९) वें दिन मास वृद्धिके अभावसे परन्तु शास्त्रोंके प्रमाण उपरान्त एकावन दिने पर्युषणा नहीं किवी थी, तथापि इस जगह उन्हीं पाठको तीनों महाशयोंने जड़मूलसेही उत्थापन करके स्वभाविक रीतिसे प्रथम भाद्रपद था उसीको छोड़कर दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करनी लिख दिया, फिर निर्दूषण बनने के लिये उन्हीं दोनुं चूर्णिमें अधिक मासको प्रमाण किया था उन्हीं चूर्णिके पाठको उत्थापनरूप अधिक मासको निषेध भी कर दिया, हा, आफसोस ;—

अब सज्जन पुरुषोंसे मेरा इतनाही कहना हैं कि दो

और भी तीनों महाशय दो भाद्रपद होनेसें प्रथम भाद्रपको अप्रमाण ठहरा कर छोड़ देना और दूसरे भाद्रपद में पर्युषणा करना कहते है इसपर मेरेकों बड़ाही आश्चर्य सहित खेद उत्पन्न होता है क्योंकि जैसे अन्य मतवाले जिस देवकी अनेक तरहसें अज्ञान दशाके कारणसें विटंबना बहोतसी करते है फिर उन्हीं देवकों अपने परमेश्वर मानकर पूजते भी है तैसेही इन तीनों महाशयोंने भी अज्ञानी मिथ्यात्वियोंका अनुकरण किया अर्थात् जिस अधिक मास को कालचूला मान्यकरके गिनतीमें नही लेना ऐसा सिद्ध-करके फिर अनेक तरहके विकल्पोंसें अधिक मासको दूषण लगाके निंदते हुवे निषेध करते है फिर उन्हीं अधिक मासमें धर्मकार्य्य पर्युषणापर्व करना मंजूर कर लिया, क्योंकि तीनों महाशय अधिक मासको कालचूला कहनेसें गिनतीमें नहीं आता है ऐसा तो पर्युषणाके सम्बधमें प्रथम लिखते हैं इसपर पाठकवर्ग बुद्धिजनपुरुष निष्पक्षपातसे विचार करो कि, कालचूला उसको कहते हैं जो एक वर्षका कालके उपरमे बढ़े एक वर्षके बारह मास स्वाभाविक होतेही हैं परन्तु जब तेरहवा मास बढ़ेगा तब उसीको कालचूलाकी ओपमा होगा नतु बारहवा मासको जब तेरहवा मास को कालचूलाकी ओपमा हुई उसीकों गिनतीमें निषेधभी करदेना, और प्रमाणभी करलेना यह कैसी विद्वत्ताका न्याय हुवा जो कालचूलाको निषेध करेंगे तब तो दूसरा भाद्रपदको कालचूलाकी ओपमा होती है उसीमें पर्युषणापर्व स्थापना नहीं बनेगा, और जो दूसरे भाद्रपदमे कालचूला जानके भी पर्युषणा स्थापेंगे तबतो दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणको

निषेध करना नहीं बनेगा, और अधिक मासको निषे करनेके लिये जो जो कल्पना उपरके पाठमें लिखी है से सबही वृथा होजावेगी सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना;—

और जैसे श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की प्रतिमाजीके निंदव जैनाभास ढूंढिये और तेरहापन्थी हठग्राही कदाग्रहीलोग अपने पक्षकी भ्रमजालमें भोले जीवोंको फसानेके लिये जिस सूत्रका पाठ लोगोंको दिखाते हैं उन्हीं सूत्रके पाठको जड़ मूलसेही उत्थापन करते है तैसेही इन तीनों महाशयोंने भी किया अर्थात् श्रीदशाश्रुतस्कंधसूत्रके अष्टमाध्ययनरूप पर्युषणा कल्पचूर्णिका और श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिके दशवें उद्देशेका पाठ लिखके भोले जीवोंको दिखाया था उन्हीं चूर्णिके पाठको जड़मूलसे उत्थापन भी कर दिया, क्योंकि प्रथम पर्युषणा भाद्रपदमें ठहरानेके लिये दोनु चूर्णिके पाठ लिखे थे जिसमें स्वभाविक रीतिसे आषाढ़ चौमासीसें पचास दिनके अन्तरमें कारण योगसें श्रीकालकाचार्यजीने पर्युषणा किवी थी सोभी प्राचीनकालाश्रय गुनपचास (४९) वें दिन मास वृद्धिके अभावसे परन्तु शास्त्रोंके प्रमाण उपरान्त एकावन दिने पर्युषणा नहीं किवी थी, तथापि इस जगह उन्हीं पाठको तीनों महाशयोंने जड़मूलसेही उत्थापन करके स्वभाविक रीतिसे प्रथम भाद्रपद था उसीको छोड़कर दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा करनी लिख दिया, फिर निर्दूषण बनने के लिये उन्हीं दोनु चूर्णिमें अधिक मासको प्रमाण किया था उन्हीं चूर्णिके पाठको उत्थापनरूप अधिक मासको निषेध भी कर दिया, हा, आफसोस ;—

अब सज्जन पुरुषोंसे मेरा इतनाही कहना हैं कि दो

भाद्रपद होनेसे प्रथम भाद्रपदमें ही पर्युषणा करनी जिनाज्ञामुजब शास्त्रानुसार है नतु दूसरेमें, इतनेपर भी हठवादीजन शास्त्रोंके विरुद्ध होकरके भी दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणा करेंगे तो उन्होंके इच्छाकी बात ही न्यारी है;—

और तीनों महाशय दो चतुर्दशी होनेसे प्रथम चतुर्दशी को छोड़कर दूसरी चतुर्दशीमें पाक्षिक कृत्य करनेका कहते हैसोभी शास्त्रविरुद्ध है इसका विशेष खुलासा तिथिनिर्णयका अधिकारमें आगे विस्तार पूर्वक शास्त्रोंके प्रमाण सहित करनेमें आवेगा,—

और अधिक मासमें देवपूजा, मुनिदान, पापकृत्योंकी आलोचनारूप प्रतिक्रमणादि कार्य दिन दिन प्रति करनेका कहकर अधिक मासके तीस ३० दिनोंमें धर्मकर्मके कार्य करनेका तीनों महाशय कहते है परन्तु अधिक मासको गिनती में लेनेका निषेध करते हैं, इसपर मेरेकों तो क्या परन्तु हरेक बुद्धिजन पुरुषोंकों तीनों महाशयोंकी अपूर्व बालबुद्धिकी चातुराईको देखकर बड़ाही आश्चर्य को उत्पन्न हुये बिना नहीं रहेगा क्योंकि जैसे कोई पुरुष एक रुपैये को अप्रमाण मानता है परन्तु १६ आने, तथा ३२ आधाने और ६४ पाव आने, आदिको मान्य करता हैं और एक रुपैये को मानने वालोंका निषेध करता है, तैसेही इन तीनों महाशयोंका लेखभी हुवा अर्थात् अधिक मासके ३० दिनोंमें धर्मकर्म तो मान्य किये, परन्तु अधिक मासको मान्य नहीं किया और मान्य करनेवालोंका निषेध किया सो क्या अपूर्व विद्वत्ता प्रगट तीनों महाशयोंने किवी है, जैसे उस पुरुषने जब १६ आने तथा ३२ आध आने चौसठ पाव आने को

मान्य करलिये तब एक रुपैया तो स्वयं मान्य होगया, तथापि निषेध करना, सो बे समझ पुरुषका काम है तैसेही तीनों महाशयोंनें भी जब देवपूजा, मुनिदानावश्यक (प्रतिक्रमण) वगैरह धर्मकर्म ३० दिनोंमें मान्य लिये तब तो ३० दिनका एक अधिक मास तो स्वयं मान्य होगया, तथापि फिर अधिक मासको गिनती करनेमें निषेध करना सो हठवादसे निःकेवल हास्यका हेतु लज्जाका घर और तीनों महाशयोंकी विद्वत्ताकी लघुताका कारण है ,—

तथा और भी सुनिये जब इस जगह तीनों महाशय ३० दिनोंमें धर्मकर्म मान्य करते है जिससे अधिक मास भी गिनती में सिद्ध होता हैं फिर पर्युषणाके संबंधमें दो श्रावण के कारणसें भाद्रपद तक प्रत्यक्ष ८० दिन होते है जिसको निषेध करके ८० दिनके ५० दिन बनाते है और अधिक मासको निषेध करते है सो कैसे बनेगा अपितु कदापि नही, इस लिये जो ८० दिनके ५० दिन मान्य करेंगे तब तो अधिक मासके ३० दिनोंमें देवपूजा मुनिदानावश्यकादि कुछ भी धर्मकर्म करनाही नहीं बनेगा और अधिक मासके ३० दिनोंमें धर्मकर्म करना तीनों महाशय मंजूर करेंगे तो अधिक मासके ३० दिनका धर्मकर्म गिनतीमें आजावेगा तब तो दो श्रावण हनेसे भाद्रपद तक ८० दिन होते है जिसका निषेधकरनाही नही बनेगा और ८० दिने पर्युषणा करनी सो भी शास्त्रोंके प्रमाण विना होनेसे जिनाज्ञा विरुद्ध तीनों महाशयोंके वचनसे भी सिद्ध होगई—इस बातको पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विशेष स्वयं विचार लेना ,—

और आगे फिरभी तीनों महाशयोंनें अभिवर्द्धित

संवत्सरमें वीश दिने पर्युषणा होतीथी उसीको गृहस्थी लोगोंके करने मात्रही ठहरानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णिका दशवा उद्देशाके पर्युषणा विषयका आगे पीछेका संबंधको छोड़कर चूर्णिकार महाराजके विरुद्धार्थ में सिर्फ दो पद, लिखके वृथा परिश्रम करके बड़ी भूल किवी हैं क्योंकि जो आषाढ़पूर्णिमाको पर्युषणा कही हैं सो गृहस्थी लोगके न जानी हुई, अप्रसिद्ध तथा अनिश्चयसे होती हैं उसमें लोचादिकृत्य करनेका कोई नियम नही हैं परन्तु वीशे, और पचासे, गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई प्रसिद्ध निश्चय पर्युषणा होती है उसीमें लोचादिकृत्योंका नियम है इस लिये वीश दिनकी भी पर्युषणा वार्षिक कृत्योंसे होती थी इसका विशेष विस्तार उपरमें पहिले अनेक जगह छपगया है और श्रीनिशीथचूर्णिके १० वे उद्देशेका पर्युषणा संबंधी संपूर्ण पाठ भी उपरमे पृष्ठ ८५ से ९९ तक और भावार्थ १०० से १०४ तक छपगया है और आगे पृष्ठ १०६ से यावत् ११७ तक उसी बातके लिये अनेक शास्त्रोंके प्रमाणसे और युक्तिपूर्वक विस्तारसे छपगया है सो पढ़नेसें सर्व निर्णय होजावेगा और आगे लौकिकमें दीवाली, अक्षय-तृतीयादि पर्व वगैरह तथा अन्यभी सर्व शुभकार्य्य अधिक मासको नपुंशक कहके ज्योतिषशास्त्रमें वर्जन किये हैं और अधिक मास में वनस्पति प्रफुल्लित नही होती है, इत्यादि बाते जो जो तीनों महाशयोंने लिखी हैं सो निःकेवल शास्त्रकारोंके अभिप्रायःकों जाने विना विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप भोले जीवोंको अपने फन्दमें फसानेके लिये लिखके मिथ्यात्वके कारणमें वृथा परिश्रम

समय खोया है और आपका तथा आपके लेखको
माननेवालोंका संसार वृद्धिका कारणभी खुब किया है
न सब बातोंका जबाब शास्त्रोंके प्रमाणसें शास्त्रकार
ाज के अभिप्रायः समेत तथा न्यायपूर्वक युक्ति सहित
। तरहनें खुलासाके साथ आगे चौथे महाशय श्रीन्यायां-
धिजी और सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नाम
करनेमें आवेगा,—

परन्तु इस जगह निष्पक्षपाती सत्यग्राही श्रीजिनेश्वर
नकी आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषोंसें थोड़ीसी वार्त्ता
कर पीछे तीनों महाशयोंकी समीक्षाको पूर्ण करूंगा
ार्त्ता अब सुनो ;—

तीनों महाशयोंने श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठकी [अंतरा
ो कप्पइ नोसे कप्पइ तं रयणिं उवायणा वित्तएति] इस
ी व्याख्या [अर्वागपि कल्पे परं न कल्पेतां रात्रिं (रजनीं)
नइशुक्लपञ्चमी उवायणा वित्तएति अतिक्रमीतु इत्यादि]
या खुलासा पूर्वक किवी हैं जिसमें। प्रथम। आषाढ़-
सीसें पचास दिनके अंदरमें कारणयोगे पर्युषणा करना
परन्तु पचासवें दिनकी भाद्रपदशुक्लपञ्चमीकी रात्रिको
न करना नही कल्पे। तथा दूसरी। पाँच पाँच
की वृद्धि करते दशवें पञ्चकमें पचास दिने पर्युषणा
पञ्चाङ्गानुसार मासवृद्धिके अभावसें लिखी। और
ी। जैन पञ्चाङ्गानुसार एक युगमें पोष और आषाढ़ दो
की वृद्धि होनेसें वीशदिने पर्युषणा लिखी। और चौथी।
वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्गके अभावसें लौकिक-
ङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होती है इसलिये आषाढ़

चौमासीसें पचास दिने पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी आज्ञा है। इस तरहसें तीनों महाशयोंनें चार प्रकारसें खुलासा लिखा है इस पर बुद्धिजन पुरुष तत्त्वग्राही होके विचार करो कि प्राचीनकालमें पाँच पाँच दिनकी वृद्धि करते दशवें पञ्चकमें पचास दिने मासवृद्धिके अभावसें जैन पञ्चाङ्गानुसार भाद्रपदशुक्लपञ्चमी परन्तु श्रीकालकाचार्य्यजीसें चतुर्थीको पर्युषणा होती है परन्तु अब लौकिकपञ्चाङ्गमें हरेक मासकी वृद्धि होनेसें श्रावणभाद्रपदादि मास भी बढ़ने लगे इसलिये मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करनेकी पूर्वाचार्योंकी आज्ञा हुई तब मासवृद्धि होते भी भाद्रपदमेंही पर्युषणा करनेका नियम नही रहा किन्तु दो श्रावण होनेसें दूजा श्रावणमें और दो भाद्रपद होनेसें प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनेका नियम इस वर्त्तमानिक कालमें रहा जिससें दो श्रावण तथा दो भाद्रपद और दो आश्विन मास होनेसें पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिनका भी नियम नही रहा अर्थात् मासवृद्धि होनेसें पर्युषणाके पीछाड़ी १०० दिन श्रीतपगच्छकेही पूर्वजोंकी आज्ञानुसार रहते हैं यह तात्पर्य तीनों महाशयोंके लिखे वाक्य परसें सूर्य्यकी तरह प्रकाश कारक निकलता हैं सो न्यायकीही बात है इस बातको अपने पूर्वजोंकी आशातनासें डरनेवाला कोई भी प्राणी निषेध नही कर सकता है तथापि इन तीनों महाशयोंने अपनी विद्वत्ताकी बात जमानेके लिये खास अपनेही पूर्वजोंका उपरोक्त वाक्यको जड़ मूलसेंही उठाकर अपने पूर्वजोंकी आज्ञा लोपते हुवे दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका और मासवृद्धि

होते भी पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रखनेका झगड़ा उठाया—

और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि पूर्वधर पूर्वाचार्य्य और प्राचीन सब गच्छोंके पूर्वाचार्य्य जिसमें श्रीतपगच्छकेही पूर्वज पूर्वाचार्य्यादि महाराजोंने अधिक मासको प्रमाण किया था सो इन तीनों महाशयोंने उपरोक्त महाराजोंकी आशातनाका भय न रखते हुए अधिकमासको निषेध कर दिया और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने जैसे सुमेरु पर्वतके उपर चालीशयोजनके शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोंके शिखरोंको और देव मन्दिरादिकके शिखरोंको क्षेत्र चूलाकी उत्तम ओपमा कही है तैसेही चंद्रसंवत्सरके बारह मासोंके उपर शिखररूप तेरह वा अधिकमासको भी कालचूलाकी उत्तम ओपमा देकर गिनतीमें लिया था जिसको इन तीनों महाशयोंने धर्मकार्यों की गिनतीमें निषेध करने के लिये अधिकमास को नपुंशकादि हलकी ओपमा देकर श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी विशेष बड़ी भारी आशातना किवी हैं और अपनी बात जमाने के लिये श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्र की चूर्णि तथा श्रीनिशीथचूर्णि और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठ लिखके दृष्टि रागियोंको दिखाये थे सोभी शास्त्रकार महाराज के विरुद्धार्थ में तथा उन्ही तीनों शास्त्रोंमें अधिकमास को अच्छी तरहसें प्रमाण कियाथा तथापि इन तीनों महाशयोंने उन्ही तीनों शास्त्रोंके पाठोंको जड़ मूलसें ही उत्थापन करके अधिक-मासको निषेध कर दिया और मासवृद्धिके अभावसें पचास दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही थी तब पर्युषणाके पीछाड़ी ७०

दिन भी स्वभाविक रहते थे तथापि इन तीनों महाशयोंने उत्सूत्र भाषणरूप मासवृद्धि होनेसें वर्तमानिक दो श्रावण होते भी भाद्रपद में पर्युषणा और पीछाड़ी के ७० दिन शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध हो करके स्थापन किये और तीनों महाशय खास आप भी स्वयं एक जगह अधिकमास को कालचूला की उत्तम ओपमासें लिखते हैं दूसरी जगह नपुंशककी तुच्छ ओपमासें लिखते हैं आगे और भी एक जगह अधिकमासके ३० दिनोंका धर्मकर्मको गिनती में लेते हैं दूसरी जगह ३० दिनोंको ही सर्वथा निषेध करते है इसी तरहसें कितनी ही जगहपूर्वापरविरोधी (विसम्वादी) उटपटांगरूप वाक्य लिखके गच्छपक्षी जनोंकी शास्त्रानुसार की सत्य बात परसें श्रद्धा छोड़ा कर शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें मिथ्यात्वरूप कदाग्रहमें गेर दिये तथा आगे अनेक जीवोंको गेरनेका कार्य कर गये हैं इसलिये खास तीनों महाशयोंकी और उन्होंके शास्त्र विरुद्ध लेखको सत्य मान्यकर उसी तरहसें अधिक मासकी निषेधरूप मिथ्यात्वके पीष्ट पेषणको पीसते रहेंगे जिससें भोले जीव भी उसीमें फसते रहेंगे उन्होंकी आत्माका कैसे सुधारा होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने तथा और भी थोड़ासा सुन लिजिये श्रीभगवतीजी सूत्रमें १ और तत् वृत्तिमें २ श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रमें ३ और तीनकी छ व्याख्यायोंमें ९ श्रीदशवैकालिक सूत्रमें १० और तीनकी चार व्याख्यायोंमें १४ श्रीधर्मरत्न-प्रकरणवृत्तिमें १५ श्रीसङ्घपट्टक वृहत् वृत्तिमें १६ श्रीश्राद्ध-विधिवृत्तिमें १९ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें उत्सूत्रभाषक श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वाचार्यादि परम गुरुजन महा-

राजोंकी आशातना करने वाला और उन्हीं महाराजोंका वाक्यको न मानता हुवा उत्थापन करने वाला प्राणीको यावत् दुर्ल्लभवोधि मिथ्यात्वी अनन्त संसारी कहा है तैसे ही न्यायांभोनिधिजी श्रीआत्मारामजीने भी अज्ञान तिमिरभास्कर ग्रन्थके पृष्ठ ३२०में लिखा है—छठ दशम द्वादसे हिं, मासद्धमासखमणे हिं। अकरन्तो गुरुवयणं, अनन्त संसारिओ भणिओ ॥ १ ॥ तथा और भी पृष्ठ २९५ का लेख इसी ही पुस्तकके पृष्ठ ७९ और ८०, में छपगया है इससे भी पाठकवर्ग विचार करो कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्व-धरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी इन तीनों महाशयोंने अधिकमासको निषेध करने के लिये कितनी वड़ी आशातना करके कितने शास्त्रोंके पाठोंको उत्थापन किये है तो फिर इन तीनों महाशयोंमें अनन्त संसारका हेतु रूप मिथ्यात्वके सिवाय सम्यक्त्वका लेश मात्र भी कैसे सम्भव होगा क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्व-धरादि पूर्वाचार्योंकी आशातना करने वाला तथा आज्ञा न मानने वाला और उलटा उन्ही महात्माओंके वचनोंका उत्थापन करने वालाको जैन शास्त्रोंके जानकार बुद्धिजन पुरुष सम्यक्त्वी नही समझ सकते हैं इसलिये अब पाठक वर्ग पक्षपातका दृष्टिरागको छोड़कर और श्रीजिनेश्वर भग-वान् की आज्ञानुसार सत्य वातके ग्रहण करनेकी इच्छा रखकर उपरकी वार्ताको अच्छी तरहसें पढ़के सत्यासत्यका निर्णय करके असत्यको छोड़ो और सत्यको ग्रहण करो यही मोक्षाभिलाषि भवभिरु पुरुषोंसें मेरा कहना है—

और प्रथम श्रीधर्मसागरजीनें श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिमें

दिन भी स्वभाविक रहते थे तथापि इन तीनों महाशयोंने उत्सूत्र भाषणरूप मासवृद्धि होनेसें वर्तमानिक दो श्रावण होते भी भाद्रपद में पर्युषणा और पीछाड़ी के ७० दिन शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध हो करके स्थापन किये और तीनों महाशय खास आप भी स्वयं एक जगह अधिकमास को कालचूला की उत्तम ओपमासें लिखते हैं दूसरी जगह नपुंशककी तुच्छ ओपमासें लिखते हैं आगे और भी एक जगह अधिकमाके ३० दिनोंका धर्मकर्मको गिनती में लेते हैं दूसरी जगह ३० दिनोंको ही सर्वथा निषेध करते है इसी तरहसें कितनी ही जगहपूर्वापरविरोधी (विसम्वादी) उटपटांगरूप वाक्य लिखके गच्छपक्षी जनोंको शास्त्रानुसार की सत्य वात परसें श्रद्धा छोड़ा कर शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें मिथ्यात्वरूप कदाग्रहमें गेर दिये तथा आगे अनेक जीवोंको गेरनेका कार्य कर गये हैं इसलिये खास तीनों महाशयोंकी और इन्होंके शास्त्र विरुद्ध लेखको सत्य मान्यकर उसी तरह सें अधिक मासकी निषेधरूप मिथ्यात्वके पीष्ट पेषणको पीसते रहेंगे जिससें भोले जीव भी उसीमें फसते रहेंगे उन्होंकी आत्माका कैसे सुधारा होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने तथा और भी थोड़ासा सुन लिजिये श्रीभगवतीजी सूत्रमें १ और तत् वृत्तिमें २ श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रमें३ और तीनकी छ व्याख्यायोंमें ९ श्रीदशवैकालिक सूत्रमें१० और तीनकी चार व्याख्यायोंमें १४ श्रीधर्मरत्नप्रकरणवृत्तिमें १५ श्रीसङ्घपट्टक वृहत् वृत्तिमें १६ श्रीश्राद्धविधिवृत्तिमें १९ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें उत्सूत्रभाषक श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वाचार्य्यादि परम गुरुजन महा-

राजोंकी आशातना करने वाला और उन्हीं महाराजोंका वाक्यको न मानता हुवा उत्थापन करने वाला प्राणीको यावत् दुर्लभबोधि मिथ्यात्वी अनन्त संसारी कहा है तैसे ही न्यायांभोनिधिजी श्रीआत्मारामजीने भी अज्ञान तिमिरभास्कर ग्रन्थके पृष्ठ ३२०में लिखा है—छठ दशम द्वादसेहिं, मासद्धमासखमणे हिं। अकरन्तो गुरुवयणं, अनन्त संसारिओ भणिओ ॥ १ ॥ तथा और भी पृष्ठ २९५ का लेख इसी ही पुस्तकके पृष्ठ ७९ और ८०, में छपगया है इससे भी पाठकवर्ग विचार करो कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्व-धरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी इन तीनों महाशयोंने अधिकमासको निषेध करने के लिये कितनी बड़ी आशातना करके कितने शास्त्रोंके पाठोंको उत्थापन किये है तो फिर इन तीनों महाशयोंमें अनन्त संसारका हेतु रूप मिथ्यात्वके सिवाय सम्यक्त्वका लेश मात्र भी कैसे सम्भव होगा क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्व-धरादि पूर्वाचार्य्योंकी आशातना करने वाला तथा आज्ञा न मानने वाला और उलटा उन्ही महात्माओंके वचनोंका उत्थापन करने वालाको जैन शास्त्रोंके जानकार बुद्धिजन पुरुष सम्यक्त्वी नही समझ सकते हैं इसलिये अब पाठक वर्ग पक्षपातका दृष्टिरागको छोड़कर और श्रीजिनेश्वर भग-वान् की आज्ञानुसार सत्य बातके ग्रहण करनेकी इच्छा रखकर उपरकी वार्ताको अच्छी तरहसें पढ़के सत्यासत्यका निर्णय करके असत्यको छोड़ो और सत्यको ग्रहण करो यही मोक्षाभिलाषि भवभिरू पुरुषोंसें मेरा कहना है—

और प्रथम श्रीधर्मसागरजीनें श्रीकल्पकिरणावलीवृत्तिमें

तथा दूसरे श्रीजयविजयजीनें श्रीकल्पदीपिका वृत्तिमें और तीसरे श्रीविनयविजयजीनें श्रीसुखबोधिकावृत्ति में इन तीनों महाशयोंनें श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप अपने हठवादके कदाग्रहको जमानेके लिये जो जो बाते लिखी है उन बातोंको श्रीतपगच्छके वर्त्त-मानिक मुनिजनादि गांम गांममें हर वर्ष पर्युषणामें भोले जीवोंको सुनाते हैं जिससे आत्मसाधनका धर्मके बदले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वकी श्रद्धामें गिरके श्रीतीर्थंङ्कर गण-धरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घन करके बड़ी आशातना ˜ हुए दुर्लभ बोधिका साधन करनेके कारणमें पड़ते हैं विषयके सम्बन्धी प्रथम श्रीधर्मसागरजीने बड़ी धूर्त्ताई ˜ श्रीतपगच्छमें पर्युषणा संबन्धी अधिकमासको निषेध करनेके लिये श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें प्रथमही मिथ्या-त्वकी निव लगाई है इस बातका खुलासा [आठो ही . उत्सूत्र भाषणके लेखोंकी समीक्षा हुवे बाद] अन्तमें विस्तारपूर्वक लिखुंगा और इन तीनों महाशयोंने इस तरहसें मायावृत्तिका लेख लिखा है कि जिसमें भोले जीव तो फसे उसमें कोई आश्चर्य नही है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् होते भी फस गये और उन्होंकी तरह श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशा-तनाका कारणरूप और पूर्वापर विरोधि अधिक मासका निषेध आपभी आगेवान होकर कराया है इसलिये अब इन्होंके लेखकी भी समीक्षा आगे करता हुं—

॥ इति तीनों महाशयों के नामकी संक्षिप्त समीक्षा ॥

अब आगे चौथे महाशय न्यायांभोनिधिजी श्रीआत्मा-रामजीनें, जैनसिद्धांतसमाचारी, नामा पुस्तक में पर्युषणा सम्ब-न्धी लेख लिखाया है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हुं ;—जिसमें प्रथम श्रीखरतरगच्छके श्रावक रायबहादुर मायसिंहजी मेघराजजी कोठारी श्रीमुर्शिदाबाद अझीमगञ्ज निवासीकी तरफसें, शुद्धसमाचारी, नामा पुस्तक छपके प्रसिद्ध हुई थी, जिसमें श्रीतीर्थंकर गणधर, चौदहपूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके अनेक शास्त्रोंके पाठों करके सहित और युक्ति पूर्वक देश कालानु-सार श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञा मुजब अनेक सत्य बातों को प्रगट किवी थी, जिसको पढने सें श्रीन्यायांभोनिधिजी तथा उन्होंके सम्प्रदायवाले मुनिजन और उन्होंके दृष्टिरागी श्रावकजन समुदाय सत्यबातको ग्रहण तो न कर सके परन्तु अंतर मिथ्यात्व और द्वेषबुद्धिके कारणसें उसका खण्डन करनेके लिये अनेक शास्त्रोंके आगे पीछे के पाठोंको छोड़कर शास्त्र-कार महाराजके विरुद्धार्थ में उलटा संबंध लाकर अधूरे अधूरे पाठ लिखके शुद्धसमाचारी कारकी सत्य बातोंका खण्डन किया और अपनी मिथ्या बातोंको उत्सूत्र भाषण-रूप स्थापन किवी जिसके सब बातोंकी समालोचनारूप समीक्षा करके उसमें शास्त्रोंके सम्पूर्ण सम्बन्धके सब पाठ तथा शास्त्रकार महाराजके अभिप्रायः सहित और युक्ति पूर्वक भव्य जीवोंके उपगारके लिये इस जगह लिखके न्यायांभोनि-धिजीके न्यायान्यायका विचारको प्रगट करना चाहुं तों जरूर करके अनुमान ६०० अथवा ७०० पृष्ठका बडा भारी-एक ग्रन्थ बन जावे परन्तु इस जगह विस्तारके कारणसें और हमारे विहारका समय नजिक आनेके सबबसें सब न

तथा दूसरे श्रीजयविजयजीनें श्रीकल्पदीपिका वृत्तिमें और तीसरे श्रीविनयविजयजीनें श्रीसुखबोधिकावृत्ति में इन तीनों महाशयोंनें श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप अपने हठवादके कदाग्रहको जमानेके लिये जो जो बाते लिखी है उन बातोंको श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक मुनिजनादि गांम गांममें हर वर्ष पर्युषणामें भोले जीवोंको सुनाते हैं जिससें आत्मसाधनका धर्मके बदले जिनाज्ञा विरुद्ध मिथ्यात्वकी श्रद्धामें गिरके श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घन करके बड़ी आशातना करते हुए दुर्लभ बोधिका साधन करनेके कारणमें पड़ते हैं इस विषयके सम्बन्धी प्रथम श्रीधर्मसागरजीने बडी धूर्त्ताई करके श्रीतपगच्छमें पर्युषणा संबन्धी अधिकमासको निषेध करनेके लिये श्रीकल्पकिरणावली वृत्तिमें प्रथमही मिथ्यात्वकी निव लगाई है इस बातका खुलासा [आठों ही महाशयोंके उत्सूत्र भाषणके लेखोंकी समीक्षा हुवे बाद] अन्तमें विस्तारपूर्वक लिखुगा और इन तीनों महाशयोंने इस तरहसें मायावृत्तिका लेख लिखा है कि जिसमें भोले जीव तो फसे उसमें कोई आश्चर्य नही है परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् होते भी फस गये और उन्होंकी तरह श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातनाका कारणरूप और पूर्वापर विरोधि अधिक मासका निषेध आपभी आगेवान होकर कराया है इसलिये अब इन्होंके लेखकी भी समीक्षा आगे करता हुं—

॥ इति तीनों महाशयों के नामकी संक्षिप्त समीक्षा ॥

अब आगे चौथे महाशय न्यायांभोनिधिजी श्रीआत्मा-रामजीनें, जैनसिद्धांतसमाचारी, नामा पुस्तक में पर्युषणा सम्ब न्धी लेख लिखाया है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हुं ;—जिसमें प्रथम श्रीखरतरगच्छके श्रावक रायबहादुर मायसिंहजी मेघराजजी कोठारी श्रीमुर्शिदाबाद अझीमगञ्ज निवासीकी तरफसें, शुद्धसमाचारी, नामा पुस्तक छपके प्रसिद्ध हुई थी, जिसमें श्रीतीर्थंकर गणधर, चौदहपूर्वधरादि पूर्वाचार्योंके अनेक शास्त्रोंके पाठों करके सहित और युक्तिपूर्वक देश कालानु-सार श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञा मुजब अनेक सत्य बातों को प्रगट किवी थी, जिसको पढने सें श्रीन्यायांभोनिधिजी तथा उन्होंके सम्प्रदायवाले मुनिजन और उन्होंके दृष्टिरागी श्रावकजन समुदाय सत्यबातको ग्रहण तो न कर सके परन्तु अंतर मिथ्यात्व और द्वेषबुद्धिके कारणसें उसका खण्डन करनेके लिये अनेक शास्त्रोंके आगे पीछे के पाठोंको छोड़कर शास्त्र-कार महाराजके विरुद्धार्थ में उलटा संबंध लाकर अधूरे अधूरे पाठ लिखके शुद्धसमाचारी कारकी सत्य बातोंका खण्डन किया और अपनी मिथ्या बातोंको उत्सूत्र भाषण-रूप स्थापन किवी जिसके सब बातोंकी समालोचनारूप समीक्षा करके उसमें शास्त्रोंके सम्पूर्ण सम्बन्धके सब पाठ तथा शास्त्रकार महाराजके अभिप्रायः सहित और युक्तिपूर्वक भव्य जीवोंके उपगारके लिये इस जगह लिखके न्यायांभोनि-धिजीके न्यायान्यायका विचारको प्रगट करना चाहुं तो जरूर करके अनुमान ६०० अथवा ७०० पृष्ठका बडा भारी-एक ग्रन्थ बन जावे परन्तु इस जगह विस्तारके कारणसें और हमारे विहारका समय नजिक आनेके सबबसें सब न

लिखते थोडासा नमुनारूप पर्युषणाके सम्बन्धी लेखकी समीक्षा करके लिख दिखाता हुं—जिसमें पहिले जो कि—शुद्ध समाचारी पुस्तकके बनानेवालेनें पर्युषणा सम्बन्धी लेख लिखा है उसीको इस जगह लिखके फिर उसीका खण्डन जैनसिद्धान्तसमाचारी में न्यायांभोनिधिजीने कराया है उसीको लिख दिखाकर उसपर मेरी समीक्षा को लिखुंगा सो आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको दृष्टिरागका पक्षको न रखते न्याय दृष्टिसें पढ़कर सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित हैं ;—अब शुद्धसमाचारी कारके पर्युषणा सम्बन्धी लेखका पृष्ठ १५४ पंक्ति १३ वी से पृष्ठ १६० की पंक्ति ७ वी तकका (भाषाका सुधारा सहित) उतारा नीचे मुजब जानो ;—

शिष्य प्रश्नः करता है कि अपने गच्छमें जो श्रावणमास बढ़े तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रपद बढ़े तो प्रथम भाद्रव शुदीमें, आषाढ़ चौमासीसें, ५० में दिनही पर्युषणा करना, परन्तु ८० अशीमें दिन नहीं करना ऐसा कोई सिद्धान्तोंमें प्रमाण हैं ।

उत्तर—श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजनें अपनी ११ मी समाचारीके विषे कहा है (तथाहि) सावणे भद्दवए वा, अहिग मासे चाउम्मासीओ ॥ पणासइमेदिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे इति ॥ भावार्थः श्रावण और भाद्रपद मास, अधिक हो तो आषाढ़ चौमासीकी चतुर्दशीसें पचाश दिने पर्युषणा करना परन्तु अशीमें दिन न करना ।

प्रश्नः—जो अधिकमास होनेसें अशीमे दिन पर्युषणा सांवत्सरिक पर्व करते हैं तिसका पक्षको किसीने कोई ग्रन्थमें दूषित भी किया है या नहीं ।

उत्तर—श्रीजिनवल्लभसूरिजी कृत संघपट्टेकी श्रीजिनपतिसूरीजी कृत वृहद्वृत्तिमें ८० दिने पर्युषणा करने वालोंके पक्षको जिन वचन बाधाकारी कहा है सोई काव्य लिखते हैं यथा—वृद्धौ लोक दिशा नभस्य नभसोः, सत्यां श्रुतोक्तं दिनं॥ पञ्चासं परिहृत्य ही शुचिभयात्, पञ्चाच्चतुर्मासकात् ॥ तत्राशीतितमे कथं विदधते, मूढ़ाग्रहं वार्षिकं ॥ कुग्रहाधिगणस्य जैन वचसो, बाधां मुनि व्यंसकाः ॥ १ ॥

भावार्थः—लौकिक रीतिसें श्रावण और भाद्रपद मास अधिक होता है जब शास्त्रोंमें आषाढ़ चतुर्मासीसें पचास दिने पर्युषणापर्व करनेका कहा है जिसको छोड़कर मूढ़ लोग अपना कदाग्रहसें ८० दिने क्यों करते हैं क्योंकि ८० दिने पर्युषणा करनेसें जिन वचनको बाधा आती है याने शास्त्र विरुद्ध होता है जिसको नही गिनते हैं इस लिये ८० दिने पर्युषणा करनेवाले लिङ्गधारी चैत्यवासी हठग्राही मुनिजन सच्चे ठग धूतारे हैं।

प्रश्नः—कैसे तिसका पक्ष जिन वचन बाधाकारी है।

उत्तर—श्रवण करो, प्रथम तो श्रावण और भाद्रव मासकी जैन सिद्धान्तकी अपेक्षायें वृद्धिका ही अभाव है केवल पौष और आषाढ़की वृद्धि होती थी और इस समयमें लौकिक टिप्पणाके अनुसारे हरेक मास वृद्धि होनेसें श्रावण और भाद्रपद मासकी भी वृद्धि होती है तब उनोकी वृद्धि होनेसें भी दशपञ्चके अर्थात् आषाढ़ चौमासीसें पचास दिने ही पर्युषणा करना सिद्ध होता है। सोई श्रीमान् चौदह पूर्वधारी श्रीभद्रबाहुस्वामीजी श्रीकल्पसूत्रके विषे कहते हैं। यथा—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं

महावीरे वासाणं सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते वासावासं पज्जोसवेइ ।

भावार्थः—आषाढ़ चौमासीसें वीश दिन अधिक, एक मास अर्थात् ५० दिन जानेसें, श्रीमहावीर स्वामी पर्युषणा करे। इसी तरहसें बृहत् कल्पचूर्णिके विषे, दशपञ्चके पर्युषणा करना कहा है। यथा—आसाढ चउमासे पडिक्कन्ते, पंचेहिं पंचेहिं दिवसेहिं गएहिं, तत्थ २ वासजोग्गं खेत्तं पडिपुन्नं। तत्थ २ पज्जोसवेयव्वं। जाव सवीसइ राइमासो इत्यादि।

भावार्थः—आषाढ़ चौमासी प्रतिक्रमण किये बाद पांच पांच दिन व्यतीत करते जहां जहां वर्षावास योग्य स्थान प्राप्त होय। वहां वहां पर्युषणा करें, यावत् दशपञ्चक एक मास और वीश दिन तक पर्युषणा करें। और दशमा पंचकमें अर्थात् पचासमें दिन तो योग्यक्षेत्र नहीं मिले तो वृक्षके नीचे भी रहकर पर्युषणा करें, इसी तरह श्रीसमवायाङ्गजी सूत्र तथा वृत्तिके विषे ७०वे समवायाङ्गमें कहा है। तथाहि। समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते सत्तरिएहिं राइदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ।

भावार्थः—श्रमण भगवन् श्रीमहावीर स्वामीजी वर्षाकालके एकमास और वीश दिन गए बाद पर्युषणा करें। इसलिये पचास दिने करके ही पर्युषणा करना अवश्य है और पीछाडी ७० दिन कहे सो मास वृद्धिके अभावसें न कि मासवृद्धि होते भी। और ऐसा भी न कहना कि मासवृद्धि होनेसें अधिक मास गिनतीमें न आता है क्योंकि वृहत् कल्पभाष्य तथा चूर्णिके विषे, अधिक

मासकी गिनती प्रमाण किवी है। और ऐसा भी न कहना कि ज्योतिषादिक ग्रन्थोंमें प्रतिष्ठादिक शुभकार्य्य निषेध किया है तो पर्युषणा पर्व कैसें हुवें सो तो नार चन्द्रादिक ज्योतिष ग्रन्थोंमें, लग्न, दीक्षा, स्थापना, प्रतिष्ठादिकार्य्य कितनेही कारणोंसें निषेध किये है नारचन्द्र द्वितीय प्रकरणे यथा ॥ रविक्षेत्र गतेजीवे, जीवक्षेत्र गते रवौ। दिक्षां स्थापनांचापि, प्रतिष्ठां च न कारयेत् ॥१॥ इसवास्ते अधिक मासमें पर्युषणा करनेका निषेध किसी जगह भी देखनेमें नही आता है। इसी कारण सें पूर्वोक्त प्रमाणोंसें श्रावण मासकी वृद्धि होनेसें दूसरे श्रावण शुदी ४ कों और भाद्रव मासकी वृद्धि होनेसें पहिले भाद्रव शुदी ४ चौथकों पर्युषणापर्व ५० पचास दिने करना सिद्ध होता है परन्तु अशीमें दिने नहीं। एस्थल अति गम्भीरार्थका है मैंने तो पूर्वगीतार्थ प्रतिपादित सिद्धान्ताक्षरों करके और युक्ति करके लिखा है इस उपरान्त विशेष तत्त्व केवली महाराज जानें, जो ज्ञानी भाव देखा है, सो सच्चा है और सर्व असत्य है। मेरे इसमें कोई तरहका हठवाद नहीं, इति श्रावण और भाद्रपद वढ़ते पचास दिने पर्युषणा करणाधिकारः ॥——

अब पाठकवर्ग उपरका लेख शुद्धसमाचारी प्रकाशनामा ग्रन्थका पढके विचार करोकी लेखकपुरुषनें कैसी सरलरीतिसें लिखा है और अन्तमें किसी गच्छवालेकों दूषित न ठहराते, (विशेष तत्त्व केवली महाराज जानें जो ज्ञानी भाव देखा है सो सच्चा है और सर्व असत्य है मेरे इसमें कोई तरहका हठवाद नही है) ऐसा लिखनेसें लेखक पुरुष पं० प्र० यतिजी

श्रीरायचन्द्रजी न्यायमुक्त निष्पक्षपाती भवभिरू थे सो तो पाठकवर्ग भी विशेष विचार सकते हैं और उपरके लेखमें श्रीमद्गुपट्टक वृहत् वृत्तिका जो श्लोक लिखा है सो श्रीतप-गच्छवालोंके लिये वृत्तिकार महाराजने नहीं लिखा था, तथापि श्रीतपगच्छवालोंके लिये उपरोक्त श्लोक समझते है उन्होंके समझ में फेर है क्योंकि श्रीमद्गुपट्टक की वृहद्वृत्ति सम्वत् १२५७ के लगभग बनी थी उसी वख्त तपगच्छही नहीं हुवा था क्योंकि श्रीचैत्रवालगच्छके श्रीजगच्चन्द्रसूरिजी महाराजसें सम्वत् १२८५ वर्षे तपगच्छ हुवा है और श्रीतप-गच्छके पूर्वाचार्य जितने हुवे है सो सबीही अधिक मासको गिनतीमें मान्य करनेवाले तथा ५० दिने पर्युषणा करनेवाले थे इसलिये उपरका श्लोक श्रीतपगच्छवालोंके लिये नहीं हैं किन्तु उस समयमें कदाग्रहीशिथिलाचारी उत्सूत्रनायक चैत्य-वासी बहुत थे वे लोग शास्त्रोंके प्रमाण विनाभी ८० दिने पर्युषणा करते थे और भी श्रीचन्द्रपन्नति श्रीसूर्यपन्नति श्री जम्बूद्वीपपन्नति श्रीसमवायाङ्गजी वगैरह अनेक सूत्रवृत्ति चूर्ण्यादि शास्त्रानुसार और अन्यमतके भी ज्योतिष मुजब थे चैत्यवासीजन प्रायःकरके ज्योतिषशास्त्रोंके विशेष जान कार थे, इसलिये अधिक मासकी उत्पत्तिका कारण कार्या-दिकको जानते हुये अधिक मासको अङ्गीकार करनेवाले थे तथापि मिथ्यात्वरूप अज्ञानदशाके हठवादसें लौकिकपञ्चाङ्ग में दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा चैत्यवासी लोग करते थे जिससें ८० दिन होते थे उन्होंके लिये उपरका श्लोक लिखा गया है नतु कि श्रीतपगच्छवालोंके लिये ।

अब उपरोक्त शुद्ध समाचारीप्रकाशका लेखपर जो न्यायां-

भोनिधिजीनें जैनसिद्धान्त समाचारीमें उसीका खण्डन कराया है उसीको लिखके दिखाकर उसीके साथसाथमें मेंभी समीक्षा न्यायांभोनिधिजीके नामसें करता हुं जिसका कारण पृष्ठ ६६।६७।६८ में इसी ही पुस्तक में छपा हैं इसलिये न्यायांभोनिधिजीके नानसें ही समीक्षा करना मूजे उचित है सो करता हुं—जैनसिद्धांत समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ८७ की पंक्ति२२ वीसें पृष्ठ ८८ की पंक्ति१० वी तक का लेख नीचे मुजब जानो—शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५४ पंक्ति१४ में लिखा हैं कि [श्रावण मास वढ़े तो दूसरे श्रावणशुदी में और भाद्रव मास वढ़े तो प्रथम भाद्रव शुदीमें अषाढ चौमासी सें ५० में दिन ही पर्युषणा करनी परन्तु ८० अशीमें दिन नही करनी, ऐसा लिखके पृष्ठ १५५में अपनेही गच्छके श्रीजिनपति सूरिजी की रचित समाचारीका प्रमाण दिया है आगे इसी पृष्ठके पंक्ति११ में लिखा हे कि तिसका पक्षको कोई ने कोई ग्रन्थमें दूपित भी किया है वा नहीं, इसके उत्तरमें श्रीजिनवल्लभ सूरिजीके सङ्घपट्टे की वडी टीकाकी शाक्षी दिवी हैं—(इस तरहका लेख शुद्ध समाचारी प्रकाशकी पुस्तक सम्बन्धी लिखके न्यायाम्भोनिधिजी अब उपरके लेखका लिखते हैं) उत्तर—हे मित्र ! इस लेखसें आपकी सिद्धि कभी न होगी क्योंकि तुमने अपने गच्छका मनन दिखाके अपनेही गच्छका प्रमाण पाठ दिखाया हैं यह तो ऐसा हुवा कि किसी लड़केने कहा कि मेरी माता सति है शाक्षी कौन कि मेरा भाई इस वास्ते यह आपका लेख प्रमाणिक नही हो सकता है ।]

अब हम उपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि हे सज्जन पुरुषों जैसे शुद्ध समाचारी कारनें अपना कार्य्यसिद्ध करनेके

लिये अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्यजी श्रीजिनपति सूरिजी कृत ग्रन्थका पाठ दिखाया है उसको श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अप्रमाण ठहराते हैं इस न्यायानुसार तो श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें अपना कार्यसिद्ध करनेके लिये अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंके पाठ दिये हैं यह सर्व पाठ अप्रमाण ठहरनेसें श्रीन्यायाम्भोनिधिजीको अपने पूर्वाचार्य्योंका पाठ लिख दिखाना भी सर्व वृथा होगया तो फिर जैनसिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ३१ वा में श्रीधर्मघोष सूरिजी कृत श्रीसङ्घाचार भाष्यवृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३३ में श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३३। ४६। ५२। ५९। ६३, में श्रीरत्नशेखरसूरिजीकृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमणसूत्र वृत्तिका पाठ, पृष्ठ ३५ में श्रीजयचन्द्रसूरिजी कृत श्रीप्रतिक्रमण-गर्भहेतु नामा ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ४१ में श्रीविजयसेन सूरिजीका प्रश्नोत्तर ग्रन्थका पाठ, और पृष्ठ ५१। ६१ में श्री कुलमण्डन सूरिजी कृत विचारामृतसंग्रहका पाठ, इत्यादि अनेक जगह ठाम ठाम अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंका प्रमाण श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें लिखके वृथा क्यों अन्याय किया होगा सो पाठकवर्ग भी विचार लेना ॥

अब दूसरा सुनो—श्रीन्यायाम्भोनिधिजी जैनसिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ १२ में श्रीखरतरगच्छके श्रीउपाध्यायजी श्रीक्षमाकल्याणजी गणिजी कृत श्रीगणधरसार्द्धशतक प्रश्नोत्तर ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ३५। ३६ में श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेव सूरिजीकृत श्रीभगवतीजी वृत्तिका और समाचारी ग्रन्थका पाठ, पृष्ठ ७२। ८१में श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनदत्त सूरिजीका पाठ, पृष्ठ ७२ में श्रीखास श्रीजिनपति सूरिजीके शिष्य श्री

सुमतिगणिजीका पाठ, पृष्ठ ८१ में श्रीउपाध्यायजी श्रीजय सागरजीका पाठ, पृष्ठ ८२। ८६। ९१में श्रीजिनप्रभ सूरिजीका पाठ, और पृष्ठ ८४ में श्रीजिनवल्लभ सूरिजीका पाठ इसी तरहसें शुद्ध समाचारी कारके पूर्वाचार्य्य श्रीखरतरगच्छके प्रभाविक पुरुषोंका पाठ श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अपना कार्य्य सिद्ध करनेके लिये तो खास मान्य करके दिखाते हैं और शुद्ध समाचारी कारनें अपना कार्य्यसिद्ध करनेके लिये अपनेही पूर्वजोंका (शास्त्रानुसार युक्ति सहित न्यायपूर्वक सत्य) पाठ लिख दिखाये उसीको श्रीन्यायाम्भोनिधिजी अप्रमाणिक ठहराते हैं यह तो प्रत्यक्ष वड़े अन्यायका रस्ता श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें ग्रहण किया है सो विशेष पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना।

अव तीसरा और भी सुनो श्रीआत्मारामजीनें खास (चतुर्थ स्तुतिनिर्णयः) नामा ग्रन्थ तीन स्तुति वालोंका खण्डन करनेके लिये वनाया है सो छपा हुवा प्रसिद्ध है उसीके पृष्ठ ८३।८४।८५ में श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरीजी कृत श्रीविधिप्रपाग्रन्थका पाठ और उसीकी भाषा पृष्ठ ८५।८६ ८७।८८ के आदि तक लिखके पुनः पृष्ट ८८ के मध्यमें लिखते हैं कि—(इस विधिमें पडिक्कमणेकी आदिमें चारथुइसें चैत्यवंदना करनी कही है और श्रुत देवता अरु क्षेत्र देवता का कायोत्सर्ग अरु इन दोनोंकी थुइ करनी कही है—इस लेखको सम्यक्त्वधारी मानते हैं और मानतेथे फेर मानेंगे भी परन्तु मिथ्या दृष्टि तो कभी नही मानेगा इस वास्ते सम्यक् दृष्टि जीवको तीन थुइका कदाग्रह अवश्य छोड़ देना योग्य है) इस तरहसें श्रीआत्मारामजी श्रीखरतरगच्छके

श्रीजिनप्रभ सूरिजीके लेखको न मानने वालेको मिथ्या दृष्टि ठहराते हैं तो इस जगह पाठकवर्ग विचार करो कि श्रीजिनप्रभसूरिजीके ही खास परमपूज्य और पूर्वाचार्य्य श्रीजिनपति सूरिजीके सत्य लेखको न मानने वाले तो स्वयं मिथ्या दृष्टि सिद्ध होगये फिर श्रीआत्मारामजी न्यायांभोनिधिजी न्यायके समुद्र हो करके अपने स्वहस्थे जिन्होंके सन्तानिये श्रीजिनप्रभसूरिजीके लेखको न मानने वालोंको मिथ्या दृष्टि लिखते हैं और श्रीजिनप्रभसूरिजीके ही पूर्वाचार्य्यजी श्रीजिनपति सूरिजीके सत्य लेखको अप्रमाण मान्यके खास आपही मिथ्या दृष्टि बनते हैं। हा अतिखेद! इस बातको पाठकवर्ग निष्पक्षपातसें सत्य बातके ग्राही होकर अच्छी तरहसें विचार लेना ;—

अब चौथा और भी सुनो श्रीआत्मारामजी इन्ही चतुर्थस्तुतिनिर्णयः पुस्तकके पृष्ठ १०१। १०२। १०३ में श्री बृहत्खरतरगच्छके श्रीजिनपतिसूरिजी कृत समाचारीका पाठ लिखके उसीको श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत पाठकी तरह प्रमाणिक मानते हैं और श्रीजिनपतिसूरिजी कृत पाठकी श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत पाठके साथ भलामण देते है जिसमें श्रीजिनपतिसूरिजीका पाठको भी न मानने वालोंको मिथ्या दृष्टि सिद्ध करते है। और फिर आपही श्रीजिनपतिसूरिजीकृत सत्य पाठको जैनसिद्धान्त समाचारीमें अप्रमाण ठहराकर नही मानते है जिससें (उपरोक्त न्यायानुसार करके) मिथ्या दृष्टि बननेका कुछ भी भय न करते कितने अन्यायके रस्ते चलते है सो भी आत्मार्थी सज्जन पुरुष विचार लेना ;—

अब पांचमा और भी सुन लिजिये श्रीआत्मारामजीने तत्त्वनिर्णय प्रासादग्रन्थ बनाया है सो छपा हुवा प्रसिद्ध हैं जिसके पृष्ठ १४५ में लिखा है कि—

[अब पक्षपात न होनेमें हेतु कहते है—

पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु ।
युक्तिमद्वचनं यस्य, तस्य कार्य्यः परिग्रहः ॥ ३८ ॥

व्याख्या—मेरा कुछ श्रीमहावीरजीके विषे पक्षपात नही है कि जो कुछ महावीरजीने कहा है सोइ मैंने मानना है अन्यका कहा नही; और कपिलादि मताधिपोंसें द्वेष नही है कि कपिलादिकोंका नही मानना किन्तु जिसका वचन शास्त्र युक्तिमत् अर्थात् युक्तिसें विरुद्ध नही है तिसका वचन ग्रहण करनेका मेरा निश्चय है ॥ ३८ ॥]

और इन्हो तत्त्वनिर्णय प्रासादकी उपोद्घात श्रीवल्लभ विजयजीनें बनाई है जिसके पृष्ठ ३१ वे में लिखा है कि (पक्षपात करना यह बुद्धिका फल नही है परन्तु तत्त्वका विचार करना यह बुद्धिका फल है "बुद्धेः फलं तत्त्वविचारणं चेति ववनात्" और तत्त्वविचार करके भी पक्षपातको छोड़ कर जो यथार्थ तत्त्वका भान होवे उसको अङ्गीकार करना चाहिये किन्तु पक्षपात करके अतत्त्वकाही आग्रह नही करना चाहिये यतः—आगमेन च युक्त्या च, योऽर्थः समभिगम्यते । परित्य हेमवद्ग्राह्यः, पक्षपाताग्रहेण किम्—

भावार्थः आगम (शास्त्र) और युक्तिके द्वारा जो अर्थ प्राप्त होवे उसको सोनेके समान परीक्षा करके ग्रहण करना चाहिये पक्षपातके आग्रह (हठ)से क्या है)—

अब पाठकवर्ग श्रीआत्मारामजीके और श्रीवल्लभ-

विजयजीके उपरोक्त लेखसें पक्षपात रहित विचारो कि-जिस पुरुषका वचन शास्त्र और युक्ति सहित होवे उसको सोनेके समान जानके सज्जन पुरुषोंको ग्रहण करना ही उचित है, और शास्त्र तथा युक्ति रहित वचनको हठवादसें ग्रहण करना सो निर्बुद्धि पुरुषोंका लक्षण है ऐसा दोनोंका कहना है तो इस पर मेरेको बड़ेही खेदके साथ लिखना पड़ता है कि श्रीआत्मारामजी न्यायांभोनिधि नाम धारण करते न्याय और बुद्धिके समुद्र होते भी श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञामुजब शास्त्रानुसार युक्ति करके सहित और सत्यवचन शुद्ध समाचारी कारनें श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजका लिखा था सो ग्रहण करने योग्य था तथापि उनको गच्छके पक्षपातसें वृथा क्यों निषेध किया होगा क्योंकि श्रीजिनपतिसूरिजीका (श्रावण और भाद्रव मास अधिक होवे तो भी पचासदिने पर्युषणा करना परन्तु ८० में दिन नही करना इतने पर भी ८० दिने पर्युषणा करते है सो शास्त्र-विरुद्ध है) यह वाक्य श्रीशुद्धसमाचारी ग्रन्थका और श्रीसंघ-पट्टक बृहद्वृत्तिका लिखा है सो शास्त्रानुसार सत्य है इसी ही बातका खुलासा इन्ही पुस्तकमें अनेक जगह ठामठाम शास्त्रोंके प्रमाण सहित युक्तिपूर्वक विस्तारसें छप गया है इसलिये उपरकी बातका निषेध करनाही नही बनता है शुद्ध समाचारीकारनें श्रीजिनपतिसूरिजी महाराज कृत ग्रन्थानुसार ५० दिने पर्युषणा ठहराई और ८० दिन करने वालोंको जिनाज्ञाके बाधक कहे है इसको श्रीआत्मारामजीनें अप्रमाण ठहराया तब इसका तात्पर्य्य यह निकला कि ५० दिने पर्यु-षणा करनेवालोंकों दूषित ठहराये और ८० दिने पर्युषणा

शुद्धसमाचारी कारके वचन जिनाज्ञा मुजब सत्य होनेसें न गिर सका परन्तु वह लड़केका दृष्टान्त पीछाही फिरके श्री आत्मारामजी तथा उन्होंके परिवार वालोंके उपरही आकर गिरता है क्योंकि खास श्रीआत्मारामजीनेंही जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमें अपनाही कार्य्यसिद्ध करनेके लिये अपनाही मनन दिखाकर और अपनेही गच्छके अर्वाचीन (थोड़े कालके) पाठ दिखाये हैं सो भी श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके विरुद्ध उत्सूत्र भाषण रूप हैं और खास श्री-तपगच्छकेही पूर्वाचार्य्योंके विरुद्धार्थमें ग्रन्थकार महाराजका अभिप्रायःके विरुद्ध होकरके आगे पीछेका सम्बन्धको छोड़ कर अधूरे अधूरे पाठ लिखके फिर अर्थ भी उलटे उलटे किये है (इसका नमुना मात्र खुलासा संक्षिप्तसें आगे करनेमें आवेगा) इसलिये उपरोक्त लड़केका दृष्टान्त श्री आत्मारामजी तथा उन्होंके परिवार वालोंके उपर अवश्य ही वरोबर घटता है इसवास्ते श्रीआत्मारामजीनें शास्त्र-कारोंके विरुद्धार्थमें जो जो बाते लिखी है सो तो सर्वंही आत्मार्थियोंको त्यागने योग्य होनेसें प्रमाणिक नही हो सकती है ;—और सातमी तरहसें आगे (श्रीवल्लभविजय जीके नामसें समीक्षा होगा उसमें विस्तारसें लिखनेमें आवेगा) वहांसे समझ लेना ;—अब आगेकी भी समीक्षा करते हैं जैन सिद्धान्त समाचारीके पृष्ठ ८८ पंक्ति ११ वी सें पृष्ठ ८९ की पंक्ति १९ वी तकका लेख नीचे मुजब जानो—

[और पृष्ठ १५६–१५७ में लिखा है, कि—"श्रावण और भाद्रव मासकी जैन सिद्धान्तकी अपेक्षायें वृद्धिकाही अभाव है। केवल पौष आषाढ़की वृद्धि होती थी, और इस समय

श्रीन्यायांभोनिधिजी निषेध करते हैं सो निःकेवल शास्त्र विरुद्ध उत्सूत्र भाषण करके भोले जीवोंको कदाग्रहका रस्ता दिखाया हैं।

आगे उठा और भी सुनिये शुद्धसमाचारी कारके सत्य वाक्यको निषेध करनेके लिये अपना पक्षपातके जोरसें श्रीआत्मारामजीनें (तुमने अपने गच्छका ममन दिखाके अपनेही गच्छका प्रमाण पाठ दिखाया है यह तो ऐसा हुया कि किसी लड़केनें कहा कि मेरी माता सती है साक्षी कौन कि मेरा भाई इसवास्ते यह आपका लेख प्रमाणिक नही हो सकता है) यह वाक्य लिखे हैं इसकी पांच तरहसें तो समीक्षा उपरमें होगई है और भी छठी तरहसें अब सुनाता हुं, कि-उपरोक्त लेखमें श्रीआत्मारामजीनें शुद्ध समाचारी-कारका उपहास करनेके लिये विद्वत्ताके अभिमानसें एक लड़केका दृष्टान्त दिखाया है परन्तु शुद्ध समाचारी कारके पूर्वाचार्य्य श्रीजिनपतिसूरिजीनें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार शास्त्रोंकी मर्यादा पूर्वक सत्य वाक्य लिखा हैं इसलिये लड़केका दृष्टान्त शुद्ध समाचारी कारके उपर किञ्चिन्मात्र भी नही घट सकता है तथापि श्रीआत्मारामजीनें लिखा है सो निःकेवल वर्त्तमानिक गच्छके पक्षपातसें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी अवज्ञा कारक है, और जैसे ग्रीष्म ऋतुमें मध्याह्नका समयके सूर्य्यको किसीने पत्थर फेंका तो भी सूर्य्य पर न गिरते पीछा लौट कर फेंकने वालेके शिर परही आनके गिर सकता है तैसेही श्रीआत्मारामजीका न्याय हुवा अर्थात् श्रीआत्मारामजीनें लड़केका दृष्टान्त शुद्ध समाचारीकार पर दिया था परन्तु

शुद्धसमाचारी कारके वचन जिनाज्ञा मुजब सत्य होनेसें न गिर सका परन्तु वह लड़केका दृष्टान्त पीछाही फिरके श्री आत्मारामजी तथा उन्होंके परिवार वालोंके उपरही आकर गिरता है क्योंकि खास श्रीआत्मारामजीनेंही जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमें अपनाही कार्य्यसिद्ध करनेके लिये अपनाही मनन दिखाकर और अपनेही गच्छके अर्वाचीन (थोड़े कालके) पाठ दिखाये हैं सो भी श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके विरुद्ध उत्सूत्र भाषण रूप हैं और खास श्री-तपगच्छकेही पूर्वाचार्य्योंके विरुद्धार्थमें ग्रन्थकार महाराजका अभिप्रायःके विरुद्ध होकरके आगे पीछेका सम्बन्धको छोड़ कर अधूरे अधूरे पाठ लिखके फिर अर्थ भी उलटे उलटे किये हैं (इसका नमुना मात्र खुलासा संक्षिप्तसें आगे करनेमें आवेगा) इसलिये उपरोक्त लड़केका दृष्टान्त श्री आत्मारामजी तथा उन्होंके परिवार वालोंके उपर अवश्य ही बरोबर घटता है इसवास्ते श्रीआत्मारामजीनें शास्त्र-कारोंके विरुद्धार्थमें जो जो बाते लिखी है सो तो सर्वही आत्मार्थियोंको त्यागने योग्य होनेसें प्रमाणिक नही हो सकती है ;—और सातमी तरहसें आगे (श्रीवल्लभविजय जीके नामसें समीक्षा होगा उसमें विस्तारसें लिखनेमें आवेगा) वहांसे समझ लेना ;—अब आगेकी भी समीक्षा करते हैं जैन सिद्धान्त समाचारीके पृष्ठ ८८ पंक्ति ११ वी सें पृष्ठ ८९ की पंक्ति १९ वी तकका लेख नीचे मुजब जानो—

[और पृष्ठ १५६–१५७ में लिखा है, कि—"श्रावण और भाद्रव मासकी जैन सिद्धान्तकी अपेक्षायें वृद्धिकाही अभाव है। केवल पौष आषाढ़की वृद्धि होती थी, और इस समय

में लौकिक टिप्पणाके अनुसारे हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसे श्रावण और भाद्रवकी भी वृद्धि होती है ॥ तिसमें तनोंकी वृद्धि होनेमें भी दशपञ्चक व्यवस्थाके विषे, आषाढ़ चौमासी सें पचाश दिनेही पर्युषणा करना सिद्ध होता है" ॥ आगे इसीकी सिद्धिके वास्ते कल्प सूत्रका और विशेष कल्प भाष्य चूर्णिका पाठ दिखाया है, कि-"जाव सवीसइ राइमासो" इत्यादि (इतना लेख शुद्धसमाचारी प्रकाशकी पुस्तक सम्बन्धी अधूरा लिखके इसका न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं उत्तर) हे मित्र! मासवृद्धिका जो जैन टिप्पणादिकका विशेष दिखाया है, यह तो अज्ञजनोंको केवल भरमानेके वास्ते है क्योंकि यद्यपि जैन टिप्पणाके अनुसार श्रावण और भाद्रव मासकी वृद्धिका अभाव है तो भी पौष और आषाढ़मास की तो वृद्धि होती थी, अब हम आपको पूछते हैं कि-जैन टिप्पणाके अनुसारे जब पौष अथवा आषाढ़मासकी वृद्धि हुई तब संवछरीको अब्भुट्ठिओ सूत्रके पाठमें क्या 'तेराणं मासाणं छवीसपखाणं' वैसा पाठ कहोगे ? क्योंकि तिस वर्षमें तेरह मासतो अवश्य होजायगें। और जैनसिद्धान्तो में तो किसी भी स्थानमें वैसा नही लिखा है कि अधिक मास होवे तब तेरहमास और छवीस पख्ख संवछरीकों कहना। तो अब आपका प्रयास क्या काम आया परन्तु यह तो निःशङ्कित मालुम होता है कि-जैनटिप्पणाके अनुसारसें भी अधिक मासकों कालचूलामें ही गिनना पड़ेगा। पूर्वपक्ष-कालचूला क्या होती है ? उत्तर हे परीक्षक! आगे दिखावेंगे और दशपञ्चक व्यवस्था लिखते हो। सो तो कल्पव्यवच्छेद हुवा है, यह सर्वजन प्रसिद्ध है। और लौकिक टिप्पणाके

अनुसारसें हरेक वर्षमें आषाढ़ शुदि चतुर्द्दशीसें लेके भाद्रव शुदि ४ और तुमारे कहनेसें दूसरे श्रावण शुदि ४ तक ५० दिन पूर्ण करने चाहोगें तो भी नही हो सकेगें। क्योंकि तिथियां वध घट होती है तो किसी वर्षमें ४९ दिन आजायगें और किसी वर्षमें ४८ दिन भी आजायगे तब क्या आपकों जिन आज्ञा भङ्गका दूषण नही होगा?]

अब उपरके न्यायांभोनिधिजीके लेखकी समीक्षा करके आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंसें दिखता हुं, कि–हे भव्यजीवों न्यायांभोनिधिजीके उपरका लेखकोमें देखता हुं तो मेरेको वड़ाही खेदके साथ बहुत आश्चर्य्य उत्पन्न होता है क्योंकि श्रीन्यायाम्भोनिधिजीनें तो शुद्धसमाचारी कारके वचनको खण्डन करना विचारके उपरका लेख लिखा था परन्तु शुद्ध समाचारी कारकें सत्यवचन होनेसें खण्डन न हो सके, परन्तु न्यायाम्भोनिधिजी के लिखे वाक्यसें अवश्यही श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी और अपने ही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी अवज्ञा (आशातना) का कारण होनेसें न्यायाम्भोनिधिजी को लिखना सर्वथा उचित नही था क्योंकि देखो शुद्धसमाचारी की पुस्तक के पृष्ठ १५६ के अन्तमें और पृष्ठ १५७ के आदिमें ऐसा लिखा था कि (श्रावण और भाद्रपदमास की जैन सिद्धान्त की अपेक्षायें वृद्धिका ही अभाव है. केवल पौष और आषाढ़मासकी ही वृद्धि होती थी और इस समयमें तो लौकिक टीप्पणाके अनुसार हरेक मासोंकी वृद्धि होनेसें श्रावण और भाद्रपद की वृद्धि होती है) इस शुद्ध समाचारी का लेखको खण्डन करने के लिये न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं कि—(हे मित्र मासवृद्धिका

जो जैन टिप्पणादिकका विशेष दिखाया है यह तो अज्ञ जनकों केवल भ्रमाने के वास्ते है) अब हे पाठकवर्ग सज्जन पुरुषों उपरके न्यायाम्भोनिधिजी के वाक्यको पढ़के अच्छी तरहसें विचार करो कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर केवली भगवान् और पूर्वधरादि महान् धुरन्धर प्रभाविक पूर्वाचार्य्य तथा खास न्यायाम्भोनिधिजीके ही पूज्य पूर्वाचार्य्य सब महाराज जैनसिद्धान्त (शास्त्रों) की अपेक्षायें जैनपञ्चाङ्गमें युगके मध्यमें पौष और अन्तमें आषाढ़ मासकी मर्य्यादा पूर्व वृद्धि होती है ऐसा कहते हैं सो अनेक शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है जिसमें अनुमान पचाश ·शास्त्रोंके पाठों की तो मुझे भी मालुम है कि जैन शास्त्रोंमें पौष और आषाढ़ की वृद्धि श्रीतीर्थङ्करादिकोनें कही है इसी ही अनुसार शुद्धसमाचारी कारनें भी पौष और आषाढ़ की जैन सिद्धान्तों की अपेक्षायें वृद्धि लिखी हैं जिसको न्यायाम्भोनिधिजी अज्ञ जनोंको भ्रमानेका ठहराते है सो यह तों ऐसा न्याय हुया कि—

जैसे श्रीअनन्ततीर्थङ्करादि महाराज अनादिकाल हुवा उपदेश करते आये है कि । हे भव्यजीवों तुम्हारी आत्माकों सुख चाहो तो द्रव्य भावसें जीवदया पालो इस वाक्यानुसार वर्त्तमानमें भी उपगारी पुरुष उपदेश करते है जिस उपदेशकों कोई भी जैनाभास द्वेषबुद्धिवाला अज्ञजनोंको केवल भ्रमानेका ठहरावें तो उस पुरुषनें श्रीअनन्त तीर्थङ्करादि महाराजोंकी. आशातना करके अनन्त संसार वृद्धिका कारण किया यह बात सर्वसज्जन पुरुष जैनशास्त्रोंके जान-कार मंजूर करते है तैसे ही श्रीअनन्त तीर्थङ्करादि महाराज अनादि काल हुवा जैन सिद्धान्तोंकी अपेक्षायें पौष

और आषाढ़ की वृद्धि कहते है सोही बात शुद्धसमाचारी कारनें भी जैन सिद्धान्तोंकी अपेक्षायें लिखी है सो सत्य है इसलिये निषेध नही हो सकती है। तथापि न्यायाम्भोनिधिजी उपरकी सत्य वातकों अज्ञ जनोंको केवल भ्रमानेका ठहराते हैं हा! हा! अतिव खेदः। उपरोक्त न्यायानुसार न्यायांभोनिधिजीनें श्रीअनन्त तीर्थङ्करादि-महाराजोंकी और अपने ही पूर्वजोंकी आशातना कारक अनन्त संसार वृद्धिका कारणरूप वृथा क्योंकिया होगा इसको विशेष पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना;—

तथा थोड़ासा और भी सुन लिजीये—शुद्ध समाचारी कारनें जैन सिद्धान्तों की अपेक्षायें पौष और आषाढ़ मास की वृद्धि दिखाई और लौकिक टिप्पणा की अपेक्षायें हरेक मासोंकी वृद्धि दिखाई सो सत्य है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी (अज्ञजनोंको केवल भ्रमानेका) ठहराते है तो इस लेखसें तो न्यायाम्भोनिधिजीनें खास अपने ही पूज्य गुरुजन पूर्वाचार्य्योंको भी अज्ञजनोंको भ्रमाने वाले ठहरा दिये क्योंकि जैसे उपरोक्त शुद्ध समाचारी कारनें अधिकमास सम्बन्धी लिखा है तैसे ही श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने भी लिखा है। जब शुद्ध समाचारी कारके लेखको न्यायाम्भोनिधिजी अज्ञजनोंको भ्रमानेका ठहराते है तब तो न्यायाम्भोनिधिजीके पूर्वाचार्य्योंका लेख भी अज्ञजनोंको भ्रमानेवाला ठहर गया जब न्यायाम्भोनिधिजीने अपनें पूर्वाचार्य्योंकी आशातनाका कुछ भी भय न रक्खा तो फिर न्यायाम्भोनिधिजीको न्याययुक्त आत्मार्थी कैसें मान सकते है अपितु नही इस वातको भी पाठकवर्ग विचार लो,—

और आगे लिखा है कि (यद्यपि जैन टिप्पणाके अ
सार श्रावण और भाद्व मासकी वृद्धिका अभाव है तो भ
पौष और आषाढ़मास की तो वृद्धि होती थी अब ह
आपको पूछते है कि जैन टिप्पणाके अनुसारे जब पौ
अथवा आषाढ़मासकी वृद्धि हुई तब संवच्छरीको अभ्
ठिओ सूत्रके पाठमें तेराणं मासाणं छवीसं पखाणं वैस
पाठ कहोगें क्योंकि तिस वर्षमें तेरह मास तो अवश्य ह
जायगें और जैन सिद्वान्तोंमें तो किसी भी स्थानमें वैस
नही लिखा है कि अधिक मास होवे तब तेरह मास औ
छवीस पख संवच्छरीको कहना तो अब आपका क्या
क्या काम आया) इस लेखको देखता हुं तो न्यायाम्भो
निधिजीके बुद्धिकी चातुराईका वर्णन में नही कर सकता हु
क्योंकि जब शुद्ध समाचारी कारनें जैन सिद्वान्तोंकी अपेक्षा
पौष और आषाढ़मासकी वृद्धि लिखी जिसको तो न्यायांभो
निधिजी (अज्ञ जनोंको केवल भ्रमानेका) ठहराते हैं औ
फिर आप भी शुद्ध समाचारीके मुजब उसी तरहसें पौष
और आषाढ़मासकी वृद्धि इस जगह मंजूर करते हैं यह
न्यायांभोनिधिजीके अपूर्व विद्वत्ताका नमुना है क्योंकि दूस-
रेकी बातका खण्डन करना और उसी बातको आप मंजूर
भी करलेना ऐसा अन्याय करना आत्मार्थियोंको उचित
नही हैं और क्षामणाके सम्बन्धमें लिखा है सो भी जैन-
शास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझे विना प्रत्यक्ष मिथ्या लिखके
भोले जीवोंको संशयमें गेरे हैं क्योंकि जब जिस संवत्सर
में अवश्य करके तेरह मास और छवीश पख होगये
तथा धर्मकर्म और संसारिक सावद्य कार्य्य तेरह मासके

४९ दिन भी आजायगें तब क्या आपको जिनाज्ञा भङ्गका दूषण नही होगा) इस उपरके लेखसें तो न्यायांभो निधिजीनें श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी आशातना करके और सबी उत्तम पुरुषोंको दूषित ठहरानेका कार्य्य करके नय गर्भित व्यवहारको और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठको उत्थापन करके बड़ाही अनर्थ कर दिया है क्योंकि जैसे सूत्र, चूर्णि, भाष्य, वृत्ति, प्रकरण, चरित्रादि अनेक शास्त्रोंमें एक नही किन्तु सैकड़ों बाते व्यवहार नयकी अपेक्षासें श्रीतीर्थङ्करादि महाराज कहते हैं तैसेही शुद्ध समाचारी कारने भी व्यवहार नयसें पचास दिने पर्युषणा कही है और श्रीकल्प सूत्रजीके मूल पाठका (अन्तरा वियसे कप्पइ) इस वाक्यसें पचास दिनके अन्दरमें पर्युषणा होवे तो कोई दूषण भी नही कहा है तथापि न्यायांभोनिधिजी न्यायके समुद्र होते भी व्यवहार नयगर्भित श्रीजिनेश्वर भगवान्की व्याख्याका और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठका उत्थापनके भयका जरा भी विचार न करते विद्वत्ताके अभिमानसें और पक्षपातके जोर सें ४८।४९ दिन होनेका दिखाकर मिथ्या दूषण लगाते हैं सो कदापि नही बनता है,—याने सर्वथा उत्सूत्र भाषणरूप है

और भी दूसरा सुनिये–जो तिथियोंके हानी वृद्धिकी गिनतीसें कोई वर्षमें भाद्रपद शुक्ल चौथ तक ४८ दिन होनेका लिखकर न्यायाम्भोनिधिजी शुद्धसमाचारी कारको दूषित ठहराते हैं इससें मालुम होता है कि तिथियोंके हानी वृद्धिकी गिनतीसें भाद्रपद शुक्ल छठ (६) के दिन पूरे पचास दिन मान्य करके न्यायाम्भोनिधिजी पर्युषणा करते होवेंगे

विरुद्ध हो करके अधिकमासकी गिनती निषेध करनेका प्रयास करते हैं सो यही ही शर्मकी बात है और कालचूलासम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें आगे लिखा है उसकी समीक्षा में भी आगे करूंगा—

और (दशपञ्चक व्यवस्था लिखते हो सो तो कल्पव्यवच्छेद हुआ है यह सर्वजन प्रसिद्ध है) इन अक्षरों कोभी मैं देखता हुं तो न्यायांभोनिधिजीका अन्याय देखकर मुझे बड़ाही आफसोस आता है क्योंकि शुद्ध समाचारी कारनें जिस अभिप्रायसें लिखा था उसीको समझे बिना अन्याय मार्गसें खण्डन करना न्यायांभोनिधिजीको उचित नही हैं क्योंकि शुद्धसमाचारी कारनें तो इस कालमें पचास दिनेही पर्युषणा करनी चाहिये इस बातकी पुष्टिके लिये शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५१ । १५८ में श्रीकल्पसूत्रजीका मूलपाठ, श्रीवृहत्कल्पचूर्णिका पाठ, और श्रीसमवायाङ्गजीका पाठ, लिखके पचास दिनेही पर्युषणा दिखाई थी परन्तु दशपञ्चक लिखके कुछ पाँच पाँच दिने प्राचीन कालकी रीतिसे पर्युषणा नही लिखी थी तथापि न्यायांभोनिधिजी शुद्धसमाचारी कारके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें दशपञ्चकका कल्पविच्छेदकी बात लिखके पचास दिनकी पर्युषणाको निषेध करना चाहते हैं सो कदापि नही हो सकेगा और आगे फिर भी लिखा है कि–(लौकिक टिप्पणाके अनुसारसें हरेक वर्षमें आषाढ़ शुदी चतुर्दशीसें लेके भाद्रवा शुदी ४ और तुम्हारे कहनेसें दूसरे श्रावण शुदी ४ तक ५० दिन पूर्ण करने चाहोगें तो भी नही हो सकेगें क्योंकि तिथियां वध घट होती है तो किसी वर्षमें ४९ दिन आजायगें और किसी वर्षमें

प्राप्ति होनेसें सिद्धान्त विरुद्ध होगा, फिर तो ऐसा हुवा कि एक अङ्गको आच्छादन किया और दूसरा अङ्ग खुल्ला होगया तात्पर्य्ये कि तुमनें आज्ञाभङ्ग न हुवे इस वास्ते यह पक्ष अङ्गीकार किया तोभी आज्ञाभङ्गरूप दूषण तो आपके शिर परही रहा—पूर्वपक्ष–इस दूषणरूप यन्त्रमें तो आपको भी यन्त्रित होना पड़ेगा—उत्तर–हे समीक्षक यह आज्ञाभङ्ग-रूप दूषणका लेश भी हमको न समझना क्योंकि हम अधिक मासको कालचूला मानते हैं—]

अब उपरके लेखकी समीक्षा करते है कि हे सत्यग्राही सज्जन पुरुषों उपरके लेखमें न्यायाम्भोनिधिजीनें अपनी चतुराई प्रगट कारक और प्रत्यक्षउत्सूत्र भाषणरूप भोले जीवोंको श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध रस्ता दिखानेके लिये अनु-चित क्यों लिखा है क्योंकि प्रथमतो पूर्वपक्षमें ही [आप तो मुखसें ही बाता बनाइ जाते हो] यह अक्षर लिखे है इससें मालुम होता है कि पहिले जो जो लेख न्यायांभो-निधिजीने लिखा है सो सो शास्त्रोंके प्रमाण बिना अपनी कल्पनासें लिखा है इसलिये न्यायांभोनिधिजीके जैसी दिलमें थी वैसीही पूर्वपक्षके अक्षरोंमें लिख दिखाई है सो, हास्यके हेतुरूप है सो तो बुद्धिजन विद्वान् पुरुष समझ सक्के है और इसके उत्तरका लेखमें भी सूत्रकार महा-राजके अभिप्राय को जानेबिना उलटा विरुद्धार्थमें तीनों महाशयोंकी तरह चौथे न्यायाम्भोनिधिजीनें भी कर दिया क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ मासवृद्धिके अभावका है। और पर्युषणा के पीछाड़ी १०० दिन होनेसें कोई भी दूषण नही है याने मास वृद्धि होनेसें पर्युषणाके

तब तो अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध है और आप चौमा
पर्युषणा करते होवेंगे तब तो शुद्धसमाचारी कारको दू
लगाना वृथा है इसको भी पाठकवर्ग विचार लो ;—

और पर्युषणाके पीछाड़ी जो ७० दिन स्वाभाविक
की रखना कहते हैं सो किस हिसाबसें गिनती क
रखते हैं इसका विवेक बुद्धिसें हृदयमें विचार किया हो
तो शुद्ध समाचारी कारको दूषण लगानेका लिखनाही
जाते क्योंकि तिथियोंकी हानी वृद्धिसें किसी वर्षमें
और किसी वर्षमें ६८ दिन भी होजाते हैं सो पाठक
बुद्धिजन पुरुष न्याय दृष्टिसे विचार कर लेना ;—

और भी आगे जैन सिद्धान्तसमाचारी पुस्तकके पृष्ठ
की पंक्ति २० वीं सें पृष्ठ ८७ की पंक्ति१९ वीं तक ऐसे लि
है कि [पूर्वपक्ष, आप तो मुखसेंही बाता बनाई जाते
परन्तु कोई सिद्धान्तके पाठसें भी उत्तर है वा नहीं--उत्त
हे समीक्षक दृढ़तर उत्तर देते हैं देखो कि श्रावणमास बढ़
सें दूसरे श्रावणमें और भाद्रव बढ़नेसें प्रथम भाद्रव मा
पर्युषणा करना यह तुमने ८० (अशी) दिनकी प्राप्तिके भय
अङ्गीकार किया परन्तु श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ऐसा प
है, यथा---सवीसइ राइमासे वइक्कंते सत्तरिराइदिए
सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइत्ति, भावार्थः---जैसे आप
चौमासेके प्रतिक्रमण किये बाद एकमास और वीश दिन
पर्युषणा करें तैसे पर्युषणाके बाद ७० सत्तर दिन क्षेत्र
ठहरे---हे परीक्षक-अब इस पाठके विचारणेसें तुमको मा
की वृद्धि हुये कार्त्तिक सम्बन्धी कृत्य आश्विनमासमें कर
पड़ेगा और कार्त्तिक मासमें करोगे तो १०० रात दिनक

अवश्य होजायगें] यह अक्षर पृष्ठ ८९ की पंक्ति ३।४में लिखे
हैं अब पाठकवर्ग विचार करो कि अधिकमास होने
तेरह मास अवश्य करके न्यायांभोनिधिजीनें मान्य करलि
जब अधिकमास गिनतीमें मंजूर हो चुका तब दो श्राव
होनेसें भाद्रपद तक ८० दिन न्यायांभोनिधिजीके वाक्यं
भी सिद्ध होगये तो फिर पचास दिने पर्युषणा करनेका प
दिखाना और ८० दिने अपनी कल्पनासें पर्युषणा कर
यह कोई बुद्धिवाले विवेकी श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुर
का काम नही है सो पाठकवर्ग भी विचार लेना ;—

और भी दूसरा सुनो (श्रावणमास बढ़नेसें दूसरे श्राव
में और भाद्रव वढ़नेसें प्रथम भादव मासमें पर्युषणा कर
यह तुमने ८० (अशी) दिनकी प्राप्तिके भयसें अङ्गीक
किया) इन अक्षरोंका तात्पर्य्य ऐसे निकलता है कि इं
समाचारीकारकों तो ८० दिने पर्युषणा करनेसें शास्त्रविरुद्ध
भय लगा तब पचास दिने पर्युषणा करनेका अङ्गीका
किया परन्तु न्यायाम्भोनिधिजीको ८० दिने पर्युषर
करनेसें शास्त्र विरुद्धका भय नही लगता है इस लिये
श्रावण होते भी भाद्रपदमें और दो भाद्रपद होनेसें दूस
भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा शास्त्रविरुद्धताको न गिन
करते हैं यह वात सिद्ध होगई इस बातको पाठकवर्ग
विशेष करके विचार लो ;—

और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठको दिखाकर
श्रावणादि होते भी ७० दिन पर्युषणाके पिछाड़ी रखने
जो न्यायांभोनिधिजी कहते है सो भी सूत्रकार त

पीछाड़ी १०० दिन शास्त्रानुसार रहते हैं इसलिये मासवृद्धि होते भी पर्युषणाके पीछाड़ी ७० दिन रहने का और १०० होनेसें दूषण लगाने का न्यायाम्भोनिधि-जीका लिखना सर्वथा वृथा है इसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंकी समीक्षामें सूत्रकार वृत्तिकार महाराजके अभि-प्राय सहित संपूर्ण पाठसमेत युक्तिपूर्वक विस्तारसें पृष्ठ ११८सें पृष्ठ १२९ तक छपगया है और आगे भी कितनीही जगह छप चुका है सो पढ़नेसें अच्छी तरहसें निर्णय होजावेगा तथापि उपरोक्त लेखमें न्यायाम्भोनिधिजीनें उटपटाङ्ग लिखा है जिसकी समीक्षा करके दिखाता हुं—[श्रावणमास बढ़ने सें दूसरे श्रावणमें और भाद्रव बढ़नेसें प्रथम भाद्रव मासमें पर्यु-षणा करना यह तुमने अभीदिनका प्रासिके भयसें अङ्गीकार किया] इस लेखको लिखके आगे श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका (सवीसइ राइमासे वइक्कन्ते) इस पाठसें पचासदिने पर्युषणा दिखाई ॥ इन अक्षरोंसें तो जैसे शुद्ध समाचारी कारनें ५० दिने पर्युषणा ठहराई थी तैसेही न्यायाम्भोनिधिजीने भी ठहराई इसमें तो शुद्ध समाचारी कारका लेखको विशेष पष्टिमिली और न्यायांभोनिधिजीको अपना स्वयं लेख भी बाधक होगया तो फिर दो श्रावण होनेसें भी भाद्रपदमें और दो भाद्रपद होनेसें दूसरे भाद्रपदमें न्यायांभोनिधिजी पर्युषणा करते हैं तब तो प्रत्यक्ष ८० दिन होते है और श्रीसमवायाङ्गजी आदि अनेक शास्त्रोंमें ५० दिने पर्युषणा करनी कही है और अधिकमास भी अनेक शास्त्रोंमें प्रमाण किया है तैसे ही खास न्यायांभोनिधिजी भी क्षामणा के सम्बन्धमें अधिकमास होनेसें [तिसवर्षमें तेरांमास तो

अवश्य होजायगें] यह अक्षर पृष्ठ ८९ की पंक्ति ३।४में लिखें हैं अब पाठकवर्ग विचार करो कि अधिकमास होनेसें तेरह मास अवश्य करके न्यायांभोनिधिजीनें मान्य करलिये जब अधिकमास गिनतीमें मंजूर हो चुका तब दो श्रावण होनेसें भाद्रपद तक ८० दिन न्यायांभोनिधिजीके वाक्यसें भी सिद्ध होगये तो फिर पचास दिने पर्युषणा करनेका पाठ दिखाना और ८० दिने अपनी कल्पनासें पर्युषणा करना यह कोई बुद्धिवाले विवेकी श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुष का काम नही है सो पाठकवर्ग भी विचार लेना ;—

और भी दूसरा सुनो (श्रावणमास वढ़नेसें दूसरे श्रावण में और भाद्रव वढ़नेसें प्रथम भाद्रव मासमें पर्युषणा करना यह तुमने ८० (अशी) दिनकी प्राप्तिके भयसें अङ्गीकार किया) इन अक्षरोंका तात्पर्य्य ऐसे निकलता है कि शुद्ध समाचारीकारकों तो ८० दिने पर्युषणा करनेसें शास्त्रविरुद्धका भय लगा तब पचास दिने पर्युषणा करनेका अङ्गीकार किया परन्तु न्यायाम्भोनिधिजीको ८० दिने पर्युषणा करनेसें शास्त्र विरुद्धका भय नही लगता है इस लिये दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें और दो भाद्रपद होनेसें दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्युषणा शास्त्रविरुद्धताको न गिनके करते हैं यह बात सिद्ध होगई इस बातको पाठकवर्ग भी विशेष करके विचार लो ;—

और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठको दिखाकर दो श्रावणादि होते भी ७० दिन पर्युषणाके पिछाड़ी रखने का जो न्यायांभोनिधिजी कहते है सो भी सूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके और युक्ति के भी विरुद्ध है क्योंकि

आषाढ चौमासीसें प्रथम पचासदिन जानेसें और पिछाडी ७० दिन रहनेसे एव चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी श्रीसमवायाङ्गजी का पाठ है सो तो अल्पबुद्धि-वाला भी समझ सकता है तो फिर न्यायाम्भोनिधिजी न्यायके और बुद्धिके समुद्र इतने विद्वान् होते भी दो श्रावणादि होनेसें पाचमास के १५० दिन का वर्षाकाल में पर्युषणाके पिछाडी ७० दिन रखने का आग्रह करते कुछ भी विचार नही किया बडीही शरमकी बातहै और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमे ८० दिने पर्युषणा करके पिछाडी के ७० दिन रखनेका न्यायाम्भोनिधिजी चाहते होवे तोभी अनेक शास्त्रोके विरुद्ध है क्योंकि व्यवहारिक गिनतीसें पचास दिने अवश्य ही निश्चय करके पर्युषणा करनी कही है, और दिनोकी गिनती में अधिकमास छुट नही सकता है इस लिये ८० दिने पर्युषणा करके पिछाडी ७० दिन रखेंगे तो भी शास्त्रविरुद्ध है और अधिक मासको गिनती में छोड कर पर्युषणा के पिछाडी ७० दिन रखेंगे तो भी अनेक शास्त्रोके विरुद्ध है क्योंकि अधिक मासको अनेक शास्त्रोमें और खास श्रीसमवायागजी सूत्र में प्रमाण किया है इस लिये अधिकमास को गिनतीमें निषेध करना भी न्यायाम्भोनिधिजीका नही बन सकता है और चारमासके सम्बन्धी पाठको पाचमासके सम्बन्धमें न्यायाम्भोनिधीजी को सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें लिखना भी उचित नही है इस लिये श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ पर अपनी कल्पनासे न्यायाम्भोनिधिजी अथवा उन्होके परिवारवाले और उन्होके पक्षधारी वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके महाशय

जो जो कल्पना मासवृद्धि होते भी पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखनेके लिये करेंगे सो सो सबीही उत्सूत्र भाषण रूप भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरने वाले होवेंगे इसलिये श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक सत्यग्राही सर्व-सज्जन पुरुषोंसे मेरा यही कहना है कि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें मासवृद्धिके अभावसे ७० दिनके अक्षर देखके मास वृद्धि होते भी आग्रह मत करो और मासवृद्धिको मंजूर करके दूजा श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करके पिछाड़ी १०० दिन मान्यकरो जिससे उत्सूत्र भाषक न बनके श्रीजिनाज्ञाके आराधक बनोंगे मेरा तो येही कहना है। मान्य करेंगे जिन्होंकी आत्माका सुधारा है इतने पर भी जो हठग्राही नहीं मानेंगे जिन्होंकी सम्यक्त्व रत्न विना आत्माका सुधारा कैसे होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने ;—

और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठपर न्यायाम्भोनिधि जीने अपनी चातुराई प्रगट किवी है कि—(हे परीक्षक अब इस पाठके विचारणेसे तुमको मास वृद्धि हुये कार्त्तिक सम्बन्धी कृत्य आश्विन मासमें करना पड़ेगा और कार्त्तिक मासमें करोंगे तो १०० रात दिनकी प्राप्ति होनेसे सिद्धान्तसें विरुद्ध होगा फिर तो ऐसा हुवा कि एक अङ्गको आच्छादन किया और दूसरा अङ्ग खुल्ला होगया तात्पर्य्य कि—तुमने आज्ञाभङ्ग न हुवे इस वास्ते यह पक्ष अङ्गीकार किया तो भी आज्ञा भङ्गरूप. दूषण तो आपके शिरपर ही रहा) इस लेखकी समीक्षा अब सुन लीजियें—हे पाठकवर्ग देखो न्यायांभोनिधिजीने तो शुद्धसमाचारी कारको दूषित ठह-

राने के लिये उपरका लेख लिखाया परन्तु खास शुद्धसमाचारीकारने ही श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका इस ही पाठको अपनी शुद्धसमाचारीकी पुस्तकमें लिखा है। और इन्ही श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिकारक (शुद्धसमाचारी कारके परमपूज्य श्रीखरतरगच्छ नायक) श्रीनवांगी वृत्तिकार श्रीअभयदेव सूरीजी प्रसिद्ध है जिन्होंने इन्ही पाठकी वृत्ति में चारमासके एकसो वीश (१२०) दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी अच्छी तरहका खुलासाके साथ व्याख्या किवी हैं। सो प्रसिद्ध है और मैंने भी मूलपाठ तथा वृत्ति और भावार्थ सहित इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १२० । १२१ में छपा दिया है इस लिये चारमास सम्बन्धी पाठको पांच मासके अधिकारमें लिखना भी न्यायाम्भोनिधिजी को अन्याय कारक है और दो श्रावण होनेसें पांचमासके वर्षाकालके १५० दिन होते हैं यह तो जगत प्रसिद्ध है जिसकों अल्पबुद्धि वाले भी समझ सकते है जिसमें जैन शास्त्रोंकी आज्ञानुसार वर्त्तमान काले पचास दिने पर्युषणा करनेसें पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन तो स्वाभाविक रहते ही है यह बात भी शास्त्रानुसार तथा प्रसिद्ध है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी होकरके अन्याय के रस्तेमें वर्तके पांचमासके वर्षाकालमें पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन स्वभाविक रहते हैं जिसको शास्त्र विरुद्ध कहकर चारमास सम्बन्धी पाठ लिखके दूषित ठहराते है। यह तो प्रत्यक्ष उत्सूत्र भाषणरूप मृषा है और वर्तमानमें दो श्रावणादि होनेसें पचास दिने पर्युषणा और पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन रहनेका श्रीतपगच्छके ही पूर्वाचार्य्योंने कहा है जिसका खुलासा इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १४६ में छप गया है

जिसको भी शास्त्र विरुद्ध ठहराकेँ न्यायाम्भोनिधिजी अपने ही पूर्वाचार्य्योंकी आशातनाके फलविपाकका भय नही करते है सो बड़ीही अफसोसकी बात है और मास-वृद्धि होनेसें कार्त्तिक सम्बन्धीकृत्य आश्विनमासमें करने का न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं सो भी उन्हकी समझमें फेर है क्योंकि शुद्धसमाचारीकार तथा श्रीखरतरगच्छ वाले मासवृद्धि होनेसें शास्त्रानुसार पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन मान्य करते हैं इस लिये उन्होंको तो कार्त्तिक सम्बन्धीकृत्य आश्विन मासमें करने की कोई जरूरत नही है, और आगे (एक अङ्गका आच्छादन किया और दूसरा अङ्ग खुल्ला होगया) इन अक्षरोंको लिखके न्यायाम्भोनिधि-जीने अङ्ग याने शरीरका दृष्टान्त दिखाया परन्तु यह दृष्टान्त शुद्धसमाचारीकार तथा श्रीखरतरगच्छवालोंके उपर किञ्चित् भी नही घट सकता हैं क्योंकि मासवृद्धिके अभावसें श्रीसमवायाङ्गजीमें कहे हुवे पर्युषणाके पिछाड़ीका ७० दिन मान्य करके उसी मुजब वर्त्तते हैं और मासवृद्धि दो श्रावणादि होनेसें अनेक शास्त्रोंके प्रमाणसें पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिनको भी मान्य करके उसी मुजब वर्त्तते हैं इसलिये उन्होंका तो शास्त्रानुसार वर्त्तनेका होनेसें श्रीजिनाज्ञारूपी वस्त्रों करके सर्व अङ्ग परिपूर्णतासें (आच्छादन) याने ढका हुवा है इसलिये एक अङ्ग खुल्ला रहनेका दूषण लगाना न्यायांभोनिधिजीका प्रत्यक्ष मिथ्या है परन्तु उन्ही पुस्तकके पृष्ठ १६४ और १६५ में जो न्याय छपा है इसी न्यायानुसार उपरोक्त खुल्ला अङ्गका दृष्टान्त खास करके दोनों तरहसें न्यायांभोनिधिजीके

तथा उन्होंके परिवारवालोंके ऊपर बरोबर न्याय युक्त अच्छी तरहसें घटता है सोही दिखाता हुं कि-देखो न्यायांभोनिधिजी तथा इन्होंके परिवारवाले और उन्होंके पक्षधारी वर्त्तमानिक श्रीतपगच्छके सबी महाशय-विशेष करके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठको पर्युषणा सम्बन्धी सब कोई लिखते है मुखसें कहते हैं और उन्ही पर पूर्ण श्रद्धा रखके बड़ाही आग्रह करते हैं उस पाठमें वर्षाकालके पचास दिन जानेसें और पिछाड़ी ७० दिन रहनेसें पर्युषणा करणा कहा है यह पाठ भावार्थः सहित आगे बहुत जगह छप गया हैं इस पर बुद्धिजन सज्जन पुरुष विचार करो कि-वर्त्तमानमें दो श्रावण होनेसें भाद्रपदमें पर्युषणा करने वालोंको ८० दिन होते हैं जिससे पूर्वभागका एक अङ्ग सर्वथा खुल्ला हो जाता है और दो आश्विन मास होनेसें कार्तिक तक १०० दिन होते हैं जिससें उत्तर भागका एक अङ्ग भी सर्वथा खुल्ला हो जाता है इस तरहसें न्यायांभो निधिजी आदि जो श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठसें दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक ५० दिने पर्युषणा और दो आश्विन होते भी कार्त्तिक तक पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखना चाहनेवाले महाशयोंको श्रावण और आश्विन मास बढ़नेसें दोनों अङ्ग श्रीजिनाज्ञारूपी वस्त्र करके रहित प्रत्यक्ष बनते हैं यह तो ऐसा हुवा कि-दोनों खोईरे जोगटा मुद्रा और आदेश—कि वा-कोई एक संसारिक गृहस्थाश्रम छोड़के साधु हुवा परन्तु साधुकी क्रिया न करसका और पीछा गृहस्थ भी न हो सका उसीको उभय भ्रष्ट याने न साधु और न गृहस्थ ऐसे को 'पतो

भ्रष्टा ततो भ्रष्टा' कहनेमें आता है। अथवा। कोई एकस्त्री थी जिसने डाहीने हाथमें विधवाका चिह्न लम्बी काँचली और वाम हाथमें सधवाका चिह्न चुड़ा धारण किया था उसीनेही थोड़ी देर बाद फिर उससें विपरीत, याने, वाम हाथमें विधवाका चिह्न लम्बी काँचली और डाहीने हाथमें सधवाका चिह्न चुड़ा धारण किर लिया ऐसी पागल स्त्री न तो विधवाकी और न सधवाकी गिनतीमें आसकती है तैसेही दो श्रावण होते भी भाद्रपद तक पचास दिनका और दो आश्विन होते भी कार्त्तिक तक ७० दिन का आग्रह करने वालोंको श्रावण और आश्विन वढ़नेंसें एक तरफ भी श्रीजिनाज्ञाके आराधक नही हो सकते हैं क्योंकि दोनों अङ्ग खुले रहते हैं इसलिये उपरोक्त दृष्टान्तका न्याय उपरके महाशयोंको बरोबर घटता है इसलिये अब उपरकी बातको न्यायांभोनिधिजीके परिवारवालोंको और उन्होंके पक्षधारियोंको अवश्य करके विचारनी चाहिये और पक्षपातको छोड़के सत्य बातको ग्रहण करना सोही उचित है।

और शुद्धसमाचारीकार दो श्रावणादि होनेसें ५० दिने पर्युषणा करके पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन अनेक शास्त्रानुसार न्याययुक्ति सहित मान्य करता है इस लिये एक अंग खुल्लेका दृष्टान्त न्यायाम्भोनिधिजी कों लिखके आज्ञाभङ्गरूप दूषण शुद्धसमाचारीकार को दिखाना सर्वथा करके उत्सूत्र भाषणरूप वृथा है।

और आगे लिखा है कि—(पूर्वपक्ष इस दूषणरूप यन्त्र में तो आपको भी यन्त्रित होना पड़ेगा उत्तर—हे समीक्षक? यह आज्ञाभङ्गरूप दूषणका लेशभी हमको न

समझना क्योंकि हम अधिक मासको कालचूला मानते है) इन अक्षरोंको लिखके न्यायाम्भोनिधिजी दो श्रावण होनेसें भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसमें अधिक मासको गिनती में छोड़कर ८० दिनके ५० दिन और दो आश्विन मास होनेसें पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन होते है जिसको भी ७० दिन अपनी कल्पनासें मान्य करके निर्दूषण बनना चाहते है सो कदापि नहीं हो सकता है क्योंकि अधिक मासको कालचूला को उत्तम ओपमा गिनती करने योग्य शास्त्रकारोंने दिवी है जिसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंके नामकी समीक्षामें अच्छी तरहसें छपगया है और आगे फिर भी कालचूला सम्बन्धी श्रीनिशीथ चूर्णिका अधूरा पाठ और श्रीदशवैकालिक सूत्रके प्रथम चूलिकाकी वृहद्वृत्तिका अधूरा पाठ लिखके भावार्थ लिखे बाद फिर भी अपनी कल्पनासें पूर्वपक्ष उठा कर उसीका उत्तरमें भी पृष्ठ ९१ की पंक्ति १३ तक उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है जिसका उतारा इन्हीं पुस्तकके पृष्ठ ५९ और ६० की आदि तक छपाके उसीकी समीक्षा पृष्ठ ६० सें ६५ तक इन्हीं पुस्तकमें अच्छी तरहसें खुलासा पूर्वक छपगई है और श्रीनिशीथचूर्णिके प्रथमोद्देशेका कालचूलासम्बन्धी सम्पूर्ण पाठ और श्रीदशवैकालिकको प्रथम चूलिकाके वृहद्वृत्तिका सम्पूर्ण पाठ भावार्थके साथ खुलासा पूर्वक इन्हीं पुस्तकके पृष्ठ ४९ से पृष्ठ ५२ तक विस्तारसें छपगया है और तीनों महाशयोंके नामकी समीक्षा में भी इन्हीं पुस्तकके पृष्ठ ३१ से ३८ तक और आगे भी कितनी ही जगह छप गया है,, उसीको पढ़नेसें पाठक

वर्गकों अवश्यही निर्णय हो जावेगा कि अधिक मासको कालचूला की उत्तम ओपमा अवश्य ही गिनती करने योग्य शास्त्रकारोंने दिवी है इस लिये अधिकमासको निश्चय करके गिनती करना ही सम्यक्त्वधारियोंको उचित है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं सो कदापि नही हो सकती है इतने पर भी आगे फिर भी पृष्ट ९१ के पंक्ति १४ वीं से पंक्ति १८ वी तक लिखते है कि (इस अधिकमासकों कालचूलामें तुमको भी अवश्य ही मानना पड़ेगा और नही मानोंगे तो किसी तरहसें भी आज्ञा भङ्ग रूप दूषणकी गठड़ीका भार दूर नही होगा क्योंकि पर्युषणाके बाद ७० (सत्तर) दिन रहने का कहा है काल-चूला न मानोंगे तो १०० दिन हो जायगें) इन अक्षरोंको लिखके शुद्धसमाचारी कारको पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन होनेसें दूषण लगाते हैं सो न्यायाम्भोनिधिजीका सर्वथा मिथ्या है क्योंकि मासवृद्धि होते पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन होनेसें कोई दूषण नही है इसका विस्तार उपरमें तथा तीनों महाशयों के नामकी समीक्षामें और भी कितनी ही जगह छप गया है उसीकों पढ़के पाठकवर्ग सत्यासत्यका निर्णय कर लेना ;—

और शुद्धसमाचारीकार तथा श्रीखरतरगच्छवाले अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा जानके विशेष करके गिनतीमें बरोबर लेते हैं और न्यायांभोनिधिजी अधिक मासको कालचूला कह करके भी शास्त्रकारोंका तात्पर्य्य समझे विना श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके तथा श्री-निशीथचूर्णिकार और श्रीदशवैकालिकके चूलिकाकी वृहद्-

वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधिकमासकी गिनती निषेध करते पर भवका भय कुछ भी नही किया यह बडाही अफसोस है ।

और आगे जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तकके पृष्ठ ९१ की पंक्ति १९ वीं से पृष्ठ ९२ वें की प्रथम पंक्ति तक ऐसे लिखा है कि (पर्युषणा पर्व केवल भाद्रव मासके साथ प्रतिबन्धवाला है क्योंकि जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणापर्व का निरूपण किया है तिसमें भाद्रवमासका विशेषणके साथ ही कथन किया है परन्तु अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये है देखो, सन्देहविषौषधी ग्रन्थमें भी भाद्रव मास ही के विशेषण करके कहा है परन्तु ऐसा नही कहा कि अधिक मास होवे तो श्रावणमासमें करना ऐसा पर्युषणा पर्वके साथ विशेषण नही दिया है) उपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गकों दिखाता हु कि हे सज्जन पुरुषो न्यायाम्भोनिधिजीके उपर का लेखको में, देखता हुं तो मेरेको न्यायाम्भोनिधिजी में मिथ्या भाषणका त्यागरूप दूजा महाव्रतही नही दिखता है क्योंकि उपरके लेखमें तीन जगह प्रत्यक्ष मिथ्या भोले जीवोको भ्रमाने के लिये उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है सोही दिखाता हु कि प्रथमतो (पर्युषणापर्व केवल भाद्रव मासके साथ प्रतिबन्धवाला है क्योंकि जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणा पर्वका निरूपण किया है तिसमें भाद्रवमासका विशेषणके साथही कथन किया है) यह अक्षर लिखके मासवृद्धि होते भी भाद्रपद मासप्रतिबन्ध पर्युषणा न्यायाम्भोनिधिजी ठहराते है सो मिथ्या है क्योंकि

भाष्य, चूर्णि, वृत्त्यादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धि होनेसें श्रावणमासमें पर्युषणा करना लिखा है इसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंकी समीक्षामें शास्त्रोंके प्रमाण सहित न्याययुक्तिके साथ अच्छी तरहसें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १०७ से पृष्ठ ११७ तक छप गया है उसीकों पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेगा और दूसरा (अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कहगये है) यह लिखा है सोभी प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि श्रीखरतरगच्छके अनेक पूर्वाचार्य्योंने अनेक ग्रन्थोमें दो श्रावण होनेसें दूसरा श्रावणमें पर्युषणा करनी कही है सोही देखो श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसङ्घपट्टक वृहद्वृत्तिमें १। तथा श्रीसमाचारी ग्रन्थमें। २। श्रीजिनप्रभ सूरिजी कृत श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिमें। ३। तथा श्रीविधिप्रपा ग्रन्थमें। ४। श्रीउपाध्यायजी श्रीसमयसुन्दरजीकृत श्रीकल्पकल्पलता वृत्तिमें। ५। तथा श्रीसमाचारी शतकमें। ६। और श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पद्रुमकलिका वृत्तिमें। ७। और श्रीतपगच्छ तथा श्रीखरतरगच्छसम्बन्धी (तपा खरतर प्रश्नोत्तर) नाम ग्रन्थ है उसीमें। ८। और श्रीपर्युषणा सम्बन्धी चर्चापत्रमें। ९। इत्यादि अनेक जगह खुलासापूर्वक दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेका श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्य्योंनें कहा है तैसें ही श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने भी अनेक ग्रन्थोंमें दूसरे श्रावणमें ही पर्युषणा करना कहा है और खास न्यायाम्भोनिधिजी भी शुद्धसमाचारी पुस्तक सम्बन्धी अपनी जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तकके पृष्ठ ८७ की पंक्ति २२ वी सें पृष्ठ ८८ प्रथम पंक्ति तक लिखते हैं कि (श्रावण मास वढे

वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधिकमासकी गिनती निषेध करते पर भवका भय कुछ भी नही किया यह बड़ाही अफसोस है ।

और आगे जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तकके पृष्ठ ९१ की पंक्ति १९ वीं से पृष्ठ ९२ वें की प्रथम पंक्ति तक ऐसे लिखा है कि (पर्युषणा पर्व केवल भाद्रव मासके साथ प्रतिबन्धवाला है क्योंकि जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणापर्व का निरूपण किया है तिसमें भाद्रवमासका विशेषणके साथ ही कथन किया है परन्तु अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये है देखो, सन्देहविषौषधी ग्रन्थमें भी भाद्रव मास ही के विशेषण करके कहा है परन्तु ऐसा नही कहा कि अधिक मास होवे तो श्रावणमासमें करना ऐसा पर्युषणा पर्वके साथ विशेषण नही दिया है) उपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं कि हे सज्जन पुरुषो न्याया-म्भोनिधिजीके उपर का लेखको में, देखता हुं तो मेरेको न्यायाम्भोनिधिजी में मिथ्या भाषणका त्यागरूप दूसा महाव्रतही नही दिखता है क्योंकि उपरके लेखमें तीन जगह प्रत्यक्ष मिथ्या भोले जीवोंको भ्रमाने के लिये उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है सोही दिखाता हुं कि प्रथमतो (पर्यु-षणापर्व केवल भाद्रव मासके साथ प्रतिबन्धवाला है क्योंकि जिस किसी शास्त्रमें पर्युषणा पर्वका निरूपण किया है तिसमें भाद्रवमासका विशेषणके साथही कथन किया है) यह अक्षर लिखके मासवृद्धि होते भी भाद्रपद मासप्रतिबन्ध पर्युषणा न्यायांभोनिधिजी ठहराते है सो मिथ्या है क्योंकि

भाष्य, चूर्णि, वृत्त्यादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धि होनेसें श्रावणमासमें पर्युषणा करना लिखा है इसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंकी समीक्षामें शास्त्रोंके प्रमाण सहित न्याययुक्तिके साथ अच्छी तरहसें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १०७ सें पृष्ठ ११७ तक छप गया है उसीकों पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेगा और दूसरा (अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कहगये है) यह लिखा है सोभी प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि श्रीखरतरगच्छके अनेक पूर्वाचार्य्योंने अनेक ग्रन्थोमें दो श्रावण होनेसें दूसरा श्रावणमें पर्युषणा करनी कही है सोही देखो श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसङ्घपट्टक वृहद्वृत्तिसें १। तथा श्रीसमाचारी ग्रन्थमें। २। श्रीजिनप्रभ सूरिजी कृत श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिमें। ३। तथा श्रीविधिप्रपा ग्रन्थमें। ४। श्रीउपाध्यायजी श्रीसमयसुन्दरजीकृत श्रीकल्पकल्पलता वृत्तिमें। ५। तथा श्रीसमाचारी शतकमें। ६। और श्रीलक्ष्मी-बल्लभगणिजी कृत श्रीकल्पद्रुमकलिका वृत्तिमें। ७। और श्रीतप गच्छ तथा श्रीखरतरगच्छसम्बन्धी (तपा खरतर प्रश्नोत्तर) नाम ग्रन्थ है उसीमें। ८। और श्रीपर्युषणा सम्बन्धी चर्चापत्रमें। ९। इत्यादि अनेक जगह खुलासापूर्वक दूसरे श्रावणमें पर्यु-षणा करनेका श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्य्योंनें कहा है तैसें ही श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने भी अनेक ग्रन्थोंमें दूसरे श्रावणमें ही पर्युषणा करना कहा है और खास न्याया-म्भोनिधिजी भी शुद्धसमाचारी पुस्तक सम्बन्धी अपनी जैन सिद्धान्त समाचारी की पुस्तकके पृष्ठ ८७ की पंक्ति २२ वी सें पृष्ठ ८८ प्रथम पंक्तितक लिखते हैं कि (श्रावण मास वढे

तो दूसरे श्रावण शुदीमें और भाद्रव बढ़े तो प्रथम भाद्रव शुदीमें आषाढ़ चौमासेसें ५० में दिनही पर्युषणा करना परन्तु ८० अशीमें दिन नही करना ऐसा लिखके पृष्ठ १५५ में अपनेही गच्छके श्रीजिनपति सूरिजी रचित समाचारीका प्रमाण दिया है) इस अक्षरोंको न्यायाम्भोनिधिजी लिखते हैं और उपरोक्त श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्य्योंके ग्रन्थोंका दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने सम्बन्धी पाठोंको भी जानते हैं तथापि (अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये हैं) इतना प्रत्यक्ष मिथ्या लिखके अपना महाव्रत भङ्गके सिवाय और क्या लाभ उठाया होगा सो पाठकवर्ग विचार लेना—

और तीसरा (देखो सन्देहविषौषधी ग्रन्थमें भी भाद्रव मासहीके विशेषण करके कहा है परन्तु ऐसा नही कहा है कि अधिक मास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा पर्युषणापर्वके साथ विशेषण नही दिया है) यह लिखा है सो भी मायावृत्तिसें प्रत्यक्ष मिथ्या लिखा है क्योंकि श्री जिनप्रभसूरिजीनें श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिमें खुलासा पूर्वक दो श्रावण होनेसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनी कही है जिसका पाठ भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेके लिये इस जगह लिख दिखाता हुं श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिके पृष्ठ ३० और ३१ का तथाच तत्पाठः—

साम्प्रत पर्युषणा समाचारी विवक्षुरादौ पर्युषणा कदा विधेयेति श्रीमहावीरस्तद्गणधरशिष्यादीन् दृष्टान्तेनाह,तेणं कालेणमित्यादि। वासाणंति। आषाढ़चतुर्मासकदिनादारभ्य सविंशतिरात्रेमासे व्यतिक्रान्ते भगवान् पज्जोसवे

इति। पर्युषणामकार्षीत् सैकेणट्ठेणमित्यादि। प्रश्नवाक्यं अउणं इत्यादि। निर्वचनवाक्यं। प्रायेणागारिणां। गृह-स्थानामागाराणि गृहाणि। कडियाइं कटयुक्तानि उक्कं-पियाइं धवलितानि। छन्नाइं तृणादिभिः लित्ताइं छगणा दिभिः क्वचित् गुत्ताइंति पाठस्तत्र गुप्तानि वृत्तिकरद्वारपिधा-नादिभिः घट्टाइं विषमभूमिभञ्जनात्। मट्ठाइं श्लक्ष्णीकृतानि क्वचित् संमट्ठाइत्ति पाठस्तत्र समंतात् मृष्टानि मसृणीकृतानि संपधूमियाइं सौगन्ध्यापादनार्थं धूपनैर्वासितानि। खातोद-गाइं कृतप्रणालीरूपजलमार्गाणि खायनिद्धमणाइं निर्द्धमणं खालं गृहात् सलिलं येन निर्गच्छति अप्पणो अट्ठाए आ-त्मार्थं स्वार्थं गृहस्थैः कृतानि परिकर्म्मितानि करोति काण्डं करोतीत्यादाविव परिकर्म्मार्थत्वात् परिभुक्तानि तैः स्वयं परिभुज्यमानत्वात् अतएव परिणामितानि भवन्ति। ततः सविंशतिरात्रे मासे गते अमी अधिकरणदोषा न भवन्ति। यदि पुनः प्रथममेव साधवः स्थिता स्म। इति ब्रूयुः तदा ते गृहस्था मुनीनां स्थित्या सुभिक्षं संभाव्य तप्तायोगोल-कल्पाः दन्तालक्षेत्रकं कुर्युः तथा चाधिकरणदोषाः अतस्तत्प-रिहाराय पञ्चशतादिनैः स्थिता स्म इति वाच्यं चूर्णिकारस्तु कडियाइं पासेहिंतो कंवियाणि उवरिं इत्याह। स्थविरा स्थविरकल्पिकाः अज्जत्ताएत्ति अद्यकालीनाः आर्य्यतया व्रत स्थविरत्वेन इत्येके अंतरावियसे इत्यादि अंतरापि च अर्वा-गपि कल्पते, पर्युषितुं न कल्पते तां रजनीं भाद्रपदशुक्ल-पञ्चमीं उवायणावित्तएत्ति अतिक्रमितुं। उसनिवासे इत्या-गमिको धातु। इह हि पर्युषणाद्विधा गृहिज्ञाताऽज्ञात-भेदात्। तत्र गृहिणामज्ञाता यस्यां वर्षायोग्यपीठफलकादौ

यत्रैम कल्पोक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, स्थापना क्रियते। सायाढ़पौर्णमास्यां पञ्चपञ्चदिनवृद्धया यावद्भाद्रपदशितपञ्चम्यां सार्थैकादशशु पर्वतिथिषु क्रियते। गृहिज्ञाता तु यस्यां साम्वत्सरिकातिचारालोचनं लुञ्चनं पर्युषणाकल्पसूत्रकर्षणं चैत्य परिपाटी अष्टमं साम्वत्सरिकप्रतिक्रमणं च क्रियते ययाच व्रतपर्य्याय वर्षाणि गयण्ते सा नभस्य शुक्लपञ्चम्यां कालिक-सूर्य्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटं कार्य्या। यत्पुनरभिवर्द्धित-वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते। तत्सिद्धान्तटिप्पणानामनुसारेण तत्र हि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ़ एव वर्द्धते नान्येमासा स्तानि चाधुना सम्यक् न ज्ञायन्ते ततो दिनपञ्चाशतैव पर्युषणासङ्गतेति वृद्धाः ततश्च कालावग्रहश्चात्र जघन्यतो नभस्य शितपञ्चम्या आरभ्य कार्त्तिकचतुर्मासांतः सप्ततिदिनमानः उत्कर्षतो वर्षायोग्य क्षेत्रान्तराभावादाषाढ़-मासकल्पेन सह वृष्टिसद्भावात् मार्गशीर्षेणापि सह षण्मासा इति।

देखिये उपरके पाठमें एकमास और वीश दिने पर्युषणा श्रीतीर्थङ्कर गणधर स्थिविराचार्य्यादि करते थे तैसेही वर्त्तमानमें भी एकमास वीश दिने याने पचास दिने पर्युषणा करनेमें आती है और मासवृद्धि होनेसे वीश दिने पर्युषणा जैन टिप्पणानुसार दिखाई और वर्त्तमानमें जैन टिप्पणाके अभावसें पचास दिनेही पर्युषणा करनी कही इससें दो श्रावण हो तो दूसरे श्रावणमें अथवा दो भाद्रपद हो तो प्रथम भाद्रपदमें पचास दिनेही पर्युषणा सम्यक्त्व-धारियोंको करनी योग्य है, तैसेही श्रीखरतरगच्छवाले करते हैं परन्तु हठवादियोंकी बातही जूदी है—

और इन्ही महाराज श्रीजिनप्रभसूरिजीनें श्रीसन्देह-विषौषधी वृत्तिमें श्रीकल्पसूत्रजीके मूलपाठकी व्याख्या किये बाद इन्ही श्रीकल्पसूत्रकी निर्युक्ति जो कि सुप्रसिद्ध श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत है उसकी व्याख्या किवी है उसीमें काल ठवणाधिकारे समयादि कालसें आवलिका, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, सम्वत्सर, युगादिकी व्याख्या करके आगे अधिक मासको अच्छी तरहसें प्रमाण किया है और प्राचीनकालाश्रय जैसे चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिने पर्युषणा तैसेंही अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिने पर्युषणा खुलासा पूर्वक कही है और श्रीनिशीथचूर्णिके दशवे उद्देशेमें जैसे पर्युषणा सम्बन्धी व्याख्या है तैसेही उन्ही महाराजनें भी प्रायः उसीके सदृश अच्छी तरहसें व्याख्या किवी हैं

और इन्ही महाराज श्रीजिनप्रभ सूरिजीनें श्रीविधिप्रपा नाम ग्रन्थ बनाया है उसीके पृष्ट ५३ में जैसा पाठ है वैसाही नीचे मुजब जानो ;—

आसाढ चउम्मासियाओ नियमा पणासइमे दिणे पज्जोसवणा कायव्वं न इक्कपंचासइमे जयावि लोइय टिप्पणयाणुसारेण दो सावणा दो भद्दवया वा भवंति तयावि पन्नासइमे दिणे नउण कालचूलाविरकाए असीइमे सवीसइराइमासे वइक्कंते पज्जोसवणंतित्ति वयणाउ जंच अभिवद्दियंमि वीसत्तुवुत्तं तं जुगमज्जे दो पोसा जुगअंते दोवी आसाढत्ति सिद्धंतटिप्पणयाणुरोहेणं चेव घडइ ते संपयं नवट्ट तित्ति जहुत्तमेव पज्जोसवणादिणति ॥

अब सत्यग्राही सज्जनपुरुषोंसे मेरा इतनाही कहना है कि उपरमें श्रीखरतरगच्छके श्रीजिनप्रभसूरिजीनें श्रीसन्देह-

विर्यौषधी वृत्तिमें और श्रीविधिप्रपामें खुलासाके साथ मासवृद्धिकी गिनतीसें वर्त्तमानमें पचास दिने पर्युषणा कही है सो दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करनी यह प्रसिद्ध बात है और न्यायाम्भोनिधिजी खास करके श्रीसन्देहविषौषधी वृत्तिका और श्रीविधिप्रपा ग्रन्थका उपरोक्त पर्युषणा सम्बन्धी पाठको अच्छी तरहसें जानते थे क्योंकि श्रीविधिप्रपा ग्रन्थका पाठ खास आपने चतुर्थ स्तुति निर्णयः पुस्तकके पृष्ठ ८३। ८४। ८५ में लिखा है।

और मैंनें जो उपरमें श्रीविधिप्रपा ग्रन्थका पाठ पर्युषणा सम्बन्धी लिखा हैं उसी पाठके पहली पंक्तिका पाठ दोनु जगहसें काटकरके अधूरा ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप और श्रीखरतरगच्छके तथा दूसरे भोले श्रावकोंको भ्रममें गेरनेके लिये न्यायाम्भोनिधिजीनें जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ८८ के अन्तमें लिखा है (जिसका खुलासा आगे करनेमें आवेगा) इससें पर्युषणा सम्बन्धी उपरका पाठ न्यायाम्भोनिधिजी जानते थे तथापि अपनी मिथ्या बात रखनेके लिये (अधिकमास होवे तो श्रावण मासमें पर्युषणा करना ऐसा तो तुमारे गच्छवाले भी नही कह गये है) यह वाक्य और सन्देहविषौषधी ग्रन्थमें भी (ऐसा नही कहा कि अधिक मास होवे तो श्रावणमासमें पर्युषणा करना) यह वाक्य न्यायाम्भोनिधिजी माया वृत्तिसें प्रत्यक्ष मिथ्या कैसे लिख गये होंगे सो मेरेकों बड़ाही अफसोस है ;—इस लिये मेरे कों इस जगह लिखना पड़ता है कि श्रीजिनप्रभ सूरिजीनें श्रीसन्देह विषौषधी वृत्तिमें तो कदाग्रही और सन्देहकारी

रुषोंका अच्छी तरहसें सन्देहका (पर्युषणा सम्बन्धी और
ल्याणक सम्बन्धी भी) निवारण किया है जो स्थिरचित्तसें
ाँचके सत्यग्राही होगा उसीका तो अवश्य करके मिथ्यात्व
:प सन्देह निकलके सम्यक्त्वरूप सत्यबातकी प्राप्ति हो
ावेगा इसमें कोई शक नही—

और श्रीखरतरगच्छके तो क्या परन्तु श्रीतपगच्छके ही
र्वाचार्य्योंनें मासवृद्धिके अभावसें भाद्रपदमें पर्युषणा करनी
हीं है और दो श्रावण होनेसें पचासदिने दूजा श्रावणमें
ी पर्युषणा करनी कही है इसका विस्तार उपरमें अनेक
गह छपगया है। इसलिये श्रीखरतरगच्छके पूर्वाचार्य्यजी
त ग्रन्थका मासवृद्धि सम्बन्धी पाठको छुपाकर मासवृद्धिके
भावका पाठ मासवृद्धि होते भी भोले जीवोंको दिखा
र सत्य बात परसें श्रद्धाभङ्ग करके अपनी कल्पित
ातमें गेरनेका कार्य्य करना न्यायांभोनिधिजीकों उचित
ही था;—

और आगे फिर ...ो न्यायाम्भोनिधिजीनें अपनी जैन
सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ९२ की दूसरी पंक्तिसें
ोलवी पंक्तितक जो लिखा है सो नीचे मुजब जानो,—

[पृष्ठ १५९ पंक्ति ६ में नारचंद्र ज्योतिष ग्रन्थका
माण दिया है सो तो हीरीके स्थानमें वीरीका विवाह कर
दिया है। क्योंकि इसी द्वितीय प्रकरणमें ऐसा श्लोक है।
यथा—हरिशयनेऽधिकमासे, गुरुशुक्रास्तेनलग्नमन्वेष्यं॥
लग्नेशांशाधिपयो,र्नीचास्तगमे च न शुभं स्यात्॥ १॥

भावार्थः अधिक मासादिक जितने स्थान बताये उसमें
शुभ कार्य्य नही होते है। तो अब बारामासिक पर्युषणा-

पर्व कैसे करनेकी सङ्गति होगी ? और रत्नकोपास्य ज्योतिःशास्त्र विषे भी ऐसा कहा है । यथा—'यात्राविवाहमण्डन, मन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि ॥ परिहर्त्तव्यानि बुधैः, सर्वाणि नपुंसके मासि ॥ १ ॥

भावार्थः यात्रामण्डन, विवाहमण्डन, और भी शुभकार्य्य है सो भी पण्डित पुरुषोंमें सर्व नपुंसके मासि कहनेसें अधिक मासमें त्यागने चाहीये । अब देखीये ; इस लेखसें भी अधिक मासमें अति उत्तम पर्युषणापर्व करनेकी सङ्गति नही होसकती है ।]

ऊपरके न्यायाम्भोनिधिजीका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गकों दिखाता हुं कि (पृष्ठ १५९ में नारचन्द्र ज्योतिष ग्रन्थका प्रमाण दिया है सो तो हीरीके स्थानमें थीरीका विवाह कर दिया है) इन अक्षरोंको लिखके जो शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५९ मे नारचन्द्र ज्योतिषका श्लोक है उसी को न्यायांभोनिधिजी निषेध करना चाहते हैं सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि उसी श्लोकका मतलब सत्य है देखो शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५९में नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका ऐसा श्लोक है यथा—'रविक्षेत्रगते जीवे, जीव क्षेत्रगते रवौ ।' दीक्षां स्थापनां चापि, प्रतिष्ठा च न कारयेत् ॥ १ ॥ इस श्लोक लिखनेका तात्पर्य्य ऐसा है कि वादी शङ्का करता है कि अधिकमासमें शुभकार्य्य नही होते हैं तो फिर पर्युषणापर्व भी शुभकार्य्य अधिकमासमें कैसे होवे इस शङ्काका समाधान शुद्धसमाचारीकार पं० प्र० यतिजी श्रीरायचन्द्रजी ऐसे करते हैं कि अधिक मासके सिवाय भी 'रविक्षेत्रगते जीवे, याने सूर्य्यका क्षेत्रमें गुरुका जाना होवे'

अर्थात् सिंहराशि पर गुरुका आना होवे तब सिंहे गुरु सिंहस्थ तेरह मास तक कहा जाता है उसीमें और 'जीवक्षेत्र गते रवौ, याने गुरुका क्षेत्रमें सूर्य्यका जाना होवे अर्थात् गुरुका क्षेत्रमें सूर्य्य धन और मीन राशिपर पौष और चैत्र मासमें आता है तब उसीको मलमास कहे जाते हैं उसीमें अर्थात् सिंहस्थका और मलमासका ऐसा योग बने तब गृहस्थको दीक्षा देना तथा साधुको सूरि वगैरह पदमें स्थापन करना और प्रतिष्ठा करनी ऐसे कार्य्य नही करना चाहिये क्योंकि ऐसे योगमें दीक्षादि कार्य्य करनेसें इच्छित फल-प्राप्त नही हो सकता है इसलिये उपरोक्तादि अनेक कारण-योगे मुहूर्त्तके निमित्त कारणसें जो जो कार्य्य करनेमें आते हैं सो निषेध किये हैं परन्तु आत्मसाधनका धर्मरूपी महान् कार्य्य तो बिना मुहूर्त्तका होनेसें किसी जगह कोई भी कारणयोगे निषेध करनेमें नही आया है और अधिक मासमें धर्मकार्य्य पर्युषणादि करनेका कोई शास्त्रमें निषेध भी नही किया है इसलिये अधिक मासादिमे धर्मकार्य्य अवश्यही करना चाहिये यह तात्पर्य्य शुद्धसमा-चारी कारका जैनशास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक न्यायसम्मत होनेसें मान्य करने योग्य सत्य है इसलिये निषेध नही हो सकता है तथापि न्यायांभोनिधिजी अपनी कल्पित बातको स्थापनेके लिये शुद्धसमाचारीकारकी सत्य बातका निषेध करते हैं सोभी इस पंचमे कालके न्यायके समुद्रका नमुना है और शुद्धसमाचारीकार पं० प्र० यतिजी श्रीराय-चन्द्रजी थे, इसलिये (हीरीके स्थानमें वीरीका विवाह कर दिया है) यह अक्षर न्यायांभोनिधिजीको बिना विचार

किये ऐसे मिथ्या लिखना उचित नही था, इसका विशेष विचार पाठकवर्ग अपनी बुद्धिसें स्वयं कर लेना ;—

और (इसी द्वितीय प्रकरणमें ऐसा श्लोक है यथा— हरिशयनेऽधिकमासे, गुरुशुक्रास्ते न लग्नमन्वेष्यं ॥ लग्नेशांशाधिपयो,र्नीचास्तगमे च न शुभं स्यात् ॥१॥ भावार्थः अधिक मासादिक जितने स्थान बतायें उसमें शुभकार्य्य नही होते हैं तो अब यारा मासिक पर्युषणापर्व कैसे करनेकी सङ्गति होगी) इस उपरके लेखसें न्यायांभोनिधिजीनें अधिक मासमें पर्युषणा करनेका निषेध किया इस पर मेरेकों प्रथमतो इतनाही लिखना पड़ता है कि उपरके श्लोकका अधूरा भावार्थ लिखके न्यायाम्भोनिधिजीनें भोले जीवोंकों भ्रममें गेरे हैं इसलिये इस जगह उपरके श्लोकका पूरा भावार्थ लिखनेकी जरूरत हुई सो लिखके दिखाता हुं— हरिशयने, याने, जो श्रीकृष्णजीका शयन (सोना) लौकिक में आषाढ़शुक्ल एकादशी (११) के दिनसें कार्त्तिकशुक्ल एकादशीके दिन तक चार मासका (परन्तु मासवृद्धि दो श्रावणादि होनेसें पांच मासका) कहा जाता हैं उसीमें १, और वैशाखादि अधिक मासमें २, गुरुका अस्तमें ३, शुक्रका अस्तमे ४, और ज्योतिष शास्त्र मुजब लग्नके नवांशांका अधिपति नीचा हो ५, अथवा अस्त हो ६, इतने योगोंमें पण्डित पुरुषको लग्न नही देखना चाहिये क्योंकि उपरके योगोमें लग्न देखे तो शुभ फल नही हो सकता है इसलिये ज्योतिषशास्त्रोमें उपरके योगोमे लग्न देखनेकी मनाई किवी है इस तरहसें उपरोक्त श्लोकका भावार्थ होता है ॥ १ ॥

अब न्यायाम्भोनिधिजीने नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका

जो ऊपरमें श्लोक लिखके पर्युषणा पर्वका निषेध किया है उस सम्बन्धी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो शुद्धसमाचारीकारने इसीही नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणाका जो श्लोक लिखाथा उसीको भावार्थ सहित में ऊपरमें लिख आया हुं—जिसमें खुलासे लिखा है कि तेरहमास तक सिंहस्थमें और पौष तथा चैत्र ऐसे मलमासमें मुहूर्त्तके निमित्तिक शुभकार्य्य नही होते हैं परन्तु विना मुहूर्त्त का धर्म कार्य्य करनेमें हरजा नही क्योंकि तेरहमासका सिंहस्थमें पर्युषणादि धर्मकार्य्य तो अवश्य ही करने में आते है और पौषमासमें श्रीपार्श्वनाथस्वामिजीका जन्म और दीक्षा कल्याणकके धर्मकार्य्य और चैत्रमासमें श्रीआदिजिनेश्वर भगवान्का जन्म और दीक्षा कल्याणकके धर्मकार्य्य करनेमें आते हैं और चैत्रमासमें ओलियांकी भी तपश्चर्या वगैरह करनेमें आती है और खास अधिकमासमें भी पाक्षिकादि धर्मकार्य्य करनेमें आता है इस लिये मुहूर्त्तके निमित्तिक कार्य्य अधिकमासमें नही हो सकते है परन्तु धर्मकार्य्य तो विना मुहूर्त्तका होनेसें अवश्यही करनेमें आता है यह तात्पर्य्य शुद्ध समाचारी कारका सत्यंथा तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने (पृष्ठ १५९ पंक्ति ६ में नारचन्द्र ज्योतिष ग्रन्थका प्रमाण दिया है सो तो हीरीके स्थानमें वीरीका विवाह कर दिया है) ऐसा उपहासका वाक्य लिखके उपरोक्त सत्यबातका निषेध करदिया और फिर उसी स्थानका 'हरिशयने, इत्यादि श्लोक लिखके हरिशयने श्रीकृष्णजीका शयन (सोना) जो चौमासामें और अधिक मासमें शुभकार्य्य का न होना दिखाकर पर्यु-

पया पर्वका भी नही होनेका उत्सूत्र भाषणरूप दिखाते कुछ भी विचार न किया क्योंकि चौमासेमें मुहूर्त्त निमित्तिक शुभकार्य्य नहीं होते है परन्तु विना मुहूर्त्तका श्रीपर्युषणा पर्वतो मानकरके श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने वर्षा ऋतुमें करनेका कहा है जिसका किञ्चिन्मात्र भी न्यायाम्भोनिधिजी विचार न करते श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें और विद्वान् पुरुषोंके आगे अपने नामकी हासी करानेका कारणरूप हरिशयन का चौमासमें और अधिक मासमें शुभकार्य्यका न होनेका दिखाकर पर्युषणापर्व न होनेका भोले जीवोंको दिखाया। हा अतीव खेदः इस उपरकी बातको पाठकवर्गको तथा न्यायाम्भोनिधिजीके परिवारवालोंकों और उन्होंके पक्षधारियोंकों (सत्यग्राही हो कर) दीर्घदृष्टिसें विचारनी चाहिये;—

दूसरा औरभी सुनो—जो न्यायांभोनिधिजीके तथा उन्होंके परिवारवालोंके दिलमें ऐसाही होगा कि मुहूर्त्तके निमित्तका शुभकार्य्य न होवे वहां विना मुहूर्त्तका धर्मकार्य्य भी नही होना चाहिये तब तो उन्होंके आत्माका सुधारा धर्मकार्य्योंके विना होनाही मुश्किल होगा क्योंकि ज्योतिषशास्त्रोंके आरम्भसिद्धि ग्रन्थमें १, तथा लघु वृत्तिमें २, और वृहद्वृत्तिमें ३, जन्मपत्री पद्धतिमें ४, नारचन्द्र-प्रकरणमें ५, तथा तट्टिप्पणमें ६, लग्नशुद्धिग्रन्थमें ७, तत् वृत्तिमें ८, मुहूर्त्तचिन्तामणिमें ९, वृहत् मुहूर्त्तसिन्धुमें १० दूसरी मुहूर्त्तचिन्तामणिमें ११, तथा पीयूषधारा वृत्तिमें १२, मुहूर्त्तमार्त्तण्डमें १३, विवाह वृन्दावनमें १४, प्रथम और दूसरा विवाहपटल ग्रन्थमें १५-१६, चार प्रकरणका नारचन्द्र

में १७, रत्नकोषमें १८, लग्नचन्द्रिकामें १९, ज्योतिषसारमें २०, और ज्योतिर्विदाभरण वृत्तिमें २१, इत्यादि अनेक ज्योतिष शास्त्रोंमें कितनेही मास १, कितनीही संक्रान्ति २, कितनेही वार ३, कितनीही तिथियां ४, कितनेही योग ५, कितनेही नक्षत्र ६, और जन्मका नक्षत्र ७, जन्मका मास ८, अधिक मास ९, क्षयमास १०, अधिक तिथि ११ क्षय तिथि १२, व्यतीपात १३, और कृष्णपक्षकी तेरस चौदश अमावस्या इन क्षीण तिथियोंमें १४, पापग्रहयुक्त चन्द्रमें १५, पापग्रह युक्त लग्नमें १६, गुरुका अस्तमें १७, शुक्रका अस्तमें १८, गुरु शुक्रकी वाल और वृद्धावस्थामें १९, ग्रहणके सात दिनोंमें २०, लग्नका स्वामी नीचामें २१, और अस्तमें २२, सन्मुख योगिनीमें २३, चन्द्रदग्ध तिथिमें २४, सन्मुख राहुमें २५, सिंहस्थ में २६, मलमासमें २७, हरिशयनका चौमासामें २८, भद्रामें २९, और तिथि, वार, नक्षत्र, लग्न, दिशा वगैरह आपसमें अशुभ योगोंमें ३०, इत्यादि अनेक निमित्त कारणोंसे मुहूर्त्त निमित्तिक शुभकार्य्य वर्ज्जन किये हैं इस लिये न्यायांभोनिधिजी तथा उन्होंके परिवारवाले जो ज्योतिषशास्त्रोंके अशुभ योगोंसे शुभकार्य्योंका वर्ज्जन देखके धर्मकार्य्योंका भी वर्ज्जन करेंगे तब तो उन्होंको धर्मकार्य्य कब करनेका वख्त मिलेगा अथवा शुभयोग विना धर्मकार्य्य न करते किसीका आयुष्यपूर्ण हो जावे तो उन्हकी आत्माका सुधारा कब होगा सो पाठकवर्ग बुद्धिजन पुरुष विचार लेना—और मेरा इसपर आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको इतनाही कहना है कि न्यायांभोनिधिजी उपरोक्त ज्योतिष शास्त्रोंके शुभाशुभयोगोंको न देखते सिंहस्थमें तथा हरिशयनका

चौमासामें और अधिक मासादिमें धर्मकार्य्य करते होवेंगे तब तो 'हरिशयनेऽधिके मासे इत्यादि उपरका श्लोक नारचन्द्रके दूसरे प्रकरणका लिखके अधिक मासादि जितने स्थान बताये उसमें शुभकार्य नही होता है, ऐसे अक्षर लिखके पर्युषणा पर्व करनेका निषेध भोले जीवोंको वृथा क्यो उत्सूत्र भाषणरूप दिखाया और उत्सूत्र भाषणका भय होता तो उपरकी मिथ्या बातों लिखी जिसका मिथ्या दुष्कृत्य देकरके अपनी आत्माकी शुद्धि करनी उचित थी और न्यायांभोनिधिजीके परिवारवालोंको ऐसा उत्सूत्र भाषणरूप मिथ्या बातोंका अब हठ भी करना उचित नही है— इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी सज्जन पुरुषोसें मेरा यही कहना है कि, ज्योतिषके शुभाशुभ योगोका और सिंहस्थका, चौमासाका, अधिक मासादिक का विचार न करते, निःशङ्कित होकर श्रीजिनोक्त मुजब धर्मकार्य्योंमें उद्यम करके अपनी आत्माका कल्याण करो आगे इच्छा तुम्हारी ;—

और आगे फिर भी न्यायांभोनिधिजीमें लिखा है कि [रत्नकोषाख्य ज्योतिःशास्त्र विषे भी ऐसा कहा है यथा यात्रा विवाहमण्डन, मन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि, परि-हर्त्तव्यानि बुद्धैः, सर्वाणि नपुंसके मासि ॥ १ ॥

भावार्थः—यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभ कार्य्य है सो भी पण्डित पुरुषोंने सर्व नपुंसके मासि कहने से अधिक मासमें त्यागने चाहिये अब देखिये इस लेखसे भी अधिक मासमें अत्युत्तम पर्युषणापर्व करनेकी संगति नही हो सकती है]

इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्ग को दिखाता हुं- जिसमें प्रथमतो न्यायांभोनिधिजीकों ज्योतिषग्रन्थका विवाहादि कार्य्योंका दृष्टान्त दिखा करके पर्युषणा पर्वका निषेध करनाही उचित नही है इसका उपरमें अच्छी तरहसें खुलासा हो गया है और दूसरा यह है कि श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंनें मासवृद्धिको काल- चूलाकी उत्तम ओपमा दिवी है तथापि न्यायांभोनिधिजीनें तीनों महाशयोंका अनुकरण करके श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें तथा इन महाराजोंकी आशातना का भय न करते मासवृद्धिको नपुंसककी तुच्छ ओपमा लिख करके भोले जीवोंको अपने फन्दमें फसाये हैं सो वड़ाही अफसोस है और तीसरा यह है कि रत्नकोषाख्य (रत्नकोष) ज्योतिष शास्त्रमें तो मुहूर्त्तके निमित्तसें जो जो कार्य्य होते हैं उसीमें अनेक कारण योग वर्ज्जन किये हैं उसीकों सब कों छोड़करके सिर्फ एक अधिक मास सम्बन्धी लिखते हैं सो भी न्यायांभोनिधिजीको अन्याय कारक है इसलिये मुहूर्त्त के कार्य्योंको दिखाकर बिना मुहूर्त्तका पर्युषणापर्व करनेका निषेध करना योग्य नही हैं ।

और भी चौथा सुनो–(यात्रामण्डन, विवाहमण्डन और भी शुभकार्य्य है सोभी पण्डित पुरुषोंनें सर्व नपुंसके मासि कहनेसें अधिक मासमें त्यागने चाहिये) इसपर मेरा इतना ही कहना है कि पूर्वोक्त तीनों महाशय और चौथे न्यायां- म्भोनिधिजी यह चारों महाशय अधिकमासको नपुंसक कहके जो सर्व शुभकार्य्य त्यागने का ठहराते है । इससे तो यह सिद्ध होता है कि पौषध, प्रतिक्रमण, ब्रह्मचर्य्य,

दान, पुण्य, परोपगार, सात क्षेत्रमें द्रव्यखर्चना, जीव दया, देवपूजा, गुरुवन्दनादि देवगुरुभक्ति, साधर्मिक-वात्सल्य, विनय, वैयावच्च, आत्मसाधनरूप स्वाध्याय, ध्यानादि, श्रावकके और धर्मोपदेशका व्याख्यानादि साधुके उचित जो जो शुभकार्य्य है उन्ही शुभकार्य्योंकों अधिक मासको नपुंसक कहके त्याग देनेका चारों महाशयोंनें उपदेश किया होगा । भक्तजनोंको त्यागनेका नियम भी दिलाया होगा, आपने भी त्यागे होवेंगें और अधिक मासको नपुंसक कहके शुभकार्य्य चारों महाशय त्यागनेका ठहराते है इससें अशुभ कार्य्योंका ग्रहण होता है इसलिये उपरोक्त कार्य्योंसें विरुद्ध याने अधिक मासको नपुंसक जानके सर्व शुभकार्य्य त्यागते हुए—निन्दा, ईर्षा, झगड़ादि अशुभकार्य्य करनेका चारों महाशयोंनें उपदेश किया होगा । दृष्टि रागियोंसें करानेका नियम भी दिलाया होगा और अपने भी ऐसे ही किया होगा । तब तो (अधिक मासमें सर्वशुभकार्य्य त्यागनेका) ज्योतिष-शास्त्रका नामसें चारों महाशयोंका लिखके ठहराना उचित ठीक होसके परन्तु जो अधिक मासमें निन्दा ईर्षादि अशुभकार्य्य त्यागके देवगुरुभक्ति वगैरह शुभकार्य्य चारों महाशयोंने करनेका उपदेश दिया होगा भक्तजनोंसे करानेका नियम भी दिलाया होगा और अपने भी उपरके अशुभ कार्य्योंका त्यागकरके शुभकार्य्योंको किये होवेंगे तबतो अधिक मासमें ज्योतिष शास्त्रका नाम लेकरके सर्व शुभकार्य्य त्यागनेका ठहराना चारों महाशयोंका भोले जीवोंको भ्रममें गेरके मिथ्यात्व बढ़ानेके सिवाय

और क्या होगा सो बुद्धिजन सज्जनपुरुष स्वयं विचार लेना।

अब पांचमा और भी सुनो कि जो न्यायाम्भोनिधिजी अधिक मासको नपुंसक कहके यात्रा मण्डनका शुभकार्य्य त्यागनेका ठहराते है परन्तु जैनके और वैष्णवके अनेक तीर्थ स्थान है उसीमें अमुक अधिकमासमें अमुक तीर्थयात्रा बन्ध हुई कोई देशी परदेशी यात्री यात्रा करने को न आया ऐसा देखनेमें तो दूर रहा किन्तु पाठकवर्गके सुननेमें भी नही आया होगा तो फिर न्यायाम्भोनिधिजीने कैसे लिखा होगा सो पाठक वर्ग विचार लेना।

और छठा यह है कि न्यायाम्भोनिधिजी किसी भी अधिक मासमें कोई भी श्रीशत्रुंजय वगैरह तीर्थस्थानमें ठहरे होवे उस अधिक मासमें तीर्थयात्रा खास आपने किवी होगी तो फिर अधिक मासमें यात्राका निषेध भोले जीवोंको वृथा क्यों दिखाया होगा सो निष्पक्षपाती सज्जन पुरुष स्वयं विचार लो ;—

और सातमी वारकी समीक्षामें कदाग्रहियोंका मिथ्यात्व रूप भ्रमको दूर करनेके लिये मेरेकों लिखना पड़ता है कि न्यायाम्भोनिधिजी इतने विद्वान् न्यायके समुद्र होते भी गच्छका मिथ्या हठवादसें संसार व्यवहारमें विवाहादि वड़े ही आरम्भके कराने वाले और अधो-गतिका रस्तारूप लौकिक कार्य्य न होनेका दृष्टान्त दिखाकर महान् उत्तमोत्तम निरारम्भी ऊर्द्ध गतिका रस्तारूप लोकोत्तर कार्य्यका निषेध करती वख्त न्याया-म्भोनिधिजीके विद्वत्ताकी चातुराई किस जगह चली गईथी सो प्रत्यक्ष असङ्गत और उत्सूत्र भाषणरूप लिखते

ज़रा भी विचार न आया क्योंकि विवाहादि कार्य्य तो चौमासामें और रिक्तातिथिमें तथा कृष्णचतुर्दशी अमावस्यादि तिथि वगैरह कु वार कु नक्षत्र कु योगादि अनेक कारण योगामें निषेध किये हैं और श्रीपर्युषणादि धर्मकार्य्य तो विशेष करके चौमासामें रिक्तातिथिमें तथा कृष्ण चतुर्दशी अमावस्यादि तिथियोंमें कु वार कु नक्षत्र कु योगादि होते भी तिथि नियत पर्व करनेमें आते हैं इस बातका विवेक बुद्धिसें हृदयमें विचार किया होता तो विवाहादि कार्य्योंका दृष्टान्तसें महान् उत्तम पर्युषणा पर्व करनेका निषेधके लिये कदापि लेखनी नही चलाते यह बातपाठकवर्गको अच्छी तरहसें विचारनी चाहिये ;—

और भी आठमी तरहसें सुन लीजिये—कि पूर्वोक्त तीनों महाशयोंनें और चौथे न्यायांभोनिधिजीनें भोले जीवों के आत्मसाधनका धर्मकार्य्योंमें विघ्नकारक, अधिक मासको तुच्छ नपुंसकादिसें लिखा है सो निःकेवल श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणरूप प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि धर्मकार्य्योंमें अधिक मास उत्तम श्रेष्ठ महान् पुरुषरूप है (इसलिये अधिकमासमें धर्मकार्य्योंका निषेध नही हो सकता है) इस बातका विशेष विस्तार दृष्टान्त सहित युक्तिके साथ अच्छी तरहसें सातमें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा सो पढ़नेसें सर्व निःसन्देह हो जावेगा ;—

और आगे फिर भी न्यायांभोनिधिजीनें अधिक मास को निषेध करनेके लिये जैन सिद्धान्तसमाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ ८२ की पंक्ति १७ सें पृष्ठ ८३ की आदिमें अर्द्ध पंक्ति तक

लेख लिखके अपनी चातुराई प्रगट किवी हैं उसीका उतारा नीचे मुजब जानो—

[अधिक मासको अचेतन रूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है तो औरोको अङ्गीकार न करना इसमें तो क्याही कहना देखो आवश्यक निर्युक्ति विषे कहा है यथा— जइ फुल्ला कणिआरडा, चूअग अहिमासयंमिघुटंमि। तुहनखमं फुल्लेउ, जइ पच्चंता करिंति हमराई ॥ १ ॥ भावार्थः हे अंब अधिक मासमें कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फुलना उचित नही है क्योंकि यह जाति विनाके आडम्बर दिखाते हैं अब देखिये हे मित्र यह अच्छी जातिकी वनस्पति भी अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होती है]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गकों दिखाता हुं—कि हे सज्जन पुरुषों न्यायाम्भोनिधिजीनें प्रथमतो (अधिकमासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है) यह अक्षर लिखे है सो प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि दशलक्ष प्रत्येक वनस्पति तथा चौदह लक्ष साधारण वनस्पति यह चौवीश लक्ष योनीकी सब वनस्पति अवश्यमेव अधिक मासमें हवा पाणीके संयोगसें यथोचित नवीन पैदाश होती है औरवृद्धि पामती है प्रफुल्लित होती है और निमित्त कारणसें नष्ट भी होजाती है जैसे बारह मासोंमें हानी वृद्धयादि वनस्पतिका स्वभाव है तैसे ही अधिक मास होनेसे तेरह मासोंमें भी बरोबर है यह बात अनादि कालसें चली आती है और प्रत्यक्ष भी दिखती है क्योंकि इस संवत् १९६६ का लौकिक पञ्चाङ्गमें दो

श्रावण मास हुये है तब भी दोनु श्रावण मासमें वर्षा भी खुब (गहरी) हुई है तथा वनस्पति को भी नवीन पैदा होते वृद्धि होते और हरी होते पाठकवर्गने भी प्रत्यक्ष देखा है और देश परदेशके सब बगीचोंमें भी दोनु मासोंमें फलों करके तथा फूलों करके वृक्ष प्रफुल्लित पाठकवर्गके देखनेमें आये होंगें और हरेक शहरोंमें वनमालि लोग अधिक मासमें शाक, भाजी, फल, फूल, वेचते हुये सब पाठकवर्गके देखनेमें आते हैं यह बात तो हरेक अधिक मासमें प्रत्यक्ष देखनेमें आती है परन्तु कोई भी अधिक मासमें कोई भी देशमें कोई भी शहरमें शाक, भाजी, फल, फूलादि नवीन पैदा नही होते तथा शहरमें भी वनमालि लोग वेचनेको नही आये हैं वैसा तो कोई भी पाठकवर्गके सुननेमें भी कभी नही आया होगा। यह दुनिया भरकी जगत् प्रसिद्ध बात है इस लिये अधिक मासको वनस्पति अवश्य ही अङ्गीकार करती है तथापि न्यायाम्भोनिधिजीने (अधिकमासको अचेतनरूप वनस्पति भी नहीं अङ्गीकार करती है) यह प्रत्यक्ष मिथ्या भोले जीवोंको भ्रममें गेरनेके लिये लिख दिया—यह बड़ा ही अफसोस है।

और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजी (अधिक मासको अचेतनरूप वनस्पति भी नही अङ्गीकार करती है तो औरोंको अङ्गीकार न करना इसमें तो क्याही कहना) इस लेखको लिखके मनुष्यादिकोंको अधिक मास अङ्गीकार नही करनेका ठहराते है इस पर तो मेरेको इतनाही कहना है कि न्यायाम्भोनिधिजीके कहनेसें तो सब दुनियाके सब लोगोंकें अधिक मासमें खाना, पीना, सोना, बैठना

लेना, देना, स्त्रियोंकों गर्भका होना और वृद्धि पामना, जन्मना, मरणा, और संसारिक व्यवहारमें व्यापारादि कृत्य करना, दुनीयामें रोगी, तथा निरोगी होना, और दान पुण्यादि भी करना, इत्यादि पाप और पुण्यके कार्य्य करना ही नही होता होगा तब तो मनुष्यादिकोंकों अधिक मास अङ्गीकार नही करनेका ठहराना न्यायाम्भोनिधिजीका बन सके परन्तु जो ऊपरके कहे, पाप, पुण्यके, कार्य्य दुनियाके लोग अधिक मासमें करते है इस लिये न्यायाम्भोनिधिजी का ऊपरका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या होनेसें पक्षपाती हठग्राहीके सिवाय आत्मार्थी बुद्धिजन कोई भी पुरुष मान्य नही कर सकते है इसको विशेष पाठकवर्ग विचारलेना ;—

और आगे फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथा लिखी है सो भी निर्युक्तिकार श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामिजीके विरुद्धार्थमें उत्सूत्रभाषणरूप और इस गाथाका सम्बन्ध तथा तात्पर्य्य समझे बिना भोले जीवोंकों संशयमें गेरे हैं इसका विशेष विस्तार सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नाम की समीक्षामें अच्छी तरहसें किया जावेगा सो पढ़के सर्वनिर्णय करलेना—और फिर भी न्यायाम्भोनिधिजीनें श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका भावार्थ लिखा है कि (हे अंब अधिक मासमें कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फूलना उचित नही है क्योंकि यह जाति बिनाके आडम्बर दिखाते हैं) इस लेखसे अधिक मासमें कणियरको फूलना ठहराते अंबको नही फूलना ठहराकर कणियरको तुच्छ जातिकी और अंबको उत्तम जातिका ठहराते हैं सोभी इन्होंकी समझमें फेर है क्योंकि

कणियर तो सचीही मासोंमें फूलती है और आंबे भी सचीही मासोंमें फूलके फलते है सो कलकत्ता, मुंबई वगैरह शहरोंके अनेक पुरुष जानते है। और कणियर तो उत्तम जातिकी और अंब तुच्छ जातिका कारण अपेक्षासे ठहरता है इसका विशेष खुलासा सातवे महाशयकी समीक्षामें करने में आवेगा और आगे फिर भी श्रीआवश्यक निर्युक्ति की गाथा पर न्यायाम्भोनिधिजीनें अपनी चातुराई को प्रगट कियाहै कि (अब देखीये है मित्र यह अच्छी जातिकी वनस्पति भी अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होती है)

इस उपरके लेखकी समीक्षा पाठकवर्गको सुनाता हुं कि न्यायांभोनिधिजी अच्छी जातीकी वनस्पतिको अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होनेका ठहराते हैं इस न्यायानुसार तो न्यायांभोनिधिजी तथा इन्होंके परिवारवाले भी जो अच्छी जातिकी वनस्पतिका अनुकरण करते होवेंगे तब तो अधिक मासको तुच्छही जानके खाना, पीना, देवदर्शन, गुरु वन्दन, विनय, भक्ति, वृद्वादिककी वैयावच्च, धर्मोपदेशका व्याख्यान, व्रत, प्रत्याख्यान, देवसी, राई, पाक्षिक प्रतिक्रमणादि कार्य्य करके अपनी आत्माको पापरूपीमें आलोचित देखकरके हर्षमें प्रफुल्लित चित्तवाले नही होते होवेंगे तब तो उपरका लेख वनस्पति सम्बन्धीका लिखना ठीक हैं और उपर कहे सो कार्योंमे आप हर्षित होते होवेंगे तब तो वनस्पतिकी बातको लिखके भोले जीवोंको श्रीजिनाज्ञारूपी रत्नसें गेरनेका कार्य्य करना सो प्रत्यक्ष मिथ्यात्वका कारण है, और विद्वान् पुरुषोंके आगे हास्यका हेतु है सो बुद्धिजन पुरुष विचार लेना ;—

और भी दूसरा सुनो अचेतनरूप वनस्पतिको यह अधिक मास उत्तम है किंवा तुच्छ है इस रीतिका कोई भी प्रकारका ज्ञान नही है इसलिये (अच्छी जातिकी वनस्पति भी अधिक मासको तुच्छही जानके प्रफुल्लित नही होती है) यह अक्षर न्यायांभोनिधिजीके प्रत्यक्ष मिथ्या है।

और भी मेरेकों बड़े ही अफसोसके साथ लिखना पड़ता है कि न्यायाम्भोनिधिजीनें उपरमें वनस्पति सम्बन्धी उटपटाङ्ग लेख लिखते कुछ भी पूर्वापरका विचार विवेक बुद्धिसें नही किया मालुम होता है क्योंकि–प्रथम। (अधिकमास को अचेतनरूप वनस्पति भी नहीं अङ्गीकार करती है) यह अक्षर लिखे फिर आगे श्रीआवश्यकनिर्युक्ति की गाथा (शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें) लिखके भी भावार्थमें–दूसरा। (हे अम्ब अधिक मासमें कणियरको प्रफुल्लित देखके तेरेको फुलना उचित नही है) यह लिख दिया है इससें सिद्ध हुवा कि अधिकमासको वनस्पति जो कणियरकी जाति उसीनें अङ्गीकार किया और प्रफुल्लित हुई और वनस्पतिकी जाति अंबा भी अधिक मासको अङ्गीकार करके प्रफुल्लित होताथा तब उसकों कहा कि तेरेकों फूलना उचित नही है।

अब पाठकवर्ग विचार करो कि प्रथमका लेखमें अधिक मासको वनस्पति अङ्गीकार नही करनेका लिखा और दूसरे लेखमें अधिक माससें वनस्पतिकों फूलना अङ्गीकार करनेका लिखदिया इसलिये जो न्यायाम्भोनिधिजी प्रथम का अपना लेख सत्य ठहरावेंगे तो दूसरा लेख मिथ्या हो जावेगा और दूसरा लेखको सत्य ठहरावेंगे तो प्रथमका लेख

मिथ्या हो जायेगा इसलिये पूर्वापर विरोधी (विसम्वाद
वाक्य लिखनेका जो विपाक श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्ति
कहा है (सो पाठ इसी ही पुस्तकके पृष्ठ ८६ । ८७ । ८८
छप गया है) उसीके अधिकारी न्यायाम्भोनिधिजी ठ
गये सो पाठकवर्ग विचार लेना ;—

और अधिकमासकों तुच्छ न्यायाम्भोनिधिजी ठहर
हैं सो तो निःकेवल श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजों
आशातनाका कारण करते है क्योंकि श्रीतीर्थङ्करादि मह
राजोंने अधिकमासको उत्तम माना है (इसका अधिक
इसी ही पुस्तकमें अनेक जगह वारम्वार छपगया है औ
आगे भी छपेगा) इस लिये अधिकमासकों तुच्छ न्याय
म्भोनिधिजी को लिखना उचित नही था सो भी पाठ
वर्ग विचार लो ;—

और आगे फिर भी जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तक
पृष्ठ ९३ की प्रथम पंक्तिसें १२ वी पंक्ति तक ऐसे लिखा है ि
(हे परीक्षक और भी युक्तियां आपको दिखाते है कि य
जगतके लोक भी बारामासमें जिस जिस मासके सा
प्रतिबद्धकार्य्य होते है सो तिस तिस मासमें अधि
मासको छोड़के अवश्य ही करते है जैसे कि आसोज मा
प्रतिबद्ध दीवालीपर्व अधिक मासको छोड़के आसोज मासमें
ही करते है और आम्बलकी ओली छ मासके अन्तरमें
करनेकी भी अधिक मासको छोड़के आसोज मासमें और
चैत्रमासमें करते है. ऐसे अनेक लौकिक कार्य्य भी अपने
माने मासमें ही करते है परन्तु आगे पीछे कोई भी नही
करते है तो हे मित्र भाद्रवमास प्रतिबद्ध ऐसा परम पर्युषणा

पर्व और मासमें करना यह सिद्धान्तसें भी और लौकिक रीतिसें भी विरुद्ध है) यह न्यायाम्भोनिधिजी का उपरोक्त अपनी पुस्तकके पृष्ठ ९३ की पंक्ति १२ वी तकका लेख है ;—

इस उपरके लेखकी विशेष समीक्षा खुलासाके साथ लौकिक और लोकोत्तर दृष्टान्त सहित युक्ति पूर्वक पांचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीके नामसें और सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामसें करनेमें आवेगा तथापि संक्षिप्तसें इस जगह भी करके दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो अधिक मासको निषेध करने के लिये न्यायाम्भो-निधिजी तथा इन्होंके परिवारवाले और इन्होंके पक्षधारी एक दो छोड़के हजारों कुयुक्तियां करके बालदृष्टि रागियों को दिखाकर अपने दिलमें खुसी माने परन्तु जैन शास्त्रोंकी स्याद्वादशैलीके जानकार आत्मार्थी विद्वान् पुरुषोंके आगे एक भी कुयुक्ति नही चल सकती है किन्तु कुयुक्तियांके करने वाले उत्सूत्र भाषणका दूषणके अधिकारी तो अवश्यही होते हैं इस लिये उपरके लेखमें न्यायांभोनिधिजीनें युक्तियां के नामसें वास्तविकमें कुयुक्तियां दिखा करके अधिक मासको गिनतीमें निषेध करना चाहा सो कदापि नही हो सकता है क्योंकि दीवाली (दीपोत्सव) और ओलियां यह दोनु कार्य्य जैन शास्त्रोंमें लोकोत्तर पर्वमे माने हैं सो प्रसिद्ध है तथापि न्यायांभोनिधिजी ओलियांकों लौकिक पर्व लिखतें कुछ भी मिथ्या भाषणका भय न किया मालुम होता है, और दीवाली शास्त्रकारोंने कार्त्तिक मास प्रतिबद्ध कही है सो जगत प्रसिद्ध है और मारवाड़ पूर्व पञ्जाबादि देशोंके जैनी अच्छी तरहसें जानते हैं और खास न्यायांभोनिधिजी

पञ्जाब देशके होते भी और अनेक शास्त्रोंमें कार्त्तिकमासका खुलासासें लिखा होते भी भोले जीवोंके आगे अपनी बात जमानेके लिये अपने देशकी और शास्त्रकी बातको छोड़कर अनेक शास्त्रोंका पाठ भी छोड़ते हुए, गुजराती भाषाका प्रमाण लेकरके आसोज मास प्रतिबद्ध दीवाली लिखते हैं सो भी विचारने योग्य बात है और अधिक मास होनेसें अवश्य करके सातमें मासे ओलियाँ करनेमें आती हैं तथापि न्यायांभोनिधिजीनें अधिक मास होते भी छ मासके अन्तर में लिखा हैं सो मिथ्या है और जैन शास्त्रोंमें तथा लौकिक में जो जो मास तिथि नियत पर्व है सो अधिक मास होने सें प्रथम मासका प्रथम पक्षमें और दूसरे मासका दूसरा पक्षमें करनेमें आते हैं इस बातका विशेष निर्णय शङ्का समाधान सहित उपरोक्त पांचमें और सातमें महाशयके नामकी समीक्षामें आगे देखके सत्यासत्यका पाठक वर्ग स्वयं विचार करलेना ;—

और आगे फिर भी न्यायांभोनिधिजीनें लिखा है कि (हे मित्र भाद्रव मास प्रतिबद्ध ऐसा परम पर्युषणापर्व और मासमें करना यह सिद्धान्तसें भी और लौकिक रीतिसें भी विरुद्ध है) इस लेखसें न्यायांभोनिधिजी दो श्रावण होते भी भाद्रव मास प्रतिबद्ध पर्युषणा ठहरा करके दो श्रावण होनेसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको सिद्धान्तसें और लौकिक रीतिसें भी विरुद्ध ठहराते हैं सो निःकेवल आपही उत्सूत्र भाषण करते हैं क्योंकि दो श्रावण होनेसें श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादिके अनेक पूर्वाचार्य्योंने दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करनेका अनेक

शास्त्रोंमें कहा है और प्राचीन कालमें भी मासवृद्धि होने से श्रावण मास प्रतिबद्ध पर्युषणा थी इसलिये मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रव मास प्रतिबद्ध पर्युषणा ठहराना शास्त्रविरुद्ध है और दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको सिद्धान्तसें और लौकिक रीतिसें विरुद्ध ठहराना सो भी प्रत्यक्ष मिथ्या भाषण कारक हैं इसका उपरमें अनेक जगह विस्तारसें छपगया है और आगे विशेष विस्तार सातमें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा ;—

और आगे फिर भी न्यायांभोनिधिजीनें पर्युषणा सम्बन्धी अपना लेख पूर्ण करते अन्तमें पृष्ठ ८३ पंक्ति१३ से पंक्ति १९ तक ऐसे लिखा है कि [पूर्वपक्ष पृष्ठ १५७ में लिखे हुए पाठका कुछ भी समाधान न किया—

उत्तर—हे परीक्षक अधिक मासको जब कालचूला मान लिया तो शास्त्रके लिखे हुए ५० दिन भी सिद्ध होगये और ७० दिन भी सिद्ध होगये तो फिर काहेको अपने अपने मासमें नियत धर्मकार्य्य छोड़के और और कल्पना करके आग्रह करना चाहिये] यह उपरका लेख न्यायांभोनिधिजीका शास्त्रोंके विरुद्ध और मायावृत्तिका भोले जीवोंको भ्रमानेके वास्ते है क्योंकि प्रथम तो शुद्धसमाचारीके पृष्ठ १५७ में श्रीकल्पसूत्रका मूल (सवीसइ राइमासे इत्यादि) पाठ लिखा है और दूसरा श्रीवृहत्कल्पचूर्णिका पाठसें प्राचीन-कालकी अपेक्षायें पांच पांच दिनकी वृद्धि करते दशवें पञ्चक में पचास दिने पर्युषणा दिखाई है और उसी श्रीवृहत्कल्पकी चूर्णिमें अधिक मासको निश्चयके साथ अवश्य गिनतीमें लेना कहा है जिसका पाठ आगे छठे महाशय

श्रीवल्लभविजयजीके नामकी समीक्षामें लिखनेमें आवेगा, इसलिये शुद्ध समाचारीकी पुस्तकके पृष्ठ १५३ का पाठ सम्बन्धी पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें अधिक मासकी गिनती निषेध करना सो भी प्रत्यक्ष न्यायाम्भोनिधिजीका शास्त्र विरुद्ध उत्सूत्र भाषण रूप है ;—

और दूसरा यह भी सुन लीजीये कि–श्रीनिशीथ चूर्णि कार श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजने और श्रीदशवैकालिक सूत्रके प्रथम चूलिकाकी वृहद्वृत्तिकार सुप्रसिद्ध श्रीमान् हरिभद्र सूरिजी महाराजनें अधिकमासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग्य लिखी है तथापि इन महाराजके विरुद्धार्थमें न्यायाम्भोनिधिजी इतने विद्वान् होते भी अधिक मासको कालचूला मानते भी निषेध करते है सो बड़ी ही विचारने योग्य आश्चर्य की बात है ;—

और दो श्रावण होनेसें भाद्रपदतक ८० दिन होते है तथा दो आश्विन होनेसें कार्त्तिक तक १०० दिन होते है तथापि ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके ७० दिन न्यायाम्भोनिधिजीनें अपनी कल्पनासें कालचूलाके वहाने बनाये सो कदापि नही बन सकते है इसका विस्तार तीनो महाशयों की और खास न्यायाम्भोनिधिजीकी भी समीक्षा में अच्छी तरहसें उपरमें छप गया है सो पढ़के सर्वनिर्णय कर लेना:—और दो श्रावण मास होनेसें दूसरे श्रावण मास प्रतिबद्ध पर्युषणा पर्व है इसलिये दो श्रावण होते भी भाद्रव मासको भ्रान्ति करना शास्त्र विरुद्ध है और अब न्याया-म्भोनिधिजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी समीक्षाके अन्तमें

श्रीजिनाज्ञाके आराधक सत्यग्राही सज्जन पुरुषोंसें मेरा यही कहना है कि जैसे पूर्वोक्त तीनों महाशयोंने अपने विद्वत्ताकी कल्पित बात जमानेके लिये पूर्वापर विरोधी तथा उटपटाङ्ग और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध और अनेक शास्त्रोंके पाठोंको उत्थापन करके अपना अनन्त संसार वृद्धिका भय नही किया तैसें ही चौथे महाशय न्यायाम्भोनिधिजीनें भी तीनों महाशयोंका अनुकरण करके पूर्वापर विरोधी तथा उटपटाङ्ग और श्रीतीर्थङ्कर-गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषण करनेसें कुछ भी भय नही किया परन्तु मैंने भी भव्यजीवोंके शुद्ध श्रद्धा होनेके उपगारकी बुद्धिसें शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य बातोंका देखाव करके कल्पित बातोंकी समीक्षाकर दिखाइ है उसीको पढ़के सत्य बातका ग्रहण और असत्य बातका त्याग करके अपनी आत्माका कल्याण करने में उद्यम करेंगे और दृष्टिरागका पक्षपातकों न रक्खेंगे यही मेरा पाठक वर्गको कहना है ;—

और न्यायाम्भोनिधिजीके लेख पर अनेक पुरुष संपूर्ण रीतिसें पूरा भरोसा रखतेथे कि न्यायाम्भोनिधिजी जो लिखेंगे सो शास्त्रानुसार सत्यही लिखेंगे ऐसा मान्यकरके उन्होंसें पूज्यभाव बहोत पुरुषोंका है। और मेरा भी था परन्तु शास्त्रोंका तात्पर्य्य देखनेसें जो जो न्यायांभोनिधिजीनें महान् उत्सूत्र भाषणरूप अनर्थ किया सो सो सब प्रगट होगया जिसका नमुनारूप पर्युषणा सम्बन्धी न्यायाम्भो-निधिजीनें कितनी जगह प्रत्यक्ष मिथ्या और उत्सूत्र भाषण किया है सो तो उपरकी मेरी लिखी हुई समीक्षा पढ़नेसें

पाठकवर्गकों प्रत्यक्ष दिख जायेगा तथा और भी न्याया-म्भोनिधिजीनें जैनसिद्धान्तसमाचारी नामकी पुस्तकमें अनु-मान १५० अथवा१६० शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अनेक जगह प्रत्यक्ष मिथ्या तथा अनेक जगह मायावृत्तिरूप और अनेक जगह शास्त्रोंके आगे पीछेके पाठ छोड़के अधूरे अधूरे तथा शास्त्र कारके अभिप्रायके विरुद्ध अनेक जगह अन्याय कारक और अनेक सत्यबातोंका निषेध करके अपनी कल्पित बातोंका उत्सूत्र भाषणरूप स्थापन इत्यादि महान् अनर्थ करके भोले दृष्टिरागी गच्छ कदाग्रही बालजीवोंकों श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाका मोक्षरूपी रस्तापरसें गेरके संसाररूपी मिथ्यात्व का रस्तामें फसानेके लिये जैन सिद्धान्त समाचारी, पुस्तक का नाम रखके वास्तविकमें अनन्त संसारकी वृद्धिकारक मिथ्यात्वरूप पाखण्डकी समाचारी न्यायाम्भोनिधिजीनें प्रगट करके अपनी आत्माकों इस संसाररूपी समुद्रमें क्या क्या इनामके योग्य ठहराई होगी तथा अब इन्होंके परि-वार वाले और इन्होंके पक्षधारी भी उसी मुजब वर्तते है जिन्होंकों इस संसारमें क्या इनाम प्राप्त होगा सो श्रीज्ञानीजी महाराज जानें ;—इस लिये श्रीसङ्घकों और न्यायाम्भोनिधि जीके पक्षधारी तथा इन्होंके परिवार वालोंको उपर की पुस्तक सम्बन्धी बातोंके लिये मेरा अभिप्राय इस पुस्तकके अन्तमें विनती पूर्वक जाहिर करनेमें आवेगा और पांचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजी तथा छठे महाशय श्रीवल्लभविजयजी और सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षा में प्रसङ्गोपात थोड़ी थोड़ी बातोंका उपर की पुस्तक सम्बन्धी दर्शाव भी करनेमें आवेगा ;—

इति चौथे महाशय न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी संक्षिप्त समीक्षा समाप्तः॥

अब आगे पांचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्ति-विजयजीनें मानवधर्मसंहिता नामा पुस्तकमें जो पर्युषणा सम्बन्धी लेख अधिक मासको निषेध करनेके लिये लिखा है उसकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो मानवधर्मसंहिता पुस्तकके पृष्ठ ८०० की पंक्ति १७ वीं सें पृष्ठ ८०१ की पंक्ति २१॥ तक जैसा न्यायरत्नजीका लेख है वैसाही नीचे मुजब जानो ;—

"[दो श्रावण होतो भी भादवेसें ही पर्युषणापर्व करना चाहिये, अगर कहा जाय कि—आषाढ़सुदी १४ चतुर्दशीसें ५० रोज लेना कहा यह कैसे सबुत रहेगा ? जबाब—कल्पसूत्रकी टीकामें पाठ है कि—अधिकमास कालपुरुषकी चूलिका यानी चोटी है, जैसे किसी पुरुषका शरीर उचाईमें नापा जाय तो चोटीकी लंबाई नापी नही जाती, इसी तरह कालपुरुषकी चोटी जो अधिकमास कहा सो गिनतीमें नही लिया जाता, कल्पसूत्रकी टीकाका पाठ कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशदेव,—अगर लिया जाता हो तो पर्युषणा पर्व—दूसरे वर्ष श्रावणमें और इस तरह अधिक महिनोंके हिसाबसें हमेशां उक्त पर्व फिरते हुवे चले जायगें, जैसे मुसलमानोंके ताजिये—हर अधिक मासमें बदलते रहते हैं, दूसरा यह भी दूषण आयगा कि—वर्षभरमें जो तीन चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किये जाते हैं उनमें पञ्चमासिक प्रतिक्रमणपाठ बोलना पड़ेगा, शीतकालमें और उष्णकालमें तो अधिक महिना गिनतीमें नही लाना और चौमासेमें गिनतीमें लाकर श्रावणमें पर्युषणा करना किस न्यायकी बात हुई ? अगर कहा जाय कि—पचास दिनकी गिनती

लिख जाती है सो पिछले ७० दिनकी जगह १८० दिन हो जायगें, उधर दोष आयगा, संवत्सरीके पीछे ७० दिन शेष रखनर-यह बात समवायाङ्गसूत्रमें लिखी है-उसका पाठ-वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिराइंदिएहिं सेसेहिं, इसलिये वही प्रमाण याक्य रहेगा कि-अधिकमास कालपुरुषकी चोटी होनेसे गिनतीमें नही लेना, अधिक महिनेको गिनतीमें लेनेसें तीसरा यह भी दोष आयगा कि-चौईस तीर्थङ्करोंके कल्याणिक जो जिस जिस महिनेकी तिथिमें आते हैं गिनतीमें वे भी बढ़ जायगें, फिर क्या! तीर्थङ्करोंके कल्याणिक १२० से भी ज्यादे गिनना होगा? कभी नही, इस हेतुसें भी अधिकमास नही गिना जाता अधिक महिनेके कारणसें कभी दो भाद्वे हो तो दूसरे भाद्वेमें पर्युषणा करना चाहिये जैसें दो आषाढ़महिने होते हैं तब भी दूसरे आषाढ़में चातुर्मासिककृत्य किये जाते हैं वैसे पर्युषणा भी दूसरे भाद्वेमें करना न्याययुक्त है।]

अब न्यायरत्नजीके उपरका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो (दो श्रावण हो तो भी भाद्रवेमेंही पर्युषणापर्व करना चाहिये) यह लिखना न्यायरत्नजीका शास्त्रोंसे विरुद्ध है क्योंकि खास न्यायरत्नजी-केही परमपूज्य श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने दो श्रावण होने में दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करनेका कहा है जिसका अधिकार उपरमें अनेक जगह और खास करके चारों महाशयोंके नामकी समीक्षामें अच्छी तरहसें छपगया है इसलिये दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें अपने पूर्वजोंके विरुद्धार्थमें पर्युषणापर्व स्थापन करना न्यायरत्नजीको उचित नही है।

और दूसरा यह है कि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महान् उत्तम पुरुषोंने सूत्र, चूर्णि, भाष्य, वृत्ति, निर्युक्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धिके अभावसें भाद्रपदमें पचास दिने पर्युषणा करनी कही है परन्तु एकावन ५१ में दिने श्रीजिनाज्ञाके आराधक पुरुषोंकों पर्युषणा करना नही कल्पे और एकावन दिने पर्युषणा करने वालोंकों श्री जिनाज्ञाके लोपी कहे है सो प्रसिद्ध है तथापि न्यायरत्नजी इतने विद्वान् हो करके भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके वचनकों प्रमाण न करते हुए अनेक सूत्र, चूर्ण्यादि शास्त्रोंके पाठोंको उत्थापते हुए मासवृद्धि दो श्रावण होते भी ८० दिने भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करनेका लिखते कुछ भी उत्सूत्र भाषणका भय नही करते हैं यह बड़ाही अफसोस है;—

और दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेसें प्रत्यक्ष ८० दिन होते हैं तथा अधिकमास भी शास्त्रानुसार और न्याययुक्ति सहित अवश्य निश्चय करके गिनतीमें सर्वथा सिद्ध है सो उपरमें अनेक जगह छपगया है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करना भी उत्सूत्र भाषणरूप अन्याय कारक है तथापि न्यायरत्नजीने उत्सूत्र भाषणका विचार न करते अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये जो जो विकल्प करके शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें भोले जीवोंकी श्रद्धाभङ्ग होनेके लिये लिखा है उसीकी समीक्षा करता हुं—जिसमें प्रथमतो दो श्रावण होनेसें भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसका अपनी कल्पनासें ५० दिन बनानेके लिये न्यायरत्नजी लिखते है कि—[कल्पसूत्रकी टीकामें पाठ है कि अधिकमास काल-

पुरुषकी चूलिका यानी चोटी है जैसे किसी पुरुषका शरीर उचाईमें नापा जाय तो चोटीकी लंबाई नापी नही जाती है इसी तरह कालपुरुषकी चोटी जो अधिकमास कहा सो गिनतीमें नही लिया जाता कल्पसूत्रकी टीकाका पाठ—कालचूलेत्यविवक्षणाद्दिनानां पञ्चाशदेव]

इस उपरके लेखमें न्यायरत्नजीनें अधिकमासको काल-पुरुषकी चोटी लिखकर गिनतीमें नही लेनेका ठहराया है सो निःकेवल श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंनें अधिक मासको दिनोंमें, पक्षोमें, मासोंमें, वर्षोंमें, अनादिकाल हुवा निश्चय करके गिनतीमें लिया है आगे लेवेंगे और वर्त्तमान कालमें भी श्रीसीमंधर स्वामीजी आदि तीर्थंकर गणधरादि महाराज महाविदेह क्षेत्रमें अधिक मासको गिनतीमें लेते हैं तैसेही इस पञ्चमें कालमें भरत क्षेत्रमें भी अनेक आत्मार्थी पुरुष अनेक शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक देशकालानुसार अधिक मासको अवश्यही गिनतीमें लेते हैं इस बातका अनेक जगह उपरमें अधिकार छपगया है और आगे भी छपेगा इसलिये अधिकमासकों गिनतीमें नही लेनेका ठहराना न्यायरत्नजीका उत्सूत्र भाषणरूप होनेसें प्रमाणिक नही हो सकता है।

और न्यायरत्नजी अधिक मासको कालपुरुषकी चूलिका कहकर चोटी अर्थात् घासकी तरह केशांकी चोटीवत् लिखते हैं सो भी शास्त्रोंके विरुद्ध है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंनें चूलिका याने शिखरकी ओपमा गिनती करने योग्य दिवी है। जैसे। लक्ष योजनका सुमेरु

पर्वतके चालीश योजनका शिखरको तथा अन्य भी हरेक पर्वतोंके शिखरों कों और देव मन्दिरोंके शिखरोंको शास्त्रकारोंने क्षेत्रचूलाकी ओपमा दिवी है नतु केशांकी चोटीवत् घासकी, और श्रीपञ्चपरमेष्टि मन्त्रके शिखररूप चार पदोंको तथा श्रीआचाराङ्गजी सूत्रके शिखररूप दो अध्ययनकों और श्रीदशवैकालिकजी सूत्रके शिखर-रूप दो अध्ययनकों शास्त्रकारोंनें भावचूलाकी ओपमा दिवी है जिसकी अवश्यही गिनती करनेमें आती हैं। तैसेही। चन्द्रसंवत्सररूप कालपुरुषके शिखररूप अधिक मासकों कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग शास्त्रकारोंनें दिवी है और अधिक मास होनेसें तेरह मासोंका अभिवर्द्धितसंवत्सर श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंनें कहा है सो अनेक शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है और खास करके अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा लिखने वाले श्रीजिनदास महत्तराचार्य्येजी पूर्वधर महाराज भी निश्चय करके गिनतीमें लेनेका लिखते हैं,और भी दूसरा सुनों कि–जैसे। श्रीतीर्थङ्कर महाराजोंके निज निज अंगुलियोंके प्रमाणसें मस्तक तक शरीरकी लंबाई १०८ अंगुलीकी होती है और मस्तक पर बारह अंगुलीकी उष्णिका (शिखा) कों शिखररूप चूलाकी ओपमा है जिसकों सामिल लेकर १२० अंगुलीका श्रीतीर्थङ्कर महाराजोंके शरीरके गिनतीका प्रमाण सबी शास्त्रकारोंने कहा है। तैसेही। संवत्सररूप कालपुरुष का निज स्वभाविक प्रमाण ३५४ दिन, ११ घटीका और ३६ पलका है तथा संवत्सररूप कालपुरुषका शिखररूप अधिक मासको कालचूलाकी ओपमा है जिसका प्रमाण २९ दिन

३१ घटीका और ५८ पलका है जिसको सामिल लेकर ३८३ दिन ४२ घटीका और ३४ पल प्रमाणे तेरह मासोंकी गिनती का हिसाबसें अभिवर्द्धित संवत्सर सबी शास्त्रकारोंने और खास श्रीतपगच्छके पूर्वाचार्य्योंने भी कहा है। और अधिक मासको कालचूला कहनेसें भी गिनतीमें अवश्यही लेना शास्त्रकारोंने कहा है उस सम्बन्धी इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ४८ से ६५ तक तथा और भी अनेक जगह छपगया है सो पढ़नेसें सर्व निःसन्देह हो जावेगा इसलिये न्यायरत्नजी अधिक मासको कालपुरुषकी चोटी लिखकरके गिनतीमें नही लेनेका ठहराते हैं सो वृथा अपनी कल्पनासें भोले जीवोंको धारानुसार सत्य बात परसें श्रद्धाभङ्ग कारक उत्सूत्र भाषण करते हैं सो उपरके लेखसें पाठकवर्ग विशेष अपनी बुद्धिसें भी विचार सकते हैं ;—

और श्रीकल्पसूत्रकी टीकाका प्रमाण न्यायरत्नजीनें देखाया सो तो (अंधेवुये घोघेधान, जैसेगुरु तैसेयजमान) की तरह करके अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणरूप अन्ध परम्पराका मिथ्यात्वको पुष्ट किया है क्योंकि प्रथम श्रीधर्मसागरजीनें श्रीकल्पकिरणावलीमें श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें अपनी कल्पनासें जैन शास्त्रोंके अतीव गम्भीरार्थके तात्पर्य्यकों समझे बिना उत्सूत्र भाषणरूप जैसे तैसे लिखा है उसीकोंदेखके दूसरे श्रीजय-विजयजीने श्रीकल्पदीपिकामें तथा तीसरे श्रीविनयविजय जीनें श्रीसुखबोधिकामें भी उसी तरहके उत्सूत्र भाषणके वाक्योंको लिखे हैं और उसीका शरणा लेकरके [illegible]

चातुराईके साथ उत्सूत्र भाषणकी बाते प्रगट किधी है और ऐसेही गाडरीया प्रवाहवत् उसी बातोंकों वर्त्तमानमें न्यायरत्नजी जैसे भी लिखते हैं परन्तु तत्त्वार्थको जरा भी नही विचारते हैं क्योंकि श्रीविनयविजयजी वगैरह चारो महाशयोंने कालचूलाके नामसें अधिक मासकों गिनतीमें नही लेनेका शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमे ठहराया है जिसकी समीक्षा अच्छी तरहसें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ५८से यावत् पृष्ठ २१६ तक उपरमें छप चुकी है सो पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेगा तथापि श्रीविनयविजयजी कृत श्रीसुखबोधिकाके अनुसार अपनी अपनी चातुराइसें विशेष कुयुक्तियांके विकल्प उठा करके भोले जीवोंकों भ्रममें गेरनेके लिये न्यायरत्नजी वगैरहने वृथा परिश्रम किया है उन कुयुक्तियांका समाधान युक्तिपूर्वक लिखना यहां सरू है जिसमें न्यायरत्नजीने श्रीकल्पसूत्रकी टीकाका पाठ श्रीविनयविजयजी कृत दिखाया सो उत्सूत्र भाषणरूप होनेसें मैंनें उसीकी समीक्षा तो पहिलेही कर दिखाई है इसलिये श्रीविनयविजयजीकृत उत्सूत्र भाषण रूप उपरके पाठकों न्यायरत्नजीको लिखना भी उचित नही है और पक्षग्राहियोंके सिवाय आत्मार्थी पुरुषोंकों मान्य करना भी उचित नही है याने सर्वथा त्यागने योग्य है सो उपरके लेखसें पाठकवर्ग भी अच्छी तरहसें विचार लेना ;—

और आगे फिर भी अधिक मासको गिनतीमें नही लेनेके लिये न्यायरत्नजीनें अपनी चातुराईको प्रगट करके लिख दिखाई है कि (अगर लिया जाता हो तो पर्युषणा

पर्व हमेशां एक पर्व फिरते हुये चले आयगें जैसे मुसल्मानोंके ताजिये हर अधिकमासमें बदलते रहते हैं) न्यायरत्नजीका इस लेखपर मेरेको बड़ाही आश्चर्य सहित खेद उत्पन्न होता है और न्यायरत्नजीकी बड़ीही अज्ञता प्रगट दिखती है सोही दिखाता हुं—जिसमें प्रथम तो आश्चर्य उत्पन्न होनेका तो यह कारण है कि स्याद्वाद, अनेकांत, अविसंवादी, अनन्तगुणी, परमोत्तम ऐसे श्रीसर्वज्ञ भगवान् श्रीजिनेन्द्र महाराजोंके कथन करे हुये अत्युत्तम अहिंसा धर्मके वृद्धिकारक ऊर्द्ध गतिका रस्तारूप धर्मध्यान, दानपुण्य परोपकारादि उत्तमोत्तम शुभकार्य्योंका निधि शान्त चित्तको करने वाले और पापपङ्क (कर्मरूप .) को नष्टकरने वाले श्रीपर्युषणा पर्वके साथ उपरोक्त गुणोंसे प्रतिकुल मिथ्यात्वी और वितर्विटंयक पाखंडरूप अधर्मकी वृद्धिकारक तथा छ (६) कायके जीवोंका विनाश कारक नरकादि अधोगतिका रस्तारूप आर्त्तरौद्रादि युक्त ताजियांका दृष्टान्त न्यायरत्नजीने दिखाया इसलिये मेरेकों आश्चर्य उत्पन्न हुवा कि जो न्यायरत्नजीके अन्तःकरणमें सम्यक्त्व होता तो चिन्तामणिरत्नरूप श्रीपर्युषणापर्वके साथ कांचका टुकड़ारूप ताजियांका दृष्टान्त लिखके अपनी कल्पित बातको जमानेके लिये अधिक मासका निषेध कदापि नही दिखाते इस बातकों पाठकवर्ग भी विचार लेना ;—

और बड़ा खेद उत्पन्न होनेका तो कारण यह है कि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और खास न्यायरत्नजीके पूज्य अपने श्रीतपगच्छके ही पूर्वा-

र्य्योंने अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको सर्वथा करके परि-
। रीतिसें विस्तारपूर्वक खुलासाके साथ निश्चय करके
श्यही गिनतीमें लिया है. जिसमें श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति १ तथा
त २ श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति ३ तथा वृत्ति ४ श्रीज्योतिषकरण्ड
न्ना ५ तथा वृत्ति ६ श्रीप्रवचनसारोद्धार ७ तथा वृत्ति ८
समवायाङ्गजीसूत्र ९ तथा वृत्ति १० श्रीजम्बुद्वीपप्रज्ञप्ति ११
। तीनकी दो (२) वृत्ति १३ इत्यादि अनेक शास्त्रोंके
ऽ न्यायरत्नजीनें देखे है जिसमें अधिक मासको गिनतीमें
या है जिसमें भी श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नाकी वृत्ति तो
ायरत्नजीनें एकवार नही किन्तु अनेकवार देखी है उसी
तो विशेष करके समयादि कालकी व्याख्या किवी है कि
ंख्याता समय जानेसें एक आवलिका, १, ६७, ७७, २१६,
वलिका जानेसें एकमुहूर्त्त होता है त्रीश मुहूर्त्तसें एक
ोरात्रि रूप दिवस होता है ऐसे पन्दरह दिवस जानेसें
पक्ष होता है दो पक्षसें एकमास होता है दो माससें
ऋतु होता है छ ऋतुयोंसें एक सम्वत्सर होता है इसी
तरहसें नक्षत्र सम्वत्सरके, चन्द्रसम्वत्सरके, ऋतु सम्वत्सर
सूर्य्यसम्वत्सरके, और अभिवर्द्धितसम्वत्सरके, मुहूर्त्तोंका
। जूदा हिसाब विस्तारपूर्वक दिखाकर पांच सम्वत्सरोंका
युगके ५४९०० मुहूर्त्त दिखाये हैं जिसमें एक युगके पांच
त्सरोंमें दो अधिक मासके भी मुहूर्त्तोंकी गिनती साथमें
सें ही ५४९०० मुहूर्त्तका हिसाव मिलता है अन्यथा नहीं
तरहसें कालकी व्याख्या समय, आवलिका, मुहूर्त्त,
।, पक्ष, मास, वर्ष, युग, पर्यंत, सर्व ...

व्याख्याकी गिनतीमें अधिक मासको प्रमाण किया है और अधिक मासकी उत्पत्तिका कारण कार्य्यादि गिणित पूर्वक श्रीमलयगिरिजी महाराजने श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नाकी वृत्तिमें विस्तार किया है इस ग्रन्थको न्यायरत्नजीने अनेक वार देखा है और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ महाराजोंने अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया है सो अनेक शास्त्रोंके पाठ प्रसिद्ध है और खास न्यायरत्नजीने मानवधर्म्मसंहिता पुस्तकके पृष्ठ २४ की पंक्ति २० वी से २२॥ पंक्ति तक ऐसे लिखा है कि (उत्सूत्र भाषण समान कोई बड़ा पाप नही सब क्रियाधरी रहेगी उक्त पाप दुर्गतिको ले जायगा जमालिजीने गौतमगणधर जैसी क्रिया किइ लेकिन देख लो किस गतिको जाना पड़ा) और पृष्ठ ५८८ की पंक्ति १४–१५ में फिर भी लिखते हैं कि (सर्वज्ञ प्रणीत शास्त्रके पाठको उत्थापन करेगा उसका निर्वाण होना मुश्किल है) इस लेखपरसें सज्जन पुरुषोंकों विचार करना चाहिये कि–श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ महाराजोंने अधिकमास को गिनतीमें प्रमाण किया हुवा है सो अनेक शास्त्रोंके पाठ प्रसिद्ध है तथापि पक्षपातके जोरसें न्यायरत्नजीने अनन्ततीर्थङ्कर गणधरादि सर्वज्ञ भगवानोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषण करनेके लिये सर्वज्ञ प्रणीत अनेक शास्त्रोंके पाठोंकों उत्थापन करके उत्सूत्र भाषणका बड़ा भारी पाप दुर्गतिको देनेवाला तथा संसारमें रुलानेवाला अपना लिखा हुवा उपरका लेखको भी सर्वथा भूल गये इसलिये मेरेकों बड़ा खेद उत्पन्न हुवा कि न्यायरत्नजी जानते हुए भी उत्सूत्र भाषणरूप

संसारकी खाड़में गिरे और अपनी आत्माका बचाव तो करना दूर रहा परन्तु भोले जीवोंको भी उसी रस्ते पहुचाये सो उपरके लेखसें पाठकवर्ग विशेष विचार लेना ;—

और अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये न्यायरत्नजीनें मुसल्मानोंके ताजिये हरेक अधिक मासके हिसाबसें फिरनेका दृष्टान्त दिखाके सर्वज्ञकथित पर्युषणा पर्व भी अधिक मासके हिसाबसें फिरते रहनेका न्यायरत्न जीनें लिखा सो बड़ी अज्ञता प्रगट किवी है जिसका कारण यह है कि श्रीसर्वज्ञ भगवानोंनें मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी खास करके विशेष जीवदयादिकके ही कारणे वर्षा ऋतुमें आषाढ़ चौमासीसें उपरके लिखे दिनोंके गिनतीकी मर्य्यादा [प्रमाण] सें निश्चय करके श्रावण अथवा भाद्रपद मेंही—कारण, कार्य्य, ऋतु, मास, तिथिका नियमसेंही श्रीपर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है तथापि न्याय-रत्नजी अधिक मासके हिसाबसें पर्युषणापर्व फिरते हुए चले जानेका लिखकर जैन शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें आषाढ़, ज्यैष्ठ, वैशाखादिमें पर्युषणा होनेका दिखाते हैं इसलिये न्याय-रत्नजीकी अज्ञतामें कुछ कम हो तो पाठकवर्ग तत्त्वार्थकी बुद्धिसें स्वयं विचार लेना ;—

तथा और भी न्यायरत्नजीके विद्वत्ताकी चातुराईका नमुना सुनिये—कि श्रीजैन शास्त्रोंमें पांच प्रकारके संवत्सरों सें एक युगका प्रमाण कहा हैं जिसमें सूर्य्यकी गतिका हिसाबसें सूर्य्यसंवत्सरकी अपेक्षासें जैनमें मासवृद्धिका अभाव हैं परन्तु चन्द्रकी गतिका हिसाबसें चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासें एक युगकी पूरतीकेही लिये खास दो अधि-

.. हैं जब अधिकमास जिस संवत्सरमें होता है तब उस संवत्सरमें तेरह मास होनेसें संवत्सरका नाम भी अभिवर्द्धित कहा जाता है—अधिक मासको गिनतीमें लिया जिससे संवत्सरका भी प्रमाण बढ़ गया और युगकी पूरतीका भी बरोबर हिसाब मिलगया—अधिक मास अनादिकाल हुए होता रहता है तथा मासवृद्धि हो अथवा न हो तो भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंनें श्रीपर्युषणापर्वका आराधन वर्षा ऋतुमेंही करना कहा है यह बात आत्मार्थी विवेकी विद्वानोंसें छुपी हुई नही है याने प्रसिद्ध है इसलिये श्रीपर्युषणापर्व अधिक मास हो तो भी वर्षा ऋतुके सिवाय और ऋतुयेंामें कदापि नही हो सकते हैं और मुसल्मान लोग तो सिर्फ एक चन्द्र दर्शनकी अपेक्षासें २९। ३० दिनका महिना मान्यकरके बारह महिनोंके ३५४ दिनका एक वर्ष मानते है और अधिक मासका भिन्न व्यवहारको नही मानते हैं याने चन्द्रके हिसाबसें बारह बारह महिनोंका एक एक वर्ष मानते चले जाते हैं परन्तु अपने माने मास तारीख नियत ताजियें भी करते रहते हैं और जैन तथा दूसरे हिन्दू अधिक मासको मान्य करके तेरह मासोंका वर्ष मानते हैं तथा अपने माने मास, तिथि नियत पर्व भी करते है इसलिये जैन तथा दूसरे हिन्दूयांके तो ऋतु, मास, तिथि नियत पर्व अधिक मास होतो भी फिरते हुए नही चले जाते है परन्तु मुसल्मान लोग अधिक मासको नही मानते हुए अनुक्रमे सीधा हिसाबसें ही वर्त्तते है इस लिये लौकिकमें अधिक मास होनेसें मुसल्मानोंके ताजिये अमुक ऋतुमें तथा अमुक लौकिक मासमें होते हैं यह

नियम नही रहता है याने हर अधिक मासके हिस
पश्चादानुपूर्वीसें अर्थात् आषाढ़, ज्यैष्ठ, वैशाख, चैत्र, फा
माघ, पौषादि हरेक मासोंमें होते है इसलिये मुसल्मा
ताजिये फिरनेका दृष्टान्त लिखके श्रीपर्युषणापर्व फि
दिखाना सो पूरी अज्ञताका कारण है—इसलिये श्री
कथित श्रीपर्युषणापर्व फिरनेका और अधिक म
गिनतीमें निषेध करनेके संबन्धी मुसल्मानोंके ताजि
दृष्टान्त उत्सूत्र भाषणरूप होनेसें न्यायरत्नजीको ि
उचित नही है इस बातको सज्जन पुरुष उपरके
स्वयं विचार सकते है ;—

और आगे फिर भी न्यायरत्नजीनें अपनी कल
लिखा है कि (दूसरा यह भी दूषण आयगा कि वर्षभर
तीन चातुर्मासिक प्रतिक्रमण किये जाते है उसमें पञ्चम
प्रतिक्रमणका पाठ बोलना पड़ेगा शीतकालमें और
कालमें तो अधिक महिना गिनतीमें नही लाना
चौमासेमें गिनतीमें लाकर श्रावणमें पर्युषणा करना
न्याय की बात हुई) इस लेखसें न्यायरत्नजीनें जैन
का तथा अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करने वा
तात्पर्य्यको समझे बिना दूसरा दूषण लगाया सो ि
भाषण करके बड़ी भूल करी है क्योंकि जिस चौ
अधिक मास होता है उसीको अभिवर्द्धित चौमासा
जाता है संवत्सरवत् अर्थात् जिस संवत्सरमें अधिक
होता है उसीको अभिवर्द्धित संवत्सर कहते है इ
न्यायानुसार अधिक मास होने तब तब चौमासेमें

घोला जाता है इसका विशेष निर्णय सातमें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा ;—

और शीतकाल हो तथा उष्णकाल हो अथवा वर्षाकाल हो परन्तु लौकिक पञ्चाङ्गमें जो अधिकमास होगा उसी कालमें अवश्य ही गिनतीमें करके प्रमाण करना यह तो स्वयं सिद्ध न्याययुक्ति की बात है जैसे वर्षाकालमें श्रावण भाद्रपदादि मास बढ़नेसें गिनतीमें लिये जाते हैं तैसे ही शीतकालमें तथा उष्णकालमें भी जो मास बढ़े सो ही गिनाजाता है इस लिये न्यायरत्नजीनें उपरका लेखमें शीतकालमें और उष्णकालमें अधिक मासको गिनतीमें नही लानेका लिखती वग्त विवेक बुद्धिसें विचार किया होता तो मिथ्या भाषणका दूषण नही लगता सो पाठकवर्ग विचार लेना,—

और इसके अगाड़ी फिर भी न्यायरत्नजीनें अपनी विद्वत्ताकी चातुराई को प्रगट करनेके लिये लिखा है कि [अगर कहा जाय कि पचासदिनकी गिनती लिइजाती है तो पिछले ७० दिनकी जगह १०० दिन होजायेगे उधर दोष आयगा संवत्सरीके बाद ७० दिन शेष रखना यह बात समवायाङ्ग सूत्रमें लिखी हैं उसका पाठ—वासाणं सवीसइराइ मासे वइक्कन्ते सत्तरिराइंदिएहिं सेसेहिं,—इस लिये यही प्रमाणवाक्य रहेगा कि अधिक मास कालपुरुषकी चोटी होनेसें गिनतीमें नही लेना] इस लेखपर मेरेको बड़े अफसोसके साथ लिखना पड़ता है कि न्यायरत्नजीको विद्वत्ताकी चातुराई किस जगहमें चली गई होगी सो अपने नामके विद्यासागरादि विशेषणेको अनुचितरूप कार्य्यकरके उपरके

लेखमें दो श्रावण होनेसें भाद्रपद तक ८० दिन होते हैं जिसके ५० दिन बनालिये और दो आश्विन होनेसें कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसके ७० दिन अपनी कल्पनासें बना लिये परन्तु श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके कथित सूत्र सिद्धान्तोंके पाठोंका उत्थापनरूप मिथ्यात्वका कुछ भी भय नही किया क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने अनेक सूत्र सिद्धान्तोंमें समयादि सूक्ष्मकालकी गिनतीसें एकयुगके दोनुं ही अधिक मासको गिनतीमें लिये है इसका विस्तार उपरमें अनेक जगह छप गया हैं और षट्द्रव्यरूप वस्तुयोंमें एककाल द्रव्यरूप वस्तु भी शाश्वती है जिसके अनन्ते कालचक्र व्यतीत होगय है और आगे भी अनन्ते कालचक्र व्यतीत होवेंगे जिसमें चन्द्र, सूर्य्यके, शाश्वते विमान होनेसें चन्द्रके गतिका हिसावसें अनन्ते अधिक मास भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके सामनें व्यतीत होगये और आगे भी होवेंगे इस लिये सम्यक्त्वधारी मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी प्राणी होगा सो तो कालद्रव्यकी गिनतीके दो अधिक मास तो क्या परन्तु एक समय मात्र भी गिनतीमें कदापि निषेध नही कर सकता है तथापि न्यायरत्नजी जैनश्वेताम्बर धर्मोपदेष्टा तथा विद्यासागरका विशेषण धारण करते भी श्रीसर्वज्ञ कथित सिद्धान्तोंमें कालद्रव्यरूप शाश्वती वस्तुका एक समयमात्र भी निषेध नही हो सके जिसके बदले एक दम दो मासकी गिनती निषेध करके श्रीजैनश्वेताम्बरमें उत्सूत्र भाषणरूप मिथ्यात्वके उपदेष्टा होनेका कुछ भी भय नही करते है, हा अतीव खेदः,—इस लेखका तात्पर्य्य यह है कि जैन शास्त्रानुसार

एक समय मात्र भी जो काल व्यतीत हो जावे उसकी अव- . . गिनती करनेमें आती है तो फिर दो अधिक मासको गिनतीमें लेने इसमें तो क्याही कहना याने दो अधिक मासकी निश्चय करके अवश्यही गिनती करना सोही सम्य- . धारियोंकों उचित है इसलिये दो अधिक मासकी . निषेध करके ८० दिनके ५० दिन और १०० दिनके ७० दिन न्यायरत्नजीनें उत्सूत्र भाषणरूप अपनी कल्पनासें बनाये सो कदापि नही बन सकते है इसलिये दो श्रावण होनेसें अनेक शास्त्रानुसार पचास दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना और पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन भी अनेक शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक रहते है जिसको मान्य करने में कोई दूषण नही हैं तथापि न्यायरत्नजीनें दूषण लगाया सो मिथ्या है इस उपरके लेखका विशेष विस्तार तीनों महाशयोंके नामकी समीक्षामें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ११७ से पृष्ठ १२८ तक तथा चौथे महाशयके नामकी समीक्षामें भी पृष्ठ १३४ से पृष्ठ १८५ तक भी अच्छी तरहसें सूत्रकार श्री गणधर महाराजके तथा वृत्तिकार महाराजके अभिप्राय सहित युक्तिपूर्वक छप चुका है सो पढ़नेसे सर्व निर्णय हो जावेगा ;—

तथा थोड़ासा और भी सुन लिजीये कि, श्रीसम- वायाङ्गजी सूत्रमें श्रीगणधर महाराजनें तथा वृत्तिकार महाराजने अनेक जगह खुलासापूर्वक अधिक मासकी गिनतीमें प्रमाण किया है तथापि न्यायरत्नजी हो करके सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधिक मासकी गिनती निषेध करके मूलसूत्रके पाठोंको तथा वृत्तिके पाठोंको

उत्थापन करते है और चार मासके १२० दिनका वर्षाकाल सम्बन्धी उपरका पाठ श्रीगणधर महाराजनें कहा है तथापि इसका तात्पर्य्य समझे बिना दो श्रावण होनेसें पांच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें उपरका पाठ सूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें न्यायरत्नजी लिखते हैं इसलिये न्यायरत्नजीको श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठोंका तात्पर्य्य समझमें नही आया मालुम होता है तो फिर न्यायरत्न का और विद्यासागरका जो विशेषण श्रीशान्तिविजयजी ने धारण किया है सो कैसे सार्थक हो सकेगा सो पाठक वर्ग सज्जन पुरुष अपनी बुद्धिसें स्वयं विचार लेना ;—

और न्यायरत्नजी कालपुरुषकी चोटीकी भ्रान्तिसें अधिक मासको गिनतीमें निषेध करते हैं सो भी जैन शास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझे बिना उत्सूत्र भाषण करते हैं इसका निर्णय इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ४८ सें ६५ तक तथा चारों महाशयोंके नामकी समीक्षामें और खास न्यायरत्नजीकेही नामकी समीक्षामें उपरमें पृष्ठ २२० । २२१ । २२२ तक अच्छी तरहसें खुलासाके साथ छप गया है सो पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेगा कि शिखररूप चूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करने योग्य दिनी है इसलिये चोटी कहके निषेध करनेवाले मिथ्यावादी है सो उपरोक्त लेख सें पाठकवर्ग स्वयं विचार लेना ;—

और इसके अगाड़ी फिर भी न्यायरत्नजीनें लिखा है कि (अधिक महिनेको गिनतीमें लेनेसें तीसरा यह भी दोष आयगा कि चौइस तीर्थङ्करोंके कल्याणिक जो जिस जिस महिनेकी तिथिमें आते हैं गिनतीमें वे भी बढ़ जायगें

फिर क्या तीर्थङ्करोंके कल्याणिक १२० से भी ज्यादे गि
होगा कभी नही इस हेतुसे भी अधिक मास नही गि
जाता) इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखात
जिसमें प्रथमतो उपरके लेखमें न्यायरत्नजीने अधिकमास
गिनतीमें लेने वालोंको तीसरा दूषण लगाया इस पर
मेरे कों इतनाही कहना उचित है कि न्यायरत्नजीने
...र्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातना कर
खूब मिथ्यात्व बढ़ाया है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थंङ्कर गण
धरादि महाराज अधिक मासको गिनतीमें मान्य करते हैं
सो अनेक सिद्धान्तोंमें प्रसिद्ध है और न्यायरत्नजी अधिक
मासको गिनतीमें मान्य करने वालोंको दूषण लगाते हैं
जिससें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी प्रत्यक्ष आशा
तना होती है इसलिये जो न्यायरत्नजीको श्रीतीर्थङ्कर गण
धरादि महाराजोंकी आशातनासें अनन्त संसार वृद्धिका भय
लगता हो तो अधिक मासको गिनतीमें लेने वालोंको
दूषण लगाया जिसकी आलोचना लेकर अपनी आत्माको
दुर्गतिसें बचाना चाहिये आगे न्यायरत्नजीकी जैसी इच्छा
मेरा तो धर्मबन्धुकी प्रीतिसें लिखना उचित है सो लिख
दिखाया है और अधिक मासको श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि
महाराजोंने गिनतीमें मान्य किया है उसीके अनुसार
कालानुसार युक्तिपूर्वक वर्त्तमानमें भी अधिक मासको
आत्मार्थी पुरुष मान्य करते हैं जिन्होंको एक भी दूषण
नही लग सकता है परन्तु कल्पित दूषणोकों लगाने वालो
को तो उत्सूत्र भाषणरूप अनेक दूषणोंके अधिकारी होना
पड़ता है सो आत्मार्थी विवेकी सज्जन पुरुष इसही पुस्तकके
पढ़नेसे स्वयं विचार सकते हैं।

और अनन्ते कालचक्र हुए अधिक मास भी होता रहता है तैसेही अनन्त चौवीशी होगई जिसमें श्रीतीर्थंङ्कर महाराजोंके कल्याणक भी होते रहते हैं परन्तु किसीने भी कल्याणक वढ़ जानेके भयसें अधिक मासकी गिनती निषेध नही करी है तथापि इस पञ्चमें कालके विद्यासागर न्याय-रत्नका विशेषण धरानेवाले श्रीशान्तिविजयजी इतने वड़े विद्वान् कहलाते भी जैन शास्त्रोंके गम्भीरार्थको समझे विना कल्याणक वढ़ जानेके भयसें अधिक मासकी गिनती निषेध करते हैं यह भी एक अलौकिक आश्चर्यकी वात है क्योंकि जैन ज्योतिषशास्त्रानुसार मासवृद्धिके कारणसें जब दो पौष अथवा दो आषाढ़ होते थे तब उस समय कोई भव्य जीवोंको श्रीतीर्थंङ्कर महाराजोंके कल्याणककी तपश्चर्य्यादि करनेका इरादा होता था तब पहिले श्री-ज्ञानीजी महाराजकों पूछके पीछे करते थे जिसमें दो मासके कारणसें कोई भगवान्‌का प्रथम मासमें कल्याणक होया होवे उसी कल्याणकको प्रथम मासमें आराधन करते थे और कोई भगवान्‌का दूसरे मासमें कल्याणक होया होवे उसी कल्याणकको दूसरे मासमें आराधन करते थे जिससें जिन जिन भगवान् का जो जो कल्याणक मास वृद्धिके कारणसें प्रथम मासमें अथवा दूसरे मासमें होया होवे उसीको उसी मुजव श्रीज्ञानीजी महाराजको पूछके आराधन करते थे, पक्षवत्, अर्थात् अमुक भगवान् का अमुक कल्याणक अमुक मासके प्रथम पक्षमें होया होवे उसीकों प्रथम पक्षमें आराधन करते थे और दूसरे पक्षमें होया होवे उसीको दूसरे पक्षमें आराधन करते थे —

दो मासके कारणसें श्रीज्ञानीजी महाराजके कहने मुजब कल्याणक आराधन करनेमें आते थे और अधिक मासको गिनतीमें भी करनेमें आता था इसलिये अधिक मासकी गिनती करनेसें श्रीतीर्थङ्कर महाराजोंके कल्याणक गिनतीमें नही बढ़ सकते है और इस पञ्चमें कालमें भरत क्षेत्रमें श्रीज्ञानीजी महाराजका अभाव होनेसें और लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेके कारणसें प्रथम मासका प्रथम कृष्णपक्ष और दूसरे मासका दूसरा शुक्लपक्षमें मास तिथि नियत कल्याणकादि धर्मकार्य्य तथा लौकिक और लोकोत्तर पर्व करनेमें आते है जिसका युक्तिपूर्वक दृष्टान्त सहित सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें लिखनेमें आवेगा सो पढ़नेसें विशेष निर्णय हो जावेगा इस लिये न्यायरत्नजी कल्याणक बढ़ जानेके भयसें अधिक मासकी गिनती निषेध करते है सो जैन शास्त्रोंके विरुद्ध उत्सूत्र-भाषण करते है सो उपरके लेखसें पाठकवर्ग भी विशेष विचार सकते है ।

और इसके अगाड़ी फिर भी न्यायरत्नजीनें लिखा है कि (अधिक महिनोंके कारणसें कभी दो भाद्वे हो तो दूसरे भाद्रवेमें पर्युषणा करना चाहिये जैसे दो आषाढ़ महिने होते है तब भी दूसरे आषाढ़में चातुर्मासिक कृत्य किये जाते है वैसे पर्युषणा भी दूसरे भाद्रवेमें करना न्याययुक्त है)

उपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं कि हे सज्जन पुरुषों उपरके लेखमें न्यायरत्नजीनें मासवृद्धि के कारणसें दो आषाढ़ और दो भाद्रपद लिखे जिससें अधिकमास गिनतीमें सिद्ध होगया फिर अधिक मासको

तीमें लेनेवालोंको दूषण लगाना यह तो न्यायरत्नजीका
वादसें प्रत्यक्ष अन्यायकारक है सो पाठकवर्ग भी विचार
ते है।

और भी दूसरा सुनो—खास न्यायरत्नजीनें संवत् १९६६
सालका बयान याने शुभाशुभका फल संक्षिप्तसें जैनपत्र
साथमें जूदा हेण्डबिलमें प्रसिद्ध किया है उसीमें [इस
र्षमें श्रावण महिना दो है ऐसा लिखा है तथा अधिक मास
कारणसें दोनुंही श्रावणकी गिनती सहित तेरह मासों
प्रमाणसें तेरह अमावस्या और तेरह पूर्णिमाकी सब
ड़ियोंकी गिनती दिखाइ है और प्रथम श्रावण वदी ११
था १२ के दिन और दूसरे श्रावण वदी १० के दिन अच्छा
योग्य बताया है और प्रथम श्रावण शुदीमें सप्त नाड़ीचक्रमें
सूर्य्य और गुरु जलनाड़ी पर आनेका लिखा है और प्रथम
श्रावण शुदी पञ्चमीके दिन सिंह राशि पर शुक्र आनेका
लिखा है फिर दूसरे श्रावण शुक्लपक्षमें बुधका उदय होगा
वहां दुनियाके लोग सुखी रहनेका लिखा है फिर प्रथम
श्रावण वदी ४ बुधवार तक दुर्मति नामा संवत्सर रहनेका
लिखा है बाद याने प्रथम श्रावण वदी पञ्चमी गुरुवारका
दुन्दुभि नामका संवत्सर लगनेका लिखा है फिर दूसरे
श्रावणमें मीन राशि पर शनि और मङ्गल वक्र होनेका
लिखा है] इस तरहसें खुलासाके साथ न्यायरत्नजी अपने
स्वहस्ते दोनुं श्रावण महिनोंको बरोबर लिखते है गिनतीमें
लेते है छपाके प्रसिद्ध करते है (और दोनुं श्रावणके कारण
सें तेरह मासोंके ३८३ दिनका वर्ष दुनियामें प्रसिद्ध है) इस
पर निष्पक्षपाती आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको न्याय दृष्टिसें

विचार करना चाहिये कि न्यायरत्नजी आप स्वयं दोनुं श्रावण मासकी हकीकत जूदी जूदी लिखते है फिर गिनतीमें निषेध भी करते है यह तो ऐसे हुवा कि ममजननी वन्ध्या अथवा मम वदने जिह्वा नास्ति, इस तरहसें बाललीलावत् न्यायरत्नजी विद्याके सागर हो करके भी कर दिया हाय अफसोस,—

अब इस जगह मेरेको लाचार होकर लिखना पड़ता है न्यायरत्नजीकी विद्वत्ताकी चातुराई किस देशके कोणेमें गई होगा सो पूर्वापरका विचार विवेक बुद्धिसें किये विना श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करके तेरह मासोंका अभिवर्द्धित संवत्सर अनेक सिद्धान्तोंमें कहा है जिसके उत्थापनका भय न करते उलटा अधिक मासको गिनती करने वालोंको माया-वृत्तिसें मिथ्या दूषण लगादिये और फिर आपभी अधिक मासको प्रमाण करके लोगोमें ज्योतिषशास्त्रके विद्वान् भी प्रसिद्ध होते है परन्तु अधिक मासको गिनतीमें करनेवालोंको मिथ्या दूषण लगानेका और पूर्वापर विरोधी विसंवादी रूप मिथ्या वाक्यके फल विपाकका जरा भी भय नही करते है इसलिये जैन शास्त्रानुसार तो दूसरोंको मिथ्या दूषण लगानेके और विसंवादी भाषणके कर्मबन्धकी आलोचनाके लिये विना अथवा भावान्तरमें भोगे विना छूटना बहुत मुश्किल है सो जैन शास्त्रोंका तात्पर्य्यके जानकार विवेकी पुरुष स्वयं विचार सकते है और न्यायरत्नजीको भी उत्सूत्र भाषणका भय हो तो न्याय दृष्टिसें तत्त्वार्थको अवश्य ही ग्रहण करना चाहिये ;—

तथा और भी न्यायरत्नजीको थोड़ासा मेरा यही कहना है कि अधिकमासको आप कालपुरुषकी चोटी जान कर गिनतीमें नही लेनेका ठहराते हो तब तो दो आषाढ़, दो श्रावण दो भादवेका लिखना आपका वृथा हो जावेगा और दो आषाढ़ादि मासोंको लिखते हो तथा उसी मुजब वर्तते हो तब तो कालपुरुषकी चोटी कहके अधिकमासको गिनतीमें निषेध करते हो सो आपका वृथा है और दो आषाढ़, दो श्रावण, दो भादवे लिखना सब धर्म और कर्मका व्यवहार भी दोनु मासका करना फिर गिनतीमें नही लेना यह तो कभी नही हो सकता है इसलिये दोनु मासका धर्म और कर्मका व्यवहारको मान्य करके दोनु मासको गिनतीमें लेना सो ही न्यायपूर्वक युक्तिकी बात है तथापि निषेध करना धर्मशास्त्रोंके और दुनियाके व्यवहारसे भी विरुद्ध है इस लिये इसका मिथ्या दुष्कृत ही देना आपको उचित है नही तो पूर्वापर विरोधी विसंवादी वाक्यका जो विपाक श्रीधर्मरत्नप्रकणकी वृत्तिमें कहा है सो पाठ इन्ही पुस्तकके पृष्ठ ८६ । ८७ । ८८ में छपगया है उसीके अधिकारी होना पड़ेगा सो आप विद्वान् हो तो विचार लेना ;—

और दो आषाढ़ होनेसें दूसरे आषाढ़में चौमासी कृत्य किये जाते है जिसका मतलब न्यायरत्नजीके समझमें नहीं आया है सो इसका निर्णय सातमें महाशय श्रीधर्मविजयजी के नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा और दो भादवें होनेसें दूसरे भादवेंमें पर्युषणापर्व करना न्याय युक्त न्यायरत्नजी ठहराते है परन्तु शास्त्रसम्मत न्याय युक्त नही है क्योंकि

शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने अवश्यही पर्युषणा करना कहा है और दो भाद्रवें होनेसें दूसरे भाद्रवेमें पर्यु- करनेसें ८० दिन होते हैं जिससें दूसरे भाद्रवेमें ८० [illegible] पर्युषणा करना और ठहराना शास्त्रोंके और युक्तिके विरुद्ध है इसलिये प्रथम भाद्रवेमें ही ५० दिने पर्युषणा करना शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक न्याय सम्मत है इसका विशेष निर्णय तीनों महाशयोंके नामकी समीक्षामें इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १४० । १४१ । १४२ की आदि तक अच्छी तरहसें छप गया है उसीको पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेगा ।

और फिर भी न्यायरत्नजीनें अपनी बनाई मानवधर्म संहिता पुस्तकके पृष्ठ ८०० की पंक्ति ४ सें १० तक तिथियाँ की हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें और पृष्ठ ८०१ की पंक्ति २२॥ सें पृष्ठ ८०२ पंक्ति १० तक पर्युषणामें तिथियांकी हानी तथा वृद्धिके सम्बन्धमें शास्त्रोंके प्रमाण विना अपनी मति कल्पनासें उत्सूत्र भाषणरूप लिखा है जिसकी समीक्षा आगे तिथि निर्णयका अधिकार सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीके नामकी समीक्षामें करनेमें आवेगा वहां अच्छी तरहसें न्याय रत्नजीकी कल्पनाका (और न्यायाम्भोनिधिजीनें जैन सिद्धान्त समाचारीकी पुस्तकमें जो तिथियांकी हानी तथा वृद्धि सम्बन्धी उत्सूत्र भाषण किया है उसीका भी) निर्णय साथ साथमेंही करनेमें आवेगा सो पढ़नेसें तिथियांकी हानी तथा वृद्धि होनेसें धर्मकार्य्योंमें किसी रीतिसें वर्तना चाहिये जिसका अच्छी तरहसें निर्णय हो जावेगा ;—

इति पाँचवें महाशय न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी संक्षिप्त समीक्षा समाप्ता ॥

और सप्टेम्बर मासकी २७ मी तारीख सन् १९०८ आश्विन शुक्ल २ वीर संवत् २४३४ के रविवारका मुम्बईसें प्रसिद्ध होनेवाला जैन पत्रके २४ वें अङ्कके पृष्ठ ४ में गत वर्षे न्यायरत्नजीकी तरफसें लेख प्रसिद्ध हुवा हैं जिसमें खास करके श्रीखरतरगच्छ वालोंको श्रीमहावीर स्वामीजीके ६ कल्याणकके सम्बन्धमें पूछा हैं और आपनें श्रीहरिभद्र सूरिजी महाराजके तथा श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजके विरुद्धार्थमें श्रीपञ्चाशक मूलसूत्रका तथा तद्वृत्तिका अधूरा पाठ लिखके श्रीमहावीर स्वामीजीके पांच कल्याणक स्थापन करके ६ कल्याणकका निषेध किया है सो उत्सूत्र भाषण करके अनेक सूत्र, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठोंका उत्थापन करके श्रीगणधर महाराजके, श्रीश्रुत केवली महाराजके, पूर्वधर महाराजोंके और बुद्धिनिधान पूर्वाचार्य्योंके वचनका अनादर करते पञ्चमकालके अपने हठवादको विद्वत्ता न्यायरत्नजीनें अनन्त संसारको वढ़ाने वाली प्रसिद्धकरी हैं जिसकी समीक्षा और आगस्ट मासकी २९ वी तारीख सन् १९०९ दूसरे श्रावण सुदी १३ वीर संवत् २४३५ रविवारका जैन पत्रके २१ वें अङ्कके पृष्ठ १५ वा में जो न्यायरत्नजीकी तरफसें फिर भी लेख प्रसिद्ध हुवा हैं उसीमें 'खरतरगच्छ मीमांसा, नामकी किताब छपवा कर प्रसिद्ध करके [जैसे न्यायाम्भोनिधिजीनें जैन सिद्धान्तसमाचारी, पुस्तकका नाम रखके वास्तविकमें उत्सूत्र भाषण का मिथ्यात्वरूप पाखण्डको प्रगट किया हैं (जिसका किञ्चिन्मात्र इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १५१ और पृष्ठ २१५ । २१६ में दिखाया हैं, उसीका नमुनारूप पर्युषणा सम्बन्धी समीक्षा भी

इन्ही पुस्तकके पृष्ठ १५७ सें २१४ तक उपरमें छप चुकी हैं) तैसेही न्यायरत्नजीने भी प्राय उन्ही बातोंको अपनी चातुराईसें कुछ कुछ न्यूनाधिक करके] मिथ्यात्वका पोष्ट-पेषणरूप मानु अवनी और अपने गच्छवासी हठग्राही भक्तजनोंकी संसार वृद्धिका कारणरूप, शास्त्रानुसार सत्य बातोंका निषेध और शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें कल्पित बातोका स्थापनकर पुस्तक प्रगटकरके अविसंवादी अत्युत्तम जैनमें विसवादरूप मिथ्यात्वका झगड़ा फैलाना न्यायरत्नजी चाहते हैं, जिसकी और गत वर्षके लेखकी समालोचनारूप समीक्षा इस जगह लिखके न्यायरत्नजीके उत्सूत्र भाषणकी तथा कुतर्कोंकी चातुराईका दर्शाव प्रगट करना चाहु तो जरूर करके २५० अथवा ३०० पृष्ठका यहां विस्तार बढ़ जावें जिससें आठों महाशयोके नामकी पर्युषणा सम्बन्धी अबी जो समीक्षा सरू हैं उसीमें अन्तर पड़ जावें और यह ग्रन्थ भी बहुत बड़ा हो जावें इसलिये अबी यहां न्याय रत्नजी सम्बन्धी विशेष न लिखते पर्युषणा सम्बन्धी विषय पूरा होये बाद अन्तमें थोड़ासा संक्षिप्तसें लिखनेमें आवेगा जिससें श्रीजिनाज्ञा इच्छक आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको सत्यासत्यका निर्णय स्वयं मालुम हो सकेगा ;—

और अब छठे महाशय श्रीवल्लभविजयजीकी तरफसें पर्युषणा सम्बन्धी जो लेख जैन पत्रमें प्रगट हुवा है उसीकी समीक्षा करके पाठकवर्गकों दिखाता हुं—जिसमें प्रथमही आगष्ट मासकी ८ वी तारीख संवत् १९०९ गुजराती प्रथम श्रावण वदी ७ रविवारका मुम्बईसें प्रसिद्ध होने वाला जैनपत्रके १८ वें अङ्कके पृष्ठ १० विषे गुजराती भाषामें

प्रश्नोत्तर छपे हैं जिसमें किसी मुम्बईवाले श्रावकने प्रश्न किया हैं कि (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमां करिये तो दोष लागेके केम) इस प्रश्नका श्रीपालणपुरसें श्रीवल्लभ-विजयजीनें यह जबाब दिया कि (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमां नज थाय आज्ञाभङ्ग दोष लागे) इस लेखका मतलब ऐसे निकलता हैं कि गुजराती प्रथम श्रावण वदी हिन्दी दूसरे श्रावण वदीसें लेकर दूसरे श्रावण शुदीमें अर्थात् आषाढ़ चतुर्मासीसे पचास दिने पर्युषणा करने वालोंको जिनाज्ञा भङ्गके दूषित ठहराये तब श्रीलश्करसें श्रीबुद्धिसागरजीनें श्रीपालणपुर श्रीवल्लभविजयजीको सुन्दर ओपमा सहित वन्दनापूर्वक विनय भक्तिसें एक पोष्टकार्ड लिख भेजा उसीमें लिखा था कि—आगष्ट मास की-८ वीं तारीखका जैन पत्रके १८ वें अङ्कमें (पर्युषणपर्व पेला श्रावणमां नजथाय आज्ञाभङ्ग दोष लागे) यह अक्षर जिस सूत्र अथवा वृत्तिके आधारसें आपने छपवाये होवें उसी सूत्र अथवा वृत्तिके पाठ लिखकर भेजनेकी कृपा करना आपको मध्यस्थ और विद्वान् सुनते हैं इस लिये आपने शास्त्रके प्रमाण बिना अपनी कल्पनासें झूठ नही छपवाया होगा तो जरूर शास्त्रपाठके अक्षर लिख कर भेजेंगें इत्यादि—इस तरहका पोष्टकार्डमें मतलब लिख कर खानगीमें भेजाथा सो कार्ड श्रीवल्लभविजयजीको श्रीपा-लणपुरमें खास हाथोहाथ पहुंच गया परन्तु श्रीवल्लभविजय-जीनें उस कार्डका कुछ भी पीछा जबाब लिखकर नहीं भेजा जब कितनेही दिन तक तो जबाब आनेकी राह देखी तथापि कुछ भी जबाब नही आया तब फिर भी

दूसरा पत्र श्रीवल्लभविजयजीको, उपर लिखे मतलबके लिये भेजनेमें आया तोभी श्रीवल्लभविजयजीने कुछ भी जबाव नही दिया तब श्रीपालणपुरके प्रसिद्ध आदमी पीताम्बर भाई हाथी भाई महताके नामसे एक पत्र लिखा उसीमें भी विशेष समाचार पर्युषणा सम्बन्धी श्रीवल्लभविजयजीने दूसरे श्रावणमें आषाढ़ चौमासीसे ५० दिने पर्युषणा करने वालोंको आज्ञाभङ्गका दूषण लगाया जिसका खुलासे उत्तर पूछाया था और उसी पत्रमें ५० दिने पर्युषणा शास्त्रकारोंने करनेका कहा हैं उसी सम्बन्धी पाठ भी लिख भेजे थे वह पत्र श्रीवल्लभविजयजीको पीताम्बर भाईने पहुंचाया और जबाव भी पूछा इतने पर भी श्रीवल्लभविजयजीने अपनी बातका जबाव नही दिया और शास्त्रोंके पाठोंको प्रमाण भी नही किये परन्तु स्वपक्षपातका पण्डिताभिमानके जोरसे अन्याय कारक विशेष झगड़ा फैलानेका कारण करके माया वृत्तिसें आप निर्दूषण बन कर श्रीबुद्धिसागरजीको दूषित ठहरानेके लिये अक्टोवर मासकी ३१ वी तारीख सन् १९०९ आसोज वदी ३ वीर संवत् २४३५ का अङ्क २९ वा के पृष्ट ४-५ में अपनी चातुराईको प्रगट करी हैं जिसको इस जगह लिख दिखाता हुं ;—

[खबरदार! होवो होशियार!! करो विचार! निकालो सार!!! लेखक—मुनि—वल्लभविजय-पालणपुर,

इसमें शक नहीं कि, अंग्रेज सरकारके राज्यमें, कला-कौशल्यकी अधिकता हो चुकी है, हो रही है और होती रहेगी! परंतु गाम वसे वहां भङ्गी चमारादि अवश्य होते हैं' तद्वत् अच्छी अच्छी बातोंकी होशियारीके साथमें बुरी

बुरी बातोंकी होशियारी भी आगे ही आगे बढती हुई नजर आती है ! इस वास्ते खबरदार होकर होशियारीके साथ विचार कर सार निकालनेका ख्याल रखना योग्य है- ताकि पीछेसे पश्चात्ताप करनेकी जरूरत न रहे !

राज्य अंग्रेज सरकारका है कानून (कायदे) सबके लिये तैयार है ! चाहे अमीर हो, चाहे गरीबहो ; चाहे राजा हो, चाहे रंक हो ! चाहे शहरी हो, चाहे गँवार हो ! जो एक कहेगा दो सुनेगा !

थोडे समयकी बात है, लश्कर से बुद्धि सागर नामा खरतर गच्छीय मुनिके नामका पत्र हमारे पास आया, जिसमें पर्युषणाकी बाबत कुछ लिखा था, हमने मुनासिब नहीं समजा कि' वृथा समय खोकर परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम किया जावे ! कितनेही समयसे गच्छ संबंधी टंटा प्रायः दबा हुवा है, तपगच्छ खरतरगच्छ दोनो ही गच्छ प्रायः परस्पर संपसे मिले जुलेसे मालुम होते है' उनमें फरक पड़नेसे कुछ दबे हुए जैन शासनके वेरिओंका जोर हो जानेका सम्भव है। यह तो प्रसिद्धही है कि दोनोंकी लड़ाईमें तीसरेका काम हो जाता है। यद्यपि महात्मा मोहनलालजी महाराज खरतर गच्छके थे, तथापि तपगच्छ-वाले उनको अधिकसे अधिक मान देते थे ! यही गच्छ पक्षकी कुछक शांति लोकोंके देखनेमें आती थी ! मरहूम महात्मा भी तपगच्छकी बाबत अपना जुदा ख्याल नहीं जाहिर करते थे ! बलकि खुद आप भी तपगच्छकी समा-चारी करते थे जो कि प्रायः प्रसिद्ध ही है परन्तु सूर्पनखा समान जीव उभय पक्षकों दुःखदायी होते हैं तहत बुद्धिसागर

खरतर गच्छीय मुनि नाम धारकने भी अपनी मन.कामना पूर्ण न होनेसे, रावणके समान ढुंढियांका सरणा लेकर युद्वारंभ करना चाहा है ।]

पाठकवर्गकों छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके उपर का लेखकी समालोचनारूप समीक्षा करके दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो मेरेकों इतना ही कहना उचित हैं कि छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी साधु नाम धारक होकर खास आप झगड़ेका मूल खड़ा करके दूसरेको दूषित करना और अन्याय कारक माया वृत्तिका मिथ्या भाषणसें आप निर्दूषण बनना चाहते हैं सो सर्वथा अनुचित हैं क्योंकि प्रथम ही आपनें (शास्त्रकारोंकी रीति मूजब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार आषाढ़ चौमासीसें पचास दिने श्रावणवृद्धिके कारणसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालोंकों) आज्ञाभङ्ग का दूषण लगा के जैन पत्रमें छपवा कर प्रगट कराया तब श्रीलश्करसें श्रीबुद्धिसागरजीनें आपकों खानगीमें शास्त्रका प्रमाण पूछा था उन्हीकें शास्त्रका प्रमाण आप खानगीमें पीछा नही लिख सके और अन्यायकी रीतिसें उलटा रस्ता पकड़के खानगीकी वार्त्ताको प्रसिद्धीमें लाकर वृथा निष्प्रयोजनकी अन्यान्य बातोंको और भङ्गी चमार सूर्पनखा वगैरह अनुचित शब्दोंको लिखके विशेष झगड़ेका मूल खड़ा करके भी आप निर्दूषण बनकर अपने अन्यायको न देखते हुए और शास्त्रके पाठकी बात न्याय रीतिसें पूछने वाले को दूषित ठहराते हुए अपने योग्यता माफक शब्द प्रगट किये याने लौकिकमें कहते हैं कि—जैसी होवे कोठे, वैसी

निकले होठे,–अर्थात् जिस आदमीके जैसी बात दिलमें होवे उस आदमीसें वैसेही अन्तरकी बातके सूचकरूप शब्द करके सहित भाषा निकलती है तैसेही छठे महाशयजीने भी मानुं अपनी आत्मामें रहनेवाले गुणोंके सूचक शब्द लिखके प्रसिद्ध किये है सो वह द्रव्य शब्दके भाव गुण छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीमें अवश्य ही दिखते हैं सोही पाठकवर्गकों दिखाता हुं और साथ साथमें छठे महाशयजीकी अन्याय कारक अन्यान्य बातोंकी समीक्षा भी करता हुं ;—

छठे महाशयजीनें (गाम वसे वहाँ भङ्गी चमारादि अवश्य होते हैं) यह अक्षर लिखे हैं इस पर मेरेकों इतना ही कहना उचित हैं कि श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधन करनेवाले जो सज्जन है सोही मानों गाम वसता है उसी गामरूपी श्रीजिनशासनमें उत्सूत्र भाषक निन्दकादि भङ्गी चमारोंकी तरह उक्त महाशयजी आदि वसते हैं सो उस गामकी निन्दारूप मलिनताकों उठाते हुए भी आप पवित्र बनना चाहते है सो कदापि नही बन सकते हैं और आगे फिर भी लिखा हैं कि (अच्छी अच्छी बातोंकी होशियारीके साथमें बुरी बुरी बातोंकी होशियारी भी आगे ही आगे बढ़ती हुई नजर आती हैं) छठे महाशयजीके इन अक्षरें पर मेरेको यही कहना पड़ता है कि इस अंग्रेजी राज्यमें कलाकौशल्यता और न्यायशीलताके कारणसें श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञारूपी अच्छी अच्छी होशियारीकी वृद्धिके साथ साथमें बुरी बुरी होशियारीकी तरह प्रथम कदाग्रहके बीज लगानेवाले

तथा सन्दायमें चलनेवाले और दूसरोंको मिथ्या दूषण लगानेवाले छठे महाशयजी वगैरह अनेक पक्षपाती पुरुष बुरी बुरी होशियारीकी बातोंका सरणा लेते हैं सो बड़ी ही अफसोसकी बात है ;—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीने लिखा है कि (खबरदार होकर होशियारीके साथ विचारकर सार निकालनेका ख्याल रखना योग्य हैं ताकि, पीछेसें पश्चात्ताप करनेकी जरूर न रहें) इन अक्षरोंको लिखके छठे महाशयजी दूसरेकों होशियार होनेका बताते हैं परन्तु अपनी आत्माकी तरफ कुछ भी होशियारी न दिखाते हुए विन विचारा काम करके इन भव तथा पर भव और भवो भवमें पश्चात्ताप करनेका कुछ भी भय नही रखते हैं क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महान् उत्तम पुरुषाचार्य्योंने और खास छठे महाशयजीके ही पूर्वज पूज्यपुरुषोंने अनेक सूत्र, वृत्ति, चूर्णि, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसें एक मास और वीश दिने याने पचास दिने श्रीपर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है और इस वर्त्तमान कालमें लौकिक पञ्चाङ्गमें श्रावणादि मासोंकी वृद्धि होनेके कारणसें आषाढ़ चौमासीसें पचास दिन दूसरे श्रावणमें पूरे होते हैं तब शास्त्रानुसार पचास दिनकी गिनतीसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवाले श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक ठहरे और जैन शासनके प्रभावक तथा युगप्रधान और बुद्धिनिधान उत्तमाचार्य्योंकी श्रीजिनाज्ञा मुजब दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेकी अनुक्रमें अखण्डित महत परम्परा (अनुमान १४०० वर्ष हुए जैनपञ्चाङ्गके अभाव

सें आत्मार्थी पुरुषोंकी) चली आती है उसी मुजब मोक्षाभि-लाषी सज्जन वर्त्तते हैं जिन्होंको छठे महाशयजीनें अपनी क्षुद्रबुद्धिकी तुच्छ विद्वत्ताके अभिमानसें उत्सूत्र भाषणका भय न करते एकदम आज्ञाभङ्गका दूषण लगाके छापामें छपानेकी आज्ञा करी और शास्त्रानुसार चलने वालोंको मिथ्या दूषण लगानेके कारणसें झगड़ा फैलानेके कारण का जरा भी विचार नही किया और जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंनें पचास दिने पर्युषणा करनेका कहा है उसीके अनुसारे आत्मार्थी सज्जन पुरुष दूसरे श्रावणमें पचास दिने पर्युषणा करते है जिन्होंको छठे महाशयजी आज्ञाभङ्गका दूषण लगाते है जिससें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके वचनका अनादर होकर उन महाराजोंकी महान् आशातना होती है तथा अनेक सूत्र, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि शास्त्रोंके पाठोंके मुजब नही वर्त्तनेसें उत्थापन होता है और उन महाराजोंकी आशातना तथा अनेक शास्त्रोंके पाठोंका उत्थापन और उन महाराजोंकी आज्ञानुसार अनेक शास्त्रोंके प्रमाणयुक्त वर्त्तने वालोंको स्वपक्षपातके पंडिताभिमानसें मिथ्या दूषण लगाना सो निःकेवल उत्सूत्र-भाषणरूप है और उत्सूत्र भाषणके लिये ;—

श्रीभगवतीजी सूत्रमें १ तथा तद्वृत्तिमें २ श्रीउत्तराध्ययनजी सूत्रमें ३ तथा तीनकी छ (६) व्याख्यायोंमें ९ श्रीदशवैकालिक सूत्रमें १० तथा तीनकी चार व्याख्यायोंमें १४ श्रीसूयगड़ाङ्गजी (सूत्रकृताङ्गजी) सूत्रकी निर्युक्तिमें १५ तथा तद्वृत्तिमें १६ श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें १७ तथा तद्वृत्तिमें १८ श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १९ श्रीआवश्यकजी सूत्रकी

बृहद्वृत्तिमें २० तथा प्रथम लघु वृत्तिमें २१ और दूसरी लघु वृत्तिमें २२ श्रीविशेषावश्यकमें २३ तथा तद्वृत्तिमें २४ श्रीसाधुप्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्तिमें २५ श्रीमूलशुद्धिप्रकरणमें २६ श्रीमहानिशीथ सूत्रमें २७ श्रीधर्मरत्नप्रकरणमें २८ तथा तद्वृत्तिमें २९ श्रीसट्टपट्टक बृहद्वृत्तिमें ३० श्रीश्राद्धविधि वृत्तिमें ३१ श्रीआगम अष्टोत्तरीमें ३२ तथा तद्वृत्तिमें ३३ श्रीसन्देह-दोलावलीवृत्तिमें ३४ श्रीसम्बोधसत्तरीमें ३५ तथा तद्वृत्तिमें ३६ श्रीवैराग्यकल्पलतामें ३७ श्रीत्रिषष्ठिशलाकापुरुष चरित्रमें ३८ और श्रीकल्पसूत्रकी सात व्याख्यायोंमें ४५ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें और भाषाके स्तवन, पद, ढाल वगैरहमें भी अनेक जगह लिखा है कि शास्त्रपाठ तथा एकाक्षरमात्रभी प्रमाण नहीं करनेवाला निन्हव उत्सूत्र भाषककों श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्य परम गुरुजन महाराजोंकी आशातना करने वाला और उन्हीं महाराजोंके वाक्यकों न मानता हुवा उत्थापन करने वाला बहुलकर्मी, माया सहित मिथ्या भाषण करने वाला, संयमसे भ्रष्ट, घोर नरक में गिरने वाला, चतुरगतिरूप संसारमें कटुक विपाक दारुण (भयङ्कर) फलको भोगने वाला, सम्यग्दर्शनसें भ्रष्ट, मिथ्यात्वी, दुर्लभबोधि, अनन्त संसारी, मोहन्यादि आठ कर्मोंके चीकणे बन्धको बाँधने वाला, पापकारी इत्यादि अनेक विशेषण शास्त्रोंमें कहे हैं जिसके सब पाठ इस जगह लिखनेसें बहुत विस्तार हो जावे तथापि भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेके लिये थोड़ेसें पाठ भी लिख दिखाता हुं ;

श्रीलक्ष्मीवल्लभगणिजी कृत श्रीउत्तराध्ययनवृत्तौ अष्टादशाध्ययने–संयतराजर्षिं क्षत्रियमुनिर्वदति हे महामुने

ये पापकारिणो नराः पापं असत् परूपणं कुर्वन्तीत्येवं शीलाः पापकारिणो ये नराः भवन्ति ते नराः घोरे भीषणे (भयङ्करे) नरके पतन्ति च पुनः धर्मं सत् परूपणरूपं चरित्राराध्यदिव्यं दिवः सम्बन्धीनीं उत्तमां गतिं गच्छन्ति इत्यादि ॥ इस पाठसें उत्सूत्र परूपणा करने वालेकों भयङ्कर नरक और सत्य परूपणा करने वालेकों देव लोगकी गति कही हैं। और श्रीशान्तिसूरिजीकृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण मूल तथा तद्वृत्ति श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत भाषा सहित श्री पालीताणासें श्रीजैनधर्म विद्याप्रसारकवर्गकी तरफसें छपके प्रसिद्ध हुवा हैं जिसके तीसरे भागके पृष्ठ ८२। ८३। ८४ का पाठ गुजराती भाषा सहित नीचे मुजब जानो ;—

यथा—अइ साहस मेयं जं, उस्सुत्त-परूवणा कडुविवागा ॥
जाणंतेहिवि दिज्जइ, निद्देसो सुत्तबज्झत्थे ॥१०१॥

मूलनो अर्थ—उत्सूत्रपरूपणा कडवां फल आपनारी छे एवुं जाणतांछतां पण जेओ सूत्रबाह्य अर्थमां निश्चयआपी देछे ते अति साहसछे ॥ १०१ ॥

टीका—ज्वलज्ज्वालानल प्रवेशकारिनर साहसादप्यधिकमतिसाहसमेतद्वर्त्तते यदुत्सूत्रपरूपणा सूत्रनिरपेक्ष देशना कटुविपाका दारुणफला जानानैरवबुध्यमानैरपि दीयते वितीर्य्यते निर्देश्यो निश्चयः सूत्रबाह्ये जिनेन्द्रागमानुक्तेऽर्थे वस्तु विचारे किमुक्तं भवति—

दुब्भासिएण इक्केण, मरीईदुक्खसागरं पत्तो।
भमिओ कोडाकोडिं, सागरसिरिनामधिज्जाणं ॥१॥

उस्सुत्तमाचरन्तो-बंधइकम्मं सुचिक्कणं जीवो। संसारञ्च पवड्ढइ, मायामोसं च कुव्वइय ॥ २ ॥ उम्मग्गदेसओमग्ग–नास

जो गूढहियमाइल्लो । सढसीलोयससल्यो–तिरियाउं बंधए जीवो ॥३॥ उम्मग्गदेसणाए–चरणं नासन्ति जिणवरिंदाणं । वावन्नदंसणा खलु–नहुलब्भातारिसादट्ठुं ॥४॥ इत्याद्यागम वचनानि श्रुत्यापि स्वाग्रहग्रहग्रस्त चेतसो यदन्यथान्यथा व्याचक्षते विदधति च–तन्महासाहसमेवा नर्वाक्पारासार-संसार पारावारोदरविवरभावि भूरिदु खभाराङ्गीकारादिति ।

टीकानो अर्थ—वळती आगमना पेसनारमाणसनासाहस-करतां पण अधिक आ अतिसाहसछे के सूत्रनिरपेक्ष देशना कहयां एटले भयङ्कर फल आपनारीछे एम जाणनारा होइने पण सूत्रबाह्य एटले जिनागममां नही कहेल अर्थनां एटले वस्तु विचारमा निर्देश एटले निश्चय आपीदेछे—एटले-शुकह्युं तेकहेछे—मरीचि एकदुर्भाषितथी दु खनांदरियामां पडी क्रोडाक्रोडसागरोपम भम्यो । १ । उत्सूत्र आचरता जीव चीकणा कर्म बांधेछे संसारवधारेछे अने मायामृषा करेछे । २ । उन्मार्गनी देशना करनार मार्गनो नाशकरनार गूढ-हृदयथी मायावी शठ अने सशल्य जीव तिर्यंचनो आयुष्य बांधेछे ।३। जेओ उन्मार्गनी देशनाथी जिनेश्वरना चारित्रनो नाशकरेछे तेवा दर्शनभ्रष्ट लोकोने जोया पणसारा नहीं ।४। आवगेरे आगमना वचनो सांभलीने पण पोताना आग्रहमा ग्रस्त थनो जे कांइ आडु अवलु बोलेछे तथा करेछे ते महा साहसजछे केमके एतो अपार अने असार संसाररूप दरि याना पेटमां थनार अनेक दु खनुभार एकदम अङ्गीकार करया तुल्य छे ।

और फिर भी तीसरा भागके पृष्ठ २५२ का पाठ भाषा सहित नीचे मुजब जानो यथा—

अयमत्राशयः—सम्यक्त्वं ज्ञानचरणयोः कारणं यतएवमागमः—

ता दंसणिस्सनाणं, नाणेण विणा णहुंति चरणगुणा ॥
अगुणस्स नत्थि मुक्खो, नत्थि अमुक्खस्स निव्वाणं ॥१॥ इति
तच्च गुरुबहुमानिन एव भवत्यतो दुःकरकारकोऽपि तस्मि-
न्नवज्ञानविदध्यात् तदाज्ञाकारि च भूयाद्यत उक्तं—

छट्ठट्ठम दसमदुवालसेहिं, मासद्ध मास खमणेहिं ॥
अकरंतो गुरुवयणं, अणंत संसारिओ भणिओ ॥१॥इत्यादि

इहां आशय एछे के सम्यक्त्व ए ज्ञान अने चारित्रनु कारणछे जे माटे आगममां आरीते कहेलुंछे—सम्यक्त्व वंतनेज ज्ञान होयछे अने ज्ञान विना चारित्रना गुण होता नथी अगुणीने मोक्ष नथी अने मोक्ष वगरनाने निर्वाण नथी, हवे ते सम्यक्त्व तो गुरुनो बहुमान करनारनेज होयछे एथी करीने दुःकरकारी थईने पण तेनी अवज्ञा नहीं करतां तेना आज्ञाकारी थवुं जे माटे कहेलुंछे के छठ, अठम दशम, द्वादश तथा अर्द्धमासखमण अने मासखमण करतं थको पण जो गुरुनो वचन नही माने तो अनंत संसारी थायछे।

और श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धविधिवृत्तिक गुजरातीभाषान्तर शाः—चीमनलाल शांकलचंद मारफती याने श्रीमुंबईमें छपवा कर प्रसिद्ध किया है जिसके पृ १८८ का लेख नीचे मुजब जानो ;—

आशातनाना विषयमां उत्सूत्र [सूत्रमां कहेला आशयथी विरुद्ध] भाषणकरवाथी अरिहंतनी के गुरुनी अवहेलना करवी ए मोटी आशातनाओ अनन्तसंसारनी हेतु जेमके उत्सूत्र प्ररूपणाथी सावद्याचार्य्य, मरीची,जमाली,कु

वालुओसाधु विगेरे घणाक जीवो अनन्त संसारी थयाछे कह्यु छे के—उत्सूत्तभासगाणं, बोहिनासो अणंतसंसारो। पाण च्चए वि धिरा उस्सुत्तं ता न भासंति ॥ १ ॥ तित्थयर पवयण सूअं, आयरिअं गणहरं महट्ठीअं। आसायंतो बहुसो, अणंत संसारिओ होई ॥ २ ॥ उत्सूत्रना भाषकने बोधिबीजनो नाश थायछे अने अनन्त संसारनी वृद्धिथायछे माटे प्राणजतां पण धीरपुरुषो उत्सूत्र वचन बोलता , नथी तीर्थङ्कर, प्रवचन [जैनशासन] ज्ञान, आचार्य्य, गणधर, उपाध्याय, ज्ञानादिकथी महर्द्धिकसाधु, साधु ए ओनी आशातना करतां प्राणी घणुकरी अनन्त संसारी थायछे।

और सुप्रसिद्ध युगप्रधान श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमणजी महाराजनें श्रीआवश्यकभाष्य [विशेषावश्यक] में कहा है यथा—जे जिणवयणु तिसे, वयणं भासन्ति जे उ मन्नति। सम्मदिट्ठीणं तं, दंसणपि संसार वुढ्ढि करंति ॥ १ ॥

भावार्थ.—जो प्राणी श्रीजिनेश्वर भगवान् का वचनके विरुद्धवचन [उत्सूत्र] भाषण करता होवे और उसीको जो मानता होवे उस प्राणीका मुख देखना भी सम्यक्त्वधारियोंको संसार वृद्धि करता है ॥ १ ॥

अब आत्मार्थी विवेकी सज्जन पुरुषोंको निष्पक्षपातसें दीर्घदृष्टिसें विचार करना चाहिये कि उत्सूत्र भाषण करने वाला तो संसारमें रुले परन्तु उत्सूत्र भाषकका मुख देखने वाले अर्थात् उस उत्सूत्र भाषक सम्यग्दर्शनसें भ्रष्ट, दुराचारीको श्रद्धापूर्वक वन्दनादि करने वालोंको भी संसार की वृद्धिका कारण होता है तो फिर इस वर्त्तमान पञ्चम कालमें उत्सूत्र भाषकोंको परमपूज्यमानके उन्होंके कहने

मुजब वर्तने वाले गच्छपक्षी दृष्टिरागी विचारे भोले जीवोंके कैसे कैसे हाल होवेंगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जानें—

उपरमें उत्सूत्र भाषक सम्बन्धी इतना लेख लिखनेका कारण यही है कि उत्सूत्रभाषक पुरुष श्रीतीर्थपती श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी और अपने पूर्वजोंकी आशातना करने वाला और भोले जीवोंको भी उसी रस्ते पहुंचानेके कारणसें संसारकी वृद्धि करता है जिससें उसीकों पर भवमें तथा भवो भवमें नरकादि अनेक विडम्बना भोगनी पड़ती है इसलिये महान् पश्चात्तापका कारण बनता है और इस भवमें भी उत्सूत्र भाषकको अनेक उपद्रव भोगने पड़ते है, तैसे ही छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीने भी उत्सूत्र भाषण करके श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधक पुरुषोंको मिथ्या आज्ञा-भङ्गका दूषण लगाकर जैनपत्रमें प्रसिद्ध कराके झगड़ेका मूल खड़ा किया और बड़े जोरके साथ पुनः जैनपत्रमें फैलाया जिससें आत्मार्थी निष्पक्षपाती सज्जन-पुरुष तथा अपने [छठे महाशयजीके] पक्षधारी श्रीतप-गच्छके सज्जन पुरुष और खास छठे महाशयजीके मण्डलीके याने श्रीन्यायाम्भोनिधिजीके परिवार वाले भी कितने ही पुरुष छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीपर पूरा अभाव करते है कि ना हक वृथा जो संपसे कार्य्य होतेथे जिसमें विघ्नकारक झगड़ा खड़ा किया है इसलिये छठे महाशय-जीको इन भवमें भी पूरे पूरा पश्चात्ताप करनेका कारण होगया है तथा करते भी है।

और उत्सूत्र भाषण करके दूसरोंको मिथ्या दूषण लगा-

नेके कारणसें उपरोक्त शास्त्रोके प्रमाणानुसार पर भवमें तथा भवोभवमें छठे महाशयजीको पूरे पूरा पश्चात्ताप करना पड़ेगा इस लिये प्रथमही पूर्वापरका विचार किये विना पश्चात्ताप करनेका कार्य्य करना छठे महाशयजी को योग्य नही था तथापि किया तो अब मेरेको धर्मबन्धु की प्रीतिसें छठे महाशयजीको यही कहना उचित है कि आपको उपरोक्त कार्य्योंसे संसार वृद्धिके कारणसे यावत् भवोभवमें पश्चात्ताप करनेका भय लगता होवे तो गच्छका पक्षपात और पण्डिताभिमानको दूरकरके सरलतापूर्वक मन वचन कायासें श्रीचतुर्विध संघसमक्ष उपर कहे सो आपके कार्य्योंका मिथ्या दुष्कृत देकर तथा आलोचना लेकर और अपनी भूल पीछी ही जैनपत्र द्वारा प्रगट करके उपरोक्त उत्सूत्रभाषणके फल विपाकोसें अपनी आत्माको बचा लेना चाहिये नही तो बडीही मुश्किलीके साथ उपर कहे सो विपाकोंको भवान्तरमें भोक्ते हुए जरूर ही पश्चात्ताप करनाही पडेगा वहा किसीका भी पक्षपात नही है इस लिये आप विवेक बुद्धिवाले विद्वान् हो तो हृदयमें विचार करके चेत जावो मैंने तो आपका हितके लिये इतना लिखा है सो मान्य करोगे तो बहुत ही अच्छी बात है आगे इच्छा आपकी ,—

और आगे फिर भी छठे महाशयजी—अंग्रेज सरकारके कायदे कानून दिखाकर एक कहेगा दो सुनेगा—ऐसा लिखते हैं इस पर मेरेको बडेही अफसोसके साथ लिखना पडता है कि छठे महाशयजी साधु हो करके भी इतना मिथ्यात्वको वृथा क्यो फैलाते हैं क्योंकि सम्यक्त्वधारी

आत्मार्थी सज्जन पुरुष होते हैं सो तो अपनी भूलको मंजूर कर दूसरेकी हितशिक्षारूप सत्य बातको प्रमाण करके उपकार मानते हुए सुख शान्तिसे संप करके वर्त्तते हैं और मिथ्यात्वी होते है सो सत्य बातकी हितशिक्षाको कहनेवाले पर क्रोध-युक्त हो कर अपनी भूलको न देखते हुए अन्यायसे झगड़े का मूल खड़ा करनेके लिये (हितशिक्षाको ग्रहण नही करते हुए) एककी दो सुनाकर रागद्वेषसे विसंवाद करते हैं तैसेही छठे महाशयजीने भी एककी दो सुनानेका दिखाया परन्तु शास्त्रार्थसे न्याय पूर्वक सत्य बातको ग्रहण करने की तो इच्छा भी न रक्खी, इस बातको दीर्घ दृष्टिसे सज्जन पुरुष अच्छी तरहसे विशेष विचार सकते हैं,--

और सरकारी कानून कायदेका छठे महाशयजीने लिखा है इस पर भी मेरेको यही कहना पड़ता है कि प्रथम झगड़ा खड़ा करनेवाले और दूसरोंको मिथ्या दूषण लगानेवाले तथा मायावृत्तिकी धूर्त्ताचारीसे वक्रोक्तिकरके-पण्डिताभिमानसे अनुचित शब्द लिखनेवाले और खानगी में न्याय रीतिसे पूछने वालेको प्रसिद्धीमें लाकर उसीको अयोग्य ओपमा लगाके अवहेलना करने वाले आप जैसोंको हितशिक्षा देनेके लिये तो जरूर करके सरकारी कानून तैयार हैं परन्तु आप साधुपदके भेषधारी हो इसलिये सज्जन पुरुष ऐसा करना उचित नही समझते हैं तथापि आप तो उसीके योग्य हो—महाशयजी याद रक्खो—सरकारके विरुद्ध चलनेसे इसीही भवमें जलदि शिक्षा मिलती है तैसेही श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके विरुद्ध चलने वाले उत्सूत्र भाषकको भी इस भवमें लौकिकसे तिर-

रकारादि तथा परभवमें और भवो भवमें खूब गहरी वार-वार नरकादिमें शिक्षा मिलती है इस वातका विचार सज्जन पुरुष जब करते हैं तब तो आपके गुरुजन न्यायांभो-निधिजी वगैरहको और आपके गच्छवासी हठग्राही जो जो पूर्व उत्सूत्र भाषक हुए है तथा वर्त्तमानमें आप जैसे है और भी आगे होवेंगे उन्होंको क्या क्या शिक्षा मिलेगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने क्योंकि आप लोग उत्सूत्र भाषणकी अनेक बातें कर रहे हो जिसमेंसें थोड़ीसी बातें नमुना रूप इस जगह लिख दिखाता हूं ;—

१ प्रथम—अधिकमासको गिनतीमें निषेध करते हो सो उत्सूत्रभाषण है ।

२ दूसरा—अधिकमास होनेसें तेरह मासोंके पुण्यपापादि कार्य्य करके भी तेरह मासोंके पापकृत्योंकी आलोचना नही करते हो और दूसरे तेरह मासोंके पापकृत्योंकी आलोचना करते है जिन्होंकों दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

३ तीसरा—श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करनेवा-लोंको मिथ्या दूषण लगाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

४ चौथा—जैन ज्योतिषाधिकारे सर्वत्र शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें अच्छी तरहसें खुलासेके साथ प्रमाण करा है तथापि आप लोग जैन शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण नही करा है ऐसा प्रत्यक्ष महा मिथ्या बोलते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

५ पांचमा—पर्युषणाधिकारे सर्वत्र जैन शास्त्रोंमें आषाढ़

चौमासीसें दिनोंकी गिनती करके पचास दिनेही निश्चय करके पर्युषणा करनेका कहा है तथापि आप लोग दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसें ८० दिने पर्युषणाकरते हो और ८० दिनके ५० दिन भोले जीवोंको दिखाते हो सो भी माया सहित उत्सूत्र भाषण हैं ।

६ छठा–मासवृद्धिके अभावसें भाद्रपदमें पर्युषणा करनी कही है तथापि आप लोग मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा ठहराते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

७ सातमा–श्रीनिशीथ भाष्यमें १ तथा चूर्णिमें २ श्रीवृहत्कल्पभाष्यमें ३ तथा चूर्णिमें ४ और वृत्तिमें ५ श्रीसमवायाङ्गजीमें ६ तथा तद्वृत्तिमें ७ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें मासवृद्धिके अभावसें चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें पचासदिने पर्युषणा करनेसें पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन स्वभाविक रहते हैं जिसको भी आप लोग वर्त्तमानमें दो श्रावणादि होनेसें पांच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें भी पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रहनेका ठहराते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

८ आठमा–अधिक मास होनेसें प्राचीन कालमें भी पर्युषणाके पिछाड़ी १०० दिन रहते थे तथा वर्त्तमानमें भी श्रावणादि अधिक मास होनेसें पर्युषणाके पिछाड़ी १००दिन शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक रहते हैं जिसको निषेध करते हो और १०० दिन माननेवालोंको दूषण लगाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं ।

९ नवमा–अधिक मासके ३० दिनोंका शुभाशुभकृत्य तथा धर्मकर्म और सर्व व्यवहारको गिनतीमें लेकर मान्य करते हो

इस न्यायानुसार दो आश्विनमास होनेसें पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन होते हैं जिसके ७० दिन अपनी कल्पनासें कहते हो सो भी प्रत्यक्ष अन्यायकारक उत्सूत्र भाषण है।

१० दशमा–जैन शास्त्रोंमें मास वृद्धिको बारह मासोंके ऊपर शिरस्रूप अधिक मासको कहा है और लौकिकमें भी पुरुषोत्तम अधिक मास कहा हैं इसलिये धर्म्मव्यवहारमें अधिक मास बारह मासोंसें विशेष उत्तम महान् पुरुषरूप है जिसको भी आप लोग नपुंसक निःसत्व तुच्छादि कहके भोले जीवोंके धर्म्मकार्य्योंमें हानी पहुंचानेका कारण करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं।

११ इग्यारमा–अधिक मासको कालचूलाकी उत्तम ओपमा गिनती करनेयोग्य शास्त्रकारोंने दिनी हैं तथापि आप लोग कालचूला कहनेसें अधिक मास गिनतीमें नही आता है ऐसा कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

१२ बारहमा–अधिक मासमें प्रत्यक्ष वनस्पति फल-फूलादिसें प्रफुल्लित होती है तथापि आप लोग नही फूलनेका कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

१३ तेरहमा–अधिक मासके कारणसें श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने अभिवर्द्धितसंवत्सर तेरह मासोंका कहा है तथापि आप लोग अधिक मासको गिनतीमें निषेध करके श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा अभिवर्द्धित संवत्सरका प्रमाणको तथा अभिवर्द्धित संवत्सरकी संज्ञाको नष्ट कर देते हो इसलिये श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातना कारक

अनन्त संसारकी वृद्धिरूप यह भी महान् उत्सूत्र भाषण है।

१४ चौदहमा—श्रीजैनशास्त्रोंमें षट्द्रव्यरूप शाश्वती वस्तुयोंमेंसें कालद्रव्य रूपभी एक शाश्वती वस्तु है जिसका एक समयमात्र भी जो कालव्यतीत होजावें उसीका गिनती में कदापि निषेध नही हो सकता है यह अनादि स्वयं सिद्ध मर्यादा है तथापि आपलोग समय, आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्षसें, दो पक्षका औरे एकमास बनता हैं उसी को गिनतीमें निषेध करके अनादि स्वयं सिद्ध मर्य्यादाको अपनी कल्पनासें तोडमोडकरके ३० मासें—एकमासका गिनतीमें निषेध करनेके हिसावसें, ३० वर्षें—एकवर्ष, ३०युगे—एकयुग, इसी तरहसें, ३० कोडा कोडी सागरोपमें—एक कोडाकोडी सागरोपमके कालको—उडा कर गिनतीमें निषेध करनेका वृथा प्रयास करते हो सो भी यह महान् उत्सूत्र भाषण है।

और १५ पंदरहमा—जैनपञ्चाङ्ग का अबी वर्त्तमानकालमें विच्छेद है तथापि आपलोगोंकी तरफसें मिथ्यात्वकी वृद्धिकारक मनमानी अपनी कल्पनाका पञ्चाङ्गको जैन-पञ्चाङ्ग ठहराकर प्रसिद्ध करवाते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है

१६ सोलहमा—श्रीनिशीथसूत्रके भाष्यादि शास्त्रोंमें सूर्य्योदयकी पर्व तिथिको न माननेवालेको मिथ्यात्वी कहा है और लौकिक पञ्चाङ्गमें दो चतुर्दशी वगैरह तिथियां होती है उसीमें पर्वरूप प्रथम चतुर्दशी सूर्य्योदयसें लेकर अहोरात्रि ६० घड़ी तक संपूर्ण चतुर्दशीका ही वर्ताव रहता है, उसीमें अपर्व रूप त्रयोदशीके वर्तावका गन्ध भी नही है तथापि आप लोग अपने पक्षपातके जोरसें और पण्डिताभिमानका

फन्दसें जबरदस्ति सूर्य्योदयकी पर्वरूप प्रथम चतुर्दशीको पर्वरूप नही मानते हुए, अपर्वरूप त्रयोदशी बनाकरके संख्याते, असंख्याते, अनन्ते जीवोंकी हानी तथा अब्रह्मचर्य्यादि पञ्चाश्रव सेवनका और सब संसार व्यवहारके कार्य्योंसें आरम्भादि होनेका कारणमें अधोगतिके रस्ता की खर्चीरूप कार्य्योंमें आपलोग कटीबद्ध तैयार हो और अपने संयमरूप जीवितव्यके नष्ट होनेका और मिथ्यात्वी बननेका कुछ भी भय नही करतेहो इस लिये यह भी उत्सूत्र भाषण है ।

१७ सतरहमा–भी इसीही तरहसें लौकिक पञ्चाङ्गमें दो दूज, दो पञ्चमी, दो अष्टमी, दो एकादशी, वगैरह सूर्य्योदयकी पर्वतिथियां होती है जिसको बदल कर, अपर्वकी–दो एकम, दो चतुर्थी, दो सप्तमी, दो दशमी वगैरह करके मानते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है ।

१८ अठारहमा–भी इसीही तरहसे विशेष करके लौकिक पञ्चाङ्गमें संपूर्ण चतुर्दशी पर्वरूप तिथि होती है और दो पूर्णिमा तथा दो अमावस्या भी होती है जिसको तोड़मोड़ करके संपूर्ण चतुर्दशीकी, त्रयोदशी और दो पूर्णिमाकी तथा दो अमावस्याकी भी दो त्रयोदशी कोइ भी जैनशास्त्रोंके प्रमाण बिना अपनी कपोल कल्पनासें बना लेते हो सो भी उत्सूत्र भाषण हैं ।

१९ एगुनवीशमा–लौकिक पञ्चाङ्गमें जब कोई कोई वख्त दो पूर्णिमा अथवा दो अमावस्या होती है उसीमें चन्द्र अथवा सूर्य्यका ग्रहण प्रथम पूर्णिमाको अथवा प्रथम अमावस्याको होता है जिसको सब दुनिया मानती है और

शास्त्रोंमें भी पूर्णिमा अथवा अमावस्याके दिन ग्रहण होने का कहा है तथापि आप लोग सब दुनियाके तथा शास्त्रों के भी विरुद्ध होकरके प्रगट पने ग्रहणयुक्त पूर्णिमा अथवा अमावस्याको चतुर्दशी ठहराकर चतुर्दशीकाही ग्रहण मानते हो यह तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक उत्सूत्र भाषण है।

२० वीशमा—चतुर्दशी का क्षय होनेसें पाक्षिककृत्य पूर्णिमा अथवा अमावस्याको करनेका जैनशास्त्रोंमें कहा है तथापि आप लोग नही करते हो और दूसरे करने वालोंको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२१ एकवीशमा—आप लोग एकान्त आग्रहसें सूर्य्योदयके विनाकी तिथिको पर्वतिथिमें नही मानना, ऐसा कहते हो परन्तु जब चतुर्दशीका क्षय होता है तब सूर्य्योदयकी त्रयो-दशीको चतुर्दशी कहते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२२ बावीशमा—श्रीजैनज्योतिषकी गिनती मुजब, चन्द्र के गतिकी अपेक्षासें श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति तथा श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति वृत्ति वगैरह अनेक जैनशास्त्रोंमें पर्वकी तिथियांके क्षय होनेका लिखा है और लौकिक पञ्चाङ्गमें भी कालानुसार पर्वकी तिथियांका क्षय होता है और जैन पञ्चाङ्गके अभावसें लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब वर्त्तनेकी पूर्वाचार्य्योंकी खास आज्ञा है, तैसेंही आप लोग—दीक्षा, प्रतिष्ठा वगैरह धर्म्म व्यवहारके कार्य्योंमें घड़ी, पल, तिथि, वार, नक्षत्र, योग राशिचन्द्र, शुभाशुभ मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मास वगैरह सब व्यवहार लौकिक पञ्चाङ्गानुसार करते हो तथापि आप लोग, लौकिक पञ्चाङ्गमें जो पर्वतिथियांका क्षय होता है उसीको नही मानते हो और माननेवालोंको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२३ तेवीशमा—लौकिक पञ्चाङ्गमें दो चतुर्दशी होती है उन्हीके मुजब आप लोगोंके पूर्वजोंने भी दो चतुर्दशी लिखी है जिसको आप लोग नही मानते हो और लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब युक्तिपूर्वक कालानुसार और पूर्वाचार्य्योंकी परम्परासें दो चतुर्दशी वगैरह पर्व तिथियोंको माननेवालोंको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

२४ चौवीशमा—आपके पूर्वज कृत ग्रन्थमें तिथिका शुद्धाशुद्ध सम्बन्धी जो प्रमाण बताया है उसी मुजब आप लोग नही मानते हो और स्वच्छन्दाचारीसें (अपनी मति की कल्पना करके) संपूर्ण प्रथम पर्वतिथिको अपर्व ठहरा करके दूसरी—दो अथवा तीन पल (एक मिनिट) मात्र की अल्पतर तिथिमें जाते हो और दूसरे—कालानुसार युक्ति पूर्वक तथा विशेष धर्म्मवृद्धिके लाभका कारण जानके प्रथम संपूर्ण ६० घड़ी की पर्वतिथिको मानते हैं तैसेही दूसरी पर्वतिथिको भी यथायोग्य मानते हैं जिन्होंको दूषण लगाके निषेध करते हो सो भी उत्सूत्र भाषण है।

इस तरहकी अनेक बातें आपलोगोमें उत्सूत्र भाषणकी हो रही है जिसका तथा आपके गुरुजी श्रीन्यायाम्भो निधिजीनें भी जैनसिद्धान्त समाचारी पुस्तकका नाम रखके अनुमान ५० जगह उत्सूत्र भाषण करा है जिसका भी नमुनारूप थोड़ीसी बातें आगे लिखनेमें आवेंगे और ऊपरकी सब बातोंका निर्णय शास्त्रोंके प्रमाणसें और युक्तिपूर्वक मेरे लिखीत इन्ही ग्रन्थको आदिसें अन्त तक स्थिरचित्तसें सत्यग्राही होकर निष्पक्षपातसें मध्यस्थ दृष्टि रखकर विशुद्धभावसें पढनेवाले आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको अच्छी तरहसें मालूम हो सकेगा ;—

और उत्सूत्र भाषणके फलविपाक सम्बन्धी उपरमें ही पृष्ट २४९ से २५३ तक लिखनेमें आया है उसीका भय लगता हो, तथा श्रीजिनेश्वर भगवान् के वचन पर आपलोगोंकी कुछ भी श्रद्धा हो, और अपनेही श्रीतपगच्छके नायक श्रीदेवेन्द्र सूरिजी तथा श्रीरत्नशेखर सूरिजीके उत्सूत्र भाषक सम्बन्धी उपरोक्त वाक्योंको आपलोग सत्यमानतेहो, और श्रीदेवेन्द्र सूरीजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्ति आपलोगोंके समुदाय में विशेष करके व्याख्यानाधिकारे तथा पठन पाठनमें भी वारंवार आती है उन्हीके वाक्यार्थकी आपके हृदयमें धारणा हो, तो ऊपरका लेखको परमहितशिक्षारूप समझके उत्सूत्र भाषण करते हो जिसको छोड़ो, तथा उत्सूत्र भाषण करा होवे उसीका मिथ्या दुष्कृत देवो, और गच्छके पक्षपात को तथा पण्डिताभिमानको छोड़के श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञा मुजब शास्त्रोंके महत् प्रमाणानुसार आषाढ़ चौमासी से ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेका और अधिक मासको गिनतीमें प्रमाणादि अनेक सत्य बातोंकों ग्रहण करो, और भक्तजनोंकों करावो जिससें आपकी और आपके भक्तजनोंकी आत्मसिद्धिका रस्तापावो—श्रीजिनाज्ञारूपी सम्यक्त्वरत्नके सिवाय मोक्ष साधनमें गच्छका पक्षपात तथा पण्डिताभिमान कुछ भी काम नही आता है इसलिये गच्छ पक्षको छोड़के श्रीजिनाज्ञा मुजब सत्यबातको ग्रहण करना सोही आत्मार्थी विवेकी विद्वान् सज्जन पुरुषोंको परम उचित है ।

और आगे फिर भी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (थोड़े समयकी बात हैं बुद्धिसागर नामा खरतरगच्छीय

मुनिके नामका पत्र हमारे पास आया जिसमें पर्युषणाकी बाबत कुछ लिखा था हमने मुनासिब नही समझा कि वृथा समय खोकर परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम किया जावे) इस लेखपर मेरेको बड़ाही आश्चर्य उत्पन्न होता है कि श्रीवल्लभविजयजीनें अपनी मायावृत्तिकी चातुराईको खूब प्रगट करी है क्योंकि प्रथम आपनेंही दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको आज्ञाभङ्गका दूषण लगाया था उसी सम्बन्धी आपको श्रीबुद्धिसागरजीनें शास्त्रका प्रमाण खानगीमें ही पत्र भेजके पूछा था जिसका जवाब पीछा खानगीमें ही लिख भेजनेमें तो उठे महाशयजी आपको बहुत समय वृथा खोनेका और परस्पर ईर्षाकी वृद्धि होनेका बड़ा ही भय लगा परन्तु लम्बा चौड़ा लेख जैनपत्रमें भङ्गी चमारादि शब्दोंसें तथा निष्प्रयोजनकी अन्यान्य बातोंको और श्रीबुद्धिसागरजीको सूर्पनखाकी वृथा अनुचित ओपमा लगाके उन्हकी खानगीकी पूछी हुई बातको (पीछा ही खानगीमें जवाब न देते हुए) प्रसिद्धमें लाकर अन्यायके रस्तेसें उन्हकी अवहेलना करनेमें और श्रीखरतरगच्छवालोंके परमपूज्य प्रभावकाचार्य्यजी श्रीजिनपतिसूरिजी महाराजका श्रीजिनाज्ञा मुजब अनेक शास्त्रोंके प्रमाणयुक्त सत्यवाक्यको पक्षपातके जोरसें अप्रमाण ठहरा कर श्रीखरतरगच्छवालोंके दिलमें पूरे पूरा रंज उत्पन्न करके—और दूसरे गुजराती भाषाके लेखमें भी—सर्व संघको, कान्फरन्सको, शेठियोंको, वकीलों, बेरिस्टरको, नाणाकोथली (रुपैयोंकी थैली) वगैरहको सावधान सावधान करके श्रीसंघके आपसमें और

कोर्ट कचेरीमें बड़ेही भारी झगड़ेके कारण करनेका लेख लिखनेमें तथा प्रसिद्ध करानेमें तो छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी आपको खूब लम्बा चौड़ा समय भी मिल गया, और परस्पर आपसमें ईर्षाकी वृद्धि होनेका किञ्चित् भी भय न लगा परन्तु श्रीबुद्धिसागरजीके पत्रका जबाव खानगीमें लिखनेसें छठे महाशयजीको वृथा समय खोनेका तथा परस्पर ईर्षाकी वृद्धि करनेवाला काम करने का भय लगा, यह कैसी अलौकिक विद्वत्ताकी चातुराई (सज्जन पुरुषोंको आश्चर्य्य उत्पन्नकारक) छठे महाशयजी आपनें गच्छ पक्षी दृष्टिरागी बालजीवोंको दिखाकर अपनी बातको जमाई सो आत्मार्थी विवेकी विद्वान् पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ।

और आगे फिर भी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (कितनेही समयसें गच्छ सम्बन्धी टंटा प्राय दबा हुआ है तपगच्छ खरतरगच्छ दोनोंही पक्ष प्रायः परस्पर संपसें मिले जुलेसें मालूम होते हैं) इस लेख पर भी मेरेको यही कहना उचित है कि गच्छ सम्बन्धी टंटा दबाकरके शान्त करनेका और संपसें वर्त्तनेका श्रीखरतगच्छवालोंकी महान् सरलताका कारण है क्योंकि श्रीतपगच्छके तो आप जैसे अनेक महाशय संपके मूलमें अग्नी लगाके श्री खरतरगच्छवालोंकी सत्य बातका निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषण करके अपनी मति कल्पनाकी मिथ्या बातका स्थापन करनेके लिये विशेष करके हर वर्षे गांम गांममें पर्युषणाके व्याख्यानाधिकारे श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा-नुसार अनेक शास्त्रोंके महत् प्रमाण मुजब अधिक मासकी

गिमती अनादि स्वयं सिद्ध है जिसका खण्डन करके और श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महान् धुरन्धराचार्य्योंनें और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छके भी पूर्वाचार्य्योंमें श्रीवीर-प्रभुके, छ कल्याणक अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक कहे हैं तथापि आप लोग श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी और अपने पूर्वजोंकी आशातनाका भय न करते उन्ही महाराजोंके विरुद्ध हो करके, छ कल्याणकका निषेध करते हो और श्रीखरतरगच्छवालोंके ऊपर मिथ्या कटाक्ष करते हुए अनेक बातोंका टंटा खड़ा करनेका कारण करनेवाले आप जैसे अनेक कटीबद्ध तैयार हैं और अपने संसार वृद्धिका भय नही रखते हैं इस बातको इसीही ग्रन्थको संपूर्ण पढ़नेवाले विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे और इसका विशेष विस्तार इसीही ग्रन्थके अन्तमें भी करनेमें आवेगा वहां श्रीखरतरगच्छवालोंकी कैसी सरलता है और श्रीतपगच्छवाले आप जैसोंकी कैसी वक्रता है जिसका भी अच्छी तरहसें निर्णय हो जावेंगा ।

और आगे फिरभी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (उनमें–अर्थात्, तपगच्छके खरतरगच्छके आपसमें—फरक पड़नेसें कुछक दबे हुए जैनशासनके वैरियोंका जोर हो जानेका सम्भव है) इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना पड़ता है कि–छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी आप श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छके आपसमें विरोध बढ़ाकर संपको नष्ट करना नही चाहते हो और दोनुं गच्छकी संपसें मिले जुलेसें रहनेकी जो आप अन्तर भावसें इच्छा रखते हो तबतो श्रीजिनाज्ञा मुजब अनेक महान् शास्त्रोंके प्रमाण

युक्त श्रीखरतरगच्छवालोंकी सत्य बातोंको प्रमाण करके अपनी कल्पित बातोंको छोड़ दो और श्रीखरतरगच्छवालों पर मिथ्या आक्षेप जो आपने उत्सूत्र भाषण करके करा है तथा श्रीबुद्धिसागरजी पर जो जो अन्यायसें अनुचित लेख लिखके जैनपत्रमें प्रसिद्ध कराया है जिसकी क्षमा मांगकर उत्सूत्र भाषणका मिथ्या दुष्कृत दो और अपनी भूलको पिछीही जैन पत्रमें प्रगट करके सुखशान्तिसें संप करके वर्त्तों तब दोनुं गच्छके संप रखने सम्बन्धी आपका लिखना सत्य हो सकेगा परन्तु जब तक छठे महाशयजी आपके बिना विचारके करे हुए अनुचित कार्य्योंकी आप क्षमा नही मांगोंगे और सत्य बातोंका ग्रहण भी नही करते हुए अपनी कल्पित बातोंके स्थापन करनेके लिये जो वार्त्ताका प्रकरण चलता होवे उसीको छोड़के अन्यायके रस्तेसें अन्यान्य अनुचित बातोंको लिखके विशेष झगड़ा वढ़ाते रहोंगे तब तो दोनुं गच्छके संप रखने सम्बन्धी आपका लिखना प्रत्यक्ष मायावृत्तिका मिथ्या है और भोले जीवोंको दिखाने मात्रही है अथवा लिखने मात्रही है सो विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे और दोनुं गच्छके आपसमें वादविवादके कारणसें दबे हुए जैनशासनके वेरियोंका जोर होनेसें मिथ्यात्व वढ़नेका छठे महाशयजी जो आपको भय लगता होवे तो आपनेही प्रथम जैनपत्रमें शास्त्रानुसार चलनेवालोंको मिथ्या दूषण लगाके उत्सूत्र भाषणसें झगड़ा खड़ा करा और पुनःपुनः (दीर्घकाल चलने रूप) जैन पत्रमें फैलाया है जिसको पिछीही अपने हाथसें मिथ्या दुष्कृतसें क्षमाके साथ अपनी भूलको जैन-

पत्रमेंही सुधार लो जिससे दोनुं गच्छवालोंके आपसमें संप बना रहेगा और दोनुं गच्छके आपसमें संपको नाश करनेवाले आप लोगोंकी तरफसे पर्युषणाके व्याख्यानमें तथा छापे द्वारा जो जो कार्य्य करनेमें आते हैं उसको भी बंध कर दीजिये जिससे दोनुं गच्छवालोंके आपसमें जो संप है उसीसें भी खूब गहरा विशेष संप हो जावेगा; तब जैन शासनके वैरियोंका कुछ भी जोर नही हो सकेगा, इतने पर भी आप जैसे शास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वक सत्य बात को ग्रहण नही करते हुए, अन्यायसें वाद विवाद करके झगड़ेको बढ़ाते रहोगे जिस पर जो जो जैनशासनके निन्दक शत्रुयोंका जोर बढ़नेका कारण होगा सो जिसके दोषाधिकारी खास आप लोगही होवोंगे सो विवेकबुद्धिसें हृदयमें विचार लेना, और आगे श्रीमोहनलालजीके सम्बन्ध में लिखकर तपगच्छकी समाचारीके बाबत जो आपने लिखा है इसका जबाब-अभी मयमें महाशय श्रीमाणक-मुनिजी प्रगट हुवे हैं जिसने अपनी अकलका नमुना जैन पत्रमें प्रगट करा है उसीका जबाब आगे लिखनेमें आवेगा वहां श्रीमोहनलालजी सम्बन्धी भी लिखनेमें आवेगा;—

और छठे महाशयजीनें फिर भी अपनी विद्वत्ता की चातुराईका दर्शाव दिखाया है कि-(सूर्पनखा समान जीव उभय पक्षको दुःखदायी होते है तद्वत् बुद्धिसागर खरतरगच्छीय मुनि नाम धारकने भी अपनी मनःकामना पूर्ण न होनेसें रावणके समान ढूंढियोंका सरणा लेकर युद्धारम्भ करना चाहा है) इस लेख पर मेरेको इतनाही कहना है कि-जैसे किसी पण्डितको किसी आदमीनें कोई

बातका खुलासा पूछा तब उस पण्डितको उसी बातका खुलासा करनेकी बुद्धि नही होनेसें अपने विद्वत्ताकी इज्जत रखनेके लिये उस बातका सम्बन्धको छोड़के निष्प्रयोजन की वृथा अन्यान्य बातोंको लाकर अनुचित शब्दोंसे यावत् क्रोधका सरणा ले करके अपनी विद्वत्ताकी बातको जमाता है परन्तु विवेकी विद्वान् पुरुष उस पण्डितका मिथ्या पण्डिताभिमानको और अन्यायके पाखण्डको अच्छी तरह सें समझ लेते हैं—तैसेही छठे महाशयजी आपनें भी करा अर्थात् आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालोंको आज्ञाभङ्गका दूषण लगाने सम्बन्धी श्रीबुद्धि-सागरजीनें आपको शास्त्रका प्रमाण पूछा उसीको शास्त्रका प्रमाण बतानेकी आपकी बुद्धि नही होनेसें और शास्त्रका प्रमाण भी आपको नही मिलनेसें ऊपर कहे सो नामधारी पण्डितवत् आपने भी अपनी विद्वत्ताकी इज्जत रखनेके लिये शास्त्रका प्रमाण बतानेके सम्बन्धको छोड़ करके निष्प्रयो-जनकी वृथा अन्यान्य बातोंकों लिखकर अनुचित शब्दसें यावत् क्रोधका सरणा लेकर अपनी विद्वत्ताको जमानी चाही परन्तु निष्पक्षपाती विद्वान् पुरुषोंके आगे आपका मिथ्या पण्डिताभिमानका और अन्यायके पाखण्डका दर्शाव अच्छी तरहसें खुल गया हैं कि—छठे महाशयजीके पास शास्त्रका प्रमाण न होनेसें श्रीबुद्धिसागरजीको सूर्प-नखाकी ओपमा वगैरह प्रत्यक्ष मिथ्या वाक्य लिखके अपने नामकी हासी कराई है क्योंकि श्रीबुद्धिसागरजीनें सूर्प-नखाकी तरह दोनुं पक्षको दुःखदाई होनेका कोई भी कार्य्य नही करा है तथा न ढूंढियांका सरणा लिया है

और न युद्धारम्भ करना चाहा है—तथापि श्रीवल्लभ-विजयजीनें मिथ्या लिखा यह बड़ाही अफसोस है परन्तु 'सतीको' भी–वेश्या अपने जैसी समझती है तद्वत् तैसेही छठे महाशयजीनें भी निर्दोषी श्रीबुद्धिसागरजीको दोषित ठहरानेके लिये अपने कृत्य मुजब सूर्पनखाके समानका तथा ढूंढियोंका सरणा लेनेका और युद्धारम्भ करनेका मिथ्या आक्षेप करा मालूम होता है क्योंकि उपरके कृत्य छठे महाशयजीमेंही प्रत्यक्ष है सोही दिखाता हूं ;—

जैसे–सूर्पनखा दोनुं पक्षवालोंको दु:खदाई हुई तैसेही छठे महाशयजी (श्रीवल्लभविजयजी) भी दोनुं गच्छवालोंके आपसका संपको नष्ट करनेके लिये वाद विवादसें झगड़ेका मूल लगाके दोनुं गच्छवालोंको तथा अपने गुरुजनोंके नामको और अपने सम्प्रदायवालोंको भी दु:खदाई हुवे है इस लिये मेरेको भी इस ग्रन्थकी रचना करके आठों महाशयोंके उत्सूत्र भाषणके कुतर्कोंकी (शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक) समीक्षा करके मोक्षाभिलाषी सज्जनोंको सत्यासत्यका निर्णय दिखानेके लिये इतना परिश्रम करना पड़ा है सो इस ग्रन्थको पढ़नेवाले विवेकी मध्यस्थ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और छठे महाशयजी आप लोग अनेक बातोंमें ढूंढियोंका सरणा ले कर उन्होंकाही अनुकरण करते हो जिसमेंसें थोड़ीसी बातें इस जगह दिखाता हूं ;—

१ प्रथम–श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की प्रतिमाजीको मानने पूजनेका निषेध करनेके लिये ढूंढिये लोग अनेक प्रकारकी श्रीजिनमूर्तिकी निन्दा करते हुए अनेक कुतर्कों करके भोले

जीवोंके सत्यबातकी श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नको, हरण करके मिथ्यात्व वढ़ाते है तैसेही श्रीअनन्त जिनेश्वर भगवानोंका कहा हुवा तथा प्रमाण भी करा हुवा अधिकमासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये, आप लोग भी अधिकमासकी अनेक प्रकारसें निन्दा करते हुए अनेक कुतर्कों करके भोले जीवोंके सत्य बातकी श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नको हरण करके मिथ्यात्व वढ़ाते हो इसलिये श्रीजैनशासनके निन्दक मिथ्यात्वी ढूंढियांका सरणा आपही लेते हो।

२ दूसरा--श्रीजैनशास्त्रोंमें नाम, स्थापना, द्रव्य, और भाव, यह चारोंही निक्षेपे मान्य करने योग्य, उपयोगी कहे हैं तथापि ढूंढिये लोग उत्सूत्र भाषणका भय न करते अनन्त संसारकी वृद्धि कारक, स्थापनादि निक्षेपोंको निषेध करके बिना उपयोगके ठहराते हैं तैसेही श्रीजैनशास्त्रोंमें द्रव्य, क्षेत्र, काल, और भावसें, चारोंही प्रकारकी चूलाका प्रमाण गिनती करनें योग्य, उपयोगी कहा है और गिनतीमें भी लिया है तथापि आप लोग उत्सूत्र भाषणका भय न करते कालचूलादिका प्रमाणको गिनतीमें निषेध करके प्रमाण नही करते हो सो भी ढूंढियांका सरणा आपही लेते हो।

३ तीसरा–ढूंढिये लोग 'मूलसूत्र मानते हैं मूलसूत्र मानते हैं' ऐसा पुकारते हैं परन्तु अपनी मति कल्पनासें अनेक जगह शास्त्रोंके पाठोंका उलटा अर्थ करते हैं और अनेक शास्त्रोंके पाठोंको तथा अर्थको भी छुपाते हैं और शास्त्रोंके प्रमाण बिना भी अनेक कल्पित बातोंको करके मिथ्यात्वमें फसते हैं और भोले जीवोंको फसाते हैं तैसेही आपलोग भी 'पञ्चाङ्गी मानते हैं पञ्चाङ्गी मानते हैं' ऐसा

जानकर छोड़ दिया और शास्त्रानुसार सत्य बातोंको
करनेकी इच्छासें श्रीवल्लभविजयजीके पास जैन दीक्षा
को आये तब श्रीवल्लभविजयजीनें तथा उन्होंके दृष्टि
श्रावकोंने विचार किया कि--घासीराम और जुगलर
ढूंढक मतके साधु भेषमें अनुचित कार्यों (अशु
क्रियायों) सें अपने शरीरको अपवित्र किया है इस
इन दोनुंका शरीर प्रथम पवित्र कराके पीछे दीक्षा
चाहिये ऐसा विचार करके दोनुंको पवित्र करनेके
जैन तीर्थोंमें न भेजते हुए अन्य मतियोंके मिथ्यात्वी
में काशी गङ्गाजी भेजकरके पवित्र कराये (इसका वि
लिखनेमें आवेगा) इसलिये भी ढूंढियांका स
लेते हो ।

आदि अनेक बातोंमें छठे महाशयजी आप लोग
सरणा लेकर उन्होंकाही अनुकरण करते
आपने श्रीबुद्धिसागरजीको ढूंढियांका सरण लेने
है सो प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि श्रीबुद्धिसागरजी
सरणा लेनेका कोई भी कार्य नही करा
इतने पर भी आपके दिलमें यह होगा कि श्रीबुद्धिसाग
जीनें ढूंढियाकी मारफत पत्र हमको पहुंचाया इसलि
ढूंढियांका सरणा लेनेका हमने लिखा है तो भी मह
शयजी यह आपका लिखना सर्वथा अनुचित है क्यों
दुनियामें यह तो प्रसिद्ध व्यवहार है कि—कोई गांम
किसी आदमीको एक पत्र भेजा जिसका जबाब नहीं
आया तो थोड़े दिनोंके बाद दूसरा भी पत्र भेजनेमें
आता है, दूसरे पत्रका भी जबाब नहीं आनेसें तीसर

वेर उसी गांमका प्रतिष्ठित आदमी मारफत अथवा अपना जानकार संवेगी तथा ढूंढिया तो क्या परन्तु ब्राह्मण, सेवग, वगैरह हरेक जातिका हरेक धर्मवाला पुरुषकी मारफत उसीका निर्णय करनेमें आता है तैसेही श्रीबुद्धिसागरजीनें भी किया अर्थात् दो पत्र आपको शास्त्रका प्रमाण पूछनेके लिये भेजे तथापि आपका कुछ भी जवाब नहीं आया तब तीसरी वेर प्रसिद्ध आदमी अपना जानकारके मारफत, आपको भेजे हुए पूर्वोक्त पत्रोंका जवाब पूछाया उसमें सरणा लेनेका कदापि नहीं हो सकता है परन्तु आप लोग अनेक वातोंमें ढूंढियांका सरणा लेते हो सो ऊपरमेंही लिख आया हूं सो विचार लेना;—

और दोनुं गच्छवालोंके आपसमें वादविवाद तथा कोर्ट कचेरीमें झगडा टंटा रूप वृथा युद्ध करनेको तथा करानेको आपही तैयार हो सो तो आपके लेखसें प्रत्यक्ष दीखता है।

महाशयजी अब--किसकी मनः कामना पूर्ण न होनेसें किसीने ढूंढियांका सरणा लेकर युद्धारम्भ करना चाहा है और सूर्पनखाकी तरह दोनुं पक्षको दुःखदाई भी कौन हुवा है सो ऊपरका लेखको तथा आगेका लेखको और इन्ही ग्रन्थको पढ़कर हृदयमें विवेक बुद्धि लाकर विचार कर लीजिये,---

और भी आगे छठे महाशयजी अपने और अपने गुरुजी न्यायाम्भोनिधिजीके उत्सूत्र भाषणके कृत्योंको तथा उन कृत्योंके फल विपाकोंको न देखते हुए श्रीबुद्धिसागरजी ने शास्त्रोंके पाठोंका प्रमाण सहित पत्र लिखकर पालणपुर

निवासी महता पीताम्बरदास द्वारोभाईको भेजा था उस पत्रके शास्त्रोंके पाठोंको छोड़करके और छिद्रग्राही हो करके उस पत्रपर द्वेषबुद्धिसें छठे महाशयजीने वृथाही आक्षेप किया है और उनके साथ कितनीही निष्प्रयोजनकी बातें लिखी है उसीका जबाब आगे (छठे महाशयजीके दूसरे गुजराती भाषाके लेखका जबाब छपेगा) वहां लिखनेमें आवेंगा ;—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (बनारससें प्रसिद्ध हुया मुनि धर्म्मविजयजीके शिष्य मुनि [illegible] पर्युषणा विचार नामका लेख देख लेना) [illegible] भी मेरेको प्रथम इतनाही कहना है कि तीसरे [illegible] श्रीविनयविजयजीनें श्रीसुखबोधिका वृत्तिमें पर्युषणा सम्बन्धी प्रथम अपने लिखे वाक्यार्थको छोड़ करके गच्छ कदाग्रहके हटवादसें उत्सूत्र भाषणका भय न करते अनेक कुतर्कों करी है (जिसका निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ६८ सें १५० तक उपरमेंही छप चुका है) उन्ही कुतर्कोंको देखके सातमें महाशयजी श्रीधर्म्मविजयजी तथा उन्हके शिष्य विद्याविजयजी भी कदाग्रहकी परम्परामें पड़के उत्सूत्र भाषणकेही कुतर्कोंका संग्रह करके, शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्रायके विरुद्ध होकरके अधूरे अधूरे पाठ लिखकर भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेंके लिये अपना लेख प्रगट करा है (इसका जबाब आगे छपेगा) उसीकोही गुजराती भाषामें जैन पत्रवालेनेभी अपना संसार बढ़ानेके लिये अपने जैन पत्रमें प्रगट करा है और उसी उत्सूत्र भाषणकी कुतर्कोंको छठे महाशयजी आप भी देखनेका लिखकर उन्हीको पुष्ट

करके उसी तरहके उत्सूत्र भाषणके फलप्राप्त करनेके लिये आप भी उसीमें फसे, हाय अफसोस–गच्छ कदाग्रहके वस होकरके अपना पक्ष जमानेके लिये सत्य असत्यका निर्णय किये बिना अपनी मतिकल्पनासें इतने विद्वान् कहलाते भी स्वच्छन्दाचारीसें लिखते कुछ भी विचार नही किया यह तो इस कलियुगकाही प्रभाव है,—

और दूसरा यह है कि न्याय अन्यायको न देखने वाले तथा दृष्टिरागके झूठे पक्षग्राही और कदाग्रहके कार्य्यमें आगेवान ऐसे श्रीकलकत्तानिवासी श्रीतपगच्छके लक्ष्मीचंदजी सीपाणीको पालणपुरसें श्रीवल्लभविजयजीकी तरफका पत्र आया था उसी पत्रमें ६–७ जगह मिथ्या बातें लिखी है उसी पत्रके अक्षर अक्षरका उतारा, मेरे (इस ग्रन्थकारके) पास है उसी उतारेकी नकलको यहाँ लिखकर उसीकी समीक्षा करनेका मेरा पूरा इरादा था परन्तु विस्तारके कारणसें सब न लिखते नमुनारूप एक बात लिख दिखाता हूं—

छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजी लक्ष्मीचन्दजी सीपाणीको लिखते हैं कि [बनारससें पर्युषणा विचार नामा ट्रेकट निकला है उसीकाही भाषान्तर छापेवालेने छापा है इसमें हमारा कोई मतलब नही है ना हम इस बातको मन वचन काया करके अच्छी समझते हैं] इस जगह सज्जन पुरुषोंको विचार करना चाहिये कि सीपाणीजीके पत्रमें पर्युषणा विचारको तथा उसीका भाषान्तर छापेवालेनें छापेमें प्रसिद्ध करा है उसीको छठे महाशयजी मन, वचन, कायासें अच्छा नही समझते हैं

सो फिर उसी बातको पाने पर्युषणा विचारको देख लेनेका लिख करके उसीको छापामें पुष्ट किया, यह तो प्रत्यक्ष मायावृत्तिका कारण है इसलिये जो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य छठे महाशयजी सत्य मानेंगे तो छापेमें पर्युषणा विचारको पुष्ट करनेका जो वाक्य लिखा है सो वृथा हो जावेंगा और छापेका वाक्य सत्य मानेंगे तो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य मिथ्या हो जावेंगा और पूर्वा-पर विरोधी विसंवादी दोनुं तरहके वाक्य कदापि सत्य नहीं हो सकते हैं इसलिये दोनुंमेंसें एक सत्य और दूसरा मिथ्या माननाही प्रसिद्ध न्यायकी बात है, जिससें सीपाणीजीके पत्रका वाक्यको सत्य मानोंगे तो छापेका लेख विसं-वादीरूप मिथ्या होनेकी आलोचना छठे महाशयजी आप को लेनी पड़ेगी और छापेका वाक्यको सत्य मानोंगे तो सीपाणीजीके पत्रका वाक्य विसंवादीरूप मिथ्या होनेकी आलोचना लेनी पड़ेगी और पर्युषणा विचारमें उत्सूत्र वाक्य लिखे हैं उसीके अनुमोदनके फलाधिकारी होना पड़ेगा सो विवेक बुद्धि हो तो अच्छी तरह विचार लेना ;—

और छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके खबरदारका इस लेखमें तथा सावधान सावधानका दूसरा गुजराती भाषाका लेखमें और सीपाणिजीके पत्रका लेखमें इन तीनों लेखोंका वाक्यमें कितनीही जगह मायावृत्ति (कपट) का संग्रह है इससें श्रीवल्लभविजयजीको कपट विशेष प्रिय मालूम होता है और चर्चाचन्द्रोदय की पुस्तकमें भी श्री-वल्लभविजयजीको 'दम्भप्रिय' लिखा है सोही नाम उपरके कृत्योंसें सत्य कर दिखाया है,—

और इसके आगे दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजीने अपने लेखके अन्तमें जो लिखा है उसीको यहां लिखके (पीछे उसीकी समीक्षा कर) दिखाता हूं ;—

[बुद्धिसागर मुनिजी ! याद रखना वो प्रमाण माना जावेगा, जो कि—तुम्हारे गच्छके आचार्योंसें पहिलेका होगा मगर तुम्हारेही गच्छके आचार्यका लेख प्रमाण न किया जावगा ! जैसा कि तुमने श्रीजिनपति सूरिजीकी समाचारीका पाठ लिखा है कि, दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें पर्युषणापर्व—सांवत्सरिक कृत्य—करना ! क्योंकि, यही तो विवादास्पद है कि, श्रीजिनपतिसूरिजीने समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकम जारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजिब किया है हां यदि ऐसा खुलासा पाठ पञ्चाङ्गीमें आप कही भी दिखा देवें कि, दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें--सांवत्सरिक प्रतिक्रमण, केशलुञ्चन, अष्टमतपः, चैत्यपरिपाटी, और सर्वसंघके साथ खामणाख्य पर्युषणा वार्षिक पर्व करना, तो हम माननेको तैयार है !]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि—हे सज्जन पुरुषों छठे महाशयजी दम्भप्रियेजीके अन्तरमें कपट भरा हुवा होनेसें ऊपरका लेख भी कपटयुक्त लिखा है क्योंकि (बुद्धिसागर मुनिजी याद रखना वो प्रमाण माना जावेगा जो कि तुम्हारे गच्छके आचार्य्योंसें पहिले का होगा) यह अक्षर छठे महाशयजीके मायावृत्तिसें दृष्टिरागी भोले जीवोंको दिखाने मात्रही है नतु प्रमाण

करनेके लिये यदि ऊपरके अक्षर प्रमाण करनेके लिये होवे तो–अधिक मासकी गिनती, तथा पचास(५०) दिने पर्युषणा और श्रीवीरप्रभुके छ (६) कल्याणक, सामयिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही वगैरह अनेक बातें श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंनें और पूर्वधरादि श्रीजैन शासनके प्रभाविक पूर्वाचार्य्योंनें पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें प्रगटपने खुलासेके साथ कही है जिस पर छठे महाशयजी की श्रद्धा नही जिससे प्रमाण नही करते हुए उलटा निषेध करके उत्सूत्र भाषणसें संसार वृद्धिका भय नही रखते हैं।

बड़ीही आश्चर्य्यकी बात है कि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी तथा पूर्वाचार्य्योंकी कथन करी हुई अनेक बातें प्रमाण न करते हुए उत्सूत्र भाषणरूप अपनी मति-कल्प नासें चाहे वैसा वर्त्ताव करना और पूर्वाचार्य्योंका प्रमाण मंजूर करनेका दिखाकर आप भले बनना यह तो प्रत्यक्ष मायावृत्तिसें छठे महाशयजीने अपने दम्भप्रिये नामको सार्थक करके विशेष पुष्ट करनेके सिवाय और क्या लाभ उठाया होगा सो इन्ही ग्रन्थको पढ़नेवाले सज्जन पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ;–

और आगे फिर भी दम्भप्रियेजीनें लिखा है कि (तुम्हारेही गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण न किया जावेंगा) यह लिखना छठे महाशयजी दम्भप्रियेजीको श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातना कारक पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंका उत्थापनरूप मिथ्यात्वको बढ़ाने वाला संसार वृद्धिका कारणभूत हैं क्योंकि–

१ प्रथमतो–श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी परम्

परानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाणयुक्त श्रीखरतरगच्छके बुद्धि निधान प्रभाविकाचार्य्योंनें अनेक शास्त्रोंकी रचना भव्य जीवोंके उपगारके लिये करी है जिसको न माननेवाले दम्भप्रियेजी जैसे प्रत्यक्ष श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके उत्थापक श्रद्धारहित जैनाभास मिथ्यात्वी बनते हैं इस बातको विशेष सज्जन पुरुष अपनी बुद्धिसें स्वयं विचार लेवेंगे,—

२ दूसरा यह है कि--श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध करनेवाले श्रीजिनेश्वर सूरिजी महाराजकृत श्रीअष्टकजी सूत्रकी वृत्ति तथा श्रीपञ्चलिङ्गी प्रकरण मूल और तद्वृत्ति श्रीखरतरगच्छ के श्रीजिनपति सूरीजी कृत और श्रीखरतरगच्छ नायक सुप्रसिद्ध बुद्धिनिधान महान् प्रभाविक श्रीमदभयदेवसूरिजी महाराजनें श्रीनवाङ्गी वृत्ति उपरान्त श्रीउवाइजी श्रीपञ्चाशक जी श्रीषोड़षकजी वगैरहकी अनेक वृत्ति और प्रकरणस्तोत्रादि बहुतही शास्त्रोंकी रचना करी है तथा और भी श्रीखरतरगच्छके अनेक आचार्य्योंनें सैकड़ो शास्त्रोंकी रचना करी है जिन्हकोमानते हैं व्याख्यानमें वांचते हैं तथापि दम्भप्रियेजी (तुम्हारे गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण न किया जावेंगा) ऐसा लिखते हैं सो कितनी मायावृत्तिसें अन्याय कारक है इसको भी निष्पक्षपाती सज्जन स्वयं विचार सकते हैं ;—

और श्रीजिनेश्वर सूरिजीसें निश्चय करके श्रीखरतरगच्छ प्रसिद्ध हुवा है इसलिये श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्रीमदभयदेव सूरिजी भी श्रीखरतरगच्छमें हुवे हैं तथापि श्रीजिनवल्लभ सूरजीसें अथवा श्रीजिनदत्त सूरिजीसें १२०४ में खरतर हुवा

ऐसा कहते हैं सो मिथ्यावादी है इसका विशेष विस्तार शास्त्रोंके प्रमाण सहित इस ग्रन्थके अन्तमें करनेमें आवेंगा,—

३ तीसरा यह है कि–न्याय दम्भप्रियेजीके गुरुजी श्री-न्यायाम्भोनिधिजीने चतुर्थ स्तुतिनिर्णयः पुस्तकमें श्रीखर-तरगच्छके श्रीअभयदेव सूरिजी श्रीजिनवल्लभ सूरिजी श्री जिनपतिसूरिजी वगैरह आचार्य्योंकी समाचारियोंके पाठ लिखे हैं और श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यका वचनको नही माननेवालोंको पृष्ठ ८८ के मध्यमें मिथ्यात्वी ठहराये हैं (इसका खुलासा इन्ही ग्रन्थके पृष्ठ १५९ । १६० में छपगया है) और दम्भप्रियेजी श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यजीका लेख प्रमाण नही करके अपने गुरुजीके लेखसे ही आप मिथ्यात्वी बनते हैं सो भी बड़ीही आश्चर्य्यकी बात है ;—

४ चौथा यह है कि–दम्भप्रियेजी श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यजीका लेख प्रमाण नही करते हैं इसको देखके और भी कितनेही अज्ञानी तथा गच्छ कदाग्रही अपने अपने गच्छके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण मान करके और सब गच्छवालोंके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण नही मानेंगे जिस से श्रीजिनवाणीरूपी पञ्चाङ्गीके सैकड़ो शास्त्रोंका उत्थापन होगा और अपनी अपनी मतिकल्पना करके चाहे जैसा वर्त्ताव करना सरू करेंगे तो श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की अति उत्तम, अविसंवादी, श्रीजैनशासनकी अखण्डित मर्य्यादा भी नही रहेगी और कदाग्रही लोग अपने अपने पक्षका आग्रह में फसके मिथ्यात्व बढ़ाते हुवे संसार वृद्धि करेंगे जिसके दोषाधिकारी दम्भप्रियेजी वगैरह होवेंगे और आप दूसरे गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण नही करेंगे तो दूसरे गच्छवाले

आपके गच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण नही करेंगे जिससे भी वृथा वाद विवादसें मिथ्यात्व वढ़ता रहेगा और सत्य असत्यका निर्णय भी नही हो सकेगा और दम्भप्रियजी अनेक गच्छोंके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण करते हैं परन्तु श्रीखरतरगच्छके आचार्य्यका लेख प्रमाण नहीं करते हैं यह भी तो प्रत्यक्ष अन्यायकारक हठवादका लक्षण है इसलिये दम्भप्रियेजी वगैरह महाशयोंसें मेरा यही कहना है कि—

श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी परम्परा मुजब, पञ्चाङ्गीके प्रमाण पूर्वक कालानुसार, न्यायकी युक्ति करके सहित श्रीखरतरगच्छके आचार्य्योंका तो क्या परन्तु सब गच्छके आचार्य्योंका लेखको प्रमाण करना सोही आत्मार्थी मोक्षाभिलाषी सज्जनोंको परम उचित है।

वैसेही इस ग्रन्थकारने भी श्रीतपगच्छके श्रीधर्म्मसागर जी तथा श्रीजयविजयजी और श्रीविनयविजयजी इन तीनों महाशयोंके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक लिखित पाठोंको इसीही ग्रन्थके आदिका भागमें पृष्ठ ९। १०। ११ में लिखे है और उसीका भावार्थः भी पृष्ठ १२ सें १५ तक लिखके उसीका तात्पर्य्यको पृष्ठ १६ में प्रमाण किया हैं (और इन तीनों महाशयोंनें प्रथम अपने लिखे वाक्यार्थको छोड़के गच्छ कदाग्रहका मिथ्या पक्षको स्थापन करनेके लिये उत्सूत्र भाषणरूप अनेक वातें लिखी है जिसकी समीक्षा भी शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ६८ सें १५० तक उपरमें छप गई है) और भी श्रीतपगच्छके अनेक आचार्य्यों के लेख प्रमाण करनेसें आते हैं जैसे इस ग्रन्थकारनें श्रीतप-गच्छके आचार्य्योंके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक लेखोंको

प्रमाण किये हैं–तैसेही छठे महाशयजी आप भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी वाणीरूप पञ्चाङ्गीको श्रद्धापूर्वक प्रमाण करनेवाले आत्मार्थी मोक्षाभिलाषी होवोंगे तो श्रीखरतरगच्छके आचार्य्योंके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक लेखों को अवश्यही प्रमाण करके अपने मिथ्या हठवादको जलदी ही छोड़ देवोंगे तो ऊपर कहे सो दूषणोंका बचाव होनेसें बहुत लाभका कारण होगा आगे इच्छा आपकी ;—

और आगे फिर भी दम्भप्रियेजीनें लिखा है कि (तुमने श्रीजिनपति सूरिजीकी समाचारीका पाठ लिखा है कि दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावणमें और दो भाद्रपद होवे तो पहिले भाद्रपदमें पर्युषणापर्व–सांवत्सरिक कृत्य करना) यह लिखना भी छठे महाशयजी आपका कपटयुक्त है क्योंकि श्रीबुद्धिसागरजीनें पूर्वधरादि महाराजकृत तीन शास्त्रोंके पाठ लिखके भेजे थे जिसमेंके पूर्वधराचार्य्यजी महाराजके मूलसूत्रके तथा चूर्णिके दोनुं पाठोंको छुपाते हो सोही छठे महाशयजी आपका कपट है इसलिये मैं इस जगह प्रथम आपका कपटको खोलकरके पाठक वर्गको दिखाता हूं–

१ प्रथम श्रीचौदह पूर्वधर श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहु स्वामीजी कृत श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठ लिखा था उसी पाठमें आषाढ़ चौमासीसें एकमास और वीशदिने पर्युषणा करना कहा है श्रावण अथवा भाद्रपदका नियम नहीं कहा है परन्तु ५० दिनका नियम है सोही दिनोंकी गिनतीसे ५० दिने पर्युषणा करना चाहिये श्रीकल्पसूत्रका मूलपाठ भावार्थ सहित इसीही ग्रन्थके आदिमें पृष्ठ ४।५।६में छप गया है सोही पाठ इस वर्त्तमान कालमें आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य है ;

२ दूसरा श्रीपूर्वधर पूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीबृहत्कल्प-चूर्णिका पाठ लिख भेजा था सोही श्रीवृहत्कल्पचूर्णिके तीसरे उद्देशके पृष्ठ २६४ से २६५ तकका पर्युषणा सम्बन्धी पाठको यहां लिख दिखाता हूं तथाच तत्पाठः—

इदाणिं जंमि काले वासावासं ठाइतव्वं, जच्चिरं वा जाए वा विहीए तं भणन्ति, आसाढ़ गाथा वाहिं ठिया गाथा, उस्सग्गेण जाव आसाढ़पुण्णिमाए चेव पज्जोसवेंति, असत्ति खेत्तस्स बाहिंठाइत्ता, वसभा खेत्तं अतिगन्तुं वासावास-जोग्गाणि, संथारग खेल्लमल्लगादीणि गिण्हन्ति, काइयउच्चा-रणा भूमिओ वंधन्ति, ताहे आसाढ़पुण्णिमाए अतिगन्तुं, पञ्चेहिं दिवसेहिं पज़्जोसवणा कप्पं कथित्ता, सावणबहुलपक्खस्स पञ्चमीए पज्जोसवेंति पज्जोसवित्ता, उक्कोसेणं मग्गसिर-बहुलदसमीओ जाव, तत्थ अत्थितव्वं, किंकारणं पच्चिरकालं वसति जतिचिक्खल्लो वासं वा पडति, तेण इच्चिरं इधरा कत्तियपुण्णिमाए चेव णिग्गन्तव्वं, एत्थतु गाथा अस्मिन्नत्र पज्जोसवेइ इत्यर्थः॥ अणभिग्गहितं णाम, गिहत्था जति पुच्छन्ति, ठितत्थ वासावासं एवं, पुच्छितेहिं, भणियव्वं, ण ताव ठामो केच्चिरंकालं एवं, वीसतिरायं वा मासं, कथं, जति अधिमासतो पडितो तो वीसतिरायं, गिहिणातं ण कज़्जति, किंकारणं, एत्थ अधिमासओ चेव मासो गणि-ज्जति, सो वीसाए समं, वीसतिरातो भसति चेव, अथ ण पडितो अधिमास तो वीसतिरातं मासं, गिहिणातं ण कज्जति, किं पुण एवं उच्यते। असिवादि गाथार्द्धं, असिवा-दीणि कारणाणि जाताणि, अथवा ण णिरातं वासं आरद्धं, ताधे लोगो चिंतेज्जा अणावुठित्ति तेण धस संगहे करेंति,

असंथरं ताणं णिग्गमणं दो तेहियभणियं ठियामोत्ति, पच्छा लोगो भणेज्जा एत्तिल्लयंपि एते ण याणन्ति एवं पवयणोवघातो भवति, ठियामोतिय भणि ते लोगो चिंतेइ जाणंते अवस्स वरिसइ ताधे लोगो घरछंदेण हलकुलियादी करेंति, तम्हा सवीसति राते मासे अभिग्गहीतं गृहीज्ञातमित्यर्थः। एत्थ उगाथा एत्थेति,- आसाढ चउम्मासिए पडिक्कंते, पञ्चेहिं पञ्चेहिं दिवसेहिं गतेहिं, जत्थ जत्थ वासावासयोग्गं खेत्तं पडिपुस्सं तत्थ तत्थ पज्जोसवे यव्वं, जाव सवीसइ रातो मासो, उस्सग्गेण पुण आसाढ़सुद्धदसमि पच्छद्धं, इयसत्तरी गाथा, एवं सत्तरी भवति, सवीसति राते मासे पज्जोसवेत्ता, कत्तिय पुस्सिमाए पडिकमित्ता, बितियदिवसे णिग्गयाणं, पञ्चसत्तरी भद्दवयअमावसाए पज्जोसवेताणं, भद्दवयबहुलदसमीए असीत्ति, भद्दवयबहुलपञ्चमीए पञ्चासीति सावणपुस्सिमाए णउत्ति, सावणसुद्धदसमीए पञ्चणउत्ति, सावण सुद्धपञ्चमीए सतं, सावण अमावसाए पंचुत्तरं सयं, सावणबहुलदसमीए दसुत्तरं सतं, सावणबहुलपञ्चमीए पण्णरसुत्तरं सतं,आसाढ़पुस्सिमाए वीसुत्तरं सतं, कारणे पुण छम्मासितो जेठोत्ति उक्कोसो उग्गहो भवन्ति, कथं जति वा पच्छद्धं अस्य व्याख्या, कत्तिएण गाथा उवट्ठिए, आसाढ मासकप्पए कते वासावासपाउग्ग खेत्तासती, तत्थेव वासो कातव्वो, पञ्चहिं दिवसेहिं पज्जोसवणा कप्पं कथिता, चाउम्मासिए चेव पज्जोसर्वेति, तं पुण इमेण कारणेण मग्गसिरं अत्थिज्जइ जति वासति पच्छद्धं आलम्बणं मासं पड़ेति, चिरकाओ, आसाढ़े वासा रत्तिया चत्तारि मग्गसिरोय एते छम्मासिओ जेट्ठोग्गहो, परयाणेहिं पवत्तेहिंपि णिग्गतव्वं।

देखिये ऊपरके पाठमें पर्युषणाधिकारे चेव निश्चय करके अधिकमासको गिनतीमें कहा है और पूर्वधरादि उग्रविहारी महानुभावोंके लिये निवासरूप पर्युषणा (योग्यक्षेत्र तथा उपयोगी वस्तुयोंका योग होनेसें) उत्सर्गसें आषाढ़पूर्णिमाकोही करनी कही परन्तु योग्यक्षेत्रादिके अभावसें अपवादसें पांच पांच दिनकी वृद्धि करते अभि-वर्द्धित संवत्सरमें वीश दिन (श्रावण शुक्लपञ्चमी) तक तथा चन्द्रसंवत्सरमें पचास दिन (भाद्रपदशुक्लपञ्चमी) तक पर्यु-षणा करनी कही—आषाढ़पूर्णिमाकी तथा पांच पांच दिन की वृद्धिकी पर्युषणाको अधिकरणदोषोंकी उत्पत्ति न होनेके कारण गृहस्थी लोगोंके न जानी हुई अज्ञात पर्यु-षणा कही है इसका विशेष खुलासा इन्ही ग्रन्थमें अनेक जगह छपगया है और वीशदिने तथा पचास दिने गृहस्थी लोगोंकी जानी हुई ज्ञातपर्युषणा कही उसीमें वार्षिक कृत्य वगैरह करनेमें आतेथे इसकाभी खुलासा इन्ही ग्रन्थमें अनेक जगह छप गया है जिसमें भी विशेष विस्तार पूर्वक पृष्ठ १०१ सें ११७ तक अच्छी तरहसें निर्णय करनेमें आया है। और मासवृद्धिके अभावसें पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक ७० दिन रहते हैं तैसेही मासवृद्धि होनेसें पर्यषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन रहते हैं इसका भी विस्तार अनेक जगह छपगया है जिसमें भी विशेष करके पृष्ठ १२७ से १२९ तक और १७४ से १८३ तक अच्छी तरहसें निर्णयके साथ छपगया है और उत्कृष्टसें १८० दिन का कल्प कहा है ;—

और तीसरा श्रीजिनपतिसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थकापाठलिखभेजाथा सोहीपाठ यहां दिखाताहूं यथा :—

सावणे भद्दवएवा, अहिगमासे चाउमासीओ ॥ पंचास इमे दिणे, पज्जोसवणा कायव्वा न असीमे, इति—

भावार्थः—श्रावण और भाद्रपद मास अधिक होतो भी आषाढ़ चौमासीसें पचासमें दिन पर्युषणा करना चाहिये परन्तु अशीमें दिन नही करना । इस जगह सज्जन पुरुषोंको विचार करना चाहिये कि ऊपरोक्त तीनों शास्त्रोंके पाठ आगमानुसार तथा युक्ति पूर्वक होनेसें छठे महाशयजीको प्रमाण करने योग्य थे तथापि गच्छका पक्षपातके और पण्डिताभिमानके जोरसें ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंको प्रमाण न करते हुवे श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठको तथा श्रीवृहत्कल्पचूर्णिके पाठको छुपाकरके मायावृत्तिसें श्रीजिनपति सूरिजी की समाचारीके पाठ पर अपने विद्वत्ताकी चातुराई दिखाई है कि (यही तो विवादास्पद है कि श्रीजिनपति सूरिजीनें समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकमजारी किया है, कौनसे सूत्रके कौनसें दफे मुजिब किया है) छठे महाशयजीके इस लेख पर मेरेको वड़ाही आश्चर्य सहित खेदके साथ लिखना पड़ता है कि श्रीवल्लभविजयजीको अनुमान २२। २३ वर्ष दीक्षा लिये हुए है तथा कुछ व्याकरणादि भी पढ़े हुए सुनते हैं परन्तु इस जगह तो श्रीवल्लभविजयजीनें अपनी खूब अज्ञता प्रगट करी हैं- क्योंकि श्रीनिशीथसूत्रके लघु भाष्यमें, १ तथा वृहद्भाष्यमें २ और चूर्णिमें ३ श्रीवृहत्कल्पसूत्रके लघु भाष्यमें ४ तथा वृहत्भाष्यमें ५ और चूर्णिमें ६ श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रमें ७ तथा चूर्णिमें ८ श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ९ तथा तद्वृत्तिमें १० और श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रकी वृत्तिमें ११ इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें कहा है कि पचास दिने अवश्यही पर्युषणा

करनी चाहिये। तथापि पर्युषणा करने योग्यक्षेत्र नहीं मिले तो विजन (जङ्गल) में भी वृक्ष नीचे पचास वें दिन जरूर पर्युषणा करनी परन्तु पचासमें दिनकी रात्रिको उल्लङ्घन नही करना यह बात तो प्रसिद्ध है इसीके सम्बन्धमें इन्ही ग्रन्थके आदिमें श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी वृत्तिका पाठ पृष्ठ १८।१९ में और श्रीवृहत्कल्पवृत्तिका पाठ पृष्ठ २१ से २५ तक, और श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी चूर्णिका पाठ पृष्ठ ९१ से ९४ तक, और श्रीनिशीथसूत्रकी चूर्णिका पाठ पृष्ठ ९५ से ९९ तक, तथा तद्भावार्थ पृष्ठ १०० से १०५ तक छप गया है,—

ऊपरोक्त शास्त्रोंमें आषाढ़ चौमासीसे पांच पांच दिनोंकी वृद्धि करते (दशवें पञ्चकमें) पचासवें दिने प्रसिद्ध पर्युषणा मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें करनी कही है और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें पांच पांच दिनोंकी वृद्धि करते (चौथे पञ्चकमें) वीशवें दिने प्रसिद्ध पर्युषणा कही सो प्राचीनकालाश्रय पूर्वधरादि उग्रविहारी महाराजोंके लिये श्रीजैनज्योतिषके पञ्चाङ्ग मुजब वर्त्तनेके सम्बन्धमें कही परन्तु अबी इस वर्त्तमानकालमें जैन पञ्चाङ्ग के अभावसे और पड़ते कालके कारणसे ऊपरका व्यवहार श्रीसन्घकी आज्ञासे विच्छेद हुवा है सोही दिखाता हूं।

श्रीतीत्थोगालिय (तीर्थोद्गार) पयन्नामें कहा है-यथा ;—

वीसदिणेहिं कप्पो, पंचगहाणीय कप्पठवणाय,
नवसय तेणउएहिं, वुच्छिन्ना संघआणाए ॥ १ ॥

देखिये ऊपरकी गाथामें वीश दिनका कल्प, तथा पांच पांच दिनकी वृद्धि करके अज्ञातपर्युषणास्थापन करनेसे पिछाड़ी कालावग्रह संबंधी श्रीवृहत्कल्पवृत्ति, श्रीदशाश्रुतचूर्णि,

श्रीनिशीथचूर्णि,श्रीवृहत्कल्पचूर्णिके, पाठ खुलासापूर्वक छप गये हैं सोही पंचकपरिहानीका कल्प, और कल्प स्थापना याने–योग्य क्षेत्रके अभावसें पांच पांच दिनकी वृद्धिसें अज्ञातपर्युषणा स्थापन करे उसी रात्रिको वहां श्रीकल्पसूत्र के पठन करनेका कल्प, यह तीनों बातें वीर संम्वत् ९९३ (विक्रम संम्वत् ५२३) में श्रीसंघकी आज्ञासें विच्छेद हुई। तब चन्द्रसंवत्सरमें और अभिवर्द्धितसंवत्सरमें भी आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने पर्युषणा करनेके कल्पकी मर्य्यादा रही तथा पचासवें दिनही श्रीकल्पसूत्रके पठन करनेके कल्पकी मर्यादा भी रही और उसी वर्षं श्रीमान् परम उपगारी श्रीदेवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणजी महाराजनें श्रीजैन-शास्त्रोंको पुस्तका रूढमें किये उसी समय श्रीदशाश्रुत-स्कन्धसूत्रके आठमें अध्ययनको लिखती वख्त, जिन चरित्र तथा स्थिरावली और साधुसमाचारीका संग्रह करके अष्टम अध्ययनको संपूर्ण किया तब पांच पांच दिनकी वृद्धिसें अभिवर्द्धित सम्वत्सरमें चार पञ्चक वीश दिनका तथा चन्द्र-सम्वत्सरमें दशपञ्चकका (कल्प) व्यवहारको न लिखा और चन्द्रसं० अभिवर्द्धितसं० इन दोनु सम्वत्सरोंमें ५० दिनका एकही नियम होनेसें पचास दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा करनेका नियम दिखाया है यह श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रका अष्टमाध्य-यन श्रीकल्पसूत्रजीके नामसें जूदा भी प्रसिद्ध है उसी श्री-कल्पसूत्रका पर्युषणा सम्बन्धी पाठ भावार्थ सहित इन्हीं ग्रन्थकी आदिमें पृष्ठ ४।५।६ तक छप चुका है सोही पाठार्थ सूर्य्यकी तरह प्रकाश करता है कि इस वर्त्तमानकालमें आ-षाढ़ चौमासीसें पचास दिन जहां पूरे होवे वहांही पर्यु-

पणा करनी चाहिये इसीही श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठादिके अनुसार श्रीजिनपतिसूरीजीनें समाचारीमें लिखाहै कि-अधिक मास हो तो भी पचास दिने पर्युषणा करना परन्तु असी दिने नही करना चाहिये-इस लेखको देखके छठे महाशयजी लिखते हैं कि (यहीतो विवादास्पद है श्रीजिन पति सूरिजीने समाचारीमें जो यह पूर्वोक्त हुकम जारी किया है कौनसे सूत्रके कौनसे दफे मुजब किया है) इस पर मेरेको इतनाही कहना है कि श्रीकल्पसूत्रके पर्युषणा सन्वन्धी साधुसमाचारीका मूलपाठ इन्ही ग्रन्थके पृष्ठ ४।५ में छपा है उसी मूलपाठके अनेक दफों मुजब श्रीजिनपति सूरिजीने समाचारीमें पूर्वोक्त हुकम जारी किया है सो श्रीजैन आगमानुसार है इसका निर्णय ऊपरमेंही कर दिखाया हैं इसलिये छठे महाशयजी आपको श्रीजिनपति सूरिजीके वाक्यमें जो शङ्कारूपी मिथ्यात्वका भ्रम पड़ा है सो उपरका लेखको पढ़के निकालदो और मिथ्या पक्षको छोड़कर सत्य बातको ग्रहण करके, निःसन्देहरूपी सम्यक्त्व रत्नको प्राप्तकरो क्योंकि आपके विवादास्पदका निर्णय उपरमेंही होगया है। और पृष्ठ १५७ से १६५ तक भी पहिले छपगया है।

वड़ेही आश्चर्य्यकी बात है कि-श्रीवल्लभविजयजीको २२।२३ वर्ष दीक्षा लिये हुवे और हर वर्ष गांम गांममें श्रीपर्युषणापर्वके व्याख्यानमें खुलासा पूर्वक व्याख्या सहित वंचाता हुवा श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठका तथा मूलपाठके व्याख्या का अर्थ भी उन्हकी समझमें नही आया होगा इसलिये ५० दिने पर्युषणा करनेका श्रीजिनपति सूरिजीका लेख पर शङ्का करी इससें मालूम होता है कि पर्युषणा सम्बन्धी

श्रीकल्पसूत्रके पाठसें तथा तद्‌पाठकी व्याख्यासें आप अज्ञ होवेंगे अथवा तो भोले जीवोंको गच्छ कदाग्रहका भ्रममें गेरनेके लिये जानते हुवे भी तीसरे अभिनिवेश मिथ्यात्वके आधिन हो करके मायावृत्तिसें लिखा होगा सो विवेकी विद्वान् स्वयं विचार लेवेंगे !—

और आगे छठे महाशयजी दम्भप्रियजीनें फिरभी लिखा है कि (हाँ यदि ऐसा खुलाशा पाठ मूलशास्त्रोंमें आप कहीं भी दिखा देवें कि दो श्रावण होवे तो पीछले श्रावण में और दो भाद्रपद होवें तो पहिले भाद्रपदमें सांवत्सरिक प्रतिक्रमण, केश लुञ्चन, अष्टमतप, चैत्यपरिपाटी, और सर्व सङ्घके साथ खामणारूप पर्युषणा वार्षिकपर्व करना तो हम माननेको तैयार है)

श्रीवल्लभविजयजीके इस लेखपर मेरेको प्रथमतो इतना ही कहना है कि ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने-वालोंको आपने आज्ञा भंगका दूषण लगाया तब श्रीबुद्धि-सागरजीनें आपको पत्र द्वारा पूछा कि कौनसे शास्त्रोंके पाठ मुजब ५० दिने पर्युषणा करनेवालोंको आपने आज्ञा भङ्गका दूषण लगाया है सो बतावो इस तरहसें शास्त्रका प्रमाण पूछा उसीको आप शास्त्रका प्रमाणतो बता सके नहीं तब पंडिताभिमानके जोर की मायावृत्तिसें, निष्प्रयो-जनकी अन्य अन्य बातें लिखके उलटा उन्होंसें ही शास्त्रका प्रमाण पूछने लगे सो दंभप्रियजी यह आपका पूछना अन्यायकारक है क्योंकि प्रथम आपने ही आज्ञा भंगका दूषण लगाया है इसलिये प्रथम आपको ही शास्त्रका प्रमाण बताना न्याययुक्त उचित है तथापि जब तक आप

अपनी बात संबन्धी शास्त्रका प्रमाण नही बतावोगे तब तक आपका दूसरोंको पूछना है सो निकेवल बाललीलावत् विवेकशून्यतासें अपने नामकी हासी करनेका कारण है सो विद्वान् पुरुष स्वयं विचार सकते है ;—

दूसरा—श्रीवल्लभविजयजी से मेरा (इस ग्रन्थकारका) बड़ेही आग्रहके साथ यही कहना है कि आपने ५० दिने पर्युषणा करनेवालोंको आज्ञा भंगका दूषण लगाया सो शास्त्रप्रमाण मुजब और न्यायकी युक्ति करके सहित सिद्ध कर दिखावो अथवा नहीं सिद्धकरसकोतो श्रीचतुर्विध संघ समक्ष मन वचन कायासें अपनी उत्सूत्रभाषणके भूलकी क्षमा मांगकर मिथ्या दुष्कृतसें अपनी आत्माको भवान्तर में उत्सूत्रभाषण की शिक्षा भोगनेसें बचालेवो ;—

और आप इन दोनु मेसें एक भी नही करोगे और इस बातको छोड़ कर निष्प्रयोजनकी अन्य अन्य बातोंसें वृथा वाद विवाद खण्डन मण्डन तथा दूसरेकी निन्दा अवहेलनासें झगड़ा टंटा करके आपसमें जो जो संपसें शासन उन्नतिके और भव्य जीवोंके उद्धारके कार्य होते है जिसमें विघ्न कारक राग द्वेष निन्दा ईर्षासें कर्म्म बन्धके हेतु करोगे करावोगे और मिथ्यात्वको वढावोगे जिसके दोषाधिकारी निमित्त भूत दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजी खास आपही होवोगे इस लिये निष्प्रयोजनकी अन्याय कारक वृथा अन्य अन्य बातों को छोड़कर अपनी बात संबन्धी शास्त्रका प्रमाण दिखावो अथवा अपनी भूल समझके क्षमाके साथ मिथ्या दुष्कृतदेवो नहीं तो आप आत्मार्थी मोक्षाभिलाषी हो ऐसा कोईभी सज्जन नहीं मान सकेंगे किन्तु इस लौकिकमें दृष्टिरागि-

योंसे पूज्यता मानताके लिये पंडिताभिमानके जोरसे उत्सूत्रभाषणसें संसार वृद्धिका भय न करते बालजीवोंकों फंदापहमें गेरके मिथ्यात्वको बढानेवाले आप ही सोतो श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्यको जाननेवाले विवेकी सज्जन अवश्यही मानेंगे यह तो प्रसिद्धही न्यायकी बात है ;—

तीसरा यह है कि दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणापर्व करने संबन्धी पञ्चाङ्गीका पाठ पूछके मानने को छठे महाशयजी आप तैयार हुए हो परन्तु अपनी तरफसें पचांगीका पाठ बता सकते नहीं हो इससें यह भी सिद्ध होगया कि इस वर्तमान कालमें दो श्रावण अथवा दो भाद्रपद होनेसे पर्युषणापर्व कबकरना जिसकी आपको अबीतक *शास्त्रोंके प्रमाण मुजब* पूरे पूरी *मालूम नहीं* है तो फिर दूसरोंको आज्ञा भंगका दूषण लगाके निषेध करना यहतो प्रत्यक्ष आपका महामिथ्या उत्सूत्रभाषणरूप वृथा ही झगड़ेको बढानेवाला हुवा सो विवेकी सज्जन स्वय विचार लेवेंगे ;—

चौथा औरभी सुनो यहतो प्रसिद्ध बात है कि आषाढ चौमासीसे ५० दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन वार्षिक कृत्यादिसे करना कहा है इस न्यायके अनुसार दूसरे श्रावण में अथवा प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पर्युषणा करना सोतो अल्प बुद्धिवाले भी समझ सक्ते है । सो फिर क्या छठे महाशयजीकी इतनी भी बुद्धिनहींहै सो ५० दिने दूसरे श्रावण में अथवा प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करने संबंधी पञ्चाङ्गी का पाठ पूछते है । इसपर कोई कहेगा कि छठे महाशयजी की ५० दिने पर्युषणा करनेकी बुद्धि तो हैं । इसपर मेरेको

इतनाही कहना है कि ५० दिने पर्युषणा करनेकी बुद्धि है तो फिर जानते हुवे भी तीसरे अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके अधिकारी क्यों बनके पञ्चाङ्गीका प्रमाण पूछकरके भोलेजीवों को संशयरूपी मिथ्यात्वका भ्रममें गेरे है और अधिकमास की गिनती निश्चय करके स्वयं सिद्ध है सो कदापि निषेध नहीं हो सकती है जिसका खुलासा इस ग्रन्थमें अनेक जगह छपगया है इसलिये दो श्रावण होतेभी ८० दिने भाद्रपदमें अथवा दो भाद्रपद होनेसे भी ८० दिने दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणा अपनी मति कल्पनासें श्रीजिनाज्ञाविरुद्ध क्यों करते है क्योंकि पचासवें दिनकी रात्रिको भी उल्लङ्घन करनेवालेको शास्त्रोंमें आज्ञा विराधक कहा है इसलिये ८० दिने पर्युषणा करनेवाले अवश्यही आज्ञाके विराधक है यह तो प्रत्यक्ष सिद्ध है और ८० दिने पर्युषणा करनेका कोईभी श्रीजैनशास्त्रोंमें नहीं लिखा है परन्तु ५०दिने पर्युषणा करनेका तो पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें लिखा है सो इसीही ग्रन्थमें अनेक जगह छपगया है तथापि दंभप्रियजीने अभि-निवेशिक मिथ्यात्वसें दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें ५० दिने पांच कृत्योंसें पर्युषणा वार्षिक पर्व करने संबंधी पंचांगीका पाठ पूछके भोले जीवोंको भ्रममें गेरे है सो दंभ-प्रियेजीके मिथ्यात्वका भ्रमको दूर करनेके लिये और मोक्षा-भिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेके लिये इस जगह मेरेको इतनाही कहना है कि—श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठमें ५०दिने पर्युषणा करनी कही है इसलिये श्रावणमासकी वृद्धि होनेसें दूसरे श्रावणमें अथवा भाद्रपदमासकी वृद्धि होनेसें प्रथम भाद्रपदमें जहां ५०दिन पूरे होवे वहांही प्रसिद्ध पर्युषणासें

साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्योंसें वार्षिकपर्व करनेका समझना चाहिये क्योंकि जहां प्रसिद्ध पर्युषणा वहांही वार्षिक कृत्यादि करनेका नियम है सो तो श्रीकल्पसूत्रकी नव (९) व्याख्यायोंमें श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके सबी टीकाकारोंनें खुलासा पूर्वक लिखा है इसका विस्तार इसीही ग्रन्थकी आदिसें लेकर पृष्ठ २० तक छप गया है और उन्ही टीकाओंमें पचास दिने भाद्रपद शुक्ल पञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्योंसें वार्षिक पर्वरूप प्रसिद्ध पर्युषणा करनी कही है सो तो मास वृद्धिके अभावसें चन्द्रसंवत्सरमें नतु मासवृद्धि होते भी अभिवर्द्धित संवत्सरमें क्योंकि प्राचीनकालमें भी पौष अथवा आषाढ़ मासकी वृद्धि होनेसें अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीश दिने श्रावणशुक्ल पञ्चमीको सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पाँच कृत्योसें प्रसिद्ध पर्युषणा जैनपञ्चाङ्गानुसार करनेमें आती थी इस बातका निर्णय श्रीकल्पसूत्रकी टीकाओंमें तथा इसीही ग्रन्थमें अनेक जगह और विशेष करके पृष्ठ १०७ सें ११७ तक छप गया है परन्तु इस वर्त्तमान कालमें वीश दिने पर्युषणा करनेका कल्पविच्छेद होनेसें तथा जैन पञ्चाङ्गके अभावसें और लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि होनेके कारणसें ५० दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा वार्षिक कृत्यादिसें करनेकी शास्त्रोंकी तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वज पूर्वाचार्य्योंकी मर्य्यादा है सो तो इस ग्रन्थकी आदिसेंही लेकर ऊपर तकमें अनेक जगह छप गया है और सातमें महाशयजी श्रीधर्म्मविजयजीके नामकी सभी क्षामें भी छपेगा (और वर्षाकालमें जीवदयादिके लियेही

खास करके दिनोंकी गिनतीसें पर्युषणा करनेका श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक कहा है) इस लिये इस वर्त्तमान कालमें दूसरे श्रावण में अथवा प्रथम भाद्रपदमें ५० दिनेही प्रसिद्ध पर्युषणा सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पांच कृत्यों सहित अवश्यही निश्चय करके करनी चाहिये सो पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके प्रमाणानुसार तथा युक्तिपूर्वक स्वयं सिद्ध है सो तो ऊपरके लेखको तथा इस ग्रन्थको आदिसें अन्ततक आठों महाशयोंके लेखकी समीक्षाको पढ़नेवाले मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे तथा छठे महाशयजी आप भी हृदयमें विवेक बुद्धि लाकरके न्याय दृष्टिसें पढ़कर अच्छी तरहसें विचारो और आप सत्यवादी महाव्रतधारी आत्मार्थी होवो तो पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाणानुसार और खास आपके गच्छके भी पूर्वाचार्य्योंकी मर्य्यादानुसार ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रपदमें सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पाँच कृत्योंसे प्रसिद्ध पर्युषणा वार्षिकपर्व करनेका ऊपरोक्त प्रत्यक्ष न्यायानुसार तथा युक्तिपूर्वक शास्त्रोंके प्रमाणको ग्रहण करो और शास्त्रोंके प्रमाण बिना तथा युक्तिके विरुद्धका मिथ्या कदाग्रहको छोड़ो और ५० दिने पर्युषणापर्व करनेका निषेध करने सम्बन्धी जितनी कुतर्कां करनी है सो सबीही संसारवृद्धिकी हेतुरूप तथा भोले जीवोंकी सत्यबात परसें श्रद्धा भ्रष्ट करके गच्छ कदाग्रहके मिथ्यात्वका भ्रममें गेरनेके लिये अपने विद्वत्ताकी हासी करानेवाली है सो भवभीरू मोक्षाभिलाषी आत्मार्थियोंको करनी उचित नही है तो फिर छठे

महाशयजीने शास्त्रानुसार ५० दिने पर्युषणा पर्व करने वालोंको मिथ्या आज्ञाभङ्गका दूषण लगाके उत्सूत्र भाषण-रूप ८० दिने पर्युषणा करनेका पुष्टकिया जिसकी आलोचना लिये बिना कैसे आत्मका सुधारा होगा सो न्यायदृष्टि वाले सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे ;—

अब छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीने दूसरे गुजराती भाषाके लेखमें मिथ्यात्वके झगड़ेको बढ़ानेके लिये जो लेख लिखा है उसीका नमूना यहाँ लिख दिखा करके पीछे उसीकी समीक्षा करता हूँ—नवेम्बर मासकी ७वीं तारीख सन् १९०९ गुजराती आश्विन वदी १ हिन्दी कार्त्तिक वदी १ वीर संवत् २४३५ का जैनपत्रके ३० वा अङ्कके पृष्ठ पांचमा की आदिमें ही लिखा है कि,—

[वन्दे वीरम्–लेखक मुनि वल्लभविजय मु० पालणपुर
सावधान ! सावधान !! सावधान !!!

आचार्य्य सावधान ! उपाध्याय सावधान ! पन्यास सावधान ! गणी सावधान ! साधुसाध्वी सावधान ! यतीवर्ग सावधान ! श्रावक श्राविका सावधान ! शेठीयाओ सावधान ! कोन्फरन्स सावधान ! वकील प्लीडर सावधान ! वेरिस्टऔटलो सावधान ! नाणा कोथली सावधान ! लागता वलगता सावधान ! कागज कलम सावधान ! खड़ीओ रुघनाई सावधान ! सावधान ! सावधान !! सावधान !!! तपगच्छमान धरावनार सावधान ! खरतरगच्छीय सावधान !]

छठे महाशयजीके इन अक्षरों पर मेरेको बड़ाही आश्चर्य उत्पन्न होता है कि श्रीवल्लभविजयजीकी विवेक

वुद्धि कैसी शून्य होगई है सो अपनी हासी करानेवाले विना विचारे शब्द लिखते कुछ भी लज्जा नही आई क्योंकि श्रीवल्लभविजयजी आत्मार्थी महाव्रतधारी साधु होते तो वकील, बेरिस्टर, और नाणा कोथली, वगैरहको सावधान! सावधान!! पुकारके कोर्ट कचेरीमें झगड़ा वढ़ानेकी तैयारी कदापि नही करते तथापि करी इससे विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे कि–श्रीवल्लभविजयजीनें भेष धारण करके साधु नाम धराया परन्तु अन्तरमें श्रद्धारहित होनेसें शास्त्रार्थ पूर्वक सत्य असत्यका निर्णय करना छोड़ करके श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके आपसमें कोर्ट कचेरीमें झगड़ेको वढ़ानेके लिये श्रीजैनशासनकी निन्दा करानेवाले तथा मिथ्यात्वको वढ़ानेवाले और अपने नामको लज्जनीय शब्द लिखते पूर्वापरका कुछ भी विचार न किया और शक्त दिवाने वड़ेही पागलकी तरह—नाणा कोथली (रुपैयोंकी थेली) तथा कागद कलम और खड़ीओ रुशनाई (द्वात शाही) अचेतन अजीव वस्तुयोंको सावधान! सावधान!! पुकारा–वाह क्या विद्वत्ताकी चातुराईका नमूना छठे महाशयजीने प्रकाशित किया है सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे,–

और दूसरा यह है कि खास छठे महाशयजीकी सम्मंति पूर्वक पञ्जाब अमृतशहरसें, घासीराम और जुगलरामको गङ्गाजी भेजकर पवित्र करवाये जिसका कारण संक्षिमसें इसीही ग्रन्थके पृष्ट १७५–१७६ में छपगया है और विशेष विस्तार पूर्वक पञ्जाव लाहोरसें जसवन्तराय जैनीकी मारफत श्रीआत्मानन्द जैन पत्रिका मासिक पत्र प्रसिद्ध

होता है उसीमें सन् १९०८ के २-३ अङ्कमें छप चुका है उसी घासीराम और जुगलरामको गङ्गाजी भेजकर पवित्र कराने सम्बन्धी ढूंढकसाधुनामधारक कुंदनमल्लने १४ पृष्ठकी छोटीसी एक पुस्तक बनाकरके प्रगट कराई है सो पुस्तक छठे महाशयजीनें बांची है और उन्हके पास भी है उसी पुस्तकमें छठे महाशयजीके गुरुजी न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी सम्बन्धी तथा श्रीजैनश्वेताम्बर मूर्त्तिपूजने वालों सम्बन्धी और श्रीसिद्घाचलजी श्रीगीरनारजी श्रीआबूजी श्रीसमेतशिखरजी वगैरह श्रीजैनतीर्थों सम्बन्धी अनेकतरहके अनुचित शब्द लिखके निन्दा करी है उसीके निमित्त भूत छठे महाशयजी वगैर हुवे हैं और उसी पुस्तकके पृष्ठ ३-४में घासीराम और जुगलरामको गङ्गाजीके जलसें पवित्र कराये तैसेही छठे महाशयजीके गुरुजी श्रीआत्मारामजीको गङ्गाजीके जलसें पवित्र न करानेके कारण अपने गुरुजीको और अपने गुरुजीकी सम्प्रदायमें दीक्षा लेनेवालोंको अपवित्र ठहरनेका कलङ्क लगवाया और पृष्ठ ११ में घासीराम, जुगलरामको गङ्गाजी भेजने वालोको तथा भेजाने वालोको और सम्मती देकर अच्छा समझने वाले छठे महाशयजी आदिको मिथ्यात्वी, पाखण्डी, वगैरह शब्दोका इनाम देकर फिर पृष्ठ १३ के अन्तमें गङ्गाजी भेजने वालोंको श्रीजैनशासनको लाछन (कलङ्क) लगानेवाले ठहराकरके तीन वार धीक्कारका इनाम दिया है।

इस जगह निष्पक्षपाती सज्जन पुरुषोको विचार करना चाहिये कि श्रीजैनतीर्थोंकी तथा श्रीजैनतीर्थोंको मानने वालोंकी द्वेष बुद्धिसें बड़ेही अनुचित शब्दोंसें निन्दा करके

भारी कर्मोंके बंध किये हैं और श्रीजैनशासनके निन्दकोंको भी उसी रस्ते पहुंचानेके लिये नरकादि अधोगतिका सार्थवाह (कुंदनमल्ल ढूंढक) बना है और पुस्तक प्रगट कराई हैं जिसमें छठे महाशयजीके गुरुजीकी तथा उन्होंके सम्प्रदाय वालोंकी भी निन्दा करी हैं तथा खास छठे महाशयजी वगैरहको भी अनेक शब्द लिखते तीनवार धीक्कार भी लिख दिया हैं और श्रीजैनशासनकी निन्दा करके मिथ्यात्व वढ़ानेका कारण किया—उसीको तो छठे महाशयजीने कुछ जबाब भी न दिया और सर्व श्रीसङ्घको तथा वकील, बेरिस्टर वगैरहको सावधान करके कोर्ट कचेरीमें श्रीजैनशासनके निन्दक कुंदनमल्लको शिक्षा दिलानेकी किञ्चिन्मात्र भी बहादुरी न दिखाई परन्तु श्री खरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके आपसमें वृथाही कोर्ट कचेरीमें झगड़ा फैलानेके लिये और मिथ्यात्व वढ़ानेके लिये, वकील, बेरिस्टर, वगैरको सावधान करके वड़ीही बहादुरी दिखाई हैं सो वड़ीही आश्चर्य्यकी बात है कि श्रीजैनशासनके दुशमन निन्दको से तो मुख छिपाते हैं और आपसमें झगड़ा करनेकी बहादुरी दिखाते कुछ लज्जा भी नही पाते है,—

अब छठे महाशयजीको मेरा (इस ग्रन्थकारका) इतनाही कहना है कि—आप सम्यक्त्वी और श्रीजैनशासनके प्रेमी होवो तो प्रथम श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छके आपसमें न्यायानुसार शास्त्रार्थ पूर्वक अन्तरका पक्षपात छोड़कर सत्य असत्यका निर्णय करके असत्यको छोड़के सत्यको ग्रहण करो और श्रीजैनशासनके निन्दक कुंदनमल्लके

मिथ्यात्वका पाखण्डको छेदन करनेके लिये अपनी बहा दुरी प्रगट करो—जबतक कुदनमल्लके मिथ्यात्व बढानेवाले लेखका जबाब आप नही देवोगे तबतक आपकी विद्वत्ता वृथाही समझनेमें आवेगी और ढूंढकोंके मुखपर शाही फिरानेके इरादेसे कार्य्य करनेकी अक्कल आपने दोडाई थी परन्तु पूर्वापरका विचार किये विना कार्य्य कराया जिससे आपकेही मुखपर शाही फिरने जैसा कारण बनगया और श्रीजैनतीर्थोंकी तथा अपने गुरुजी वगैरहकी निन्दा करानेके निमित्त भूत दोषाधिकारी भी आपकोही बनना पड़ा है और अपने बडोंको अपवित्र ठहरानेका कलङ्क भी लगवाया है इसलिये कुदनमल्ल ढूंढकके निन्दारूपी मिथ्या गप्पोंका जबाब देना आपकोही उचित है तथापि उन्हका जबाब देना आपको मुश्किल होवे तो आपके मण्डलीमें विद्वत्ता का अभिमान धारण करनेवाले बहुतसें साधुजी है उन्हके पास उसीका जबाब दिलाना चाहिये इतने पर भी आप की तथा आपके मण्डलीके साधुओंकी कुदनमल्लके लेखका जबाब देनेकी बुद्धि नही होवे तो मेरी तरफसे इस ग्रन्थको सपूर्ण हुए बाद "कुदनमल्लके मिथ्यात्वका पाखण्डच्छेदन कुठार" नामा ग्रन्थ आप लिखो तो बनाकर प्रगट करु जिसमें श्रीजैनतीर्थों पर तथा श्रीजैनतीर्थोंको माननेवालो पर और आपके गुरुजी वगैरह पर जो जो आक्षेप करके दूषण लगाया है जिसका न्यायानुसार युक्तिपूर्वक अच्छी तरहसे जबाब लिखके सबके आक्षेपको दूर करनेमें आवेगा और कुदनमल्लने अपने अक्षर गुण युक्त जो जो शब्द लिखे हैं उनीकाही न्याय युक्तिपूर्वक खास कुदनमल्लकेही उपर घटानेमें आवेगा,—

और आगे फिर भी छठे महाशयजीनें लिखा है कि (अमो नहोता धारताके महात्मा मुनि मोहनलालजीना काल पछी अेहवो पण काल आवशे के जे आपसमां जंजाल फेलावी फालमारी पायमालकरी हाल बेहाल करी देशे पण भवितव्यताने कोण रोके) इत्यादि अनेक तरहके अनुचित शब्द लिखके श्रीमोहनलालजी पर तथा उन्होंके समुदाय वालोंपर द्वेषबुद्धिसें खूबही कटाक्ष करके नाटकरूपसें कितनीही बातोंमें उन्होंको कलङ्क लगाया है उसीका भी युक्ति पूर्वक जवाव यहां लिखनेसें बहुतही विस्तार होजावे इस लिये श्रीमोहनलालजीके तथा उन्होंके संप्रदायके पूर्णप्रेमी और गुरुभक्त (पन्यासजी श्रीजशमुनिजी, पन्यासजी श्रीहर्ष-मुनिजी, और पन्यासजी श्रीकेशरमुनिजी वगैरह मंडली के साधुओंमेंसें) जो महाशय होवेंगे सो दंभप्रियजीके लेखका जवाव लिखके श्रीमोहनलालजीका तथा उन्होंकी समुदाय वालोंका कलङ्कको दूर करेगा।

और इसके आगे फिर भी लिखा है कि (प्रश्नोत्तर-मालिका नामे अेक चोपड़ी रतलाममां वीरसंवत् २४३५ नाकारतक सुदीपाँचमें बेरिस्टरनुंखोटुं नाम लखी छपा-ववामां आवेल छे जेमां तपगच्छ उपर हुमलोकर्या सिवाय बीजुं कांई पण मालम पड़तु नथी कारणके जेजे सवालो लख्याछे प्रायःसर्वना उत्तरो कलकत्ता थी प्रगट थयेल चोप-ड़ीना उत्तर रूपे जैनसिद्धान्त समाचारी नामे भावनगरनी ज-इन धर्म्मप्रसारक सभा तरफ थी छपायेल चोपड़ीमां आवी गयेल छे) छठे महाशयजीके ऊपरका लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हुं जिसमें प्रथमतो—प्रश्नोत्तरमालिका,

नामा छोटीसी पुस्तकको देख करके छठे महाशयजी श्रीवल्लभ
विजयजी और श्रीकलकत्तानिवासी लक्ष्मीचन्दजी सीपाणी
वगैरह महाशय कहते फिरते हैं कि–देखो प्रथम वाद विवाद
का कारण खरतरगच्छवालोंकी तरफसें होता है जिसका
नमूनारूप प्रश्नोत्तरमालिका नामा पुस्तक लोगोंको दिखाते
हैं परन्तु प्रश्नोत्तरमालिका पुस्तक बननेका कारण समझे
बिना द्वेष बुद्धिसें मिथ्या भाषण करके प्रथम वाद विवादके
कारण करनेका श्रीखरतरगच्छवालोंको झूठा दूषण लगाते हैं
क्योंकि प्रथम रतलामसें श्रीतपगच्छके श्रावक वृद्धिचन्दजी
छोगालालजी गांधीनें श्रीहैदराबादमें चौमासा ठहरे हुवे
न्यायरत्नजी श्रीशान्तिविजयजीको पत्र द्वारा, पांच–छ
कल्याणकादि सम्बन्धी कितने ही सवाल पूछे जिसके जबाब
सप्टेम्बर मासकी २७ वी तारीख सन् १९०८ आश्विन शुदी
२ वीर संवत् २४३४ के जैनपत्रका २४ वां अङ्कके पृष्ट ४ में छपे
हैं उसीमें श्रीखरतरगच्छवालोंको श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणक
सम्बन्धी पूछा तब उसीके निमित्त कारणसें उसीका जबाब
रूपमें श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकसम्बन्धी शास्त्रोंके पाठों
सहित कितनेही शास्त्रानुसार सवालों पूर्वक—प्रश्नोत्तर-
मालिका नामा पुस्तक छपी है इसलिये प्रश्नोत्तरमालिका
छपनेके निमित्त कारण श्रीशान्तिविजयजी है जो श्रीशान्ति
विजयजी श्रीखरतरगच्छवालोंको श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणक
सम्बन्धी नही पूछते तो श्रीखरतरगच्छवालोंको उसीका
जबाबरूपमें प्रश्नोत्तरमालिका छपा करके प्रगट करनेकी
कोई जरूरत नही थी परन्तु प्रथम जो कोई सवाल पूछेगा
उसीका जबाब तो शास्त्रानुसार अवश्यही देना सो न्याय

युक्त बात हैं इसलिये प्रथम वाद विवादका कारण श्रीखर-तरगच्छवालोंकी तरफसे नही किन्तु श्रीतपगच्छवालोंकीही तरफसें होता है ;—

और (बेरिस्टरनु खोटुंनाम लखी छपावामां आवेलछे) छठे महाशयजीका यह भी लिखना द्वेष बुद्धिका मिथ्या है क्योंकि यह तो दुनियामें प्रसिद्ध व्यवहार है कि—ऋषभ, महावीर, वर्द्धमान, गौतम, इन्द्र, लक्ष्मीपति, अमर, राजा, महाराज, सिंहजी, इत्यादि अपने संसारिक सम्बन्धियोंमें अनेक तरहके व्यवहारिक नाम होतें हैं उसी नामको बोलनेमें अथवा लिखनेमें कोई दूषण नही है और श्रीजैन-शास्त्रोंमें भी व्यवहारिक नामसें अनेक बातें लिखनेमें आती है तैसेही उन्हको भी अपने संसारिक सम्बन्धियोंमें व्यवहारिक नामसें बेरिस्टर कहते हैं सोही नाम लिखा है उसीको छठे महाशयजी झूठा ठहराते हैं सो तो प्रत्यक्ष द्वेष बुद्धिका कारण है ;—

और छठे महाशयजीनें लिखा है कि (तपगच्छ उपर हुमलो कर्या सिवाय बीजु कांई पण मालम पड़तु नथी) इन अक्षरों पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सत्ययुग चौथे कालमें भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके अमृत समान धर्मोपदेशको सुन करके भी—भारी कर्मी मिथ्यात्वी प्राणी उन्हीमहराजोंके अवर्णवाद बोलकर संसार वृद्धिका कारण करते थे तो अब इस कलियुग पञ्चमकालमें गच्छकदाग्रही, हठवादी, पण्डिताभिमानी, दुःखगर्भित, मोहगर्भित वैराग्य वाले, अन्तरमें श्रद्धारहित, मिथ्याभाषक, कलयुगी भारी कर्मीप्राणी—श्रीजैनशास्त्रोंके प्रत्यक्ष प्रमाणोंका अवर्णवाद

बोलके, संसार वृद्धिका कारण करे तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं है तैसेही छठे महाशयजी दम्भप्रियजी श्रीवल्लभविजयजीने भी किया, अर्थात्-प्रश्नोत्तरमालिका पुस्तकमें शास्त्रोंके पाठ दिखाये और शास्त्रानुसार कितनीही बातें भी लिखी है उसको प्रमाण करना तो दूर रहा परन्तु तपगच्छ उपर हुमलो (जुल्म) करनेका ठहरा करके श्रीजैनशास्त्रोंकी बातोंके अवर्णवाद लिखे सो तो उन्होंकेही कर्मोंका दोष है ;—

और आगे फिर भी प्रश्नोत्तरमालिका सम्बन्धी छठे महाशयजी लिखते हैं कि (जे जे सवालो लख्या छे प्रायः सर्वना उत्तरो कलकत्ता थी प्रगट थयेल चोपड़ीना उत्तररूपे जैनसिद्धान्त समाचारी नामे भावनगरनी जइनधर्मप्रसारक सभा तरफ थी छपायेल चोपड़ीमां आवी गयेल छे) इस लेख पर भी प्रथमतो मेरेको इतनाही कहना है कि—कलकत्तेसें चोपड़ी (पुस्तक) प्रगट होनेका जो छठे महाशयजी लिखते हैं सो तो भूलसें मिथ्या है क्योंकि कलकत्तेसें पुस्तक प्रगट नही हुई थी किन्तु (न्यायाम्भोनिधिजीकेही उत्सूत्र भाषणके अन्यायपर) मकसूदाबादके श्रावकने मुंबईमें छपवाकर 'शुद्ध समाचारी प्रकाश' नामा पुस्तक प्रगट किई है उसीमें श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्यजी महाराजोंकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके पाठार्थों सहित जो जो बाते लिखनेमें आई है उसीका और प्रश्नोत्तरमालिकामें भी जो जो शास्त्रोंकी बातें लिखके सवाल पूछनेमें आये हैं। उसीके एक सवालका भी जवाबमें उत्सूत्र भाषणके सिवाय शास्त्रार्थ पूर्वक कुछ भी जवाब जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें नही लिखा है।

और (ढूंढ़िओए पण याद राखवुं सामायिक लेतां प्रथम इरियावहिया केहवी अने पछी करेमिभंतेनो पाठ केहवो १, श्रीमहावीर स्वामिना पांच कल्याणक २, वगेरे वातोमां तो तमोने पण बाधाज आवशे माटे तपगच्छ उपरथयेल आक्षेप जोई फुलीने फालका न थाशो आबावतमां तो तमो पण जवाब दारजछो) इन अक्षरों करके छठे महाशयजी अपना मन्तव्य स्थापन करनेके लिये इस जगह ढूंढियोंको भी अपने सामिल मिलाते हुवे उन्हेंकाही सरणा लेकरके सामायिक सम्बन्धी तथा कल्याणक सम्बन्धी श्रीखरतरगच्छवालोंके साथ वाद विवादरूप युद्ध करना चाहते हैं और बहुत वर्षोंका गच्छसम्बन्धी विवाद दबा हुवा था, उसीको भी पीछाही सरू करके शुद्धसमाचारी प्रकाशकी सत्य बातोंका उत्तररूपमें जैनसिद्धान्तसमाचारी नामक, परन्तु वासत्विकमें उत्सूत्र भाषणके संग्रहकी-पुस्तकको आगे करके अपना मन्तव्यको पुष्ट किया इसलिये इस जगह– ऊपरकी दोनुं पुस्तकोंकी सब बातोंके सत्य असत्यका निर्णय करके मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोंको दिखाना मेरेको उचित है परन्तु बहुत विस्तार हो जानेके कारणसें नमूनारूप थोड़ीसी बातोंका निर्णय करके संक्षिप्तसें दिखाता हुं, जिसमें प्रथम शुद्धसमाचारी प्रकाशमें सामायिकका अधिकार है तथा जैनसिद्धान्तसमाचारी नामक पुस्तकमें भी प्रथम सामायिकका अधिकार है और छठे महाशयजी भी ढूंढियोंका साथ करके प्रथम सामायिक सम्बन्धी लिखते हैं इसलिये मेंभी इस जगह प्रथम सामायिक सम्बन्धी शास्त्रार्थ पूर्वक थोड़ासा लिखता हुं :—

श्रावकके सामायिक करनेकी विधिमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण करना ऐसे कोई भी शास्त्रोंमें नहीं कहा है किन्तु प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसें इरियावही करना श्रीतीर्थंकर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार है और पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें भी कहा है सोही दिखाता हुं :—

श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्री आवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें १, श्रीमान् महान् विद्वान् सुप्रसिद्ध १४४४ ग्रन्थकार श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्तिमें २, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीतिलकाचार्य्यजी कृत श्रीआवश्यकजीसूत्रकी लघुवृत्तिमें ३, श्रीयशोदेव उपाध्यायजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी विवरणरूप वृत्तिमें ४, श्रीपार्श्वनाथस्वामिजी की परम्परामें श्रीउकेश गच्छके श्रीदेवगुप्तसूरिजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ५, पुनः श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीनवपदप्रकरणकी वृत्तिमें ६, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजीकृत श्रीश्रावकधर्म प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गीवृत्तिकार श्री अभयदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी वृत्तिमें ८, श्रीवड़गच्छके श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णिमें ९, श्रीचन्द्रगच्छके श्रीविजयसिंहाचार्य्यजीकृत श्री श्रावकप्रतिक्रमणसूत्रकी चूर्णिमें १०, श्रीपूर्णतल्लीयगच्छके कलिकाल सर्वज्ञ विरुदधारक महान्‌विद्वान् सुप्रसिद्ध तीन करोड़ श्लोकोंकी रचनासें अनेक ग्रन्थकर्त्ता श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्रीयोगशास्त्रकी वृत्तिमें ११, श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीकथाकोश ग्रन्थमें १२, श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत

श्रीश्राद्धदिन कृत्य मूलसूत्रमें १३, श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमान् देवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्यसूत्रकी वृत्तिमें १४, श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीवन्दनकचूर्णिमें १५, श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमें १६, तथा श्रीजिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा नामा समाचारी ग्रन्थमें १७, और श्रीखरतरगच्छके दूसरे श्रीवर्द्धमानसूरिजी कृत श्रीआचारदिनकर ग्रन्थमें १८, श्रीतपगच्छके श्रीकुलमण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृत संग्रह ग्रन्थमें १९, तथा श्रीतपगच्छके सुप्रसिद्ध श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्ध प्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्ति (वन्दित्तासूत्रकी अर्थदीपिकानामा टीका) में २०, और सुप्रसिद्ध श्रीहीरविजयसूरिजीके सन्तानिये श्रीमानविजयजी उपाध्यायजी कृत श्रीधर्मसंग्रह ग्रन्थकी वृत्ति—जो कि सुप्रसिद्ध श्रीमान् यशोविजयजी उपाध्यायजीनें शुद्ध करी है उसीमें २१, इत्यादि अनेक शस्त्रोंमें श्रीपूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने और श्रीखरतरगच्छके तथा श्रीतपगच्छादि अनेक गच्छोंके अनेक पूर्वाचार्य्योंनें श्रावकके सामायिक विधिमें (सामायिकाधिकारे) प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसें इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासापूर्वक कहा है जिसके विषयमें सब पाठ यहां लिखनेसें बहुत विस्तार होजावे तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक सत्यग्राही आत्मार्थी सज्जन पुरुषोंको निःसन्देह होनेके लिये अपनेही पूर्वजोंके बनाये ग्रन्थोंके पाठ इस जगह लिख दिखाता हुं—

श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध विद्वान् अनेक ग्रन्थकार श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिका पाठ नीचे मुजब जानो :—

साम्प्रतमष्टादशं सत्कार द्वारमाह ॥ ततो वैकालिकानन्तरं विकालवेलायामन्तर्मुहूर्त्तरूपायां तामेवव्यनक्ति अस्तमिते दिवाकरे अर्द्धबिम्बादर्वाक् इत्यर्थः ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन पूजाकृत्वेति शेषः। पुनर्वन्दते जिनोत्तमान्। प्रसिद्ध चैत्यवन्दनविधिनेति ॥२२८॥ अथैकोनविंशतिवन्दनकोपलक्षितमावश्यकद्वारमाह ॥ ततस्तृतीयपूजानन्तरं श्रावकः पोषधशालाङ्गत्वा यतनया प्रमार्ष्टि ततो नमस्कारपूर्वकं व्यवहित तुशब्दस्यैवकारार्थत्वात। स्थापयित्वैव तत्र सूरिं स्थापनाचार्य्यं। ततो विधिना सामायिकं करोति ॥ २२९ ॥ अथ तत्र साधवोऽपि सन्ति। श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं। ततोऽसौ साधुसमीपे गत्वा किं करोति इत्याह। साधुसाक्षिकं, पुनः सामायिकं कृत्वा। ईर्य्यां प्रतिक्रम्यागमनमालोचयेत्। तत आचार्य्यादिन् वन्दित्वा। स्वाध्यायं काले चावश्यकं करोति॥२३०॥

देखिये ऊपरके पाठमें सांमको पूर्वोक्त विधिसें श्री जिनराजकी पूजा करके प्रसिद्ध विधिसें चैत्यवन्दन करे बाद पौषधशालामें जाकर यतना पूर्वक प्रमार्जना करके गुरु अभावसें नमस्कार पूर्वक स्थापनाचार्य्यजीकी स्थापना करके तिस विधिसें अर्थात् श्रीआवश्यकादि शास्त्रोक्त विधिसें सामायिक करे और पौषधशालामें श्रीगुरुजी महाराज होवे और अपने घरसें सामायिक करके पौषधशालामें गया होवे तो फिर भी गुरु साक्षि करेमिभंतेका उच्चारण करके पीछे इरियावही पड़िक्कमके आचार्य्यादि महाराजोंको वन्दना करे और स्वाध्याय करे पीछे अवसर होनेमें प्रतिक्रमण करे—

और श्रीतपगच्छके प्रभाविक श्रीहीरविजयजीसूरिजीके सन्तानिये श्रीमानविजयजी कृत श्रीधर्म्मसंग्रहकी वृत्तिको सुप्रसिद्ध श्रीयशोविजयजीने शुद्ध करी है उसीका पाठ यहां दिखाता हुं :—

यथा—आवश्यकसूत्रमपि सामायिअं नाम सावज्ज-जोगपरिवज्जणं णिरवज्जजोगपडिसेवणं चेत्ति, तत्रायमावश्यकचूर्णि,पञ्चाशकचूर्णि,योगशास्त्रवृत्त्याद्युक्तो विधिर्यथा-श्रावकः सामायिककर्त्ता द्विधा भवति ऋद्धिमाननृधिकश्च योऽसावनृद्धिकः स चतुर्षु स्थानेषु सामायिकं करोति जिन-गृहे, साध्वन्तिके, पोषधशालायां, स्वगृहे वा यत्र वा, विश्राम्यति निर्व्यापारो वा आस्ते तत्र च यदा साधुसमीपे करोति तदायंविधिः यदि कस्माच्चिदपि भयं नास्ति केन-चिद्विवादो नास्ति, ऋणं वा न धारयति माभूत्तत् कृता-कर्षणापकर्षणनिमित्तसंक्लेशः, तदा स्वगृहेऽपि सामायिकं कृत्वा ईर्यां शोधयन् सावद्यां भाषां परिहरन्, काष्ठ-लोष्ठ्वादिना यदि कार्य्यं, तदा तत्स्वामिनमनुज्ञाप्य प्रति लिख्य प्रमार्ज्यंच गृह्णन्, खेलसिंघाणकादीन् विवेचयंश्च स्थंडिलं प्रत्यवेक्ष्य, प्रमृज्य पञ्चसमितिसमितस्त्रिगुप्तिगुप्तः साध्वाश्रयं गत्वा, साधून्नमस्कृत्य सामायिकं करोति, तत्सूत्रं यथा करेमिभंते सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्सभंते पडिक्कमामि निन्दामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि त्ति॥ एवं कृतसामायिक, ईर्य्यापथिक्याः प्रतिक्रामति पश्चादागममालोच्य,यथाज्येष्ठ-माचार्य्यादीन्वन्दते, पुनरपि गुरुं वन्दित्वा प्रत्युपेक्षितासने

निविष्टः, शृणोति, पठति, पृच्छति वा, एवं चैत्यभवनेऽपि-द्रष्टव्यं,यदा तु पोषधशालायां स्वगृहे वा सामायिकं गृहीत्वा तत्रैवास्ते तदागमनं नास्ति यस्तु राजादि महर्द्धिकः स गन्ध-सिन्धुरस्कन्धाधिरूढ़ श्छत्रचामरादिराज्यालंकृतो हास्तिका-श्वीयपादातिकरथकाद्या परिकरितो भेरीभांकारभरिताम्बर-तलो वन्दिवृन्दकोलाहलाकुलीकृतनभस्तलोऽनेकसामन्तमण्ड-लेश्वराहमहमिकासंप्रेत्यमाणपादकमलः पौरजनैः सश्रद्धमङ्गु-ल्योपदर्श्यमानो मनोरथैरुपस्पृश्यमानस्तेषामेवाञ्जलिबन्धान् लाजाञ्जलिपातान् शिरःप्रणामाननुमोदमानः अहो धन्यो धर्मो य एवंविधैरुपसेव्यते इति प्राकृतजनैरपि श्लाघ्यमानो-ऽकृतसामायिक एव जिनालयं साधुवसतिं वा गच्छति तत्र गतो राजककुदानि छत्रचामरोपानन्मुकुटखड्गरूपाणि परिहरति आवश्यकचूर्णौ तु मउडं न अवणेइ कुंडलाणि णाम मुद्दं च पुप्फतंबोलपावारगमादि वोसिरइत्ति भणितं जिनार्चनं साधुवन्दनं वा करोति यदि त्वसौ कृतसामायिक एव गच्छे त्तदा गजाश्वादिभिरधिकरणं स्यात्तच्च न युज्यते कर्त्तु तथा सामायिकेन पादाभ्यामेव गन्तव्यं तच्चानुचितं भूपतीनां आगतस्य च यद्यसौ श्रावकस्तदा न कोऽप्यभ्यु-त्थानादि करोति अथ यथा भद्रकस्तदा पूजा कृतास्तु इति पूर्वमेवासनं मुञ्चति आचार्य्याश्च पूर्वमेवोत्थिता आसते मा उत्थानानुत्थानकृता दोषा भूवन्निति आगतश्चासौ सामा-यिकं करोतीति पूर्ववत्,—

देखिये ऊपरके पाठमें श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजकृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णि १, श्री यशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजी सूत्रकी चूर्णि २, तथा

कलिकालसर्वज्ञ विरुद-धारक श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी कृत श्री योगशास्त्रकी वृत्ति ३, और आदिशब्दसें श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीआवश्यकजी सूत्रकी वृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार—सामायिक करने वाले दो प्रकारके श्रावककी विधिमें खुलासा पूर्वक प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछे सें इरियावहीका प्रतिक्रमण करना अच्छीतरहसें स्पष्ट करके लिखा है। और श्रावक अपने घरसें वा गुरु अभावसें पौषध शालामें सामायिक करे वहां 'जाव नियमं पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे और श्रीगुरुजी महाराजके सामने सामायिक करे वहां 'जावसाहू पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे और श्रीजिनमन्दिरमें सामायिक करे वहां 'जावचेईय पज्जुवा सामि' ऐसा पाठ उच्चारण करे—इसका ऊपरोक्त शास्त्रोंमें खुलासे पाठ है।

और भी श्रीतपगच्छके श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमणवृत्ति (श्रीवन्दीत्ता सूत्रकी अर्थदीपिका टीका) में भी श्रावकके नवमा सामायिक व्रताधिकारे ऊपर मुजब ही पाठ है और उसीका भाषान्तर श्रीमुम्बईवाले श्रावकभीमसिंह माणकनें निर्णयसागर प्रेसमें श्रीजैनकथा रत्नकोष भाग चौथा (४) में छपवाया है जिसके पृष्ठ ३३७ से ३३८ तक देख लेना :—

और ऊपरोक्त अनेक शास्त्रोंके पाठ भावार्थ सहित एक दूसरा और भी ग्रन्थ छपता है उसीमें विस्तार पूर्वक अनेक पाठ छपगये है जिसका भेद आगे खोलुंगा—

अब मोक्षाभिलाषी सत्यग्राही सज्जन पुरुषोंको इस जगह विचार करना चाहिये कि—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि

महाराजोंकी आज्ञानुसार पूर्वधरादि श्रीप्राचीनाचार्य्योंने तथा सबीही गच्छोंके पूर्वाचार्य्योंने और श्रीतपगच्छके भी प्रभाविक पुरुषोंने अनेक शास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसे इरियावही कही है सो आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य है तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक प्राय करके सबीही श्रावक महाशयोंको ऊपर मुजब वर्तना तो दूर रहा परन्तु ऊपर मुजब श्रद्धा भी नहीं रखते है और उलटे उन शास्त्रोके विरुद्धार्थमें अपनी मतिकल्पनासें वर्त्तते हैं उन्होंको श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक तथा खास अपनेही गच्छके प्रभाविक पुरुषोंकी आज्ञाके आराधक और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंपर श्रद्धारखनेवाले कैसे कहे जावें और अनेक शास्त्रोके प्रत्यक्ष प्रमाणकी विधिको छोड़ करके अन्ध परम्परासे गड्डरीह प्रवाहवत् उन्ही शास्त्रोके विरुद्ध वर्त्तने वालोंकी क्रिया भी कैसे सफल होगा—और श्रीजैनशास्त्रोके एक पद पर अथवा एक अक्षर पर भी जो पुरुष श्रद्धा नही रक्खे वह प्राणी जमालिकी तरह निन्हव, मिथ्यादृष्टि कहा जाता है सो तो अनेक शास्त्रोंमें प्रसिद्ध बात है तथापि श्रीतपगच्छके वर्त्तमानिक जो जो मुनि महाशय और श्रावक महाशय ऊपरोक्त अनेक शास्त्रो पर तथा उन शास्त्रोके कर्त्ता श्रीजैनशासनके प्रभाविक पुरुषोके वचनो पर और खास अपनेही गच्छके पूर्वज पुरुषोके वचनो पर श्रद्धानहीरखते हैं उन्होंको–पक्षग्राही, दृष्टिरागी, शास्त्रोकी श्रद्धा रहितके सिवाय और सम्यक्त्वी कौन कहेगा सो तत्त्वग्राही पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ,—

और इस वर्त्तमान कालमें सुप्रसिद्ध न्यायाम्भोनिधिजी श्रीआत्मारामजी अनेक शास्त्रोंके अवलोकन करनेवाले गीतार्थ कहलाते थे इसलिये श्रीपूर्वधर महाराज कृत श्री आवश्यक चूर्णि वगैरह २१ शास्त्रोंके प्रमाण सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सम्बन्धी ऊपरमेंही पृष्ठ ३१०–३११ में छपे है उन्ही शास्त्रोंके पाठोंको सामायिक सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें वांचे है लोगोंको सुनाये है और उन्ही शास्त्रकार महाराजोंको श्रीजैनशास्त्रोंके अतीव गहनाशयको समझनेवाले, बुद्धिनिधान, प्रभाविक, श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक, सत्यवादी, पर उपगारी, मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी, और भव्य जीवोंको मोक्षसाधनका श्रीजिनाज्ञाके आराधनरूप रस्ताको दिखाने वाले गीतार्थ उत्तमपुरुष मानते थे लोगोंको भी कहते थे और उन्ही महाराजोंके बनाये ऊपरोक्त पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंको नही माननेवालोंको मिथ्यात्वी ठहरा करके उन्ही महाराजोंकी आशातना करनेवाले पञ्चाङ्गीकी श्रद्धारहित जैनाभास संसारगामी कहते थे और शास्त्रोंके पाठोंको छुपा करके अथवा आगे पीछेके सम्बन्धको छोड़ करके शास्त्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठ लिखके उलटे तात्पर्य्य भोले जीवोंको दिखाने वालोंको संसारमें परिभ्रमण करनेवाले ठहराते थे सोही खास न्यायाम्भोनिधिजीके बनाये 'चतुर्थस्तुतिनिर्णयः' वगैरह ग्रन्थोंसें प्रत्यक्ष दिखता है तथापि बडेही अफसोसकी बात है कि दूरभवि वहुलकर्मी मिथ्यात्वीकी तरह पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि अनेक शास्त्रोंके पाठोंपर श्रीआत्मारामजीकी अन्तरमें श्रद्धा नही

थी इसलिये श्रीपूर्वधरादि महाराजोंके बनाये श्रीआवश्यक-चूर्णि वगैरह पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंपर उन्होंको संशयरूपी मिथ्यात्वका भ्रम रहा अथवा अपनी विद्वत्ताके अभिमानसें संसार वृद्धिका भय नही करते अभिनिवेशिकमिथ्यात्वके अधिकारी बनके ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंके तात्पर्य्यको जानते हुये भी प्रमाण नही करे और भोले जीवोंको भी पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि शास्त्रोंके पाठोंकी शुद्ध श्रद्धा रहित बनानेके लिये 'जैनसिद्धान्त समाचारी' नामक पुस्तकमें पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थमें अन्य अन्य विषयोंके अधिकारवाले अधूरे अधूरे पाठ लिखके उसीका भी उलटा तात्पर्य्य बालजीवोंको दिखा करके (उत्सूत्र भाषणरूप अनेक जगह लिखके) अपनी समुदायवालोंको तथा अपने गच्छ-वालोंको संशयरूपी मिथ्यात्वके भ्रममें गेरे हैं और श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाका आराधनरूपी मोक्षसाधनका रस्ताकी सत्यबातोंका निषेध करके ससार वृद्धिके कारणरूप मिथ्यात्वको फैलानेवाली अपनी मतिकल्पनाकी मिथ्या बातोंको स्थापन करी है जिसका विस्तारसें शास्त्रार्थ पूर्वक इस जगह निर्णय करनेसें बड़ाही विस्तार होजावे तथापि न्यायाम्भोनिधिजी का (अपनी समुदायवालों पर तथा अपने गच्छवालों पर) गेरा हुवा मिथ्यात्वका भ्रमको अवश्यही दूर करके मोक्षा-भिलाषी सत्यग्राही भव्यजीवोंकी शुद्ध श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रत्नकी प्राप्तिके उपगारके लिये सत्य बातोंका दर्शाव भी जरूरही होना चाहिये इसलिये जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके उत्तररूपमें 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः' नामा ग्रन्थ छपना भी सरू होगया है उसीमें न्यायाम्भोनिधि-

जीने जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें जो जो उत्सूत्र भाषण किये है जिसका अच्छीतरहसें विस्तार पूर्वक निर्णय छप रहा है परन्तु इस जगह भी न्यायदृष्टिवाले आत्मार्थी भव्यजीवोंको निःसन्देह होनेकेलिये सामायिकाधिकार-सम्बन्धी न्यायाम्भोनिधिजीनें जो जो उत्सूत्र भाषण किये हैं उसीका निर्णयके साथ संक्षिप्तसें दिखाता हुं—

१ प्रथम—सामायिकाधिकारे पहिले करेमिभंतेका उच्चारण कियेपीछे इरियावहीका प्रतिक्रमण करना अनेक शास्त्रोंमें कहा है सो ऊपरमेंही छपगया है और सामायिकाधिकार सम्बन्धी कोई भी शास्त्रोंमें पूर्वापर विरोधी विसंवादी वाक्य नही है याने कोई भी शास्त्रमें सामायिकाधिकारे प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंतेका उच्चारण किसी भी पूर्वाचार्य्यजीनें नहीं कहा है तथापि न्यायाम्भोनिधिजी 'जैनसिद्धान्त समाचारी' नामक पुस्तकके पृष्ठ ३० के मध्यमें सामायिकविधि सम्बन्धी अनेक शास्त्रोंके आपस्में पूर्वापर विरोध विसंवाद ठहराते हैं सो उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः' नामा ग्रन्थके पृष्ट ३ सें ७ तक छप गया है और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सबी शास्त्रोंमें कही है जिसके विषयमें श्रीपूर्वधरादि प्रभाविक पुरुषोंके बनाये ग्रन्थोंमें तथा श्रीखरतरगच्छके और श्रीतपगच्छादिके पूर्वजोंने भी ऊपर मुजबही कहा है उसीके अनेक पाठ अर्थ सहित 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः' के पृष्ठ ७ सें २६ तक खुलासा पूर्वक छपगये है परन्तु सामायिकमें प्रथम इरियावही पीछे करेमिभंते किसी भी शास्त्रमें नही लिखी है सोही दिखाता हुं :—

२ दूसरा—श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्म स्वामीजी कृत श्रीमहानिशीथ सूत्रके तीसरे अध्ययनमें उपधानके अधिकारमें चैत्यवन्दनादि सम्बन्धी विस्तार पूर्वक खुलासे पाठ है जिसके सम्बन्धवाले आगे पीछेके सब पाठको छोड़ करके थोड़ासा अधूरा पाठ न्यायाम्भोनिधिजीनें जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके पृष्ठ ३० वार्में लिख करके गणधर महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार पूर्वक निर्णय संपूर्ण पाठार्थ सहित 'आत्मभ्रमोच्छेदन-भानुः' नामा ग्रन्थके पृष्ठ २१ के अन्तसें पृष्ठ १७ तक अच्छी तरहसें छपगया है।

३ तीसरा—श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीदशवैकालिकजी सूत्रके चूलिकाकी ७वीं गाथाकी वृहद्वृत्तिमें साधुके उपदेशाधिकारमें गमनागमनादि कारणसें इरियावही करके स्वाध्यायादि करने सम्बन्धी विस्तार पूर्वक खुलासे पाठ है (श्रीदशवैकालिकजी मूलसूत्र, अवचूरि, भावार्थ, दीपिका, और वृहद्वृत्ति सहित छपी हुई प्रसिद्ध है जिसके पृष्ठ ६७९। ६८०। ६८१ में छपगया है) जिसके सम्बन्धवाले सब पाठको छोड़ करके सिर्फ एकपद मात्रही न्यायाम्भोनिधिजीने जैन० नामक, पुस्तकके, पृष्ठ ३१ की आदिमें लिखके वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामयिकाधिकारे प्रथम इरियावही स्थापी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार पूर्वक निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु.' के पृष्ठ ३८ से ४८ तक छपगया है।

४ चौथा—श्रीतपगच्छके श्रीधर्मघोषसूरिजी कृत श्री

संघाचारभाष्य वृत्तिमें दशत्रिक सहित श्रावकके चैत्य-वन्दनकीविधि कथाओं सहित कही है जिसमें सातमीत्रिकमें यतनापूर्वक तीनवार भूमि प्रमार्जन करके इरियावही पूर्वक चैत्यवन्दन करने सम्बन्धी पुष्कली श्रावककी कथा कही है उसीके भी आगे पीछेके सब पाठको छोड़ करके थोड़ासा अधूरा पाठ न्यायां० नें 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३१ में लिखके ग्रन्थकार महाराजको गुरुविरोधीका दूषणके अधिकारी ठहरा करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी निर्णय संपूर्ण पाठ सहित ग्रन्थकार महाराजके अभिप्राय पूर्वक 'आत्मभ्रमो०के' पृष्ठ ४८ से ६८ तक छपगया है।

५ पांचमा—श्रीतपगच्छनायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्तिमें स्वाध्याय करने सम्बन्धी विस्तारसें पाठ है जिसकी भी एक गाथा न्यायां० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३३ के मध्यमें लिखके उसी गाथामें दो जगह दो मात्रा भी ज्यादा लगाके अर्थ भी उलटा करा और अपने पूर्वजकोही विसंवादीका दूषण लगा करके वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापी सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तारसें निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ६९ सें ७७ तक छपगया है।

६ छठा—श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमणसूत्रकी वृत्तिमें आवश्यकचूर्णि वगैरह अनेक शास्त्रोंके प्रमाणानुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासे कही है उसी शास्त्रोंकी विधि मुजब श्रावक

२ दूसरा—श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्म स्वामीजी कृत श्रीमहानिशीथ सूत्रके तीसरे अध्ययनमें उपधानके अधिकारमें चैत्यवन्दनादि सम्बन्धी विस्तार पूर्वक खुलासे पाठ है जिसके सम्बन्धवाले आगे पीछेके सब पाठको छोड़ करके थोड़ासा अधूरा पाठ न्यायाम्भोनिधिजीनें जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके पृष्ठ ३० वामें लिख करके गण-धर महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार पूर्वक निर्णय संपूर्ण पाठार्थ सहित 'आत्माभ्रमोच्छेदन-भानुः' नामा ग्रन्थके पृष्ठ २१ के अन्तसें पृष्ठ ३७ तक अच्छी तरहसें छपगया है।

३ तीसरा—श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत श्रीदशवैकालिकजी सूत्रके चूलिकाकी ७वीं गाथाकी बृहद्वृत्तिमें साधुके उप-देशाधिकारमें गमनागमनादि कारणसें इरियावही करके स्वाध्यायादि करने सम्बन्धी विस्तार पूर्वक खुलासे पाठ है (श्रीदशवैकालिकजी मूलसूत्र, अवचूरि, भावार्थ, दीपिका, और बृहद्वृत्ति सहित छपी हुई प्रसिद्ध है जिसके पृष्ठ ६७९। ६८०।६८१ में छपगया है) जिसके सम्बन्धवाले सब पाठको छोड़ करके सिर्फ एकपद मात्रही न्यायाम्भोनिधिजीने जैन० नामक, पुस्तकके, पृष्ठ ३१ की आदिमें लिखके वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामयिकाधिकारे प्रथम इरियावही स्थापी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार पूर्वक निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु.' के पृष्ठ ३८ सें ४८ तक छपगया है।

४ चौथा—श्रीतपगच्छके श्रीधर्मघोषसूरिजी कृत श्री

संघाचारभाष्य वृत्तिमें दशत्रिक सहित श्रावकके चैत्य-वन्दनकीविधि कथाओं सहित कही है जिसमें सातमीत्रिकमें यतनापूर्वक तीनवार भूमि प्रमार्जन करके इरियावही पूर्वक चैत्यवन्दन करने सम्बन्धी पुष्कली श्रावककी कथा कही है उसीके भी आगे पीछेके सब पाठको छोड़ करके थोड़ासा अधूरा पाठ न्यायां० नें 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३१ में लिखके ग्रन्थकार महाराजको गुरुविरोधीका दूषणके अधि-कारी ठहरा करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामा-यिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी निर्णय संपूर्ण पाठ सहित ग्रन्थकार महाराजके अभिप्राय पूर्वक 'आत्मभ्रमो०के' पृष्ठ ४८ से ६८ तक छपगया है।

५ पांचमा—श्रीतपगच्छनायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी वृत्तिमें स्वाध्याय करने सम्बन्धी विस्ता-रसें पाठ है जिसकी भी एक गाथा न्यायां० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३३ के मध्यमें लिखके उसी गाथामें दो जगह दो मात्रा भी ज्यादा लगाके अर्थ भी उलटा करा और अपने पूर्वजकोंही विसंवादीका दूषण लगा करके वृत्तिकार महा-राजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापी सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तारसें निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ६९ से ७७ तक छपगया है।

६ छठा—श्रीरत्नशेखरसूरिजी कृत श्रीश्राद्धप्रतिक्रमण-सूत्रकी वृत्तिमें आवश्यकचूर्णि वगैरह अनेक शास्त्रोंके प्रमा-णानुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरिया-वही खुलासे कही है उसी शास्त्रोंकी विधि मुजब श्रावक

अपने घरसें सामायिक करके पौषधशालामें गुरुमहाराजके पास प्रतिक्रमण करनेके लिये आवे वहां इरियावही पूर्वक षडावश्यकरूप प्रतिक्रमण करनेके सम्बन्धमें पाठ है जिसका सम्बन्ध छोड़कर ग्रन्थकार महाराजको भी विसंवादके दूषित ठहरानेके लिये उलट पुलट अधूरा पाठ, न्यायां० ने 'जैन० ना० पुस्तकके' पृष्ठ ३४ के आदिमें लिखके ग्रन्थकार महाराजकेविरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापनकरी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका निर्णय, 'आत्म०के' पृष्ठ ७७ सें ८३ तक छपगया है ।

७ सातमा—श्रीयशोदेवसूरिजी कृत श्रीपञ्चाशकजीकी चूर्णिमें सामायिक विधिके विषे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये बाद पीछेसें इरियावहीका प्रतिक्रमण करना खुलासे लिखा है उसी पाठको तो छुपा दिया और पौषधविधि सम्बन्धी पाठको न्यां०ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३४ के अन्तमें लिखके चूर्णिकार महाराजको विसंवादीका दूषण लगाके उन्ही महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिककी विधिमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ८४।८५।८६ में छपगया है ।

८ आठमा—श्रीपूर्वाचार्य्यजी कृत श्रीविवाहचूलिया सूत्रमें सिंहनामा श्रावकने इरियावही पूर्वक चार प्रकारका पौषधकरा उसी सम्बन्धी खुलासे पाठ है तथापि न्यायांभोनिधिजीनें पौषध सम्बन्धी पाठको तोड़ करके अधूरा पाठ 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३५ की आदिमें लिखके सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका निर्णय 'आत्म०' के पृष्ठ ८७।८८।८९ तक छपगया है ।

९ नवमा--श्रीतपगच्छके श्रीजयचन्द्रसूरिजी जो कि श्री आवश्यकवृहद्वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रानुसार तथा अपने ही गच्छके नायक श्रीदेवेन्द्रसूरिजी कृत श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिके और खास अपने काका गुरुजी श्रीकुल-मण्डनसूरिजी कृत श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थके अनुसार सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही श्रद्धापूर्वक मान्य करने वाले थे उन्ही महाराजकृत श्रीप्रति-क्रमणगर्भहेतुनामा ग्रन्थमें साधु और पौषधवाला श्रावक दोनोंके वास्ते इरियावही पूर्वक राई प्रतिक्रमण करनेका खुलासा पाठ है जिसमें भी प्रतिक्रमणके सम्बन्धी सब पाठको छोड़ करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें न्या०ने 'जैन०ना० पु०के' पृष्ठ ३५ वा के मध्यमें थोड़ासा अधूरा पाठ लिखके फिर भी मूल पाठके विना भाषार्थमें सामायिक शब्दका ज्यादा प्रयोग करके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ ९०।९१।९२ तक छपगया है।

१० दशमा--श्रीपञ्चम गणधर महाराजकृत श्रीभगवतीजी मूलसूत्रके तथा श्रीखरतरगच्छनायक श्रीअभयदेवसूरीजी कृत तद्वृत्तिके बारहवें शतकके प्रथम उद्देशमें पौषधके अधिकारमें पुष्कली नामा श्रावक सम्बन्धी इरियावही कही है (सो छपी हुई श्रीभगवतीजीके पृष्ठ ९८१।९८२ में अधिकार है) जिसके भी आगे पीछेके पौषध अधिकार-वाले पाठको छोड़ करके न्या०ने 'जैन० ना० पु०' के पृष्ठ ३५ के अन्तमें थोड़ासा अधूरा पाठ लिखके श्रीसूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम

इरियावही स्थापन करी सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ ९३ से ९६ के मध्य तक छपगया है।

११ इग्यारहमा–श्रीखरतरगच्छके श्रीअभयदेवसूरिजी कृत श्रीसमाचारी ग्रन्थमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावहीका खुलासा पूर्वक पाठ है तथापि उस पाठको छुपा करके अथवा लुप्त करके ग्रन्थकार महाराजके विरुद्धार्थमें मिथ्यात्वरूप रोगके उदयसें कितनी भारी कर्म प्राणीने अपनी मति कल्पना मुजब नवीन पाठ बना करके समाचारी ग्रन्थमें लिख दिया है उसीकोही न्यायाम्भोनिधि जीनें जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकके पृष्ठ ३६ में लिखके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करी है सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार पूर्वक निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानु.' नामा ग्रन्थके पृष्ठ ९६ के अन्तसे पृष्ठ १०४ तक छपगया है।

१२ बारहमा--श्रीखरतरगच्छवाले सामान्य विशेष पाठ को, तथा श्रीआवश्यक वृहद्वृत्तिके, और चूर्णिके, पाठको मान्य करते है तथापि न्या० ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ३८ में सामान्य पाठको तथा श्रीआवश्यक वृहद्वृत्तिके और चूर्णिके पाठको तुम मान्य नही करते हो ऐसें लिखके श्रीखरतर गच्छवालोको मिथ्या दूषण लगाया सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १०७ से १११ तक छपगया है।

१३ तेरहमा--खास न्यायाम्भोनिधिजी अपनी बनाई 'चतुर्थ स्तुतिनिर्णय' नामा पुस्तकके पृष्ठ ८८ के मध्यमें श्री-

जिनप्रभसूरिजी कृत श्रीविधिप्रपा समाचारी ग्रन्थके पाठ को नही माननेवालोंको मिथ्या दृष्टि ठहराते हैं परन्तु आप 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ३८ में इन्ही महाराज कृत उन्ही ग्रन्थके पाठको नही मानते हुये द्वेषबुद्धिसें आक्षेप करके शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य बात परसें भोले जीवोंकी श्रद्धाभङ्ग करनेका कारण किया हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका भी विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १११ के अन्तसें पृष्ठ ११५ तक छपगया है।

१४ चौदहमा—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी परम्परानुसार श्रीजिनदास महत्तराचार्य्यजी पूर्वधर महाराजनें श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णिमें श्रावकके नवमा सामायिक व्रतमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण कियें बाद पीछेसें इरियावही खुलासे लिखी हैं जिसको श्रीजिनाज्ञाके आराधक सबी आत्मार्थी श्रीजैनाचार्य्यादि महाराजोंने श्रद्धापूर्वक प्रमाणकरी है और श्रीहरिभद्रसूरिजी, श्रीदेवगुप्तसूरिजी, श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीयशोदेवसूरिजी, श्रीहेमचन्द्राचार्य्यजी, श्रीविजयसिंहाचार्य्यजी, श्रीदेवेन्द्रसूरिजी, श्रीतिलकाचार्य्यजी, श्रीलक्ष्मीतिलकसूरिजी, श्रीकुलमण्डनसूरिजी, श्रीरत्नशेखरसूरिजी, श्रीमानविजयजी (कृत वृत्ति शुद्धकर्त्ता श्रीयशोविजयजी) आदि महाराजोंनें अपने अपने बनाये ग्रन्थोंमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासे लिखी है उसी मुजब मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी प्राणियोंको श्रद्धापूर्वक मन्जूर करनी चाहिये तथापि न्यायाम्भोनिधिजी 'जैन० ना०' पु० के पृष्ठ ४१-४२में पूर्वधर महाराजकृत श्रीआवश्यक चूर्णिके पाठ पर और

उत्तमपुरुषोंके बनाये ग्रन्थों पर श्रद्धा नही रखते हुये अपने अन्तरके मिथ्यात्वको प्रगट करके भोले जीवोंको भी शुद्ध श्रद्धारूपी सम्यक्त्व रखसें भ्रष्ट करनेका कार्य्य किया सो भी महान् उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तारसें निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ ११८ सें पृष्ठ १५५ तक छपगया है।

१५ पंदरहमा—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने चैत्य-वन्दनादिके सूत्रोंके उपधान कहे है तथा खास न्यायां-भोनिधिजी भी अपना बनाया 'तत्त्वनिर्णय प्रासाद' नामा ग्रन्थके पृष्ठ ४५७ सें ४६४ तक उपधानकी व्याख्या उपर मुजबही करी है और श्रीभगवतीजीमें सामायिकको स्वयं आत्मा कहा है इसलिये आत्माके उपधान नही होते हैं और किसी भी शास्त्रमें सामायिकके उपधान नही लिखे हैं तथापि 'जैन० ना०' पु० के पृष्ठ ४३ में सामायिकके उप-धान ठहराते हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १५६सें १६९ तक छपगया है।

१६ सोलहमा—श्रीदशवैकालिकजी सूत्रकी चूलिकामें श्री-सीमंधरस्वामीजी महाराजने साधुकेही अधिकारका वर्णन किया है सो प्रसिद्ध है तथापि न्याय०ने 'जैन० ना० पु०के' पृष्ठ ४४-४५ में श्रीहरिभद्रसूरिजीकृत बृहद्वृत्तिके पाठको अगाड़ी का पिछाड़ी और पिछाड़ीका अगाड़ी उलट पुलट करके भी अधूरा लिखके फिर पृष्ठ ४५ के अन्तमें साधुके अधिकार वाले पाठको श्रावकके अधिकारमें स्थापन करनेके लिये खूबही परिश्रम किया है सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्म० के' पृष्ठ १७० सें १९५ तक छपगया है।

१७ सतरहमा—श्रीजैनधर्माचार्य्यजी पूर्वापर विरोध

रहित अविसंवादीपने ग्रन्थ रचना करते हैं तथापि न्या०ने जैन० ना० पु० के पृष्ठ ४७ में श्रीखरतरगच्छनायक श्रीनवाङ्गी वृत्तिकार सुप्रसिद्ध श्रीमदभयदेव सूरिजी महाराजको और श्रीतपगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीमद्देवेन्द्रसूरिजी महाराजको विसंवादी पूर्वापर विरोधि लिखनेवाले ठहराये हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तारसें निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ १९७ सें २१६ तक छपगया हैं।

१८ अठारहमा—श्रीखरतरगच्छके श्रीवर्द्धमानसूरिजीने आचारदिनकर नामा ग्रन्थमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही खुलासा पूर्वक लिखी है जिसका तात्पर्य्य समझे विना न्या०ने 'जैन० ना० पु० के' पृष्ठ ४८ के आदिमें सामायिकसें प्रथम इरियावही स्थापन करने के लिये परिश्रम करके लिखा है सो भी उत्सूत्र भाषणरूप है इसका निर्णय 'आत्म० के' पृष्ठ २१९।२२०।२२१ तक छप गया है।

१९ एकोनवीशहमा—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी महान् परम्परानुसार श्रीखरतरगच्छमें प्रथम करेमिभंतेके उच्चारण करनेका अखण्डित व्यवहार आज तक चला आता है तथापि न्या० ने 'जैन० ना० पु०' के पृष्ठ ४८ के मध्यमें प्रथम इरियावहीकी परम्परा ठहराई हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका निर्णय 'आत्म० के पृष्ठ' २२३—२२४ में छपगया है।

२० वीशहमा—श्रीआवश्यकचूर्णि, वृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति, श्रीपञ्चाशकवृत्ति, चूर्णि, श्रीयोगशास्त्रवृत्ति, वगैरह अनेक शास्त्रोंकी सामायिक विधिको न्या०ने 'जैन० ना० पु० के'

रूपी मिथ्यात्वको बढ़ाने वाला झगड़ा (अविसंवादी श्री-जैनशासनमें इस वर्त्तमान कालके बालजीवोंकी श्रद्धाभ्रष्ट करनेके लिये) श्रीआत्मारामजीने अपनी विद्वत्ताके अभिमानसें खूबही फैलाया है ;—

और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण करनेका निषेध करके प्रथम इरियावही स्थापन करने सम्बन्धी ऊपरोक्त जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें जैसे उत्सूत्र भाषणोंसें मिथ्यात्व फैलाया है तैसेही श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणक निषेध करके पाँच कल्याणक स्थापन करने वगैरह कितनी बातोंमें भी खूबही उत्सूत्र भाषणोंसे मिथ्यात्व फैलाया है जिसका खुलासा आगे लिखुंगा—

और श्रीआत्मारामजीको अपने पूर्व भवके पापोदयसें पहिले ढूंढियोंके मिथ्या कल्पित मतमें दीक्षा लेनी पड़ी थी वहाँ भी अपने कल्पित मतके कदाग्रहकी बात जमानेके लिये अनेक शास्त्रोंके उलटे अर्थ करते थे तथा अनेक शास्त्रोंके पाठोंको छोड़के अनेक जगह उत्सूत्र भाषण करके संसार वृद्धिका भय न करते हुवे भोले दृष्टिरागियोंको मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें गेरते थे और मिथ्यात्वरूप रोगके उदयसें श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञा मुजब सत्य बातोंको कल्पित समझते थे और श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञा विरुद्ध अपने मत पक्षकी कल्पित मिथ्या बातोंकों सत्य समझते थे और हजारों श्रीजैन शास्त्रोंको उत्थापन करके सत्य बातोंके निन्दक शत्रु बनते थे इत्यादि अनेक तरहके कार्य्योंसें अपने ढूंढक मतकी मिथ्या कल्पित बातोंको पुष्ट करके अपने मतको फैलाते थे परन्तु कितनेही वर्षोंके बाद अपने पूर्व भवके [illegible] होनेसें ढूंढकमतके पाख-

सहकोसवपोल दिनदिनप्रति खुलतीगई जिससे कल्पित ढूंढकमत को श्रीजैनशास्त्रोंकेविरुद्ध और संसारवृद्धिका हेतु भूत जानकर छोड़दिया और श्रीजैनशास्त्रोंके प्रमाणानुसार सत्यबातोंको ग्रहण करनेके लिये संवेगपक्ष अङ्गीकारकरके अनेकशास्त्रोंका अवलोकनकिया और श्रीजैनतत्त्वादर्श, अज्ञानतिमिरभास्कर, तत्त्वनिर्णयप्रासाद वगैरह भाषाके ग्रन्थोंका संग्रह करके प्रसिद्धभी कराये जिससे विद्वान्भी कहलाये तथा ढूंढकमतकी मिथ्यात्वरूप पाखन्डके भ्रमजालसे कितनेही भव्यजीवोंका उद्धार भी किया और अनेक भक्तजनोंसे खूबही पूजाये-शिष्य-वर्गका समुदाय भी बहुत हुवा तथा शुद्ध प्ररूपक, उत्कृष्टिक्रिया करने वाले भी कहलाये और श्रीमद्विजयानन्दसूरि-न्यायाम्भोनिधिजीवगैरह पदवियोंकोभी प्राप्तभये जिससे दुनियामें प्रसिद्ध भी हुवे परन्तु यह तो दुनियामें प्रसिद्ध बात है, कि-जिस आदमीका जो स्वभाव पहिलेसे पड़ा होवे उस आदमीको कितनेही अच्छे संयोगोंसे चाहे जितना उत्तम गिनो अथवा श्रेष्ठ पदमें स्थापनकरो तो भी अपना पहिलेका पड़ा हुवा स्वभाव नहीं छुटता है सोही बात नीति शास्त्रोंके 'सुभाषितरत्न भान्डागारम्' नामा ग्रन्थके पृष्ठ १०६ में कही है। तैसाही वर्ताव न्यायाम्भोनिधिजी नामधारक श्रीआत्मारामजीने भी किया है, अर्थात्-पूर्वोक्त ढूंढकमतके साधुपनेमें अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थ-में अनेक जगह उत्सूत्र भाषणकरने वगैरहके कार्य्योंका जो पहिले स्वभाव था सो नहींजानेके कारणसे उसीमुजबही संवेगपक्षमें भी अपने विद्वत्ताके अभिमानसे कल्पितबातोंको स्थापन करनेके लिये पर भवका भय न करके एक 'जैनसिद्धान्त समाचारी' परन्तु वास्तवमें "उत्सूत्रोंके कुयुक्तियोंकी भ्रमजाल" नामक पुस्तकमें अनुमान १६० शास्त्रोंकेविरुद्ध लिखके, ६० जगह अन्दाज उत्सूत्र

पृष्ठ ४८ के मध्यमें तुच्छ शब्दसे लिखके (शास्त्रों की तथा शास्त्रकार श्रीपूर्वधरादि महाराजोंकी आशातना करके) निषेध करी हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है इसका विस्तार 'आत्म०के' पृष्ठ २२५ से छपना सरू है ।

२१ एकवीशहमा–श्रीजैनशास्त्रोंमे सर्व जगह सामायिक सम्बन्धी प्रथम करेमिभते करनेकी एकही विधि है तथापि न्या० ने जैन० ना० पु० के पृष्ठ ४८ अन्तमें सामायिक सम्बन्धी पूर्वापर विरोधी दो विधि स्थापन करी हैं सो भी उत्सूत्र भाषण है उसका निर्णय 'आत्मभ्रमोच्छेदन-भानुः' नामा ग्रन्थमें छपना सरू है ।

ऊपर मुजब २१ प्रकारके उत्सूत्र भाषण न्यायाम्भोनिधि जीनें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लिये लिखे हैं और कितनी जगह मायावृत्तिरूप, कितनीही जगह प्रत्यक्ष मिथ्या, कितनीही जगह अन्याय कारक, कितनीही जगह श्रीजैनशास्त्रोंके अतीव गहनाशयको समझे विना उलटा भी लिख दिया है इत्यादि अनेक तरहके अनुचित लेखों करके सामायिकमें प्रथम इरियावही (श्रीजैनशास्त्रोंके तथा श्रीजैनाचार्य्योंके विरुद्ध) स्थापनेके लिये अपने तथा अपने पक्षधारियोंके ससार वृद्धिके निमित्तभूत खूबही परिश्रम किया है उसीके सबका निर्णय देखनेकी इच्छा होवे तो 'आत्मभ्रमोच्छेदनभानुः' में शास्त्रार्थपूर्वक युक्ति सहित अच्छी तरहसें होगया है सो पढ़नेसें सर्व खुलासा हो जावेगा–और पर्युषणासम्बन्धी यह ग्रन्थ प्रसिद्ध होये बाद थोड़ेही दिनोंमें 'आत्मभ्रमो-च्छेदनभानुः' भी प्रगट होनेका सम्भव है ।

अब सत्यग्राही सज्जनपुरुषोंको निष्पक्षपाती हो करके विचार करना चाहिये कि–एक सामायिक विषयमें प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सम्बन्धी २१ शास्त्रोंके प्रत्यक्ष प्रमाणोंको न्यायके समुद्र हो करके भी श्रीआत्मारामजीने छोड़ दिये और आप उन्ही शास्त्रोंके पाठोंकी श्रद्धा रहित बनकरके उन्ही शास्त्रोंके तथा उन्ही शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लिये ऊपरोक्त कैसा अनर्थ करके–कहीं उपधानसम्बन्धी, कहीं साधुके जाने आने सम्बन्धी, कहीं चैत्यवन्दनसम्बन्धी, कहीं स्वाध्यायसम्बन्धी, कहीं षड़ावश्यकरूप प्रतिक्रमणसम्बन्धी, कहीं पौषधसम्बन्धी, इत्यादि अनेक तरहके अन्य अन्य विषयोंके सम्बन्धमें शास्त्रकार महाराजोंने इरियावही कही है जिसके बदले उन्हीं शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापन करनेके लिये आगे पीछेके पाठोंकों छोड़ करके अधूरे अधूरे पाठ लिखते न्यायाम्भोनिधिजीको पर भवका कुछ भी भय नही लगा और इस लौकिकमें भी अपनी विद्वत्ताकी हासी करानेके कारणरूप इतना अन्याय करते कुछ शर्म भी नहीं आई इसलिये सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही सबी गच्छोंके प्रभाविक पुरुषोंने अनेक शास्त्रोंमें प्रत्यक्ष पने अविसंवादरूप खुलासा पूर्वक लिखी है जिसको जानते हुवे भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके जोरसे श्रीहरिभद्रसूरिजी, श्रीअभयदेवसूरिजी, श्रीदेवेन्द्रसूरिजी वगैरह प्रभाविक पुरुषोंको विसंवादीका मिथ्या दूषण लगा करके सामायिकमें प्रथम इरियावही स्थापनेका विसंवाद-

रूपी मिथ्यात्वको बढ़ाने वाला झगड़ा (अविसंवादी श्री-जैनशासनमें इस वर्तमान कालके बालजीवोंकी श्रद्धाभ्रष्ट करनेके लिये) श्रीआत्मारामजीने अपनी विद्वत्ताके अभिमानसें खूबही फैलाया है ;—

और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण करनेका निषेध करके प्रथम इरियावही स्थापन करने सम्बन्धी ऊपरोक्त जैनसिद्धान्त समाचारी नामक पुस्तकमें जैसे उत्सूत्र भाषणोंसें मिथ्यात्व फैलाया है तैसेही श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणक निषेध करके पाँच कल्याणक स्थापन करने वगैरह कितनी बातोंमें भी खूबही उत्सूत्र भाषणोंसे मिथ्यात्व फैलाया है जिसका खुलासा आगे लिखुंगा—

और श्रीआत्मारामजीको अपने पूर्व भवके पापोदयसें पहिले ढूंढियोंके मिथ्या कल्पित मतमें दीक्षा लेनी पड़ी थी वहाँ भी अपने कल्पित मतके कदाग्रहकी बात जमानेके लिये अनेक शास्त्रोंके उलटे अर्थ करते थे तथा अनेक शास्त्रोंके पाठोंको छोड़के अनेक जगह उत्सूत्र भाषण करके संसार वृद्धिका भय न करते हुये भोले दृष्टिरागियोंको मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें गेरते थे और मिथ्यात्वरूप रोगके उदयसें श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा मुजब सत्य बातोंको कल्पित समझते थे और श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा विरुद्ध अपने मत पक्षकी कल्पित मिथ्या बातोंकों सत्य समझते थे और हजारों श्रीजैन शास्त्रोंको उत्थापन करके सत्य बातोंके निन्दक शत्रु बनते थे इत्यादि अनेक तरहके कार्योंसें अपने ढूंढक मतकी मिथ्या कल्पित बातोंको पुष्ट करके अपने मतको फैलाते थे परन्तु कितनेही वर्षोंके बाद

बहुकोसअपोल दिनदिनप्रति खुलतीगई जिससे कल्पित ढूंढकमत को श्रीजैनशास्त्रोंकेविरुद्ध और संसारवृद्धिका हेतु भूल जानकर छोड़दिया और श्रीजैनशास्त्रोंके प्रमाणानुसार सत्यबातोंको ग्रहण करनेके लिये संवेगपक्ष अङ्गीकारकरके अनेकशास्त्रोंका अवलोकनकिया और श्रीजैनतत्वादर्श, अज्ञानतिमिरभास्कर, तत्त्वनिर्णयप्रासाद वगैरह भाषाके ग्रन्थोंका संग्रह करके प्रसिद्धभी कराये जिससे विद्वान्भी कहलाये तथा ढूंढकमतकी मिथ्यात्वरूप पाखण्डके भ्रमजालसे कितनेही भव्यजीवोंका उद्धार भी किया और अनेक भक्तजनोंसे खूबही पूजाये-शिष्य-वर्गका समुदाय भी बहुत हुवा तथा शुद्ध प्ररूपक, उत्कृष्टक्रिया करने वाले भी कहलाये और श्रीमद्विजयानन्दसूरि-न्यायाम्भो-निधिजीवगैरह पदवियोंकोभी प्राप्तभये जिससे दुनियामें प्रसिद्ध भी हुवे परन्तु यह तो दुनियामें प्रसिद्ध बात है, कि-जिस आदमीका जो स्वभाव पहिलेसे पड़ा होवे उस आदमीको कितनेही अच्छे संयोगोंसे चाहे जितना उत्तम गिनो अथवा श्रेष्ठ पदमें स्थापनकरो तो भी अपना पहिलेका पड़ा हुवा स्वभाव नहीं छुटता है सोही बात नीति शास्त्रोंके 'सुभाषितरत्न भाण्डागारम्' नामा ग्रन्थके पृष्ठ १०६ में कही है। तैसाही वर्ताव न्यायाम्भोनिधिजी नामधारक श्रीआत्मारामजीने भी किया है, अर्थात् पूर्वोक्त ढूंढकमतके साधुपनेमें अनेक शास्त्रोंके विरुद्धार्थ-में अनेक जगह उत्सूत्र भाषणकरने वगैरहके कार्य्योंका जो पहिले स्वभाव था सो नहींजानेके कारणसे उसीमुजबही संवेगपक्षमें भी अपने विद्वत्ताके अभिमानसे कल्पितबातोंको स्थापन करनेके लिये पर भवका भय न करके एक 'जैनसिद्धान्त समाचारी' परन्तु वास्तवमें "उत्सूत्रोंके कुयुक्तियोंकी भ्रमखाड" नामक पुस्तकमें अनुमान १६० शास्त्रोंकेविरुद्ध लिखके, ६० जगह अन्दाज उत्सूत्र

भापण भी लिखे हैं जिसके नमूनारूप एक सामायिक विषय सम्बन्धी संक्षिप्तसे ऊपरमेंही लिखनेमें आया है, और पर्युषणाके विषयमें भी अनेक जगह उत्सूत्र भापण किये हैं उसकी भी समीक्षा इसही ग्रन्थके पृष्ट १५१ से २१६ तक छप गई है सो पढ़नेसे निष्पक्षपाती सत्यग्राही सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे।

और 'शुद्धसमाचारी'की पुस्तकमें पौषधाधिकारे, विधिमार्गमें उत्सर्गसे-अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा और अमावस्या इनच्यारों पर्वतिथियोंमें पौषध करनेसम्बन्धी श्रीसूयगडांगजी, उत्तराध्ययन जी,उववाईजी, धर्मरत्नप्रकरण वृत्ति, योगशास्त्र वृत्ति, धर्मबिन्दु वृत्ति, नवपद प्रकरण वृत्ति, समवायांग वृत्ति, पंचाशक वृत्ति, आवश्यक चूर्णि, तथा वृहद् वृत्ति, और श्रीभगवतीजीसूत्र वृत्ति, वगैरह शास्त्रोंके पाठ दिखाये थे जिसका तात्पर्यार्थको समझे विना शास्त्रोंके विरुद्ध होकर हमेशां पौषधकरनेका ठहरानेके लिये श्रीआवश्यकसूत्रकी चूर्णिमें तथा वृहद्वृत्तिमें और लघुवृत्तिमें और श्रीप्रवचनसारोद्धार वृत्तिमें, श्रीसमवायांगजीसूत्रकी वृत्तिमें श्रीपंचाशकजीकी चूर्णिमें तथा वृत्तिमें और श्रीउपाशकदशांग वृत्ति वगैरह अनेक शास्त्रोंमें श्रावककी ११ पडिमाके अधिकारमें पांचवी पडिमाकी विधिमें "श्रावक दीनमें ब्रह्मचर्य व्रत पाले और रात्रिको नियम करे" ऐसे खुलासे पाठ हैं तिसपरभी न्यायां-भोनिधिजीने अन्धपरंपरासे विवेक शून्यहोकर शास्त्रकार महा-राजोंकेविरुद्धार्थमें अपनीमतिकल्पनासे श्रीआवश्यकवृत्ति वगैरहके पाठका"दिवसका ब्रह्मचर्यपाले रात्रिको कुशीलसेवे" ऐसा वीप-रीत अर्थ करके मैथुन सेवनकी हिंसाका उपदेश करनेका शास्त्र-कारोंको झूठा दूषण लगाके वडाभारी अनर्थ करके जैनसिद्धांत मक पुस्तकमें दुर्लभबोधिका कारण किया है

इत्यादि, इसी तरहसे अनेक बातोंमें बहुत उत्सूत्रोंसे बड़ा अनर्थ किया है उसके सबका निर्णयतो "आत्मभ्रमोच्छेदन भानुः" के अवलोकनसे अच्छी तरहसे हो जावेगा।

और न्यायाम्भोनिधिजीने 'जैनसिद्धान्त समाचारी' पुस्तकका नाम रक्खा परन्तु वास्तवमें उत्सूत्र भाषणोंके और कुयुक्तियोंके संग्रहकी पुस्तक होनेसे आत्मार्थी भव्यजीवोंके मोक्षसाधन में विघ्नकारक और श्रीजिनाज्ञासे बालजीवोंकी श्रद्धाभ्रष्ट करनेवाली मिथ्यात्वके पाखन्डकी भ्रमजालरूप है सो इसके बनानेवालोंको, तथा ऐसी जाल बनानेमें संसारवृद्धिकी हेतु भूत खूबही दलाली कौशिस करनेवालोंको, और मिथ्यात्वको बढ़ा करके संसारमें भ्रमानेवाली ऐसीजाल प्रगट करनेमें श्रीभावनगरकी श्रीजैनधर्मप्रसारकसभाके मेम्बरलोग उस समय आगेवान् हुए जिन्होंको, और इसके बनानेकी खुसीमानकर अनुमोदना करनेवालोंको और इसी मुजब अन्धपरंपराके गड्डरीह प्रवाहकी तरह चलकर श्रीजिनाज्ञानुसार सत्यबातों की निन्दा करनेवालोंको, श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक सम्यक्त्वी आत्मार्थी जैनी कैसे कहे जावे इस बातको तत्त्वग्राही मध्यस्थ सज्जनस्वयं विचारलेवेंगे—

और शास्त्रोंकेविरुद्ध उत्सूत्रप्ररूपणा करनेवालेको मिथ्यात्वी अनन्त संसारी अनेकशास्त्रोंमें कहाहै और न्यायाम्भोनिधिजी नाम धारक श्रीआत्मारामजीने तो एक 'जैनसिद्धान्त समाचारी' नामक पुस्तकमें इतने शास्त्रोंके विरुद्ध लिखके इतने उत्सूत्र भाषण किये हैं तो फिर पहिले ढूंढकमतकी दीक्षामें और अन्यकार्योंमें कितने उत्सूत्रभाषण करकेकितने शास्त्रोंकेविरुद्ध प्ररूपणाकरी होगी जिसके फल विपाकका कितना अनन्त संसार बढ़ाया होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने।

और न्यायाम्भोनिधिजीने श्रीजैनतत्त्वादर्शमें, अज्ञान तिमिर भास्करमें, और श्रीजैनधर्म्मविषयिक प्रश्नोत्तर नामा पुस्तकमेंभी उत्सूत्रभाषणरूपलिखाहै जिसकेसम्बन्धमें आगे लिखनेमें आवेगा

और इस तरहसे अनेक शास्त्रोंकेपाठोंकी मर्य्यादारहित तथा शास्त्रोंके आगेपीछेके सम्बन्धवालेपाठोंको छोड़करके शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें अधूरे अधूरे पाठलिखके उलटे वीपरीत अर्थ करनेवाले और शास्त्रकारमहाराजोंको विसंवादीका-मिथ्या दूषण लगानेवाले और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार सत्यबातोंका उत्थापन करके अपनी मतिकल्पनासे अन्धपरम्पराकी मिथ्या बातोंको स्थापन करते हुवे। अविधिरूप उन्मार्गके पाखण्डको फैलानेमें सार्थवाहकी तरह आगेवान बननेवाले और अपनेही गच्छके प्रभावक पुरुषों को दूषित ठहरानेवाले और बाल जीवोंको सत्य बातोंके निन्दक बना करके दुर्लभबोधिके कारणसे संसारकीखाड़मे गेरनेवाले ऐसे ऐसे महान् अनर्थ करनेवालेको गच्छपक्षकादृष्टिरागसे-गीतार्थ, न्यायाम्भोनिधिजी (न्यायके समुद्र) और युगप्रधान, कलिकाल सर्वज्ञ समान जैनाचार्य्य वगैरहकी लम्बी लम्बी ओपमालगाके ऐसे उत्सूत्री गाढ़कदाग्रहियोंकी महिमा बढ़ा करके आडंबरसे भोले जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें फँसानेके लिये उत्सूत्रभाषणोंके महान् अनर्थका विचार न करके उपरोक्त मिथ्या गुण लिखने-वालोंकी क्यागतिहोगी तथा कितनासंसारबढ़ावेंगे औरसम्यक्त्व रत्न कैसे प्राप्तकर सकेंगे सो तो श्रीज्ञानीजीमहाराज जाने।

अब श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषोंको मेरा इतनाही कहना है कि ऊपरके लेखको पढ़के दृष्टिरागके पक्षपातको न रखते हुये संसार वृद्धिकी

हेतुभूत मिथ्या बातको छोड़ करके आत्मकल्याणके लिये सत्य बातोंके तत्त्वग्राही होना चाहिये और छठे महाशय जीनें ढूंढियांको भी अपने सामिल करके सामायिकसम्बन्धी तथा कल्याणक सम्बन्धी और जैनसिद्धान्त समाचारी सम्बन्धी लिखके अपने पक्षकी बात जमानेका परिश्रम किया इसलिये मेने भी सामायिक सम्बन्धी और जैनसिद्धान्त समाचारी सम्बन्धी ऊपरमें इतना लिखके सत्यग्राही भव्यजीवोंको संक्षिप्तसे शास्त्रार्थ दिखाया है और कल्याणक सम्बन्धी पर्युषणका विषय पूरा हुवे बाद पीछेसे लिखनेमें आवेगा सो पढ़नेसें सर्व निर्णय हो जावेंगा ;—

अब छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीको मेरा (इस ग्रन्थकारका) इतनाही कहना है कि आषाढ़चौमासीसें पचास दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालोंको आपने आज्ञा भङ्गका दूषण लगाया तब श्रीलश्करसे श्रीबुद्धिसागरजीनें आपको पत्रद्वारा शास्त्रका प्रमाण पूछा उन्हको शास्त्रका प्रमाण आपने बताया नही और छापेमें भी पर्युषणा विषयसम्बन्धी शास्त्रार्थ पूर्वक निर्णय करना छोड़ करके अपनी बात जमानेके लिये निष्प्रयोजनकी अन्य अन्य बातोंको लिखके प्रगट करी और अन्यायसें विशेष झगड़ा फैलानेका कारण किया इसलिये मेने भी आपके अन्यायको निवारण करनेके लिये मुख्य मुख्य बातोंका संक्षिप्तसें खुलासा करके सत्य तत्त्वग्राही सज्जन पुरुषोंको दिखाया हैं जिसको पढ़नेसे न्याय अन्यायका तथा श्रीजिनाज्ञाके आराधक विराधकका निर्णय निष्पक्षपाती पाठकवर्ग स्वयं कर लेवेंगे और मरिचिनें एक उत्सूत्र भाषणसें एक कोड़ा कोड़ी सागरोपम जितना

संसार बढ़ाया इस न्यायानुसार आपके गुरुजी न्यायाम्भो- निधिजीने इतने उत्सूत्र भाषणोंसें कितना संसार बढ़ाया होगा सो तो आप लोगोंको भी न्याय दृष्टिसें हृदयमें विचार करना उचित है और अब आप लोग भी उसी तरहके उत्सूत्र भाषणोंसें मिथ्या झगड़ा करते हुए श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञानुसार मोक्षमार्गकी हेतुरूप सत्यबातोंका निषेध करके श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध संसार वृद्धिकी हेतुभूत मिथ्या कल्पित बातोंको स्थापन करके बाल जीवोंको सत्यबात परसे श्रद्धाभ्रष्ट करते हो और मिथ्यात्वको बढ़ाते हो सो कितना ससार बढ़ावोगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने-यदि आपको ससार वृद्धिका भय होवे और श्रीजिनाज्ञाके आराधन करनेकी इच्छा होवे तो जमालिके शिष्योंकी तरह आपभी करों तथा न्यायाम्भोनिधिजीके समुदायवालोंको भी ऐसेही करना चाहिये क्योंकि जमालिके उत्सूत्र परूपनाकी उन्हके शिष्योंको जबतक मालूम नही थी तबतक तो जमालिके करने मुजबकी सत्य माना परन्तु जब अपने गुरुकी श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध उत्सूत्र परूपनाकी मालूम होगई तब उसीको छोड़ करके श्रीवीरप्रभुजीके पास आकर सत्यग्राही होगये तैसेही न्यायाम्भोनिधिजीके शिष्यवर्गमें भी जो जो महाशय आत्मार्थी सत्य ग्राही होवेंगे सो तो दृष्टिरागका पक्षको न रखके अपने गुरुकी उत्सूत्र भाषणकी बातोंको छोड़कर शास्त्रानुसार सत्य बातोंको ग्रहण करके अपनी आत्माका कल्याण करेंगे और भक्तजनोंको करावेंगे ।

इति छठे महाशयजीके लेखकी संक्षिप्त समीक्षा समाप्ता ।

और सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीकी तरफसें 'पर्युषणा विचार'नामा छोटीसी १० पृष्ठकी पुस्तक प्रगट हुई है जिसमें पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके विरुद्ध तथा श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी और खास अपनेही गच्छके पूर्वाचार्य्योंकी आशातना कारक और सत्य बातका निषेध करके अपने गच्छ कदाग्रहकी मिथ्या कल्पित बातको स्थापन करनेके लिये श्रीजैनशास्त्रोंके अतीव गहनाशयको समझे बिना शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें बिना सम्बन्धके और अधूरे अधूरे पाठ दिखाके उलटे तात्पर्य्यसें उत्सूत्र भाषण रूप अनेक कुतर्कों करके अपने पक्षके एकान्त आग्रहसें दूसरोंको मिथ्या दूषण लगाके भोले जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरे है और अपनी विद्वत्ताकी हासी कराई है इसलिये अब मैं इस जगह भव्य जीवोंके मिथ्यात्वका भ्रम दूर होनेसें शुद्ध श्रद्धानरूपी सम्यक्त्वकी प्राप्तिके उपगारके लिये और विद्वत्ताके अभिमानसें उत्सूत्र भाषण करनेवालोंको हित शिक्षाके लिये पर्युषणा विचारके लेखकी समीक्षा करके दिखाता हूं ;—

यद्यपि पर्युषणा विचारकी पुस्तकमें लेखक नाम विद्याविजयजीका छपा है परन्तु यह ग्रन्थकार उसीकी समीक्षा उन्होंके गुरुजी श्रीधर्मविजयजीके नामसें लिखता हैं जिसका कारण इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ६७।६८ में छपगया है और आगे भी छपेगा इसलिये इस ग्रन्थकारको सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीके नामसेही समीक्षा लिखनी युक्त है सोही लिखता हे जिसमें प्रथमही पर्युषणा विचारके लेखकी आदिमें लिखा है कि (आत्मकल्याणाभिलाषी भव्यजीव

निर्मूलता समूलताका विचार छोड़ अपनी परम्परा पर आरूढ़ होकर धर्मकृत्योंको करते हैं) इस लेखको देखतेही मेरेको बड़ाही विचार उत्पन्न हुवा कि–सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजी और उन्होंकी समुदायवाले साधुजी बहुत वर्षोंसें काशीमें रह करके अभ्यास करते हैं इसलिये विद्वान् कहलाते हैं परन्तु श्रीजैनशास्त्रोंका तात्पर्य्य उन्होंकी समझमें नही आया मालूम होता हैं क्योंकि आत्मार्थी प्राणियोंको निर्मूलता समूलता इन दोनुंका विचार अवश्यमेव करना उचित है और निर्मूलता, याने–शास्त्रोंके प्रमाण बिना गच्छ कदाग्रहके परम्पराकी जो मिथ्या बात होवे उसीको छोड़ देना चाहिये और समूलता, याने शास्त्रोंके प्रमाणयुक्त कदाग्रह रहित गच्छ परम्पराकी जो सत्य बात होवे उसीको ग्रहण करना चाहिये और हेय, ज्ञेय, उपादेय, इन तीनो बातोंकी खास करके प्रथमही विचारनेकी आवश्यकता श्रीजैनशास्त्रोंमें खुलासा पूर्वक दर्शाई है. इसलिये निर्मूलता, हेय त्यागने योग्य होनेसें और समूलता, उपादेय ग्रहण करने योग्यहोनेसें दोनुं का विचार छोड़ देना कदापि नही हो सकता है और आत्मकल्याणाभिलाषी निर्मूलता त्यागने योग्यका तथा समूलता ग्रहण करने योग्यका विचार जबतक नही करेगा तबतक उसीको श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध वर्त्तनेका अथवा श्रीजिनाज्ञा मुजब वर्त्तनेका, बन्धका अथवा मोक्षका, मिथ्यात्वका अथवा सम्यक्त्वका, संसार वृद्धिका अथवा आत्मकल्याणके कार्य्योंका, भेदभावके निर्णयको प्राप्त नही हो सकेगा और जबतक ऊपरकी बातोंकी भिन्नताको नही

समझेगा तबतक उसीको आत्म कल्याणकारस्ता भी नही मिलेगा तो फिर भाव करके श्रीजिनाज्ञा मुजब श्रावकधर्म और साधुधर्म कैसे बनेगा याने-निर्मूलता समूलताका विचार छोड़ करके धर्मकृत्योंके करनेवालोंको मोक्ष साधन नही हो सकेगा है क्योंकि उन्होंका धर्मकृत्य तो तत्वा-तत्वका उपयोगशून्य होजाता है इसलिये आत्मार्थी प्राणियोंको निर्मूलता समूलताका विचार करना अवश्यही युक्त है तथापि सातवे महाशयजीने दोनुंका विचार छोड़नेका लिखा हैं सो जैनशास्त्रोंके विरुद्ध होनेसें मिथ्यात्वका कारणरूप उत्सूत्र भाषण है इस बातको तत्वज्ञ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और (अपनी परम्परा पर आरूढ़ होकर धर्मकृत्योंको करते हैं) सातवें महाशयजीके इन अक्षरों पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि-अपनी परम्परापर आरूढ होकर धर्मकृत्योंको करनेका जो आप कहते हो तब तो पर्युषणा विचारके लेखमें आपको दूसरोंका खण्डन करके अपना मण्डन करना भी नही बनेगा क्योंकि सबी गच्छवाले अपनी अपनी परम्परापर आरूढ़ होकर धर्मकृत्य करते हैं जिन्होंका खण्डन करके अपना मण्डन करना सो तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक वृथा है और परम्परा द्रव्य और भावसें दो प्रकारकी शास्त्रकारोंने कही है जिसमें पञ्चाङ्गीके प्रमाण रहित वर्त्ताव सो तो गच्छ कदाग्रहकी द्रव्य परम्परा संसार वृद्धिकी हेतु भूत होनेसें आत्मार्थियोंको त्यागने योग्य है और पञ्चाङ्गीके प्रमाण सहित वर्त्ताव सो भाव परम्परा मोक्षकी कारण होनेसें आत्मार्थियोंको प्रमाण करने योग्य हैं

और द्रव्य भाव परम्पराका विशेष विस्तार देखनेकी इच्छा होवे तो श्रीखरतरगच्छनायक सुप्रसिद्ध श्रीनवाङ्गी वृत्तिकार श्रीअभयदेवसूरिजीकृत श्रीआगम-अष्टोत्तरी नामा ग्रन्थ 'आत्म हितोपदेश-नामा पुस्तकमें' गुजराती भाषा सहित श्रीअहमदाबादसें छपके प्रसिद्ध होगया है सो पढ़नेसें अच्छी तरहसें मालूम हो जावेगा ।

और श्री सर्वज्ञ कथित श्रीजैनशासन अविसंवादी होनेसे श्रीतीर्थङ्कर भगवानोंके जितने गणधर महाराज होते हैं उतनेही गच्छ कहे जाते हैं उन्ह सबीही गच्छवाले महानुभावोंकी ऐकही परूपना तथा एकही बर्ताव होता है और इस वर्तमान कालमें तो बहुतही गच्छवालोंके आपसमें अनेक तरहके विसंवाद होनेसें जुदी जुदी परूपना तथा जुदा जुदा वर्ताव है और बहुतही गच्छवाले अपने अपने गच्छकी परम्परा मुजब धर्मकृत्य करते हुवे आप श्रीजिनाज्ञाके आराधक बनते हैं और दूसरे गच्छवालोंको झूठे ठहरा करके निषेध करनेके लिये-राग, द्वेष, निन्दा, ईर्षासें खरडन मरडन करके, आपसमें बड़ाही भारी विसंवादसें मिथ्यात्वको बढ़ानेवाला झगड़ा करते हैं इसलिये वर्तमान कालमें अपनी अपनी परम्परापर दृढ़ रहने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्यात्वका कारणरूप उत्सूत्र भाषण है क्योंकि अपनी अपनी परम्परा पर आरूढ़ होकर धर्मकृत्य करने वाले सबी गच्छवाले श्री जिनाज्ञाके आराधक हो जावेंगे तो फिर अविसंवादी श्री जैनशासनकी मर्य्यादा कैसें रहेगा इसलिये वर्तमान कालमें अपने अपने गच्छपरम्पराकी बातोंका पक्षपात न रखते

हुवे श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध पञ्चाङ्गीके प्रमाण रहित कल्पित बातोंको छोड़ करके श्रीजिनाज्ञा मुजब पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाण पूर्वक सत्यबातोंको ग्रहण करके अपनी आत्माका कल्याण करनेके कार्य्योंमें उद्यम करना चाहिये जिससें आत्मकल्याण होगा नतु तत्वातत्वका विचारशून्य अन्धपरम्परामें—जैसे कि, ८० दिने पर्युषणा करना १, फिर मायावृत्तिसें अधिक मासका निषेध भी करना २, तथा श्री वीरप्रभुके छ कल्याणकोंका निषेध करना ३, और सामायिक करते पहिलेही इरियावही करना ४, और आंबीलमें अनेक द्रव्य भक्षण करने कराने ५, इत्यादि अनेक बातें शास्त्रोंके प्रमाण बिना गड्डरीह प्रवाहकी तरह आत्मार्थियोंको त्यागने योग्य गच्छ कदाग्रहकी द्रव्य परम्परासें प्रचलित है नतु शास्त्रोंके प्रमाणानुसार भावपरम्परासें क्योंकि श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें दिनोंकी गिनतीसें ५० दिने पर्युषणा कही है १, और अधिकमासको भी खुलासा पूर्वक गिनतीमें लिया है २, तथा श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोंको भी अच्छी तरहसें खुलासा पूर्वक कहे हैं ३, और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण करना कहा है ४, और आंबीलमें भी दो द्रव्योंका भक्षण करना कहा है ५, सोही ऊपरोक्त बातें शास्त्रानुसार भावपरम्परामें होनेसें आत्मार्थियोंको ग्रहण करने योग्य है इन ऊपरकी बातोंका निर्णय आठोंही महाशयोंके उत्सूत्र भाषणके लेखोंकी समीक्षा सहित इस ग्रन्थको संपूर्ण पढ़नेवाले निष्पक्षपाती तत्वग्राही सज्जन पुरुषोंको स्वयं मालूम हो जावेगा।

देखिये सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीने शास्त्रविशारदकी पदवीको अङ्गीकार करी है तथापि पर्युषणा विचारके लेखकी आदिमेंही श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझे बिना निर्मूलता समूलताका विचार छोड़ने सम्बन्धी और अपनी२ परम्परा पर आरूढ़ होकर धर्मकार्य कहने सम्बन्धी दो उत्सूत्रभाषण प्रथमही बालजीवोंको मिथ्यात्वमें फँसानेवाले लिख दिये और पूर्वापरका कुछ भी विचार विवेक बुद्धिसें हृदयमें नही किया इसलिये शास्त्रविशारद पदवीको भी लजाया–यह भी एक अलौकिक आश्चर्य्यकारक विद्वत्ताका नमूना है, खैर—अब पर्युषणा विचारके आगेका लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाता हूं—

पर्युषणा विचारका प्रथम पृष्ठके मध्यमें लिखा है कि– (पक्षपाती जन परस्पर निन्दादि अकृत्योंमें प्रवर्तमान होकर सत्यधर्मकी अवहेलना करते हैं) इस लेखपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सातवें महाशयजीने अपने कृत्य मुजब तथा अपने अन्तरगुण युक्त ही ऊपरका लेख में सत्यही दर्शाया है क्योंकि खास आपही अपने पक्षकी कल्पित बातोंको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनाज्ञा मुजब सत्यबातोंको निषेध करके सत्यबातोंकी तथा सत्यबातोंको माननेवालोंकी निन्दा करते हुवे कुयुक्तियोंसें बालजीवों को मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेके लियेही पर्युषणा विचारके लेखमें उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके अविसंवादी श्रीजैनशासनमें विसंवादका झगड़ा वढ़ानेसें श्रीजैनशासनरूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करनेमें कुछ कम नही किया है सो

तो पर्युषणाविचारके लेखकी मेरी लिखी हुई सब समीक्षाको पढ़नेवाले सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और आगे फिरभी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके प्रथम पृष्ठकी पंक्ति १५वीं सें पंक्ति१८ वीं तक लिखा है कि (क्षयोपशमिक मतिज्ञानवान् और श्रुतज्ञानवान् पुरुष वे युक्ति प्रयुक्ति द्वारा अपने अपने मन्तव्यके स्थापन करने के लिये अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुए मालूम पड़ते हैं) सातवें महाशयजीका यह लिखना उपयोगशून्यताके कारणसें है क्योंकि क्षयोपशमिक मतिज्ञानवान् और श्रुतज्ञानवान् पुरुष वे युक्तिप्रयुक्ति द्वारा अपने अपने मन्तव्यको स्थापन करनेके लिये अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले सातवें महाशयजी ठहराते है तो क्या वर्त्तमान कालमें साधु और श्रावक श्रीजिनाज्ञाकी सत्यबातरूपी अपना मन्तव्य स्थापन करनेके लिये और श्रीजैनशासनके निन्दक ढूंढिये और तेरहा पन्थी लोगोंको तथा अन्यमतियोंको भी समझानेके लिये युक्ति प्रयुक्ति करनेवाले सबीही अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले ठहर जावेंगे सो कदापि नहीं इसलिये सातवें महाशयजीका ऊपरका लिखना उत्सूत्र भाषणरूप भूलका भरा हुवा है क्योंकि जो जो कल्पित बातोंको स्थापन करनेके लिये जानते हुवे भी कुयुक्तियां करके बालजीवोंको मिथ्यात्वमें गेरेंगे सो अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले ठहरेंगे किन्तु सब नही ठहर सकते हैं परन्तु यह बात तो सत्य है कि 'जैसा खावे अन्न—तैसा होवे मन्न' इस कहावतानुसार अपने पक्षकी कल्पित बातें जमानेके लिये खास आप अनेक बातोंमें

अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करनेवाले हैं सो आगे लिखनेमें आवेगा ;—

और पर्युषणा विचारके प्रथम पृष्ठकी १९ वीं पंक्तिसें दूसरे पृष्ठकी पंक्ति दूसरी तक लिखाहै कि (सिद्धान्तका रहस्य ज्ञात होने पर भी एकांशको आगे करके असत्य पक्षका स्थापन और सत्य पक्षका निरादर करनेके लिये कटिबद्ध होकर प्रयत्न करते दिखाई पड़ते हैं) इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि सातवें महाशय-जीनें अपने कृत्य मुजबही जैसा अपना वर्ताव था वैसा ही उपरके लेखमें लिख दिखया है इसका खुलासा मेरा आगेका लेख पढ़नेसें पाठकवर्ग स्वयं विचार कर लेवेंगे ;—

और पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी पंक्ति ३से ६ तक लिखाहैं कि (तत्र वार्षिकपर्व भाद्रपदसितपञ्चम्यां कालिकसूरेरनन्तरं चतुर्थ्यामेवेति—अर्थात् भाद्रपद सुदी पञ्चमीका साम्वत्सरिक पर्व था पर युगप्रधान कालिकाचार्य्यके समयसे चतुर्थीमें वह पर्व होता है) इस लेख पर भी मेरेको इतना ही कहना है कि—सातवें महाशयजीनें उपरके लेखसें वर्त्तमान कालमें दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये परिश्रम किया सो भी उत्सूत्र भाषण है क्योंकि आषाढ़ चौमासीसें पचास दिने पर्युषणा करनेकी श्रीजैनशास्त्रोंमें मर्य्यादा पूर्वक अनेक जगह व्याख्या है इसलिये दो श्रावण होनेमें ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करना शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक है तथापि मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करते हैं सो मिथ्या हठवादमें उत्सूत्र भाषण करते हैं क्योंकि

मासवृद्धिके अभावमें पचास दिने भाद्रपदमें पर्युषणा कही है नतु मासवृद्धि दो श्रावण होते भी।

और आगे फिर भी पर्युषणा विचारके दूसरे पृष्ठकी ७ वी पंक्तिमें १८॥ वीं पंक्ति तक लिखा है कि (वासाणं सवी-सइराइ मासे वइक्कंते सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं इत्यादि समवायाङ्गसूत्रके पाठका पूर्वभाग 'सवीसइ राइमासे वइ-क्कंते' पकड़कर उत्तर पाठकी क्या गति होगी इसका विचार न रख मूलमन्त्रको अलग छोड़कर दूसरे श्रावण के सुदीमें पर्युषणापर्वके पाँचकृत्य 'संवत्सरप्रतिक्रान्ति र्लुञ्चनंचाष्टमं तपः। सर्वार्हद्भक्तिपूजा च सङ्घस्य क्षामणं मिथः' ॥ १ ॥ अर्थात् १ सांवत्सरिकप्रतिक्रमण, २ केशलुञ्चन, ३ अष्टमतपः, ४ सर्वमन्दिरमें चैत्यवन्दन पूजादि, ५ चतुर्विध सङ्घके साथ क्षामणा करते हैं और भक्तोंको कराते हैं)।

सातवें महाशयजीनें ऊपरके लेखमें दूसरे श्रावण शुदी में पांचकृत्यों सहित पर्युषणा करनेवालोंको श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्तर भागको छोड़ करके पूर्वभागको पकड़ने वाले ठहराये है सो अज्ञातपनेसें मिथ्या है क्योंकि श्रीसम-वायाङ्गजी सूत्रका पाठ मासवृद्धिके अभावसें श्रीजैनपञ्चाङ्गा-नुसार चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें चन्द्रसंवत्सर-सम्बन्धी प्राचीनकालाश्रयी है और वर्त्तमानकालमें श्री-कल्पसूत्रके मूल पाठानुसार तथा उन्हीकी अनेक व्याख्या-योंके अनुसार आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती हैं इसलिये श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका उत्तरभागको छोड़कर पूर्वभागको पकड़ने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है।

और (उत्तरपाठकी क्या गति होगी) सातवें महाशयजीका यह लिखना भी विद्वत्ताके अजीर्णताका है क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ चार मासके वर्षाकाल सम्बन्धी होनेसे चार मासके वर्षाकालमें उसी मुजब वर्त्ताव होता है परन्तु सातवें महाशयजी श्रीगणधर महाराज श्रीसुधर्मस्वामी जी कृत श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठका तथा श्रीअभयदेव सूरिजी कृत तद्वृत्तिके पाठका अभिप्राय जाने बिना सूत्रकार तथा वृत्तिकार महाराजके विरुद्धार्थमें दो श्रावणादि होनेसे पाँच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें उसी पाठको आगे करके बालजीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरते हुवे उत्सूत्र भाषणरूप कदाग्रह जमाते हैं सो क्या गति होगी सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने ।

देखिये यहेही आश्चर्य्यकी बात है कि-अपना कदाग्रहकी उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित बातको जमानेके लिये (उत्तरपाठकी क्या गति होगी) ऐसा तुच्छ शब्द लिखके श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रके पाठ पर आक्षेप करते कुछ लज्जा भी नही पाते हैं यह भी एक कलयुगी विद्वत्ताका नमुना है ।

और (मूलमन्त्रको अलग छोड़कर) यह लिखना भी 'चोर डंडे कोटवालको' इस न्यायानुसार खास सातवें महाशयजी आप अनेक बातोंमें मूलमन्त्ररूप अनेक शास्त्रोंके मूलपाठोंको अलग छोड़ते हैं फिर दूसरोंको मिथ्या दूषण लगाते हैं सो उचित नहीं है क्योंकि दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवाले श्रीकल्पसूत्रका मूलमन्त्ररूपी पाठके अनुसारही करते हैं और श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ चार मासके वर्षाकाल सम्बन्धी होनेसे उसी मुजबही वर्त्तते हैं इसलिये दूसरे

श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको मूलमन्त्रको अलग छोड़ने सम्बन्धी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है और सातवें महाशयजी अनेक बातोंमें मूलमन्त्ररूपी अनेक शास्त्रोंके मूलपाठोंको जानते हुवे भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके अधिकारी बन करके अलग छोड़ते हैं सोही दिखाता हूं ;—

१ प्रथम—हर वर्षे गांम गांममें वंचाता हुवा सुप्रसिद्ध श्रीकल्पसूत्रमें पर्युषणा सम्बन्धी मूलमन्त्ररूपी विस्तारसें पाठ है उसीके अनुसार इस वर्तमान कालमें श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी प्राणियोंको पर्युषणा करनी चाहिये तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करते हुवे (श्रीकल्पसूत्रका मूलमन्त्ररूपी पाठ इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ४। ५ में छप गया है) उसीको जानते हुवे भी अलग छोड़ते हैं और श्रीकल्पसूत्रके पाठानुसार दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगाते हुवे निषेध करते हैं इसलिये शास्त्रानुसार वर्त्तने वालोंकी वृथा निन्दा करके श्रीजिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना। (तिरस्कार) करने वाले काशीनिवासी सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजी है।

२ दूसरा—श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने अनन्त काल हुवे अधिकमासको गिनतीमें खुलासा पूर्वक प्रमाण किया है तथा आगे करेंगे और सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, वृत्ति, प्रकरणादि अनेक शास्त्रोंमें अधिक मासको गिनतीमें लेने सम्बन्धी विस्तार पूर्वक पाठ है सो कितनेही तो इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २७ से ६५ तक छप गये हैं

और भी अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करने सम्बन्धी अनेक शास्त्रोके प्रमाण आगे भी लिखनेमे आवेंगे उसीके अनुसार और कालानुसार युक्तिपूर्वक श्रीजिनाज्ञाके आराधन करने वाले आत्मार्थियोको अधिकमासकी गिनती निश्चय करके प्रमाण करनी चाहिये तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करते हुवे श्री अनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उत्थापन करके पञ्चाङ्गीके मूलमन्त्ररूपी प्रत्यक्ष पाठोको जानते हुवे भी अलग छोड़ते हैं और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणो सहित कालानुसार और सत्य युक्तिपूर्वक अधिकमासकी गिनती प्रमाण करते हैं जिन्होको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगा करके निषेध करते हैं इसलिये शास्त्रानुसार अधिक मासको प्रमाण करने वालोंकी वृथाही निन्दा करके श्रीजिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करनेवाले भी सातवें महाशयजी हैं।

३ तीसरा—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोने (श्री आचाराङ्गजी सूत्रकी चूलिकाके मूलपाठमें तथा श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रके पाचवें ठाणेके मूलपाठमें और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठ वगैरह) पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके मूलमन्त्ररूपी पाठोमे चरम तीर्थङ्कर श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणको को खुलासापूर्वक कहे हैं (इसका विशेष निर्णय शास्त्रोंके पाठो सहित आगे लिखनेमें आवेगा) इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पञ्चाङ्गीके शास्त्रोको श्रद्धावाले आत्मार्थी पुरुषोको प्रमाण करने योग्य है तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुये ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोको मूलमन्त्ररूपी

जानते हुवे भी अलग छोड़ते हैं और पञ्चाङ्गीके रूपं
क्रादि अनेक शास्त्रोंके अनुसार श्रीवीरप्रभुके छ कल्याण
को मानने वालोंको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगा क
निषेध करते हैं इसलिये भी शास्त्रानुसार श्रीवीरप्र
छ कल्याणकोंको माननेवालोंकी वृथाही निन्दा करके
जिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करने वाले भी सा
महाशयजी है।

४ चौथा–श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णि और वृहद्वृ
वगैरह पञ्चांगीके अनेक शास्त्रोंमें सामायिकाधिकारे प्र
करेमिभंतेका उच्चारण किये पीछे इरियावहीका प्रतिक्र
खुलासापूर्वक कहा है सोही श्रीजिनाज्ञाके आराधक
त्मार्थी पुरुषोंको प्रमाण करने योग्य है तथापि सा
महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुवे
रोक्त शास्त्रोंके पाठोंको मूलमन्त्ररूपी जानते हुवे भी अ
छोड़ करके उसीके विरुद्ध बालजीवोंको कराते हैं–दे
षड़ावश्यक करनेके लिये मूलमन्त्ररूपी श्रीआवश्यकजी
उसीकी चूर्णि और वृहद्वृत्तिके अनुसार उभयकाल (स
और सवेर दोनुं वख्त) षड़ावश्यकरूपी प्रतिक्रमण करने
मंजूर करते हैं तथापि उसी शास्त्रोंमें सामायिकाधिक
प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये पीछे इरियावही क
कहा है उसीको मंजूर नही करते हैं जिन्होंको मूलम
रूपी श्रीआवश्यकादि पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंकी श्रद्धावाले
जिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी कैसे कहे जावे और उन्हों
षड़ाश्यवक भी कैसे सार्थक होवेंगे सो तो श्रीज्ञानी
महाराज जाने और विशेष आश्चर्यकी बात तो

और भी अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करने सम्बन्धी अनेक शास्त्रोंके प्रमाण आगे भी लिखनेमें आवेंगे उसीके अनुसार और कालानुसार युक्तिपूर्वक श्रीजिनाज्ञाके आराधन करने वाले आत्मार्थियोंको अधिकमासकी गिनती निश्चय करके प्रमाण करनी चाहिये तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करते हुवे श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उत्थापन करके पञ्चाङ्गीके मूलमन्त्ररूपी प्रत्यक्ष पाठोंको जानते हुवे भी अलग छोड़ते हैं और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणों सहित कालानुसार और सत्य युक्तिपूर्वक अधिकमासकी गिनती प्रमाण करते हैं जिन्होंको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगा करके निषेध करते हैं इसलिये शास्त्रानुसार अधिक मासको प्रमाण करनेवालोंकी वृथाही निन्दा करके श्रीजिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करनेवाले भी सातवें महाशयजी हैं।

३ तीसरा—श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने (श्री आचाराङ्गजी सूत्रकी चूलिकाके मूलपाठमें तथा श्रीस्थानाङ्गजी सूत्रके पांचवें ठाणेके मूलपाठमें और श्रीकल्पसूत्रके मूल पाठ वगैरह) पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके मूलमन्त्ररूपी पाठोंमें चरम तीर्थङ्कर श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकों को खुलासापूर्वक कहे हैं (इसका विशेष निर्णय शास्त्रोंके पाठों सहित आगे लिखनेमें आवेगा) इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंकी श्रद्धावाले आत्मार्थी पुरुषोंको प्रमाण करने योग्य है तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुवे ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंकी मूलमन्त्ररूपी

जानते हुवे भी अलग छोड़ते हैं और पञ्चाङ्गीके ऊपरोक्तादि अनेक शास्त्रोंके अनुसार श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकों को मानने वालोंको झूठे ठहराकर मिथ्या दूषण लगा करके निषेध करते हैं इसलिये भी शास्त्रानुसार श्रीवीरप्रभुके छ कल्याणकोंको माननेवालोंकी वृथाही निन्दा करके श्री जिनाज्ञारूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करने वाले भी सातवें महाशयजी है ।

४ चौथा–श्रीआवश्यकजी सूत्रकी चूर्णि और वृहद्वृत्ति वगैरह पञ्चांगीके अनेक शास्त्रोंमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये पीछे इरियावहीका प्रतिक्रमण खुलासापूर्वक कहा है सोही श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोंको प्रमाण करने योग्य है तथापि सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुवे ऊपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंको मूलमन्त्ररूपी जानते हुवे भी अलग छोड़ करके उसीके विरुद्ध बालजीवोंको कराते हैं–देखिये षड़ावश्यक करनेके लिये मूलमन्त्ररूपी श्रीआवश्यकजी है उसीकी चूर्णि और वृहद्वृत्तिके अनुसार उभयकाल (सांझ और सवेर दोनुं वख्त) षड़ावश्यकरूपी प्रतिक्रमण करनेका मंजूर करते हैं तथापि उसी शास्त्रोंमें सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेका उच्चारण किये पीछे इरियावही करना कहा है उसीको मंजूर नही करते हैं जिन्होंको मूलमन्त्र रूपी श्रीआवश्यकादि पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंकी श्रद्धावाले श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी कैसे कहे जावे और उन्होंके षड़ावश्यक भी कैसे सार्थक होवेंगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने और विशेष आश्चर्यकी बात तो यह

है कि–खास सातवें महाशयजीकेही परमपूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविक श्रीदेवेन्द्रसूरिजीने श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिमें, श्रीकुलमण्डनसूरिजीने श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थमें, श्रीरत्नशेखरसूरिजीने श्रीवन्दीता सूत्रकी वृत्तिमें, और श्रीहीरविजय सूरिजीके सन्तानीये श्रीमानविजयजीने तथा श्रीयशोविजयजीने श्रीधर्मसंग्रहकी वृत्तिमें खुलासा पूर्वक सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करना कहा है इन महाराजोंको सातवें महाशयजी शुद्धपरूपक आत्मार्थी श्रीजिनाज्ञाके आराधक बुद्धि निधान कहते हैं जिसमें भी विशेष करके श्रीयशोविजयजीके नाम से श्रीकाशी (बनारसी) नगरीमें पाठशाला स्थापन करी है तथापि उन महाराजोंके कहने मुजब सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेको प्रमाण नही करते हैं फिर उन महाराजोंको पूज्य भी कहते हैं यह तो प्रत्यक्ष उन महाराजोंके कहने पर तथा पञ्चाङ्गीके शास्त्रों पर श्रद्धा रहितका नमूना है। यदि सातवें महाशयजी अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोंके कहने-मुजब तथा श्रीयशोविजयजीके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उन महाराजके कहने मुजब वर्त्तनेवाले,तथा उन महाराजोंके पूर्णभक्त,और पञ्चाङ्गीके शास्त्रों पर श्रद्धा रखने वाले होवेंगे,तब तो सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेको प्रमाण करके अपने भक्तोंसें जरूरही करावेंगे तो सातवें महाशयजीको आत्मार्थी समझनेमें आवेगा। सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते २१ शास्त्रोंमें लिखी है परन्तु प्रथम इरियावही किसी भी शास्त्रमें नही लिखी है इसका खुलासा पूर्वक निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ३१० से ३२९ तक

उपरमेंही छपगया है उसीको पढ़ करके भी सातवें महाशय जी अपने कदाग्रहके वस होकरके शास्त्रानुसार सत्यबात को प्रमाण नही करेंगे तो अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोंके वाक्य पर तथा श्रीयशोविजयजीके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उन महाराजके वाक्य पर और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठों पर श्रद्धा रखनेवाले आत्मार्थी है ऐसा कोई भी विवेकी तत्त्वज्ञ पाठकवर्ग नही मान सकेगा जिसके नामसें पाठशाला स्थापन करी है उसी महाराजके वाक्य मुजब प्रमाण नही करना यह तो विशेष लज्जाका कारणहै

इत्यादि अनेक बातोंमें सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुवे मूलमन्त्ररूपी पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंको जानते हुवे भी अलग छोड़ करके शास्त्रोंके प्रमाण विना अपनी मतिकल्पनासें कुयुक्तियोंका सहारा ले करके उत्सूत्र भाषणमें वर्तते हैं और पञ्चाङ्गीके प्रमाण सहित शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक ऊपरोक्तादि अनेक बातोंको प्रमाण करने वालोंको झूठे ठहरा करके मिथ्या दूषण लगा कर ऊपरोक्त बातोंको निषेध करते हैं इसलिये श्रीजिनेश्वरभगवान्की आज्ञानुसार वर्त्तने वालोंकी वृथा निन्दा करके शास्त्रानुसार ऊपरोक्तादि बातोंके विरुद्ध अविसंवादी श्रीजैनशासनमें विसंवादरूपी मिथ्यात्वका झगड़ा बढ़ानेसें अविसंवादी श्रीजैनशासनरूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करने वाले भी सातवें महाशयजीही है। और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंको प्रत्यक्ष देखते हुवे भी प्रमाण नही करते है और अपना कदाग्रहकी कल्पित कुयुक्तियोंको आगे करके दृष्टिरागी झूठे पक्षग्राही बालजीवोंको मिथ्यात्वमें गेरते हैं

है कि–खास सातवें महाशयजीकेही परमपूज्य श्रीतपगच्छके ही प्रभाविक श्रीदेवेन्द्रसूरिजीने श्रीश्राद्धदिनकृत्य सूत्रकी वृत्तिमें, श्रीकुलमण्डनसूरिजीने श्रीविचारामृतसंग्रहनामा ग्रन्थमें, श्रीरत्नशेखरसूरिजीने श्रीवन्दीता सूत्रकी वृत्तिमें, और श्रीहीरविजय सूरिजीके सन्तानीये श्रीमानविजयजीने तथा श्रीयशोविजयजीने श्रीधर्मसंग्रहकी वृत्तिमें खुलासा पूर्वक सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते पीछे इरियावही करना कहा है इन महाराजोंको सातवें महाशयजी शुद्धपरूपक आत्मार्थी श्रीजिनाज्ञाके आराधक बुद्धि निधान कहते हैं जिसमें भी विशेष करके श्रीयशोविजयजीके नाम से श्रीकाशी (बनारसी) नगरीमें पाठशाला स्थापन करी है तथापि उन महाराजोंके कहने मुजब सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेको प्रमाण नही करते हैं फिर उन महाराजोंको पूज्य भी कहते हैं यह तो प्रत्यक्ष उन महाराजोंके कहने पर तथा पञ्चाङ्गीके शास्त्रों पर श्रद्धा रहितका नमूना है । यदि सातवें महाशयजी अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोंके कहने-मुजब तथा श्रीयशोविजयजीके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उन महाराजके कहने मुजब वर्त्तनेवाले,तथा उन महाराजोंके पूर्णभक्त,और पञ्चाङ्गीके शास्त्रों पर श्रद्धा रखने वाले होवेंगे,तब तो सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंतेको प्रमाण करके अपने भक्तोंसें जरूरही करावेंगे तो सातवें महाशयजीको आत्मार्थी समझनेमें आवेंगा । सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभंते २१ शास्त्रोंमें लिखी है परन्तु प्रथम इरियावही किसी भी शास्त्रमें नही लिखी है इसका खुलासा पूर्वक निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ३१० सें ३२९ तक

उपरमेंही छपगया है उसीको पढ़ करके भी सातवें महाशय जी अपने कदाग्रहके वस होकरके शास्त्रानुसार सत्यबात को प्रमाण नही करेंगे तो अपने गच्छके प्रभाविक पुरुषोंके वाक्य पर तथा श्रीयशोविजयजीके नामसे पाठशाला स्थापन करी है उन महाराजके वाक्य पर और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठों पर श्रद्धा रखनेवाले आत्मार्थी है ऐसा कोई भी विवेकी तत्त्वज्ञ पाठकवर्ग नही मान सकेगा जिसके नामसें पाठशाला स्थापन करी है उसी महाराजके वाक्य मुजब प्रमाण नही करना यह तो विशेष लज्जाका कारणहै

इत्यादि अनेक बातोंमें सातवें महाशयजी अभिनिवेशिक मिथ्यात्व सेवन करते हुवे मूलमन्त्ररूपी पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंको जानते हुवे भी अलग छोड़ करके शास्त्रोंके प्रमाण विना अपनी मतिकल्पनासें कुयुक्तियोंका सहारा ले करके उत्सूत्र भाषणमें वर्तते हैं और पञ्चाङ्गीके प्रमाण सहित शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक ऊपरोक्तादि अनेक बातोंको प्रमाण करने वालोंको झूठे ठहरा करके मिथ्या दूषण लगा कर ऊपरोक्त बातोंको निषेध करते हैं इसलिये श्रीजिनेश्वरभगवान्‌की आज्ञानुसार वर्त्तने वालोंकी वृथा निन्दा करके शास्त्रानुसार ऊपरोक्तादि बातोंके विरुद्ध अविसंवादी श्रीजैनशासनमें विसंवादरूपी मिथ्यात्वका झगड़ा बढ़ानेसें अविसंवादी श्रीजैनशासनरूपी सत्यधर्मकी अवहेलना करने वाले भी सातवें महाशयजीही है । और पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके पाठोंकों प्रत्यक्ष देखते हुवे भी प्रमाण नही करते है और अपना कदाग्रहकी कल्पित कुयुक्तियोंको आगे करके दृष्टिरागी झूठे पक्षग्राही बालजीवोंकों मिथ्यात्वमें गेरते हैं

इसलिये सत्यपक्षका निरादर करके असत्य पक्षका स्थापन करनेवाले भी सातवें महाशयजी हैं इस बातको निष्पक्ष पाती आत्मार्थी विवेकी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठानुसार तथा उन्हीकी अनेक व्याख्यानुसार आषाढ़ चौमासीसें ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेवालों पर द्वेष बुद्धि करके आक्षेपरूप सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके दूसरेपृष्ठकी १८॥ वीं पंक्ति से २० वीं पंक्ति तक लिखा है कि (वस्तुतः तो भगवान्‌की आज्ञाके आराधक भव्यजीवों पर कल्पित दोषोंका आरोप करके अपने भक्तोंको भ्रमजालमें फँसाकर संसार बढ़ाते हैं)

सातवें महाशयजीका इस लेखको देखकर मेरेको बड़ाही आश्चर्य्य सहित खेद उत्पन्न होता है कि जैसे ढूंढिये तेरहा पन्थी लोग अपने कदाग्रहकी कल्पित बातोंको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञानुसार वर्त्तने वाले पुरुषोंकी झूठी निन्दा करके संसार वृद्धिका कारण करते हैं तैसेही सातवें महाशयजी भी इतने विद्वान् कहलाते हुवे भी अपने कदाग्रहकी कल्पित बातको स्थापन करनेके लिये श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञानुसार वर्तनेवाले पुरुषोंकी झूठी निन्दा करके संसार वृद्धिका कारण करते हैं क्योंकि–श्रीतीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, वृत्ति और प्रकरणादि अनेक शास्त्रमें प्रगटपने आषाढ़ चौमासीसें दिनोंकी गिनतीके हिसाबसें ५० दिने निश्चय करके श्रीपर्युषणापर्वका आराधन करना कहा है उसीके अनुसार श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठ

मुजब तथा उन्हींकी अनेक व्याख्यायोंके पाठ मुजब वर्त्त
मान कालमें दो श्रावण होनेसें दूसरे श्रावणमें आषाढ़ चौम
सीसें ५० दिने श्रीपर्युषणापर्वका आराधन आत्मार्थी प्रा
करते हैं और दूसरे भव्यजीवोंको कराते हैं जिन्होंको त
मिथ्या दूषण लगा करके संसार बढ़ाने वाले ठहराना औ
आप श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा विरु
तथा पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणोंको छोड़ करके अपनी मति
कल्पनासें यावत् ८० दिने पर्युषणा करते हैं और बाल
जीवोंको भी कुयुक्तियोंसें भ्रमा करके कराते हैं इसलि
श्रीजिनाज्ञाकी सत्यबातका निषेध करके भी शुद्ध परूप
बनते हुवे संसार वृद्धिका भय नही करना सो मिथ्यात्वी
सिवाय और कौन होगा ।

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषण
विचारके दूसरे पृष्ठके अन्ते २१।२२ वीं पंक्तिमें लिखा
कि (उन जीवों पर भावदया लाकर सिद्धान्तानुसार परो
कार दृष्टिसें पर्युषणा विचार लिखा जाता है) इस लेख
दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालों पर और करानेवालों
भावदया लाकर सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिसें पर्युषण
विचार लिखनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो नि
केवल बालजीवोंको कदाग्रहमें फँसाकरके मिथ्यात्ववढ़ाने
लिये संसार वृद्धिके निमित्तभूत उत्सूत्र भाषण करते
क्योंकि प्रथमतो दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वाले पञ्चा
के अनेक शास्त्रानुसार करते हैं जिसके सम्बन्धमें इसी
ग्रन्थकी आदिसें २१ पृष्ठ तक अनेक शास्त्रोंके प्रमाण-पाठ

झूठे ठहरा करके भावदया दिखाना सो तो प्रत्यक्ष महा मिथ्या है। और भावदयाका स्वरूप जाने बिना सातवें महाशयजी भावदया वाले बनते हैं सो भी तौतेकी तरह तात्पर्य्य समझे विना रामराम पुकारने जैसा है क्योंकि सातवें महाशयजी भावदयाका स्वरूपही नही जानते हैं इसलिये अबमें पाठकवर्गकों भावदयाका स्वरूप संक्षिप्तसें दिखाता हूं—

श्रीजैनशास्त्रोंमें भावदया उसीको कहते हैं कि—प्रथमतो चतुर्गतिरूप संसारमें अनन्तकालसें नरकादिमें परिभ्रमणकी वेदना वगैरह स्वरूपको जान करके संसारकी निवृत्तिके लिये श्रीजिनेन्द्र भगवानोंका कहा हुवा आत्महितकारी धर्मको श्रद्धापूर्वक अङ्गीकार करके श्रीजिनेन्द्र भगवानोंके कहने मुजबही धर्मकी परूपना करे और मोक्षकी इच्छासें उसी मुजबही प्रवर्ते तथा दूसरोको प्रवर्त्तावे और सब संसारी प्राणियोंको भी ऐसेही होनेकी इच्छा करे सोही उत्तम पुरुष भावदया कर सकता है, परन्तु सातवें महाशयजी तो उत्सूत्र भाषणोसें संसार वृद्धिका भय नहीं करने वाले दिखते हैं क्योंकि श्रीजिनेन्द्र भगवानोंने तो अधिक मासको गिनतीमें लेनेका कहा है तथापि सातवें महाशयजी अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण करनेकी श्रद्धा रहित होनेसें उत्सूत्रभाषणरूप अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करते हैं इसलिये सातवें महाशयजी काशीनिवासी श्रीधर्मविजयजी श्रीजिनेन्द्र भगवानोंके कहने मुजब वर्तने वाले नहीं है किन्तु श्रीजिनेन्द्र भगवानोंके विरुद्ध अपनी मतिकल्पनासें कुयुक्तियों करके बालजीवोंको मिथ्यात्वके

भ्रममें फँसाने वाले होनेसें उन्होंमें भावदयाका तो सम्भवही नही हो सकता है किन्तु संसार वृद्धिकी हेतुभूत भावहिंसाका कारण तो प्रत्यक्ष दिखता है ।

और सातवें महाशयजीने सिद्धान्तानुसार परोपकार दृष्टिसें पर्युषणा विचार नहीं लिखा है किन्तु पञ्चाङ्गीके सिद्धान्तोंके विरुद्ध बालजीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी शुद्ध श्रद्धारूप सम्यक्त्वरत्नसें भ्रष्ट करनेको उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके अपने कदाग्रहकी कल्पित बात जमानेके आग्रह सें पर्युषणा विचारके लेखमें पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैन-शास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझे बिना अज्ञताके कारणसें कुतर्कों-काही प्रकाश किया है सो तो मेरा सब लेख पढ़नेसें निष्प-क्षपाती सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी आदिसे ७ वीं पंक्ति तक लिखा है कि (उत्तम रीतिसें उपदेश करते हुए यदि किसीको राग द्वेषकी प्रणति हो तो लेखक दोषका भागी नही है क्योंकि उत्तम रीतिसें दवा करने पर भी यदि रोगीके रोगकी शान्ति नहो और मृत्यु हो जाय तो वैद्यके सिर हत्याका पाप नहीं है परिणाममें बन्ध, क्रियासें कर्म, उपयोगमें धर्म, इस न्यायानुसार लेखकका आशय शुभ है तो फल शुभ है)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों सातवें महाशयजीकी बालजीवों को मिथ्यात्वमें फँसाने वाली मायावृत्तिकी चातुराईका नमूना तो देखो—आप अपने कदाग्रहके पक्षपातसें श्रीजैन-शासनकी उन्नतिके कार्य्योंमें विघ्नकारक संपकी नष्ट करके

वृथाही आपसमें झगड़ा बढ़ानेके लिये 'पर्युषणा विचारनामा' पुस्तक प्रगट कराई जिसमें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालों पर खूबही आक्षेपरूप अनुचित शब्द लिख करके भी आप निर्दूषण बनना चाहते हैं सो कदापि नहीं हो सकते है क्योंकि पर्युषणा विचारके लेखमें सत्यबातको मानने वालोंकी झूठी निन्दा करके वृथाही अपनी मतिकल्पनासें मिथ्या दूषण लगाये है और उत्सूत्र भाषणोंसें बालजीवों को भी मिथ्यात्वमें फँसाये हैं इसलिये ऊपरकी इन बातों के दोषाधिकारी तो सातवें महाशयजी प्रत्यक्षही दिखते हैं यदि सातवें महाशयजीको ऊपरकी बातोंके दूषणोंसें संसार वृद्धिका भय होवे और आत्मकल्याणकी इच्छा होवे तो अबसें भी झगड़ेके कार्यों में न फँसके इस ग्रन्थको संपूर्ण पढ़ करके सत्यबातको ग्रहण करें और पर्युषणा विचारके लेखकी अपनी भूलोंकी क्षमापूर्वक मिथ्या दुष्कृत सहित आलोचना लेवें तो सातवें महाशयजीको शुभ इरादेसें उत्तम रीतिका उपदेश करनेवाले तथा उत्सूत्र भाषणका भय रखनेवाले समझनेमें आवेंगे इतने पर भी सातवें महाशयजी पर्युषणा विचारके लेखोंको अपने दिलमें सत्य समझते होवें तो श्रीकाशीमें मध्यस्थ विद्वानोंके समक्ष (पर्युषणा विचारके लेखोंको) शास्त्रोंके प्रमाण सहित युक्तिपूर्वक सत्य करके दिखावे अन्यथा कदाग्रहसें सत्य-बातोंको छोड़ करके कल्पित बातोंको स्थापन करनेमें तो संसार वृद्धिके सिवाय और क्या लाभ होगा सो सज्जन पुरुष स्वयं विचार लेवें ;--

और उत्तम रीतिसें दया करनेके भरोसें विश्वासघात

करके विष मिश्रित दवा देकर रोगीको मृत्युके सरण प्राप्त करने वाला वैद्य नाम धारक पुरुष महापापी होता है तैसेही कर्मरूपी रोगसें पीड़ित भव्यजीवोंको उत्तम रीतिका उपदेश देनेके भरोसें विश्वासघातसे उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित कुयुक्तियोंका विष मिश्रित उपदेश करके भव्य-जीवोंको श्रीजिनाज्ञारूप सम्यक्त्वरत्न जीवतव्यसें भ्रष्ट करके मिथ्यात्वरूप मरणके सरण प्राप्त करनेवाला वेष-धारी साधु नाम धारक पुरुष महापापी होता है तैसेही सातवेंमहाशयजीने भी पर्युषणा विचारके लेखमें भव्यजीवोंको उत्तम रीतिका उपदेश करनेके बहाने उत्सूत्र भाषणरूप कुतर्कोंका विष मिश्रित उपदेश करके भव्यजीवोंको मिथ्यात्वरूप मृत्युके सरण प्राप्त किये हैं इसलिये भव्य जीवोंको मिथ्यात्वरूप मृत्युके सरण प्राप्त कर-नेके दोषाधिकारी सातवें महाशयजी है यदि सातवें महा-शयजीको ऊपरोक्त दूषणके फल विपाकका भय होवे तो अपने कृत्यकी आलोचना लेवेंगे ;—

और अपने कदाग्रहकी कल्पित बातको जमानेके लिये उत्सूत्र भाषणकी और कुयुक्तियोंकी बातें लिखनेवालेका परिणाम भी अच्छा नही होता है तथा क्रिया भी अच्छी नहीं होती है और उपयोग भी अच्छा नही होता है इसलिये पर्युषणा विचारके लेखक अपनेको अच्छा फलकी चाहना करते हैं सो कदापि नही हो सकेगा किन्तु पर्युषणा विचारके लेखमें शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थसें उत्सूत्र भाषणोंकी तथा कुयुक्तियोंकी और शास्त्रानुसार वर्त्तने वालोंकी झूठी निन्दा करके मिथ्या दूषण लगानेकी कल्पना भरी होनेसें

संसारवृद्धिके फल तो मिलनेका दिखता है इस बातक श्रीजैनशास्त्रोंके तत्त्वज्ञ पुरुष अच्छी तरहसे विचार लेवें ;

और भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीस पृष्ठकी ८।९।१० पंक्तियोंमें लिखा है कि (अधिक मासको लेखामें गिनकर पर्युषणा पर्व करनेवाले महानुभावोंको नीचे लिखे हुए दोषों पर पक्षपात रहित विचार करनेकी सूचना दी जाती है)।

इस लेखको देखकर मेरेको बड़ेही खेदके साथ लिखना पड़ता है कि सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजीने श्रीजैन शास्त्रोंके तात्पर्य्यको बिना समझे ऊपरके लेखमें इन्होंने श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंकी और खास अपनेही गच्छके पूर्वाचार्योंकी आशातनाका कारण रूप संसार वृद्धिके हेतुभूत खूबही अज्ञतासें अनुचित लिखा है क्योंकि अनन्ते काल हुवे श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि पूर्वाचार्य्योंने अधिकमासको लेखामें गिन करही पर्युषणा करते आये हैं तथा वर्त्तमान इस पञ्चम कालमें भी श्रीजिनाज्ञाके आराधक सबीही आत्मार्थी जैनाचार्य्योंने अधिक मासको लेखामें गिन करही पर्युषणा करी है और आगे भी श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराज जो जो होवेंगे सो सबीही अधिक मासको गिनतीमें ले करही पर्युषणा करेंगे और अनेक शास्त्रोंमें अधिकमासको गिनतीमें लेकरही पर्युषणा करनी लिखी है इसलिये अधिक मासको गिनतीमें लेकरके जो पर्युषणा करते हैं सोही श्रीजिनाज्ञाके आराधक है और अधिक मासको गिनतीमें छोड़ करके पर्युषणा करते हैं सोही श्रीजिनाज्ञाके विराधक

उत्सूत्र भाषण करने वाले हैं तैसेही सातवें महाशय जी आप अधिक मासको गिनतीमें नही लेते हुवे अधिक मासको गिनतीमें ले करके पर्युषणा करने वालोंको मिथ्या दूषण लगाके उत्सूत्रभाषणसें ऊपरोक्त महाराजोंकी आशातना करके संसार वृद्धिका कुछ भी भय नही करते हैं। हा अति खेदः ?

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी ११ वीं पंक्तिसें १९ वीं पंक्ति तक लिखा है (प्रथम दोष—आषाढ़ चौमासी बाद पचास दिनके भीतर पर्युषणापर्व करे इस नियमकी रक्षा करते हुए तत्तुल्य दूसरे नियमका सर्वथा भङ्ग होता है क्योंकि पचासवें दिवस संवत्सरी और उसके पीछे सत्तरवें दिन चौमासी प्रतिक्रमण करके पीछे मुनिराजोंको विहार करना चाहिये यदि दूसरे श्रावणमें सांवत्सरिक कृत्य करोगे तो सौ दिन बाकी रहेंगे तब सत्तर दिनका नियम कैसे पालन किया जायगा इसका विचार करो)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि ऊपरके लेखमें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालों को सातवें महाशयजीने प्रथम दोष लगाया सो निःकेवल अज्ञताके कारणसे मिथ्या लिखके उत्सूत्र भाषण किया है क्योंकि श्रीनिशीथभाष्यमें १, तथा चूर्णिमें २, श्रीबृहत्कल्पभाष्यमें ३, तथा चूर्णिमें ४, और वृत्तिमें ५, श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ६, तथा वृत्तिमें ७, श्रीस्थानाङ्गजीकी वृत्तिमें ८, श्रीकल्पसूत्रकी निर्युक्तिकी वृत्तिमें ९, श्रीकल्पसूत्रकी पाँच व्याख्यायोंमें १४ श्रीपर्युषणा कल्पचूर्णिमें

श्रीगच्छाचारपयन्नाकी वृत्तिमें १६ इत्यादि शास्त्रोंमे मासवृद्धिके अभावसें चन्द्रसम्वत्सरमें चारमासके १२० दि का वर्षाकालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसें पर्युषणाक पिछाड़ी कार्त्तिक तक ७० दिन रहते है जिसके सम्बन्धर्म इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ९४ तथा ९९ और १२०। १२१ वगैरहमें कितनीही जगह पाठ भी छप गये हैं और मासवृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें जैनपञ्चाङ्गानुसार आषाढ़ चौमासीसे बीश दिने पर्युषणा करनेमें आती थी तब भी पर्युषणा के पिछाड़ी कार्तिक तक १०० दिन रहते थे इसका भी विशेष खुलासा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १०७ सें १२३ तक छप गया है और वर्तमान कालमें जैनपञ्चाङ्गके अभावसें लौकिक पञ्चाङ्गमें हरेक मासोंकी वृद्धि हो तो भी ५० दिनेही पर्युषणा करनेकी मर्य्यादा है सो भी इसीही ग्रन्थकी आदिसें पृष्ठ २७ तक और छठे महाशयजी श्रीवल्लभविजयजीके लेख की समीक्षामें पृष्ठ २८६ से २९९ तक छप गया है इसलिये वर्तमानकालमें दो श्रावणादि होनेसें पाँच मासके १५० दिनका वर्षाकालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसें पर्युषणाके पिछाड़ी कार्त्तिक तक १०० दिन रहते हैं सो भी शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक होनेसें कोई भी दूषण नहीं है इसका भी विशेष निर्णय इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १२० से १२९ तक और पृष्ठ १७७ के अन्तसे १८५ तक छप गया है इसलिये दो श्रावण होनेसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालोंको पर्युषणाके पिछाड़ी ७० दिन रखने सम्बन्धी और १०० दिन होनेसें दूषण लगाने सम्बन्धी सातवें महाशयजी लिखना अज्ञात सूचक और उत्सूत्र भाषण है। सो पाठकवर्ग विचारलेवेंगे,–

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषणा विचारके तीसरे पृष्ठकी २०वीं पंक्तिसें चौथे पृष्ठकी दूसरी पंक्ति तक लिखा है कि (दूसरा दोष—भाद्रसुदीमें पर्युषणा पर्व कहा हुवा है तत्सम्बन्धी पाठ आगे कहेंगे अधिक-मास मानने वाले श्रावण सुदीमें पर्युषणा करते हैं शास्त्रानु-कूल न होनेसें आज्ञाभङ्ग दोष है) इस लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जनपुरुषों मास वृद्धिके अभावसें चन्द्रसंवत्सरमें भाद्रपदमें पर्युषणा होनेका दोनुं चूर्णिकार महाराजोंने कहा है तथापि सातवें महा-शयजीनें वर्त्तमानकालमें मासवृद्धि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये आगे पीछेके सम्बन्ध वाले पाठोंको छोड़ करके दोनुं चूर्णिकार महाराजोंके विरुद्ध थोड़ासा अधूरा पाठ मायावृत्तिसें आगे लिखा है जिसकी समीक्षा मैंभी आगेही करूंगा। परन्तु इस जगह तो दो श्रावण होनेसें दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करने वालों को सातवें महाशयजीने शास्त्र विरुद्ध ठहरा करके आज्ञा भङ्गका दूसरा दूषण लगाया है सो शास्त्रोंके प्रमाणपूर्वक वर्त्तने वालोंको झूठे ठहरा करके मिथ्यादूषण लगाया है तथा उत्सूत्र भाषणसें सत्य बातका निषेध करके मिथ्यात्व बढ़ाया है और अपने विद्वत्ताकी हासी भी कराई है क्योंकि अधिकमासको गिनतीमें लेनेका श्रीजैनशास्त्रानुसार तथा कालानुसार लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब और युक्तिपूर्वक निश्चय करके स्वयं सिद्ध है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध नही हो सकती है इसका विशेष विस्तार छहों महाशयोंके लेखोंकी समीक्षामें अच्छी तरहसें छप गया है

और आषाढ़ चौमासीसे पचास दिने अवश्यही पर्युषण
करनेका सर्वत्र शास्त्रोंमें कहा है जिसका भी विशेष वि
इसीही ग्रन्थकी आदिसे लेकर ऊपर तकमें अनेक
छप गया है इसलिये वर्तमान कालमें ५० दिनके हिस
दूसरे श्रावणमें पर्युषणापर्व करना सो शास्त्रानुसार
युक्तिपूर्वक सत्य होनेसे उसी मुजब वर्तनेवालोंको जो स
महाशयजीने दूषण लगाया हैं सो निःकेवल संसार वृ
हेतुभूत उत्सूत्र भाषण किया हैं इस बातको निष्पक्षप
पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे। और देखिये बड़ेही आश्चर्य
बात है कि सातवें महाशयजी श्रीधर्मविजयजी इतने वि
कहलाते हैं और हरवर्षे गांव गांवमें श्रीकल्पसूत्रका
पाठको तथा उन्हींकी वृत्तिको व्याख्यानमें वाँचते हैं उ
में ५० दिने पर्युषणा करनेका लिखा है उसी मुजबही दू
श्रावणमें ५० दिने पर्युषणा करते हैं जिन्होंको अपनी म
कल्पनासे आज्ञाभङ्गका दूषण लगाना सो विवेकशू
कदाग्रही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी और अपनी विद्वत्ता
हासी करानेवालेके सिवाय दूसरा कौन होगा सो
पाठकवर्ग विचार लेवेंगे ;—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीनें पर्युषण
विचारके चौथे पृष्ठकी तीसरी पंक्तिसे चौदह वीं पंक्ति त
लिखा है कि (अधिक मासके मानने वालोंको चौमास
क्षमापनाके समय 'पंचण्हं मासाणं दसण्हं पक्खाणं पञ्चाशु
त्तरसयराइंदिआणमित्यादि' और सांवत्सरिक क्षमापनाके
समय 'तेरसण्हं मासाणं छब्बीसण्हं पक्खाणं' पाठकी कल्पन
करनी पड़ेगी। यदि ऐसा करोगे तो कल्पित आचार

होनेसे फलसे वञ्चित रहोगे, क्योंकि शास्त्रमें तो 'चउण्हं मासाणं अट्ठण्हं पक्खाणं' इत्यादि तथा 'बारसण्हं मासाणं चउवीसण्हं पक्खाणं' इत्यादि पाठ है इसके अतिरिक्त पाठ नहीं है उसके रहने पर यदि नई कल्पना करोगे तो कल्पना-कुशल, आज्ञाका पालन करनेवाला है या नहीं, यह पाठक स्वयं विचार कर सकते हैं)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों सातवें महाशयजीके ऊपरका लेखको देखकर मेरेको बड़ाही आश्चर्य उत्पन्न होता है कि सातवें महाशयजीके विद्वत्ताकी विवेक बुद्धि (ऊपरका लेख लिखते समय) किस जगह चली गई होगी सो मासवृद्धिके अभावकी बातको मासवृद्धि होतेभी बाल जीवोंको लिख दिखाकरके अपनी बात जमानेके लिये दूसरोंको मिथ्या दूषण लगाते हुवे उत्सूत्र भाषणसें संसार वृद्धिका भय हृदयमें क्यों नहीं लाते हैं क्योंकि जिस जिस शास्त्रमें सांवत्सरिक क्षामणाधिकारे बारह मास, चौबीश पक्ष लिखे हैं सो तो निश्चय करके मासवृद्धिके अभावसे चन्द्र संवत्सर संबंधी है नतु मास वृद्धि होतेभी अभिवर्द्धित संवत्सर में क्योंकि मास-वृद्धि होनेसें तेरह मास और छबीश पक्ष व्यतीत होने पर भी बारह मास और चौबीश पक्षके क्षामणा करना ऐसा कोई भी शास्त्रमें नहीं लिखा है ।

और श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्रमें १, तथा तद्वृत्तिमें २, श्रीसूर्य्य-प्रज्ञप्ति सूत्रमें ३, तथा तद्वृत्तिमें ४, श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रमें ५, तथा तद्वृत्तिमें ६, श्रीनिशीथचूर्णिमें ७, श्रीजंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति सूत्रमें ८, तथा तीनकी पांच वृत्तियोंमें १३, श्रीप्रवचन-

सारोद्धारमें १४, तथा तद्वृत्तिमें १५, श्रीज्योतिष्करण्ड-पयन्नामें १६, तथा तद्वृत्तिमें १७, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें मास वृद्धि होनेसें अभिवर्द्धित संवत्सरके १३ मास, २६ पक्ष खुलासा पूर्वक लिखे हैं और लौकिकपञ्चाङ्गमें भी अधिक मास होनेसें तेरह मास छवीश पक्षका वर्ष लिखा जाता है और सब दुनिया भी धर्मकर्मके व्यवहारमें अधिकमासके कारणसें तेरह मास छवीश पक्षको मान्य करती है उसी मुजबही सब जैनी लोग भी वर्त्तते हैं इसलिये अधिक मासके होनेसें तेरह मास, छवीश पक्षका धर्म्म, पापको गिनतीमें लेकर उतनेही महिनोंके धर्म्मकार्य्योंकी अनुमोदना और पाप कार्योंकी आलोचना लेनी शास्त्रानुसार और युक्तिपूर्वक है क्योंकि अधिक मास होनेसे तेरह मास छवीश पक्षमें धर्म्म, और अधर्म्म, करके धर्मकार्य्योंकी गिनती नहीं करना और पापकार्य्योंकी आलोचना नहीं करना ऐसातो कदापि नहीं हो सकता है।

और जब श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने अधिकमासको गिनतीमें प्रमाण किया है और अभिवर्द्धित संवत्सर तेरह मास छवीश पक्षका कहा हैं सो फिर श्री तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंके विरुद्ध अपनी मतिकल्पनासें बारह मास चौवीश पक्ष कहके एक मासके दो पक्षोंको छोड़ देना और श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा अभिवर्द्धित संवत्सरके नामका खंडन करना बुद्धिमान कैसे करेंगे अपितु कदापि नहीं। और श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोने अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया है तथापि सातवें महाशयजी उत्सूत्र भाषक होकरके उसीका

निषेध करनेके लिये कटिबद्ध तैयार है तो फिर तेरह
छवीस पक्ष कहेंगे ऐसा तो संभव ही नहीं हो सकत
जब अधिक मासको गिनतीमें लेनेको ही जिन्हको
आती है तो फिर तेरह मास छवीश पक्ष कहना तो
उन्हको लज्जाकी बात होवे तो कोई आश्चर्य्य नहीं

और सातवें महाशयजी शास्त्रोंके पाठ मंजूर
वाले होवें तो फिर अधिक मासको श्रीअनंत तीर्थङ्कर
धरादि महाराजोंने प्रमाण किया है जिसका अ
इसी ही ग्रन्थके पृष्ठ ३२ सें ४८ तक वगैरह कितनी ही
छप गया है और सामायिकाधिकारे प्रथम करेमिभं
उच्चारण किये पीछे इरियावही करनी वगैरह अनेक
शास्त्रोंमें विस्तारपूर्वक कही है जिसको तो प्रमाण म
हुवे उलटा उत्थापन करते हैं फिर शास्त्रके पाठकी
करना सो कैसी विद्वत्ता कही जावे इस बातको प
वर्ग भी विचार सकते हैं।

शंका—अजी आप ऊपरमें अनेक शास्त्रोंके प्रम
और युक्तियों सें तेरह मास छवीश पक्षकी गिनती
उतनीही आलोचना लेकर उतनेही क्षामणे सांवत
प्रतिक्रमणमें करनेका दिखाते हो परन्तु सांवत्सरिक
क्रमणकी विधिमें १३ मास, २६ पक्षके, क्षामणे करके उत
मासोंकी आलोचना लेनी किसी शास्त्रमें क्यों नहीं लिख

समाधान—भो देवानुप्रिय! सांवत्सरिक प्रतिक्र
विधि में १३ मास, २६ पक्ष के क्षामणे करके उत
मास पक्षोंकी आलोचना लेनी किसी भी शास्त्र में

श्यक चूर्णि में १ तथा वृहद्वृत्ति में २, और लघुवृत्ति में ३ श्रीप्रवचन सारोद्वार में ४, तथा वृहद्वृत्ति में ५, और लघु-वृत्तिमें ६, श्रीधर्मरत्न प्रकरणकी वृत्तिमें ७, श्रीअभयदेव सूरिजी-कृत समाचारी ग्रन्थ में ८, श्रीजिनप्रभसूरिजीकृत विधि प्रपा समाचारी में ९, श्रीजिनपति सूरिजीकृत समाचारी में १०, श्रीसमाचारी शतकनामा ग्रन्थ में ११, श्रीषडावश्यक ग्रंथ में १२, श्रीतपगच्छ के श्रीजयचन्द्र सूरिजीकृत प्रतिक्रमण गर्भहेतुनामा ग्रंथ में १३; श्रीरत्नशेखरसूरिजीकृत श्रीश्राद्ध-विधि वृत्ति में १४, प्राचीन प्रतिक्रमण गर्भहेतुनामा ग्रंथमें १५, और श्रीपूर्वाचार्योंके बनाये समाचारियोंके चार ग्रंथोंमें १९, इत्यादि अनेक शास्त्रोंमें देवसी और राइ प्रतिक्रमणके अनंतर पाक्षिक प्रतिक्रमणके मुजबही चौमासी और सांवत्सरिक प्रति-क्रमण की विधि कही है और चौमासी सांवत्सरिक शब्दका नामांतर करके चौमासी में २०, लोगस्स का कायोत्सर्ग तथा पांच साधुओंको क्षमानेकी और सांवत्सरिक में ४० लोगस्सका कायोत्सर्ग तथा ७ वा ९ वगैरह साधुओंको क्षमाणेकी भिन्नता दिखाई है और क्षमाणा के अवसर में संवच्छर शब्द का ग्रहण करने में आता है । संवत्सर कहो । सांवत्सरी कहो । संवच्छरी कहो। वार्षिक कहो। सबका तात्पर्य एक है और संवत्सर शब्द यद्यपि-नक्षत्र संवत्सर १ । ऋतु संवत्सर २ । सूर्य संवत्सर ३. चंद्र संवत्सर ४. और अभिवर्द्धित संवत्सर ५ इन पांच प्रकार के अर्थों में ग्रहण होता है परन्तु क्षामणा के अवसर में तो दो अर्थ ग्रहण करने में आते हैं जिसमें प्रथम मास वृद्धि के अभावसे चन्द्र संवत्सर के बारह मास और चौवीश पक्ष अनेक शास्त्रों में कहे हैं और दूसरा मास

वृद्धि होनेसें अभिवर्द्धित संवत्सरके तेरह मास और छवीश पक्ष भी अनेक शास्त्रोंमें कहे हैं इसलिये सांवत्सरिक क्षामणेमें मास वृद्धिके अभावसें चंद्रसंवत्सर संबन्धी बारह मास चौवीस पक्ष कहने चाहिये और मास वृद्धि होनेसें अभिवर्द्धित संवत्सर सम्बन्धी तेरह मास छवीश पक्ष कहने चाहिये और जिस शास्त्रमें बारह मास चौवीश पक्ष लिखे होवें सो चन्द्रसंवत्सर सम्बन्धी समझने चाहिये। इतने पर भी मासवृद्धि होनेसें तेरह मास छवीश पक्ष व्यतीत होने पर भी बारह मास चौवीश पक्ष जो बोलते हैं सो कोई भी शास्त्र के प्रमाण विना अपनी मति कल्पनाका वर्ताव करके श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा अभिवर्द्धित संवत्सरके मासको खंडन करके उत्सूत्र भाषणसें संसार वृद्धिका कारण करते हुवे गुरुगम रहित श्रीजैनशास्त्रों के तात्पर्यको नहीं जाननेवाले हैं क्योंकि देखो सर्वत्र शास्त्रों में साधुके विहारकी व्याख्यामें नव कल्पि विहार साधुको करनेका कहा है सो मासवृद्धि के अभावसें होता है परन्तु शीतकालमें अथवा उष्णकालमें मासवृद्धि होनेसें अवश्य करके १० कल्पिविहार करनेका प्रत्यक्ष बनता हैं तथापि कोई हठवादी शीतकालमें अथवा उष्णकालमें मास वृद्धि होतेभी नवकल्पि विहार कहनेवालेको माया मिथ्या का दूषण लगता है क्योंकि जैसे कार्त्तिक पीछे साधुने विहार किया और मास कल्पके नियम मुजब विचरता है उसी समय शीतकाल में अथवा उष्णकाल में अधिक मास होगया तो उस अधिक मास में अवश्य करके दूसरे गांव विहार करेगा परन्तु एकही गांव में दो मास तक कदापि

नहीं ठहरेगा जब अधिक मास में विहार करके दूसरे गांव जावेगा तब उसीको दश कल्पि विहार हो जावेगा क्योंकि चारमास शीतकालके चारमास उष्णकालके तथा एक अधिक मासका और एक वर्षाऋतुके चारमासका इस तरहसें अवश्य करके दसकल्पि विहार होता है तथापि नव कल्पि कहनेवाला तो प्रत्यक्ष माया सहित मिथ्याभाषण करनेवाला ठहरेगा सो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं और जैसे मास वृद्धि होनेसे दसकल्पि विहार करने में आता है तैसेही मासवृद्धि होनेसें तेरह मास छबीश पक्षोंकी गिनती करके उतनेही क्षामणे करने में आते हैं सो आत्मार्थी श्रीजिनेश्वर भगवान् की आज्ञाके आराधक सत्यग्राही भव्यजीव तो मंजूर करते हैं परन्तु उत्सूत्र भाषक कदाग्रही विद्वत्ता के अभिमानको धारण करनेवालोंकी तो बातही जुदी है। और अधिक मासकी गिनती श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी कहीहुई है जिसको संसारगामी मिथ्यात्वी श्रीजिनाज्ञाका विराधकके सिवाय कौन निषेध करेगा और अधिक मासको माननेवालोंको दूषण लगाकरके फिर आप निर्दूषण भी बनेगा। सो विवेकी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे। और अधिक मासके कारणसे ही तेरह मास छबीश पक्षका अभिवर्द्धित संवत्सर श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने कहा है इस लिये अवश्य करके पांच मासका एक अभिवर्द्धित चौमासा भी मानना चाहिये।

(शङ्का) अधिक मासके कारणसें पांच मासका अभिवर्द्धित चौमासा किस शास्त्रमें लिखा है।

(समाधान) भो देवानुप्रिय! ऊपर ही ३६३, ३६५ पृष्ठ में

१७ शास्त्रोंके प्रमाण अधिक मासके कारणसें तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित संवत्सर संबंधी छपे हैं उसी शास्त्रोंसे तथा युक्तियेंासें और प्रत्यक्ष अनुभवसें भी अधिक मासके कारणसें पांच मासका अभिवर्द्धित चौमासा प्रत्यक्ष सिद्ध होता है क्योंकि शीतकालके, उष्णकालके, और वर्षा-कालके चार चार मासका प्रमाण है परन्तु जैन पंचांगा-नुसार और लौकिक पंचांगानुसार जिस ऋतुमें अधिक मास होवे उसी ऋतुका अभिवर्द्धित चौमासा पांच मासके प्रमाणका मानना स्वयं सिद्ध है इस लिये अधिकमासके कार-णसें चौमासामें पांचमास दशपक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीशपक्षका अवश्य करके व्यवहार करना चाहिये ।

शङ्का—अजी आप अधिक मासके कारणसें चौमासामें पांच मास, दशपक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीश पक्षका व्यवहार करना कहते हो सो क्षामणाके अवसरमें तो हो सकता है, परन्तु मुहपत्ती (मुखवस्त्रिका)की प्रतिलेखना करते, वांदणा देते, अतिचारोंकी आलोचना करते वगैरह कार्यों में चौमासीमें पांच मास, दश पक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीश पक्षका व्यवहार कैसे हो सकेगा ।

समाधान—भो देवानुप्रिय—जैसे मास वृद्धिके अभावसें चौमासीमें चार मास, आठ पक्षका और सांवत्सरीमें बारह मास, चौवीश पक्षका, अर्थ ग्रहण करनेमें आता है और मुख-वस्त्रिकाकी प्रतिलेखनामें, वांदणा देनेमें, अतिचारोंकी आलोचना वगैरह कार्योंमें उतने ही मास पक्षोंकी भावना होती है, तैसे ही मास वृद्धि होनेके कारणसें चौमासीमें पांच मास, दश पक्षका और सांवत्सरीमें तेरह मास छवीस पक्षका

अर्थ ग्रहण होता है इसलिये चौमासीमें और सांवत्सरिक कार्योंमें भी उतने ही मास पक्षोंकी भावना करनेमें आती है,

और जैसे चंद्रसंवत्सरमें-सांवत्सरिक प्रतिक्रमणमें क्षामणाधिकारे 'बारसण्हं मासाणं चउव्वीसण्हं पक्खाणं तिन्निसयसट्ठी राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके बारह मास, चौवीश पक्ष, तीन सौ साठ (३६०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है और चौमासी प्रतिक्रमणमें 'चउण्हं मासाणं अट्ठण्हं पक्खाणं वीसुत्तरसय राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके चार मास, आठ पक्ष, एक सौ वीश रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है, तैसे ही अभिवर्द्धित संवत्सरमें भी सांवत्सरिक क्षामणाधिकारे 'तेरसण्हं मासाणं छव्वीसण्हं पक्खाणं तिन्निसयणउ राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके तेरह मास,छवीश पक्ष, तीन सौ नब्बे (३९०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है और अभिवर्द्धित चौमासेमें भी 'पंचण्हं मासाणं दसण्हं पक्खाणं पंचासुत्तरसय राइंदियाणं' इत्यादि पाठ बोलके पांच मास, दश पक्ष एक सौ पचास (१५०) रात्रि दिनोंकी आलोचना करनेमें आती है ।

ऊपरमें श्रीआवश्यकचूर्णि, श्रीप्रवचनसारोद्वार, श्रीधर्मरत्न प्रकरणवृत्ति और श्रीअभयदेवसूरिजीकृत समाचारी वगैरह शास्त्रोंके प्रमाण प्रतिक्रमण संबंधी लिखनेमें आये हैं, उन्हीं शास्त्रोंके अनुसार (संवच्छर) संवत्सर शब्दके ऊपरोक्त न्यायानुसार चंद्र,अभिवर्द्धित इन दोनुं संवत्सरोंका अर्थ ग्रहण होनेसे क्षामणा संबंधी ऊपरका पाठ ऊपरोक्त शास्त्रोंके अनुसार ही समझना ।

पूर्व पक्ष–अभी आप ऊपरोक्त शास्त्रोंके अनुसार चन्द्रं संवत्सरका और अभिवर्द्धित संवत्सरका अर्थ ग्रहण करके चंद्रमें बारह मासादिसें और अभिवर्द्धितमें तेरह मासादिसें सांवत्सरीमें क्षामणा करनेका लिखतेहो परन्तु किसी भी पूर्वाचार्यजीने कोई भी शास्त्रमें ऐसा खुलासा क्यों नहीं लिखा हैं।

उत्तर पक्ष–भो देवानुप्रिय ! तेरेमें श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्यार्थको समझनेकी गुरुगम विना विवेक बुद्धि नहीं है इसलिये बालजीवोंको मिथ्यात्वमें फँसानेके लिये वृथा ही ऐसी कुतर्क करता है क्योंकि जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने संवत्सर शब्दके चंद्र और अभिवर्द्धितादि जुदे जुदे अर्थ कहे हैं जिसमें चन्द्रके बारह मास,चौवीस पक्ष और अभिवर्द्धितके तेरह मास,छवीश पक्ष खुलासे कह दिये है,इसलिये पूर्वाचार्योंने संवत्सर शब्दको ही ग्रहण करके व्याख्या करी है और यह तो अल्पबुद्धिवाला भी समझ सकता है कि जब अधिक मासकी गिनती शास्त्रोंमें श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने प्रमाण करी है और प्रत्यक्षमें वर्तते हैं इसलिये पापकृत्योंकी आलोचनामें तो जरूर ही अधिक मास गिनतीमें लेना सो तो न्यायकी बात है परन्तु विवेकशून्य हठवादी होगा सो ऐसी कुतर्क करेगा कि—अधिक मासकी आलोचना कहां लिखी है जिसको यही कहना चाहिये कि अधिक मासको गिनतीमें लेकर फिर आलोचना नहीं करनी कहां लिखी है इसलिये ऐसी वृथा कुतर्कोंके करनेसें मिथ्यात्व बढ़ानेके सिवाय और कुछ भी लाभ नहीं उठासकेगा, क्योंकि जब अधिक मासकी गिनती मंजूर है तो फिर

आलोचना तो स्वयं मंजूर हो चुकी और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा तथा प्रमाण भी करा हुवा अधिक मासको उत्सूत्र भाषण करके निषेध करते हैं और प्रमाण करने वालोंको दूषण लगाते हैं सो पुरुष अधिक मासकी आलोचना नहीं करे तो उन्होंके मति कल्पनाकी बातही जुदी है परन्तु श्रीतीर्थङ्करगणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार अधिक मासकी गिनती प्रमाण करने वालोंको तो अवश्य ही अधिक मासकी आलोचना करना उचित है। इतने पर भी जो नहीं करने वाले हैं सो श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक हैं।

और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी भाव परंपरानुसार चंद्रसंवत्सरका और अभिवर्द्धित संवत्सरका यथोचित अवसर पर जुदा जुदा अर्थ ग्रहण करके सांवत्सरीमें क्षामणा करनेकी अनुक्रमे अखंडित मर्यादा चली आती है इसलिये पूर्वाचार्यों ने अधिक मासकी गिनती करनेकी तो सभी जगह व्याख्या करी है परन्तु क्षामणा सम्बन्धी संवत्सरशब्द लिखा है जिसका कारण यही है कि अधिक मास प्रमाण हुआ तो क्षामणे करनेका तो स्वयं प्रमाण हो चुका, जब सम्वेगी साधु मान लिया, तब महाव्रतधारी तो स्वयं सिद्ध हो चुका। जब श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की मूर्त्तिको श्रीजिन सदृश मान्य करी तब उसीको वंदना पूजना तो स्वयं सिद्ध होगया। जब व्याख्यान बांचना मंजूर कर लिया, तब जानकार तो स्वयं सिद्ध होगया। ऐसे ऐसे अनेक दृष्टान्त प्रत्यक्ष हैं सो विशेष पाठकवर्गभी विचार सकते हैं।

और श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्यको नहीं जानने वाले

हठवादी पुरुषोंको तो श्रीप्रवचनसारोद्धार, तथा वृत्ति, और श्रीधर्मरत्नप्रकरण वृत्ति, और श्रीअभयदेवसूरिजी वगैरह पूर्वाचार्योंके बनाये समाचारियोंके ग्रन्थ और प्रतिक्रमण गर्भ हेतु, श्रीश्राद्धविधिवृत्ति, वगैरह शास्त्रोंके अनुसार सांवत्सरीमें बारह मास चौवीश पक्षके खामणा करनेका ही नहीं बनेगा क्योंकि इन शास्त्रोंमें तो बारह मास चौवीश पक्ष भी नहीं लिखे हैं तो फिर बारह मासादिका अर्थ ऊपरके शास्त्रोंके अनुसार कैसे मान्य करेंगे और पांचोंही प्रतिक्रमणोंकी विधि ऊपरके शास्त्रोंमें कही है इसलिये ऊपर कहे सो शास्त्रोंके अनुसार पांच प्रतिक्रमणोंकी विधिको तो मान्य करनीही पड़ेगी और संवत्सर शब्दसें बारह मासका अर्थ ग्रहण करोंगे तो मासवृद्धि होनेसें तेरह मासका भी अर्थ ग्रहण करनाही पड़ेगा सो तो न्यायकी बात हैं और पहिलेके कालमें ऐसी कुतर्कं करनेवाले विवेकशून्य कदाग्रही पुरुष भी नहीं थे नहीं तो पूर्वाचार्य्यजी जरूर करके विस्तारसें खुलासा लिख देते क्योंकि जिस जिस समयमें जैसी जैसी कुतर्कं करनेवाले पूर्वाचार्य्योंके समयमें जो जो हठवादी पुरुष थे जिन्होंको समझानेके लिये वैसे वैसेही खुलासा पूर्वाचार्य्योंने विस्तारसे किया है जैसे कि ईश्वरवादी, नास्तिक, वगैरहोंके लिये और श्रीजिनमूर्त्तिको तथा जिनमूर्त्तिकी पूजा सम्बन्धी शास्त्रोक्त विधिको वर्णन करी हैं, परन्तु मूर्तिके और पूजाके सम्बन्धमें वर्त्तमान समय जैसी युक्तियां लिखनेकी जरूरत नहीं थी जिसका कारण कि—उस समय श्रीजिनमूर्तिके तथा उसीकी पूजाके निषेधक ढूंढिये, तेरहपन्थी, वगैरह

कुयुक्तियां करने वाले पुरुष नहीं थे परन्तु वर्तमान समयमें श्रीजिनमूर्तिके निन्दक विशेष कुयुक्तियां करने लगे तो वर्तमान कालमें उसीके स्थापनेके लिये विशेष युक्तियां भी होती है।

तैसेही इस वर्तमान कालमें तेरह मास छवीश पक्षके निषेध करने वाले सातवें महाशयजी जैसे शास्त्रोंके तात्पर्य्यको नहीं जानने वाले पैदा हुये तो उसीको स्थापन करनेके लिये इतनी व्याख्या भी मेरेको इस जगह करनी पड़ी नहीं तो क्या प्रयोजन था, अब न्यायदृष्टियाले सत्यग्राही भव्यजीवोंको मेरा इतनाही कहना है कि जैसे श्रीतीर्थंङ्कर गणधरादि महाराजोंने श्रीसूयगडाङ्गजी, श्रीदशवैकालिकजी, श्रीउत्तराध्ययनजी वगैरह शास्त्रोंमें साधुके उद्देश करके व्याख्या करी है उसीको ही यथोचित साध्वीके लिये भी समझना चाहिये और श्रीवन्दीतासूत्रकी—"चउत्थे अणुव्वयंमि, निच्चं परदारगमण विरइओ॥ आयरियमप्पसत्थे, इत्थपमायप्पसंगेणं॥ १५॥ अपरिगहिआ इत्तर" इत्यादि गाथायोंमें और अतिचारोंकी आलोचना वगैरहमें श्रावकका नाम उद्देश करके व्याख्या करी है उसीकोही यथोचित श्राविकाके लियेही समझना चाहिये इतने पर भी कोई विवेक शून्य कुतर्क करे कि— अमुक अमुक बातें साधुके और श्रावकके लिये तो कही है परन्तु साध्वी और श्राविकाके लिये तो नहीं कही है ऐसी कुतर्क करनेवालेको अज्ञानीके सिवाय, तत्त्वज्ञ पुरुष और क्या कहेंगे। तैसेही जिस जिस शास्त्रमें चन्द्रसंवत्सरकी अपेक्षासें जो जो बातें कही है उसीकेही अनुसार यथोचित अवसरमें अभिवर्द्धित संवत्सरसम्बन्धी भी समझनी चाहिये

तथापि विवेकशून्य हठवादी कोई ऐसी कुतर्क करे कि— अमुक शास्त्रमें मासवृद्धिके अभावसें चन्द्रसम्वत्सरके लिये बारह मासके क्षामणे कहे हैं परन्तु मासवृद्धि होनेसें अभिवर्द्धित सम्वत्सरके लिये तो कुछ नही कहा है, ऐसी कुतर्क करने वालेको अज्ञानीके सिवाय, तत्त्वज्ञ पुरुष और क्या कहेंगे क्योंकि एकके उद्देश्यसें जो व्याख्या करी होवे उसीके ही अनुसार दूसरेके लियेही यथोचित समझनेकी श्रीजैनशास्त्रोंमें मर्य्यादा है इसलिये जूदे नाम उद्देश्य करके जूदी जूदी व्याख्या शास्त्रकार नहीं करते हैं परन्तु जो सत्यग्राही विवेकी आत्मार्थी होवेंगे सो तो सद्गुरुकी सेवासें श्रीजैनशास्त्रोंके तात्पर्य्यको समझके सत्यबात ग्रहण करेंगे और विवेक रहित हठवादी होगें जिसके कर्मोका दोष नतु शास्त्रकारोंका, जैसे—श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यायोंमें प्रसिद्ध बात है कि-कोई साधु स्थण्डिले जङ्गलमें गयाथा सो कुछ ज्यादा देरीसें गुरु पास आया तब उस साधुको गुरु महाराजने देरीसे आनेका कारण पूछा तब उस साधुने रस्तेमें नाटकीये लोगोंका नाटक देखनेके कारण देरीसें आना हुवा सो कहा, तब गुरु महाराजने नाटकीये लोगोंका नाटक देखनेकी साधुको मनाई करी तब विवेकी बुद्धिवाले चतुर थे वे तो नाटकणी लुगाइयोंका नाटक वर्जनेका भी स्वयं समझ गये, और विवेक बिनाके थे सो तो नाटकणी लुगाइयोंका नाटक देखनेको खड़े रहे, तब गुरु महाराजके कहने पर विवेक रहित होनेसें बोलेकी आपने नाटकीये लोगोंका नाटक देखनेकी मनाई करीथी परन्तु नाटकणी लुगाईयोंका नाटक देखनेकी तो मनाई नही करी थी तब गुरु महा-

राजने कहा कि जब नाटककीयें लोगोंका नाटक वर्जन किया तब नाटकणी लुगाइयोंका नाटक तो विशेष रागका कारण होनेसें स्वयं वर्जन समझना चाहिये तब उन्होंने गुरु महाराजके कहने मुजबही मंजूर किया—और हठवादी मूर्ख थे सो तो गुरु महाराजकोही दूषित ठहराने लगे कि आपने नाटकीये लोगोंका नाटक वर्जन किया तो फिर नाटकणी लुगाइयोंका नाटक क्यों वर्जन नहीं किया—

ऊपरके लेखका क्षामणाके सम्बन्धमें तात्पर्य्य ऐसा है जब श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंने संवत्सर शब्दके चन्द्र, अभिवर्द्धितादि जूदे जूदे भेद प्रमाण सहित कहे हैं और सांवत्सरिक क्षामणाके अधिकारमें संवत्सर शब्दसें व्याख्या करी है जिसमें मासवृद्धिके अभावसे चन्द्रसंवत्सरमें बारह मासादिसें क्षामणा करनेमें आते हैं उसीकेही अनुसार विवेक बुद्धिवाले चतुर होवेंगे सो तो मासवृद्धि होनेसें तेरह मासादिसें क्षामणा करनेका स्वयं समझ लेवेंगे और विवेक रहित होवेंगे सो शास्त्रोंके अनुसार युक्तिपूर्वक गुरु-महाराजके समझानेसें मान्य करेंगे और विवेक रहित हठवादी होवेंगे सो तो शास्त्रोंका प्रमाण और युक्ति होने पर भी शास्त्रकार महाराजोंकोही उलटे दूषित ठहरावेंगे कि अधिक मासकी गिनतीके प्रमाण करके तेरह मास छवीश पक्षका अभिवर्द्धित संवत्सरको शास्त्रकार लिख गये तो फिर अधिकमास होनेसें तेरह मास छवीश पक्षके क्षामणे करनेका क्यों नहीं लिख गये, इस तरहसें अपनी वक्र जड़ता प्रगट करके बालजीवोंको भी मिथ्यात्वमें फँसावेंगे, पर भवका भय नहीं रक्खेंगे,

और शास्त्रकारोंको मिथ्या दूषण लगाके, फिर आप निर्दूषण भी बनेंगे, सो तो कलियुगकाही प्रभावके सिवाय और क्या होगा सो तत्त्वज्ञ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे।

प्रश्नः—श्रीजैनशास्त्रोंमें चन्द्रसंवत्सरके ३५४ दिनका और अभिवर्द्धित संवत्सरके ३८३ दिनका प्रमाणकहा है फिर सांवत्सरी सम्बन्धी चन्द्रसंवत्सरमें ३६० दिनके और अभिवर्द्धित संवत्सर में ३९० दिनके क्षामणे करनेका आप कैसे लिखते हो।

उत्तरः—भो देवानुप्रिय, श्रीजिनेन्द्र भगवानोंका कहा हुआ नयगर्भित श्रीजिन प्रवचनकी शैली गुरुगम और अनुभव बिना प्राप्त नहीं हो सकती है क्योंकि यद्यपि श्रीजैन-शास्त्रोंमें चन्द्रसंवत्सरके ३५४ दिन, ११ घटीका, और ३६ पलका प्रमाण कहा है और अभिवर्द्धित संवत्सरके ३८३ दिन, ४२ घटीका, और ३४ पलका प्रमाण कहा है सो चन्द्रके विमानकी गतिके हिसाबसें निश्चय नय संबन्धी समझना चाहिये और जो चन्द्रसंवत्सरमें ३६० दिनके और अभि-वर्द्धितमें ३९० दिनके क्षामणे करनेमें आते हैं सो दुनियाकी रीतिसें, व्यवहार नय करके, लोगोंको सुखसें उच्चारण हो सके इसलिये बहुत अपेक्षासें समझना चाहिये। और व्यवहार नयसें चन्द्रसंवत्सरमें ३६० दिनका और अभिवर्द्धित संवत्सरमें ३९० दिनका उच्चारण करके क्षामणे करनेमें आते हैं परन्तु निश्चय नय करके तो जितने समयसें सांवत्सरीमें क्षामणे करनेमें आवेंगे उतनेही समय तकके पापकृत्योंकी आलोचना हो सकेगी सो विशेष पाठकवर्ग भी स्वयं विचार लेवेंगे और चौमासी पाक्षिक देवसीराइ प्रतिक्रमण सम्बन्धी भी निश्चय नयकी और व्यवहार

नयकी अपेक्षा केलिये आगे लिखुंगा—

अब सत्यग्राही तत्त्वज्ञ पुरुषोंको न्यायदृष्टिसें विचार करना चाहिये कि अधिक मासके कारणसे चौमासीमें पांच मासादिसें और सांवत्सरिमें १३ मासादिसें क्षामणे करनेका अनेक शास्त्रोंके प्रमाणानुसार युक्तिपूर्वक और प्रत्यक्ष अनुभवसे स्वयं सिद्ध है सो तो मैंने ऊपरमें ही लिख दिखाया है परन्तु सातवें महाशयजी कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना पांच मास होते भी चार मासके क्षामण करने का और तेरह मास होते भी १२ मासके क्षामणे करनेका लिख दिखाके फिर शास्त्रानुसार पांच मासके और तेरह मासके क्षामणे करने वालोंको दूषण लगाते हैं सो अपने विद्वत्ताकी हांसी करा करके, संसार वृद्धिके हेतुभूत उत्सूत्र भाषणके सिवाय और क्या होगा सो पाठकवर्गको विचार करना चाहिये।

और भी आगे पर्युषणा विचारके चौथे पृष्ठकी १५ वीं पंक्तिसें २१वीं पंक्ति तक लिखा है कि-(दूसरी बात यह है किसी समय सोलह (१६) दिनका पक्ष होता है और कभी चौदह दिनका पक्ष होता है उस समय 'एक पक्खाणं पन्नरसण्हं दिवसाणं' इस पाठको छोड़कर क्या दूसरी पाठकी कल्पना करते हो यदि नही करते तो एक दिनका प्रायश्चित्त बाकी रह जायगा जैसे तुम्हारे मतमें 'चउण्हं मासाणं' इत्यादि पाठ कहनेसें अधिकमासका प्रायश्चित्त रह जाता है)—

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों सातवें महाशयजीके ऊपरका लेखको देखकर मेरेको बड़ाही विचार उत्पन्न होता है कि—सातवें

महाशयजी इतने विद्वान् कहलाते हैं तथापि श्रीजैन शास्त्रों के तात्पर्य समझे बिना अपने कदाग्रहके कल्पित पक्षको स्थापन करनेके लिये वृथाही क्यों उत्सूत्र भाषण करके अपनी अज्ञता प्रगट करी है क्योंकि लौकिक ज्योतिषके गणित मुजब वर्तमानिक पञ्चाङ्गमें तिथियांकी हानी और वृद्धि होनेका अनुक्रमे नियम है और अधिकमासकी तो सर्वथा करके वृद्धि ही होनेका नियम है परन्तु तिथिकी हानी होनेसें १४ दिन का पक्षकी तरह, मासकी हानी होकर ११ मासका वर्ष कदापि नहीं होता है इसलिये तिथिकी हानी अथवा वृद्धि होवे तो भी दुनियाके व्यवहारमें १५ दिनका पक्ष कहा जाता है जिससे क्षामणे भी १५ दिनके करनेमें आते हैं और मासकी तो हानी न होते, सर्वथा वृद्धिही होती है इसलिये दुनियाके व्यवहारमें भी तेरह मासका वर्ष कहा जाता है परन्तु मासवृद्धि होते भी बारह मासका वर्ष कोई भी बुद्धिमान विवेकी पुरुष नहीं कहते हैं जिससे मासवृद्धि होनेसें क्षामणे भी १३ मासकेही करनेमें आते हैं, परन्तु मासवृद्धि होते भी बारह मासके क्षामणे करनेका कोई भी बुद्धिवाले विवेकी पुरुष नहीं मान्य कर सकते हैं। इसलिये तिथियांकी हानि वृद्धि होनेका नियम होनेसें और मासकेसदा वृद्धि होनेका नियम होनेसे दोनुंका एक सदृश व्यवहार होनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो कदापि नहीं होसकता है।

और निश्चय व्यवहारादि नय करके श्रीजिन प्रवचन चलता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें १६ दिनका अथवा १४ दिनका पक्ष होते भी व्यवहार नयकी अपेक्षासें १५ दिनके क्षामणे करनेमें आते हैं परन्तु निश्चय नयकी अपेक्षासे तो

१६ दिनके अथवा १४ दिनके जितने समय तक जितने पुण्य पापादि कार्य करनेमें आये होवे उतनेही पुण्य कार्योंकी अनुमोदना और पापकार्योंकी आलोचना करनेमें आवेगी देवसी राइ प्रतिक्रमणवत् अर्थात् देवसी और राइप्रतिक्रमणका शांम और सवेरमें चार चार पहरका काल कहा है परन्तु कोई कारण योग संध्या समय देवसी प्रतिक्रमण न होसके तो रात्रिका बारह बजे (मध्यानरात्रि) के समय तक भी प्रतिक्रमण करनेका अवसर मिलनेसे करनेमें आसके तब निश्चय नय करके तो छ पहरके पाप कार्योंकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षासें चार पहरके अर्थवाला देवसी शब्द ग्रहण करके देवसी क्षामणे करनेमें आवेंगे अब देखिये अर्द्धरात्रि तक छ पहरमें प्रतिक्रमण करके भी व्यवहार नयसे चार पहरके अर्थवाला देवसी शब्द ग्रहण करनेमें आवे और पुनः कारण योगे पहर रात्रि शेष रहते ३ बजेमेंही दूसरीवार राइ (रात्रि) प्रतिक्रमणकरनेका कारण पड़ गया तो एक पहर अथवा सवा पहरमें रात्रि प्रतिक्रमण करती समय निश्चय नय करके तो उतनेही समय तकके पापकार्योंकी आलोचना होगी परन्तु व्यवहार नयसे चार पहरके अर्थवाला राइ शब्दही ग्रहण करनेमेंआवेगा तैसेही लौकिक पंचाङ्ग मुजब १४ दिने किंवा १५ दिने अथवा १६ दिने पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आवे तो निश्चय नय करके तो उतनेही दिनोंके पापकार्योंकी आलोचना करनेमें आवेगी परन्तु व्यवहार नयकी अपेक्षासें १५ दिनका पक्ष कहनेमें आता है इसलिये१५ दिनके अर्थवाला पाक्षिक शब्द ग्रहण करके क्षामणे भी करनेमें आते हैं, परन्तु व्यवहार नयका

भङ्गके दूषणसें डरनेवाले अन्य कल्पना कदापि नहीं करेंगे सो विवेकी सज्जन स्वयंविचार लेवेंगे ।

और सातवें महाशयजी १६ दिनका पक्षमें १५ दिनके क्षामणे करनेसें एक दिनका प्रायश्चित बाकी रहने संबंधी और १४ दिनका पक्षमें भी १५ दिनके क्षामणे करनेसें एकदिन का विना पाप किये भी प्रायश्चित ज्यादा लेने सम्बन्धी ऊपरके लेखसे ठहराते हैं सो निःकेवल अज्ञातपनसे व्यवहार नयका भङ्ग करते हैं जिससे श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लंघन रूप उत्सूत्र भाषक बनते हैं सो भी पाठकवर्ग विचार लेवेंगे ।

और यद्यपि श्रीजैनपञ्चाङ्गकी गिनतीसें तिथिकी वृद्धि होनेका अभाव था तथा पौष और आषाढ़ मासकी वृद्धि होनेका नियम था परन्तु लौकिक पञ्चाङ्गमें तिथि की वृद्धि होनेका गिनती मुजब नियम है और हरेक मासोंकी वृद्धि होनेका भी नियम है । जब जैन पञ्चाङ्गके विना लौकिक पञ्चाङ्ग मुजब तिथिकी वृद्धिको सातवें महाशयजी मान्य करके सोलह (१६) दिनका पक्षको मंजूर करते हैं तो फिर लौकिक पञ्चाङ्गानुसार श्रावण भाद्रपदादि मासोंकी वृद्धि होती है जिसको मान्य नहीं करते हुवे उलटा निषेध करनेके लिये पर्युषणा विचारके लेखमें वृथा क्यों परिश्रम करके निष्पक्षपाती विवेकी पुरुषोंसे अपनी हांसी करानेमें क्या लाभ उठाया होगा सो मध्यस्थ दृष्टिवाले सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे—

और (जैसे तुम्हारे मतमें 'चउदहं मासाणं' इत्यादि पाठ कहनेसें अधिक मासका प्रायश्चित्त रह जाता है) सातवें महाशयजीके ऊपरके लेखपर मेरेको इतनाही कहना है कि—

अधिक मासको मानने वालोंके मतमें तो अधिक मास होने से पांच मासहोते भी चार मास कहनेसें पांचवा अधिक मासका प्रायश्चित्त बाकी रह जाता है इसलिये अधिकमास होनेसें पाँच मास जरूर बोलने चाहिये सो तो बोलतेही हैं इसका विशेष निर्णय ऊपरमें हो गया है, परन्तु पाँच मास होते भी चार मास बोलनेसें पाँचवा अधिक मासका प्रायश्चित्त उसीके अन्तर्गत आजानेका ऊपरके अक्षरोंसें सातवें महाशयजीने अपने मतमें ठहरानेका परिश्रम किया है सो कोई भी शास्त्रके प्रमाण विना प्रत्यक्ष मायावृत्तिसें मिथ्यात्व बढ़ानेके लिये अज्ञ जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेका कार्य्य किया है क्योंकि अधिक मास होनेसें पांचमासके दश पक्ष प्रत्यक्ष में होते हैं और खास सातवें महाशयजी वगैरह भी सब कोई अधिक मासके कारणसें पाँच मासके दश पाक्षिकप्रतिक्रमण भी करते हैं फिर पांचमास दश पक्ष नहीं बोलते हैं सो यह तो 'मम वदने जिह्वा नास्ति' की तरह बालछीलाके सिवाय और क्या होगा सो विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे;—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके पाँचवें पृष्ठकी प्रथम पंक्तिसें छट्ठी पंक्तितक लिखा हैं कि (अब लौकिक व्यवहार पर चलिए लौकिक जन अधिक मासमें नित्यकृत्य छोड़कर नैमित्तिककृत्य नहीं करते जैसे यज्ञोपवीतादि अक्षयतृतीया दीपालिका इत्यादि, दिगम्बर लोग भी अधिक मासको तुच्छ मानकर भाद्रपद शुक्लपञ्चमी से पूर्णिमा तक दश लाक्षणिक पर्व मानते हैं)—

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों श्रीजिनेन्द्र भगवानोंने तो अधिक

मासको गिनतीमें ले करकेही पर्युषणा करनेका कहा है तथापि सातवें महाशयजी पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैनशास्त्रों के तात्पर्य्यको समझे विना अज्ञात पनेमें उत्सूत्र भाषक हो करके अधिक मासका निषेध करनेके लिये गच्छपक्षी बाल-जीवोंको मिथ्यात्वमें फँसाने वाली अनेक कुतर्कोंका संग्रह करते भी अपने मंतव्यको सिद्ध न कर सके तब लौकिक व्यवहारका सरणा लिया तथापि लौकिक व्यवहारसें भी उलटे वर्त्तते हैं क्योंकि लौकिक जन (वैष्णवादि लोग) तो अधिक मासमें विवाहादि संसारिक कार्य्य छोड़कर संपूर्ण अधिक मासको बारहमासोंसें विशेष उत्तम जान करके 'पुरुषोत्तम अधिक मास' नाम रखके दान पुण्यादि धर्मकार्य्य विशेष करते हैं और अधिक मासके महात्मकी कथा अपने अपने घर घरमें ब्राह्मणोंसें वंचाकर सुनते हैं। अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–लौकिकजन भी जैसे बारह मासोंमें संसारिक व्यवहारमें वर्त्तते हैं तैसेही अधिक मास होनेसें तेरह मासोंमें भी वर्तते हैं और बारह मासोंसे भी विशेष करके दानपुण्यादि धर्मकार्य्य अधिक माससें ज्यादा करते हैं और विवाहादि मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य्य नहीं करते हैं परन्तु बिना मुहूर्त्तके धर्मकार्य्योंकों तो नही छोड़ते हैं और सातवें महाशयजी लौकिक जनकी बातें लिखते हैं परन्तु लौकिक जनसें विरुद्ध हो करके धर्मकार्य्योंमें अधिक मासके गिनती का सर्वथा निषेध करते कुछ भी विवेक बुद्धिसें हृदयमें विचार नहीं करते है क्योंकि लौकिक जन की बात सातवें महाशयजी लिखते हैं तबतो लौकिकजन की तरहही सातवें महाशयजीको भी वर्त्ताव करना चाहिये सो तो नही करते

अधिक मासको मानने वालोके मतमें तो अधिक मास होने से पांच मास होते भी चार मास कहनेसें पांचवा अधिक मासका प्रायश्चित्त बाकी रह जाता है इसलिये अधिकमास होनेसें पाँच मास जरूर बोलने चाहिये सो तो बोलतेही हैं इसका विशेष निर्णय ऊपरमें हो गया है, परन्तु पाँच मास होते भी चार मास बोलनेसें पाँचवा अधिक मासका प्रायश्चित्त उसीके अन्तर्गत आजानेका ऊपरके अक्षरोंसें सातवें महाशयजीने अपने मतमें ठहरानेका परिश्रम किया है सो कोई भी शास्त्रके प्रमाण बिना प्रत्यक्ष मायावृत्तिसें मिथ्यात्व बढ़ानेके लिये अज्ञ जीवोंको कदाग्रहमें गेरनेका कार्य्य किया हैं क्योंकि अधिक मास होनेसें पांचमासके दश पक्ष प्रत्यक्ष में होते हैं और खास सातवें महाशयजी वगैरह भी सब कोई अधिक मासके कारणसें पाँच मासके दश पाक्षिकप्रतिक्रमण भी करते हैं फिर पांचमास दश पक्ष नहीं बोलते हैं सो यह तो 'मम वदने जिह्वा नास्ति' की तरह बाललीलाके सिवाय और क्या होगा सो विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे;—

और आगे फिर भी सातवें महाशयजीने पर्युषणा विचारके पाँचवें पृष्ठकी प्रथम पंक्तिसें छट्ठी पंक्तितक लिखा हैं कि (अब लौकिक व्यवहार पर चलिए लौकिक जन अधिक मासमें नित्यकृत्य छोड़कर नैमित्तिककृत्य नहीं करते जैसे यज्ञोपवीतादि अक्षयतृतीया दीपालिका इत्यादि, दिगम्बर लोग भी अधिक मासको तुच्छ मानकर भाद्रपद शुक्लपञ्चमी से पूर्णिमा तक दश लाक्षणिक पर्वमानते हैं)—

- ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता हूं कि हे सज्जन पुरुषों श्रीजिनेन्द्र भगवानोंने तो अधिक

मासको गिनतीमें ले करकेही पर्युषणा करनेका कहा है तथापि सातवें महाशयजी पर्युषणा सम्बन्धी श्रीजैनशास्त्रों के तात्पर्य्यको समझे विना अज्ञात पनेमें उत्सूत्र भाषक हो करके अधिक मासका निषेध करनेके लिये गच्छपक्षी बाल-जीवोंको मिथ्यात्वमें फँसाने वाली अनेक कुतर्कोंका संग्रह करते भी अपने मंतव्यको सिद्ध न करसके तब लौकिक व्यव-हारका सरणा लिया तथापि लौकिक व्यवहारसें भी उलटे वर्त्तते हैं क्योंकि लौकिक जन (वैष्णवादि लोग) तो अधिक मासमें विवाहादि संसारिक कार्य्य छोड़कर संपूर्ण अधिक मासको बारहमासोंसें विशेष उत्तम जान करके 'पुरुषोत्तम अधिक मास' नाम रखके दान पुण्यादि धर्मकार्य्य विशेष करते हैं और अधिक मासके महात्मकी कथा अपने अपने घर घरमें ब्राह्मणोंसें वंचाकर सुनते हैं। अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–लौकिकजन भी जैसे बारह मासोंमें संसारिक व्यवहारमें वर्त्तते हैं तैसेही अधिक मास होनेसें तेरह मासोंमें भी वर्तते हैं और बारह मासोंसे भी विशेष करके दानपुण्यादि धर्मकार्य्य अधिक मासमें ज्यादा करते हैं और विवाहादि मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य्य नहीं करते हैं परन्तु बिना मुहूर्त्तके धर्मकार्यौंकों तो नही छोड़ते हैं और सातवें महाशयजी लौकिक जनकी बातें लिखते हैं परन्तु लौकिक जनसें विरुद्ध हो करके धर्मकार्यौमें अधिक मासके गिनती का सर्वथा निषेध करते कुछ भी विवेक बुद्धिसें हृदयमें विचार नहीं करते है क्योंकि लौकिक जन की बात सातवें महाशयजी लिखते हैं तबतो लौकिकजन की तरहही सातवें महाशयजीको भी वर्त्ताव करना चाहिये सो तो नही करते

हुवे उलटेही वर्त्तते हैं सो भी बड़ेही आश्चर्य्यकी बात है ।

और यज्ञोपवीत, विवाह वगैरह मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य तो चौमासेमें, मलमासमें, सिंहस्थमें, अधिक मासमें, रिक्ता तिथि में, और ग्रहण वगैरह कितनेही योगोंमें नहीं होते हैं परन्तु विना मुहूर्त्तका पर्युषणादि धर्म कार्य तो चौमासेमें रिक्ता तिथि होने पर भी करनेमें आते हैं इसलिये मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य अधिक मासमें न होनेका दिखाकरके विना मुहूर्त्त का पर्युषणा पर्वका निषेध करना सो सर्वथा उत्सूत्र भाषण करके भोले जीवोंको मिथ्यात्वमें फंसानेसे संसार वृद्धिका कारण है सो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं ।

और यज्ञोपवीत विवाहादि मुहूर्त्त निमित्तिक कार्य्य अधिकमासमें नहीं होनेका सातवें महाशयजी लिख दिखा करके पर्युषणा भी अधिक मासमें नहीं होनेका ठहराते हैं तब तो सिंहस्थ, सिंहराशीपर गुरुका आना होवे तब तेरह मासमें यज्ञोपवीत विवाहादि मुहूर्त्त निमित्त कार्य्य नहीं करनेमें आते हैं उसीकेही अनुसार सातवें महाशयजीको भी तेरह मास में पर्युषणादि धर्म कार्य्य नहीं करना चाहिये । यदि करते होवे तो फिर गच्छ कदाग्रही बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें फँसानेका वृथा क्यों परिश्रम किया सो तत्वज्ञ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे—और मुहूर्त्त निमित्तिक संसारिक कार्योंके लिये तथा विना मुहूर्त्तका धर्म कार्योंके लिये विशेष विस्तारसे चौथे महाशयजी न्यायांभोनिधिजीके लेखकी समीक्षामें इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १९४ से २०४ तक अच्छी तरहसे छप गया है सो पढ़नेसे सर्व निःसंदेह हो जावेगा ।

और अक्षयतृतीया दीपालिकादि सम्बन्धी आगे लिख-नेमें आवेगा। और (दिगम्बर लोग भी अधिक मासको तुच्छ मानकर भाद्रपदशुक्ल पञ्चमीसे पूर्णिमा तक दशलाक्ष-णिकपर्व मानते हैं) सातवें महाशयजीका इस लेखपर मेरेको इतनाही कहना है कि—दिगम्बर लोग तो—केवलीको आहार, स्त्रीको मोक्ष, साधुको वस्त्र, श्रीजिनमूर्त्तिको आ-भूषण, नवाङ्गी पूजा वगैरह बातोंको निषेध करते हैं और श्वेताम्बर मान्य करते हैं इसलिये दिगम्बर लोगोंकी अधिक मास सम्बन्धी कल्पनाको श्वेताम्बर लोगोंको मान्य करने योग्य नहीं है क्योंकि श्वेताम्बरमें पञ्चाङ्गीके अनेक प्रमाण अधिक मासको गिनतीमें करने सम्बन्धी मौजूद हैं इसलिये दिगम्बर लोगोंकी बातको लिखके सातवें महाशयजीने अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करनेको उद्यम करके बालजीवोंको कदाग्रहमें गेरे हैं सो उत्सूत्र भाषणरूप है और सातवें महाशयजी दिगम्बर लोगोंका अनुकरण करते होंगे तब तो ऊपरकी दिगम्बर लोगोंकी बातें सातवें महाशयजीको भी मान्य करनी पड़ेंगी यदि नहीं मान्य करते होवें तो फिर दिगम्बर लोगोंकी बात लिखके वृथा क्यों कागद काले करके समयको खोया सो पाठकवर्ग विचार लेवेंगे—

और आगे फिर भी पर्युषणा विचारके पाँचवे पृष्ठकी ७ वीं पंक्तिसे छट्ठे पृष्ठकी पाँचवीं पंक्ति तक लिखा है कि—[अधिकमास संज्ञी पञ्चेन्द्रिय नहीं मानते, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है क्योंकि एकेन्द्रिय वनस्पति भी अधिक मासमें नहीं फलती। जो फल श्रावण मासमें उत्पन्न होने

वाला होगा वह दूसरेही श्रावणमें उत्पन्न होगा न
पहिलेमें। ऐसे दो चैत्र मास होंगे तो दूसरे चैत्रमें आम्र
फलेंगे किन्तु प्रथम चैत्रमें नहीं। इस विषयकी एक गा
आवश्यकनिर्युक्तिके प्रतिक्रमणाध्ययनमें यह है—
"जइ फुल्ला कणिआरया चूअग अहिमासयमि घुट्ठ मि।
तुह न खम फुल्लेउ जइ पच्चंता करिति डमराइ" ॥ १ ॥

अर्थात् अधिकमासकी उद्घोषणा होनेपर यदि कणि
कारक फूलता है तो फूले, परन्तु हे आम्रवृक्ष! तुमक
फूलना उचित नहीं है, यदि प्रत्यन्तक (नीच) अशोभ
कार्य्य करते हैं तो क्या तुम्हें भी करना चाहिये
सज्जनोंको ऐसा उचित नहीं है।

इस बातका अनुभव पाठकवर्ग करें यदि अभ्यासक
सफलता हो तो जैसे कुशाग्रबुद्धि आज्ञानिबद्ध हृदय आचा
र्य्योंने अधिक मासको गिनतीमें नहीं लिया है उसी तरह
तुम्हें भी लेखमें नहीं लेना चाहिये। जिससे पूर्वोक्त अनेक
दोषोंसे मुक्त होकर आज्ञाके आराधक बनोगे।]

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता
हूं कि—हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीने गच्छ पक्षी
बालजीवोंको मिथ्यात्वमें फँसानेके लिये ऊपरके लेखमें
वृथा क्यों परिश्रम किया है क्योंकि प्रथम तो (अधिक
मास सञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय नही मानते) यह लिखनाही
प्रत्यक्ष महा मिथ्या है क्योंकि सञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय सब कोई
अधिक मासको अवश्य करके मानते हैं सो तो प्रत्यक्ष
अनुभवसेही सिद्ध है और 'एकेन्द्रिय वनस्पति अधिक
मासमें नही फलेंगे' ऐसे महाशयजी लिखते हैं सो भी

मिथ्या है क्योंकि वनस्पतिका फलना और फूलोंका, फलोंका उत्पन्न होना सो तो समय, हवा, पानी, ऋतुके, कारणसें होता है इसलिये वनस्पतिकी समय (स्थिति) परिपाक न हुई होवे तथा हवा भी अच्छी न होवे जलका संयोग न मिले तो अधिक मासके बिना भी वनस्पति नहीं फूलती है और फल भी उत्पन्न नही होते हैं और अधिक मासमें भी स्थिति परिपक्व होनेसें हवा अच्छी लगनेसें जलका संयोग मिलनेसें फलती है और फूलोंकी, फलोंकी उत्पत्ति भी होती है।

और जैसे बारह मासोंमें उत्पन्न होना, वृद्धि पामना, फूलना, फलना, नष्ट होना, वगैरह वनस्पतिका स्वभाव है तैसेही अधिक मास होनेसें तेरह मासोंमें भी है सो तो प्रत्यक्ष दिखता है।

और 'जो फल श्रावण मासमें उत्पन्न होनेवाला होगा सो पहिले श्रावणमें न होते दूसरे श्रावणमें होगा' ऐसा भी सातवें महाशयजीका लिखना अज्ञातसूचक और मिथ्या है क्योंकि जैन पञ्चाङ्गमें और लौकिक पञ्चाङ्गमें अधिक मासका व्यवहार है परन्तु मुसलमानोंमें, बङ्गलामें, अंग्रेजीमें, तो अधिकमासका व्यवहार नहीं है किन्तु अनुक्रमसें मासोंकी तारीख मुजब व्यवहार है जब लौकिकमें अधिक मास होनेसें अधिक मासमें वनस्पतिका फूलना, फलना नही होनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं तो क्या लौकिक अधिकमासमें जो मुसलमानोंकी, बङ्गलाकी और अंग्रेजीकी ३० तारीखोंके ३० दिन व्यतीत होवेंगे उसीमें भी वनस्पतिका फूलना फलना न होनेका सातवें महा-

शयजी ठहरा सकेंगे सो तो कदापि नहीं तो फिर वृथा क्यों कदाग्रही बालजीवोंको मिथ्यात्वकी श्रद्धामें गेरनेके लिये अधिक मासमें वनस्पतिको नहीं फलनेका उत्सूत्र भाषणरूप प्रत्यक्ष मिथ्या स्थापन करते हैं सो न्यायदृष्टि वाले विवेकी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ॥

और अधिक मासको वनस्पति अङ्गीकार नही करती है इत्यादि लेख चौथे महाशयजी न्यायाम्भोनिधिजीने भी बालजीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके लिये उत्सूत्र भाषणरूप लिखा था जिसकी भी समीक्षा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २०५ सें २१० तक छप गई है सो पढ़नेसें विशेष निर्णय हो जावेगा।

और 'दो चैत्र मास होंगे तो प्रथम चैत्रमें आम्रादि नहीं फलते दूसरे चैत्रमें फलेगें इस विषय सम्बन्धी आवश्यक निर्युक्तिके प्रतिक्रमण अध्ययनकी एक गाथा' सातवें महाशयजीने लिख दिखाई—सो तो निःकेवल अपने विद्वत्ता की अजीर्णता प्रगट करी है क्योंकि श्रीआवश्यक निर्युक्ति के रचने वाले चौदह पूर्वधरश्रुतकेवली श्रीमान् भद्रबाहु स्वामीजी जैनमें प्रसिद्ध हैं उन्ही महाराजको अनुमान २२७०वर्ष व्यतीत होगये हैं उन्होंके समयमें अठाशी ग्रहोंके गतिकी मर्य्यादा पूर्वक जैनपञ्चाङ्ग सुरूथा उसीमें पौष और आषाढ़ मासके सिवाय चैत्रादि मासोंकी वृद्धिकाही अभाव था तो फिर श्रीआवश्यक निर्युक्तिके गाथाका तात्पर्य्यार्थको गुरु गमसें समझे विना दूसरे चैत्रमें आम्रादि फलनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो विवेकी बुद्धिमान् कैसे मान्य करेंगे अपितु कदापि नहीं ।

और श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथा लिखके अधिक

मासको गिनतीमें लेनेका सातवें महाशयजीने निषेध
है सो भी निःकेवल गच्छपक्षके आग्रहसे और अपनी वि
के अभिमानसें दृष्टिरागी अज्ञजीवोंको मिथ्यात्वमें
के लिये नियुक्तिकार महाराजके अभिप्रायको
विना वृथाही परिश्रम किया है क्योंकि नियुक्तिकार
राज चौदह पूर्वधर श्रुतकेवली थे इसलिये श्रीअनन्त तं
गणधरादि महाराजोंका कहा हुवा और गिनतीमें
भी करा हुवा अधिक मासको निषेध करके उत्सूत्र
करने वाले बनेंगे यह तो कोई अल्पबुद्धि वाला भी
नहीं करेगा तथापि सातवें महाशयजीने निर्युक्तिकी
अधिक मासको गिनतीमें लेनेका निषेध करके चौदह
श्रुतकेवली महाराजको भी दूषण लगाते कुछ भी पूर्वा
विचार विवेक बुद्धिसें हृदयमें नहीं किया यह तो
अफसोसकी बात है ।

और खास इसीही श्रीआवश्यक नियुक्तिमें स
कालकी व्याख्यासे अधिक मासको प्रमाण किया है
नियुक्तिकी गाथा पर श्रीजिनदासगणि महत्तराचा
चूर्णिमें, श्रीहरिभद्र सूरिजीने वृहद्वृत्तिमें, श्रीति
चार्य्यजीने लघुवृत्तिमें, और मलधारी श्रीहेमचन्द्रसू
श्रीविशेषावश्यकवृत्तिमें, खुलासा पूर्वक व्याख्या क
उसीसे प्रगट पने अधिक मासकी गिनती सिद्ध हैं
जगह विस्तारके कारणसें ऊपरके पाठोंको नहीं लि
हूं परन्तु जिसके देखनेकी इच्छा होवे सो नि
चौवीसथा-अध्ययनके पृष्ठ ५१में, वृहद् वृत्तिके पृष्ठ
और विशेषावश्यकी वृत्तिके पृष्ठ ४९५ में देख लेना ।

अब इस जगह विवेकी पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–खास निर्युक्तिकार महाराज अधिकमासको प्रमाण करने वाले थे तथा खास श्रीआवश्यक निर्युक्तिमेंही अधिक मासको प्रमाण किया है सो तो प्रगट पाठ है तथापि सातवें महाशयजीने गच्छपक्षके कदाग्रहसें दृष्टिरागियोंको मिथ्यात्वके झगड़ेमें गेरनेके लिये निर्युक्तिकार चौदह पूर्वधर महाराजके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणरूप अपनी मति कल्पनासें, निर्युक्तिकी गाथा लिखके उसीके तात्पर्य्यको समझे विनाही अधिक मासको गिनतीमें निषेध करनेका वृथा परिश्रम किया सो कितने संसारकी वृद्धि करी होगी सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने और तत्त्वज्ञ पुरुष भी अपनी बुद्धिसें स्वयं विचार लेवेंगे।

अब इस जगह पाठकवर्गको निःसन्देह होनेके लिये निर्युक्तिकी गाथाका तात्पर्य्यार्थको दिखाता हूं।

श्रीनिर्युक्तिकार महाराजने श्रीआवश्यक निर्युक्तिमें छ (६) आवश्यकका वर्णन करते प्रतिक्रमण नामा चौथा आवश्यकमें "पडिक्कमणं १ पडिअरणा २, पडिहरणा ३ वारणा ४ णियत्तिय ५॥ णिंदा ६ गरहा ७ सोही ८, पडिक्कमणं अट्ठहा होइ"॥३॥ इस गाथासे आठ प्रकारके नाम प्रतिक्रमणके कहे फिर अनुक्रमे आठोंही नामोके निक्षेपोंका वर्णन किया हैं और भव्यजीवोंके उपगारके लिये "अद्धाणे १ पासए २ दुद्धकाय ३ विसभोयणा तलाए ४॥ दोकन्ना ५ चित्तपुत्ति ६ पइमारियाय ७ वत्थेव ८ अट्ठणय"॥१२॥ इस गाथासे प्रतिक्रमण सम्बन्धी आठ दृष्टांत दिखाये जिसमें पांचवा णियत्ति अर्थात् निवृत्ति सो उन्मार्गसे हट करके

सन्मार्गमें प्रवर्तने सम्बन्धी दो कन्याका एक दृष्टांत दिखाया है जिसकी चूर्णिकारने, वृहद् वृत्तिकारने और लघुवृत्तिकारने खुलासा पूर्वक, व्याख्या करी है और द्रव्य निवृत्ति पर दृष्टांत दिखाके, फिर भाव निवृत्ति पर उपनय करके दिखाया है, उसीके सब पाठोंको विस्तार के कारणसे इस जगह नहीं लिखता हूं परन्तु जिसके देखनेकी इच्छा होवे सो चूर्णिके २६४ पृष्ठमें, तथा वृहद् वृत्तिके २३३ पृष्ठमें देखलेना । और पाठकवर्गको लघु-वृत्तिका पाठ इस जगह दिखाता हूं श्रीतिलकाचार्यजी कृत श्री आवश्यक लघुवृत्तिके १९६ पृष्ठे यथा—

एकत्र नगरे शाला, पतिः शालासु तस्य च ॥ धूर्त्तावयंति तेष्वेको, धूर्त्तो मधुरगी सदा ॥१॥ कुविंदस्य सुता तस्य, तेन सार्द्धमयुज्यत ॥ तेनोचे साथ नश्यामो, यावद्वेत्ति न कश्चनः ॥२॥ तयोचेमे वयस्यास्ति, राजपुत्री तया समं ॥ संकेतोऽस्ति यथा द्वाभ्यां, पतिरेक करिष्यते ॥३॥ तामप्यानयतेनोचे, साथ तामप्यचालयत् ॥ तदा प्रत्यूषे महति, गीतं केनाप्यदः स्फुटं ॥ ४ ॥ "जइ फुल्ला कणियारया, चूअगअहि मासयं-मिघुट्ठंमि ॥ तुह न खमं फुल्लेउ, जइ पच्चंता करिंति डमरा-इं" ॥ "नखमं नयुक्तं प्रत्यंता नीचकाः डमराणि विप्लव-रूपाणि शेषं स्पष्टं" ॥ श्रुत्वैवं राजकन्या सा दध्यौ चूतं महातरूम् ॥ उपालब्धो वसंतेन, कर्णिकारोऽधमस्तरूः ॥५॥ पुष्पितो यदि किं युक्तं, तवोत्तमतरोस्त्वया ॥ अधिक मास घोषणा, किं न श्रुतेत्यस्यगीः शुभा ॥६॥ चेत्कुविंदी करोत्येवं, कर्त्तव्यं किं मयापि तत् ॥ निवृत्तासामिषाद्रत्न, करंडोमेस्ति विस्मृतः ॥ ७ ॥ राजसूः कोपि तत्राह्नि, गोत्रजैस्त्रासितो

निजैः ॥ तज्ज्ञातं श्वशुरेणैव, प्रदत्ता तेनतस्य सा ॥८॥ ते श्वशुर साहाय्याद्विजित्यनिजगोत्रजान् ॥ पुनर्लेभे निज राज्यं, पट्टराज्ञी बभूव सा ॥ ९ ॥ निवृत्तिर्द्रव्यतोभावि, भावे चोपनयः पुनः ॥ कन्यास्थानीया मुनयो, विषया धूर्त्तसन्निभाः ॥१०॥ योगीति नानाचार्योपदेशात्तेभ्यो निवर्त्तते ॥ सुगतेर्भाजनं सस्या, दुर्गतेस्त्वपरः पुनः ॥ ११ ॥

अब विवेकी तत्त्वज्ञपुरुषोंको इस जगह विचार करना चाहिये कि राज्यकन्या उन्मार्गमें प्रवर्तने लगी तब उसी को समझानेके लिये कविने चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा लेकर "जइ फुल्ला" इत्यादि गाथा कही है सो तो व्याख्याकारोंने प्रगट करके कहा है तथापि सातवें महाशयजी निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायको समझे बिनाही राजकन्याके दृष्टान्तका प्रसङ्गको छोड़ करके बिना संबंधकी एक गाथा लिखके अधिक मासमें वनस्पतिको नहीं फूलनेका ठहराया परन्तु दीर्घ दृष्टिसे पूर्वापरका कुछ भी विचार न किया क्योंकि बसन्त ऋतु मुखसे बोलके आम्र को ओलम्भा देती नहीं, तथा आम्र सुनता भी नहीं और जैन ज्योतिषके हिसाबसे वसंत ऋतुमें अधिक मास होता भी नहीं, और अधिक मास होनेसे वनस्पतिको कोई उद्घोषणा करके सुनाता भी नहीं है। परन्तु यह तो ग्रन्थकार महाराजने अपनी उत्प्रेक्षारूप चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा ले करके प्रासङ्गिक उपदेशके लिये कहा है इसलिये वास्तवमें अधिक मासकी उद्घोषणा आम्रको सुना करके वसन्त ऋतुके ओलंभा देने सम्बन्धी नहीं समझना चाहिये क्योंकि वर्तमानिक पञ्चाङ्गमें चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़,

ावणादि मासोंकी वृद्धि होनेसें उन अधिक मासोंके समयमें
शदेशान्तरे आम्र वृक्षादिका फूलना, फलना और आमोंका
त्पत्ति होना प्रत्यक्ष देखनेमें और सुननेमें आता है और
केसी देशमें माघ, फाल्गुन मासमें तो क्या परंतु हरेक मासोंमें
ी आम्र फूलते हैं और अधिक मासके बिना भी हरेक
ासोंमें कणियर भी फूलता रहता है इसलिये शास्त्र-
ार महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध और कारण कार्य्य
था आगे पीछेके सम्बन्धकी प्रस्ताविक बातको छोड़
रके अधूरा सम्बन्ध लेकर शब्दार्थ ग्रहण करनेसे तो
ड़ेही अनर्थका कारण होजाता है, जैसे कि-श्रीसूयगडाङ्ग-
ीमें वादियोंके मत सम्बन्धकी बातको, श्रीरायप्रश्नेनीमें
रदेशी राजाके सम्बन्धकी बातको श्रीआवश्यकजीकी
ौर श्रीउत्तराध्ययनजीकी व्याख्यायोंमें निह्नवोंके सम्बन्धकी
ातको, और श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यायोंमें श्रीआदिजिने-
र भगवान्के वार्षिक पारणेके अवसरमें दोनुं हाथोका
ंवादके सम्बन्धकी बातको इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक
ास्त्रोंमें सैकड़ो जगह शब्दार्थ और होता है परन्तु शास्त्र
ार महाराजका अभिप्राय औरही होता है इसलिये उस
गहकी व्याख्या लिखते पूर्वापरका सम्बन्ध रहित और
ास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध निःकेवल शब्दार्थको
कड़ करके अन्य प्रसङ्गकी अन्य प्रसङ्गमें अधूरी बातको
लखने वाला अनन्त संसारी मिथ्या दृष्टि निह्नव कहा जावे,
सेही श्रीआवश्यक निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायके
िरुद्धार्थमें शब्दार्थको पकड़ करके विना सम्बन्धकी और
धूरी बात लिखके जो सातवें महाशयजीने बालजीवों

निर्जैः ॥ तच्छ्रातं शरणी चक्रे, मदत्ता तेनतस्य मा ॥८॥ ते श्वशुर साहाय्याद्विजित्यनिशगोत्रजान् ॥ पुनर्लेभे निज राज्यं, पट्टराज्ञी बभूव सा ॥ ९ ॥ निवृत्तिद्रं व्यतोभाणि भावे चोपनयः पुनः ॥ कन्यास्थानीया मुनयो, विषया धूसन्निभाः ॥१०॥ योगीति गानाचार्योपदेशात्तेभ्यो निवर्त्तते ॥ सुगतेर्भाजनं सस्या, दुर्गतेस्त्यपरः पुनः ॥ ११ ॥

अब विवेकी तत्त्वज्ञपुरुषोंको इस जगह विचार करना चाहिये कि राज्यकन्या उन्मार्गमें प्रवर्तने लगी तब उसी को समझानेके लिये कविने चातुराईसे दूसरेकी अपेक्षा लेकर "जइ फुल्ला" इत्यादि गाथा कही है सो तो व्याख्याकारोंने प्रगट करके कहा है तथापि सातवें महाशयजी निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायको समझे बिनाही राजकन्याके दृष्टान्तका प्रसङ्गको छोड़ करके बिना संबंधकी एक गाथा लिखके अधिक मासमें वनस्पतिको नहीं फूलनेका ठहराया परन्तु दीर्घ दृष्टिसे पूर्वापरका कुछ भी विचार न किया क्योंकि वसन्त ऋतु मुखसे बोलके आम्र को ओलम्भा देती नहीं, तथा आम्र सुनता भी नहीं और जैन ज्योतिषके हिसाबसे वसन्त ऋतुमें अधिक मास होता भी नहीं, और अधिक मास होनेसे वनस्पतिको कोई उद्घोषणा करके सुनाता भी नहीं है। परन्तु यह तो ग्रन्थकार महाराजने अपनी उत्प्रेक्षारूप चातुराईसें दूसरेकी अपेक्षा ले करके प्रासङ्गिक उपदेशके लिये कहा है इसलिये वास्तवमें अधिक मासकी उद्घोषणा आम्रको सुना करके वसन्त ऋतुके ओलंभा देने सम्बन्धी नहीं समझना चाहिये क्योंकि वर्त्तमानिक पञ्चाङ्गमें चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़,

श्रावणादि मासोंकी वृद्धि होनेसे उन अधिक मासोंके समयमें देशदेशान्तरे आम्र वृक्षादिका फूलना, फलना और आमोंका उत्पत्ति होना प्रत्यक्ष देखनेमें और सुननेमें आता है और किसी देशमें माघ, फाल्गुन मासमें तो क्या परंतु हरेक मासोंमें भी आम्र फूलते हैं और अधिक मासके विना भी हरेक मासोंमें कणियर भी फूलता रहता है इसलिये शास्त्रकार महाराजका अभिप्रायके विरुद्ध और कारण कार्य्य तथा आगे पीछेके सम्बन्धकी प्रस्ताविक बातको छोड़ करके अधूरा सम्बन्ध लेकर शब्दार्थ ग्रहण करनेसे तो बड़ेही अनर्थका कारण होजाता है, जैसे कि-श्रीसूयगडाङ्गजीमें वादियोंके मत सम्बन्धकी वातको, श्रीरायप्रशेनीमें परदेशी राजाके सम्बन्धकी वातको श्रीआवश्यकजीकी और श्रीउत्तराध्ययनजीकी व्याख्यायोंमें निह्नवोंके सम्बन्धकी वातको, और श्रीकल्पसूत्रकी व्याख्यायोंमें श्रीआदिजिनेश्वर भगवान्‌के वार्षिक पारणेके अवसरमें दोनुं हाथोका विवादके सम्बन्धकी वातको इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंमें सैकड़ो जगह शब्दार्थ और होता है परन्तु शास्त्र कार महाराजका अभिप्राय औरही होता है इसलिये उस जगहकी व्याख्या लिखते पूर्वापरका सम्बन्ध रहित और शास्त्रकार महाराजके अभिप्राय विरुद्ध निःकेवल शब्दार्थको पकड़ करके अन्य प्रसङ्गकी अन्य प्रसङ्गमें अधूरी वातको लिखने वाला अनन्त संसारी मिथ्या दृष्टि निह्नव कहा जावे, तैसेही श्रीआवश्यक निर्युक्तिकार महाराजके अभिप्रायके विरुद्धार्थमें शब्दार्थको पकड़ करके विना सम्बन्धकी और अधूरी वात लिखके जो सातवें महाशयजीने वालजीवों

को मिथ्यात्वमें फँसानेका उद्यम किया है सो निःके
उत्सूत्र भाषण रूप होनेसे संसार वृद्धिका हेतुभूत है
विवेकी तत्त्वज्ञ पुरुष अपनी बुद्धिसे स्वयं विचार लेवेंगे ।

और फिर भी श्रीआवश्यकनिर्युक्तिकी गाथाकी बात
सातवें महाशयजीने अपनी चातुराई भोले जीवों
दिखाई है कि (कुशाग्र बुद्धि आज्ञा नियद्ध हृदय अ
चार्य्योंने अधिक मासको गिनतीमें नहीं लिया है त
तरह तुम्हे भी लेखामें नहीं लेना चाहिये जिससे पूर्वो
अनेक दोषोंसे मुक्त होकर आज्ञाके आराधक बनोगे)

सातवें महाशयजीका यहभी लिखना अपनी विद्वत्ता
अजीर्णतासे संसार वृद्धिका हेतु भूत उत्सूत्र भाषण
क्योंकि निर्युक्तिकी गाथामें तो अधिक मासकी गिनती
निषेध करने वाला एक भी शब्द नहीं है परन्तु श्रीअनन्त
तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंने अनन्ते कालसे
अधिक मासको गिनतीमें लिया है इस लिये तत्त्वज्ञ
बुद्धिवाले श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञाके आराधक
जितने आत्मार्थी उत्तमाचार्य्य हुवे है उन सबी महानु-
भावोंने अधिक मासको गिनतीमें लिया है और आगे भी
लेवेंगे इसलिये इसकलियुगमें जो जो अधिक मासको
गिनतीमें लेनेका निषेध करनेवाले हो गये हैं तथा वर्त्त
मानमें सातवें महाशयजी वगैरह है सो सबीही पञ्चाङ्गीकी
श्रद्धा रहित श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक है क्योंकि अधिक
मासको गिनतीमें करने सम्बन्धी २२ शास्त्रोंके प्रमाणतो
इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २३।२८ में छप गये हैं और श्रीभगवती-
जीमें २३, तथा तद्वृत्तिमें २४, श्रीअनुयोगद्वारमें २५, तथा

तद्वृत्तिमें २६, श्रीव्यवहारवृत्तिमें २७, श्रीआवश्यकनिर्युक्तिमें २८, तथा चूर्णिमें २९, वृहद्वृत्तिमें ३०, लघुवृत्तिमें ३१, और श्रीविशेषावश्यकवृत्तिमें ३२, श्रीकल्पसूत्रमें ३३, तथा श्रीकल्पसूत्रकी सात व्याख्यायोंमें ४०, श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिमें ४१, तथा श्रीजम्बूद्वीप प्रज्ञप्तिकी पांच व्याख्यायोंमें ४६, श्रीगच्छाचार पयन्नाकी वृत्तिमें ४७, श्रीज्योतिषकरण्डपयन्नामें ४८, तथा तद्वृत्तिमें ४९, श्रीदशाश्रुतस्कन्धसूत्रकी चूर्णिमें ५०, श्रीविधिप्रपामें ५१, श्रीमण्डलप्रकाशमें ५२, सेन प्रश्नमें ५३, और नवतत्त्वकी चार व्याख्यायोंमें ५७, और श्रीतत्त्वार्थकी वृत्तिमें ५८, इत्यादि पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रोंके प्रमाणोंसे अधिक मासकी गिनती स्वयं सिद्ध है ।

इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक पञ्चाङ्गीकी श्रद्धावाले आत्मार्थी प्राणियोंको तो अधिक मासकी गिनती अवश्यमेव प्रमाण करना चाहिये जिससे कुछ भी दूषण नहीं लग सकता है परन्तु निषेध करने वाले है सो और पञ्चाङ्गी मुजब अधिक मासका प्रमाण करनेवालोंको अपनी कल्पनासे मिथ्या दूषण लगाते हैं सो संसारमें परिभ्रमण करने वाले उत्सूत्र भाषक और अनेक दूषणोंके अधिकारी हो सकते है सो तो पाठकवर्ग भी विचार सकते हैं ।

और पञ्चाङ्गीके एक अक्षरमात्रको भी प्रमाण न करने वालेको तथा पञ्चाङ्गीके विरुद्ध थोड़ीसी बातकी भी परूपना करने वालेको मिथ्या दृष्टि निह्नव कहते है सो तो प्रसिद्ध बात है तो फिर पञ्चाङ्गीके अनेक शास्त्रानुसार अधिक मासकी गिनती सिद्ध होते भी, नही मानने वालेको और इतने पञ्चाङ्गीके शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध परूपना

करने वालेको मिथ्या दृष्टि महानिह्नव कहनेमें कुछ इ
होवेतो तत्त्वज्ञ पुरुषोंको विचार करना चाहिये।

अब अनेक दूषणोंके अधिकारी कौन हैं और जिन
ज्ञाके आराधक कौन हैं सो विवेकी पाठकवर्ग स
विचार लेवेंगे ;—

और भी आगे पर्युषणा विचारके छट्ठे पृष्ठकी ६ पं
से १८ वीं पंक्ति तक लिखा है कि (वादीकी शङ्का य
यह है कि अधिक मासमें क्या भूख नहीं लगती, और क
पापका बन्धन नहीं होता. तथा देवपूजादि तथा प्रति
क्रमणादि कृत्य नहीं करना ? इसका उत्तर यह है कि
क्षुधावेदना, और पापबन्धनमें मास कारण नहीं है, यदि
मास निमित्त हो तो नारकी जीवोंको तथा अढाईद्वीपके
बाहर रहने वाले तिर्यञ्चोंको क्षुधावेदना तथा पापबन्ध
नहीं होना चाहिये। वहाँ पर मास पक्षादि कुछ भी
कालका व्यवहार नहीं है। देवपूजा तथा प्रतिक्रमणादि
दिनसे बद्ध है मासबद्ध नहीं है। नित्यकर्मके प्रति अधिक
मास हानिकारक नहीं है, जैसे नपुंसक मनुष्य स्त्रीके प्रति
निष्फल है किन्तु लेना ले जाना आदि गृहकार्य्यके प्रति
निष्फल नहीं है उसी तरह अधिक मासके प्रति जानो)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठकवर्गको दिखाता
हूं कि हे सज्जन पुरुषों सातवें महाशयजीने प्रथम वादीकी
तरफसे शङ्का उठा करके उसीका उत्तर देनेमें खूबही अपनी
अज्ञता प्रगटकरी है क्योंकि क्षुधा लगना सो तो वेदनी
कर्मके उदयसे सर्व जीवोंको होता है और वेदनी कर्म
अधिक मासमें भी समय समय में बन्धाता है तथा उदय भी

आता है और उसकी निवृत्ति भी होती है इसलिये अधिक मासमें क्षुधा लगती है और उसीकी निवृत्ति भी होती है। और पाप बन्धनमें भी मन, वचन, कायाके योग कारण है उसीसे पाप बन्धन रूप कार्य्य होता है और मन, वचन, कायाके, योग समय समयमें शुभ वा अशुभ होते रहते हैं जिससे समय समयमें पुण्यका अथवा पाप का बन्धन भी होता है और समय समय करकेही आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मास, संवत्सर, युगादिसें यावत् अनन्ते काल व्यतीत होगये हैं तथा आगे भी होवेंगे इसलिये अधिक मासमें पुण्य पापादि कार्य्य भी होते हैं और उसीकी निवृत्ति भी होती है और समयादि कालका व्यतीत होना अढ़ाई द्वीपमें तथा अढ़ाई द्वीपके बाहरमें और ऊर्द्ध लोकमें, अधोलोकमें सर्व जगहमें है इसलिये यहांके अधिक मासका कालमें वहां भी समयादिसें काल व्यतीत होता है इसीही कारणसें यहाँके अधिक मासका कालमें यहांके रहने वाले जीवोंकी तरहही वहांके रहनेवाले जीवोंको वहां भी क्षुधा लगती है और पुण्य पापादिका बन्धन होता है और यद्यपि वहां पक्षमासादिके वर्तावका व्यवहार नहीं है परन्तु यहांभी और वहां भी अधिक मासके प्रमाणका समय व्यतीत होना सर्वत्र जगह एक समान है इसीही लिये चारोंही गतिके जीवोंका आयुष्यादि काल प्रमाण यहांके संवत्सर युगादिके प्रमाणसें गिना जाता है जिससे अधिकमासके गिनतीका प्रमाण-संवत्सर, युग, पूर्वाङ्ग, पूर्व, पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी, वगैरह सबी कालमें साथ गिना जाता है तथापि सातवें महाशयजी अधिकमासके

कालमें नारकी जीवोंको तथा अढ़ाई द्वीपके बाहेर रहने वाले जीवोंको क्षुधा वेदना तथा पापबन्धन नहीं होनेका लिखते हैं सो अज्ञताके सिवाय और क्या होगा सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और (देवपूजा प्रतिक्रमणादि दिनसे बद्ध है मास बद्ध नहीं है नित्य कर्मके प्रति अधिकमास हानिकारक नहीं है) सातवें महाशयजीका यह भी लिखना मायावृत्तिसे बालजीवोंको भ्रमानेके लिये मिथ्या है क्योंकि देवपूजा प्रतिक्रमणादि जैसे दिनसे प्रतिबद्धवाले है तैसेही पक्ष, मासादिसे भी प्रतिबद्ध वाले है इसलिये पक्ष, मासादिमें जितनी देवपूजा और जितने प्रतिक्रमणादि धर्मकार्य्य किये जावे उतनाही लाभ मिलेगा और पुण्य अथवा पापकार्य्य से आत्माको जैसे दिवस लाभकारक अथवा हानिकारक होता है तैसेही पक्ष मासादिमें पुण्य अथवा पाप होनेसे पक्ष मासादि भी लाभकारक अथवा हानिकारक होता है इसलिये पक्ष मासादिकके पुण्यकार्य्योंकी अनुमोदना करके उस पक्ष मासादिको अपने लाभकारी माने जाते हैं तैसेही पक्ष मासादिमें पापकार्य्य हुवे होवे उसीका पश्चात्ताप करके उसीकी आलोचना लेनेमें आती है और उसी पक्ष मासादिको अपने हानिकारक समझे जाते हैं और एक पक्षके १५ राइ तथा १५ देवसी और एक पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आता है तैसेही एक मासमें ३० राइ तथा ३० देवसी और दो पाक्षिक प्रतिक्रमण करनेमें आते हैं सो तो प्रत्यक्ष अनुभवसे प्रसिद्ध है इसलिये एक मासके ३० दिनोंमें सब संसार व्यवहार और पुण्य पापादि कार्य्य होते सो सार्थ

महाशयजी उसीकी गिनतीका निषेध करते हैं सो तो प्रत्यक्ष अन्याय कारक वृथा है इस बातको पाठकवर्ग भी स्वयं विचार सकते हैं और तीनो महाशयोंने भी ऊपरकी बात संबन्धी बाललीलाकी तरह लेख लिखा था जिसकी भी समीक्षा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ १४२।१४३ में छप गई है सो पढ़नेसें विशेष निःसन्देह हो जावेगा ;—

और (जैसे नपुंसक मनुष्य स्त्रीके प्रति निष्फल है किन्तु लेना लेजाना आदि गृहकार्य्यके प्रति निष्फल नहीं है उसी तरह अधिक मासके प्रति जानों) इन अक्षरों करके सातवें महाशयजीने देवपूजा मुनिदान आवश्यकादि ३० दिनोंमें धर्मकार्य्य होते भी पर्युषणादि धर्मकार्य्योंमें ३० दिनोंका एक मासको गिनतीमें निषेध करनेके लिये अधिक मासको नपुंसक ठहरा करके बालजीवोंको अपनी विद्वत्ताकी चातुराई दिखाई है सो तो निःकेवल उत्सूत्रभाषण करके गाढ़ मिथ्यात्वसे संसार वृद्धिका हेतु किया है क्योंकि श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधर पूर्वधरादि महाराजोंने जैसे मन्दिरजीके ऊपर शिखर विशेष शोभाकारी होता है उसी तरह कालका प्रमाणके ऊपर शिखररूप विशेष शोभाकारी कालचूलाकी उत्तम ओपमा अधिक मासको दिई है और अधिकमास को गिनतीमें सामिल ले करकेही तेरह मासोंका अभिवर्द्धित संवत्सर कहा है जिसका विस्तारसें खुलासा इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ४८ सें ६५ तक छपगया है तथापि सातवें महाशयजीने श्रीअनन्त तीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा उल्लङ्घनरूप तथा आशातना कारक और पञ्चाङ्गीके प्रत्यक्ष प्रमाणोंको छोड़ करके अधिक मासको नपुंसककी हलकी

मोपमा लिखके अधिक मासकी हिलना करी और संसार वृद्धिका कुछ भी भय न किया सो बड़ेही अफसोसकी बात है;–

और वैष्णवादि लोग भी अधिकमासको दानपुण्यादि धर्म्मकार्य्योंमें तो बारह मासोंसे भी विशेष उत्तम "पुरुषोत्तम अधिक मास" कहते हैं और उसीकी कथा सुनते हैं और दानपुण्यादि करते हैं और पञ्चाङ्गमें भी तेरह मास, छवीश पक्षका वर्ष लिखते हैं सो तो दुनियामें प्रसिद्ध है तथापि सातवें महाशयजी अधिक मासको नपुंसक कहके उसको गिनतीमें निषेध करते हुवे, तेरहमा अधिक मासको सर्वथाही उड़ा देते हैं और दुनियाके भी विरुद्धका कुछ भी भय नहीं करते हैं सो भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वका नमूना है क्योंकि सातवें महाशयजी काशीमें बहुत वर्षोंसे ठहरे हैं और अधिक मास होनेसे पुरुषोत्तम अधिक मासके महात्म की कथा काशीमें और सब शहरोंमें अनेक जगह बंचाती है सो तो प्रसिद्ध है और जैनशास्त्रानुसार तथा लौकिक शास्त्रानुसार धर्मकार्य्योंमें अधिक मास श्रेष्ठ है, तथापि सातवें महाशयजी नपुंसक ठहराते हैं सो तो ऐसा होता है कि—

किसी नगरमें एक शेठ रहता था, सो रूपलावण्य करके युक्त और धर्म्मावलम्बी था इसलिये उसीने परस्त्री गमनका और वेश्याके गमनका वर्जन किया था, सो शेठ किसी अवसरमें बजारके रस्तेसे चला जाता था उसी रस्तेमें कोई व्यभिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका मकान आया, तब वह शेठ उसीका मकानके पाससे होकरके आगेको चला गया परन्तु उसीके मकानपर न गया तब उस शेठको देखकर वह

व्यभिचारिणी स्त्री और वेश्या कहने लगी कि, यह तो नपुंसक है इसलिये हमारे पास नहीं आता है।

अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि–जैसे उस भिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका मन्तव्य उस शेठसे रिपूर्ण न हुवा तब उसीको नपुंसक कहके उसीकी निन्दा ी परन्तु जो विवेकबुद्धि वाले न्यायवान् धर्मी मनुष्य वेंगे सो तो उस शेठको नपुंसक न कहते हुवे उत्तमपुरुष कहेंगे, तैसेही सातवें महाशयजी भी अधिक मासको नतीमें लेनेका निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषणरूप ेक कुयुक्तियोंका संग्रह करते भी अपना मन्तव्यको सिद्ध ीं कर सके तब नपुंसक कहके अधिक मासकी निन्दा ो और श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञा ाङ्घन होनेसे संसार वृद्धिका भय न किया परन्तु जो ेक बुद्धि वाले न्यायवान् धर्मी मनुष्य होवेंगे सो तो धक मासको नपुंसक न कहते हुवे श्रीतीर्थङ्कर गणधरादि ाराजोंकी आज्ञानुसार विशेष उत्तमही कहेंगे सो तत्त्वज्ञ ाक वर्ग स्वयं विचार लेवेंगे;—

और अधिक मासको नपुंसक कहके धर्म कार्यों में नि- करनेके लिये चौथे महाशयजीने भी उत्सूत्र भाषण कुयुक्तियोंके संग्रहवाला लेख लिखके बाल जीवोंको यात्त्वमें गेरनेका कारण किया था जिसकी भी समीक्षा ही ग्रन्थके पृष्ट २००से २०४ तक अच्छी तरहसे खुलासा पूर्वक गई है सो पढ़नेसे विशेष निःसन्देह हो जावेगा;—

और जैसे धर्मी पुरुषोंको पर स्त्री देखनेमें अन्धेकी होना चाहिये परन्तु देव गुरुके दर्शन करनेमें तो

चार आंख वालेकी तरह हो जाना चाहिये तैसेही यह श्रेष्ठ पुरुष है परन्तु पर स्त्रीके गमनका और वेश्याके गमनका वर्जन करनेवाला धर्मावलम्बी होनेसे उनके साथ मैथुन सेवन करनेमें तो नपुंसककी तरह हैं परन्तु अपने नियमका प्रतिपालन करके ब्रह्मचर्य्य धारण करनेमें तो समर्थ होनेसे उत्तम पुरुषकी तरह है अर्थात् आपही उन गुणसे उत्तम पुरुष हैं इसी न्यायानुसार यद्यपि अधिक मास भी गिनतीके प्रमाणका व्यवहारमें तो बारह मासोंके बरोबरही पुरुष रूप है उसीमें वैष्णव लोग दान पुण्यादि विशेष करते हैं और उसीके महात्म्यकी कथा सुनते हैं इसीलिये उसीको पुरुषोत्तम अधिक मास कहते हैं।

और मोजैन शास्त्रोंमें भी मन्दिरके शिखरवत् कालका प्रमाणके शिखर रूप उत्तम ओपमा अधिक मासको है। उसीमें मुहूर्त्त नैमित्तिक विवाहादि आरम्भ वाले संसारिक कार्य्य नहीं होते हैं परन्तु धर्म कार्य्य तो विशेष होते हैं इसलिये उपरोक्त न्यायानुसार मुहूर्त्त नैमित्तिक आरम्भ वाले संसारिक कार्योंमें तो अधिक मास नपुंसककी तरह है परन्तु धर्म कार्योंमें तो विशेष उत्तम होनेसे सबसे अधिक है इसलिये इसका अधिक नाम ऐसा नाम भी सार्थक है तथापि धर्म कार्यमें और गिनतीका प्रमाणमें उसीको नपुंसक ठहरा करके अधिक मासकी निन्दा करते हुए उसीकी गिनती निषेध करते हैं सो व्यभिचारिणी स्त्रीका और वेश्याका अनुकरण करनेवाले हैं सो पाठकवर्ग विचार लेवेंगे और अब सातवें महाशयजीके आगेका लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाता हूं — पर्युषणा विचारके छट्ठे पृष्ठकी १९ वीं पंक्तिसे सातवें पृष्ठकी

चौथी पंक्ति तक लिखा है कि–(जैन पञ्चाङ्गानुसार तो एक युगमें दो ही अधिक मास आते हैं अर्थात् युगके मध्यमें आषाढ़ दो होते हैं और युगान्तमें दो पौष होते हैं। दो श्रावण दो भाद्र और दो आश्विन वगैरह नहीं होते। इस भावकी सूचना देने वाली पाठ देखोः—
"जई जुग मज्झे तो दोपोसा जई जुग अन्ते दो आसाढ़ा"
यद्यपि जैन पञ्चाङ्गका विच्छेद हो गया है तथापि युक्ति और शास्त्र लेख विद्यमान है) सातवें महाशयजीका इस लेख पर मेरेको इतनाही कहना है कि–शास्त्रके पाठसे एक युगमें दो अधिक मास होनेका आप लिखते हो सो यह दोनों अधिक मास जैन शास्त्रानुसार गिनतीमें लिये जाते थे तो फिर ऊपरमेंही "कुशाग्रह बुद्धि आज्ञा-निबद्ध हृदय आचार्योंने अधिक मासको गिनतीमें नहीं लिया है" ऐसे अक्षर लिखके पर्युषणा विचारके सब लेखमें अधिक मासकी गिनती निषेध क्यों करते हो क्या आपको शास्त्रकी वाक्य प्रमाण नहीं है, यदि है तो आपका निषेध करना संसार वृद्धिका हेतु भूत उत्सूत्रभाषण होनेसे बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें फँसाने वाला है सो विवेकी पाठक वर्ग स्वयं विचार सकते हैं;—

और शास्त्रके पाठमें तो युगके मध्यमें दो पौष और युगान्तमें दो आषाढ़ खुलासे कहे हैं तथापि सातवें महाशयजी युगके मध्यमें दो आषाढ और युगान्तमें दो पौष लिखते हैं सो तो बहुत वर्षोंसे काशीमें अभ्यास करते हैं इसलिये विद्वत्ताके अजीर्णतासे उपयोग शून्यताका कारण है;—

और श्रीचन्द्रप्रज्ञप्ति, श्रीसूर्य्यप्रज्ञप्ति, श्रीजंबूद्वीप प्रज्ञप्ति और श्रीज्योतिषकरंडपयन्न वगैरह शास्त्रानुसार तथा उन्होंकी व्याख्यायोंके अनुसार अधिक मास होनेका कारण कार्य्य तथा गिनतीका प्रमाणको जो सातवें महाशयजी किसी सद्गुरुसे पढ़के तात्पर्य्यार्थको समझते और श्री भगवतीजी श्रीअनुयोगद्वार वगैरह शास्त्रानुसार समय, आवलिकादि कालकी व्याख्याको विचारते तो अधिक मासकी गिनती निषेध कदापि नहीं करते और दो श्रावण दो भाद्र, दो आश्विन वगैरह नहीं होनेका लिखनेके लिये लेखनी भी नहीं चलाते सो पाठक वर्ग विचार लेवेंगे :—

और भी आगे पर्युषणा विचारके सातवें पृष्ठमें लिखा है कि (लौकिक पञ्चाङ्गानुसार अधिक मासको लेखामें गिनने वाले महाशयोंसे पूछता हूं कि यदि आश्विन दो होंगे तो साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणान्तर सत्तरवें दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करोगे कि नहीं, यदि नहीं करोगे तो समवायाङ्ग सूत्रके पाठकी क्या गति होगी ? अगर चौमासीका प्रतिक्रमण करोगे तो दूसरे आश्विन सुदी पूर्णमासीके पीछे विहार करना पड़ेगा। आश्विन मासको लेखामें न गिनकर सत्तर दिन कायम रक्खोगे तो श्रावण अथवा भाद्रमासको लेखामें न गिनकर पचास दिन कायम रख कर भगवान्‌की आज्ञाके अनुसार भाद्र सुदी चौथके रोज साम्वत्सरिक प्रतिक्रमण क्यों नहीं करते)

इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि-जैन पञ्चाङ्गके अभावसे लौकिक पञ्चाङ्गानुसार वर्ताव करनेकी पूर्वाचार्यों की आज्ञा है इसलिये कालानुसार श्रीजैन

शासनमें लौकिक पञ्चाङ्ग मुजबही तिथि, वार, घड़ी, पल, नक्षत्र, योग, सूर्योदय, दिनमान, तिथिकी हानी, वृद्धि, राशि चन्द्र, पक्ष, मास, मुहूर्त्त वगैरहसे संसार व्यवहारमें और धर्म व्यवहारमें वर्ताव करनेमें आता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें जिस मासकी वृद्धि होवे उसीको मान्य करके उसी मुजब संसार व्यवहारमें और धर्म व्यवहारमें वर्ताव होनेका प्रत्यक्षमें बनता है इसलिये लौकिक पञ्चाङ्गमें दो श्रावण, दो भाद्रपद और दो आश्विन वगैरह होवे उसी के गिनतीको निषेध न करते हुवे प्रमाण करना सो तो पूर्वाचार्योंकी आज्ञानुसार तथा युक्ति पूर्वक और प्रत्यक्ष अनुभवसे स्वयं सिद्ध है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करने वाले अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करने वाले प्रत्यक्षमें बनते है सो तो विवेकी सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे;—

और दो आश्विन होनेसे साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणके बाद ७० दिने चौमासी प्रतिक्रमण करके दूसरे आश्विनमें विहार करनेकी कोई जरूरत नहीं है क्योंकि अधिक मास होनेसे साम्वत्सरिक प्रतिक्रमणके बाद १०० दिने कार्त्तिकमें चौमासी प्रतिक्रमण करके विहार करनेमें आता है सो शास्त्रानुसार और युक्ति पूर्वक न्यायकी वात है इसलिये कोई भी दूषण नहीं लग सकता है इसका खुलासा इसी ही ग्रन्थके पृष्ठ ३५९।३६० में छप गया है—

और "समवायाङ्ग सूत्रके पाठकी क्या गति होगी" सातवें महाशयजीका यह लिखना अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको प्रगट करने वाला उत्सूत्रभाषण रूप संसार वृद्धिका

हेतु भूत है क्योंकि श्रीसमवायाङ्गजी सूत्रका पाठ तो श्रीगण-धर महाराजका कहा हुआ है और चार मासके सम्बन्ध वाला है इसलिये उसीकी तो सदाही अच्छी गति है और चार मासके वर्षाकालमें उसी मुजब वर्तनेमें आता है परन्तु सातवें महाशयजी सूत्रकार महाराजके विरुद्धार्थ में पांच मासके वर्षाकालमें भी उसी पाठको स्थापन करनेके लिये सूत्रके पाठ पर ही आक्षेप करते हैं और बाल जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरते हैं सो क्या गति प्राप्त करेंगे सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने—

और " आश्विन मासको लेखामें न गिनकर सत्तर दिन कायम रक्खोगे" यह भी सातवें महाशयजीका लिखना मिथ्या है क्योंकि हम तो आश्विन मासको लेखा में गिन करके १०० दिन कायम रखते हैं इस लिये मिथ्या भाषण करनेसे महाव्रतके भङ्गका सातवें महाशयजीको भय लगता हो तो मिथ्या दुष्कृत देना चाहिये—

और "श्रावण अथवा भाद्रमासको लेखामें न गिनकर पचास दिन कायम रख कर भगवान्‌की आज्ञाके अनुसार भाद्र सुदी चौथके रोज सम्वत्सरिक प्रतिक्रमण क्यों नहीं करते" सातवें महाशयजीका इस लेख पर मेरेको इतनाही कहना है कि मास वृद्धिके अभावसे आषाढ चौमासीसे पचास दिने भाद्र शुदी चौथको पर्युषणामें सांवत्सरिक प्रतिक्रमण वगैरह करनेकी तो श्रीजिनेश्वर भगवान्‌की आज्ञा है परन्तु पचासवें दिनकी रात्रिकोभी उल्लंघन करना नही कल्पता इसलिये दो श्रावण होनेसे श्री कल्पसूत्रके तथा उन्होंकी -व्याख्यायोंके अनुसार ५० दिनकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें .

अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करना चाहिये परंतु मास वृद्धि दो श्रावण होनेभी ८० दिने भाद्र शुदीमें पर्यूषणा करके भी निर्दुषण बननेके लिये अधिक मासके ३० दिनोंको गिनतीमे छोड़करके ८० दिनके ५० दिन गच्छपक्षी बाल जीवोंके आगे कहके आप आज्ञाके आराधक बनना चाहते हैं सो कदापि नहीं हो सकते है क्योंकि श्रीभगवतीजी श्रीअनुयोगद्वार श्रीज्योतिषकरंडपयन्न और नव तत्त्व प्रकरणादि शास्त्रानुसार तथा इन्हींकी व्याख्यायोंके अनुसार समय, आवलिका, मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, मासादिसे जो काल व्यतीत होवे उसी कालका समय मात्रभी गिनतीमें निषेध नहीं हो सकता है तथापि निषेध करनेवाले पंचांगीकी श्रद्धारहित और श्री जिनाज्ञाके उत्थापक निन्हव, मिथ्या दृष्टि-संसार गामी कहे जावे, तो फिर एक मासके ३० दिनोंको गिनतीमें निषेध करने वालेको पंचांगीकी श्रद्धा रहित और श्रीजिनाज्ञाके उत्थापक अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी कहनेमें कुछ भी तो दूषण मालूम नही होता है इसलिये अधिक मासके ३० दिनोंकी गिनती निषेध करने वाले मिथ्या पक्षग्राहियोंकी आत्माका कैसे सुधारा होगा सो तो श्रीज्ञानीजी महाराज जाने। इसलिये दो आश्विन होनेसे भाद्र शुदी चौथसे कार्तिक तक १०० दिन होते है जिसके ७० दिन अपनी मति कल्पनासे बनाने वाले और दो श्रावण होनेसे भाद्रतक ८० दिन होते हैं जिसके तथा दो भाद्र होनेसे दूसरे भाद्र तक ८० दिन होते हैं जिसके भी ५० दिन अपनी मति कल्पनासे बनाने वाले अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी होनेसे आत्मार्थियोंको उन्होंका पक्ष छोड करके इस ग्रन्थको सम्पूर्ण पढ़

कर सत्य बातको ग्रहण करना चाहिये जिसमें आत्म कल्याण है नतु अधिक मासके गिनतीका निषेध रूप अंध परपराका मिथ्यात्वमें;—

और इसके आगे फिरभी मासवृद्धि होतेभी भाद्र पदमें पर्युषणा ठहरानेके लिये पर्युषणा विचारके सातवें पृष्ठके अन्तसे आठवें पृष्ठ तक लिखाहै कि–(पर्युषणाकल्पचूर्णि, तथा महानिशीथचूर्णिके दसवें उद्देशेमें इसी तरहका पाठ है,

“अन्नया पज्जोसवणादिवसे आगए अज्जकालगेण सा-लवाहणो भणिओ, भद्दवयजुण्हपञ्चमीए पज्जोसवणा” इ०

तथा “तत्थ य सालवाहणो राया, सो अ सावगो, सो अ कालगज्जं इतं सोऊण निग्गओ, अभिमुहो समणसंघो अ, महाविभूईए पविट्ठो कालगज्जो,पविट्ठे हिअभणिअं भद्दवयसु, पञ्चमीएपज्जोसविज्जइ समणसंघेण पडिवण्णं ता रण्णाभणिअ तद्दिवस मम लोगानुवत्तीए इंदो अणुजायेव्वो होहित्ति साहू चेइए अणुपज्जुवासिस्सं, तो छट्ठीए पज्जोसवणा कि-ज्जइ, आयरिएहिं भणिअं, न वट्टिइति अतिक्कमित्तुं, ताहे रण्णा भणिअं, ता अणागए चउत्थीए पज्जोसविति, आयरिएहिं भणिअं, एवं भवउ, ताहे चउत्थीए पज्जोस-विअं, एवं जुगप्पहाणेहिं कारणे चउत्थी पवत्तिआ, सा चेवाणुमता सव्वसाहूणमित्यादि” ।

ऊपरकी पाठ साक्षात् सूचित करती है कि भाद्र सुदी चौथको सांम्वत्सरिक प्रतिक्रमण वगैरह करना चाहिये। किन्तु जब दो श्रावण आवें तो श्रावण सुदी चौथके रोज साम्वत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्धान्तमें नहीं है तो आग्रह करना क्या ठीक है ? दो भाद्र आवेंतो

किसी तरह पूर्वोक्त पाठका समर्थन करोगे। परन्तु सत्तर दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करना चाहिये)

ऊपरके लेखकी समीक्षा करके पाठक वर्गको दिखाताहूं कि—हे सज्जन पुरुषो सातवें महाशयजीका ऊपरके लेखको मैं देखताहूं तो मेरेकोवड़ेही खेदकेसाथ आश्चर्य्य उत्पन्नहोता है कि, सातवें महाशय श्रीधर्मविजयजीने शास्त्रविशारदजैनाचार्य्यकी पदवीकोधारणकरीहै परंतुअपनेकदाग्रहके कल्पित पक्षकीवातको मायावृत्तिसे स्थापित करके बालजीवोंको श्रीजिनाज्ञासेभ्रष्टकरनेके लिये उन्होंमें अभिनवेशिक मिथ्यात्वका वहुतही संग्रहहोनेसे उसपदवीको सार्थक न करसके परन्तु शास्त्रविराधक उत्सूत्रभाषणाचार्य्यकी पदवीके गुण तो (सातवें महाशयजीमें) प्रगट दिखते है क्योंकि देखो सातवें महाशयजीने मास वृद्धि दो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करनेके लिये पर्युषणाकल्पचूर्णिका और महानिशीथके दशवे उद्देशकी चूर्णिका पाठ लिख दिखाया परंतु शास्त्रकार महाराजोके विरुद्धार्थमें अधूरी बात भोले जीवोंको दिखानेसे संसारवृद्धिका कुछभी भय हृदयमेंनलाये मालूम होता है क्योंकि प्रथमतो, महानिशीथकी चूर्णिका नाम लिखा सोतो उपयोग शून्यताके कारणसे मिथ्या है क्योंकि महानिशीथकी चूर्णि नहीं किंतु निशीथसूत्रकी चूर्णि है और पर्युषणाकल्प चूर्णिमें तथा निशीथसूत्रकीचूर्णिमें खास पर्युषणाकेही संबंधकी व्याख्यामें अधिक मासको गिनतीमें प्रमाण किया है और मास वृद्धि होनेसे अभिवर्द्धित संवत्सरमें वीस दिने पर्युषणाकही है तैसेहीं मास वृद्धिके अभावसे चंद्र संवत्सरमें ५० दिने पर्युषणा कही है और पञ्चक परिहाणीका कालमें

शरकदमे १८० दिनके छ मासका कल्प कहा है और मास वृद्धिके अभावसे आषाढ़ चौमासीसे पांच पांच दिनकी वृद्धि करते इसवे पञ्चकमें पचासमें दिन भाद्र पद शुक्ल पञ्चमीको पर्युषणा करनेमें आती थी परंतु कारणसे श्रीकालकाचार्य्यजीने एकोन पञ्चाशवें (४९) दिन भाद्र शुदी चौथको पर्युषणा करी है जिसका संबंधभी विस्तार पूर्वक दोनु चूर्णिमें कहा है सो दोनुं चूर्णिके पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारवाले दोनुं पाठ भावार्थ सहित इसीही ग्रन्थके पृष्ठ ९२ से लेकर १०४ तक छप गये है सो पढ़नेसे सर्व निर्णय हो जायेगा। परन्तु बड़ेही अफसोसकी यात है कि सातवें महाशयजी दोनु चूर्णिके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके फिर मास वृद्धिके अभावसे ४९ वे दिने पर्युषणा करनेवाले पाठको मास वृद्धि दो श्रावण होते भी लिखके दोनों चूर्णिकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें यावत् ८० दिने पर्युषणा स्थापन करनेके लिये बाल जीवोंको अधूरे पाठ लिख दिखाते कुछ भी लज्जा नहीं पाते हैं सो भी कलयुगि विद्वत्ताका नमूना है इसलिये मास वृद्धिके अभावके विस्तार वाले सब पाठोंको छोड़ करके मास वृद्धि होते भी उसीमेंसे अधूरेपाठ सातवेंमहाशयजीने लिखे है सो अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे शास्त्रविराधक उत्सूत्र भाषणाचार्यके गुण प्रगट दिखाये है सो तो विवेकी पाठक वर्ग स्वय विचार लेवेंगे,—और सुप्रसिद्ध विद्वान् तीसरे महाशयजी श्रीविनयविजयजीने भी, पण्डितहर्षभूषणजीकी और धर्मसागरजीकी धूर्तामें पड़कर अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे ऊपरकी दोनों चूर्णिके अधूरे पाठ श्रीसुखबोधिका वृत्तिमें लिखे है उसी तरहसे वर्त्तमानमें सातवें महाशयजीने भी किया परन्तु

पर भवका और विद्वानोंके आगे अपने नामकी
करानेका कुछ भी पूर्वापरका विचार न किया, अ
अन्ध परम्पराके मिथ्यात्वको पुष्टीकारक शास्त्रकार
राजोंके विरुद्धार्थमें ऐसे अधूरे पाठ लिखके और कु
योंका संग्रह करके वाल जीवोंको सत्य वात परसे श्रद्धा
करनेके लिये कदापि परिश्रम नहीं करते, सो सो नि
पाती सज्जनोंको विचार करना चाहिये;—

और "जब दो श्रावण आवे तो श्रावण सुदी
रोज सांवत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्ध
नहीं है तो क्या आग्रह करना ठीक है" यह भी
महाशयजीका लिखना गच्छपक्षी वाल जीवोंको मिथ्य
भ्रममें गेरनेके लिये अज्ञताका अथवा अभिनिवेशिक
त्वका सूचक है क्योंकि दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्
करना ऐसा तो किसी भी शास्त्रमें नहीं लिखा है तो
दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका वृथ
पुकारते है और दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें पर्यु
करना सो तो श्रीकल्पसूत्रके मूलपाठानुसार तथा उ
अनेक व्याख्यायोंके अनुसार और युक्तिपूर्वक स्वयं
सो तो इसी ग्रन्थकी आदिमेंही विस्तारसे लिखनेमें आ
और खास सातवें महाशयजी भी श्रीकल्पसूत्रके मूलप
तथा उसीकी वृत्तिको हर वर्ष पर्युषणामें वांचते हैं
जैन पञ्चाङ्गके अभावसे "जैनटिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र
मध्ये पौषो युगान्ते च आषाढ एव वर्द्धते नान्येमासा
प्यनकंतु अधुना सम्यग् न ज्ञायतेऽतः पञ्चाशद् भिर्दिनैः

तथा दीपिका वृत्तिमें और सुखबोधिका वृत्तिमें अपने ही गच्छके विद्वानोंने खुलासा पूर्वक लिखे हैं सो सातवें महाशयजी अच्छी तरहसे जानते हैं और दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें ५० दिन पूरे होते हैं इसलिये "जब दो श्रावण आवे तो श्रावण सुदी चौथके रोज सांवत्सरिक कृत्य करे ऐसा तो पाठ कोई सिद्धान्तमें नहीं है तो आग्रह करना क्या ठीक है" सातवें महाशयजीका यह लिखना मायावृत्तिसे अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको प्रगट करनेवाला प्रत्यक्ष सिद्ध होगया सो पाठकवर्ग भी विचार लेवेंगे,—

और (दो भाद्र आवे तो किसी तरह पूर्वोक्त पाठका समर्थन करोगे परन्तुत्तर दिनमें चौमासी प्रतिक्रमण करना चाहिये) सातवें महाशयजीके इस लेखपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि–दो भाद्रआवे तब पूर्वोक्त पाठके अभिप्रायसे ५० दिनकी गिनती करके प्रथम भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो तो न्यायकी बात है परन्तु दो भाद्र होते भी पिछाड़ीके ७० दिन रखनेके लिये दूसरे भाद्रमें पर्युषणा करनेवालोंकी बड़ी भूल है क्योंकि पूर्वोक्त पाठमें कारण योगे ४९ वें दिन पर्युषणा करी है परन्तु ५१ वें दिन भी नहीं करी है इस लिये दो भाद्र होनेसे दूसरे भाद्रमें पर्युषणा करने वालोंको ८० दिन होते हैं इसलिये श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध बनता है और चार मासके १२० दिनका वर्षाकालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे पिछाड़ी ७० दिन रहनेका दोनु चूर्णिके पाठमें खुलासा पूवक कहा है सो तो इसीही ग्रन्थके पृष्ट ९४ और ९९ वेंमें पाठ छप गये हैं इसलिये मास वृद्धि होते भी पिछाड़ीके ७० दिन रखनेका आग्रह करने वाले अज्ञानियोंकी

पंक्तिमें गिनने योग्य है सो तो इस ग्रन्थको संपूर्ण पढ़नेवाले विवेकी सज्जन स्वयं विचार सकते हैं :—

और दो श्रावण तथा दो भाद्रपद और दो आश्विन हो तोभी आषाढ चौमासीसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें अथवा प्रथम भाद्रमें पर्युषणा करनी चाहिये जिससे पिछाड़ी १०० दिने चौमासी प्रतिक्रमण करनेमें आवे तो कोई दूषण नहीं है किन्तु शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक है इसका विशेष विस्तार पहिलेही छप चुका है। और नवमे पृष्ठके मध्यमें तिथिसंबंधी लिखा है जिसकी तो समीक्षा आगे लिखुंगा परन्तु आठवें पृष्ठके अन्तमें तथा नवमे पृष्ठके आदि अन्तमें और दशवे पृष्ठकी आदिमें छट्ठी पंक्ति तक लिखा है कि— (जैसे फाल्गुन और आषाढकी वृद्धि होनेपर दूसरे फाल्गुनमें और दूसरे आषाढमें चौमासी प्रतिक्रमणादि करते हो, उसी तरह अन्य अधिक मासमें भी दूसरेहीमें करना वाजिब है। वैसा नहीं करोगे तो विरोधके परिहार करनेमें भाग्यशाली नहीं बनोगे। एक अधिकमासमाननेसे अनेक उपद्रव खड़े होते हैं और अधिकमासको गिनतीमें न लेनेवालेको कोई दोष नहीं है। उसी तरह तुम भी अधिक मासको निःसत्त्व मानकर अनेक उपद्रव रहित बनो।

इस रीतिकी व्यवस्था रहते हुए कदाग्रह न छूटे तो भले स्वपरम्परा पालो परन्तु स्वमन्तव्यमें विरोध न आवे ऐसा वर्त्तावकरना बुद्धिमानपुरुषोंका काम है। जैसे फाल्गुनके अधिक होनेपर दूसरे फाल्गुनमें नैमित्तिक कृत्य करते हो उसी तरह अन्य अधिकमास आनेपर दूसरे महीनेमें नैमित्तिक कृत्योंके करनेका उपयोग रक्खो कि जिससें कोई वि-

रोध न रहे । दो श्रावण हो,अथवा भाद्र हो तथा दो आश्विन होतोभी कोईविरोध नहीं रहेगा । तीर्थंकर महाराजकी आज्ञा सम्यक् प्रकारसे पलेगी)

ऊपरके लेखमें सातवें महाशयजीने अधिक मासको निःसत्व मान कर गिनतीमें निषेध किया तथा गिनतीमें लेनेवालोंको अनेक उपद्रव दिखाये और गिनतीमें नहीं लेनेवालोंको दूषण रहित ठहराये फिर मास वृद्धि होनेसे दूसरे मासमें नैमित्तिक कृत्य करनेका भी ठहराया इसपर मेरेको बड़ेही आश्चर्य्य सहित खेदके साथ लिखना पड़ता है कि सातवें महाशयजीके विद्वत्ताकी विवेक बुद्धि किस खाड़में चली गई होगी सो ऊपरके लेखमें विवेक शून्य होकर पूर्वापरका विचार किये बिनाही अटपटांग लिख दिया क्योंकि देखो सातवें महाशयजी यदि अधिक मासको निःसत्व मान करके गिनतीमें नहीं लेते होवे तबतो दो श्रावण, दो भाद्र, दो आश्विन, दो फाल्गुण और दो आषाढ़ मासोंका उन्होंका लिखनाही वन्ध्याके पुत्र समान हो जाता है और मास वृद्धि होनेसे दो श्रावणादि लिखते हैं तथा उसी मुजबही वर्त्ताव करते हैं तब तो अधिक मासको निःसत्व मान करके गिनतीमें निषेध करना (गिनतीमें नहीं लेना) सो ममजननीवंध्या समान बाल लीलाकी तरह होजाता है क्योंकि दो श्रावणादि लिखके उसी मुजब वर्त्ताव करना फिर मास वृद्धिकी गिनती निषेध करना यहतो विवेक शून्यके सिवाय और कौन होगा क्योंकि दो श्रावणादि लिखके उसी मुजब वर्त्ताव करते हैं इसलिये उसीकी गिनतीका निषेध करना तथा गिनतीमें लेने

वालोंको अनेक उपद्रव दिखाने और आप दोनुं मासों को लिखके उसी मुजब वर्त्ताव करते भी, उसीको गिनतीमें न लेते हुये प्रत्यक्ष माया वृत्तिसे दूषण रहित बनना सो सब बाल जीवोंको कदाग्रहमें फंसाकर उत्सूत्र भाषणसे संसार परिभ्रमणका हेतु है सो तो निष्पक्षपाती तत्वज्ञ पुरुष स्वयं विचार लेवेंगे ;—

और मास वृद्धि होनेसे मास तिथि नियत सब नैमित्तिक कृत्योंको दूसरे मासमें करनेका सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो भी अज्ञताका सूचक है क्योंकि वर्त्तमानमें मास वृद्धि होनेसे मास तिथि नियत कृत्य, आगे पीछे दोनों मासमें करनेमें आते हैं याने कृष्ण पक्षके तिथि नियत कृत्य प्रथम मासके प्रथम कृष्ण पक्षमें करनेमें आते हैं और शुक्ल पक्षके तिथि नियत कृत्य दूसरे मासके दूसरे शुक्ल पक्षके करनेमें आते हैं :—

मित्रवत् न्यायसे अर्थात्—एक नगरमें सज्जनादि गुनयुक्त व्यवहारिया रहता था उसीने अपने भोजनकी तैयारी करी उसी समय उसीके मित्रका आगमन हुआ तब दूसरा भोजन बनानेका अवसर न होनेसे अपने भोजनमेंसे आधा मित्रको दिया और आधा आपने ग्रहण किया, उसी दृष्टान्तके न्यायसे एक नगर रूपी संवत्सर उसीमें सज्जनादि गुनयुक्त व्यवहारियावत् मास उसीके भोजन रूपी नैमित्तिक कृत्य और अधिक मास रूपी मित्रका आगमन होनेसे आधे आधे नैमित्तिक कार्य बांट लिये समजो जैसे दो कार्त्तिक होवेंगे तब श्रीसंभवनाथस्वामीके केवल ज्ञान कल्याणकके श्रीपद्मप्रभुजीके जन्मकल्याणकके तथा दीक्षाकल्याणकके, श्रीने-

मिनाथजीके च्यवन कल्याणकके और श्रीमहावीरस्वामीके मोक्षकल्याणकके उच्छव तपश्चर्यादिकार्य, तथा दीपमालिका (दीवाली) और उसीके सम्बन्धीकार्य प्रथम कार्तिक मासके प्रथम कृष्णपक्षमें करनेमें आवेंगे, दो चैत्र होनेसे श्रीपार्श्व-नाथजीके केवल ज्ञानादि कार्य प्रथम चैत्रमें तथा श्रीवर्द्धमा-नस्वामीके जन्मादिके तथा ओलियों वगैरह दूसरे चैत्रमें और दो आषाढ होनेसे श्रीआदिनाथजीके च्यवनादिके कार्य प्रथम आषाढमें और श्रीवर्द्धमानस्वामीके च्यवनादिके कार्य तथा चौमासी वगैरह दूसरे आषाढमें इसी तरहसे सब अ-धिक मासोंमें समझना चाहिये।

और इस बातका विशेष खुलासा पांचवें महाशयजी न्यायरत्नजीके लेखकी समीक्षामें भी लिखनेमें आया है सो इसीही ग्रन्थके पृष्ठ २३४।२३५।२३६ में छप गया है सो पढ़नेसे विशेष निर्णय हो जावेगा ;—और मासवृद्धि होनेसे ऊपर मुजबही कल्याणकादि तपश्चर्या करनेके लिये खास सातवें महाशयजीकेही पूर्वज श्रीतपगच्छमें सुप्रसिद्ध श्रीविजयसेन-सूरिजीने भी कहा है तथाहि श्रीसेनप्रश्ने सप्तसप्तति (७७) पृष्ठे यथा :—

प्रश्नः—चैत्रमास वृद्धौ कल्याणकादि तपः प्रथमेद्वितीये वा मासिकार्यं।

उत्तरम्—प्रथमचैत्रासित द्वितीयचैत्रसित पक्षाभ्यां चैत्रमास सम्बन्धी कल्याणकादि तपः श्रीतातपादैरपि कार्य-माणं दृष्टमस्ति तेन तथैवकार्यमित्यादि।

और लौकिकजन भी दो भाद्रपद होनेसे श्रीकृष्णजीकी जन्माष्टमी प्रथम भाद्रपदके प्रथमपक्षमें मानते हैं तथा दो

आश्विन होनेसे श्राद्धपक्ष प्रथम आश्विनमें और दशहरा दूसरे आश्विनमें, इसी तरहसे सब अधिक मासोंके कारणसे मास नैमित्तिक कार्य आगे पीछे दोनोंमें मानते हैं। परन्तु सातवें महाशयजी नैमित्तिक कार्य केवल दूसरे मासमें ही करनेका लिख करके दो कार्त्तिक होवे तब दिवाली वगैरह कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य दूसरे कार्त्तिकमें तथा दो पौष होवें तब श्रीचन्द्रप्रभुजीके, श्रीपार्श्वनाथजीके जन्म, दीक्षादि कल्याणक दूसरेपौषमें और दो चैत्रहोनेसे श्रीपार्श्वनाथजीके केवल ज्ञान कल्याणकको दूसरे चैत्रमें इसी तरहसे कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य भी दूसरे मासमें ठहराते हैं सो शास्त्रविरुद्ध होनेसे अज्ञाताका कारण है क्योंकि ऊपरोक्त लेखानुसार ऊपर के कार्य प्रथम मासके प्रथम कृष्णपक्षमें होने चाहिये सो तो न्याय दृष्टि वाले विवेकी पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे;—

और उपरोक्त नैमित्तिक कार्योंके लेखसे दो भाद्रपद होनेसे पर्युषणा भी दूसरे भाद्रपदके दूसरे शुक्लपक्षमें सातवें महाशयजी ठहराते हैं सो भी निष्केवल अपनी अज्ञानता को प्रगट करते हैं क्योंकि मास नैमित्तिक कार्य अधिक मास होनेसे आगे पीछे दोनों मासमें करनेमें आते हैं परन्तु पर्युषणा वैसे नहीं हो सकती है क्योंकि पर्युषणा तो दिनोंके प्रतिबद्ध होनेसे अषाढ़ चौमासीसे ५० दिनकी गिनतीसे निश्चय करके करनेका अनेक शास्त्रोंमें प्रगट पाठ है इसलिये दो भाद्रपद होनेसे पर्युषणा दूसरे भाद्रपदमें नहीं किन्तु प्रथम भाद्रपदमें ५० दिनकी गिनतीसे शास्त्रोंको प्रमाण करने वाले आत्मार्थियोंको करनी चाहिये और प्राचीन कालमें जैन पञ्चांगानुसार मास वृद्धि होनेसे श्रावणमें पर्यु-

यणा करनेमे आतीथी तथा वर्तमानकालमें दो श्रावण होनेसे दूसरे श्रावणमें पर्युषणा करनेमें आती है इसलिये मासवृद्धि होतेभी भाद्रपद प्रतिबद्ध पर्युषणा नही ठहर सकती है किन्तु दिनोंके प्रतिबद्धही गिननेसे जहां व्यवहार से ५० दिन पूरे होवे वहांही करनी उचित है इतने परभी सातवें महाशयजी अपने कदाग्रहके हठवादसे शास्त्रोंके प्रमाणोंको छोड़ करके नैमित्तिक कार्योंकी तरह दूसरे भाद्रपदमें पर्युषणा करनेका ठहराते हैं तोभी उन्होंको प्रत्यक्ष विरोध आता है सोही दिखावते हैं कि–खास सातवें महाशयजीके पूर्वजने अधिक मास होनेसे कृष्णपक्षके नैमित्तिक कार्य प्रथम मासके प्रथम कृष्णपक्षमें करनेका कहा है उसी मुजब सातवें महाशयजी पर्युषणाकरें तब तो पर्युषणाके आठदिनोंके उच्छव का भङ्ग हो जावेगा और पर्युषणामे पहिले कृष्णपक्षके चार दिनोंके कार्य प्रथम भाद्रपदमें करने पड़ेगे फिर एक मास पर्यन्त मौन धारण करके पर्युषणामें पिछाड़ीके चार दिनोंके कार्य दूसरे भाद्रपदमे करें तब तो सातवें महाशयजीकी खूब विटंबना होजावे सो तत्त्वज्ञ विवेकी जन स्वयं विचार लेवेंगे;–

और ओलियें छठे महीने करनेमें आती है परन्तु अधिक मास होनेसे सातवें महीने करनेमें आती है तथा चौमासी चौथे महीने करनेमें आता है परन्तु अधिक मास होनेसे पांचवें महीने करनेमें आता है सो तो न्यायपूर्वक युक्ति की बात है परन्तु पर्युषणा तो आषाढ चौमासीसे ५० दिने अवश्य करके करनेका कहा है, इसलिये अधिक मास हो तो भी ५० वें दिनकी रात्रिको भी उल्लंघनकरनेसे मिथ्या-

त्वकी प्राप्ति होती है तो फिर दूसरे भाद्रपदमें ८० दिने पर्यु-पणा करना सो तो कदापि श्रीजिनाज्ञामें नहीं आ सकता है सो भी विवेकी पाठकगण स्वयं विचार लेवेंगे;—

और शास्त्रानुसार भावपरंपरा करके तथा युक्ति पूर्वक और लौकिक व्यवहार मुजब अधिक मास होनेसे नैमित्तिक कार्य आगे पीछे दोनों मासमे करनेमें आते हैं सो तो सातवें महाशयजीके पूर्वजने भी लिखा है जिसका पाठ ऊपरही लिखनेमें आया है तथापि सातवें महाशयजी प्रथम मासको छोड़करके दूसरे मासमें नैमित्तिक कार्य करनेके लिये "वैसा नहीं करोगे तो विरोधके परिहार करनेमें भाग्य-शाली नहीं वनोगे" ऐसे अक्षर लिखके प्रथम मासमें नैमित्तिक कार्य करने वालोंको विरोध दिखाते हैं सो कोई भी शास्त्रके प्रमाण बिना अपनी मति कल्पनासे भोले जीवोंको भ्रममे गेरनेंके लिये अपने पूर्वजके वचनको भी विरोध दिखाने वाले सातवें महाशयजी जैसे कलियुगि विनीत प्रगट हुवे है सो तो अपने पूर्वजोंको खोटे कहके आप भले वनते हैं इसलिये आत्मार्थियोंको इन्हकी कल्पित बात प्रमाण करनें योग्य नही है,—

और (कदाग्रह न छूटे तो भले स्वपरंपरा पालो) सातवें महाशयजीका यह भी लिखना भोले जीवोंको कदाग्रहमें फंसाकर मिथ्यात्वको वढ़ानेवाला है सो तो इसीही ग्रंथके पृष्ठ ३३९ से ३४२ तकका लेख पढनेसे मालूम हो सकेगा परंतु सातवें महाशयजीने ऊपरके लेखमें अपने अन्तरके भावका सूचन किया मालूम होता है क्योंकि सातवें महाशयजी बहुत वर्षोंसे काशीमें ठहर कर अपनी विद्वत्ता प्रगट कर रहे हैं

इसलिये भोले जीव जानते है कि सातवें महाशयजीकी तरफसे पर्युषणा विचारका लेख प्रगट हुवा है सो शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वकही होगा परन्तु उसी लेखको तत्वज्ञ पुरुषोंने देखा तो निष्केवल शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें तथा उत्सूत्रभाषणोंके संग्रह वाला और कुयुक्तियोंके संग्रह वाला होनेसे अज्ञानी जीवोंको मिथ्यात्वमें फंसाने वाला मालूम हुवा तब उसीकी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक समीक्षा मेरेको भव्यजीवोंके उपकारके लिये इतनी लिखनी पड़ी है इसको वांचकर सातवें महाशयजीको अपनी विद्वत्ताके अभिमानसे और अभिनिवेशिक मिथ्यात्वके कारणसे अपना मिथ्यापक्षके कल्पित कदाग्रहको छोड़कर सत्य बात ग्रहण करनी बहुतही मुश्किल होनेसे (कदाग्रह न छूटेतो भले स्व परंपरा पालो) ऐसे अक्षर लिखके कदाग्रहको तथा शास्त्रोंके प्रमाण बिना कल्पित बातोंकी अंध परम्पराको पुष्ट करके भोले जीवोंको उसीमें फंसाये और आपनेभी उसीका शरणालेकरके अपना अन्तर मिथ्यात्वको प्रगट किया इस-लिये इस ग्रंथकारका सब सज्जन पुरुषोंको यही कहना है कि जो अल्पकर्मी मोक्षाभिलाषी आत्मार्थी होगा सोतो शास्त्रोंके प्रमाण विरुद्ध अपने अपने कदाग्रहकी अन्ध परंपराके पक्षका आग्रहमें तत्पर न बनके इस ग्रंथको सम्पूर्ण पढ़ करके पंचांगी प्रमाण पूर्वक युक्ति सहित सत्य बातोंको ग्रहण करेगा दुसरोंसे करावेगा और बहुल कर्मी मिथ्यात्वी होगा सोतो शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक सत्य बातोंको जानकरकेभी उसीको ग्रहण न करता हुआ अपने कदाग्रहकी अन्ध परम्परामें रहकर उसीको पुष्ट करने

के लिये और सत्य बातोंका निषेध करनेके लिये नवीन कुयुक्तियोंके विकल्प खड़े करके विशेष मिथ्यात्व फैलावे और दूसरे भोले जीवोंकोभी उसीमें फंसावेगा सो उसीकेही निबीड़ कर्मोंका उदय समझना परन्तु उसीमें शास्त्र कारका कोई दोष नहीं है इसलिये यहां मेरा खुलास पूर्वक यही कहना है कि अधिकमासकी गिनती निषे करनेवाले और गिनतीप्रमाण करनेवालोंको अनेक कुयुक्तियोंसे कल्पित दूषण लगानेवाले सातवें महाशयजी जैसे विद्वान् कहलाते भी निःकेवल अन्ध परम्पराके कदाग्रहमें पड़के बालजीवोंको भी उसीमें फंसानेके लिये अभिनिवे शिक मिथ्यात्वको सेवन करके श्रीतीर्थंकरगणधरादि महाराजोंकी और अपने पूर्वजोंकी आशातना करते हुवे पञ्चांगीके प्रत्यक्ष प्रमाणोंको छोड़कर फिर शास्त्रकार महाराजोंके विरुद्धार्थमें उत्सूत्र भाषणों करके खूब पाखन्ड फैलाया है और फैलारहेहैं जिससे श्रीतीर्थंकर महाराजकी आज्ञाको उत्थापन करते हैं इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करनेवाले कदाग्राहियोंको मिथ्यादृष्टि निन्हवोंकी गिनतीमें गिनने चाहिये। यदि श्रीतीर्थंकर महाराजकी आज्ञाको अराधन करके आत्म कल्याणकी इच्छा होवे तो अधिक मासके निषेध करनेसम्बन्धी कार्योंका मिथ्या दुष्कृत देकर उसीकी गिनतीके प्रमाण मुजब वर्तों नहीं तो उत्सूत्र भाषणोंके विपाकतो भोगे विना छूटने मुशकिल है;—

और फिरभी स्वपरम्परा पालने सम्बन्धी सातवें महाशयजीने लिखा है कि (स्वमंतव्यमे विरोध न आवे ऐसा वर्ताव करना बुद्धिमान पुरुषोंका काम है) इस लेखपर

भी मेरेको इतनाही कहना है कि—यह भी सातवें महाशयजीका लिखना अज्ञताका सूचक है क्योंकि श्रीजिनेश्वर भगवान्‌का कथन करा हुआ श्रीजिन प्रवचन अविसंवादी होनेसे सब गणधरोंके सबगच्छोंकी एकही समाचारी होती है परन्तु इस वर्तमान कालमें तो सब गच्छ वालोंकी भिन्न भिन्न समाचारी है और शास्त्रोंके प्रमाण विनाही अन्ध परम्परासे कितनीही बातें चल रही है इसलिये शास्त्र प्रमाण बिनाकी द्रव्य परम्परा पालने वालोंको तो श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध महान् विरोध प्रत्यक्ष दिखता है तथापि अपने अन्ध परम्परा के कदाग्रहको नही छोड़ते हैं फिर कुयुक्तियोंसे अपना कदाग्रहके मंतव्यको पुष्ट करके विरोध रहित (सातवें महाशयजीकी तरह) बनना चाहते है सो तो बुद्धिमान पुरुष नहीं किन्तु अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी पक्के कदाग्रही कहे जाते हैं इसलिये अपने आत्म साधनमें विरोध नही चाहनेवाले तत्वज्ञ पुरुषोंको तो शास्त्र विरुद्ध अपनी परम्पराको छोड़ करके शास्त्रानुसार सत्य बातको ग्रहण करनाही परम उचित है;—

और पर्युषणा विचारके दशवें पृष्ठकी सातवीं पंक्तिसें दशवीं पंक्ति तक लिखा है कि (हित बुद्धिसे लिखे हुए विषय पर समालोचना करना हो तो भले करो किन्तु शास्त्र मार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखना समालोचनाकी समालोचना शास्त्र मर्यादा पूर्वक करनेको लेखक तैयार है) सातवें महाशयजीके इस लेखपर भी मेरेको इतना ही कहना है कि—जैसे कितनेही ढूंढ़िये तेरहा पंथी वगैरह कदाग्रही मायावृत्तिवाले धूर्त लोग अपने कदाग्रहके पक्षको

बढ़ानेके लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे बिना सम्बन्धके अधूरे पाठके फिर उलट अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोंसे तथा कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंकी सत्य बातों परसे श्रद्धा भ्रष्ट करके अपने मिथ्यात्वके पाखण्डमें गेरके संसार वृद्धिका कारण करते हैं तो भी हितोपदेशसे अच्छा किया ऐसा अज्ञताके कारणसे वृथा पुकार करते हैं।

तैसेही पर्युषणा विचारके लेखकने भी किया, अर्थात्–अपने कदाग्रहमें मुग्ध जीवोंको फंसानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णि वगैरह शास्त्रोंके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें बिना सम्बन्धके अधूरे पाठ लिखके उलटे अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोंकी तथा कुयुक्तियोंकी कल्पनायोका पर्युषणा विचारके लेखमें संग्रह करके भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे हित बुद्धिसे विषय लिखनेका ठहराते हैं सो कदापि नहीं ठहर सकता है क्योंकि हितबुद्धिकेबहानेमिथ्यात्वकेपाखण्डकी वृद्धिका कारण किया है इसलिये भव्यजीवोंके उपकारके लिये पर्युषणा विचारके लेखकीशास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक समालोचना करनी मेरेको उचित थी सो करी है जिसपर भी शास्त्रमार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखनेका सातवें महाशयजी लिखते हैं इसपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि–खास आपही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे (शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक अधिक मासकी गिनती प्रमाण तथा श्रावण वृद्धिसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा और मासवृद्धिसे १३ मासके क्षामणे वगैरह) सत्य बातोंको ग्रहण नहीं करते हुए अपने

भी मेरेको इतनाही कहना है कि-यह भी सातवें महाशय-जीका लिखना अज्ञताका सूचक है क्योंकि श्रीजिनेश्वर भगवान्‌का कथन करा हुआ श्रीजिन प्रवचन अविसंवादी होनेसे सब गणधरोंके सबगच्छोंकी एकही समाचारी होती है परन्तु इस वर्तमान कालमें तो सब गच्छ वालोंकी भिन्न भिन्न समाचारी है और शास्त्रोंके प्रमाण विनाही अन्ध परम्परासे कितनीही बातें चल रही है इसलिये शास्त्र प्रमाण विनाकी द्रव्य परम्परा पालने वालोंको तो श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध महान् विरोध प्रत्यक्ष दिखता है तथापि अपने अन्ध परम्परा के कदाग्रहको नही छोड़ते हैं फिर कुयुक्तियोंसे अपना कदाग्रहके मंतव्यको पुष्ट करके विरोध रहित (सातवें महाशयजीकी तरह) बनना चाहते है सो तो बुद्धिमान पुरुष नहीं किन्तु अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी पक्के कदाग्रही कहे जाते हैं इसलिये अपने आत्म साधनमें विरोध नही चाहनेवाले तत्वज्ञ पुरुषोंको तो शास्त्र विरुद्ध अपनी परम्पराको छोड़ करके शास्त्रानुसार सत्य बातको ग्रहण करनाही परम उचित है;–

और पर्युषणा विचारके दशवें पृष्ठकी सातवीं पंक्तिसें दशवीं पंक्ति तक लिखा है कि (हित बुद्धिसे लिखे हुए विषय पर समालोचना करना हो तो भले करो किन्तु शास्त्र मार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखना समा-लोचनाकी समालोचना शास्त्र मर्यादा पूर्वक करनेको लेखक तैयार है) सातवें महाशयजीके इस लेखपर भी मेरेको इतना ही कहना है कि—जैसे कितनेही ढूंढ़िये तेरहा पंथी वगैरह कदाग्रही मायावृत्तिवाले धूर्त लोग अपने कदाग्रहके पक्षको

बढ़ानेके लिये शास्त्रोंके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे बिना सम्बन्धके अधूरे पाठके फिर उलट अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोंसे तथा कुयुक्तियोंसे भोले जीवोंकी सत्य बातों परसे श्रद्धा भ्रष्ट करके अपने मिथ्यात्वके पाखण्डमें गेरके संसार वृद्धिका कारण करते हैं तो भी हितोपदेशसे अच्छा किया ऐसा अज्ञताके कारणसे वृथा पुकार करते हैं ।

तैसेही पर्युषणा विचारके लेखकने भी किया, अर्थात्— अपने कदाग्रहमें मुग्ध जीवोंको फंसानेके लिये श्रीनिशीथ चूर्णि वगैरह शास्त्रोंके आगे पीछेके सब पाठोंको छोड़ करके उसीके बीचमेंसे शास्त्रकारोंके विरुद्धार्थमें बिना सम्बन्धके अधूरे पाठ लिखके उलटे अर्थ करके उत्सूत्र भाषणोंकी तथा कुयुक्तियोंकी कल्पनायोका पर्युषणा विचारके लेखमें संग्रह करके भी अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे हित बुद्धिसे विषय लिखनेका ठहराते हैं सो कदापि नहीं ठहर सकता है क्योंकि हितबुद्धिकेबहाने मिथ्यात्वकेपाखण्डकी वृद्धिका कारण किया है इसलिये भव्यजीवोंके उपकारके लिये पर्युषणा विचारके लेखकीशास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक समालोचना करनी मेरेको उचित थी सो करी है जिसपर भी शास्त्रमार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी रखनेका सातवें महाशयजी लिखते हैं इसपर भी मेरेको इतनाही कहना है कि— खास आपही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे(शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक अधिक मासकी गिनती प्रमाण तथा श्रावण वृद्धिसे ५० दिने दूसरे श्रावणमें पर्युषणा और मासवृद्धिसे १३ मासके क्षामणे वगैरह) सत्य बातोंको ग्रहण नहीं करते हुए अपने

कदाग्रहकी कल्पनाको स्थापन करनेके लियेऔर सत्यबातों को निषेध करनेके लिये पर्युषणा विचारके लेखमें,उत्सूत्र भाषणोंको और कुयुक्तियोंके विकल्पोंके प्रत्यक्ष मिथ्या गप्पोंको लिखके भी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक लिखनेवालेको शास्त्र मार्गसे विपरीत न चलनेके लिये सावधानी दिखाते हैं सो तो प्रत्यक्ष धूर्त्ताचारीका लक्षण है इसको पाठक वर्ग स्वयं विचार लेवेंगे;—

और (समालोचनाकी समालोचना शास्त्र मर्यादा पूर्वक करनेको लेखक तैयार है) सातवें महाशयजीके इस लेख पर भी मेरेको इतनाही कहना है कि–पञ्चांगीकी श्रद्धा रहित कदाग्रहमें आगेवान, अभिनिवेशिक मिथ्यात्वको सेवन करने वाले तथा अन्यायमें प्रवर्तने वाले होकरकेभी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक मेरे सत्य लेखोंकी समालोचना आप कैसे कर सकोगे क्योंकि जो आप पञ्चांगीकी श्रद्धा वाले आत्मार्थी तथा न्यायमें प्रवर्तने वाले होवो तबतो जो जो मैंने पर्युषणा विचारके लेखकी पंक्ति पंक्तिकी शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक समालोचना करके आपके लेखोंको उत्सूत्र भाषण रूप प्रत्यक्ष मिथ्या ठहराये है और सत्य बातोंको प्रगट करी है उसीको आद्यन्त पर्यंत पढ़के अपनी उत्सूत्र भाषणोंकी और प्रत्यक्ष मिथ्या लेखोंके भूलोंकी श्रीचतुर्विध संघ समक्ष आलोचना लेकर शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सत्य बातोंको ग्रहण करो पीछे मेरे लेखकी समालोचना करनेकी आपमें योग्यता प्राप्त होवे तब मेरे लेखकी समालोचना करनेको तैयार होना चाहिये। इतने परभी पर्युषणा विचार के सब लेखोंको आप सत्य समझते होवें तो पंक्ति पंक्तिके

सब लेखोंको शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सिद्धकर दिखावो नहीं दिखाओ तो उनीकी आलोचना लेकर सत्य बातोंको ग्रहण करो और अपने सब लेखोंको शास्त्रानुसार युक्ति पूर्वक सिद्ध नहीं करोंगे तथा अपनी भूलोंकी आलोचना भी नहीं लेवोंगे औरसत्य बातोंको ग्रहण भी नहीं करोंगे तबतक मैंरे लेखकी समालोचना करनेकी आपमें योग्यता प्राप्त नहीं हो सकेगी तथापि आप केवल अपनी विद्वत्ताकी शर्म-केमारे, लौकिक लज्जासे अपनी उत्सूत्र भाषणोंकी तथा प्रत्यक्ष मिथ्या (पर्युषणा विचारके) लेखोंकी भूलोंको छुपा करके शास्त्रानुसार युक्ति पूर्व्वक सत्य बातोंके सम्बन्धका सब लेखको छोड़ करके विना सम्बन्धका अधूरा लेखकी कुयुक्तियोंके विकल्पों से समालोचना करके शास्त्र मर्य्यादा पूर्वकके बहाने मुग्ध जीवोंको मिथ्यात्वमें फंसानेके लिये पर्युषणा विचार के लेखकी तरह फिर भी उद्यम करोंगे तो उसीके भी सबकी समालोचना करके आपके अन्यायके पाषण्डको शांत करनेके लिये मैंरेको जलदीसे लेखनी चलानी ही पड़ेगी इसमें फरक नहीं समझना ;—

और पर्युषणा विचारके दशवें पृष्टकी ११ वीं पङ्क्तिसे दशवें पृष्टके अन्त तक लिखा है कि (पाठक महाशयोंको पक्षपात शून्य होकर निबन्ध देखने की सूचना दी जाती है स्नेहरागके वस होकर असत्यको सत्य नहीं मानना और गतानुगतिक नहीं बनना तत्त्वान्वेषी बनकर जल्दी शुद्ध व्यवहारको स्वीकार करके भगवान्की आज्ञानुसार भाद्र सुदी चौथके दिन सांवत्सरिक वगैरह पांच कृत्योंका आराधनकरके थोड़ेभवमें पञ्चमज्ञानके भागीबनो इसतरह

का धर्मलाभ पाठकवर्गके प्रति लेखकदेताहै) इस रीतिसे सातवें महाशयजीने पर्युषणाविचारके लेखको पूर्ण किया है। अब ऊपरके लेखकी समीक्षा करते हैं कि–गच्छके पक्षपातका स्नेहरागसे असत्यको सत्यमान करके गतानुगतिक गड्डरीह प्रवाहवत् अन्ध परम्पराकोही मानने वाले मिथ्या दृष्टि कहे जाते हैं इसलिये तत्वान्वेषी बन करके शास्त्रानुसार युक्ति सम्मत सत्य बातोंका निर्णयपूर्वक ग्रहण करना सोआत्मार्थियोंका काम है इसलिये पक्षपात रहित पर्युषणा विचारके निबन्धको पढ़ा तों साफ मालूम हुआ कि पर्युषणा विचारके लेखकने अपनी अज्ञानताके कारणसे अपने गच्छका पक्षपात करके अन्ध परम्पराका मिथ्यात्वको बढ़ानेके लिये पं० हर्षभूषणजीकी धर्मसागरजीकी और विनयविजयजी वगैरहोंकी, उत्सूत्र भाषणोंकी कल्पनायोंको सत्य मानकर श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञाको उत्थापन करके पर्युषणा विचारके लेखमें केवल शास्त्रोंके विरुद्ध उत्सूत्र भाषणोंकी कल्पनायें भरी हुई होनेसे गच्छ पक्षके मिथ्या आग्रह करनेवाले बालजीवोंको श्रीजिनाज्ञासे भ्रष्टकरके मिथ्यात्वमें फंसाने वाला और खास पर्युषणा विचारके लेखकको संसार वृद्धिका हेतु भूत प्रत्यक्ष देखनेमें आया इसलिये पर्युषणा विचारके लेखकके तथा अन्य आत्मार्थियोंके उपकारके लिये उसीकी समालोचना करके निष्पक्षपाती पाठक गणको सत्यबात दिखाई है सो इसको पढ़कर पर्युषणा विचारके लेखक वगैरह यदि आत्मार्थि होवेंगे तब तो गच्छके पक्षपातका आग्रहको न रखके असत्यको छोड़कर सत्यको ग्रहण करके अपनी भूलोंको सुधारेंगे और अपनी विद्वत्ताके

अभिमानी मिथ्यात्वी होवेंगे तो विशेष कदाग्रह बढ़ानेके लिये उद्यम करेंगे (उसीका उत्तर तो देनाही होगा) परन्तु इस ग्रन्थके प्रगट होनेसे सम्यक्त्वी अथवा मिथ्यात्वी की तो परिक्षा अच्छी तरहसे हो जावेगी :—

और सातवें महाशयजी अधिक मासके ३० दिनोंको गिनतीमें छोड़ करके दो श्रावण होते भी भाद्रपदमें पर्युषणा करना सो शुद्ध व्यवहारसे भगवानकी आज्ञामे ठहराते हैं सो तो सोनेकी भ्रांतिसे केवल पीतल ग्रहण करने जैसा करके अपनी पूर्ण अज्ञता प्रगट करते हैं क्योंकि अधिक मासकी गिनती छोड़नेसे तो अनन्त संसारकी वृद्धिका हेतुभूत मिथ्यात्वकी प्राप्ति होती है इसलिये अधिक मासकी गिनती निषेध करने वाले कदापि आज्ञाके आराधक नहीं बन सकते हैं किन्तु शास्त्रानुसार युक्तिपूर्वक और प्रत्यक्ष वर्तावसे अधिकमासके ३० दिनोंको गिनतीमे लेनेसे ही भगवानकी आज्ञाका आराधन हो सकता है इसलिये अधिकमासकी गिनती प्रमाण करना सोही तत्वान्वेषी शुद्ध व्यवहारको ग्रहण करनेवाले भगवानकी आज्ञाके आराधक हो सकेंगे इसलिये मासवृद्धि दो श्रावण होनेसे ५० दिनकी गिनतीसे दूसरे श्रावणमें पर्युषण पर्वमें सांवत्सरिक वगैरह कृत्योंका आराधन करनेवाले आत्मार्थी होनेसे पञ्चम केवलज्ञानके भागी हो सकेंगे ।

और अन्तमें पाठकवर्गको धर्मलाभ लेखकने लिखा है सो भी बुद्धिकी अजीर्णता प्रगट करी मालूम होती है क्योंकि पाठकवर्गमें तो पर्युषणा विचारके लेखको बांचनेवाले आचार्य, उपाध्याय, गणी, पन्यास तथा साधु. साध्वी और लेखकसे दीक्षा

पर्यायमें अधिक मुनिमण्डली वगैरह सब कोई आजाते हैं इसलिये सबको धर्म्मलाभ देनेकी पर्युषणा विचारके लेख ककी ताकत नहीं होते भी देता है तो बुद्धिकी अजीर्णतामें क्या न्यूनता रही है सो विवेकीजन स्वयविचारसकतेहैं ; और सातवें महाशयजीने पर्युषणाविचारकेलेखमें अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये इतना परिश्रम किया है परन्तु अधिक मास किसको कहते हैं जिसकी भी तो उनकों मालूम नहीं है क्योंकि, देखो दुनियाके व्यवहारमें तिथि वृद्धिकी तरह दूसरेको अधिक मास कहते हैं। तथा जैनशास्त्रोंमें भी दूसरेकोंही अधिकमास कहा है॥ और लौकिक पञ्चाङ्गमें दोनों मासके मध्यमें संक्रान्ति रहितकों अधिकमास कहते है परन्तु दिनोंकी गिनतीमें दोनों मासके ६० दिनोंकों बराबर सब कोई लेते हैं इसलिये अधिक मासके दिनोंकी गिनती निषेध नहीं हो सकती है।

और सातवें महाशयजी अधिक मासके ३० दिनोंकों गिनतीमें नहीं लेनेका लिख करके भोले जीवोंको बहकाते हैं परन्तु खास आपही अधिक मासके ३०दिनोंको गिनतीमें ले करके सर्व व्यवहार करते हैं सो तो प्रत्यक्ष दीखता है तथापि अधिक मासके ३० दिनोको गिनतीमें नहीं लेनेका लिख करके भोले जीवोंको बहकाते हैं सो तो 'ममजननी वन्ध्या'की तरह प्रत्यक्ष धूर्त्तताका नमूना है सो तो विवेकी जन स्वयं विचार लेवेंगे।

और सातवें महाशयजीने अधिकमासको नपुंसक लि. सत्व ठहराकर उसीको गिनतीमें छोड़देनेका लिखा है परन्तु जब दो भाद्रपद होते हैं तब अधिक मास रूप दूसरे भाद्र-

पदमें खास आप पर्युषणा करते हैं और ८।१०।१५।२०।३०।४०।४५ दिनके उपवासोंकी तपस्याकी गिनतीमें अधिक मासके ३० दिनको बराबर गिनते हैं। तो अब पाठकवर्गको विचार करना चाहिये कि खास आप अधिक मासके दिनोंको तपश्चर्याकी गिनतीमें लेते हैं तथा अधिक मासमेंही पर्युषणा करते हैं तथापि उसीको नपुंसक निःसत्व ठहराकर दृष्टि-रागी भोले भाले जीवोंको श्रीजिनाज्ञासे भ्रष्ट करते हैं सो अभिनिवेशिक मिथ्यात्व से कितने संसार वृद्धिका हेतु है सो तत्वज्ञ स्वयं विचार लेवेंगे,—

और पर्युषणा विचारका छपाई खर्चा और टपाल खर्चा श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाके सम्बन्धसे लगा है सो तो यहांके दलीपसिंहजी जौहरीके पास काशी की पाठशालासे उदयराज कोचरका पोष्टकार्ड आया है उसी से तथा और भी कितनेही कारणोंसे सिद्ध होता है उसका विशेष विस्तार अवसर होनेसे पुनरावृत्तिमें लिखने में आवेगा और पर्युषणा विचारका लेख काशीमें उसी पाठ-शालेसें प्रगट भी हुवा है तथापि सातवें महाशयजी अपनी निन्दाकेभयसे श्री यशोविजयजी की पाठशालाके नामसे पर्युषणा विचारके लेखको प्रगट न कराते उदयराज कोचरके नामसे प्रगट कराया और श्रीकाशी (वाणारसी) का नाम भी न लिखाते प्रत्यक्ष मिथ्या फलोधीका नाम लिखाके मायावृत्ति से फलोधीके नामसे प्रगट कराया तो फिर अनुमान ८० जगह उत्सूत्र भाषणोंवाला तथा १० जगह प्रत्यक्ष मिथ्यालेखवाला और सत्य बात का निषेध करके अपनी कल्पनाकी मिथ्या बातको स्थापने

की कुयुक्तियों वाला और श्रीजिनाज्ञा मुजब वर्त्तने- वालोंको जूठी कल्पनासे दूषण लगाके अनन्त संसारका हेतु भूत मिथ्यात्वको बढ़ानेवाला पर्युषणा विचारके लेखमें अपना नाम प्रगट करते लज्जा आवे तो निज शिष्यविद्या विजयजीका नाम लिख देवे तोभी कुछ विशेष आश्चर्य नहीं है सो पाठकवर्ग स्वयं विचार लेवेंगे,—

और काशीनिवासी सातवें महाशयजी जैनतत्वदिग्दर्शन, आत्मोन्नति दिग्दर्शन, जैनशिक्षादिग्दर्शन वगैरह छोटे छोटे लेखोंको तो अपने नामसे प्रगट करते हैं तथा विद्या- विजयजीभी अपने गुरुजीका लम्बा चौड़ा नाम समेत जैन- पत्रमें अपना लेख प्रगट करते हैं और छोटी छोटी पुस्तकें भी श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाके नामसे प्रगट करनेमें आती है परन्तु पर्युषणा विचारके लेखमें न तो सातवें महाशयजीका नाम लिखा तथा विद्याविजयजीनेभी अपने गुरुजीका नाम भी नहीं लिखा और अपना निवास ठिकाना भी नहीं लिखा और श्रीयशोविजयजीकी पाठशालाका नाम भी नहीं लिखा इसपर भी बुद्धिजन विचार करें तो स्वयं मालूम हो सकेगा कि सातवें महाशयजीने दुनियामें अपनी निन्दाकी शर्मके मारे गुपचुप प्रगट कराया है क्योंकि इतने विद्वान् ऐसे प्रसिद्ध आदमी होकरके भी गच्छके पक्षपातसे ऐसा अनर्थ क्यों किया इसका भेद न खुलनेके वास्ते पाठ शालाका तथा पाठशालाके सम्पादकका नाम नहीं लिखा है परन्तु विवेकी बुद्धिजनोंके आगे तो ऐसी धूर्तता नहीं छुप सकती है,——

और जैनपत्रका अधिपति आठवा महाशय श्रावकनाम धारक भगुभाई फतेचन्दने सेप्टेम्बर मासकी २२वीं तारीख सन् १९०९ दूसरे श्रावण वदी १३, परन्तु हिन्दी भाद्रपद कृष्ण १३ वीर संवत् २४३५ के जैनपत्रका २३ वा अङ्ककी आदिमेंही 'पर्युषणा विषे विचार' नामसे जो लेख प्रगट करा है सो तो सातवें महाशयजीके पर्युषणा विचारके लेखको ही गुजराती भाषामें लिखको प्रगट किया है इसलिये जैनपत्रवालेके लेखको तो सातवें महाशयजीके लेखकी तरह ऊपर मुजबही समीक्षा समझ लेना और जैनपत्रवाला संप संप पुकारता है परन्तु एकएककी निन्दा करके कुसंपकी वृद्धि करता है तथा गच्छके पक्षपातसे सत्य बातोंका निषेध करके अपना मिथ्यापक्षको स्थापन करनेके लिये उत्सूत्रभाषणोंसे दुर्गतिका रस्ता लेता है और अज्ञानी जीवोंकोभी वहांही पहुंचानेके लिये उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह जैनपत्रमें प्रगट करता है और कान्फरन्स सुकृत भण्डारादिसे शासनोन्नतिके कार्यों में विघ्नकारक गच्छोंके खण्डनमण्डनका झगड़ा एकवार नहीं किन्तु अनेकवार जैनपत्रमें उठाया है क्योंकि देखो पर्युषणा सम्बन्धी भी प्रथमही छठे महाशयजीकी मिथ्या कल्पनाकर उत्सूत्र भाषणका लेखको जैनपत्रमें प्रगट करके झगड़ेकी नीव रोपन करी तथा सातवें महाशयजीके भी उत्सूत्र भाषणोंके संग्रहवाला लेखका भाषान्तर प्रगट करके उत्सूत्रभाषणोंके भयङ्कर विपाक लेनेके लिये दुर्गतिका रस्ता लिया और फिर भी छठे महाशयजी की तरफके श्रीखरतरगच्छ वालोंकी निन्दावाले तथा कोर्ट कचेरीमें झगड़ा लड़ाके दीर्घकाल पर्य्यन्त कुसंपकी वृद्धि करनेवाले दे।

लेखोंको प्रगट करके अपनी पूर्ण मूर्खता प्रगट करी और पर्युषणा, सामायिक, कल्याणक, वगैरह बातोंका झगड़ा बढ़ाया है (जिसका निर्णय तो इस ग्रन्थके पढ़नेसे मालूम हो सकेगा) इसलिये जैनपत्रवाले आठवें महाशयको जो संसारवृद्धिसे दुर्गतिमें परिभ्रमणका भय होवे तो उत्सूत्र भाषणोंका मिथ्या दुष्कृत देकर श्रीचतुर्विध संघ समक्ष उसीकी आलोचन लेवे तथा फिर कभी खण्डन मण्डन करके दूसरोंकी निन्दासे गच्छका झगड़ा न बढ़ावे और असत्यको छोड़कर सत्यको ग्रहण करे नहीं तो पक्षपातसे उत्सूत्रभाषणके विपाक तो भोगे विना कदापि नहीं छुटेंगे ।

और मेरेको बड़ेही खेदके साथ बहुतही लाचार हो करके लिखना पड़ता है कि–अधिक मासके ३० दिनोंकी गिनती निषेध करनेवाले उत्सूत्र भाषक मिथ्या हठग्राही अभिनिवेशिक मिथ्यात्वियोंकी विवेक बुद्धि कैसी नष्ट हो गई है सो पूर्वापरका विचार किये विनाही अधिक मासके ३० दिनोंमें सर्वकार्य्य करते भी पक्षपातके आग्रहसे गड्डरीह प्रवाहकी तरह मिथ्यात्वकी अन्ध परम्परासे एक एककी देखादेखी तात्पर्य्यार्थके उपयोग शून्य होकरके उसीकोही पकड़कर उसीकी पुष्टि करते हैं परन्तु श्रीजिनाज्ञाका उत्थापन करके बाल जीवोंको मिथ्यात्वमें फंसानेसे अपनी आत्मघातका कुछ भी भय नहीं करते हैं क्योंकि पञ्चाङ्गी प्रमाण पूर्वक और युक्ति सहित श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाके आराधक सभी आत्मार्थी जैनाचार्य्य वगैरह अधिक मासके दिनोंकी गिनती प्रमाण करकेही प्राचीन कालमें पूर्वधरादि महाराज भी पर्युषणा करते थे तथा वर्तमानमेंभी

नव कोई आत्मार्थि जन अधिक मासकी गिनती प्रमाण करकेही पर्युषणा करते हैं और आगे भी ऐसेही करेंगे परन्तु शासननायक श्रीवर्द्धमानस्वामीके मोक्ष पधारे बाद अनुमान एक हजार वर्ष व्यतीत हुए पीछे उत्सूत्र भाषणोंमें आगेवान गच्छ कदाग्रही शिथिलाचारी धर्मधूर्त जैनाभास पाखण्डी चैत्य वासियोंने पञ्चाङ्गी प्रमाणपूर्वक प्रत्यक्षसिद्ध होते भी कितनीही सत्य बातोंको निषेध करके अपनी मति कल्पनासे उत्सूत्र भाषणरूप कुयुक्तियों करके श्रीजिनाज्ञाविरुद्ध कल्पित बातोंकी प्ररूपणा करी और अविसंवादी श्रीजैन शासनमें वि संवादके मिथ्यात्वको बढ़ाया था जिससें शास्त्रानुसार तथा युक्ति पूर्वक अधिक मासकी गिनती तथा आषाढ़ चौमासीसे ५०दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेका प्रत्यक्ष दिखते हुए भी लौकिक पञ्चाङ्गमें मासवृद्धि दो श्रावणादि होनेसे प्रत्यक्ष शास्त्रोंके तथा युक्तिके भी विरुद्ध होकर यावत् ८० दिने श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करनेका सरू करके श्रीजिनाज्ञाका उत्थापनसे मिथ्यात्व फैला या और निदूषण बननेके लिये अधिक मासकी गिनती निषेध करके उत्सूत्र भाषणोंकी कुयुक्तियोंसे अज्ञानीजीवोंको अपने मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें फसानेके लिये धर्मधूर्ताई करनेमें कुछ कम नहीं किया था सो तो श्रीसंघपट्टककीव्याख्याओंके अवलोकनकरनेसे अच्छी तरहसे मालूम हो सकताहै ।

और कितनेही भारी कर्म प्राणी तो उपरोक्त मिथ्यात्वकी भ्रमजालमें फसकर अन्धपरम्परासे उसीकोही पुष्ट करते हुए बाल जीवोंको अपने फंदमें फसाते रहते थे उसी मिथ्यात्वकी अन्धपरम्पराकेही अनुसार पं० श्रीहर्षभूषणजी

और धर्मसागरजी वगैरह जो जो लेख लिख गये हैं और वर्त्तमानमें 'शास्त्र विशारद जैनाचार्य्य' की उपाधिधारक सातवें महाशयजी श्रीधर्म विजयजी जैसे प्रसिद्ध विद्वान् कहलाते भी उसी अन्धपरम्परासे मिथ्यात्वके कदाग्रहको पकड़कर अज्ञ जीवोंको उसीमें फसानेके लिये उसीको विशेष पुष्ट करनेका उद्यम करते हैं परन्तु श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाका उत्थापन करके प्रत्यक्ष पञ्चाङ्गी प्रमाण विरुद्ध प्ररूपणा करते हुए अभिनिवेशिकमिथ्यात्वसे सज्जन पुरुषोंके आगे हास्य काहेतु करनेका कारण करते भी कुछ लज्जा नहीं लाते हैं सो तो इस कलियुगमें पाखण्ड पूजा नामक अच्छेरेका प्रभाववही मालूम पड़ता है। इसलिये श्रीजिनाज्ञाके आराधक आत्मार्थी पुरुषोंको ऐसे उत्सूत्र भाषकोंकी कुयुक्तियोंके भ्रममें न पड़ना चाहिये और निष्पक्षपातसे इस ग्रन्थको आदिसे अन्त तक बांचकर असत्यको छोड़के सत्यको ग्रहण भी करना चाहिये परन्तु गच्छके आग्रहसे उत्सूत्र भाषणकी बातोंको पकड़कर उसीमें नहीं रहना चाहिये।

और भी श्रीधर्मसागरजीकी तथा श्रीविनयविजयजीकी धर्मधूर्त्ताई का नमूना पाठक वर्गको दिखाहूं, कि देखो श्रीविनयविजयजीने श्रीलोकप्रकाश नामा ग्रन्थ बनाया है सो प्रसिद्ध है उसीमें अधिक मासकी गिनती प्रमाण करी है अर्थात् समयादि सुक्ष्मकालसे आवलिका मुहूर्त्तादिककी व्याख्या करके ३० मुहूर्त्तोंका एक अहोरात्रि रूप दिवस, सो १५ दिवसोंसे एकपक्ष, दो पक्षोंसे एकमास बारह मासोंसे चन्द्रसंवत्सर और अधिक मास होनेसे तेरह मासोका अभिवर्द्धित संवत्सर इन पांचों संवत्सरोंसे

एक युगके १८३० दिनोंके ५४९०० (चौपन हजार नौ सौ) मूहूर्तोंकी व्याख्या श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्रके अनुसार श्रीविनय विजयजी लोकप्रकाशमें स्वयं लिखते हैं तैसेही श्रीधर्मसागरजीने भी श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिकी वृत्तिमें ऊपर मुजबही पांच वर्षोंके दो अधिकमासोंके दिनोंकी तथा पक्षोंकी और मुहूर्त्तोंकी गिनती पूर्वक एक युगके १८३० दिनोंके ५४९०० मुहूर्त्त खुलासा पूर्वक लिखे हैं। तथापि बडेही खेदकी बात है कि इन दोनों महाशयोंने गच्छकदाग्रह का पक्ष करके उत्सूत्रभाषणसे संसार वृद्धिका भय न रक्खा और बालजीवोंको श्रीजिनाज्ञाकी सत्य बात परसे श्रद्धाभ्रष्ट करनेके लिये श्रीकल्पसूत्रकी कल्पकिरणावलीवृत्तिमें तथा सुखबोधिका वृत्तिमें काल चूलाके बहानेसे दोनों अधिक मासके ६० दिनोंकी गिनती निषेध करके अपने स्वहस्थे एक युगके दो अधिक मासोंके दिनोंकी मुहूर्त्तोंकी गिनती पूर्वक १८३० दिनोंके ५४९०० मुहूर्त्तोंको श्रीतीर्थंकर गणधर महाराजकी आज्ञानुसार लिखे हैं उसीका भङ्गकारक दो अधिक मासके ६० दिनोंके अनुमान १८०० मुहूर्त्तोंके कालका व्यतीत होना प्रत्यक्ष होते भी उसीको गिनती में से सर्वथा उड़ादेकर श्रीतीर्थंकरगणधर महाराजके कथनका प्रमाणमें भङ्ग डालने वाले लेख लिखते पूर्वापरका विवेकबुद्धिसे कुछ भी विचार न किया और उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके कुयुक्तियोंसे अज्ञानीजीवोंको भ्रमाने का कारण किया इसलिये इन दोनों महाशयोंकी धर्मधूर्ताईमें कुछ कम होवे तो न्यायदृष्टिवाले विवेकीसज्जन स्वयं विचार लेवेंगे।

और इन दोनों महाशयोंके अधिक मासके निषेध

सम्बन्धी पूर्वापरविरोधि (विषमवादी) तथा उत्सूत्र भाषणोंकी कुयुक्तियोंवाले और सम्यक्त्वसे भ्रष्ट करके मिथ्यात्वमें गेरनेवाले लेखोंको दीर्घ संसारीके सिवाय और कौन मान्य करके श्रीतीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आशातनाकारक उलटा वर्ताव करेगा सो भी तत्वज्ञ पुरुष न्याय दृष्टि वाले सज्जन स्वय विचार लेवेंगे—

और अधिक मासके निषेधक श्रीधर्मसागरजी श्रीजय विजयजी श्रीविनयविजयजी और प० श्रीहर्षभूषणजी वगैरहोंने जो जो गच्छकदाग्रही दृष्टिरागी मुग्ध जीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेके लिये उत्सूत्र भाषणोंका और कुयुक्तियोंका सग्रह करके अपना ससार वृद्धिका कारण करते हुए अपने ऐसे कल्पित लेखोंको सत्य माननेवाले अपने पक्षग्राहियोंका भी ससार वृद्धिका कारण कर गये हैं सो इन सब उत्सूत्र भाषणरूप कल्पित कुयुक्तियोंके लेखोंका निर्णय तो इस ग्रन्थमें अनुक्रमसे मातों महाशयोंके लेखोंकी समीक्षामें होगया है सो इस ग्रन्थको आदिसे अन्त तक पक्षपात रहित होकर न्याय दृष्टिसे पढनेसे सब बातोंका अच्छी तरहसे निर्णय मालूम होजावेगा। तथापि जो प० श्रीहर्षभूषणजीने पर्युषणस्थिति नामक लेख में जो जो उत्सूत्र भाषणोंका और कुयुक्तियोंका सग्रह करके मिथ्यात्वका कारण किया है उसीका दिग्दर्शनमात्र थोडासा नमूना इस जगह पाठकगणको दिखाता हू यथा—

श्रीसीमधरसरहत नत्वापर्युषणास्थिति ब्रुवेवर्तितभाद्रस्य व्यक्त युक्त्यागमक्रमै ॥ नन्वश्रीत्यादिनै पर्युषणापवसिद्धान्ते क मेोक्तमस्तीत्येवचेत्तर्हि पच मासात्मक वर्षा

चतुर्मासिकसपि सिद्धांते कवर्वर्त्ति सत्यं परमधिकमासोऽस्मा भिर्नगण्यमानोस्ति एवं चेत्तर्हि अस्माभिरपि यदाधिकः श्रावणो भाद्रपदोवावर्द्धते तदा नगण्यते तेनाशीतिदिनानि पञ्चाशद्दिनान्येवेतीत्यादि ।

अब पं० हर्षभूषणजीके ऊपरका लेखको तत्वज्ञ पुरुष निष्पक्षपातसे विचारेंगेतो प्रत्यक्षपने उनके भ्रमजालका परदा खुल जावेगा क्योंकि युक्ति और आगम क्रमके बहाने उत्सूत्र भाषणाका संग्रह करके कुयुक्तियोंकी भ्रमजालमें बालजीवोंको गेरनेका कारण किया है सो तो प्रत्यक्ष दिखता है क्योंकि ८० दिने पर्युषणा करनेका किसी भी शास्त्रमें नहीं कहा है परन्तु श्रावण भाद्रपदादि अधिक होनेसे पंचमासके १० पक्षोंके १५० दिनका अभिवर्द्धित चौमासा तो प्रत्यक्षपने अनुभवसे देखनेमें आता है इसलिये निषेध नहीं हो सकता है और अधिक मासको गिनतीमें निषेध करके दूसरे श्रावण के ३० दिनोंको गिनतीमें छोड़कर ८० दिनके ५० दिन अपनी मतिकल्पनासे बनाते हैं सो निष्केवल उत्सूत्र भाषण है क्यों कि शास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वकसे तो ८० दिनके ५० दिन कदापि नहीं हो सकते हैं सो तो इस ग्रन्थको पढ़नेवाले स्वयं विचार लेवेंगे ।

और फिर आगे । ननु 'अभिवड्ढियंमि वीसा इयरेसु सवीसइमासो' निशीथभाष्ये इत्यत्राधिकमासोगणितोऽस्ति । इस तरहसे अधिक मासकी गिनती सम्बन्धी पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें—'आसाढ़ पुण्णिमाएपविठा' इत्यादि निशीथ चूर्णिका अधूरा पाठसे अज्ञात पर्युषणाकी और 'वीसदिणेहिंकप्पो' इत्यादि बिनाही प्रसङ्गकी विच्छेद

कल्पसम्बन्धीयातलिखके बालजीवोंको भ्रममेंगेरे और अधिक मासकी गिनती निषेध दिखा कर अपनी विद्वत्ताकी चातुराई विवेकी तत्वज्ञ पुरुषोंके आगे हास्यकी हेतु रूप प्रगट करी है क्योंकि निशीथचूर्णिमेंही खास अधिक मासको गिनती प्रमाण करीहै और अज्ञात तथा ज्ञात पर्युषणा सम्बन्धी विस्तारसे व्याख्या की है सो पाठ भाषा सहित तीनों महाशयों के लेखों की समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ ८५ से १०४ तक छपगयाहै इसीलिये आगे पीछेके प्रसंग व लेख सब पाठको छोड़कर विना सम्बन्धके अधूरे पाठसे बाल जीवोंको भ्रममें गेरने सोभी उत्सूत्र भाषण है।

और आगे फिर भी अधिक मासमें क्या क्षुधा नहीं लगतीहै तथा सूर्योदय नही होताहै और देवसिक पाक्षिक प्रतिक्रमण, देवपूजा मुनिदानादि क्रिया शुद्ध नहीं होतीहै सो गिनतीमें नहीं लेतेहो इस तरहका पूर्वपक्ष उठाकर उसीका उत्तरमें पांचमासके चौमासेमें तुमभी चारमास कहतेहो इत्यादि अज्ञानतासे प्रत्यक्ष मिथ्या और उटपटांग लिखाहै सोतो वृथाही हास्य का हेतु कियाहै। और श्रीउत्तराध्ययनजीके २६ अध्ययनका पौरुष्याधिकारे मासवृद्धिके अभाव सम्बन्धी सविस्तर पाठको छोड़कर "असाढमासे दुप्पया" सिर्फ इतनाही अधूरा पाठ लिखके उत्सूत्र भाषणसे भोले जीवोंको भ्रमानेका कारण कियाहै इसका निर्णयतो तीनों महाशयों के लेखोंकी समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ १३६। १३७ में छपगयाहै।

और श्रीआवश्यक निर्युक्तिकी गाथाका तात्पर्यार्थको समझे बिना तथा प्रसंगकी बातको छोड़कर 'तइकुम्रा'

इत्यादि गाथा लिखके उत्सूत्र भाषणसे मिथ्यात्वका कारण कियाहै जिस का निर्णयतो चौथे और सातवें महाराजजी के लेखकी समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ २०५ से २१० तक और ३८५ से ३९५ तक सविस्तार छपगयाहै सो पढ़नेसे हर्षभूषणजी की शास्त्रार्थ गून्य विद्वत्ताका दर्शन अच्छीतरहसे होजावेगा।

और श्रीनिशीथ तथा श्रीदशवैकालिकवृत्तिके नामसे चूलासंबंधीकल्पित अधूरा पाठ लिखके उसीपर अपनी मतिसे कुविकल्प उठाकर कालचूलाके वहाने अधिक मासकी गिनती उत्सूत्र भाषणरूप निषेध करके वाल जीवोंके आगे धर्म ठगाई फैलाईहै जिसका निर्णयतो 'जैनसिद्धांत समाचारी'के लेखकी समीक्षामें इसही ग्रन्थ के पृष्ठ ५८ से ६५ तक और पांचवें महाशयजी के लेखकी समीक्षामें पृष्ठ २० से २२३ तक छपगयाहै सो पढनेसे मालूम होजावेगा। और रत्नकोष ज्योतिष् ग्रन्थका १ श्लोक लिखके अधिक मासमें मुहूर्त नैमित्तिक विवाहादि संसारिक कार्य नहीं होनेका दिखाकर विनामुहूर्तका पर्युषणादि धर्म कार्यभी अधिकमासमें नहोने का दिखाया सोभी उत्सूत्र भाषणहै इस बातका निर्णय चौथे महाशयके लेखकी समीक्षामें पृष्ठ १९४ से २०४ तक छप गयाहै।

और भी इसीही तरहसे अधिक मासके ३० दिनों को गिनतीमें निषेध करके ८० दिनके ५० दिन वालजीवोंके आगे सिद्ध करनेके लिये कुयुक्तियोंके विकल्पोंका और उत्सूत्र भाषणोंका संग्रह करके भी फिर जोजो मासवृद्धिके अभाव सम्बन्धीश्रीपर्युषणा कल्पचूर्णि, निशीथचूर्णि,पर्युषणा कल्पटिप्पण और संदेहविषौषधिवृत्तिके सविस्तार वाले सब पाठों को छोड़करके उसीके पूर्वापरका संबंध विनाके और

फका प्रमाणश्रीअनन्ततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने कहाहै तथा श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचर्णिमें निश्चय अधिक मासको गिन करके वीशदिने ज्ञात पर्युषणा कहीहै तथापि श्रीकुलमडनसूरिजीने पर्युषणाधिकारे कालचूलाके बहाने अधिक मासको गिनतीमें निषेध किया सो श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजों की आज्ञा उत्थापन रूप उत्सूत्र भाषण है ।

और 'आसाढमासे दुप्पया,संबंधी तो उपरमेंही हर्षभूषणजीके लेखका उत्तर में सूचना करनेमें आगईहै । और स्थिवीर कल्पियोंके अधिकमासहोतेभी नवविभागक्षेत्र याने नवकल्पि विहारकालिखासोभी प्रत्यक्षमिथ्या है क्योंकि १० कल्पिविहारप्रत्यक्षपने होताहै इसकानिर्णय तथा दीवाली अक्षय तृतीयादि लौकिक संबंधी लिखाहै जिसका निर्णय और श्रीजिनेश्वर भगवानूके कल्याणक संबंधी लिखा है जिसका भी निर्णय तो सातवें महाशयजीके लेखकी समीक्षामें होगया है ।

और एक युगके दोनों अधिक मासोंके दिनोंकी गिनती पूर्वक १८३० दिनोंमें सूर्यचारके दश [१०] अयण श्रीतीर्थंकरगणधरादि महाराजोंने कहेहैं सो श्रीचंद्रपन्नति श्रीसूर्यपन्नति श्रीजंबूद्वीपपन्नति श्रीज्योतिषकरंडपयन्न तथा इनही शास्त्रोंकी व्याख्याओं में और श्रीवृहत्कल्पवृत्ति, मंडल प्रकरणादि अनेकशास्त्रमें प्रगटपाठहै और लौकिकमेंभी अधिकमासहोनेसे उसीकेदिनोंकीगिनतीपूर्वक १८३ दिने दक्षिणायणसे उत्तरायणमें सूर्यमंडलहोनेका प्रत्यक्षदेखनेमें आता है इसलिये ६ मासके अयणकाप्रमाणमें अधिकमास नही गिनने

संबंधी श्रीकुलमंडनसूरिजीका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या है।

और जैन पंचांगानुसार पौष तथा आषाढ की वृ
होती थी तबभी उसीके दिनोंको पर्युषणादि सब धर्म का
में गिनती करतेथे सोतो उपरमेंही श्रीबृहत्कल्पचूर्णि श्रीनि
शीथचूर्णिके पाठसे प्रत्यक्षदिखता है परन्तु वर्तमानका
जैन पंचांगके अभावसे लौकिक पंचांगानुसार वर्ताव कर
में आताहै उसीमें चैत्रादि मासोंकी वृद्धि होतीहै उसी
३० दिनोंमें दुनियांका सब व्यवहार तथा धर्म व्यवह
प्रत्यक्षपनेहोताहै इसलिये उसीके दिनोंकी गिनती नि
ध नहीं होसकती है तथापि जो संक्रांति रहित मलमा
केभरोसे अधिक मासके दिनोंकी गिनती निषेध करते
सो अपनी पूर्ण अज्ञानतासे भोले जीवोंको गच्छकदाग्रह
गेरनेका कार्य करतेहैं क्योंकि संक्रांति रहित अधिक मा
को मलमास कहा है तैसेही दो संक्रांति वाले क्षय मासवे
भी मलमास कहा है परन्तु अधिक मासके तथा क्षय मा
के दिनोंकी गिनती बरोबर करतेहैं। तथाहि कमलाकर भ
विरचित (लौकिक धर्मशास्त्र) निर्णय सिंधोनामा ग्रंथे।

तत्र संक्षेपतःकालः षोढा—अब्दोयनमृतुर्मासः पक्षदि
वस इति॥ पुनस्तत्र वक्षमाणैः श्रावणादि द्वादश मा
स्तद्वदं। मलमासेतुतति षष्ठिदिनात्मकः एको मासो द्वा
दश मासत्वमविरुद्धमिति॥ तथाच व्यासः षष्ट्यातु दिवसै
र्मासःकथितो बादरायणैः—इति॥ अथ मलमास क्षयमा
निर्णय। अथ मल मासः तत्रैकमात्र संक्रांति रहितःसिता
दिश्चांदो मासो मल मासः एकमात्र संक्रांति राहित्यमसंक्रा

शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय विरुद्ध अधूरे अधूरे पाठोंको लिखके दृष्टिरागी गच्छकदाग्रही विवेकशून्य मुग्ध जीवों के आगे मास वृद्धि हो श्रावण होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा ठहराकर दिखानेका प्रयास किया जिसका निर्णय तो इस ग्रन्थमें अच्छीतरहसे सविस्तार शास्त्रकार महाराजोंके अभिप्राय सहित शास्त्रोंके संपूर्ण पाठार्थों पूर्वक लिखनेमें आयाहै सो पढनेसे निष्पक्षपाती सज्जन स्वयं विचार करलेवेंगे ।

औरभी सुप्रसिद्ध श्रीकुलमंडनसूरिजीने विचारामृत संग्रह नामा प्रकरणमें पर्युषणाधिकारे पृष्ठ १३ में अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये जो लेख लिखाहै उसीका भी नमूना यहां दिखाताहूं । यथा--

युगतृतीय पंचम वर्ष संभावीयोऽधिकमासः स्यात् नासौलोके लोकोत्तरेच चतुर्मास सांवत्सरिकादि प्रमाण चिंतायांचव्याप्युपयुज्यते, लोके दीपोत्सवाक्षयतृतीया भूमिदोहादिषु शुद्ध द्वादश मासांतर्भाविषु लोकोत्तरेच-चतुर्म्मासिकेषु 'आसाढमासे दुप्पया' इत्यादि पौरुषी प्रमाण चिंतायां पयणासायण प्रमाणयां वर्षांतर्भावि जिनजन्मादि कल्याणकेषु वृद्धावासस्थित स्थविर नवविभागक्षेत्र कल्पनायांच नायंगण्यते कालचूलत्वादस्य । तथाहि । निशीथे दशवैकालिकवृत्तौच, चूला चातुर्विध्यं द्रव्यादिभेदात् तत्र द्रव्य चूला ताम्रचूलादि क्षेत्रचूला मेरोश्चत्वारिंशद्योजन प्रमाण चूलिका कालचूला युगेतृतीय पंचमवर्षयोरधिक मासकः भावचूलातु दशवैकालिकस्यचूलिकाद्वयं । नच चूलाचूलावतः प्रमाण चिंतायां पृथक् व्याप्रियते । यथा । लक्ष-योजन प्रमाणस्यमेरोः प्रमाणचिंतायां चूलिका प्रमाणमिति

यत्राधिक मासको जनशास्त्रे पौषापाढरूपः लौकिक शास्त्रे-षु चैत्राद्यश्विनमासांत सप्तमासव्यवस्थित मासरूपोऽभिवर्द्धित नामैवच पितृकृत्येप्रयुज्यते । यदुक्तं रत्नकोशाख्य ज्योतिष-शास्त्रे । यात्राविवाहमंडनमन्यान्यपि शोभनानि कर्म्माणि परिहर्त्तव्यानिबुधैः सर्वाणिनपुंसकेमासि ॥ जति अहिमासओ पडितो तो वीसतीरायं गिहिणायं न कज्जति किं कारणं अत्र अहिमासओ चेव मासो गणिज्जति तोवीसाएसमं सवीसति रातो मासोभवतिचेव इति वृहत्कल्प चू० पत्र २९५ उ०३ । पुनः । जम्हा अभिवढ्ढिय वरिसे गिम्हेचेवसोमासो अइक्कन्तो तम्हावीस दिणा अणभिग्गहियंकीरइ निशी० चू०उ० १० पत्र ३१७ इहकल्प निशीथ चूर्णिद्वयामपिस्वाभिगृहीतगृहस्थ ज्ञातावस्थान व्यतिरिक्तेषु कार्येषु क्वाप्यधिकमासको नामग्रहणं प्रमाणीकृतो न दृश्यते-इति ।

अब श्रीकुलमंडनसूरिजी कृत उपरके लेखको देखकर मेरेको बडेही अफसोसके साथ लिखना पडता है कि—ऐसे सुप्रसिद्धविद्वान् पुरुष आचार्यपदकेधारक होकरके भी स्वगच्छा ग्रहका पक्षपात करके उत्सूत्र भाषणोंसे संसारवृद्धिकाभय न करते हुवे कुयुक्तियोंकासंग्रहसे बालजीवोंको मिथ्यात्वके भ्रममें गेरनेका उद्यम किया है सो श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके वचनका उत्थापनरूप है क्योंकि पांच वर्षोंके एकयुगमें तीसरे तथा पांचवे वर्ष जो पौष तथा आषाढको अधिकमास जैनशास्त्रोंमेंकहाहै उसीकोही मंदिरोंके शिखर वत् तथा मेरुचूलिकावत् और दशवैकालिकजी आचा-रांगजी की चूलिकावत् कालचूलाकी उत्तम श्रेष्ठ ओपमा देकर दिनोंमें पक्षोंमें मासोंमें गिनती करके वर्ष तथा युगादि

फका प्रमाणश्रीअनन्ततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंने कहाहै तथा श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिमें निश्चय अधिक मासको गिन करके वीशदिने ज्ञात पर्युषणा कहीहै तथापि श्रीकुलमंडनसूरिजीने पर्युषणाधिकारे कालचूलाके बहाने अधिक मासको गिनतीमें निषेध किया सो श्रीअनन्त तीर्थंकर गणधरादि महाराजों की आज्ञा उत्थापन रूप उत्सूत्र भाषण है ।

और 'आसाढमासे दुप्पया,संबंधी तो उपरमेंही इर्षभूषणजीके लेखका उत्तर में सूचना करनेमें आगईहै । और स्थिवीर कल्पियोंके अधिकमासहोतेभी नवविभागक्षेत्र याने नवकल्पि विहारकाल्खिसोभी प्रत्यक्षमिथ्या है क्योंकि १० कल्पिविहारप्रत्यक्षपने होताहै इसकानिर्णय तथा दीवाली अक्षय तृतीयादि लौकिक संबंधी लिखाहै जिसका निर्णय और श्रीजिनेश्वर भगवान्के कल्याणक संबंधी लिखा है जिसकाभी निर्णय तो सातवें महाशयजीके लेखकी समीक्षामें होगया है ।

और एक युगके दोनों अधिक मासोंके दिनोंकी गिनती पूर्वक १८३० दिनोंमें सूर्यचारके ८४ [१०] अयण श्रीतीर्थंकरगणधरादि महाराजोंने कहेहैं सो श्रीचंद्रप्रज्ञप्ति श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्ति श्रीज्योतिषकरंडपयन्न तथा इनही शास्त्रोंकी व्याख्याओं में और श्रीवृहत्कल्पवृत्ति, मंडल प्रकरणादि अनेकशास्त्रमें प्रगटपाठहै और लौकिकमेंभी अधिकमासहोनेसे उसीकेदिनोंकीगिनतीपूर्वक १८३ दिने दक्षिणायणसे उत्तरायणमें सूर्यमंडलहोनेका प्रत्यक्षदेखनेमें आता है इसलिये ६ मासके अयणकाप्रमाणमें अधिकमास नही गिनने

संबंधी श्रीकुलमंडनसूरिजीका लिखना प्रत्यक्ष मिथ्या है।

और जैन पंचांगानुसार पौष तथा आषाढ की वृ
होती थी तबभी उसीके दिनोंको पर्युषणादि सब धर्म का
में गिनती करतेथे सोतो उपरमेंही श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनि
शीथचूर्णिके पाठसे प्रत्यक्षदिखता है परन्तु वर्तमानक
जैन पंचांगके अभावसे लौकिक पंचांगानुसार वर्ताव क
में आताहै उसीमें चैत्रादि मासोंकी वृद्धि होतीहै उसी
३० दिनोंमें दुनियांका सब व्यवहार तथा धर्म व्यवह
प्रत्यक्षपनेहोताहै इसलिये उसीके दिनोंकी गिनती नि
ध नहीं होसकती है तथापि जो संक्रांति रहित मलम
केभरोसे अधिक मासके दिनोंकी गिनती निषेध करं
सो अपनी पूर्ण अज्ञानतासे भोले जीवोंको गच्छकदाग्र
गेरनेका कार्य करतेहैं क्योंकि संक्रांति रहित अधिक म
को मलमास कहा है तैसेही दो संक्रांति वाले क्षय मास
भी मलमास कहा है परन्तु अधिक मासके तथा क्षय म
के दिनोंकी गिनती बरोबर करतेहैं। तथाहि कमलाकर
विरचित (लौकिक धर्मशास्त्र) निर्णय सिंधोनामा ग्रंथे

तत्र संक्षेपतःकालः षोढा—अब्दोयनमृतुर्मासः पक्षो
वस इति॥ पुनस्तत्र वक्षमाणैः श्रावणादि द्वादश म
स्तदूर्ध्वं। मलमासेतु सति षष्ठिदिनात्मकः एको मासो द्व
दश मासत्वमविरुद्धमिति॥ तथाच व्यासः षष्ठ्यातु दिवं
मासःकथितो बादरायणैः—इति॥ अथ मलमास क्षयम
निर्णय। अथ मल मासः तत्रैकमात्र संक्रांति रहितःसित
दिश्चांदो मासो मल मासः एकमात्र संक्रांति राहित्यमसंक्र

अधिक मासः क्षयमासश्चेति। तदुक्तं काठक गृह्ये। यस्मिन् मासे न संक्रांति। संक्रांति द्वयमेववामलमासः। मविज्ञेयो मासः स्यातु त्रयोदशः॥ तथा चोक्तं हेमाद्रि नागर खंडे। नभो वा नभस्योवा मलमासो यदा भवेत् सप्तमःपितृ पक्षस्यादन्यत्रैवतु पंचमः॥

अब देखिये उपरोक्त शास्त्रोंके पाठोंसे लौकिक शास्त्रों में अधिक मासके दिनोंकी गिनती करीहै इसलिये निषेध करने वाले गच्छकदाग्रहसे अज्ञानता करके प्रत्यक्ष मिथ्या भाषण करने वाले बनतेहैं सोतो पाठक वर्ग स्वयं विचार सकतेहैं।

और अधिक मासको बारह मासोंसे जूदा गिनके तेरह मासोंका वर्षकहे तथा अधिक मासको जूदा न गिनके संयोगिक मासके साथ गिने तो ६० दिवसका महिना मान के बारह मासका वर्ष कहे तोभी तात्पर्यार्थसेतो दोनों तरह करके अधिक मासके दिनोंकी गिनती लौकिक शास्त्रोंमें प्रगटपने कही है इस लिये निषेध नही होसकतीहै।

और संक्रांति रहित अधिक मासको मलमास कहा तैसेही दो संक्रांति वाले क्षयमासको भी मलमास कहाहै सो चैत्रसे आश्विन तक सात मासोंमें से हरेक अधिक मास होतेहैं तैसेही कार्तिकसे पौष तक तीनमासोंमें से हरेक मास क्षयभी होतेहै और जैसे तीसरे वर्ष अधिक मास होताहै सो प्रसिद्धहै तैसेही कालांतरमें क्षय मासभी होताहै सो लौकिक शास्त्रोंमें प्रसिद्धहै।

औरमासवृद्धिकेअभावमें आषाढ़चौमासीसेपंचम पितृपक्ष होताहै परंतु श्रावण भाद्रपद मासकी वृद्धि होनेसे अधिक मासके दोनोपक्षोंकी गिनती पूर्वक सप्तम पितृपक्ष लिखा है।

और अधिक तथा क्षय संज्ञा वाले मास समुच्चयके व्यवहारमें तो संयोगिक मासके सामिल गिनेजातेहैं परंतु भिन्न भिन्न व्यवहारमें तो दोनों मासोंके दिनोंकी गिनती जूदी जूदी करनेमें आतीहै सो अधिक मास संबधी तो उपरमें तथा इसग्रन्थमें लिखनेमें आगयाहै परंतु क्षयमास संबंधी थोड़ासा लिखदिखाताहूं कि जब कार्तिक मासका क्षय होवे तब उसीके दिनोंकी गिनतीपूर्वक ओलियोंकी आश्विन पूर्णिमासे १५ दिने दीवाली तथा श्रीवीरप्रभुके निर्वाण कल्याणक तथा २० वे दिन ज्ञानपंचमी और ३० वें दिन कार्तिक पूर्णिमा सो चौमासा पूरा होनेसे मुनि विहार होताहै इस तरहसे मार्गशीर्ष पौषका भी क्षय होवे तब मौन एकादशी, पौष दशमी वगैरह पर्व तथा और श्रीजिनेश्वर भगवान् के जन्मादि कल्याणकोंकी तपश्चर्यादि कार्य करनेमें आतेहैं।

अब श्रीजिनेश्वर भगवान्की आज्ञाके आराधक सज्जन पुरुषोंको न्याय दृष्टिसे विचार करना चाहिये कि—क्षयमासके दिनोंमें दीवाली वगैरह वार्षिक पर्व किये जातेहै उसी मुजबही श्रीतपगच्छके सबी महाशय करतेहैं इसलिये क्षय मासके दिनोंकी गिनती निषेधकरनेकातो किसीभी महाशयजीने कुछभी परिश्रम न किया। और पर्युषणामें तथा पर्युषणासंबंधी मासिक डेढमासिक तपश्चर्यादि कार्योंमें अधिक मासके दिनोंकी गिनती प्रत्यक्षपने करते हुवेभी दूसरे गच्छवालोंसे द्वेषबुद्धि रखके अधिक मासकी गिनती निषेध करनेके लिये उत्सूत्र भाषणोंसे कुयुक्तियोंका संग्रह करनेका श्रीतपगच्छके अनेक महाशयोंने खूबही परिश्रम कियाहै सो तो प्रत्यक्षपने स्वगच्छाग्रहके इठवाद का ...

वातको इस ग्रन्थके पढनेवाले सज्जन स्वयं विचार लेवेंगे।

और अधिक मासको कालचूला कहते हुए भी नपुंसक लिखते हैं सोभी श्रीअनन्ततीर्थंकरगणधरादि महाराजोंकी आशातना करनेके बरोबरहै तथा विवाहादि मुहूर्तनैमित्तिक संसारिककार्यों के लियेभी उपरमेंही इर्षभूषणजीके लेखमें सूचना करनेमें आगई हैं।

और बीशदिनकी बात पर्युषणाके सिवाय और कार्योंमें अधिकमासको प्रमाण करनेका नहीं दिखता है यह लिखना भी श्रीकुलमंडनसूरिजी का प्रत्यक्षमिथ्या है क्योंकि दिनों की पक्षोंकी मासोंकी गिनतीका कार्यमें, चौमासेके वर्षके युगके प्रमाणकी गिनतीका कार्यमें, खामणोंके कार्यमें, सामायिक प्रतिक्रमण पौषध देवपूजा उपवास शीलव्रतादि नियमोंका प्रत्याख्यानोंके गिनतीका कार्यो में चौमासी छमासी वर्षी तथा वीसस्थानकजीके और पर्युषणादि तप केदिनों की गिनतीके कार्योंमें और आगमोंके योग वहनादि कार्योंमें, अधिक मासके दिनोंकी गिनती को प्रमाण गिननेमें आतीहै सो तो प्रत्यक्ष अनुभव की प्रसिद्ध बात है। और एकजगह अधिकमासको कालचूलालिखते हैं दूसरी जगह नपुंसक लिखते हैं तथा एक-जगह श्रीवृहत्कल्पचूर्णि श्रीनिशीथचूर्णिकेपाठोंसे 'चेव' निश्चय अधिकमासको गिनतीकरने का लिखते हैं दूसरी जगह नहीं गिननेका लिखते हैं इसतरहसे बालजीवोंको भ्रममें गेरनेवाले पूर्वापरविरोधि (विसंवादी) लेखलिखते कुछभीविचार न किया सोभी कलयुगीविद्वत्ताका नमूना हैं।

और आगे फिरभी जो जैन पचाङ्गानुसार प्राचीन कालमें अभिवर्द्धितसम्वत्सरमें बीशदिने अर्थात् श्रावणशुदी

पंचमीको ज्ञात पर्युषणा वार्षिककृत्यादिपूर्वक करनेमें आ
थी, उसीको वर्षाकालकी स्थितिरूप गृहस्थी लोगोंके अ
कहने मात्रही वार्षिककृत्योंरहित ठहरानेके लिये और अ
वर्द्धितमेंभी ५० दिने भाद्रपदमें वार्षिक कृत्यों सहित प
णाको ठहरानेकेलिये चूर्णिकारादि महाराजोंके अभिप्राय
समझे विनाही उलटा विरुद्धार्थमें और अधिक मास संब
पूर्वापरकी सब व्याख्याके पाठोंको छोड़करके अधिक
दोषोंके तथा उपद्रवादिके संबंध वाले अधूरेपाठ लिखके
चंद्रसम्बत्सर में ५० दिन की तरह अभिवर्द्धितसंवत्सर में
दिने ज्ञात पर्युषणा दिखाकरके ५० दिनकी ज्ञात पर्युषणा
वार्षिक कृत्य करनेको सिद्ध करतेहैं परंतु २० दिनकी
पर्युषणाको अपनीमतिकल्पनासे गृहस्थी लोगोंके
वर्षास्थितिरूप ठहराकर वार्षिक कृत्योंको निषेध क
सो कदापि नहीं होसकताहै क्योंकि ५० दिनकी ज्ञात
पणामें वार्षिक कृत्योंकी तरह २० दिनकी ज्ञात पर्युष
भी वार्षिक कृत्य शास्त्रानुसार तथा युक्तिपूर्वक स्वयं
है इसका सविस्तार निर्णय तीनों महाशयोंके लेखे
समीक्षामें इसही ग्रन्थके पृष्ठ १०७ से ११७ तक अच्छी त
छपगया है इस लिये जो श्रीकुलमंडन सूरिजीने २० दि
पर्युषणाको वार्षिक कृत्यों रहित ठहरानेके लिये मास
के अभाव संबंधी पाठोंको मास वृद्धिहोती भी अधूरे
लिखके बाल जीवोंको दिखायेहै सो आत्मार्थिपनेका ल
नहींहै। सोतो न्यायदृष्टिवाले सज्जन स्वयंविचार लेंगे

दूसरे पंचम वर्षे १३। १३ मासे और तीसरे वर्षे १२ मासे वार्षिक कृत्य होनेका दिखाकर पांच वर्षोंके ६० मास श्रीकुलमंडन सूरिजी लिखतेहै सोते श्रीअनंत तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञाकोप्रत्यक्षपने उत्थापनकरके उत्सूत्रभाषण करनेवाले बनते हैं क्योंकि अभिवर्द्धितमें बीशदिने श्रावणमें पर्युषणा करनेसे जैनशास्त्रानुसारते। प्रथम चौथे वर्षे १३। १३ मासे और दूसरे तीसरे पंचमें वर्षे १२। १२ मासे वार्षिक कृत्य होनेका बनताहै और पांच वर्षोंके ६२ मास श्रीअनंत तीर्थंकर गणधरादि महाराजोंकी आज्ञानुसार जैनशास्त्रोंमें प्रसिद्धहै।

और मासवृद्धिसे तेरहमासहोतेभी १२ मासके सामणे लिखतेहै सोभी अज्ञानताका सूचकहै क्योंकि मासवृद्धि होनेसे तेरहमास खवीशपक्षकेक्षामणे कियेजातेहै इसका निर्णय सातवे म० छे० समीक्षामें इसही ग्रन्थ के पृष्ठ ३६३ से ३७८ तक छपगयाहै सो पढनेसे सब निर्णय होजावेगा।

और जैनशास्त्रोंमें मुख्य करके एकबातकी व्याख्या करतेहै उसीकेही अनुसार यथोचित दूसरी बातोंके लियेभी समझा जाताहै इसलिये जिन जिन शास्त्रोंमें चंद्रसंवत्सरमें ५० दिने तथा अभिवर्द्धित संवत्सरमें २० दिने खात पर्युषणा कही सो यावत् कार्तिक तक खुलासा लिखाहै जिसपर विवेक बुद्धिसे विचार किया जावेतो जैसे चंद्रसंवत्सरमें ५० दिन जहां पूरे होवे वहां स्वभावसेही भाद्रपद समझतेहैं तैसेही अभिवर्द्धित संवत्सरमें २० दिन जहां पूरे होवे वहां भी स्वभाविक रीतिसे श्रावण समझना चाहिये। और चार मासके १२० दिनका वर्षा कालमें ५० दिने पर्युषणा करनेसे

पिछाडी कार्तिक तक ७० दिन स्वभावसेही रहतेहैं तैसेही २० दिने पर्युषणा करनेसे भी पिछाडी कार्तिक तक १०० दिनभी स्वयं समझना चाहिये तथापि चंद्र संवत्सरमें भाद्रपदकी तरह अभिवर्द्धित संवत्सरमें श्रावणमें पर्युषणा करनेका तथा पर्युषणाके पिछाडी ७० दिनकी तरह १०० दिन रहनेका कहां कहा है, ऐसी प्रत्यक्ष अज्ञानताकी सूचक कुयुक्ति करके बाल जीवोंको भ्रमानेसे कर्म बंधके सिवाय और कुछभी लाभ नहीं होने वालाहै । क्योंकि जिन जिन शास्त्रों में चंद्रसंवत्सरमें५० दिने भाद्रपदमें पर्युषणाकरके पिछाडी ७० दिन कार्तिक तकका लिखाहै और अभिवर्द्धितमें २० दिने पर्युषणा करनेका भी लिखदियाहै उसी शास्त्र पाठोंके भावार्थ से अभिवर्द्धितमें २० दिने श्रावणमें पर्युषणा करनेका और पर्युषणा के पिछाडी १०० दिन रहनेका स्वयं सिद्धहै सोतो अल्प मतिवालेभी समझसकते हैं ।

और फिरभी २० दिनकी ज्ञात तथा निश्चय और प्रसिद्ध पर्युषणामें वार्षिक कृत्यों का निषेध करनेके लिये आषाढ पूर्णिमाकी अज्ञात तथा अनिश्चय और अप्रसिद्ध पर्युषणामें वार्षिककृत्यकरनेका दिखातेहैं सोभी अज्ञानताकासूचकहै क्यों कि वर्षकी पूरतीहुये बिना तथा अज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य कदापि नहीं होसकते हैं किन्तु वर्षकी पूर्तिहोनेसे ज्ञात पर्युषणामें वार्षिक कृत्य होते हैं और अधिक मास होनेसे श्रावणमें १२ मासिक वर्ष पूरा होजाता है इसीलिये श्रावणमें ज्ञातपर्युषणा करके वार्षिक कृत्य सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादिक कार्य करनेमें आते हैं ।

और मासवृद्धि होतेभी भाद्रपदमें पर्युषणा स्थापन करने के लिये श्रीजीवाभिगमजी सूत्रका एकपदमात्र लिखदिखाया

सोते। अपनी विद्वात्ताकी हासी कराने जैसा कियाहै क्योंकि यहांते। श्रीनन्दीश्वरद्वीपाधिकारे जिन चैत्योंकी व्याख्या करके यहां चौमासीमें तथा संवत्सरीमें और श्रीजिनेश्वर भगवान्के जन्मादि कल्याणकोंमें भुवनपति वगैरह बहुत देवोंको अठाईउच्छव करनेका लिखाहै परन्तु यहां भाद्रपदकातो नाममात्र भी नहींहै सो सूत्र वृत्ति सहित छपाहुवा श्रीजीवाभिगमजीके पृष्ठ ८४३ में खुलासा पूर्वक अधिकारहै इस लिये ऐसे ऐसे पाठोंको लिखके बाल जीवोंको भ्रममें गेरनेसे तो अपने कल्पित बातकी पुष्टि कदापि नहीं हो सकतीहै सो विवेकी पाठक गणभी स्वयं विचार सकतेहैं।

और श्रीकुलमंडन सूरिजीके उपरोक्त लेखके अनुसार ही धर्मसागरजीनेभी तस्करवृत्ति करके धर्म धूर्ताईसे जिनको तथा गच्छ कदाग्रही बालजीवोंको दुर्लभबोधिका कारण करनेके लिये 'तत्वतरंगिणी' ग्रन्थका नाम रखके वास्तविक में 'कुयुक्तियोंकी भ्रमजाल' बनाकर उसीमें पर्युषणा संबंधी मिथ्यात्वका कारणरूप जो लेख लिखा है जिसका निर्णय तथा 'प्रवचनपरिक्षा' नामक ग्रन्थमेंभी उत्सूत्र भाषणोंके संग्रहसे कुयुक्तियों करके पर्युषणा संबंधीजो लेख लिखा है जिसका निर्णय तो ऊपरके लेखको तथा इस ग्रन्थको विवेक बुद्धिसे पढ़नेवाले तत्वज्ञ पुरुष स्वयंही समझ लेवेंगेः—

अब पाठकगणको मेरा इतनाही कहना है कि-श्रीजैन शास्त्रोंमें अधिक मासको कालचूलाकी जो उत्तम ओपमा देते हैं उसीके दिनोकी गिनती करनेमें आती है तथा लौकिक शास्त्रानुसार और प्रत्यक्ष पने वर्तावकी सत्ययुक्तियोंके अनुसार करकेभी अधिकमासके दिनोंकी गिनती क-

श्रनेमें आतीहै जिसका विस्तार पूर्वक इस ग्रन्थमें छपगया है इसलिये कालचूला वगैरहके बहाने करके कुयुक्तियों से उसीके दिनो की गिनती निषेध करने वाले श्रीजिनेश्वर भगवानकी आज्ञाके लोपी उत्सूत्रभाषक बनते हैं, सो तो इस ग्रन्थको पढ़ने वाले तत्वज्ञ स्वयं विचार सकते हैं इसलिये श्रीजिनेश्वरभगवान्की आज्ञाके आराधन करनेकी इच्छावाले जो आत्मार्थी सज्जन होवेंगे सो तो अधिकमासके दिनोंकी गिनती निषेध करनेका संसारवृद्धिका हेतुभूत उत्सूत्र भाषणका साहस कदापि नहीं करेंगे, और भव्यजीवोंको इस ग्रन्थको पढ़ करके भी अधिकमासके निषेध करने वालोंका पक्ष ग्रहण करके अभिनिवेशिक मिथ्यात्वसे बालजीवोंको कुयुक्तियोंके भ्रममें गेरनेका कार्य करनाभी उचित नही है और गच्छका पक्षपात छोड़कर न्याय दृष्टिसे इस ग्रन्थका अवलोकन करके अधिकमासके दिनोंकी गिनती पूर्वकही पर्युषणादि धर्म व्यवहारमें वर्ताव करना सोही सम्यक्त्वधारी आत्मार्थियोंको परम उचित है इतनेपरभी जो कोई अपने अन्तर मिथ्यात्व के जोरसे अज्ञ जीवोंको भमानेके लिये अधिक मासकी गिनती निषेध संबंधी कुयुक्तियोंका संग्रह करके पूर्वापरका विचार किये बिनाही मिथ्यात्वका कार्य करेगा तो उसीका निवारण करनेके लिये और भव्य जीवोंके उपकारके लिये इस ग्रन्थ कारकी लेखनी तैयारही समझना ।

अब पर्युषणासंबंधी लेखकी समाप्तिके अवसरमें पाठक गणको मेरा इतनाही कहना है कि-श्रीतपगच्छके विद्वान् कहलाते जोजोमहाशयों श्रीअनंततीर्थंकर गणधरादि महाराजोंके विरुद्धार्थमें पंचांगीके अनेक प्रमाणोंको प्रत्यक्षपने

उत्थापनकरके उत्सूत्रभाषणोंसे कुयुक्तियोंके संग्रह पूर्व
अधिकमासको कालचूला वगैरहके बहानेसे निषेधकरने संबं
धी-कल्पकिरणावली तथा सुखबोधिकावृत्तिवगैरहके लेख
को हरवर्षे श्रीपर्युषणापर्वके दिनोंमें बांचतेहैं जिसको गच्छक
ग्रही पक्षपाती अज्ञजीव श्रद्धापूर्वक सत्यमानतेहैं ऐसे उपदेशक
तथा श्रोता श्रीजिनाज्ञाके आराधक पचांगीकी श्रद्धावाले
सम्यक्त्वी आत्मार्थी हैं ऐसा कोइभी विवेकीतत्वज्ञ तो
नहीं कहसकेंगे। क्योंकि श्रीअनंत तीर्थंकर गणधरादि महा
राजोंका प्रमाण कियाहुवा कालचूलाकी श्रेष्ट ओपमा वाले
अधिकमासको निषेधकरने वालोंमें प्रत्यक्षपने श्रीजिनाज्ञा
का विराधकपना होनेसे मिथ्यात्वसिद्ध होताहै सो तत्वज्ञ
स्वयं विचार सकतेहैं। इसलिये मिथ्यात्वसे संसारमें परि-
भ्रमण करनेका भय करने वाले तथा श्रीजिनाज्ञामुजब वर्तने
की इच्छा करने वाले विवेकियोंको तो श्रीजिनाज्ञा विरुद्ध
उपरोक्त कार्य करना तथा उसी मुजब श्रद्धा रखना उचित नहीं
है किंतु श्रीजिनाज्ञामुजब पर्युषणाके व्याख्यान सुनने वाले
भव्यजीवोंके आगे अधिक मासकी गिनती करनेका शास्त्र
प्रमाणपूर्वक सिद्धकरके दूसरे श्रावणमें वा प्रथम भाद्रपदमें
श्रीपर्युषणा पर्वका आराधन करना तथा दूसरोंसे करना
सोही आत्महितकारीहै सो तत्वदृष्टिसे विचारना चाहिये:—

इति अधिक मासके निषेधक उत्सूत्र भाषी कुयुक्तियें
करनेवाले सातवें महाशयजी वगैरहोंके पर्युषणा
सम्बन्धि अज्ञ जीवोंको मिथ्यात्वमें गेरनेके
लेखोंकी संक्षिप्त समीक्षा समाप्त ॥